ज्वरकेलक्षण और चिकित्सा। फिर द्वंद्वज और संनिपातज्वरके उत्पत्तिलक्षण और चिकित्सा सविस्तृतवर्णनइसतृतीयखंडमेंहै । बहुतलिखनाआपलोगोंकेसन्मुख व्यर्थहै अबतो यह पुस्तक आपके हस्तगतहै जोकुछ भला बुराहै सो प्रत्यक्षहै ।

पहिले और दूसरेभागमें साठ २ फारिमहै इस तृतीयभागमें ७० फारिमहै. अब चतुर्थभागबराबरछपरहाहै परमात्माकी कृपासें शीघ्र तयारहोकर आप सज्जनोंके सेवामें पहुचायाजायगा आगेप्रभूकीइच्छा प्रबलहै ।

आपका दत्तराम चौबे मथुरानिवासी.

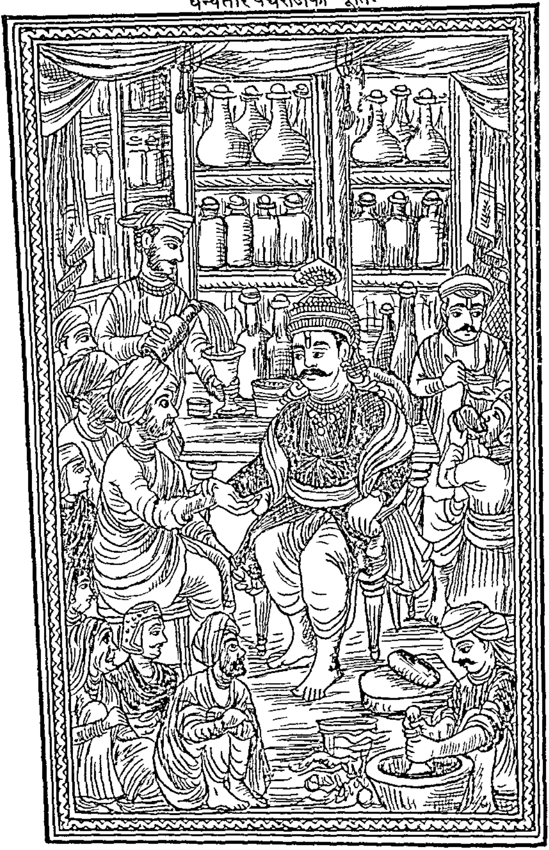
## नवीनग्रंथोकी सूचना.

**शार्ङ्गधर—भाषाटीकासह.** यह टीका आढमल्ली और गूढार्थप्रकाशिका जो इसकी सस्कत टीकाहै उनके अनुसार भाषाटीका करीगईहै प्रथमखंड पूर्ण होगया. मध्यखंड और उत्तरखड छपरहे है सो बहुत जल्दी छपेंगे इसके फारिम राईल करीव ८० अस्सीके होंगे जिसके पृष्ठ ६३२ छः सौं बत्तीसके अनुमान होंगे, कीमत बहुत सस्ती रहेगी कागद और स्याही परमोत्तमहै.कि जिसके देखने मात्रसें चित्त अत्यंत प्रफुल्लितहो.

अर्धांगी शिवकी मूर्ति-



धन्वंतरि वैद्यराजकी मूर्ति.



वीरभद्र गण वा ज्वरकी मूर्ति.



बीभत्सज्वरकी मूर्ति ज्वर २रा.



त्रिशिरा ज्वर ३ रा.



कापिलाख्य ज्वर ४था.



भस्मविक्षेपक ज्वर ५ वा



त्रिपाद ज्वर ६ वा.



उल्कटास्य ज्वर सातवा.

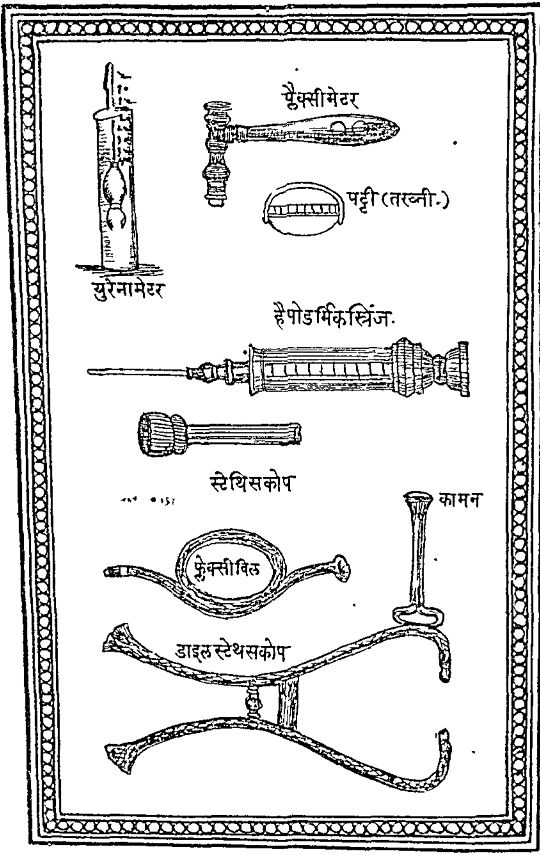


महोदरज्वर आठवा.



ज्वलद्दियह ज्वर नववा.





पैक्सीमेटर
पट्टी (तख्ती-)
युरेनामेटर
हैपोडर्मिकस्त्रिंज-
स्टेथिसकोप
कामन
फ्लेक्सीबिल
डाइलस्टेथसकोप

ॐ

# बृहन्निघंटुरत्नाकरके तीसरेभागकी अनुक्रमणिका ।

## इति मूत्रपरीक्षा

## आर्त्तवपरीक्षा



## इति आर्त्तवपरीक्षा

## मलपरीक्षा



## इति मलपरीक्षा

## मुखपरीक्षा



## जिव्हापरीक्षा



## शब्दपरीक्षा



## नेत्रपरीक्षा



## स्पर्शपरीक्षा

## कालज्ञानम्



## पंचेंद्रियार्थविप्रतिपत्ति



## छायाविप्रतिपत्ति

## स्वभावविप्रतिपत्ति



## छायापुरुष

## बालकोंकेरोगकीपरीक्षा



## वस्त्रपरीक्षा



## देशपरीक्षा



## मानपरिभाषा

## रस विशेषविज्ञानीयाध्यायः

## पंचकषाया:

---

## स्वेदविधि



---

## वमन

---

## अथ रेचनाधिकार

## वास्तिप्रकरणम्



## निरूहबस्तीकी विधि

## उत्तरवस्तीकी विधि



## नस्यविधि

## धूमपान



## प्रतिसारणम् ( भंजन)

## इतिगंडूपादिविधिः

## नेत्ररोगाचिकित्साविधिः



## आश्चोतनके लक्षण.



## पुटपाक.

## अथ संधानविधिः

## भूमिप्रविभागविज्ञानीयाध्यायः



## द्रव्य संग्रहणीयाध्यायः

## संशोधन संशमनीयाध्यायः



## द्रव्यविशेषविज्ञानीयाध्यायः



## हिताहितीयाध्याय और भाषा यज्ञ पुरुषीयाध्यायः

मिश्रखंडकी समाप्ति ।

बृहन्निघण्टुरत्नाकरके मिश्र
खंडकी अनुक्रमणिका
समाप्ता.

# अथ मूत्रपरीक्षा

अथातः संप्रवक्ष्यामि मूत्रस्य च परीक्षणम् ॥
येन विज्ञानमात्रेण रोगचिह्नं प्रकाशते ॥ १॥

अर्थ–अब नाडीदर्पण कहनेके अनंतर हम मूत्रपरीक्षण कहतेहै, जिसके जाननेसै. रोगके चिन्ह प्रतीतहोतेहै. ।

मूत्रपरीक्षाका समय ।

निशांतयामे घटिकाचतुष्टये उत्थाप्यवैद्यः किल रोगिणां च ॥ मूत्रं धृतं काचमये च पात्रे सूर्योदये तत्सततं परीक्षेत् ॥ २ ॥

अर्थ–रात्रिके चौथेप्रहरकी जब ४ घडी रात्रि बाकीरहै तब वैद्य रोगीको उठाय कांचके पात्रमें मूत्रकराकर धररक्खे जब सूर्योदयहोवे तब उसमूत्रकी परीक्षाकरे ।

तस्याद्यधारां परिहृत्य मध्यधारोद्भवं तत्परिधारयित्वा ॥
सम्यक् परिज्ञाय गदस्य हेतुं कुर्य्याच्चिकित्सां सततं हिताय॥३॥

अर्थ–रोगीके मूत्र लेतेसमय प्रथम और अंतकी धाराको त्यागकर वीचकी धारको लेवे तथा उसमूत्रसें रोगका कारण जानकर रोगीके हितार्थ औषधि करे ।

वातेंच पांडुरं मूत्रं सफेनं कफरोगिणां । रक्तवर्णं भवेत्पित्ते द्वंद्वजे मिश्रितं भवेत् ॥ सन्निपाते च कृष्णं स्यादेतन्मूत्रस्य लक्षणम् ॥ ४ ॥

अर्थ–रोगीका मूत्र वातविकारसें पांडुरवर्णहोताहै कफविकारसें झागयुक्त पित्तविकारसें रक्तवर्ण और द्वंद्वजव्याधिसें मूत्र मिश्रवर्णका होताहै और सन्निपातसें कृष्णवर्ण होताहै । ये मूत्रके सामान्य लक्षण जानने ।

---

१ वातेन पाण्डुरं मूत्रं रक्तं नीलं च पित्ततः । रक्तमेव भवेद्रक्ताद्धवलं फेनिलं कफात् ॥ इति पुस्तकान्तरे.

नीलं च रूक्षं कुपिते च वायौ पीतारुणं तैलसमं च पित्ते ॥
स्निग्धं कफे पल्वलवारितुल्यं स्निग्धोष्णरक्तं रुधिरप्रकोपे ॥५॥

अर्थ–मतांतर कहतेहै. कि वातके कोपसैं रोगीका मूत्र नील और रूक्ष होताहै। पित्तके कोपसैं पीला और लाल तथा तेलके समान होताहै। कफके विकारसैं रोगीका मूत्र चिकना और पोखराके जलके समान गदला होताहै।

मातुलुंगरसाभासं सौवीराभं जलोपमम् ॥ प्रपाकरहितानां च मूत्रं चन्दनसन्निभम् ॥ ६ ॥

अर्थ–जिसके अन्न भलेप्रकार पाचन नहीं होताहै उसका मूत विजोरके रसके समान अथवा कांजीके समान अथवा जलके समान किंवा चन्दनके समान उतरताहै।

अजीर्णप्रभवे रोगे मूत्रं तंदुलतोयवत् ॥
नवज्वरे धूम्रवर्णं वहुमूत्रं प्रजायते ॥ ७ ॥

अर्थ–अजीर्णसैं जो विकारहुआहो उसमें मूत्र चावलके धोवनके समान होताहै। और नवीन ज्वरमें मूत्र धूंएके समान तथा वहुतहोताहै।

पित्तानिले धूम्रजलाभमुष्णं श्वेतं मरुच्छ्लेष्मणि बुद्बुदाभम् ॥ सश्लेष्मपित्ते कलुषं सरक्तं जीर्णज्वरे सृक्सदृशं च पीतम्। स्यात्सन्निपातादपि मिश्रवर्णं तूर्णं विधिज्ञेन विचारणीयम् ॥ ८ ॥

अर्थ–मूत्रवातपित्तके कोपसैं धूम्रवर्ण, गरम, और जलके समानहोताहै। वातकफके विकारसैं सपेद तथा ववूलेदार होताहै। कफपित्तके विकारसैं लाल तथा दूषितहोता है। जीर्णज्वरहोनेसैं पीला तथा रुधिरके समान होय। और सन्निपातहोनेसै मूत्र अनेकप्रकारके मिश्रितवर्णका होताहै। इसप्रकार वैद्यको मूत्रके वर्ण जानने चाहिये।

परीक्षा विधिवत्कार्या रोगिमूत्रस्य तत्वतः
तृणेन दापयेत्तैलविन्दुं तत्रातिलाघवात् ॥ ९ ॥

अर्थ–रोगीके मूत्रकीयथाविधिसैं उत्तमपरीक्षा करनी चाहिये। वह इसप्रकारकि पूर्वोक्त धरेहुए मूत्रमें तिनकासैं लेकर वैद्य शीघ्रतेलकी वूंदडाले फिर उसकी इसप्रकार परीक्षाकरे।

विकासिचेत्तैलमथासु मूत्रे साध्यः स रोगी न विका-
सितं चेत् ॥ स्यात्कष्टसाध्यस्तलगेत्वसाध्यो नागा-
र्जुनेनैव कृता परीक्षा ॥ १० ॥

मूत्रमें डालीहुई तेलकीविंदु यदि सबमूत्रके ऊपर फैलजावे तो जाने रोगी साध्यहै। और यदि न फैलेतो जाने कि रोगकष्टसाध्यहै। तथा वहतेलकी बूंद मूत्रके नीचे बैठ जावे तो असाध्यजानना यह नागार्जुन सिद्धकी करी हुई परीक्षाहै

पूर्वाशां वर्द्धते विन्दुर्यदा शीघ्रं सुखी भवेत् ॥
दक्षिणाशां ज्वरो ज्ञेयस्तथारोग्यं क्रमाद्भवेत् ॥ ११ ॥

अर्थ- मूत्रमें डालीहुई तेलकी बूंद यदि पूरवकीतरफ फैले तो रोगी शीघ्र अच्छाहो और दक्षिणदिशाकी तरफ फैले तो ज्वरजानना। वह रोगी औषधदेनेसे अच्छा होय।

उत्तरस्यां यदा विन्दोः प्रसरः संप्रजायते ॥
अरोगिता तदा नूनं पुरुषस्य न संशयः ॥ १२ ॥

अर्थ-यदि तेलकी विंदु उत्तरदिशाकी तरफ फैले तो रोगी रोगरहितहै इसमेंसंदेहनहीहै।

वारुण्यां प्रसरे द्विन्दुः सुसध्योऽपि न जीवति ॥ १३ ॥

अर्थ-यदि पश्चिमदिशामें तेलकी विंदु फैलतो उसरोगीको सुख तथा आ-रोग्यहोय।

विकाशितं हलं कूर्मं सैरभाकारसंयुतं ॥ करण्डमण्डलं वापि
नरं मूर्धविवर्जितं ॥ १४ ॥ गात्रखण्डं च शस्त्रं च खड्गं मु-
शलपट्टिशम् ॥ शरं च लगुडं चैव तथैव त्रिचतुःपथम् ॥१५॥
विन्दुरूपं नरो दृष्ट्वा न कुर्वीत क्रियांकिचित् ॥

अर्थ-यदि तेलकी विंदु हल, कछुआ, भैसा, तथा करंड (पिटारी) मंडल. अथवा मनुष्यके धडके समान अथवा तोडेहुए हाथपरके समान अथवा शस्त्र, तलवार, मूसळ, पट्टा, वाण, दंड, किंवा तिराहे-चौराहेके आकार अथवा विंदुरूप होयतो उसरोगीकी चिकित्सा न करे।

हंसकारंडताडागं कमलं गजचामरम् ॥ छत्रं वा तो

रणं हर्म्यं सुपूर्णं दृश्यते यदि ॥ आरोग्यता ध्रुवं ज्ञेया तदा कुर्यात्प्रतिक्रियाम् ॥ १७ ॥

अर्थ-यदि तेलकी विंदु हंसपक्षीके समान, खंजन, तलाव, कमल, हाथी, चमर, छत्र, तोरण, किंवा मेहेल, इनके आकार होय तो उस रोगीको आरोग्यहोय अतएव उसका यत्न करना चाहिये ॥

तैलविन्दुर्यदा मूत्रे चालनीसदृशी भवेत् ॥
कुले दोषो ध्रुवं ज्ञेयः प्रेतदोषसमुद्भवः॥१८॥

अर्थ-यदि तेलकी विंदु मूत्रमें चालनीके छिद्र सदृश होय तो उसरोगीको कुलदेवका दोष अथवा प्रेतदोष जानना चाहिये ॥

नराकारं प्रजायेत किम्वा स्यान्मस्तकद्वयम् ॥
भूतदोषं विजानीयाद्भूतविद्यां तदाचरेत् ॥ १९ ॥

अर्थ-तैलबिंदू मूत्रमे मनुष्याकार अथवा दो मस्तकके आकार होयतो उस रोगीको भूतदोषहै इसप्रकार विचार उसका यत्र मंत्रादि भूतविद्याका प्रयोग करना चाहिये ।

मांजिष्ठाभं धूम्रवर्णं च नीलं स्निग्धं मूत्रं वारितुल्यं च शीतम् ॥ ज्ञात्वा चित्ते बुद्धिमान्मानुषाणां कुर्यात्त्वं तद्भेषजं रोगिणां च ॥ २० ॥

अर्थ-यदि मूत्र मजीठके रंगके समान अथवा धूम्रवर्ण, नीला, चिकना, पानीके समान शीतल होयतो बुद्धिमान वैद्यको उसरोगकी औषध करना चाहिये ।

सर्पाकारं भवेद्वाताच्छत्राकारं तु पित्ततः ॥
श्लेष्मणा मौक्तिकाकारमित्येतन्मूत्रलक्षणम् ॥ २१ ॥

अर्थ-तैलबिंदु मूत्रमें वातविकारसैं सर्पके समान तथा पित्तकोपसैं छत्रके समान तथा कफकोप करकैं मोतीके समान होयहै इसप्रकार मूत्रलक्षण जानना ।

प्रकारांतरेण परीक्षा

अहोरात्रेण विसृजेत्स्वस्थो मूत्रमनाविलम् ॥ अपाण्डुरं च तरलं पलानामष्ट सम्मितं॥२२॥वाहुल्येन जलं तत्र काठिन्नं स्वल्पमेषाहि ॥ दृश्यते पलमूत्रेतु चतुर्गुंजाऽद्रवास्थिति॥२३॥

अर्थ–स्वस्थ मनुष्य दिनरात्रमें ८ पल निर्मल कुछ पांडुवर्ण तरल मूत्र परित्याग करताहै उसमें वहुधा जलभागहै, और कठिन भाग अल्पहै, परीक्षा-द्वारा निश्चय हुआहै कि १ पल मूत्रमें ४ रत्ती कठोर पदार्थहै ।

वस्तिदेशे समुद्विग्ने मलेष्वन्त्रे चितेषु च॥ तस्मिन् कृमिगणाकीर्णे दाहैर्वापि सुदारुणैः ॥ २४ ॥ नार्याश्चापन्नसत्वाया अश्मर्या वापिनिःस्रवेत् ॥ सुकृच्छ्रं विन्दुशस्तद्वानस्रवेद्वापि किञ्चन ॥ २५ ॥ वस्तौविस्तीर्णतां याते तद्ग्रीवाकुञ्चनात्तथा ॥ मस्तुलुंगरुजामूत्रं संचितं वापि न स्रवेत् ॥ २६ ॥ विद्रधिर्मूत्रपिण्डे चेद्विसूचीवापि दारुणा ॥नोत्पद्यते ततो मूत्रंतद्ग्रंथावपि कश्चन । वस्तेः प्रदाहतो मूत्रं तद्ग्रंथावपि किञ्चन ॥ २८ ॥ वस्तिः प्रदाहतो मूत्रं विन्दुशस्तु स्रवेत्सदा ॥ द्रवानियोगाच्छैत्येन संयोगाच्चाति वर्द्धते ॥

अर्थ–वस्तिदेशका उत्तेजन, अंत्रोंमें कृमि तथा मलसंचय एवं दाह पथरी इन सव कारणोंसें तथा गर्भवती स्त्रीआदिके मूत्र वडे कष्टसें वूंद वूंद होकर निकले, अथवा एकसाथही मूत्र उतरना वंद होजावे, एवं मूत्राशयकी विस्तीर्णता उसके ग्रीवादेशका संकोचहोना मस्तिष्कमे पीडा और संचितमूत्रका न-उतरना । मूत्रग्रन्थिकी विद्रधि तथा विसूचिकारोगमें उक्तग्रंथिसें एकसाथ मूत्र उत्तरे नहीं । वस्ती अर्थात् मूत्राशयमें दाहकेसाथ विंदुविंदु होकर मूत्र निकले अधिक पतले पदार्थपीनेसें और देहको शरदीलगनेसें मूत्र अधिक उतरताहै ।

व्याधिक्षीणशरीरस्य नष्टसंज्ञस्य देहिनः ॥ तस्य स्वेदस्य वात्यर्थं वृद्धिः स्यान्मृत्यवेमता ॥ ३० ॥ विरत्या द्रवपानाच्च स्वेदाधिक्यात्सृतेऽसृजि ॥ जलोदरेऽतिसारे च मूत्रं स्तोकं स्रवेन्नृणाम् ॥ ३१ ॥

अर्थ–व्याधिद्वारा क्षीणदेह तथा चेतना विहीन रोगीके मूत्रकी वृद्धी और पसीने अधिक आवेतो वह रोगी निश्चयमरे द्रवपानकी अल्पता तथा द्रवपानमें वैराग्य, रक्तस्राव, जलोदर और अतिसाररोगमें मूत्र अत्यंतथोडा उतरताहै ॥

# यूनानी मतानुसार मूत्रपरीक्षा.

दोषैराक्रान्तदेहस्य प्रतिकर्तुं रुजां चयम् ॥ मूत्रनाडी परीक्षा तु प्रथमं परिभाव्यते ॥ ३२ ॥ मरीजवीमार रोगी स्यात्तत्परीक्षा द्विधैव हि ॥ शनाशी नव्जकारूरा नाडीमूत्रस्य सा स्मृता ॥ ३३ ॥

अर्थ-दोषोंकरके आक्रान्त देहकी रोगोंसें यत्नकरनेके लिये प्रथम हम मूत्र और नाडीकी परीक्षा कहतेंहै तहां रोगीको यूनानीभाषामें मरीज और विमार कहतेंहै उसकी परीक्षा दो प्रकारकीहै प्रथम शनाशी जिसमें नव्ज और कारूरा अर्थात् नाडी और मूत्रकी परीक्षाहै तहां प्रथम मूत्रपरीक्षा कहतेंहै ।

मूत्रकेवर्ण

सुपेद अवियज स्वेतं स्याह अस्वद मेचकम् ॥ जर्द अस्कर पीतं स्यात् सुर्ख अहमर रक्तकम् ॥ ३४ ॥

अर्थ-मूत्रके वर्ण चार प्रकारकेहै जैसें सफेद, अवियज, ए दोनों श्वेतवर्णके नामहै स्याह और असवद एकालेवर्णके नामहै जर्द और अस्कर ए पीतरंगके नामहै एवं सुर्ख और अहमर लालरंगको कहतेंहै ।

सितमच्छं च वहुलं मूत्रं शैत्यविशेषतः ॥ शुभ्रं सान्द्रं कफोद्रेकादसान्द्रं दोषपाकतः ॥३५॥ अवदातं घनं चापि विच्छिन्नं श्लेष्मदोषतः ॥ उपायोगदितो वैद्यैस्तत्रमूत्र विरेचनं ॥ ३६ ॥

अर्थ-जिसरोगीका मूत्र सपेद, स्वच्छ,और वहुतहो उसके शीतकी विशेपता जाननी और जिसकामूत्र सपेद और गाढाहो उसके कफकी आधिक्यता जाननी एवं पतलामूत्र दोषपाकहोनेसें होताहैं उसीप्रकार सपेद गाढा और लहसदार कफके विकारसें होताहै इसका उपाय वैद्योंने मूत्र विरेचन अर्थात् इन्द्री जुलाब देना कहाहैं ।

असितं मलिनं वातकोपवैकृत्यसूचकम् ॥ सौदा विकृतिजं चापि परिज्ञातं भिषग्वरैः ॥३७॥ श्यामलं घनविच्छिन्नं सौदा

कोपेन संभवेत् ॥ सब्ज अरज्वर पालाशं भवेन्मूत्रं विषाशिनः ॥ ३८ ॥ श्यामं सान्द्रं च यन्मूत्रमूष्मणा दग्धदोषताम् ॥ प्रकटी कुरुते दोषविचारे भिषजं प्रति ॥ ३९ ॥

अर्थ- जो मूत्र काला और मलिनहो वो वातकोपको सूचित करताहै तथा यही सौदाकी विकृतताको भी सूचना करताहै एवं श्यामरंग और गाढा यह सौदाके कोपसैं होताहै सब्ज और अरज्वर पलासीरंग अर्थात हरितवर्णहोताहै ऐसा मूत्र जिसरोगीनें विषभक्षण कराहो उसका होताहै और जिस रोगीका मूत्र काला और गाढाहोय वह गरमीसैं दोषोको दग्धहोना सूचित करताहै ।

शुष्कस्यपवसस्येव नीरं यद्भावनाद्भवं ॥ईषत्पीतं हि मन्दाग्ने रंगतिब्नी उदाहृतः ॥ ४० ॥ फलपूरत्वगाभासं तीक्ष्णाऽग्ने रुपजायते॥तुरंजी उत्रजी चेति नाम्नावर्णः प्रकीर्तितः॥४१॥ ज्वलनज्वालभं यत्तू रक्तं पीतं च मेचकं॥सवर्ण आतशीनारी प्रोक्तस्तस्य परीक्षकैः ॥ ४२ ॥

अर्थ- सूखे जो के भूसेको रात्रीमें भिगोनेसैं प्रातः काल पानीकारंग होजाता है उस ईषत्पीतरंगको तिब्नीरंग कहते है ऐसामूत्र मंदाग्निवालेका होता है और विजोरे नींबूकेरंगको तुरंजीरंग और उत्रजीरंग कहते है यह तीक्ष्णाग्नीवालेका होता है एवं अग्निकी ज्वालाका जैसा लाल और पीलारंग होता है ऐसा हो या मोरकी चंद्रकाके आकार स्यामिश्रितरंग हो उसवर्णको आतसी और नारीरंग मूत्र परीक्षकोंनें कहाहै.

तत्रोष्मणाखरत्वंतुदोषाणांजातमुच्यते ॥ इहतएकस विज्ञेयः सोख्तगी हिर्कितस्मृताः ॥४३॥ मुहतरिक् दग्धकर्त्ता स्यादेषशब्दास्थितोर्वोधि । जाफरानी कुंकुमाभमत्युष्णज्वरिणोर्भवेत् ॥ ४४ ॥

अर्थ- ऐसा उक्तरंग दोषोंके अत्यंत गरमीकी प्रखरतासैं होताहै उसमें भी एक सोख्तगी और हिर्कित कहाताहै और दोष दग्धकर्त्ताको मुहतरिक् कहते है और जिस मूत्रकावर्ण केशरिया हो उसको जाफरानीरंग कहते है यह अत्यंत उष्ण ज्वरवालेका होताहै ।

ऐरावतफलाभासो नारंजीवर्ण उच्यते ॥ तत्सादृशं भवे

न्मूत्रं रक्तपित्तविकारिणः ॥ ४५ ॥ वर्दी गुलाबी पर्यायौ पाटलं वदतो गुणम् ॥ असहव किंचिदेतस्मादवदातः स्मृतो बुधैः ॥ ४६ ॥ वर्णद्वयानुगंमूत्रंजायतेरक्तवेगतः ॥

अर्थ– जो मूत्रनारंगीके रंगका हो उसको नारंगीवर्ण कहते है ऐंसा मूत्र रक्तपित्त रोगीका होता है जो मूत्र पाटलहो उसको वर्दी ओर गुलावीरंग कहते है यदि इसगुलावीमें जो मूत्र कुछ सपेदहो उसको असहव कहते है ये दोनो प्रकारका मूत्र रक्तवेगके कारणसें होता है ।

कानी त्वत्यन्तशोणःस्याद्दाडिमीकुसुमादपि ॥ तत्रास्त्रप्राज्यभावेतु शोधनं शस्तमीरितम् ॥ अक्तं यावकवर्णस्याद्दग्धासृग्लक्षणंवदेत् ॥ ४८ ॥ अप्करी रंगगुल्लाला रक्तकोपज्वरेभवेत् ॥ समास्तन्मुख्यवर्णानां व्यंजनं समुदाहृतम् ॥ ४९ ॥

अर्थ– जोमूत्र अनारकेफूलसेंभी लालहोवे उसको फारसीमें कानी रंग कहतेहै यह अत्यंतखूनके वढनेसें होताहै इसका शोधन करना उत्तम कहाहै जो मूत्र गुल्लालारंगकाहोवे उसको फारसीमें अपकरी रंग कहतेहै यह रक्तकुपित ज्वरमें होताहै यह हमनें संक्षेपसें मूत्रके वर्णोंका वर्णनकराहै विशेष भाषामेंदेखो

मूत्रकी परीक्षा तीनप्रकारसें करी जाती हैं जैसे प्रथम आरोग्यावस्थाका मूत्र देखना फिर रोगावस्थाका और तीसरे मूत्रकी दशाका निश्चय करना फारसीमें मूत्रको वोलू कहते हैं परंतु लौकिकमें कारूरः कहते है इसका यहकारण है कि कारूरः एक शीशीका नाम है, जिसमें वैद्यजन मूत्रकरके देखते है अव कहते है कि यह प्राणी जो जल पीता है वह प्रथम मेदामे आहारके साथ मिंलकर उस आहारको द्रवीभावमेंकर कैलूस निर्माण करताहै फिर रुधिरवाहिनीमें भ्रमण करताहुआ हृदयमें परिपक्वहो फिर गुरदेमें हो मूत्राशयमें संचित होताहै और जो कुछ रुधिरमें मिलाहुआ हृदयमें रहजाता है. वह धमनि नाडियोंके द्वारा सर्वदेहमें पहूचकर कुछ पसीने सै निकल जाता है और कुछ फिर गुरदेमें हो मूत्राशयमें गिरता है इसी कारण मूत्र रंगीन हो जाताहै जिस मनुष्यके पसीना अधिक आता होगा उसके मूत्रभी थोडा उतरेगा और जिसके पसीने थोडे आते होगे उसके मूत्र अधिक उतरताहै जव मूत्र मूत्राशयमें संचित होजाताहै तव इस प्राणीको मूत्रकरनेकी कांक्षा होती है अतएव सर्वदेहकी चेष्टा इसमूत्रसें उत्तमप्रकार निश्चय हो सकती हैं अव कहते है कि मूत्रदेखनेको इतना वडा

शीशी लेवे कि समग्र मूत्र आये जावे और कुछ खालीरहे कि हिलाने चलानेमें अडचल न होवे, वैद्यको यहभी स्मरणरहे कि मूत्र दोघडीपीछे परीक्षाके योग्य नहीं रहता और यहतो अवश्य याद रक्खे कि शरदीमें मूत्र स्वतःस्वभावसैं ही गाढा रहताहै और गरमीकी ऋतुमें पतलाहोताहै. । मेंहदीके लगानेसै एवं रंगदार वस्तुके खानेसै मूत्र रंगिन उतरता है वहुत हरितशाक खानेसैं मूत्र हरितरंगका उतरताहै. एवं केशर, सनाय, अथवा अमलतासके पीनेसैं मूत्र पीला उतरताहै वहुत भूखारहनेसैं क्रोधसैं. रात्रिमें जगनेसैं मूत्र लालरंगका उतरताहै। वैद्यको उचितहैकि ऐसे मूत्रकी परीक्षा रोगी या रोगीके बांधवोंसैं प्रथमही करलेवे नहींतो परीक्षामें विपरीतता हो जावेगी। मूत्रके देखते समय किसीप्रकारकी छायां तथा किसीवस्तुका प्रतिबिंब उसपर न पडताहो औरकिसीसमय मूत्रके समान और वस्तु दृष्टिमें आजातीहै तो अपक्ववैद्य धोका खाजाताहै जैसै सिकंजवी, जल मिला सहत, और मूत्र समीपके देखनेसै गाढा प्रतीतहोताहै और दूरसैं स्वच्छ प्रतीत होताहै परंतु सिकंजवीआदिमें इस्सें विपरीत ज्ञान होताहै अतएव इसप्रकारकी परीक्षा वैद्य प्रथमकरलेवे.

प्रसंगवस पशुमूत्रकी परीक्षाकहतेहै जैसै गद्धेका मूत्र सपेद और गाढा होताहै. घोडेका पतला और सपेद होताहै. परंतु ऊपरका आधास्वेत और नीचेका आधागाढा होताहै

ऊँटका मूत्र पीला और मनुष्यमूत्रके समान होताहै परंतु मनुष्यके मूत्रसैं नहीं मिलता

मूत्रकी आठप्रकारसैं परीक्षा करतेहै जैसैकि रंग, पक्वता, स्वच्छता, समल, गंध, फैन, रसूव, और प्रमाण,

## तहां प्रथम रंगका ज्ञान कहतेहैं

| पीलेरंगके छः भेदहै. | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| केशरी. | रक्तवर्ण. | अग्निवर्ण. | पीतरक्तताविशिष्ट. | नारंजी. | तृणप्रक्षालन. सदृश. | संस्कृतनाम |
| जाफरानी. | अहमर. | नारी. | अशकर. | उत्तरजी. | तत्रनी. | फारसी नाम |
| केशरीवर्णका मूत्रज्वर-पांडुरोग आदिसैं होताहै. | लालवर्णकामूत्र रुधिरकोपसैं होताहै. | जैसे अग्निज्वाला पीली और चमकदार होतीहै ऐसा मूत्र अत्यंत गरमीके कारण होताहै. | पीत और रक्तता मिश्रित वर्णभी पित्ता.धि.यसैं होताहै. | सगतराके समान अथवा नारंगकिसमान मूत्रका वर्ण रक्तपित्तके कोपसैं होताहै | तृणधोवनके समान मूत्रकावर्ण कफपित्तकुपितके कारण होताहै. | व्यवस्था |

| हरितवर्णके भेद. | | | कृष्णवर्णके भेद | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| अतिहारित. | हरित. | नीलवर्ण. | श्वेतकृष्ण. | हरितकृ- | रक्तकृष्ण. | केशरी. |
| कुर्रानी. | जंगाली. | नीला | स्याह. | सवज-स्याह. | अहमरी. | जाफरानी. |
| गंदनेकासा रंग अथवा वृक्षपत्रकाजल जैसा ऐसा मूत्र गरमी और पित्तके जलनेसे होताहै. | मूत्रजंगारके रंगका होतो वातपित्त मिश्रितजानना | सर दीसे मूत्र नीलवर्णका होताहै यदि-बालकका मूत्र नीला हो तो पक्षाघात आदिवातका विकारजाने. | जो मूत्र प्रथम सपेद फिर काला प्रतीत हो तो कफ जलकर वात हुआजाने. | जो प्रथम हरित और पीछे कृष्णवर्ण हो तो कफ जलकर सौदा वात हुआहै. | जो प्रथम रक्त फिरकृष्ण हो जावे तो जानेकिरुधिरविगड़कर वात बनगयाहै इसमेंदुर्गंध बहुत होताहै. | प्रथमपीला औरपीछे काला होजावेतोपित्तजलकर वात होगया ऐसानिश्चयकरना. |

| रक्तवर्णके भेद. | | | श्वेतवर्णके भेद. | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पिकवर्ण. | रक्तकृष्ण. | पाटलवर्ण. | पाटलवर्ण. | कृत्रिम. | स्वाभाविक. |
| अकरम. | अहमर-कानी. | वरदी. | असहव. | मिजाजी. | हकीकी |
| जिसमें रक्तता अधिक और कृष्णता स्वल्प हो तो रुधिर कोप और गरमी कुछ न्यून जाने. | जिसमूत्रमें रक्तता हो परंतु कृष्णवर्ण अधिक हो तो रुधिरकोप जाने परंतु गरमी अधिकहै. | जो मूत्र गुलाव पुष्पके समान रंगमें हो तो रुधिरकी आधिक्यता और गर्मी जाने. | जो मूत्र प्याजके पत्तेकेसमान रक्तमिश्रित श्वेत होतो रुधिरकी स्वल्पता जाने. | जो मूत्र स्वच्छ जलकेसमान प्रतीत होतो शरदी अथवा दुर्वलताको सूचितकरे है. | दूधके समान सपेदी होनेसे मूत्र कफाधिक्यको सूचित करताहै. अथवा चरबी निकलती है. ऐसा जाने. |

अब पक्कता ( किवाम ) के जाननेका प्रकार लिखतेहै । वह तीनप्रकारकाहै इसके लिखनेसें यह प्रयोजनहै कि वैद्यको यह परीक्षा करनी चाहिये कि इसरोगीका मूत्र पक्कहुआ निकलाहै या कच्चा ॥

| मूत्रकी पक्कापक्कदशा दर्शक कोष्टक | | |
|---|---|---|
| मध्यम | घन | द्रव |
| मोतदिल | गलीज | रकीक |
| नैरोग्य अवस्थावाले प्राणीका मूत्र मध्य अवस्थाका अर्थात् न बहुत पतला और न बहुत गाढा ऐसा उतरताहै । | वातादि दोषोके अत्यंत बढनेसें मूत्र बहुत गाढा उतराहै यदि अंतर्व्रणके फटनेसे आँतोंकी गाँठ खुलनेसे अथवा जीर्णज्वरमें गाढामूत्र होवेतो बुरा है । | यदि देहमें शरदी अधिकहो या मंदाग्नि तथा बहुत जलपीनेसे मूत्राशय और बस्तीमें दुर्बलताके कारण इस प्राणीका मूत्र पतला उतरता है |

## स्वच्छता

अब कहतेहै कि निर्मलता ( सफाई ) और अनिर्मलता ( गदलाहट ) सें रोग ज्ञातहोताहै । यदि रोगीका मूत्र स्वच्छ उतरेतो जानेकि पाक होकर उतरा है । यदि गदला प्रतीत होवे तोजाननाकि अपक्क मूत्र उतराहै । अर्थात् पानी हजम नही हुआ ॥ देहकी कुव्वत घटनेसें मूत्राशयमे मूत्रशुद्ध नही होता, एवं अंतर्व्रणकी सूजनसें मूत्र गदलासा प्रतीत होताहै ॥

इनमें गाढा और गदलेकी पृथक २ परीक्षा इसप्रकारहै कि जोमूत्र गाढाहो ताहै वह ऊपर नीचे समानरहताहै । और जो गदला होताहै वह बीचमें अथवा नीचे गाढा और ऊपर पतला प्रतीतहोताहै ॥

## रसूब ( ऊर्द्ध्व.मध्य अधोभागस्थ )

रसूब तीनप्रकारकाहै जैसे १ असफल, २ औसत, ३ फक, १ असफल अर्थात् अधोभागस्थित, २ औसत मध्यभागस्थित, ३ फक नाम ऊर्द्ध्वभागस्थित–फिर उस रसूबके दो भेदहै । एकश्वेत, दूसरारक्तवर्ण, तहां सपेदरंगका रसूब उससमय होताहै जब जठराग्नि ( पाकदशा ) शुद्धहोतीहै । और रक्तवर्णकारसूब पाकदशाके गडबड होनेमें दृष्टिगोचर होताहै ॥

| पूर्वोक्तपाकदशाकाचक्र | | |
|---|---|---|
| ऊर्द्धस्थ | मध्यस्थ | अधस्थ |
| फौक | औसत | असफल |
| और जिसप्राणीके मूत्रमें वायुके अंश अधिक होवे तथा पुरुषार्थभी अधिक होवे तो उसके परमाणु मूत्रके ऊपर आजाते है | मूत्रमें वायु मध्यमदशामें रहे और पुरुषार्थभी देहमें मध्यम होता है तो उसके परमाणु मध्यमें रहते है । | जब मूत्रमें वात न्यूनहो तयादेहमें निर्बलता अधिकहो तो उस मूत्रके परमाणुनीचे वैठ जावेगे |

## डाक्टरीमतानुसारमूत्रपरीक्षा

इदानीं कथयिष्यामि चमत्कृतिकरं परं।
डाक्टरीमतमालोक्य मूत्रस्य च परीक्षणम् ॥

अर्थ—अब हम परमचमत्कृति कारक डाक्टरी मतके अनुसार मूत्रपरीक्षा कहतेहैं। डाक्टरीमें मूत्रको (यूरन) Uran कहतेहै उसकी तीनमकारसें परीक्षा कहीहै । अर्थात् आरोग्यावस्थाकामूत्र, रोगीकामूत्र, और मूत्रकी दशा निर्णयकरनेकी विधि. ॥

## आरोग्यावस्थामेंमूत्रकीपरीक्षा

रोग रहित प्राणीका मूत्र निर्मल और कहरवाई ( हलके ) रंगका होताहै । जिसका स्पिसिफिकग्रेवेटीतोल ( वजनमुतनासिवह ) १००३ से लेकर १०३० पर्यंत होताहै । परंतु कभी २ आहार, विहारके कारणसैं न्यूनाधिक होजाताहै । अर्थात् जेसा भोजन और चेष्टाकरताहै उसीके अनुसार होताहै. ॥

जेसै यूरिनापोटास ( Urina Potas )अर्थात् द्रव ( पतली ) वस्तुके पीनेसैं पीछे जो फीकेरंगका मूत्रहोताहै उसका स्पिसिफिकग्रेवटी ( तोल ) १००३ सें १००९ तकहोतीहै ॥

यूरैनाकाईलाई ( Urina Chyli ) अर्थात् भारीपदार्थके पचनेके पश्चात् जो मूत्रहो उसका स्पिसिफिकग्रेवटी १०३० होतीहै ॥

यूरिनासें ग्यूनिस Urina Segunis अर्थात् अत्यंतसोनेके पश्चात् प्रातःकालके मूत्रका स्पिसिफिकग्रेवटी १०१५ सें १०२५ तक होवाहै । इसीकारण पडताफेलानेसैं मूत्रका स्पिसिफिकग्रेवटी १०२० पर्यंत गिना गयाहै ॥

२४ घंटे अर्थात् आठमहरके करेहुए मूत्रका प्रमाण ४० औन्स अर्थात् सेरसैं कुछ अधिक होताहै । कि जिसमें १॥ अंशके लगभग भारीवस्तु पाईजातीहै ॥

मूत्र निकलतेही उसमें देहकी गरमीके अनुसार गरमीहोतीहै । तथा एकप्रकारकी गंधहोतीहै । परंतु कुछसमयके पश्चात् यह दोनो बात जाती रहतीहै ॥

तत्कालके मूत्रका खारीस्वादहोताहै, यदि थोडीदेर रखदिया जावेतो लैक्टिकएसिड वो एसिटिकएसिड उत्पन्न होनेसैं खट्टा होजाताहै । तथा अधिक देरीतक रखेरहनेसैं उसका घनभाग ( म्युकस ) नीचे पैंदेमें बैठजाताहै । जिमें यूरिकएसिडकीकलमें अलग दिखाई देतीहै । यदि उसके पश्चात् देरीतक धरारहनेसे सडजाताहै । और कारबोनेट आफएमोनियामें यूरियाके बदलनेसैं खारी दुर्गंधितहोजाताहै तथा उसके ऊपरके भागमे झाग प्रतीत होतेहे । जिसमें फासफेट निमक मिलताहै । उसके पीछेभी मूत्रको रखनेसे नीलेरंगके कालापनलिये झाग होजातेहै औरकाई पैदा होजाती है ॥

मूत्रमें दोप्रकारकी वस्तुरहतीहै । एक आरगेनिक, दूसरी इनआरगेनिक, आरगेनिक वो वस्तुहै जो जरायुज और उद्भिजके स्वरूपमें मिलतीहै । उनमेंसैं इतनीवस्तु मुख्यहै यूरिकएसिड-हिप्यूरिकएसिड–लेक्टिकएसिड–एमोनियाकानमक और कुछक्रियेटेन–कीएटीनैन–इत्यादि ॥

इनआरगेनिक ( धातुरूप पदार्थों ) मेंसैं वह निमकहै जो सोडापोटास–लाइम–मेग्नेशिया–केसाथ कार्बोनिकएसेड–हैड्रोक्लोरिकएसिड–सलफ्यूरिकएसिड–स्फास्फोरिकएसिड केसंयोगसैंबनतेहैं । और अतिसूक्ष्म प्रमाणमें सिलीका फौलाद क्लोरिन भीमिलताहै ॥

पूर्वोक्त दोप्रकारके अतिरिक्त मूत्राशयकी म्यूकस और एपिथी लियलसैल्सभी मूत्रमें मिलतेहै ॥

## मूत्रमें जो वस्तुहै उनका प्रमाण निम्न लिखित चक्रसैं जानो ।

| नकसा | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पानी | ९५० | | हिप्पूरिक एसिड | ० | २५ |
| यूरिया | २४ | ७ | फास्फेटन्‌नमक | ९ | ०० |
| यूरिकएसिड(पाषाणभाग) | ०० | ३० | सैलफेट नमक | ६ | ०० |
| क्रियटन | १ | २५ | हैड्रोक्लोरेटनमक | ८ | ०० |
| क्रियटिनैन | १ | २० | सबामिलकर | १००० | |

मूत्रपरीक्षामें इतनी वातोंका जानना मुख्यहै। मूत्रनिकलनेकीरीति, प्रमाण, स्पेसिफिकग्रावटी, रंगत, गंधी, स्वाद, तथा नीचेबैठने वाली वस्तुए तहां॥

## मूत्रनिकलनेकीरीति

जब मूत्र कष्ठ और कठिनताकेसाथ निकले तथा पेसाबके स्थानपर दाहहोय जैसै-सूजाक, मूत्राघात, और मूत्राशयकी सूजनमें, तो उसे(डिसयूरिया)कहतेहै॥

यदि मूत्रनिकलनेमें अत्यंत कष्टहो और बूंद २ टपके तथा सीवनके स्थानपर दाहपीडा, और मरोडाहो जैसै-सारपीन या मक्खी केखाने अथवा उक्तरोगोंकी अधिकताहोनेसै तो उसे (स्टंग्यूरीकहते) है.

मूत्रका विलकुल वंद होजाना इस्चुरियाकहाताहै॥ यह दो प्रकारसे होताहै। एकतो यह कि मूत्रोत्पत्तीही न होना। दूसरे मूत्रके मार्ग रुकनेसैं होताहै॥

मूत्राशयकी सूजनके कारणसैं मूत्र वेअख्तियार या उसकीहाजतवारंवारहो, या मूत्राशयकी गर्दनमें फालिजहोनेके कारण बूंद २ मूत्रटपके तो उसको (एन्यूरेसिस) या (इन्कांटीनेन्शआफयूरेन्) कहते है.॥

पतलीचीजोके पीनेसैं-पसीनेकमनिकलेसै जैसैं गरमीकी अपेक्षा सरदीमें गरमहवाकीअपेक्षा शरदहवामें-सायंकालकी अपेक्षा प्रातःकाल दिनकी अपेक्षा रात्रिमें अथवा मूत्राशयके फैलनेसैं मूत्र अधिक उतरताहै॥

अत्यंत फिकर, सरदीसैं ज्वरहोना, इत्यादि कारणभी मूत्रअधिक करनेवालेहै। तथा पूर्वोक्त नियमके विरुद्ध अर्थात् गाढीवस्तुओंके पीनेसैं, त्वचा और फुप्फुसकाकार्य अधिकहोनेसैं, तथा हैजा, पित्तज्वर, जलंधर, और मूत्राशयमें सूजन होनेके कारण इस प्राणीके मूत्र कम उतरताहै॥

## मूत्रकाप्रमाण

चिन्हभेद, अवस्था, ऋतु, आहार, देहकीदशापलटना, और विमारीआदिके, कारणसैं मूत्रकी तोलमें कुछ २ भेद होजाताहै। जैसै-पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंके, वालककी अपेक्षाजवानी, और वृद्धस्थामें फरक होजाताहै॥

कसरत करनेमें, वहुतपसीना निकलनेसैं, सूखेपदार्थखानेसै निद्राके पश्चात् मूत्रकरनेसैभी वजन मुतनामिवह अधिकहोताहै। एवं सर्दी, आलस्य, पतली और खट्टी वस्तुकेभोजनसैं तथा पुराने रोगोंमें वजनमुतनासव मूत्रका कम होजाताहै॥

यदि मूत्रकी तोल एकहजार पांचसौसैं कम हो या १०३०सैं ऊपर होय तो अवश्य कोई रोग होनेकी संभावना जाननी कभी वजनमुतनासवामें जलभाग की अधिक्यता और कठोरभागोंकी न्यूनता प्रतीतहोतीहै प्राय एसेमूत्रोंमें अल-

न्यूमनमिलनाहै। और वजनमुतनासिवा अधिक होनेसें हृढभागोंमें जैसे यूरिया-और शक्कर आदि होनेका संदेह होताहै ॥

कदाचित् मूत्रमें गुरुपदार्थके भारीपनेकी परीक्षा करनी होवेतो उसकी यह रीतिहै कि २४ घंटेका जितना मूत्रहो इकट्ठाकरे, अथवा सब समयका न मिले तो प्रातःकाल केमूत्रकी स्पेसिफक ग्रावटी मालूमकरके, उसके अंत्यके दो अंको-सें। २-३३ को गुणनकरे फिर जितना गुणन फलहोय उतनैही ग्रेन भारीवस्तु हजार ग्रेन मूत्रमें समझे ॥

उदाहरण—जैसे मूत्रका वजनमुतनासिवः १२२३ है तो उसके अंतके दोअक्षर अर्थात् २३ तेईस को २०३३ सें गुणा करा तो ५३२५९ हुआ अतएव इसी-हिसावके अनुसार एकहजारग्रेनमें ( ग्रेन १ मासेका $\frac{१}{८}$ ) ५३।- ५९ ग्रेन समझे जातेहै ॥

## मूत्रकारंग

रंगतदार वस्तुके विना खानेसें भी मूत्रकी रंगतफीकी कहरवाई-भूरी, लाल आदि होसक्तीहै। एवं जब मूत्र पतील होताहै तब फीकेरंगका या साफ या बेरंगहोताहै। जैसे पानीपीनेके पश्चात् रुधिरकी न्यूनतामें तथा पानी न पीने-पसीने निकलने इस अवस्थामें मूत्रमें रुधिरके माफिक कालेरंगका रुधिर निकलता है। और यदि खून ही निकले तो मूत्रका रंग अधिक काला होजाता है। गठियामे नारंगी रंगका पीव मिलनेसैं या फास्फेटके मिलापसें मूत्रका रंगदूधके समान होताहै। कमलवायुमें मूत्र पीला कुछ कालौच लिये उतरताहै। इसीप्रकार पतंगकी वस्तु अथवा चुकंदर आदिके साग खानेसैं मूत्र लालरंगका होताहै।इसीप्रकार जिस२ रंगतके पदार्थ या औषधी यह मनुष्य खाताहै तो मूत्रभी उसी२रंगका निकलताहै॥

## मूत्रकीगंध

यह प्रथम लिख आएहै किमूत्रमें एकप्रकारकी गंध होतीहै परंतु कुछकाल-के वाद सीतल होतेही वह गंध नहीं रहती ॥

मूत्रको अधिक देरतक रखनेसें तेजावके सदृश होजाताहै, और सडनेके सबव उसमें दुर्गंध आने लगतीहै। परंतु मसानेकी सूजनमें सडनेके प्रथमही मूत्र-में दुर्गंध आने लगती है। धातुक्षीण आदि रोगके मूत्रमें मरी मछलीकी या मुर्देकीसीदुर्गंध मारने लगतीहै ॥

तथा वहुतसी ऐसी ऐसी वस्तुहै जिनके भक्षणसे उनकीसी दुर्गंध आने लगेहै जैसे-प्याज, लहसन, तारवीन, और हींगआदि॥

## मूत्रकास्वादु

स्वस्थमनुष्यके मूत्रका स्वाद नमकीन और वहुमूत्रके रोगमें मीठा होताहै ॥

## तलस्थद्रव्य

मूत्रमें नीचे बैठनेवाली वस्तु कितनेई प्रकारकी होती है। एकतो वह जो स्वाभाविक गरमीके कारण उसमें मिली रहती है। और वाद सर्दीके जमजाती है। जैसे यूरेटस-और क्लोरायडनमक-आदि-। दूसरी नहीं मिलने वाली वस्तु जैसै-म्यूकस और पीव आदि मूत्रके मार्गसैं निकलकर जमजाते है। इत्यादि और भीजानने ॥

यूरिया प्राय अमिश्रित रहताहै। यदि किसी वस्तुके साथ मिला होयतो सहजही पृथक् होसक्ताहै। यह एक कठोर कलम दार वस्तुहै। इसका स्वादु कुछ कडुआ नमकीन सोरेसा शीतल तेजावके समान होताहै। यदि इसमूत्रमें २४८ दर्जेकी गर्मी पहुचाईजायतो इसका स्वरूप पलट जाताहै, और उसकी कलम वन जातीहै। जिसका चित्र हमने इसवृहन् निघंटुरत्नाकरकी दूसरी जिल्दमें दीनाहै ॥ यदि फिर उन कलमोंमें कुछ पानी मिलाकर औटाओ और कुछ जियादा कार्वोनेट आफवरायटा डालो और वाटर वाथसैं उसको सुखाओ फिर एक केटाल डालोकि। यूरिया उसमें मिलजाय पीछे उसको छानकर सुखानेसें यूरिया की कलमें प्रगटहोगी। इसकी भी तसवीर प्रथम हम लिख आएहै। इसीप्रकार डाक्टरलोगै यूरिक एसिड अर्थात जो मूत्रमें पथरीला भाग मिलारहता है उसकीभी कलम वनातेहै। विशेष देखनाहो तो डाकटरीकी पुस्तकोंमें देखो ॥

## मूत्रपरीक्षाकीतरकीब

वैद्यको उचितहै कि मूत्रकी रंगत, स्वच्छता, दुषितता (मैलापन) गंध, तौल, और गर्मी सर्दी आदि सव जाहिरी अवस्थाओंका निश्चयकरना चाहिये ॥

तहां रोगीके मूत्रकरतेही (टेस्टपेपर) अर्थात् परीक्षाकरनेके कागदसें (जोहल्दी और वनास्पतीके नीले रंगसें रंगा हुआ होताहै) परीक्षा करे। यदि मूत्रमें तेजावी भाग अधिक होगातो उसमे हरा कागज डालनेसे सुर्ख होजायगा। और मूत्रमें सारका भाग अधिक होगा तो हलदीके रंगे कागदका रंग भूरा और सुर्खीलिये हो जायगा और तेजावसें सुर्ख हुआ कागज उसमें फिर पहली दशामें आय जावेगा ॥

यदि परीक्षाके समय सार प्रतीत होयतो यह निश्चय करना कि यह विकार अमोनियाके कारण है या और किसी कारणसें। यदि आमोनियाके कारण होगा तो उस कागजको सुखानेसें। रंग उडजावेगा और असलीरा हो-

गा तो रंगज्योका त्यो वनारहेगा ॥ यदि बनसके तो २४ घंटेका समग्र मूत्र लेकर नापे और ( यूरेनामेटर ) मूत्रमापक यंत्रद्वारा उसकी स्पेसिफिकग्रावटी मालूम करनी चाहिये :

## ( यूरेनामेटर ) मूत्रमापकयंत्र.

एकछोटासा यंत्र शीशेका या पीतलका बनाहुआ होताहै जिसका अंग्रजीमे यूरेनामेटरकहतेहै जिसका चित्र इस खंडके आदिमें देखो उसके साथ एक ग्लास होताहै, जिसमें नंबर की रेखा खिचीहुई होतीहै । उसमें स्पेस्फिकग्रावटीके निश्चयकरनेके समय पूर्वोक्त ग्लास अथवा किसी पात्रको समानभूमिमें रखकर यूरेनामेटरको उसमें डालके देखो तोयूरेनामेटरकी डंडी जिस नंबरके साह्मनेठहरीहो उसपर हजार और मिलायदेनेसे स्पेस्फिकग्रावटी मालूम होजातीहै । जैसै १५ के नंबर पर यूरेनामेटरकी डंडी ठहरी है तो मूत्रकी स्पेसिफिकग्रावटी ( भारीपना ) १०१५ हुई ॥

यदि यूरेनामेटर यंत्र न मिलसके तो यह रीतिकरे कि कांचके डाटवाली बोतलका धडाकर उसमे साफजल भरके तोले फिर उसीके हिसाब माफिक मूत्रको भरके तोले तो मूत्रके भारीपनेका ज्ञान होजायगा ॥

जैसै कल्पनाकरो कि साफपानी बोतलमें ४०० ग्रेन आया फिर उसपानीको निकाल मूत्रभरके तोलातो४०६ग्रैन हुआ तो ४०० ग्रैन पानीका भारीपना१००० हुआ तो ४०६ ग्रैन मूत्रका गुरुत्व १०१५ होगा एकग्रेन १५ मासेका होताहै.॥

## खुर्दवीनयंत्रकावर्णन

मूत्र परीक्षा आदिमें खुर्दवीनका अधिक काम पडताहै अतएव प्रसंगवस उसका वर्णनभी इसी स्थानपर होना ठीकहै ॥

आज कल इस खुर्दबीनका वैद्यकमें अधिक काम पडताहै । परंतु उसका मौल्य अधिकहोनेके कारण अत्यंत प्रचार नहीहै ॥

खुर्दवीनदो प्रकारकी होतीहै १ सादा कांच जो केवल शीशाही होताहै । इसमें किसीचीजको देखोतो उसका वडा अक्स होकर नेत्रोंपर गिरताहै ॥

दूसरा मिश्रित जिसमें अनेक टुकडे होतेहै असलमें इसीको खुर्दवीन कहनाचाहिये यद्यपि खुर्दबीन अनेक प्रकारकी है, परंतु यहां वैद्यके वर्त्तनेयोग्यकहतेहै. । ऐसे खुर्दवीनमें पीतलकी एक टिकटी लकडीपर जडी हुई होतीहै. । एक लंबी डंडी ऊपर और एकडंडी नीचे लगीहुई होती है ॥ तथा उसडंडीमें नलीलगीहुई होतीहै । नलीके नीचे तीन इंचकी लंबी और दो ढाई इंच चोडी एक रकेबी होतीहै जिसके बीचमें छेदहोताहै और छेदके दोनोतरफ लोहेकी कमानी या और

कोई असी वस्तुहोतीहै जिसमें ग्लास आदि कोईवस्तु छेदके ऊपर रखी जायतो रक्खीरहे। इसीप्रकार इसके कितनेही टुकडे होतेहैं देखनेसें मालूम होजावेगा।

## खुर्दवीनकोकाममेलानेकीविधि

प्रथमखुर्दवीनके सब टुकडे साफहो यदि मैले होतो सावरसें पोछडाले कपडेसैं न पौछे क्योंकि कपडेके पौछनेसैं शीशेमें लकीर होजातीहै ॥

देखनेके समय खुर्दवीनको कुछ तिरछीकरलेवे, और एक आंख वंदकरके देखे और खुर्दवीनके पेचको इतना घुमावे कि देखनेकी वस्तु दृष्टिके साह्मने आयजावे तथा सूर्यके प्रकाशमें परीक्षाकरे यदि रात्रिहोतो दीपकके उजेलेमें परीक्षाकरे ॥

जब देखने की वस्तु ठीक २ दीखने लगे तब पैन्सिलसै उसकी तसवीर खींचले कि जिस्सै याद रहे, पूरा चित्र खिचजानेके वाद वंद करदे–इस प्रकार पूरी२परीक्षाकरे इस जगे मूत्र देखनेके सब नियम ठीक २ नहीकहे यदि अधिक देखना होतो डाक्टरी पुस्तक सै देखो ॥

इति मूत्रपरीक्षासमाप्ता

---

## आर्त्तवपरीक्षा

द्वादशाद्वत्सरादूर्द्ध्वमापंचाशत्समाःस्त्रियः
मांसिमासिभगद्वाराप्रकृत्यैवार्त्तवं स्रवेत् ॥ १ ॥

अर्थ—वारहवर्षकेउपरांत पंचासवर्षकी अवस्थापर्यंत स्त्रियोंकेमहिनेकी महिने रजोदर्शका रुधिर भगद्वारा सदैव निकला कर्त्ताहै ॥

### शुद्धआर्त्तवकेलक्षण

शशासृक्प्रतिमंयच्चयद्वालाक्षारसोपमम्
तदार्तवंप्रशंसंतियच्चाप्सुचविरज्यते ॥ २ ॥

अर्थ—शशेके रुधिरके रंगका अथवा लाखके रसके समानहो और जिस रुधिरके रंगेहुए वस्त्रको जलमें धोनेसैं दाग जाय नही वो आर्त्तव उत्तम जानना

मासान्निष्पिच्छदाहार्त्तिपंचरात्रानुबंद्धिच
नैवातिवहुलात्यल्पमार्त्तवंशुद्धमादिशेत् ॥ ३ ॥

अर्थ—जो महिनेके महीने पिच्छलता–दाह–और पीडारहित पाँचरात्रिपर्यंत गिरने वाला–एवं न वहुत अधिक न वहुत थोडा परिमाणका निकलनेवाला आर्त्तव शुद्ध होता है.॥

## आर्त्तवकेयथार्थअप्रवृत्तिकेदोष

तस्यायथाप्रवृत्याहिशारीरामनसास्तथा
व्याधयोवहवःस्त्रीणांजायंतेकृच्छ्रसाधनाः ॥ ४ ॥

अर्थ—यथा नियम रजोदर्शकी प्रवृत्ती न होनेसैं स्त्रियोंकैं शारीरक और मानसिक विविध कष्टसाध्य पीडाओंकी उत्पत्ती होती है ॥

स्नायूनारक्तयंत्राणांपाचकाग्नेश्चजायते
व्याहतिर्व्याहतेतस्मिन्सुस्थितेनियतेभवेत् ॥ ५ ॥

अर्थ—नियम पूर्वक रजोदर्शहोनेसैं स्नायु–रुधिरयंत्र–और पाचकाग्नि ये सव क्रिया उत्तम प्रकारसैं निर्वाहित होती है. । रक्तस्रावके रुकनेसैं पूर्वोक्त क्रियानओं में विपरीतता होती है अतएव स्त्रीजातिकी संपूर्ण पीडा और विषयका ज्ञान करना अत्यंत आवश्यक है ॥

ऋतौकंडूयनंयोनौकचिदंगेचवेदना
बाहुल्यंस्वल्पतोवापिचानुवंधित्वमस्यवा ॥ ६ ॥
संरोधःसर्वथावापिवेद्यान्येतानियततः
आमयेष्वखिलेष्वेवभिषग्भिर्योषितांसदा ॥ ७

अर्थ—ऋतुके समय योनिमें खुजलीचले–कमर–तलपट अथवा अन्य किसीस्थानमें पीडा–रुधिरस्रावकी आधिक्यता–वा अलपता–अथवा अधिक कालपर्यंत रुधिरका जाना और रुधिरका सर्वथा वंद होजाना इत्यादि विषयको वैद्यजानेइसी प्रकार सर्व समुदाय विशेषकी परीक्षा करके फिरस्त्रियोंकी चिकित्साकरनी चाहिये

इतिआर्त्तवपरीक्षा

---

## मलपरीक्षा

त्रुटितं फेनिलं रूक्षं धूम्रलं वातकोपतः ।
वातश्लेष्म विकारे च जायते कपिशं मलम् ॥

अर्थ—वातके कोपसैं रोगीका मल (दस्त) टूटाहुआ, झागदार, रूखा, और- धूएके रंगका होताहै । वातकफकेविकारमें मल कालालालमिले रंगकाहोताहै॥

---

१मलका प्रमाण–अवस्था और प्रकृतिके अनुसारहै । जैसे अधिक भोजन वाले बालकोंकै दिनमें कई वार दस्तहोताहैं युवा पुरुषोंकै १ वार,

बद्धं सुत्रुटितं पीतं श्यामं पित्तानिलाद्भवेत् ।
पीतश्यामं श्लेष्मपित्तादीषदार्द्रं च पिच्छलम् ॥

अर्थ—वातपित्तके रोगमें बँधाहुआ, टूटा, पीला, श्यामवर्णका मल होताहै। कफपित्तके रोगमें पीला, श्याम और कुछगीला एवं मलाईदार दस्त होताहै ॥

श्यामं त्रुटितपीताभं बद्धं श्वेतं त्रिदोपतः ॥

अर्थ—त्रिदोपकेकोपसे. काला, टूटा, पीला, बँधाहुआ, औरसपेददस्तहोताहै॥

दुर्गंधः शिथिलश्चैवविष्टोत्सर्गो यदा भवेत् ।
तदा जीर्णं मलं वैद्यैर्दोषज्ञैः परिभाष्यते ॥

अर्थ—जिस रोगीका मल दुर्गंधयुक्त, शिथिल, उतरे उसको दोपज्ञ वैद्य जीर्णमल कहते है. ॥

कपिलं गुंठियुक्तं च यदि वर्चो वलोक्यते ।
प्रक्षीणमलदोपेण दूषितः परिकथ्यते ॥
सितं महत्पूतिगंधं मलं ज्ञेयं जलोदरे ॥

अर्थ–जिसरोगीका अग्नि केसदृशवर्णवान् और गांठदारमलहो वो क्षीणमलदोपसें दूपितजानना और जलंधररोगीका मल सपेद बहुतसा, दुर्गंधयुक्तहोताहै ॥

श्यामं क्षयेत्वामवाते पीतं सकटिवेदनं ।
अतिकृष्णं चातिशुभ्र मतिपीतं तथारुणं ।
मरणाय मलं किंतु भृशोष्णं मृत्यवे ध्रुवं ॥

अर्थ—क्षयरोगमें मल काला होताहै, आमवातसें कमरमें पीडा करता हुआ पीलेरंगका दस्तहोताहै, और अत्यंत काला, अत्यंत सपेद, अत्यंत पीला, अत्यंत लाल रंगका और अत्यंत गरम दस्त होय तो उस रोगीकी अवश्य मृत्युहोय ॥

---

वृद्ध पुरुषोंके और जिनको अधिक बैठे रहनेकाअभ्यासहै उनको एक वारसें भी कम दस्तहोताहै । अब कहतेहै कि जिनरोगोंमें दस्तअधिक आतेहै वह येहै. । जैसे–आंतोंमें गांठ और सूजन होनेसें, दुष्टभोजन अथवा अपाचक भोजन करनेसें, अथवा जुल्लाव लेनेसें अधिक दस्त होतेहै । एवं आंतोंमे घाव होनेके कारण, देहमें अधिकगर्मीके कारण, तथा आव हवा के पलट जानेसें, एवं भीतरी चोट लगनेसे, शोक, चिंता, और भय आदिकारणोंसें इस मनुष्यकै अधिक दस्त होते है ॥

मिली हुई लोह भस्म आदि काली वस्तु खानेसे दस्त काले रंगका होताहै पतंग आदि

वातस्य च मलं कृष्णं ततः पित्तस्य पीतविट् ।
रक्तवर्णमलं किंचिन्मलंश्वेतं कफोद्भवम् ॥

अर्थ—वादीसै काला, पित्तसैं पीला, और किंचित लाल, कफसैं सपेदरंगका मलहोताहै ॥

आमं वा श्वेतजं प्राहु मिश्रितं द्वंद्वजं वदेत् ।
अपक्कं स्यादजीर्णे तु पक्कं स्वस्थमलं भवेत् ॥

अर्थ—सपेदरंगका मल आमका होताहै, और जिसमें मिश्रितरंगहो वह द्वंद्वज जानना, अजीर्ण रोगीका मल कच्चा और स्वस्थ मनुष्यका मल पक्कहोताहै ।

अत्यग्नौ पीडिते शुष्कं मन्दाग्नौ तु द्रवीकृतम् ।
दुर्गंधं चन्द्रिकायुक्तमसाध्यं मललक्षणम् ॥

अर्थ—तीक्ष्णाग्निवाले पुरुषकामल गांठदार होताहै । और दुर्गंध तथा चंद्रकायुक्त मलहोनेसैं रोगीअसाध्यऐसाजानना ॥

बद्धं श्यामं मरुति कुपिते पित्तकोपे तु पीतं ।
पानीयाभं सफेनं कफरुपि च मले सान्द्रपांडुरवर्णं ॥
रक्ते क्रुद्धे सरक्तं जलनिभमथ तत् द्वंद्वकोपेद्विलिंगं ।
सर्वैर्दोषै सरोषै भवतिकिलमलं रोगिणः सर्वलिंगम् ॥

अर्थ—बंधाहुआ, कालामल, वादीकेकोपसैंहोताहै । पित्तकोपसै पीलावर्ण, कफकोपसैं पानीकेसमान, झागयुक्त, सघन, औरसपेदहोताहै । और रुधिरके कोपकरके रक्तवर्ण, पानीके समान मल होताहै । द्वंद्वजदोषोंके कोपसै दो दोषोंके चिन्हमिलाहोताहै । और त्रिदोषके कोपसैं तीनो दोषोंके चिन्ह मिला रोगीका मल उतरताहै. ॥

दुर्गंधि श्यामवर्णं मलमरुणनिभं पांडुराभं विचित्रं ।
मांसाभं मेचकं तत्प्रभवति मरणायैव रोगान्वितस्य ॥
विस्रं शैथिल्ययुक्तं मुहुरिति निपतत्स्यादजीर्णाच्च वर्चो ।
दिङ्मात्रं चैतदेवं निगदितमगदे लक्षणं वर्चसोऽपि ॥

---

औषधसैं लाल रंगका, हराताग आदिमें हरे रंगका, रेवतचीनी आदिमें पीले रंगका दस्त होताहै इसी प्रकार अनेक कारणोंसें अनेक रंगका दस्त होताहै ॥

अर्थ—दुर्गंधयुक्त, काला, किंचित्लाल, सपेद, अनेकवर्णयुक्त, मांसकेसमान, सुरमईरंगका अेसा मलहोनेसैंरोगीमरे। औरअजीर्णसैं टूटाहुआ, शिथिल, वारंवार अेसा मल होताहै। ये वैद्योंको किंचित् दिङ्मात्र लक्षण मलके कहेहै। बाकी कुशलवैद्य अपनी बुद्धिसैं विचारलेवे॥

## ॥ इति मलपरीक्षासमाप्ता ॥

---

## मुखपरिक्षा

वाते च मधुरास्यत्वं पित्ते च कटुकं तथा
मधुराम्लं कफे चैव सर्वलिंगं त्रिदोषजे
अजीर्णे घृतपूर्णस्यात्कषायं वाग्निमांद्यके

अर्थ—अब मुखपरीक्षा कहतेहै जैसैकि वादीके रोगसै रोगीका मुख मीठाहोताहै पित्तके रोगसैं कडुआ और कफके रोगसैं मुख मीठा और खट्टा होताहै एवं सन्निपात वालेरोगीकेमुखका सवाद मीठा. कडुआ और खट्टा होताहै अजीर्ण रोगमें मुखका सवाद घृतपूर्णके सदृश होताहै और मंदाग्निमें मुखकासवाद कपेला होताहै इसप्रकार वैद्य मुखकी परीक्षा करे

---

अजीर्णावस्थामें मल कठोर बडे लंबे २ अथवा ऊँटके मैंगनेके समान गोल२ उतरताहै। हैंजामें पतला और चावलके धोमनकासा दस्त होताहै। आमवात' ववासीर, पथरी मूत्रगर्भ, इत्यादि रोगोंमें वारंवार दस्त की हाजत होतीहै इत्यादि॥

---

## डाक्टरीमतानुसार मुखपरीक्षा.

सब लक्षणोंमें प्रथम मुखके लक्षण जानना वैद्यको अत्यावश्यक है। क्योंकि जब रोगी आता है तो प्रथम वैद्यकी दृष्टि मुखपरही जाती है और मुखपरीक्षा द्वारा अनेक रोगोंका ज्ञान होता है॥

जैसैं पीडाके पश्चात् मुखपर प्रसन्नता और उम्मेद प्रगट होय तो उत्तमहै परंतु अकस्मात् किसी घोर रोगकी तत्काल निवृत्ति होजाय और मुखपर प्रसन्नता और देदीप्यमानता दीखे तो यह बुराहै॥

यदि मुखसैं किसीप्रकारका कोई चिन्ह-जैसे रोगके विना होठ न हिले न नेत्र अच्छीतरह खुले तो यह निर्वलताका धर्म है। पुराने रोगोंमें मुखचमकीला होताहै। प्राय सुजाक-गरमी-या भीतरी अन्य २ रोगोंमें मुखसैं फिकर और पीडा प्रतीत

# जिव्हापरीक्षा

जिव्हा शीताखरस्पर्शा स्फुटिता मारुताऽधिके। रक्तश्यामा भवेत्पित्ते कफे शुभ्रातिपिच्छला ॥ कृष्णासकण्टका शुष्का-

होतीहै. । अच्छीरीतिके विचार करनेसैं मानसिक विमारियोंमें तथा अन्यघोर विमारियोंमें मुखपर चिंता और जीनेसैं निरासता प्रगट होतीहै ॥

वावरेपनेमें भोलापन विनाकारण हंसी–आती है । मृगीरोगमें निर्बुद्धीपना–और सुस्ती प्रतीत होती है दिवानेका मुख भयंकर प्रतीत होताहै । नामर्दोका मुख सरमिंदगी लिये होताहै अेसा मनुष्य किसीसैं आंख नहीं मिलाता॥

मृत्युके समय मुखपतला–दुर्वल-नाककीआगेंकीहड्डी निकली हुई कनपटी वैठी हुई होठ लटकते गालपिचके त्वचा सिमटी हुई–और काली तथा नाकके वाल और पलकोंपर सपेद पिलास लगाहुआ प्रतीत होताहै इत्यादि अनेक चिन्ह होते है ये लक्षण अशुभहै. ॥

रुधिरके पतले होनेके कारण रोगोंमें मुखफीका और कुछ मूजनलिये होताहै पित्तज्वरमे मुख लालरंगका सरतानमें चिंतायुक्त और नीलतालिये सीसेके रंगका होताहै गरमीके रोगमें मट्टीके रंगका पांडुरोगमें पीला तिल्लीके वडीहोनेमें मैलयुक्त और फीका होताहै ॥

हैजा तथा श्वासके अवरोधमें नीलेरंगका मृगीकी वारीकेपूर्व वैंगनी रंगका मुख होजाताहै । इत्यादि और भी अनेक चिन्ह होतेहै ॥

## इति मुखपरीक्षा समाप्ता

१जिव्हाके देखनेसैं वहुधा रोगोंकी परीक्षा होतीहै–जैसे रुधिरका भ्रमण दोषोंकी कमी वेसीकाहाल आदि और प्राय आमाशयकी अवस्था उत्तमरीतिसैं जानाजाती है । इसका यह कारणहै कि लुआवदार झिल्लीकेद्वारा इन रोगोंका विशेष संबंध रहताहै ।

प्राय रोगोंके आद्य अंत्यावस्था जाननेमें जिव्हामें वहुत सहायता मिलती है । और आरोग्यावस्थामेंभी सर्वप्राणियोंकी जिव्हाका स्वरूप एकसा नहीं होता जैसे–किसीकिसीकी लाल किसीकी सपेद, किसीकी स्वच्छ, और किसीकी मलिन एवं किसीकी नम्र,और किसीकी कठोर होती है । किसीकी जिव्हा वाहर निकालनेके समय सिथिल और किसीकी नोंदार आदि चिन्होंमें चिन्हित होतीहै ।

जब मनुष्य सोकर उठताहै तो जिव्हापर मैलकी पतली परदीसी जम जाती है । जो

**सन्निपाताधिके तु सा॥मिश्रिते मिश्रिता ज्ञेया सर्वलक्षणवर्जिता**

अर्थ–जिस जीभका शीतल कठोरस्पर्शहो तथा फटीहुई प्रतीत होतो वाताधिक्य जानना। पित्ताधिक्यमें लाल और कालेरंगकी, एवं कफाधिक्यसें सपेद और अत्यत कफसें लिहसी हुई होतीहै। संनिपातमें जीभ कांटेदार, सूखी, और काली होतीहै। और मिश्रित दोषोंसे जीभकाभी रंग मिश्रत होताहै।

**शाकपत्रप्रभा रूक्षा स्फुटिता रसनानिलात्। रक्ताश्यामा भवेत्पित्ताल्लिप्तार्द्रा धवला कफात्॥ परिदग्धा खरस्पर्शाक्-**

---

मनुष्य मुख खोलकर सोते है उनकी जीभ सोकर उठनेके वाद सुखीसी प्रतीत होती है। बहुतसें रोगोंकी अवस्था जिव्हाके द्वारा प्रतीत होती है। परंतु हिंदुस्थानी मनुष्योंको पान तमाखू खानेके कारण जिव्हा परीक्षा करना कठिन है। तथापि थोडासा वर्णन हम करते है।

जैसें जिव्हाका आकार, सूखी, गीली, रंग, थकावट, आदि वस्तुहै॥

प्रथम वैद्यको जिव्हा निकालनेकी व्यवस्था देखनी आवश्यकहै क्योंकि अनेक रोगोंमें अनेक प्रकारकी अवस्था होतीहै जैसें ज्वरमें निर्बलता या मस्तकके रोगोंमें रोगी जिह्वाको बाहर नहीं निकालसकता। वातके बहुतसे रोगोंमें जिव्हा थरथरातीहै और रोगी भलेप्रकार वार्त्तालाप नहीं करसक्ता। उसीप्रकार संनिपातावस्थामें भी जिव्हा थरथराती है। उन्मत्तावस्थामें रोगी जिव्हा निकालेहै और फिर तत्क्षण भीतर करलेताहै। अर्द्धांगवातमें जिव्हा एकओर दबीसी प्रतीतहोतीहै॥

रोगके निमित्त करके जिव्हाका आकार न्यूनाधिक होताहै। परंतु न्यूनता बहुत कम होतीहै जिव्हाका आकार न्यूनहोना केवल कृशावस्था आदिके कारणसें होताहै॥

जिव्हाका बढना इन कारणोंसें होताहै जैसे–जीभमें सूजन, शीतला, लालज्वर, गरमी, पारद आदि दुष्ट धातुके भक्षणसे, तथा मुखकाआना आदि॥

आरोग्यावस्थामें मुख खोलकर सोनेके कारण जिव्हा सूखी रहतीहै परंतु किसी रोगके कारण थूक थोडा प्रगटहोताहै जैसें–ज्वर, देहकेभीतरकादाह, और रूपवान्‌झिल्लीकेदाहमें जिव्हापर सूखापन कालेच कठोरता और मलिनता होतो मालूम होताहै कि रतूवतके न प्रगट होनेसे रुधिरमें संमीयत होजानेके कारण अतिनिर्बलता आगईहै॥

जिव्हाके शुष्क और मलिनावस्थाके पश्चात् गीलापन होजावेतो उत्तम चिन्ह है अतएव जैसे २ ज्वर उतरताहै उसीप्रकार क्रमसें धीरे २ जीभके किनारोंपर आर्द्रता आतीहै फिर धीरे २ सब पर आतीहै॥

आरोग्यताकी अपेक्षा रोगमें जीभका वर्ण पलट जाताहै जैसे–रुधिरकी न्यूनतामें प्र-

ष्णा दोषत्रयाधिके ॥ सैव दोषद्वयाधिक्ये दोषाद्वितयलक्षणा ॥

अर्थ–वादीसैं जीभ शाकपत्रके समान रूखी. और फटीहुई होतीहै । पित्तसैं लाल और काली एवं कफसैं ल्हिसीहुई गीली और सपेद होतीहै । त्रिदोषकी अधिकतासैं जीभ जलीहुईसी, खरदरी, और कालीहोतीहै । एवं द्विदोषकी आधिक्यतासैं दोदोषोंके मिले लक्षण होतेहै ।

## शब्दपरीक्षा

गुरुस्वरो भवेत् श्लेष्मीस्फुटवक्ता च पित्तलः ।
उभाभ्यां रहितोवातः स्वरतश्चैव लक्षयेत् ॥

अर्थ–अव शब्द परीक्षा कहतेहै–भारीस्वर कफरोगीका और पित्तरोगीका स्प-

---

हको सूजनतामें जिव्हाका रंग फीका होताहै श्वास रुकनेकी दशामें नीला या वैजनी, तालु अथवा हलकआदिकी सूजन तथा पित्तज्वरमें जीभ संपूर्ण लाल होतीहै मद्यजन्य ज्वरमें तथा अजीर्णमें केवल नौक और किनारे लाल होतेहै ॥

मूर्च्छा–हैजा–और श्वासरोधमें जिव्हाका कार्य मंद होजाताहै और जिव्हाकी सूजनमें अधिक ॥

जिस समय जिव्हा सपेद– देदीप्यमान और मैलसैं एकसी आच्छदितहो तो घोरज्वर जानना यदि मैल पीलेरंगका होतो हृदयकारोग तथा रुधिरमें पित्तका मिलापहै ऐसा जानना यदि जिव्हाका मैल भूरा अथवा श्याम होवे तो मिलाप रुधिरके कारण आत्मशक्तिका नष्ट होना सिद्ध होताहै ॥

रक्तज्वर ( लालज्वर ) में जीभपर सपेदरंगकामैल जमाहुआ होताहै और उसमें लालरंगके काँटे उठे हुए प्रतीत होतेहै और जैसे २ वह मैल दूर होताजाताहै–दाने उठे हुए सहतूतके समान प्रतीत होतेहै जिव्हाको नौक और किनारोंसें धीरे २ मैल दूर होने लगे तो यह चिन्ह शुभहै परंतु जिव्हाके मध्य गत उच्च विभागमें बडे २ भाग पृथक् २ हो तथा जीभ लाल नहो और चमकदार हो जाय तो चिरकालमें पूर्ण, आरोग्यता होतीहै किंतु रोगके फिर उलटनेका संदेह रहताहै और जव द्वितिय वार रोग प्रगट होताहै तब पूर्वोक्त जिव्हाका मैल भी पूर्व नियमानुसार जमजाताहै ॥

यदि जिव्हाका एकही वार मैल दूर हो जाय और जीभ तत्काल घावके समान दरारदार काली और चमकदार होजाय तो यह चिन्ह रोगीके विषयमें अशुभहै । गर्मीके रोगमें जिव्हाके नीचे और किनारो पर छोटे २ घाव और फटी हुई होतीहै । बालकों के मुख आनेमें जिव्हापर सपेद रंगके दाग पड जाते है ॥

ष्ट उच्चार होताहै, और वात रोगीका इनदोनोके लक्षणों करके रहित उच्चार ( आवाज )होतीहै इसप्रकार स्वरसे रोगकी परीक्षा वैद्यको करनी चाहिये ।

## नेत्रपरीक्षा

अथातः संप्रवक्ष्यामिनेत्रस्यचपरीक्षणम् ।
येषांविज्ञानमात्रेणरोगचिन्हंप्रकाशते ॥

अर्थ—अब हम नेत्रपरीक्षाको कहतेहै जिसको जाननेमात्रसें ही रोगोके चिन्हप्रकाशितहोतेहै ॥

## वातजन्यनेत्र.

रूक्षाधूम्रातथारौद्राचलाचांतर्ज्वलत्यपि ।
दृष्टिर्यदातदावातरोगंरोगविदोजगुः ॥ १ ॥

अर्थ—रूक्ष धूंआकेरंगके भयंकर और भीतरसै जाज्वल्यमान ऐसी दृष्टि वात रोगीकी वैद्योंने कहीहै॥

## पित्तकफजन्यनेत्र.

दीपद्वेषितसन्तप्तंपीतंपित्तेनलोचनम् ।
जलार्द्रंज्योतिषाहीनंस्निग्धंमंदंकफेनतत् ॥ २ ॥

---

## डाक्टरीमतसें शब्दपरीक्षा.

बहुतसे रोगोंमे रोगीसें बोला नही जाय । जैसें संनिपातकी बेहोसी—बहुतसे रोगमें रोगी समझसके परंतु बोल नही सके अैसे रोगको अंगरेजीमें एफेसीया कहते है कथावांचनेवाले—वकील—पादरी—और जो अत्यंत पुकारके बोलेहै उनकी आवाज अैसी बैठजाती है किप्रतीत नहीहोती गरमीके रोगमें सीटीदेनेका शब्द निकलने लगताहै निर्वलताके कारण शब्द अत्यंत मंद होजाताहै स्वसगीमें या शूल आदि पीडाके कारण रोगी चिल्लानें लगताहै इत्यादि जाननें ॥

### डाक्टरीमतानुसारनेत्रपरीक्षा

ह्रदय यंत्र और मूत्रपिंडकी क्रियामें जब कुछ विगाड होता है अथवा उदरका कोई रोग उत्पन्न होनेसें प्रथम नेत्रके पलक सूजतेहै । भ्रमरोगमें नेत्रोंके पलक मींचनेमें अत्यंत कष्ट होताहै । मृगीरोगकी पालीके समय नेत्रके पलक वारंवार कंपित होतेहै फुप्फुस मस्तिष्क और ह्रदययंत्रमे रुधिरके रुकनेसें तथा उस रुधिरकी गरमीके वेगसें नेत्रका आकार पूर्वअपेक्षा बडा होताहै

अर्थ—जिसप्राणीको दीपक अच्छा नलगे तथा गरम पीले अैसे पित्तरोगवाले रोगीके नेत्र होतेहै, तथा जलसैं आर्द्र ज्योतिर्हीन स्निग्धऔर मंद अैसीदृष्टी कफरोग वालेकी होतीहै तथा नेत्रसपेद होतेहै

## द्वंद्वजऔरसंनिपातजन्य

द्वंद्वदोषेभवेन्मिश्रंतूर्णंतूर्णंविलोचनम् । श्यामवर्णंचनिर्भुग्नं तन्द्रामोहसमन्वितम् ॥ ३ ॥ रौद्रंचरक्तवर्णंचभवेच्चक्षुस्त्रिदोषतः

अर्थ—दोदोषके मिलनेसैं दृष्टिभी मिश्रित होतीहै । अर्थात् वात पित्तसैं धूम्र और पीले, कफपित्तसैं पीले और कीचडसै परिपूर्ण, इत्यादि त्रिदोषके कोपसै नेत्रकाले विकराल तन्द्राऔर मोहयुक्त वीभत्स और लाललाल होतेहै ॥

## असाध्यलक्षण.

एकचक्षुर्यदाभीमंद्वितीयंमीलितंभवेत् ॥ ४ ॥
त्रिभिर्दिनैस्तथारोगीसयातियममंदिरम् ।

अर्थ—जिसरोगीका एक नेत्र भयंकर और दूसरा मिचाहुआहो वो तीनादिनमें यममंदिर अर्थात् मृत्युके मुखमे जाताहै ॥

ज्योतिर्विहीनंसहसारोगिणोयस्यलोचनम् ॥ ५ ॥
ईषत्कृष्णंसनियतंप्रयातियमसादनम् ।

अर्थ—जिस रोगीके नेत्र अकस्मात् ज्योतिर्हीन और कुछकुछ कालेहो वह निश्चय यमालयको जायगा अैसाजाने ॥

सरक्तंकृष्णवर्णंचरौद्रंचप्रेक्षतेयदा ॥ ६ ॥
इतिलिङ्गैर्विजानीयान्मृत्युरेवनसंशयः ।

अर्थ—जो रोगी लाल और काले तथा भयानक नेत्रसे देखे इनलक्षणोंसैं वैद्य जाने कि इसरोगीकी मृत्युहोवेगी ॥

---

अत्यंत रुधिरके निकलनेसैं अत्यंत जुछाव होनेसे राज यक्ष्मादि क्षयरोग और निराहारव्रत इत्यादि कारणोंसैं नेत्र अत्यंत भीतरको बैठ जातेहै यदि एकनेत्र बैठजावे और दूसरानेत्र यथावस्थित रहेतो उसकी दर्शन संपाद कर्त्री स्नायूका पक्षावात हुआहै अथवा किसी प्रकारके शिरारोगके कारण यह दशाहुई है ऐसा जाने

यदि दोनोनेत्र अत्यंत लाल होवेतो मस्तिष्कमें रुधिरका संचय हुआ जानना पांडुरोगमें नेत्र पीले रंगके होतेहै सरेकमां मेनेत्रके सपेद भागमें दाह होताहै मस्तिष्कके उद्वेजन अथवा मस्तिष्कमें रुधिरके रुकनेमें- मृगी- सन्यासरोग और अफीमके खानेमें

एकदृष्टिरचैतन्योभ्रमन्स्फुरिततारकः ॥ ७ ॥
एकरात्रेणनियतंपरलोकपथंव्रजेत् ।

अर्थ—जो एकदृष्टिसें देखे होस होयनहीं तथाजिसकीदृष्टी चारव्योतरफभ्रमणकरे और तारे फडके वह एकरात्रिमें निश्चय परलोककोपधारे ॥

## यामलेऽपि.

शुष्कास्यःश्यामकोष्ठोऽप्यसितरदततिःशीतनासाप्रदेशः ।
शोणाक्षश्चैकनेत्रोलुलितकरपदःश्रोत्रपातित्ययुक्तः ॥
शीतश्वासोऽथचोष्णश्वसनसमुदयःशीतगात्रप्रकंपः
सोद्वेगोनिःप्रपञ्चःप्रभवतिमनुजःसर्वथामृत्युकाले ॥

यामलग्रंथमें भीलिखाहै कि जिसका मुखसूखजावे कोष्टकाला तथादांतकाले नाकजिसकी शीतल एक नेत्रलाल हाथ पैर गिरेपडे कानोंसें सुनेनही कभीशीत और कभी गरमी लगे–गरमश्वास निकले–सरदीसें देह कांपे–तथा वह रोगी उद्वेग युक्त और प्रपंच रहितहो एलक्षण प्राणीकी मृत्युके समय जानने ॥

## ॥ इति नेत्रपरीक्षा समाप्त ॥

---

## स्पर्शपरीक्षा

पित्तरोगी भवेदुष्णो वातरोगी च शीतलः ।
पिच्छलः श्लेष्मरोगीस्यात्त्रिलिंगात्संनिपातवान् ।
आर्द्रकः स भवेच्छ्लेष्मा स्पर्शतश्चैव लक्षयेत् ॥

अर्थ—अब स्पर्शपरीक्षाकहतेहै–जैसैकिपित्त रोगवालेमनुष्यका देह गरम होताहै । वातरोगीका शीतल और कफरोगीका देह पसीनोसें लिहसाहुआसा होताहै । और संनिपातवाले रोगीका देह तीनोदोषोंके लक्षणयुक्त होता है । अथवा कफरोगीका देह गीलाहोताहै । इसमकार वैद्यको स्पर्शसें परीक्षाकरनी चाहिये

---

नेत्रके तारे संकुचित होजातेहै मस्तिष्कसें रुधिरके निकलनेमें तथा सन्यास और मूर्च्छा आदिरोगके अरिष्टलक्षण उत्पन्न होनेसें तारे फटे और फैले हुएसे दीखतेहै

धतूराखानेसे या नेत्रके चारव्योतरफलगनेसें कनीनिका फैल जातीहै घोर उन्माद रोगमें नेत्र अत्यंत चमकीले तथा स्नायुकी दुष्टतामेंनेत्र प्रभारहित होतेहै ।

# त्वचा वा स्पर्श

त्वचासे देहकी उष्मा (भाफ) निकलती रहती है इसीकारणसे देहमें समान गरमी रहेहै

युवावस्थावाले प्राणियोंके देहसे २४ घंटेमें ३० औन्सके लगभग भाफ निकलतीहै यदि इस्से न्यून निकलेतो देह सूखी रहतीहै और अधिक निकलेतो देह गीली रहतीहै

हैजा- ज्वर आदिरोगोंमें त्वचा शुष्क रहतीहै और दाह रोगमेंभी ऐसाही होताहै । देहमें गीलापना पसीनेंके कारण होताहै परंतु पसीने आनेके कारण पृथक्है जैसे साधारण ज्वरमें पसीना प्रसिद्धहै परंतु विषमज्वरमें पसीने बोहत आतेहै क्योंकि उसमें निर्वलता अधिक होजातीहै मरनेके थोडी देर पहले पसीना शीतल निकलताहै

यह प्रसिद्ध नियमहै कि दुर्वलताके कारण देहका परिश्रम न्यूनहोजाताहै तव देह शीतल होजाताहै और शीतल पसीने निकलने लगतेहै जैसे कि प्राय विशूचिका ( हैजा ) में होयहै अथवा हाथपैर अत्यंत शीतलहो और देहकेभीतर दाह हो तथा वेचैन चिंतायुक्त दीखै तो जानना अवशीघ्रही यह रोगी मरेगा

बहुतसे रोगोंकी परीक्षा देहकी गरमीके द्वारा होतीहै परंतु स्पर्शसें ठीक २ निश्चय नही होता अतएव बुद्धिमानोंने इसके वास्ते यंत्र बनायाहै जिसको थर्मामिटर ( Thermameter ) कहतेहै इसके द्वारा गरमीकी न्यूनाधिक्यता ठीक२ होजातीहै

थर्मामिटर यंत्र अनेक प्रकारकाहै परंतु सैल्फरैजिस्टिरिंग सबमें उत्तम होताहै इसकी तसवीर इस जिल्दके प्रथमही दीनीहै सो देखलेना

## थर्मामेटर लगानेकीविधि

थर्मामेटर लगानेका मुख्यस्थान बगलहै परंतु आवश्यकता के समय अन्य अन्य मुखादि स्थानमेंभी लगातेहै । यदि होसकेतो थरमामेटर लगानेके पूर्व एकघंटे रोगीको लिटाए रक्खे यदि शरदीकी ऋतु अथवा काबुल कश्मीर आदि शरदेश होवे तो थर्मामेटरको हाथसे मलकर गरम करले कि पारा ९४ चौरानवे अंशपर्यंत चढजावे और गर्मऋतु वा गर्मदेश जैसें द्रविड आफ्रिका आदि हो तो शीतल जलमें डुबायकर नीचे उतारलेवे फिर जहां लगाना होवे उसजगे लगावे

कमसें कम ९ मिनट और वढसें वढ २४ मिनट तक लगावे परंतु चौवीस

मिनट लगानेका वहुत थोडा कामपडताहै फिर उसको उजेलेमें लेजाकर देखे कि पारा कितने अंश चढाहै

और यहभी निश्चयकरेकि थर्मामेटर लगानेसैं पारा शीघ्र चढगया या धीरे२ चढाहै प्राय ज्वरवाले रोगोंमें जवतक रोगकी गरमीकी ठीक अवस्था नही निश्चय करी जाय उससमयतक रोगीके रोग का निश्चय होंनाभी सहज वात नहीहै और यहभी ठीक नहीहै कि एकवारके थर्मामेटर लगानेसैं ही रोगका निश्चय होजावे किंतु वैद्यको उचित है कि प्रातःकाल और सायंकालमें लगावे तथा संभव हो तो दिनमे कईवार देहकी गरमी का निश्चय करे

आरोग्यके समय ९७– ३ सैं लेकर ९९ – ५ अथवा १०० सैं और औंसत ९८–४ पर्यंत होतीहै इससे कम या अधिक हों कर उसीजगे रहेतो समझना कि कुछ न कुछ दोप है

परंतु यहभी यादरहै कि देहके प्रत्येक स्थान–प्रत्येकदेश प्रत्येक समय प्रत्येक अवस्थामें गरमी एकसी नही रहती जैसै–मुह आदिमें गरमी अधिक रहतीहै. ढके हुएकी अपेक्षा खुलेमें. छातीकी अपेक्षा हाथ पैरमे वालकोंकी अपेक्षा जवानोंके एवं जवानकी अपेक्षा वुढापेमें गरमीअधिकरहतीहै.

प्रातःकालसैं सायंकालतक गरमी अधिक होजातीहै एवं सायंकालसै प्रातःकालतक न्यून अर्थात् २४ घंटेमें अनुमान १ $\frac{1}{2}$ डिगरी के चढाव उतारहोताहै. शरद मुल्ककी अपेक्षा गरम मुल्कमें गरमी अधिकहोतीहैं अर्थात् १०० अंशपर्यंत गरमी पहुच जातीहै

गरम जलके स्नानकरनेसैं गरमी वढजातीहै एवं शीतल जलमें न्हानेसैं अथवा किसीस्थानपर शरदीं पहुचानेसैं अधिक मानासिक परिश्रमसैं गरमी न्यून होजातीहै ॥

ज्वरमें अधिक गरमीका होना एक साधारण धर्महै इसीसै १०१ दर्जेपर्यंत पारा चढनैसैं ज्वर हलका जानना १०५ दर्जेपर्यंत हो तो सामान्य–और १०६ सै १०७ दर्जेपर्यंत होनेसैं भयानक ज्वर जानना–यदि इससैं भी अधिक अर्थात् ११० सै ११२ दर्जेपर्यंत होनेसै रोगीके बचनेकी आशा नहीरहे ! अर्थात् मृत्यु उसकी समीपही जाननी॥

वहुतसै रोग देखनेमें थोडे होतेहै परंतु थर्मामेटरके लगानेसै रोगअधिक होताहै तो मालूम होजाताहै वहुतसै रोगी अपनारोग नही वतासकते जैसै पागलमनुष्य तो उनकी गरमीका हाल थर्मामेटरलगानेसैं प्रत्यक्ष होजाताहै

वालकोमें प्राय ऐसे भयानक चिन्ह दृष्टि आतेहै कि जिसै उनको मातापिता शोकवस होजातेहै परंतु थर्मामेटरलगानेसै ठीक २ वृत्तांत मालूम होजाताहै

यदि वास्तवमें किसीप्रकारका अधिक रोग न होवे तो चाहे जैसे दुष्टलक्षण क्यो नहो परंतु चिंता नही होती

जब ९८ दर्जासे एकभी दर्जागरमी वढेतो नाडीभी प्रत्येक मिनटमें १० गुनी वढ जातीहै जैसै ९८ दर्जेपर नाडी ६० होतो ९९ पर ७० एवं १०० द-र्जेपर ८०० एवं १०६ दर्जेपर १४० होजातीहै इसीप्रकार और भेदबी बुद्धिमानो-को डाक्टरीके ग्रंथोसें जानने चाहिये

## प्लैक्सी मेटरयंत्र

पेट छातीके देखनेके निमित्त इङ्लैडके डाक्टरोने एक यंत्र वनायाहै उसको प्लैक्सीमेटर कहतेहे इसयंत्रमें हाथीदांतकी एक तख्ती दो इंच लंवी और १ इंच चोडी होतीहै उसके दोनोतरफ दस्ते लगे रहतेहै जिस्सै पकडतेहै। दूसरीवस्तु एकपीतलकी हतोडीहोतीहै उसपर रवडलगी रहतीहै उसका दस्ता लकडीका हो-ताहै वस जहां ठोकनाहो वहां प्लेक्सीमेटरके दस्तेको वाएहाथमें हतौडीको पक-डकर एकसीचोटलगातेहै कि जो न अत्यंत धीरेसे न वहुत जोरसैं जहां ठोकना-हो वहांपर मर्दोमें कपडा हटाकर और औरतोमें एकमहिन कपडा वरावर एक सा फेलाकर और उसकी सिलवट दूरकरके वांएहायकी मध्यमांगुली और तर्जनी खूब जमाकर रखते है और दाहिने हाथकी उक्त दों उंगलियोसैं इसप्रकार ठोकतेहै कि हाथ न हिले केवल पहुचेको हरकत्त हो जिससैं चोट एकसी लगे और ऊंगलिया चोट देनेके समय सीधी रखतेहै तिरछीनही रखे और ध्या-नसे पर कशनकी आवाजसुने इत्यादि इसका चित्रभी इस पुस्तककी आदिमें है सो देखना॥

## स्टिथसकोपयंत्र

यह यंत्र अनेक प्रकारकाहै। परंतु प्रचलित यंत्रहलकी लकडीकी नली चार इंचसें आठ इंच पर्यंत लंवी होती है एकतरफका शिरा वडा और चपटा होताहै जिसपर कान लगाकर सुनते है और दूसरा छोटा होताहै जिसको रोगीके देह-पर रखतेहै–इसके द्वारा आवाज सुननेमें वहुत सुगमता पडती है इसकाभी चित्र इसजिल्दके आदिमें लिखीहै एक स्टेथिसकोप ऐसाभी वनातेहै जिस्से छातीके दोनो वगलका शब्द सुनाजायहै उसकानाम फ्लाग्जिविल स्टेथिसकोपहै॥

## अवस्था

रोगज्ञानमें अवस्थाका परीक्षणभी एकमुख्यकारण क्योंकि प्रत्येक अवस्थामें इसप्राणीके देहके विभागोमें कुछकुछफरक पडजाताहै अतएव रोगभी पृथक्२उत्पन्न

होतेहै तहाँ मुख्य अवस्थातीनहै प्रथमबालक–दूसरीयुवा–और तीसरी वृद्धावस्था॥

तहाँ बालक अवस्थामें थोडीभी सरदी लगनेसैं बालकबीमारहोजातेहे। दांतनिकलनेके समय प्रायज्वर, खांसी, फोडा, फुंसी–नेत्रदूखनेके रोग होतेहै ॥

दूसरीयुवावस्थामें २५ वर्षतक शरीरके बढनेका कार्य परिपूर्णहोजाताहै अतएव प्रायइसी अवस्थामें दोड धूपके कारणशरीरके टूटनेफूटनेसैं मृत्युकाभयरहताहै॥

परंतु पचीससैं उपरांत पचास वर्षतक पथ्यपूर्वक आहार विहारसै रहेतो कोई रोगनही होते ॥

परंतु स्त्रियोंके यथासमय रजोदर्श नहोनेसै रोगप्रगटहोतेहै पचासवर्षके उपरांत तीसरी वृद्धावस्थाका अमल आताहै जिसमें क्रम २ सैं

हाथ-पैरआदिकर्मेन्द्री और नेत्र नासिका आदिज्ञानेंद्री तथा मनइनका न्हास ( घटती ) होनेलगता है आखिरअत्यंत वुड्ढाहोनेसै मरजाताहै इसप्रकारवैद्यको अवस्थाके सर्व कारणविचारके रोगीका यत्नकरना–

## जाति

जातिके तीनभेदहै स्त्री पुरुष और नपुंसक परंतु नपुंसक इन्द्री दोनोंके बीचमें मानाहै उसका यत्न पृथक् कहींनहीलिखा–

जैसें प्रत्यक्ष पुरुषस्त्रीके बीचमें बहुत अंतरहै उसीप्रकार उनके रोगोंमेंभी अंतर जानना। पुरुष स्त्रियोंकी अपेक्षा अतिबली और दृढहोते है कारणकि उनके सबकार्य कठोर और परिश्रमके है। तथा प्राय पुरुष मादकवस्तु (भांग-अफीम-पोस्त आदि ) के खानेवाले होतेहै इसी कारण उनको अनेकप्रकारके कष्टउठाने पडतेहै तथा तंदुरुस्तीके कारणोकों व सबब अपने रुजगारके नहीकरसके अतएव उनको महामारी आदि छूतके रोग असंत दुखदेते है ॥

स्त्रियोंका स्वभावकोमल और निर्बल होताहै और प्राय घरमें ही बैठीहुई सबघरके कामेंको कराकर्ता है बाहर डोलना फिरना कमहोता है अतएव इनको छूतके रोगभीकम बाधाकरें है

स्त्रियोंके निर्बलतासै रोगहोते है वो पुरुषोंकी अपेक्षा असाध्यकम् होते है उसका प्रत्यक्ष दृष्टांत यहीहै कि मनुष्य संख्या ( मर्दुम शुमारी ) के अनुसार पुरुषोंसे स्त्रीअधिकहै तथा स्त्रियोंके महिने की महिने रजोदर्शहोनेके कारण संचित दुष्टदोषनिकलजातेहै परंतु गर्भजन्य रोग प्रगटहोते है इसप्रकार वैद्यको जाति विचारकरके यत्नकरना चाहिये.

# अथ कालज्ञानमाह ॥

कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि यदुक्तं शंभुना स्वयम् ।
येन विज्ञानमात्रेण त्रिकालज्ञो भवेन्नरः ॥

अर्थ—अब हम कालज्ञानको कहते है । जो साक्षात् श्रीशिवने कहाहै । जिसके जाननेमात्रसैं ही यह मनुष्य त्रिकालज्ञ (अर्थात् भूत भविष्यत् और वर्त्तमानका जाननेवाला ) होताहै

कालेन सृजते ब्रह्मा कालेन हरते हरः ।
कालेन पाल्यते विष्णुस्तस्मात्कालं च चिंतयेत् ॥

अर्थ—अब कालको मुख्यत्व दिखाते है—जैसें कि ब्रह्मा कालकरके सृष्टीको रचे है, श्रीरुद्र संहारकरेहै, और विष्णु उसीकाल करके जगत्को पालनकरते है अतएव वैद्य कालको चिंतवन करे ॥

कालज्ञानं कलायुक्तं शम्भुना यच्च भाषितम् ।
येन षण्मासतो मृत्युः पूर्वं ज्ञायेत रोगिणाम् ॥

अर्थ—श्रीशिवका कहा कलायुक्त ( शक्ति सहित अथवा छलयुक्त ) कालज्ञान जिसके जाननेसैं छःमहिने पहिले रोगियोंकी मृत्युको वैद्य जान सकताहै [ उसको कहते है ]

कालः सृजति भूतानि कालः संहरते प्रजाः ।
कालः सुप्तेषु जागर्ति तस्मात्कालं च चिंतयेत् ॥

अर्थ—कालही प्राणियोंको उत्पन्न और संहार करताहै । तथा प्राणियोंके सोनेपरभी काल जागता रहताहै । अतएव कालको चिंतवन करे ॥

काले देवास्तथा नागा यक्षाश्चासुरपन्नगाः ।
विद्याधरा मनुष्याश्च सर्वे नश्यंति कालतः ॥

अर्थ—कालमें, देव, नाग, यक्ष, असुर, पन्नग, विद्याधर, और मनुष्य सर्व नष्ट होते है ॥

विरंचिदिनमध्ये तु पतन्तीन्द्राश्चतुर्दशः ।
सोऽपि चाब्दशतांते तु स्वयं कालेन नश्यति ॥

अर्थ—जिसके १ दिनमें चौदह इन्द्र पतन होतेहै, ऐसाभी ब्रह्मदेव सौवर्षके अंतमें काल करके स्वयं नष्टहोताहै ॥

मानुषस्तु शतंजीवी पुरावेदेषु भाषितं।
सोपि कालप्रभावेण विनश्यति न संशयः ॥

अर्थ—वेदमें यह लिखाहै कि मनुष्य सौवर्षजीताहै परंतु वोभी सौवर्षके उपरांत कालके प्रभावकरके नष्टहोताहै ॥

वर्षाशीतं तथा चोष्णं प्रत्यूषं मध्यमं दिनम्।
अपराह्नं तथा नक्तं रूपं कालस्य कथ्यते ॥

अर्थ-वर्षा, शीत, गरमी, प्रातःकाल, मध्यान्ह, अपराण्ह, तथा रात्रि ए कालकेही रूपहै. । अर्थात् इन्हीमें यह जीव मरताहै ॥

काले फलंति तरवः काले बीजं प्ररोहति।
काले पुष्पवती नारी सर्वं कालेन जायते ॥

अर्थ—कालमें वृक्ष फलतेहै, कालमें बीज उपजताहै । कालमें स्त्री रजोदर्शवती होतीहै एवं यावन्मात्र वस्तुहै. सबकालकरके होतीहै।

कालेऽशनं च तोयं च काले मेघःप्रवर्षति।
काले.कर्मसमुद्दिष्टं विपरीतं न शोभनम् ॥

अर्थ—कालमें भोजन पान होताहै। मेघवर्षताहै । और जिस कालमें जो कर्म करना कहाहै उसमें करनेसें शुभ होताहै और विपरीतकरनेसें शुभ नही है ॥

कालाग्निर्जठरे जातस्तस्य वांछा चतुर्विधा।
आहारमुदकं निद्रा कामश्चैव चतुर्थकः ॥

अर्थ—जब कालाग्नि उदरमें होतीहै तब उसप्राणीकी इच्छा चार प्रकारकी होतीहै भोजन, जल, निद्रा, और चौथा कामदेव ॥

षट्चक्रं षोडशाधारं त्रिलक्षं व्योमपंचकम्।
स्वदेहे यो न जानाति कथं वैद्यः स उच्यते ॥

अर्थ-जो वैद्य अपनीदेहमें स्थित छःचक्र, सोलहआधार, और तीनलक्ष व्योमपंचकको नहीं जाने उसको वैद्य किसप्रकार कहना चाहिये।

तत्रादौ षट्चक्राण्याह

प्रथमं ब्रह्मचक्रं तु लिंगचक्रं द्वितीयकम्।

तृतीयं नाभिचक्रं तु हृदि चक्रं चतुर्थकम् ॥
पंचमं कंठचक्रं तु भ्रुवोर्मध्ये तु षष्ठकं ।
एतानि षट्चक्राणि यो जानाति स वैद्यराट् ॥

अर्थ-अब छः चक्रोको कहतेहै-ब्रह्मरंध्र अर्थात् कपाल प्रथमचक्रहै, दूसरा लिंगचक्र, तीसरा नाभिचक्र, चतुर्थ हृदयचक्र, पंचम कंठचक्र, और भोंहोंके बीचमें छठाचक्रहै, इन छःचक्रोंको जो जानताहै वो वैद्योंका राजाहैं।

## मतान्तर

प्रथमं कपाटचक्रं ज्योतिश्चक्रं द्वितीयकं ।
तृतीयं नाभिचक्रं तु हृदि चक्रं चतुर्थकं ॥
पंचमं नासिकाचक्रं गुदचक्रं तु षष्ठकम् ।
एतानि षट्चक्राणि यो वेत्ति सतु वैद्यभाक् ॥

अर्थ-मतांतरसैं कहतेहै-प्रथम कपाट (वक्षस्थल)चक्रहै, दूसरा ज्योतिः(प्राण) चक्रहै, तृतीय नाभिचक्र, हृदयचक्र चोथा, पांचवा नासिकाचक्र, और गुदाचक्र छटाहै इन छः चक्रोंको जो जानताहै वह वैद्यशब्दका भागी हैं॥

## अथ षोडशाधाराण्याह

अहंकारो मनो बुद्धिश्चित्तं कारणमेव च ।
प्राणोऽपानः समानश्च उदानो व्या नएव च ॥
पृथ्वी आपश्च तेजश्च वायुराकाशएव च ।
ज्योतीरूपं च तत्रैव षोडशाधारउच्यते ॥

अर्थ--सोलह आधारयेहै-जैसे १ अहंकार, २ मन, ३ बुद्धि, ४ चित्त,५ कारण, ६ प्राण, ७ अपान, ८ समान, ९ उदान, १० व्यान, ११ पृथ्वी, १२ जल. १३ तेज, १४ वायु, १५ आकाश, और १६ ज्योतिरूपजीव, ए इसदेहमें सोलह आधारहै ॥

## त्रिलक्षाण्याह

ऊर्ध्वलक्षं भवेत्तालौ मध्यलक्षं भवेद्धृदि ।
अधोलक्षं भवेन्नाभ्यां लक्षातीतं निरंजनम् ॥

अर्थ--तालुएमे ऊर्ध्वलक्ष ( जाननेयोग्य ) है । हृदयमें मध्यलक्षहै और

नाभिमें अधोलक्षहै परंतु जो लक्षमें न आवे ऐसा निरंजन (परमात्मा) हैं॥

एकस्तंभं नवद्वारं त्रिशून्यं पंचदेवता।
पञ्चेन्द्रियकुटुंबेषु यत्रात्मा तत्र मे गृहम्॥

अर्थ—एकस्तंभ (अहंकाररूपखंभ) नवद्वार (नेत्रनासिकाआदि नो दरवाजे) तीनशून्य, (रजसत्वतम) पंचदेव (पंचतत्त्वदेवरूप) और पंचइन्द्री सोई हुआ कुटुंब इनमें जहां आत्माहै वही मेरा घरहै, ये व्योमपंचक हुए॥

कुविंशतिसहस्राणि षट्शतान्यधिकानि च।
निशाह्ने चलते प्राणः सोऽपि स्तंभोऽत्र कथ्यते॥

अर्थ—२१६०० इक्कीस हजार छःसौं श्वास इसप्राणीकी दिनरातमें चलती इसकोभी स्तंभ कहतेहै॥

आत्माशरीरमित्युक्तमन्तरात्मा मनो विदुः।
परमात्मा भवेत्प्राणः पञ्च तत्त्वानि धारयेत्॥

अर्थ—शरीरको आत्मा, मनको अंतरात्मा और प्राणोंको परमात्मा कहते है, येही पंचतत्वोंको धारण करतेहै॥

कायानगरमध्ये तु प्रतोली शून्यवद्भवेत्।
नरेन्द्रो गच्छते तेन तत्पुरं शून्यकं भवेत्॥

अर्थ—देहरूप नगरमें नस नाडी और इन्द्री आदि जो गलीहै एं शून्यहोजातीहै अर्थात् इनके कार्य बंद होजातेहै तब प्राणरूप राजा उस गलीमें होकर निकल जाताहै। तब यह देहरूप पुर शून्य होजाताहै।

## स्वरोदयमतात्

कायानगरमध्येतु मारुतो रक्षपालकः।
प्रवेशो दशभिः प्रोक्तो द्वादशाङ्गुलनिर्गमः॥

अर्थ—अब स्वरोदयके मतसैं कालज्ञानको कहतेहै कि इस देहरूप नगरमें श्वासरूप पवनही रखवाली वालाहै उसका १० अंगुल करके प्रवेश और बारह अंगुलनिर्गमकहाहै इस्सै न्यूनाधिक अरिष्टहोनेका चिन्हहै.॥

उदयं सूर्यमार्गेण चन्द्रेणास्तमयं यदि।
ददाति गुणसंघातं विपरीतं विनाशकृत्॥

अर्थ—स्वरका उदय नासिकाके दहने मार्गसें हो. और वांममार्गसें अस्त होवै

तो अत्यंत गुणदाताहै इस्से विपरीतहो अर्थात् वामस्वरसै उदय और दहनेस्वरसैं अस्तहोवेतो विनाश कर्त्ताहै. ॥

संपूर्णं वहते सूर्यः सोमश्चैव न दृश्यते ।
पक्षेण जायते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥

अर्थ—यदि सदैव दहना स्वर चले, वाम स्वर कभी चले नही उस प्राणीकी १५ दिनमें मृत्युहो यह कालज्ञानने कहाहै ॥

मासश्चैव तु षण्मासः पक्षश्चैव त्रिमासकः ।
पंचरात्रिर्वहेश्चैको तस्य मृत्युर्न संशयः ॥

अर्थ—जिस प्राणीका एकही स्वर एकमहिने. या छ' महिने या एकपक्ष तथा तीनमहिने. या पाचरात बराबर चले उसकी निस्सदेह मृत्युहो ॥

शुक्लपक्षे वहेद्वामं कृष्णपक्षे च दक्षिणम् ।
उभयोस्त्रीणि दिवसं दृश्यते चंद्रसूर्ययोः ॥

अर्थ—शुक्लपक्षमे प्रथम वामस्वर चलताहै, ओर कृष्णपक्षमें दहनास्वर एवं शुक्लकृष्णपक्षोमे चंद्र और सूर्य दोनो स्वर तीन २ दिन चलतेहै ॥

पंचभूतात्मकं दीपं चन्द्रस्नेहेन पूरितम् ।
रक्षेच्च सूर्यवातेन तेन जीवस्थिरो भवेत् ॥

अर्थ—यह पंचभूतात्मक देह रूप दीपक चद्रस्वररूप तैलसे भराहुआहै, इस को सूर्यस्वररूप पवनसै रक्षा करनी चाहिये तो यह जीव स्थिर रहे ॥

आत्मादीपः सूर्यज्योतिरायुस्नेहकलात्मकः ।
कायाकज्जलसंसारे वृत्तिरेखा तनोर्मता ॥

अर्थ—आत्मारूप दीपक सूर्यस्वररूपज्योति आयुरूपी तेल भराहै, इसमें काया रूपी कज्जलहै और इस ससारमे इसप्राणीकी वृत्तिहै वोही इस देहकी रेखा कही है

अरुंधती ध्रुवं चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आयुर्हीना न पश्यंति चतुर्थं मातृमंडलम् ॥

अर्थ—अरुंधती, ध्रुव, और विष्णुकेत्रिपद ( श्रवणनक्षत्रकेतीनतारे ) एव चतुर्थ मातृमंडल ( कृत्तिकाके छःतारे ) इनको हीनायु मनुष्य नही देखे ॥

अरुधंती भवेज्जिव्हा ध्रुवो नासाग्रमेव च ।
विष्णुस्तु भ्रूद्वयोर्मध्ये भ्रूद्वयं मातृमंडलम् ॥

अर्थ—इस कालज्ञानमें अरुंधती जीभको कहते है। और नासाका अग्रभाग है वोही ध्रुवका ताराहै। दोनो भोहका वीचहै वोही विष्णुपदहै। और दोनोंभोहको मातृमंडल कहतेहै। अर्थात् मरणासन्न मनुष्य इनको नही देखसकता॥

अक्षैर्लक्षितलक्षणेन पयसा पूर्णेन्दुना भानुना।
पूर्वादक्षिणपश्चिमोत्तरदिशां षट्त्रिद्विमासैककं॥
छिद्रं पश्यति चेत्तदा दशदिनं धूम्राकृतिं पश्चिमे।
ज्वालां पश्यति सद्य एव मरणं कालोचितज्ञानिनाम्॥

अर्थ—जो रोगी जलमें सूर्य अथवा चंद्र इनके प्रतिविंवमें पूर्वकी और या दक्षिणकीयापश्चिम अथवा उत्तरकी तरफ छिद्र देखे तो क्रमसें छः—तीन—दो—ओर एक इतने महिने वचे और सूर्यचंद्रका धूम्रवर्णदेखे तो दशदिन और उसप्रतिविंवके पश्चिमकी तरफज्वाला देखे तो तत्काल मरणहो यह कालज्ञान के जानने वालोंने कहाहै.॥

## मरणमें अरिष्टको मुख्यत्व.

पुष्पं यथा पूर्वरूपं फलस्येह भविष्यतः।
तथा लिंगमरिष्टाख्यं पूर्वरूपं मरिष्यतः॥
अप्येवतु भवेत्पुष्पं फलेनाननुवंधि यत्।
फलं चापिभवेत्किञ्चिद्यस्य पुष्पं नपूर्वजम्॥

अर्थ—जैसै पुष्प होनेवालें फलका वोधक अर्थात् वृक्षमें फूलके आतेही अनुमानद्वारा निश्चय होताहै कि अब इसमेंफलभी आवेगा उसीप्रकार अरिष्टलक्षण (निश्चयमरणसूचक चिन्ह) द्वाराभावी (होनहार) मृत्युका निश्चय होताहै। अनेक पुष्पोंमें फलनहीं आताहै इसीप्रकार कोई २ पुष्पकेविनाभी होतेहै (जैसैं गूलर-पीपरमें) परंतु

नत्वरिष्टस्य जातस्य नाशोऽस्ति मरणादृते।
मरणं चापितन्नास्ति यन्नारिष्टपुरःसरम्॥
मिथ्यादृष्टमरिष्टाभमनरिष्टमजानता।
अरिष्टं चाप्यसंबुद्धमेतत्प्रज्ञापराधजम्॥

अर्थ—परंतु अरिष्ट चिन्हके होनेसें अवश्य मृत्युहोवे। वह मृत्युही नहीं जिसमें प्रथम अरिष्ट लक्षण उपस्थित नहो। अनेकजगेऐसा वोधहोताहै कि अरिष्ट-

लक्षणहुएहै और रोगीकी मृत्युनहीं हुई औरकहीं २ मृत्युहो गई परंतु मृत्युके पूर्व कोई अरिष्ट चिन्ह दृष्टनही आए । परंतु ऐसाबोध भ्रमात्मकहै इसमे कोई-संदेह नहींहै । जिसको वैद्य अरिष्टजानताहै वह प्रकृति अरिष्ट चिन्हनहींथा अज्ञानसैं उसको ऐसाभ्रमहोगया ॥

तानिसौक्ष्म्यात्प्रमादाद्वातथैवाशुव्यतिक्रमात् ।
गृह्यन्तेनोद्धतान्यज्ञैर्मुमूर्षुर्नत्वसंभवात् ॥
असिद्धिमाप्नुयाल्लोके प्रतिकुर्वन्गतायुषः ।
अतोरिष्टानि यत्नेन लक्षयेत्कुशलो भिषक् ॥

अर्थ—किसी २ मृत्युके पूर्व अरिष्टलक्षण सपूर्ण जानेनहीं जाते इसका यह कारणहै किये उक्तलक्षण समस्त जो है वो अत्यंत सूक्ष्म ( बारीक ) रूपसे उठते है अथवा जल्दी २ एकलक्षणके होनेपर दूसरालक्षण होनेलगताहै उसका अनुमान मरनेवाले रोगीको नहींहोता । अथवा जैसेये अरिष्टकाज्ञानहो ऐसाविशेष मनको नहींलगाता इसीसैं यथार्थज्ञान नहीहोता । इससैं यह निश्चयहुआ कि मृत्युके पूर्व ये अरिष्टलक्षण अवश्य उत्पन्नतो होतेहै, परंतु उससमय यह निश्चय नहीं करता । इसमें निश्चय नहीं होनेका कारण अज्ञानता अथवा यथार्थ निश्चयात्मक मनका न लगाना मात्रहै ॥

गतायुमनुष्यकीचिकित्साकरनेसैं अवश्य व्यर्थ परिश्रम होताहै [ अर्थात् उसको यश और धन इनमेंसैं किसीवस्तुकी प्राप्तिनहीं होती ] अत एव वैद्यको समस्त अरिष्ट लक्षणोका जानना अति आवश्यकहै ॥

## अथातः पंचेन्द्रियार्थविप्रतिपत्तिमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

अर्थ—अब पंचेन्द्रियार्थविप्रतिपत्ति अध्यायकी व्याख्याकरेंगे ॥

शरीरशीलयोर्यस्य प्रकृतिर्विकृतिर्भवेत् ।
तत्त्वरिष्टं समासेन व्यासतस्तु निबोध मे ॥

अर्थ—जिस प्राणीके शरीर मानसिक स्वभाव और प्रकृति ए तीनो पलटजावे वो मरणकेलक्षणहै । यह मैंनें संक्षेपसै कहा अब इनको हेवत्स ! तू विस्तारसै सुन ॥

### कर्णेन्द्रीकीविकृति

शृणोति विविधान् शब्दान् यो दिव्यानामभावतः ।
समुद्रपुरमेघानामसंपत्तौ च निःस्वनम् ॥

तान् स्वनान्नावगृह्णाति मन्यते चान्यशब्दवत् ।
ग्राम्यारण्यस्वनांश्चापि विपरीतान् शृणोत्यापि ॥
द्विषच्छब्देषु रमते सुहृच्छब्देषु कुप्यति ।
न शृणोति च योऽकस्मात्तं ब्रुवंति गतायुषम् ॥

अर्थ—जो मनुष्य विविधशब्द ( बोलना, पाठ, गीत, बाजे, आदि ) और दिव्य ( सिद्ध, गंधर्व, किन्नर, आदिके ) तथा समुद्र, पुरमेघ, आदिके न होनेपर इनका शब्द सुने, अथवा इन समुद्रादिके होने परभी इनका शब्द न सुने, अथवा इनके शब्दको औरही शब्दके समानसुने, तथा गामके शब्दोंको वनके शब्द समान सुने और वनके शब्दोंको गामके शब्द समान सुने, एवं शत्रुके वाक्यमें प्रीतिकरे, और माता. पिता. भाई. मित्रादिके शब्दको सुनकर कुपितहो, अथवा सुनते २ अकस्मात् न सुने उसप्राणीको गतायु ( मरणासन्न ) जानना। ये कर्णेन्द्रीके चिन्ह कहे ॥

## त्वचाकी विकृति

यस्तूष्णमिव गृह्णाति शीतमुष्णं च शीतवत् ।
संजातशीतपिडको यश्च दाहेन पीड्यते ॥
उष्णगात्रोऽतिमात्रं च यः शीतेन प्रवेपते ।
प्रहारान्नाभिजानाति योऽङ्गच्छेदमथापि वा ॥
पांशुनेवावकीर्णानि यश्चगात्राणि मन्यते ।
वर्णान्यभावो राज्यो वा यस्य गात्रे भवंति हि ॥
स्नातानुलिप्तं यश्चापि भजंते नीलमक्षिकाः ।
सुगंधिर्वाति योऽकस्मात्तं वदंति गतायुषम् ॥

अर्थ—अब रोगीके स्पर्शकी विप्रतिपत्ति ( विपरीतता ) दिखाते है। कि जो मनुष्य शीतलवस्तुको गरमके समान ग्रहणकरे, और गरमवस्तुको शीतलके समान, एवं शीतपिडकादेहमें होनेपरभी दाहके मारे पीडितहो। जिसका देह गरमहो परंतु मारेशीतके थरथरकांपे। और लकडी तलवार आदिकी चोट लगनेको तथा अंगकटजानेकोभी नजाने, एवं जो अंगोंको धूलसें आच्छादितमाने, तथा देहका वर्ण पलट जावे अथवा जिसके देहमें काली, लाल, रेखा होजावे।एवं तत्काल स्नानकराहो और चंदनादि लेपभी कर रक्खाहो इसप्रकार सुगंधितदे-

इवालेके देहमें नीलीमक्खी चारोतरफसें आनकर वैठे, तथा जिसकीदेहमें अकस्मात् सुगंधआनेलगे वो १ वर्षमें अवश्यमरे. ॥

विपरीतेन गृह्णाति रसान् यश्चोपयोजितान् ।
उपयुक्ताः क्रमाद्यस्य रसा दोषाभिवृद्धये ॥
यस्य दोषाग्निसाम्यं च कुर्युर्मिथ्योपयोजिता ।
यो वा रसान्न संवेत्ति गतासुं तं प्रचक्षते ॥

अर्थ—जो मनुष्य खट्टेरसको मीठा और मीठेरसको खट्टा इसी प्रकार सर्व, रसोंको विपरीतजाने और क्रमपूर्वक सेवनकरेहुएभी मधुरादिरस दोषोंको वढावे-और जो वैपरीत्यसे सेवनकरे हुए रस दोष और अग्निको समानता करे[ अर्थात् हितकारी पदार्थ उपद्रव करे । और उपद्रवकारी पदार्थ जिसको हितहो ] तथा जो अन्नके रसको न जाने उसको गतआयु जानना यह एकमहिनेमें मरे ॥

सुगंधं वेत्ति दुर्गंधं दुर्गंधस्य सुगंधिताम् ।
यो वा गंधान्न जानाति गतासुं तं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—जो मनुष्य सुगंधको दुर्गंध और दुर्गंधको सुगंध समझे अथवा जो सुगंध और दुर्गंध किसिको न जाने उसे गतप्राण जानना ये भी एकमहिनेमें मरताहै ॥

द्वंद्वान्युष्णहिमादीनि कालावस्थादिशस्तथा । विपरीतेन गृह्णाति भावानन्यांश्च यो नरः ॥ दिवाज्योतींषि यश्चापि ज्वलितानीव पश्यति ॥ रात्रौ सूर्यं ज्वलंतं वा दिवावा चन्द्रवर्चसम् ॥ अमेघोपप्लवे यश्च शक्रचापतडिद्गणान् ॥ तडित्वतोऽसि नान्यो वा निर्मले गगने घनान् ॥ विमानयानप्रासादैर्यश्च संकुलनंवरं ॥ यश्चानिलंमूर्त्तिमंत मन्तरीक्षं च पश्यति ॥ धूमनीहारवासोभिरावृतामिव मेदिनीम् ॥ प्रदीप्तमिव लोकं च यो वा प्लुतमिवाम्भसा॥ भूमिमष्टापदाकारां लेखाभिर्यश्चपश्यति ॥ न पश्यति सनक्षत्रां यश्च देवीमरुंधतीम् ॥ ध्रुवमाकाशगंगां वा तं वदंति गतायुषम् ॥

अर्थ–जो मनुष्य गरमी. सरदी काल की अवस्था (प्रवातनिर्वात और वर्षादि,

और दिशा इनको तथा अन्यभाव कहिये द्रव्य गुण कर्मादिकोको विपरीततासें ग्रहणकरेवो१मासमेंमरे॥अव रूपग्रहणको दिखाते हैं। कि जो मनुष्य दिनमें ज्योतिवाले पदार्थ (सूर्यचंद्रआदिको) अग्निके समान जलते सें देखे और रात्रिमें सूर्यको प्रज्वलित देखे अथवा दिनमें सूर्यको चंद्रमाके समान शीतल तेजवाला देखे॥ एवं बिनाबद्दलके जो इन्द्रधनुष और बिजली चमकती देखे, तथा बिजलीवाले बदलोको काले पीले देखे और निर्मलआकाशको बद्दलोंसें व्याप्त देखे, तो दो या तीन महिनेमें मरे, जो मनुष्य आकाशको विमान. यान (रथघोडा हाथीआदि) और मेहलोंसें व्याप्त देखे तथा चलती हुई पवनको मूर्त्तमान ( देवताके आकार अथवा अन्यपुरुपाकार ) देखे तथा बिनानेत्ररोगके जो मनुष्य पृथ्वीको धूंआ, कुहल और वस्त्रोंसें आच्छादित देखें तथा विना ग्रीष्मऋतुके जगतको फुकताहुआ देखे, तथा जलमें डूबाहुआ देखे, तथा पृथ्वीको रेखारचित चतुष्पथके आकारदेखे। और जो मनुष्य नक्षत्र सहित अरुंधती. ध्रुवकातारा और शिशुमारचक्रको न देखे वो मरणके समीप जानना॥

ज्योत्स्ना दर्शोष्णतोयेषु छायां यश्च न पश्यति॥
पश्यत्येकांगहीनां वा विकृतां वाऽन्यसत्वजाम्॥
श्वकाककंकगृध्राणां प्रेतानां यक्षरक्षसां॥
पिशाचोरगनागानां भूतानां विकृतामपि॥
योवा मयूरकंठाभं विधूमं वन्हिमीक्षते॥
आतुरस्य भवेन्मृत्युःस्वस्थो व्याधिमवाप्नुयात्॥

अर्थ—जो मनुष्य धूप चांदनी आदिप्रकाशमें दर्पण, पसीने और जलमें अपनीछायाको न देखेयदि देखेतो ( हाथ, पैर, मस्तक आदि ) एक अंगरहित देखे, अथवा विकृत तथा अन्यसत्त्व(और प्राणी गधा कुत्ते आदि.)कीसी देखे,तथा कुत्ता काक, कंक, गीध, प्रेत, यक्ष, राक्षस पिशाच, सर्प, नाग, और मनुष्य इनकी छायाको विकृतदेखे॥ तथा जोमनुष्य धूआं रहित अग्निका वर्ण मोरकंठके समान नील देखे तो आतुर (रोगी) की मृत्युहोवे और नैरोग्य पुरुप देखेतो रोगी होय—इति॥

---

## अथातच्छायाविप्रतिपत्तिमध्यायं व्याख्यास्यामः॥

अर्थ—अब छायाविप्रतिपत्ति अध्यायकी व्याख्या करेंगे. इस जगे छायाशब्दके पश्चात् ह्री-श्री-तुष्ट्यादिकीभी विपरीतता जाननी अर्थात् इनकीभी व्याख्या करेंगे

श्यावा लोहितका नीला पीतिका वापि मानवम्

अभिद्रवंति यं छायाः स परासुरसंशयम् ॥

अर्थ–अब छायाकी विपरीतता दिखातेहै जैसेकि जिस पुरुषके साथ काली, लोहित ( लाल ) नीलीऔरपीली छाया दीखे वो गतप्राण जानना अर्थात् मरेगा ॥

ह्रीश्रियो नश्यतो यस्य तेज ओजः स्मृतिः प्रभा ॥
अकस्माद्यं भजंते वा स परासुरसंशयम् ॥

अर्थ—अव प्रभाकी विपरीतता दिखातेहै । जिसरोगीकी लज्जा, लक्ष्मी, ओज, स्मरणशक्ति, और कांति, ए अकस्मात् जातीरहे । अथवा जो लज्जाआदिसैं रहितहो वह अकस्मात् लज्जाआदि युक्तहोजावे तो वहमनुष्य अवश्य मरे॥

यस्याधरोष्ठः पतितः क्षिप्तश्चोर्ध्वं तथोत्तरः
उभौ वा जाम्ववाभासौ दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥

अर्थ—जिसका नीचेका होठ नीचेको गिरपडे और ऊपरका होठ ऊपरको चिपटजावे, अथवा दोनोहोठ जामुनके समान काले होजाय उस मनुष्यका जीना कठिनहै ॥

आरक्ता दशना यस्य श्यावा वा स्युः पतंति च॥
खञ्जनप्रतिमावापि तं गतायुषमादिशेत् ॥

अर्थ—जिस मनुष्यके दांत लाल अथवा काले होजावे, अथवा गिरपडे या खंजन पक्षीके समान सपेद और काले होजावे उसे गतायु अर्थात् मरेगा ऐसा जाने।

कृष्णा स्तब्धावलिप्ता वा जिह्वा शूना च यस्य वै
कर्कशा वा भवेद्यस्य सोऽचिराद्विजहात्यसून् ॥

अर्थ—जिसकी जीभ–काली, लठर, कफसैं लिहसी, सूजी, और कठोर होजावे वह थोडे समयमें मरेगा ऐसा वैद्य जाने । यह एकमाहिनेमेंमरे है ॥

कुटिला स्फुटिता वापि शुष्का वा यस्य नासिका
अवस्फूर्जति मग्ना वा न स जीवति मानवः॥

अर्थ—जिसकी नाक टेढी, फटीसी, सूखीसी और शब्दयुक्तहो, अथवा भीतरको बैठ जावे वह मनुष्य नही जीवे । यह मनुष्य सातरात्रिमें मरेहै ॥

संक्षिप्ते विषमे स्तब्धे रक्ते स्रस्ते च लोचने
स्यातां वा प्रस्रुते यस्य स गतायुर्नरो ध्रुवम् ॥

अर्थ—जिसके नेत्र संकुचित, ऊचेनीचे, निश्चेष्ट, लाल, और नीचेको गिरजा वे, अथवा जलवहे वो मनुष्य निश्चय, गतायु जानना ॥

केशा सीमंतिनो यस्य संक्षिप्ते विनते भ्रुवौ
लुनंति चाक्षि पक्ष्माणि सो चिराद्याति मृत्यवे ॥

अर्थ—जिसके वालोंकी वैंनीसी गुथजावे, और दोनो भोह संकुचित और नीचेको गिरजावे, और जो पलकोके वालोंको वारं वारखोले, मूंदे वो थोडेकालमे यमराजकेगृहको पधारे। यदि ये लक्षण नैरोग्यपुरुपके होतो वो छः महिने में मरे। और रोगी तीनदिनमें मरे ॥

नाहरत्यन्नमास्यस्थं न धारयति यः शिरः।
एकाग्रदृष्टिर्मूढात्मा सद्यः प्राणान् जहाति सः ॥

अर्थ—अब देहकेअवयवक्रियाकी विपरीतताको कहतेहै, जैसेकि जोमनुष्य मुखमें धरेहुए अन्नको न निगले और जो मस्तकको धारण न करे अर्थात् गेरगेर देवे, एकहीं स्थानमें दृष्टी लगायदे, शीलताजातीरहे वह तत्कालप्राणोंको परित्यागकरे ॥

बलवान् दुर्बलो वापि संमोहं योऽधिगच्छति।
उत्थाप्यमानो वहुशस्तंधीरः परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—बलवान्हो या दुर्वलहो जिसको वहुतसा उठाने परभी वारंवार मूर्च्छाआवे उसको धीरपुरुष त्यागदे ॥

उत्तानः सर्वदा शेते पादौ विकुरुते च यः ॥
विप्रसारणशीलो वा न स जीवति मानवः ॥

अर्थ—जो सदैव चित्त सोवे और पैरोंको कभी उठावे कभीधरे कभीमोडे इत्यादि विकृतिकरे. अथवा सुकडेही रक्खे वो रोगी नहीं जीवे. ॥

शीतपादकरोच्छ्वासश्छिन्नश्वासश्चयो भवेत्।
काकोच्छ्वासश्च यो मर्त्यस्तंधीरःपरिवर्जयेत् ॥

अर्थ—जिसके हाथपैर और श्वास शीतलहो तथा श्वास टूट २ जावे, अथवा काककेसमान श्वासलेवे उसेधीरवैद्य त्यागदेवे ए सद्यमरणके चिन्हहै ॥

निद्रा न छिद्यते यस्य यो वा जागर्त्ति सर्वदा।
मुह्येद्वा वक्तुकामस्तु प्रत्याख्येयः स जानता ॥

अर्थ—जो सोयाही करे जागे नही, अथवा जो सदैव जागाकर सोवे नही और जब बोलाचाहे तभी मूर्च्छितहोजावे उसे वैद्य त्यागदेवे ॥

उत्तरोष्ठश्च यो लिह्यादुद्गारांश्च करोति यः ।
प्रेतैर्वा भाषते सार्द्धं प्रेतरूपं तमादिशेत् ॥

अर्थ—जो ऊपर के होठको चाटाकरे, और जो वारंवार डकारलेवे, तथा मृतपुरुषोंके साथ जो भाषणकरे, उसको प्रेतरूपही जानना ।

स्वेभ्यः सरोमकूपेभ्यो यस्य रक्तं प्रवर्त्तते ।
पुरुषस्य विषार्त्तस्य सद्यो जह्यात्स जीवितम् ॥

अर्थ—अब शरीर देश विशेषाश्रितव्याधिविशेषअरिष्टकृतोकों दिखातेहै—जैसें जिसके रोमांचोंमेंसें रुधिरवहनेलगे वो विषार्त्त पुरुष तत्काल जीवनको परित्याग करे ॥

वातष्ठीला तु हृदये यस्योर्ध्वमनुयायिनी ।
रुजान्नविद्वेषकरी स परासुरसंशयम् ॥

अर्थ—जिसके वातष्ठीला हृदयमें प्रगटहो ऊपरको चढे, और उसमें पीडाहो तथा अन्नमें प्रीत न होवे, वह रोगी मरेगा ऐसा जाने ॥

अनन्योपद्रवकृतः शोफः पादसमुत्थितः ।
पुरुषं हन्ति नारीं तु मुखजो गुह्यजो द्वयम् ॥

अर्थ—पैरोंमेंसूजनहो और उसमें सोफकेही उपद्रव श्वास प्यास आदिहोवे । वो पुरुषको नाशकरे । और मुखसें उठी सूजन उक्तउपद्रवोकरकेयुक्तहो वह स्त्रीको नाश करे, और गुदाकी सूजन स्त्रीपुरुष दोनोको नष्ट करती है ॥

अतिसारो ज्वरो हिक्का छर्दिः शूनांडमेढ्रता ।
श्वासिनो कासिनो वापि यस्य तं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—खांसी श्वासवाले रोगीके अतिसार, ज्वर, हिचकी, और वमन ए उपद्रव होतेहो तथा अंडकोश और लिंग भग परसूजनहो उसैवैद्य त्यागदेवे ॥

स्वेदो दाहश्च बलवान् हिक्का श्वासश्च मानवम् ।
बलवंतमपि प्राणैर्वियुज्यंति न संशयः ॥

अर्थ—जिसके पसीने और दाह अत्यंतहों ऐसे बलवान् पुरुषको हिचकी और श्वासरोग प्राणरहित करतेहै इसमें संदेह नही है ॥

श्यावा जिव्हा भवेद्यस्य सव्यं चाक्षि निमज्जति ।
मुखं च जायते पूति यस्य तं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—जिसकी जीभ कालीहो और दहना नेत्र बैठजावे, तथा मुखमेसैं दुर्गंधआवे उसको वैद्य त्याग देवे ॥

वक्त्रमापूर्यतेऽश्रूणां स्विद्यतश्चरणावुभौ ।
चक्षुश्चाकुलतां याति यमराष्ट्रं गमिष्यतः ॥

अर्थ—जिसका मुख आंसुओंसैं भरजावे, और दोनोपैर पसीजैं तथा नेत्र जिसके व्याकुल होजाय वह यमराजके जायगा ऐसा जाने । यह रोगी प्रहरअथवा दोघडीमे मरेहै. ॥

अतिमात्रं लघूनि स्युर्गात्राणि गुरुकाणि च ।
यस्याकस्मात्स विज्ञेयो गंता वैवस्वतालयम् ॥

अर्थ—जिस रोगीका भारी देह अकस्मात् अत्यंत हलका होजावे वह रोगी यमराजके घरजाने वालाहै ॥

पङ्कमत्स्यवसातैलघृतगंधांश्च ये नराः ।
मृष्टगंधांश्च ये वांति गंतारस्ते यमालयं ॥

अर्थ—जिन रोगियोंकी देहमेंसै कीच, मछली, वसा तेल, और घृतकीसी वास आवे, तथा जो दिव्य सुगंधवान् वमनकरे वो यमालयको जायगे । यह एकवर्षमें मरताहै ॥

यूकाललाटमायांति बलिं नाश्नन्ति वायसाः ।
येषां वापि रतिर्नास्ति यातारस्ते यमालयम् ॥
ज्वरातीसारशोकाः स्युर्यस्यान्योऽन्यावसादिनः ।
प्रक्षीणबलमांसस्य नासौ शक्यश्चिकित्सितुम् ॥

अर्थ—जिनके मस्तकपर जूंआ आवे और कौआ काक बलिको न खांय तथा जिनको कहीं सुखनहो वो यमालयजाने वाले हैं । ऐसाजानना यह अरिष्टएकवर्षकाहै जिसके परस्पर उपद्रव करता ज्वर अतिसार और सूजन हो । तथा बल मांस ए क्षीण होजाय वह रोगी चिकित्साके योग्य नही है ॥

क्षीणस्य यस्य क्षुत्तृष्णे हृद्यैर्मिष्टैर्हितैस्तथा ।

न शाम्यतोऽन्नपानै श्च तस्य मृत्युरुपस्थितः ॥

अर्थ—जिस क्षीणपुरुषकी भूख प्यास हृद्य मिष्ट और हितकारी अन्नजलसैं भी शांति न हो उसकी मृत्यु खडीहुई है अैसा जाने ॥

प्रवाहिका शिरःशूलं कोष्ठशूलं च दारुणम् ।
पिपासा बलहानिश्च तस्य मृत्युरुपस्थितः ॥

अर्थ—जिस रोगीकेप्रवाहिका, मस्तकशूल, घोर उदरशूल, प्यास, और बलहानीहो उसकी मौत खडीहै अैसा जानो ॥

विषमेणोपचारेण कर्मभिश्च पुराकृतैः।
अनित्यत्वाच्च जंतूनां जीवितं निधनं व्रजेत् ॥

अर्थ—अब यह कहते हैकि इस मनुष्यके अरिष्ट किस तरह उत्पन्न होतेहै जिनसैं यह निश्चय मरताहै । तहां विषम चिकित्सा करनेसै और पूर्वजन्मके कर्मोंकरके, तथा प्राणीमात्रोंको अनित्य होनेसैं, जीवोका जीवन विनाशको प्राप्तहोतहै

प्रेतभूतपिशाचाश्च रक्षांसि विविधानि च ॥ मरणाभिमुखं नित्यमुपसर्पंति मानवम् ॥ तानि भेषजवीर्याणि प्रतिघ्नंति जिघांसया ॥ तस्मान्मोघाः क्रियाः सर्वा भवंत्येव गतायुषः ॥

अर्थ—मरणके समय सब क्रिया निष्फल क्यो होजाती है इसवास्ते कहते है कि इसमनुष्यके मरण समय प्रेत, भूत, पिशाच, अनेक प्रकारके ब्रह्मराक्षसआदि नित्यइसके मारनेको समीप आते है, इसीसै गतायु मनुष्यके सर्वक्रिया निष्फल होजाती है ॥

## इति.

अथातः स्वभावविप्रतिपत्तिमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

अर्थ—अब स्वभाव ( प्रकृति ) विप्रतिपत्ति अध्यायकी व्याख्याकरेगे । यहां स्वभाव शब्दके अनंतर आदिशब्द लुप्तहै अर्थात् स्वभावादि विप्रतिपत्ती अध्यायकी व्याख्या करेंगे । ॥

स्वभावप्रसिद्धानां शरीरैकदेशानामन्यभावित्वं मरणाय तद्यथा शुक्लानां कृष्णता कृष्णानां शुक्लता रक्तानामन्यवर्णत्वं स्थिराणामस्थिरत्वं मृदूनां स्थिरता चलानामचलत्वमचलानां चलता पृथूनां संक्षिप्तत्वं संक्षिप्तानां पृथुता दीर्घाणां ह्रस्व

त्वं ह्रस्वानां दीर्घताऽपतनधर्मिणां पतनधर्मित्वं पतनधर्मिणामपतनधर्मित्वमकस्माच्चशैत्यौष्ण्यस्नैग्ध्यरौक्ष्यप्रस्तम्भवैवर्ण्यावसदनाश्चाङ्गानाम् ॥

अर्थ—जो देहमें स्वभाव सिद्धपदार्थ है उनका शरीरके एकदेशमें विपरीतहोजाना मरणके अर्थ है । जैसै अकस्मात् सपेदपदार्थोंका कालाहोजाना, और कालोंका सपेद होजाना, लालतदार्थ ( होठ, तालुआदि ) का सपेद काला पीला होजाना, स्थिरपदार्थों अस्थिर होना और ( केश, श्मश्रु आदि कठोर पदार्थोंका ) नम्र होजाना ( और नम्रपदार्थ ( मांस, रुधिरादिकोंका ) कठोर होजाना) इसी प्रकार चलपदार्थोंका स्थिरहोजाना, और अचलपदार्थोंका चलायमान होना मोटेन्को सुकडजाना, सुकडेहुओंका मोटाहोना, दीर्घोंका ह्रस्वहोना और ह्रस्वोंका दीर्घहोना, विनागिरने वालोंका गिरजाना और गिरनेवालोंका स्थिरहोना तथा शीतलता, गरमी, चिकनाई, रुखाई, स्तब्धता, विवर्णता, और विकलता ए अंगोंके विपरीत होना मरणके अर्थ जानने ॥

स्वेभ्यः स्थानेभ्यः शरीरैकदेशानामवस्रस्तोत्क्षिप्तभ्रांतावक्षिप्तपतितविमुक्तनिर्गतांतर्गतगुरुलघुत्वानि ॥

अर्थ—शरीरके एकदेशोंका अपनेस्थानसै सिथिलहोना, उनको ऊपरकोजाना नेत्रादिकोंका भ्रमणहोना, तिरछागिरना, शिरग्रीवादिकोंका गिरना, संधीआदिकाछुटना, जिव्हाआदिकानिकलना, जिव्हानेत्रादिकोंका भीतरप्रवेशहोना बाहुशिरआदि भारीहलकोंका विपरीतहोना, ये लक्षण अरिष्टकरताहै. ॥

प्रवालवर्णव्यङ्गप्रादुर्भावोऽप्यकस्मात् । सिराणां च दर्शनं ललाटे नासावंशे वा पिडकोत्पत्तिः । गोमयचूर्णप्रकाशस्य वा रजसो दर्शनमुत्तमांगे निलयनं वा कपोतकङ्कप्रभृतीनां मूत्रपुरीषवृद्धिरभुंजानानां तत्प्रणाशो भुंजानानां । स्तनमूलहृदयोरःसु च शूलोत्पत्तयः मध्ये शूनत्वमन्तेषु परिम्लायित्वं विपर्ययो वा तथार्द्धाङ्ग श्वयथुः ॥

अर्थ—अकस्मात् लालवर्णका व्यङ्गरोग प्रगटहो लालवर्णकी नस दीखने लगे, मस्तकमें और नासिकाकी हड्डीमें पिडकाकी उत्पत्तिहो, मस्तकमें गोवरकी धूलसमान रजदीखे, तथा कबूतर कंकआदि पक्षियोंका मस्तकपरबैठना, विना

भोजनके मल मूत्रकी वृद्धिहोना, अर्थात् अधिकउतरना, और भोजन करेहुओंकों मलमूत्रका नाशहोना, स्तनमूल, हृदय, छाती, इनमें शूलकी उत्पत्तिहो। ओर जिसका देहका मध्यभाग सूजजाय और अंतकेभाग मुरझाए हुएसे होजावे अथवा अंतकेभाग ( हाथपैरआदि ) सूजजाय, और वीचकाभाग मुरझायासाहो अथवा अर्द्धाङ्गमें सूजनहो उसको अरिष्टहै ऐसा जानना यह एकमहिनेका है॥

शोषोऽङ्गपक्षयोर्वा नष्टहीनविकलविकृतिस्वरता। विवर्णपुष्पप्रादुर्भावो वा दन्तनखशरीरेषु। यस्य वाप्सु कफपुरीषरेतांसि निमज्जंति। यस्य वा दृष्टिमंडले भिन्नविकृतानि रूपाण्यालोक्यंते। स्नेहाभ्यक्तकेशांगइव यो भाति यश्च दुर्बलो भक्तद्वेषातिसाराभ्यां पीड्यते। कासमानश्च तृष्णाभिभूतः। क्षीणच्छर्दिभक्तद्वेषयुक्तः सफेनपूयरुधिरोद्वामीहतस्वरः शूलाभिपन्नश्च मनुष्यः॥

अर्थ—अंगोंका सूखना अथवा आधे देहका शोषहोना, एवं स्वर अत्यंत क्षीण होजाय वा विकलस्वरहोजाय। ( गदगदादि स्वर होजाय ) वा विकृत अर्थात् स्वभावसें विपरीतहोजावे तथा दांत नख और शरीरमें विवर्णपुष्प अर्थात् दुष्टरंगकीबिंदु प्रगटहोजावे जिसके जलमें कफ, मल, और वीर्य डूबजावे। और नेत्रोंके सामने भयानक अनेकप्रकार ( तीनशिर, शिररहित ) रूपदीखे। तेल लगाएहुए बाल रूखेसेदीखे, और जो दुर्बलपुरुष अन्नसेंद्वेष और अतिसारकरके पीडितहो। जब खासै तभी तृषासें पीडितहो, क्षीणरोगी वमन, अन्नद्वेषयुक्तहो। तथा झागयुक्त राध रुधिरकी वमन करै। स्वर बैंटजावे और शूलसें पीडितहो उसको अरिष्ट जानना॥

शूनकरचरणवदनःक्षीणोऽन्नद्वेषी स्रस्तपिंडिकांसपाणिपादो ज्वरकासाभिभूतः यस्तु पूर्वाण्हे भुक्तमपराण्हे छर्दयत्यविदग्धमतिसार्यते वा ज्वरकासाभिभूतः स श्वासान्म्रियते। वस्तवन् विलपन् यश्च भूमौ पतति स्रस्तमुष्कस्तब्धमेढ्रो भग्नग्रीवःप्रनष्टमेहनश्च मनुष्यः॥

अर्थ—जिसके हाथ, पैर मुख सूजेहुए हो, अन्य अंग क्षीण होगएहो, अन्नमें अरुचि, सिथिल, है घोटू कंधे हाथ और पैर जिसके ज्वर खांसीकरके युक्त एवं

जो प्रातः कालमें भोजनकरेहुएको अपराह्णमें वमनकरदेवे, और जिसके विनपचा अन्न दस्तके मार्गहोके निकले और ज्वर खाँसीसें व्याप्तहो वो श्वासरोगसें मरे। एवं बकरेको शब्द समान विलापकरताहुआ पृथ्वीमें गिरपडे। अंडकोशस्थान छूटजावे लिंगस्तंभितहोजाय नारगिरपडे तथा लिंगभीतरको चलाजाय। उसको अरिष्टजानना ॥

प्राग्विशुष्यमाणहृदय आर्द्रशरीरोयश्चलोष्टंलोष्टेनाभिहन्ति काष्ठंकाष्ठेनतृणानिवाछिनत्तिअधरोष्टंदशत्युत्तरोष्ठंवालेढि ॥ आलुंचतिवाकर्णौकेशांश्च देवद्विजगुरुसुहृद्वैद्यांश्चद्वेष्टि

अर्थ— जिस पुरुषका सब देह गीला रहते प्रथम हृदय ही सूखजावे उसको पक्षभरका अरिष्टहै और मिट्टीके डेलेसै डेलेको तोडे लकडीसै लकडीको और तिनकोको तोडे. नीचेके होठको दांतोसैं डसे और ऊपरके होठको चाटे. और कान माथेके वालोको तोडे। एव देव. ब्राह्मण. गुरु. सुहृद. और वैद्य इनसैं द्रोहकरे तो उसको १ वर्षका अरिष्ट जानना.

यस्यवक्रानुवक्रगाग्रहागर्हितस्थानगताःपीडयंतिजन्मर्क्षं वायस्योल्काशनिभ्यामभिहन्यतेहोरावागृहदारशयनासनयानवाहनमणिरत्नोपकरणगर्हितलक्षणनिमित्तप्रादुर्भावोवेति ॥

अर्थ— जिसके वक्रीग्रह जोग्रह उपस्थितराशको छोडकरपूर्व भुक्तराशपर आजावे और मार्गीग्रह ए दुष्टस्थानपर आनकर जन्म नक्षत्रको पिडितकरे तथा जिसका जन्म नक्षत्र और होरा उल्का ( जिसे तारा टूटा कहते है ) और विजली करके हतहो एवं. घर. स्त्री. शय्या. आसन. सवारी. वाहन. मणि. रत्न. और सामिग्री आदिमें दुष्ट लक्षण इनके निमित्त करके अरिष्टकी उत्पत्ति होती है.

चिकित्स्यमानःसम्यक्चविकारोयोऽभिवर्द्धते
प्रक्षीणबलमांसस्यलक्षणंतद्गतायुषः ॥
निवर्त्ततेमहाव्याधिःसहसायस्यदेहिनः
नचाहारफलंयस्यदृश्यतेसविनश्यति ॥

अर्थ— जिस रोगीका उत्तम रीतिसै चिकित्सा करते २ परभी रोगवढे और बलमांस जिसके क्षीण हो जावे वो गतायु जानना। जिस रोगीका घोररोग अ

कस्मात् जातारहै और जो भोजनकरे उसका कुछ देहमें ( पुष्टाई क्षुधा शांति आदि ) फल न दीखे वो रोगी अवश्यमरें.

ज्ञानसंबोधनार्थंतुलिङ्गैर्मरणपूर्वकैः ॥
पुष्पितानुपदेक्ष्यामोनरान्बहुविधान्बहून् ॥
नानापुष्पोपमोगंधोयस्यवातिदिवानिशम् ॥
पुष्पितस्यवनस्येवनानाद्रुमलतावतः ॥
तमाहुःपुष्पितंधीरानरंमरणलक्षणैः ॥
स वै संवत्सराद्देहंजहातीतिविनिश्चयः ॥

अर्थ— मरणपूर्वक लक्षणों करके कालज्ञानके जाननेके लिये अनेक प्रकारके बहुतसे पुष्पित मनुष्योंको कहताहूं। अनेक वृक्ष लतावान् फूले हुए वनकीसी जिसके देहमें दिनरात्रि फूलोकीसी गंधआवे उसको धीर वैद्य पुष्पित कहते हैं. वो १ वर्षके भीतरनिश्चय मरणको प्राप्तहो

एवमेकैकशःपुष्पैर्यस्यगंधःसमोभवेत्॥इष्टैर्वायदिवानिष्टैः
सचपुष्पितउच्यते॥तद्यथाचन्दनंकुष्ठंतगरागुरुणीमधु ॥मा
ल्यमूत्रपुरीषेवामृतानिकुणपानिवा॥येचान्येविविधात्मानो
गंधाविविधयोनयः॥तेऽप्यनेनानुमानेनविज्ञेयाविकृतिंगते॥

अर्थ— उसीप्रकार एक एक फूलकी पृथक् २ सुगंध या दुर्गंध आवेतो उस को पुष्पित कहतेहै जैसे- चंदन- कूठ- तगर- अगर- सहत- माला- मूत्र मल मुरदे के समान दुर्गंध तथा और अनेक प्रकारकी आपको दुर्गंध आवे वो भी इसी अनुमानसे अरिष्ट गत मनुष्यके देहमे जाननी चाहिये

इदंचाप्यतिदेशार्थंलक्षणंगंधसंश्रयं ॥
वक्ष्यामोयदभिज्ञायभिषक् मरणमादिशेत् ॥

इस प्रकार वैद्योंके जाननेके लिये गंधसे श्रयलक्षणोंको कहूंगा जिन लक्षणोको वैद्य जानकर रोगी का मरणकहे ( अर्थात् ये रोगी इतने दिनमे मरेगा )

वियोनिविज्वरोयस्यगन्धोगात्रेप्रदृश्यते॥इष्टोवायदिवानिष्टो
नसजीवतितांसमाम्॥एतावद्गंधविज्ञानंरसज्ञानमतःपरम् ॥

जिस मनुष्यको देहमे पशु पक्षी आदिकीसी और अनेक प्रकारके रोगोंकीसी गंधआवे चहियेवोअच्छीहो वो मनुष्य, वर्ष नही जीवे यह हमने गध विज्ञान कहा अब रसज्ञानको कहते है.

आतुरेषुशरीरेषुवक्ष्यामोविधिपूर्वकम्॥योरसःप्रकृतिस्था नांनराणांदेहसंभवः॥सएषांचरमेकालेविकारान्भजतेद्वयान् कश्चिदेवास्यवैरस्यमत्यर्थमुपपद्यते ॥ स्वादुत्वमपरंचापि विपुलंभजतेरसः॥तमनेनानुमानेनविद्याद्विकृतिमागतम् ॥

अव रोगीके शरीरमें रसज्ञानको विधि पूर्वक कहेगे नैरोग्य पुरुषोके देहका रस जो स्वस्थावस्थामें होताहै वही मरणके समय दो प्रकारके भावको जाताहै किसिके तो मुखमे विरसता हो जाती है और किसीके मुखमे अत्यंत स्वादुता आयजातीहै उसको वैद्य अनुमान द्वारा जानेकि विकृति आन पहुची है

मनुष्योहिमनुष्यस्यकथंरसमवाप्नुयात्॥मक्षिकाश्चैवयक्षा श्चदंशाश्चमशकैःसह॥विरसादपसर्पंतिजन्तोःकायान्मुमु र्षतः॥अत्यर्थरसकंकायंकालपक्वस्यमाक्षिकाः॥अपिस्नाता नुलिप्तस्यभृशमायांतिसर्वशः॥यान्येतानिमयोक्तानिलिंगा निरसगंधयोः ॥ पुष्पितस्यनरस्यैतैःफलंमरणमादिशेत्॥

कदाचित् कोई प्रश्नकरेकि मनुष्य मनुष्यके देहका रसकैसे जान सक्ता है इस लिये धन्वन्तरि॰कहते है कि जिस समय यहमनुष्य मरणोन्मुख होता है तब इसमनुष्यकी देह विरस हो जाति है अतएव उस गंधके प्रभावसैं मख्खी यक्ष मच्छर डास इत्यादि इसके ऊपर बहुत बैंठते है और जब कालकरके अत्यंत देह पक्वहोजाताहै तब इसप्राणीके स्नानकरनेके पश्चात् और चंदनआदि लगाने परभी मखी पीच्छा नही छोडतीं तव वैद्य जानलेवे कि इसमनुष्यके देहका रस पलटगया है यह हमने पुष्पित मनुष्यके रस, और गधके लक्षण कहे इससै वैद्य रोगीका मरण कहे.

दंतपंक्त्युत्तरे न्यस्तं न विशेदंगुलित्रयम् ।
स याति सप्तरात्रेण निश्चितं यमसादनम् ॥

जिसके दांतोके भीतर देनेसै तीन उंगली न जावे, वो निश्चय सातदिनमेंमरे

छायां विधोर्न ध्रुवमृक्षमालामालोकयेद्यो न च मातृचक्रम् ।
खंडपदं यस्य च कर्दमादौ कफश्च्युतो मज्जति चाम्बुचुंबी ॥

जो मनुष्य चद्रमाके कलंकको , ध्रुवको, नक्षत्रोंको और मातृमंडलको न देखे और कीचआदिमें पैर रखनेसैं आधा पैरकीही चिन्ह दीखे, और जलमें कफ

गेरनेसैं जलके लेकर नीचे बैठजावे, उसे अरिष्ट जानना चाहिये ॥

उरः पुरः शुष्यति यस्य चार्द्रं न मांति तिस्रोङ्गुलयश्च वक्त्रे ।
स्नातस्य मूर्द्धन्यपि धूमवल्ली निलीयते रिक्तमुखः खगो वा ॥

जिसकादेह चंदन अथवा जलआदिसैं गीलाहोकर प्रथम छातीसूखे, और जिसके मुखमें तीन उंगली न मावे और जलमैं स्नानकरेहुएके मस्तकमें धूम ( धूँआं ) कीशिखाउठे एवं जिसके मस्तकपर फलधान्यादिसें रितो चोचवाले पक्षीवैठे, उसको अरिष्टहै ऐसा जानना

नाकीर्णकर्णः शृणुयाच्च घोषं नो वा सुभुक्तोऽपि धृतिं न धत्ते ।
निःश्रीरकस्मात्सुतरां च सुश्रीः कृशः स्थवीयानपि योप्यकस्मात्

जो मनुष्य उंगलियोसें कानोंके वंदकर कानोंके भीतरका स्वाभाविक शब्द-को न सुने, और जो वहुत भोजन करनेपर भी तृप्त न होवे, तथा अशोभित अकस्मात् शोभावान् होजाय, और शोभावान् अशोभित होजाय, एवं जो कृशहै वो मोटाहोजावे और मोटा मनुष्य अकस्मात् पतलाहोजावे तो उसको अरिष्जानना, ॥

अतीवतुच्छं बहुचाल्पहेतोरतीतसात्म्यः सदसत्प्रवृत्तौ ।
अप्यंगुलिक्रांतविलोचनांतो न मेचकं चान्द्रकमीक्षते यः ॥

जो ज्वरादि रोगके विना अत्यंतथोडा भोजन करनेलगे, और भस्मकादिरोगके विना वहुत भोजन करनेलगे, और जो उत्तमविषय तथा दुष्टविषयोंमें अपने सात्म्यको छोड देवे, अर्थात् जो उत्तमकर्मकर्ता वो दुष्ट कर्म करने लगे और दुष्टकर्म वाला अच्छेकर्म करने लगें, एवं उंगलियोंसें नेत्रोंको ढकनें पर मोरचंद्रिके समान तिलमिले अनुभवसिद्धको न देखे उसको अरिष्ट जानना

मध्येललाटं मणिबंधधारी न चाल्पिकां पश्यति यः कलाचीं ।
अहेतुकं यः शवगन्धिगात्रः सर्वत्र सीमंतितमूर्धजो वा ॥

जो ललाटपर पहुचेको धरकर थोडाभी पहुचेको ( कलाईको ) न देखे, और विनाकारण जिसमें मुरदेकीवास अनेलगे, और जिसके समस्त मस्तक लावोंकी वेनीसी गुथजावे उसको अरिष्ट जानना

अपिक्षरद्रोमनखः शरीरात्सद्यः स्रवद्धामविलोचनो वा ।
निरीक्षते सत्त्वममानुषं वा विस्रस्तनासानयनश्रुतिर्वा ॥

जिसके शरीरसे रोमांच और नख स्वयं उखडकर गिरने लगे, और जिसका

वामनेत्रसे आंसु वहनेलगे और जो भूतपिशाचादि प्राणियोंको देखे, एवं जिसके नाक, नेत्र और कान ए सिथिलहोजावे, उसको अरिष्ट जानना चाहिये

फलाग्निजलवृष्टीनां पुष्पधूमाम्बुदा यथा ॥
ख्यापयंति भविष्यत्वं तथा रिष्टानि पंचताम् ॥

अर्थ—जैसैं-पुष्प, धूंआ, और बद्दल, ए फल, अग्नि, और जलके भविष्यको प्रगटकरतेहैं, उसीप्रकार अरिष्ट मरणको सूचना करताहै । अर्थात् फूलफलको और धूंआहोनेसैं अग्नि,एवं बद्दल होनेसैं पानीवर्षने का भविष्यसूचनाहोताहै। उसी प्रकार अरिष्टद्वारा मरणका बोध होताहै. । अरिष्ट दोप्रकारकारकाहै एक नियत ( निश्चित ) और दूसरा अनियत ( अनिश्चित ) है. ॥

तानि सौक्ष्मात्प्रमादाद्वा तथैवाशुव्यतिक्रमात् ।
गृह्यन्ते नोद्गतान्यज्ञैर्मुमुर्षोर्नत्वसम्भवात् ॥

अर्थ—उन प्रगटहुए अरिष्टोंको मरणेच्छू मूढमनुष्य अत्यंत सूक्ष्महोनेसैं और शीघ्रनष्टहोजानेसैं नहीं जानसक्ता अर्थात् वो परमाणुके समान अत्यंत सूक्ष्म होतेहै । और रोगी मतवालासा होताहै इसकारण तथा जिस समय अरिष्टहुआ उसी समय रोगी मरगया इन सबकारणोंसे मूर्ख नही जानते किंतु यह नहींहै कि वो अरिष्ट उनके न होतेहो इसकारणको नहीजाने ॥

नक्षत्रपीडा बहुधा यथा कालाद्विपच्यते ।
तथैवारिष्टपाकं च ब्रुवते बहुधा जनाः ॥

अर्थ—अब यह कहतेहैकि । ये अरिष्ट पीडा पचीसवर्षादिमें क्यो होतीहै । इसवास्तेहैकि जैसे नक्षत्रजनित पीडा प्राय कालांतरमें पचती है उसीप्रकार अरिष्टफलको बहुतसे मनुष्य कहते है ॥

असिद्धिमाप्नुयाल्लोके प्रतिकुर्वन् गतायुषः ।
अतोरिष्टानि यत्नेन लक्षयेत्कुशलो भिषक् ॥

अर्थ—जो वैद्य गतायु अर्थात् मरणोन्मुखकी चिकित्सा करताहै वो इसलोकमें सिद्धि ( चिकित्साफलधनयशादि )को नहींप्राप्तहोता, अतएव कुशलवैद्य यत्नपूर्वक अरिष्टोको देखे ॥

---

अथसंग्रहीतश्लोकः व्यस्ताङ्गादिस्वभावा भुवि च पददलं भाविकारोऽनुपूर्वे स्वस्थोऽन्जांकं न पश्येत्तनुमितरदृशि स्वाक्षि वा पीड्यतेजः । ध्रौवादीन्वाथ पश्येद्ग्रमहनि च तडिच्चापपूर्वं निरभ्रे मूर्येन्द्वोश्छिद्रपूर्वं मृतिकृदिह न मृत्युभयाज्जाप्यहोमौ १

ध्रुवं तु मरणं रिष्टे ब्राह्मणैस्तत्किलामलैः ।
रसायनतपोजप्यतत्परैर्वा निवार्यते ॥

अर्थ—अव दोपज अरिष्टो करके मरण निश्चयको दिखातेहै कि अरिष्टहोनेसै इसप्राणीका अवश्य मरणहोताहै । वो अरिष्ट जन्ममरण रागादिदोपरहितब्राह्मणोकीसेवा, रसायन ओपधोंका सेवन, तपश्चरण और गायत्र्यादिमंत्रोंके जपकरनेसै निवारणहोते है । यहकेवल अनियत अरिष्ट भिपकमे उपायहै और नियतहै वो दानपुण्यआदिकिसी उपायसै दूरनही होते ॥

---

## अथछायापुरुषलक्षणम्

अथातः संप्रवक्ष्यामिछायापुरुषलक्षणम् ।
येनविज्ञानमात्रेणत्रिकालज्ञोभवेन्नरः ॥

अर्थ—अव हम छायापुरुपके लक्षण कहतेहै जिसके जाननेसै यह प्राणी त्रिकालज्ञ ( भूत-भविष्यत् वर्त्तमानका जाननेवाला ) होताहै ॥

कालोदूरस्थितस्यापियेनोपायेनलक्ष्यते ।
तंवक्ष्यामिसमासेनयथोक्तंशंभुनापुरा ॥

अर्थ—दूरस्थितभी काल जिसउपायकरके दृष्टिगोचरहो उसको में सक्षेप करके कहू जैसे पहिले शिवजीने कहे है ॥

एकांते विजने गत्वा कृत्वादित्यं च पृष्ठतः ।
निरीक्षेतनिजांछायांकंठदेशेसमाहितः ॥

अर्थ—कालज्ञानकी परीक्षक मनुष्य निर्जन एकांतवनमे जाय समानभूमिमें सूर्यको पिछाडीकरके सीधा खडाहो फिर अपनी छायाके कंठदेशमें देखताहुआ सावधानीमे परीक्षाकरे. ॥

ततश्चाकाशमीक्षेततत:पश्यतिशंकरम् ।
ॐ ह्रीं परब्रह्मणेनमः इतिमंत्रःअष्टोत्तरशतवारंजपेत् ॥

अर्थ—वरावर [ दोघडी पर्यंत छायाको देखाकरे ] फिरउसछायापरसें दृष्टिको उठाकर आकाशकी तरफदेखेतो साक्षात् शिवको देखेगा जिससमयछाया देखनेको खडाहो तब १०८ वार इसमत्रको पढे " ॐह्रींपरब्रह्मणेनमः " ॥

शुद्धस्फटिसंकाशं नानारूपधरंहरम् ॥
पण्मासाभ्यासयोगेनभूचराणांपतिर्भवेत् ॥

अर्थ—इसप्रकारकरनेसै शुद्धस्फटिकमणिके समान अनेकरूपधारण कर्त्ताशिवको देखे इसप्रकार छःमहिने करनेसे संपूर्ण प्राणीमात्रका अधिपतिहो ॥

वर्षद्वयेन हेनाथ कर्त्ताहर्त्ता स्वयंप्रभुः ॥

त्रिकालज्ञत्वमाप्नोति परमानंदमेवच ॥

अर्थ—दोवर्ष इसक्रियाके साधनकरने से स्वय कर्त्ता हर्त्ता और त्रिकालका जाननेवाला परमआनंदयुक्तहोवे. ॥

सतताभ्यासयोगेननास्तिकिंचनदुर्लभम् ॥

अर्थ—इसीप्रकार बराबर नित्यप्रति साधनकर्त्ता रहेतो इससंसारमें ऐसीकोई वस्तुनहीं है जो इससाधकको प्राप्ति नहो ॥

तद्रूपंकृष्णवर्णंयः पश्यतिव्योम्निनिर्मले ॥

षण्मासान्मृत्युमाप्नोतिसयोगीनात्रसंशयः ॥

अर्थ—यदि यहयोगी आकाशमें उसछायापुरुषका वर्ण कालेरंगका देखेतो छःमहिनेमें निसंदेहमृत्युहो. ॥

पीतेव्याधिभयंरक्ते नीलेहत्यांविनिर्दिशेत् ।

नानावर्णस्वरूपोस्मिन्नुद्वेगोजायतेमहान् ॥

अर्थ—यदि पीलावर्ण देखेतो इसको रोगहो लालदेखेतो भयहो और नीलेवर्णकी छायादेखेतो हत्यालगे-एव अनेक प्रकारके रंगकी छायादेखेतो इसके चित्तमे घोर उद्वेगहोवे ॥ .

पादेगुल्फेचजठरे विनष्टेमृत्युमादिशेत् ।

अर्धवर्षेणवर्षेणक्रमाद्वर्षद्वयेनच ॥

अर्थ—छायापुरुषके पैर-टकना-और पेट न दीखनेसें क्रमपूर्वक छःमहिने. वर्षदिन और दोवर्ष में मृत्युहो अर्थात् पैर नदीखने से छःमहिनेमें टकना न दीखनेसें वर्षदिनमें और पेटनदीखनेसें दोवर्षमें मरे ॥

विनष्टेदक्षिणेबाहौस्वबंधुर्म्रियतेध्रुवम् ।

वामे बाहौ तथा भार्या विनश्यतिनसंशयः ॥

अर्थ—छाया पुरुषका दहना हाथ न दीखनेसें अपना भाई मरे और बाया हाथ न दीखनेसें अपनी स्त्रीमरे इसमें संदेह नही है ॥

शिरोदक्षिणबाह्वोस्तुविनाशेमृत्युमादिशेत् ।

अशिरामासिमरणंविनाजंघेदिनेनवा ।

अष्टभिःकंधरानाशे छायालुप्तेचतत्क्षणात् ॥

अर्थ—छायापुरुषकेशिर-और दहनो हाथन दीखनेसें मृत्युहो. यादि कबंध दीखे तो महिनेमें मरे और बिना पांडरीके दीखेतो एकदिनमें मरे कंधानदीखनेसें आठदिनमें और सब छाया न दीखेतो तत्कालमृत्युहो. परंतु यह ज्ञान केवल योगियों को होताहै अन्यको नही. ॥

इति कालज्ञान समाप्त.

## वृत्तिभेद ( पेसा )

वृत्ति अर्थात् पेसाभी एक रोगका कारणहै जैसै जो अत्यंत कष्टकी मेहनत करते है जैसै बोझा उठानेवाले उनको वातकी बिमारी होती है

और जो आनंदसै बैठेरहतेहै उनको अरुचि मंदाग्नि–बवासिर आदि रोग होयहै जैसै–सेठसाहूकार–लेखक–चितेरेआदिको

लुहार–घडीसाज–सुनार–रसोय्या और चूडी बनानेवाले नेत्रहीन और अन्य २ नेत्रके रोगोंसें ग्रसित होते है

धुनिया, बुहारी ( झाडू ) देनेवाले–चून–मैदाछानने वाले प्राय श्वास रोगी होते है

सीसेके कामकरनेवाले प्राय पतले हाथके या झुकेहुए पहुचेके होते है

दिया सलाईके बनाने वाले हनुस्तंभ आदि रोगमें ग्रसित होते है

परंतु जंगली मनुष्य खेती करनेवाले गैया–भेड बकरीके चराने वाले प्रायः स्वच्छ पवनके सेवन करनेसैं रोगहीन होतेहै

इत्यादि पेसेका विचार भी वैद्य अवश्य करकेपश्चात् चिकित्साकरे॥

---

रीतिभांतिके भेदसे जातिभी रोग होनेका कारण है जैसै• कि मुसलमान एकही कुलमें विवाह करलेते इसकारण माबापके रोग पीढीदरपीढीचले जाते है और हिंदुजो वहुत छोटी अवस्थामें विवाह करते है इसीसैं उनकी संतान अत्यंत दुर्वल होती जाती है जैसाकि हिन्दूनकी संतान् प्रथमकी होते ही मरजाती है कदाचित् वचजावे तो वहुतही कमजोर होतेहै कि उसकी संपूर्ण अवस्था दुःख और अनेक प्रकारके रोग भोगनेमें कटती है तथा जो जवानीमें विवाह करते है उनकीसंतान हृष्ट पुष्ट और रोगरहित होती है॥

---

## स्वरूपपरीक्षा

वातादीनांस्वरूपंतुप्राङ्मयाकथितंप्रिये
दूषणंपुनरुक्तिस्यात्तस्मान्नात्रप्रकाशितम्॥

अर्थ—वातपित्तादिकोका स्वरूप प्रथमशारीरस्थानमें कहआएहै फिरकहनेसैं पुनरुक्ति दूषण आताहै इसकारणयहां परनहीं कहा.॥

## जठरस्थरोगोंकीपरीक्षा

तातास्माभिः श्रुतंपूर्वंनेत्रादीनांपरीक्षणम् ।
अधुनोदरयंत्राणांपरीक्षावक्तुमर्हसि ॥ १ ॥
तस्यतद्वचनंश्रुत्वाप्रियशिष्यस्यधीमतः
आत्रेयोवक्तुमारेभेतत्सर्वंशिष्यवत्सलः ॥ २ ॥

अर्थ—हारीतऋषि—परम कारुणिक सर्वशास्त्रविशारद अपने गुरु श्रीमहर्षि आत्रेयके चरणकमलमें प्रणामकर बोले कि हेतात ! अपने प्रथम नेत्रआदि परीक्षा कही की जिसे हमको उसविषयमें बहुत कुछ लाभहुआ अब आप कृपा करके उदरयंत्रोंकी परीक्षा कहनेको योग्यहो । इसप्रकार शिष्यवत्सल आत्रेय भगवान् प्रियशिष्य हारीतके वचन सुन इसप्रकार कहनेका प्रारंभ करतेहुए

यकृदामाशयप्लीहाग्रहण्यान्त्राणिवृक्ककौ
मलमूत्राशयोयंत्राण्यौदराण्यपराणिच ॥ ३ ॥
तेषांविकृतितोयानिलक्षणानिभवंतिहि ।
शृणुतावहितावत्सावच्मिसोऽहंसमासतः ॥ ४ ॥

अर्थ—यकृत— आमाशय—प्लीहा—संग्रहणी—संपूर्णआंत—वृक्कक दोनो—मलाशय—औरमूत्राशय येसव इसीप्रकार औरभी अनेक उदरयंत्र विद्यमान होकर अपने २ कार्यको करते हुए प्राणियोंकी जीवनरक्षा करते है । इनमें किसी प्रकारका विकार होने सें जोलक्षण होते है उनको में संक्षेपसें वर्णन करताहूं उँनको तू सावधान होकर सुन

उदरेसर्वहस्तस्यस्थापयेन्मध्यमाङ्गुलीम् ।
तामन्यस्यकरस्याग्रैरङ्गुलीनांविधानतः ॥ ५ ॥
अभिहत्याभिघातोत्थैर्ध्वनिभिर्विविधैर्भिषक् ।
क्रियाविशेषान्यंत्राणांविद्यादुदरवर्तिनाम् ॥ ६ ॥

अर्थ—तहांप्रथम अभिघात परीक्षा कहते है जैसे—परीक्षाकरनेवाले रोगीके पेटपर वैद्य अपना वायों हाथकी वीचकी उंगली धरके उसके ऊपर दहने हाथकी सव उंगलियों को एक त्रितकर ताडनाकरे । करनेसैं पृथक् २ शब्दद्वारा उदर यंत्रोकी पृथक् २ अवस्थाका ज्ञानहोता है सो आगे लीखते है ॥

यकृद्देशान्मन्दतरःशब्दःप्रकृतितोभवेत्।

शून्यामाशयतःशब्दोजायतेशौन्यगर्भिकः॥ ७ ॥
वातैर्वायदिवाबाष्पैःपूर्णश्चामाशयोभवेत् ।
ततःप्रादुर्भवेच्छब्दोवाताध्मातोद्दतेर्यथा ॥ ८ ॥

अर्थ—यकृतके ऊपर स्थितउदरके भागमें ताडना ( करनेसें अस्फुट ) धीरा शब्दप्रतीतहोवे। शून्य आमाशय के ऊपर ताडना करनेसें जैसाशून्य(रीते) पात्रकी आवांजहो ऐसी ध्वनि निकलती है । यदि अमाशयवायु अथवा वाष्प द्वारा पूर्ण होनेसें. हवाभरी हुई धौकनीके शब्दसदृश आवाजनिकलती है॥

वायुनास्फीतिमापन्नेप्रहृतेचमलाशये ।
प्रतिध्वनिर्भवेच्छब्दोमन्दःस्यान्मलपूरिते ॥ ९ ॥
उदकोदरिणंकृत्वासर्वथापार्श्वशायिनं ।
तस्योर्ध्वपार्श्वंविधिनापरीक्षेताभिघाततः ॥ १० ॥

अर्थ—वायु पूर्ण मलाशयके ऊपर आघात ( चोटदेने ) सें प्रतिध्वनि अर्थात् जैसी चोटदेने सें आवाजहोती है (उसीके माफिक) आवाजहो—यदिमलाऽशय मल पूरीतहोवेतो मंद २ शब्दनिकले। जलंधर रोगीको किसी एककरवटसुलायकर उपरके पार्श्वमें आघात ( चोट ) सें परीक्षाकरे॥

स्वभारात्संचितंतोयंमध्येव्रजतिनिश्चितम् ।
तदूर्ध्वमुपतिष्ठंतेक्षिप्रमंत्राणिवत्सकाः ॥ ११ ॥
ऊर्ध्वंगतेभ्यश्चांत्रेभ्यःशब्दश्चाध्मानिकोभवेत् ।
अभिघातपरीक्षेयंमयाप्रोक्तासमासतः ॥ १२ ॥

अर्थ—इसप्रकार सोते हुए जलंधररोगीका पेटका संचित जलसमूह अपने भारीपने के वससें नीचेको उतर वीचमें रहता है और आंतडे सवउपरहीके पसवाडेमे रहजाते है इसऊपरके पसवाडेमें आघात करनेसें आध्मानिक शब्दहोता है यह मेने अभिघातपरीक्षा संक्षेप सें कही है ॥

भोजनादुदरस्योर्ध्वंगौरवंजायतेमहत् ।
शिरोरुग्वक्त्रवैरस्यंहृद्दाहोवमथुस्तथा ॥ १३ ॥
रसनामलसंपूर्णाक्लान्तिर्हृदयवेपनम् ।
निद्रानाशोग्निमान्द्येस्याज्जाड्यंदुःस्वप्नदर्शनम् ॥१४

अर्थ—आमाशयकी विकृति सें मंदाग्निका रोग होता है भोजनके उपरांत पेट अत्यंत भारीहो मस्तकपीडा—मुखमें विरसता—हृदयमें दाह—वमन—जीभपरमैल-

का अमना–क्लांति–हृदयका फडकना–निद्रानाश–तथा निद्रा आवेतो बुरे २ स्वप्न दीखे–और इसमंदाग्नि रोगमें प्राणी जकड़ासाहो जाता है ये सबलक्षण होते है ॥

आमाशयव्रणेनॄणांजायतेपरिकीर्त्तिका
वांत्यातदाशयेशून्येवेदनासाप्रशाम्यति ॥ १५ ॥
भोजनाद्वांतिरेवस्याच्छ्लेष्मशोणितसंयुता
रुधिरस्यापिवमनंरक्तपित्तस्यवाभवेत् ॥ १६ ॥
पुरीषैर्मलिनंरक्तंनिर्यायाद्गुदतोऽपिच
प्रायशोयोपितामेवव्याधिःस्याद्दतुरोधतः ॥ १७ ॥

अर्थ—आमाशय में घावहोने सें उसमें कतरने कीसी पीडा होवे. जब वमन होने सें आमाशय खाली हो जावे तबपीडा भी शांति होजावे । तथा भोजनके पश्चात् कफ अथवा रुधिर मिली वमन ( रद ) वा केवल रुधिरकी रद अथवा रक्तपित्तकी वमनहो एवं मल ( विष्टा) के साथ रुधिर निकले येसंपूर्ण लक्षण होते है । यहव्याधि प्रायःस्त्रियोंकें होतिहै स्त्रियोंके ऋतुके न होनेसै यहरोग होताहै ॥

पर्शुकाधोयकृत्प्लीहानाविकृत्योऽनुभूयते
दक्षिणाच्चूचुकान्निम्नेद्व्यंगुलाद्यकृतःस्थितिः ॥१८
अतीत्यैकांगुलिस्थानंपर्शुकाभ्यश्चनिश्चितम्
उरःप्राचीरसंकोचाद्विवृद्ध्याहृदयस्यच ॥१९ ॥
वायुनाफुप्फुसस्फीत्यक्षोभणैरपरैरपि
यकृत्स्थानात्प्रच्यवतेनतद्वृद्धांविधारयेत् ॥ २० ॥

अर्थ—रोगरहित प्राणिके यकृत ( कलेजा ) प्लीहा ( तिल्ली ) पसली के नीचे टटोरने सें प्रतीत नही होती। दक्षिण स्तनके दोअंगुलनीचेसै पसलीके नीचे एकअंगुलपर्यंत स्थानमें व्याप्त यकृत् को जानना। वक्षस्थल प्राचीका संकोच–हृदयकी संवृद्धि–वायुकर्के फुप्फुसकापरिपूर्ण होना–तथा अन्य २ क्षोभकारक कारण द्वारा यकृत.हठकर नीचेको आजाती है–इसप्रकार नीचेको आई हुई यकृतको वढीहुई कहने सें भ्रमनहीं होता ॥

दक्षिणेशकलेप्रायोविद्रधिर्यकृतोभवेत् ।
हिक्काश्वासोवमिःकासोजायतेतीव्रवेदना ॥ २१ ॥
नशक्तिःशयनेतस्यसव्येपार्श्वेभवेत्तु

इतिप्रोक्तंसमासेनयकृद्विद्रधिलक्षणम् ॥ २२ ॥

अर्थ—यकृतमें विद्रधि रोगहोनेसे हिचकी–श्वास–वमन–खासी–इत्यादिसे तीव्रपीडा हो तथारोगी से बांई करवट नही सोया जावे इत्यादि संपूर्ण लक्षण होते है। इसप्रकार यकृत विद्रधि के लक्षण मेंने कहे है यकृतके प्रायदहने संडमें विद्रधि होती है ॥

अनुभूयेतहस्तेनप्लीहाचयदिकस्यचित्
तदातंव्याधितंविद्यात्तेनरक्तक्षयोभवेत् ॥ २३ ॥

अर्थ—प्लीहा ( तिल्ली ) यदि हाथोंसे प्रतीत होनेलगे अर्थात् टटोरने सैं मालूमहोनेलगे तो जानेकि इसके रोग है. प्लीहके बढनेसें मनुष्यका रुधिर क्षीण होता है

पश्चान्मलाशयाद्वृक्कौवर्त्तेतेचोदरान्तरे ।
तत्ररक्तावरोधेनमूत्रंस्तोकंत्यजेन्नरः ॥ २४ ॥
मूत्रंसशोणितंवापिवेदनातत्रदारुणा ।
तथास्पर्शासहत्वंचवृक्कविकृतिलक्षणम् ॥ २५॥

अर्थ—मलाशयको पिछाडी दोवृक्कहै उसवृक्कमें रुधिर रुकनेसें मूत्र थोडाउतरताहै अथवा रुधिरयुक्त मूत्रउतरे तथा उसमें दारुणपीडाहो । इसपीडाके कारण स्थानकेइस छूनेसें रोगी नसहाजाय । ये वृक्कमें विकार होनेसैं लक्षण होते है

विकृतेतिलकेनॄणांमलंमेदोयुतंभवेत् ।
अग्निमांद्यंभवेच्चापिदौर्बल्यंचाप्यजीर्णता ॥ २६ ॥
अंत्रावरोधाद्वान्तिःस्यादवसादश्चचेतसः ।
विट्संगो वेदनात्युग्रा पुरीषवमनं तथा॥ २७ ॥

अर्थ—तिलक ( क्लोम ) की विकृति होनेसे समेदमल–मंदाग्नि–दुर्बलता–और अजीर्ण रोग होते है तथा अंत्रावरोधरोग–वमन–चित्तकी असावधानता कोष्ठ रोग–उग्रपीडा और मलकीरद्द–ए सबलक्षण होते है

रोगस्थानादधश्चांत्रेशून्यतोपरिपूर्णता ।
रोगेणानेनचाक्रांतोनरः प्रायस्त्यजत्यसृन्॥२८॥
मलमूत्राशयौदुष्टौमेहानाहादिकान्बहून् ।
व्याधीन्जनयतोदुष्टाग्रहणीवन्हिमन्दताम् ॥

अर्थ—रोगस्थानके नीचे अंत्राशमें शून्यता और ऊपरके भागमें पूर्णता प्रतीतहोती है। इससैं व्याप्त रोगीके जीनेकी आशा नकरे। इसजगे संक्षेपसैं उदरयंत्र आदिकी विकृति लक्षण लिखते है। मलमूत्राशयोकी दुष्टीहोना अनेक प्रमेह-अफाराआदिरोगोंको–तथा संग्रहणी और मंदाग्नि आदि दुष्टरोगोको प्रगटकरेहै

इत्यौदराणांयंत्राणांविक्रियायांसमासतः
यान्युद्भवंतिचिह्नानिमयाप्रोक्तानिवत्सकाः ॥ २९ ॥
प्रतिरोगंप्रवक्ष्यामिकृत्स्नशश्चपराणिच।
तानिसर्वाणिवेद्यानिभिषजासिद्धिमिच्छता ॥ ३० ॥

अर्थ—यें उदरयंत्रोकी विकृतिसै होनेंवालें जों चिह्न है वों मैनें हेवत्स संक्षेपसें तेरे आगें कहें है। वाकौं संपूर्ण लक्षण रोग २ के प्रतिपृथक् २ कहूंगा उनको सिद्धीकी इच्छाकरनेंवाले वैद्यकों अवश्य जानना चाहियें ॥

इतिजठरस्थरोगोंकीपरीक्षा

---

## बालकोंके रोगकी परीक्षा

नकिंचिदस्तिकर्मदुरूहतरंयथाशिशूनांरोगपरीक्षणम्
परंधैर्यशीलगांभीर्यशान्त्यादिभिस्तेषांप्रियदर्शनप्रदा
नाभ्यां तथान्यैस्तोषणकर्मभिश्चतदापिसुकरंभवति ॥

अर्थ—बालकके रोगपरीक्षाके समान और कोई विषय कठिन नही है। अतएव वैद्य धीरज–शीलता-और गांभीर्यके आश्रयसैं सांत्वनवादद्वारा [पुचकारीं देकर] तथा बालकका प्रिय खिलोने आदि दिखाके वा देकर एवं अन्य प्रकारो करके बालकको फुसलाकर रोगोकी परीक्षाकर सकता है [अन्यथा नही]॥

बालाह्यात्मवेदनानिवेदनेसर्वथैवासमर्थारोदनमात्रसहाया आत्मशुभाशुभबुद्धिपरिहीनाः सर्वथान्येषुसमर्पितप्राणाभृशंपरावलम्बिनःपरदयाभाजनानि ॥

अर्थ—बालक अपने दुःखके कहनेमें सर्वथा असमर्थ होता है केवल रुदन मात्र सहाय अर्थात् रुदनके सिवाय वो कुछ नही करसक्ता तथा आपके लिये

हित और अहित बुद्धि करके रहित होता है एवं सर्वथा औरोंके हाथमें समर्पित प्राण होतेहै अतएव इनके समान दयाका पात्र दूसरा नहीं है ॥

जगतिनतस्मात्कश्चिदपरः पापीयान्नयः सर्वथासर्व प्रयत्नेनसमाहितचेताः सम्यग्विचार्यतान्भेषजैरुप- पादयेत् । भिषजासर्वएवातुराअविशेषेणपुत्रवद्दृष्ट- व्याविशेषतःशिशवःतेनात्यर्थमवधानपरेणावश्यंभा वयितव्यम् । यथातेनतस्माद्भीतिमापादयन् ॥

अर्थ—उस प्राणीके समान दूसरा घोर पापी कोई नहीहै जो सर्वथा सर्व यत्न करके सावधानीके साथ विचार पूर्वक बालकोंकी चिकित्सा नही करता । वैद्यको उचितहै कि संपूर्ण रोगियोंको प्राय पुत्रके समान देखे [ जैसे अपने पुत्रकोंकि चिन्मात्रभी पीडा युक्त नहीं देख सके इसी प्रकार सब रोगियोंको देखे ] इनमेंभी बालकोके ऊपर परमकृपादृष्टिसें देखे । वैद्यको इसप्रकार सावधान होना अत्यंत आवश्य कहै कि जिसप्रकार बालक डरपे नहीं ॥

भिषजापरीक्षार्थंगृहंप्रविश्य प्रथमंशिशोर्धात्रीतःएता न्यवश्यंवेद्यानि । यथा । वर्त्तमानरोगोत्पत्तेःप्राक्तन स्यदैहिकोवस्थाविशेषः अतीतापूर्वरूपप्रकृतिर्जात रोगसंपृक्ताविविधाश्चपराविकृतयः शिशुःपुमान् स्त्री वात्यक्तस्तनोवानवासयदाहारप्रियस्तस्यवयःपरिमा णंमलमूत्रादीनां प्रकृतिरित्याद्यानि ।

अर्थ—वैद्य बालकके देखको उसके घरमें प्राप्त होतेही उसकी धाय [ अथवा मातासें ] इतनी वार्त्ता प्रथमही अवश्य जान लेवे । जैसे वर्तमान रोगके उत्पन्न होनेके पूर्व उसकी कैसी दशाथी । किसप्रकार पूर्वलक्षण हुए थे । उपस्थित रोग संयुक्त और और विकृति स्वरूपका जानना एवं बालक पुरुष है या स्त्री है स्तनको पीताहै या नहीं पीवे । यदि बाल भोजन प्रिय होवे तो उसकी अवस्थाका परिमाण पूछना तथा मलमूत्रादिकी प्रकृति इत्यादि ॥

शिशुर्यदिस्वपितिनतंप्रबोधयेत्सुप्तस्यैवतस्याकृत्यंग संस्थितिप्रभृतीनिविशेषेणेक्षणीयानि । सउत्तानशायी पार्श्वशायी वा विस्तीर्णजंघःकुंचितजंघोवाइत्यादि-

भिस्तस्यांगसंस्थितिविशेषैर्व्याधेःकृच्छ्रत्वमकृच्छ्रत्वं वावगम्येत ।

अर्थ—यदि वालक सोता होवे तो उसको जगाने नही सोते हीकी आकृति अंगोंकी स्थिति आदिकी परीक्षा करलेवे वालक सीधा सोताहै या करवटसें सोताहै पैरपसारके या पैरोंको सिकडकर सोताहै इत्यादि उसको अंगसंस्थिती विशेष करके लक्षकरे । इत्यादि संपूर्ण अवस्था विशेषों करके कृच्छ्रसाध्य-और सुखसाध्य व्याधि जानना ॥

ज्वरेसान्निपातिकेफुप्फुसेच व्यथाकुलेगण्डौलोहितौ स्याताम्।कूजनात्सहसानिद्राछेदादकस्मादाक्षेपाद्। विक्रोशनाद्धस्तग्रहाच्चतस्यमस्तिष्कविकृतिरनुमेया। आमाशयेऽौग्रतामापन्नेऽकस्मान्मुखविवरमाक्षिप्य ते । नयनयोरसम्यनिमीलनान्मस्तिष्कविक्रियारोग स्यकृच्छ्रसाध्यत्वंचावगम्यम् ।

अर्थ—संनिपातज्वरमें-और फुप्फुसकी पीडामें वालकके गंड दोनों लालरंगके होते है । कुंजना-सहसा निद्रा जाती रहना-अकस्मात् आक्षेपकीक मारना-और हाथोंका जकडना ये संपूर्ण लक्षण मस्तिष्क विकारके सूचक है अर्थात् इन लक्षोंसें वालकके मस्तिष्क संवंधी रोग जानना । आमाशयमें उपद्रव होनेसें अकस्मात् मुखमिच जाताहै।दोनों नेत्रोंके आधे आधे मूंदनेसें उस वालकके पीडाकी आधिक्यता तथा मस्तिष्कविकृति ज्ञापक है ॥

॥ इति बालरोग परीक्षाविधि समाप्त ॥

---

## अथवस्त्रपरीक्षा

ज्वरव्याप्तशरीरस्य ऊष्मा भवति दारुणः
सऊष्मावहिराप्नोति वस्त्रेतिष्ठतिनिश्चितम् ॥

अर्थ—ज्वरयुक्तदेहमें दारुणगरमी रहती है वह गरमीदेहसें निकलवस्त्रमें ठहरतीहै अतएव इसप्राणीकें वस्त्रोंकी परीक्षा करनी चाहिये ॥

वातपित्तकफानांचद्विन्निदोषस्यलक्षणम् ।

परीक्षेज्ज्वरिणोवस्त्रं वैद्यो वै शुद्धवंशजः ॥

अर्थ—ज्वरवाले प्राणीकै वात-पित्त-कफ-द्विदोष तथा त्रिदोषके लक्षण शुद्ध वंशोत्पन्नवैद्य वस्त्रद्वारा परीक्षाकरे सो इसप्रकार ॥

वातेवस्त्रंसौरभंघ्राणतःस्यात् ।
पौष्पंपैत्तेमत्स्यतुल्यंविगंधम् ॥
पाकास्थोणंश्लेष्मणः संप्रकोपात् ।
द्वंद्वैर्द्वंद्वोत्यल्वणैर्ह्येकताच ॥

अर्थ—वादीसैं रोगीके वस्त्रोंमें फूलकीसी गंध आतीहै पित्तसैं मछलीकीसी और कफके कोपसैं पकेहुए फोडे कीसी और द्विदोष तथा त्रिदोषके लक्षणमिलनेसैं त्रिदोषके लक्षणजानने॥

यदावस्त्रेभवेद्गंधः सटिताजालकर्दमः ।
तदादीर्घोभवेद्रोगोम्रियतेशवगंधकः ॥

अर्थ—जिसके वस्त्रोंमे सडीहुईजाल और कीचकीसी दुर्गंध आवे उसके वहुत दिनोंका रोगजानना और जिसके वस्त्रोंमें मुरदेकीसी दुर्गंधआवे उसकीमृत्युहो॥

इतिवस्त्रपरीक्षा

---

अथ देशाः

भूमिदेशस्त्रिधाऽनूपोजाङ्गलोमिश्रलक्षणः ॥

अर्थ—भूमिदेश तीनप्रकारका है एक अनूप दूसरा जांगल और तीसरा मिश्र संज्ञक ( मिलाहुला ) है तहां प्रथम अनूप देशके लक्षण कहते है.

अनूपलक्षणम्

नदीपल्वलशैलाढ्यः फुल्लोत्पलकुलैर्युतः ।
हंससारसकारण्डचक्रवाकादिसेवितः ॥
शशोवराहमहिषरुरुरोहिकुलाकुलः ॥
प्रभूतद्रुमपुष्पाढ्योनीलसस्यफलान्वितः ॥
अनेकशालिकेदारकदलीक्षुविभूषितः ॥

अर्थ—जिसमें नदीनाले-तलैया-पर्वत-फूलेहुए कमल-हंस-सारस बनके-

चकवा आदि पक्षी शशा–सूकर–भैसा–रुरू ( हरिणकाभेद ) और रोहिस इत्यादि चतुष्पद समूहयुक्त–तथा अत्यंत वृक्ष–फूलकेवृक्ष–नीलवर्णपुष्प–हरी २ घास और फलयुक्तहो–तथा अनेक प्रकारके चावल-खेती केलाकेवृक्ष और अनेक प्रकार धान्यादिको करके जो देश युक्त हो उसको अनूपदेश कहते है–जैसे कश्मीर काबूल तिब्बत, आदिदेश है.

## अनूपदेशकेभेद

तच्चोक्तकृत्स्ननिजलक्षणधारिभूरिच्छायावृतांतरवहद्दहुवारि मुख्यं।ईषत्प्रकाशसलिलंयदिमध्यमंतदेतच्चना।तिबहुलांबुभवे त्कनीयः ॥

अर्थ—जिसदेशमें अनूपदेशके उक्तलक्षणसमग्र पाएजावे और अत्यंत छाया युक्तहो तथा अत्यंत जलयुक्त होवो उत्तम अनूपदेश जानना। और जिसमें थोडी छाया और थोडा जलहो तथा उक्तलक्षण कुछ २ मिलते हो वहमध्यम अनूपदेश है—और जिसमें बहुतही थोडा जलहो उसको कनिष्ठ अनूपदेश जानना ॥

## जांगललक्षणम्

आकाशशुभ्रउच्चश्वस्वल्पपानीयपादपः।
शमीकरीरबिल्वार्कपीलूकर्कंधुसंकुलः ॥
हरिणैणर्क्षपृषतगोकर्णखरसंकुलः
सुस्वादुफलवान्देशोवातलोजांगलः स्मृतः ॥

अर्थ—जोदेश आकाशके समान शुभ्र और ऊंचाहो, थोडे जलाशय (कूआवावडीआदि ) और थोडे जहां तहां वृक्षहो तथा छोकरा—करील–बेल आक पीलू–और बेर इत्यादि वृक्षजहां हो–तथा हरिण–एण ( कालाहरिण ) रीछ-चीता–रोज–और गधा ए अधिकहो. तथा जिसदेशमें स्वादु फलप्रगट होते हो वह वातकारक जांगल देशजानना ॥

यत्रानूपविपर्ययस्तनुतृणास्तीर्णाधराधूसरा।
मुद्गव्रीहियवादिधान्यफलदातीव्रोष्मवत्युत्तमा ॥
प्रायःपित्तविवृद्धिरुद्धतबलाः स्युर्नीरुजःप्राणिनो।
गावोजाश्च पयः क्षरंतिबहुतत्कूपेजलंजांगलम् ॥

अर्थ—अब ग्रंथान्तर से जांगल देशके लक्षण कहते है कि जिसमे अनूप देश सै विपरीत लक्षण मिलते हो तथा थोडे तिनकाओंसें पृथ्वी आच्छादितहो और धूसरे रंगकी हो तथा मूंग–मोठ–मका यवआदि धान्य अत्यंत होते हो. तीव्र गरमी करके युक्त और पित्तके बढानेवाली एवंजिसमें बलवान् और रजोगुण रहित प्राणी होते हो और गौओंके थनोमें दूध बहुतहो तथा कूआसें जलभाय प्राप्त हो उसें जांगल देशकहते है जैसै मारवाडके देश आफ्रिकाकामुल्क और अरब आदिकी विलायत जाननी

एतच्चमुख्यमुदितंस्वगुणैःसमग्रमल्पाल्पभूरुहयुतंयदिमध्यमंतत्।
तच्चापिकूपखननेसुलभांबुयत्तज्ज्ञेयंकनीयइतिजांगलकंत्रिरूपम्

अर्थ—जिस जांगल देशमें सर्व लक्षण मिलतेहो वह उत्तम है। और जिसमें बहुत थोडे वृक्ष और थोडे दूरपर पानी मिले तथा जांगल देशके कुछ लक्षण मिलते हो और कुछ न मिलतेहो वह जांगलदेश मध्यमहै। और जिसमें कूआखोदनेसें पासही जल निकल आवे वह कनिष्ठ जांगल देशहै ॥

## साधारणलक्षणम्

संसृष्टलक्षणोपेतो देशः साधारणोमतः
समाः साधारणे यस्माच्छीतवर्षोष्णमारुताः ॥
समतातेनदोषाणांतस्मात्साधारणोवरः ॥

अर्थ—जो अनूपदेश और जांगलदेशके मिले हुए लक्षण युक्तहो उसे साधारण देशकहतेहै इससाधारणदेशमें शीत–वर्षा–गरमी–और पवन समान रहती है इसीसे दोष भी समान रहते है अतएव यह साधारणदेश उत्तमकहाहै. साधारणदेश जैसे मथुरा आगरा दहली काशी पटना आदिजानने ॥

लक्ष्मोन्मीलतियत्रकिंचिदुभयोस्तज्जांगलानूपयोर्गोधूमोल्वण-
यावनालविलसन्माषादिधान्योद्भवः। नानावर्णमशेषजंतुसुखदंदे
शंबुधामध्यमंदोषोद्भूतिविकोपशांतिसहितंसाधारणंतंविदुः ॥

अर्थ—जिसदेशमें जांगल और अनूप ए दोनोदेशोंके लक्षणमिलतेहो और गेंहू जो उडद आदि धान्य प्रगट होतेहो तथा अनेक वर्णके पशुपक्षी आदि सबको सुखकारी उसको पंडितजन मध्यमदेशकहते है इसमें विकारोंका कोप और शांति स्वयं होती रहती है इसीको साधारण देशजानना चाहिये ॥

तच्च साधारणं द्वेधाऽनूपजांगलयोः परम् ।

अतःप्रयोगकार्यार्थंमानमत्रोच्यतेमया ॥

अर्थ—विना मान ( परिमाणज्ञान ) के सर्व द्रव्यप्रयोग की युक्तिनहीं हो सकती इसी हेतुसें प्रथम हम परिमाणज्ञानको प्रयोगकार्यके अर्थ लिखते है। मानपरिभाषाअनेक देशमें अनेकप्रकारकी है और मानभेदभी भिन्नभिन्न है इससें हम प्रथम मागधपरिभाषा जो मध्येदेशमें प्राचीन आचार्योंने बांधी है उसै लिखते है॥

त्रसरेणुर्बुधैःप्रोक्तस्त्रिंशद्भिःपरमाणुभिः।
त्रसरेणुस्तुपर्यायनाम्नावंशीनिगद्यते ॥

अर्थ—तीस परमाणुका १ त्रसरेणु वैद्योंने कहा है वंशी इस त्रसरेणुका पर्यायवाचक नाम है अर्थात् उसीत्रसरेणुको वंशीभी कहते है ॥

## परमाणुकेलक्षण

जालांतरगतेभानौयत्सूक्ष्मंदृश्यतेरजः।
तस्यत्रिंशत्तमोभागः परमाणुःसउच्यते ॥

अर्थ—अबपरमाणुके लक्षण कहते है कि घरमें जाली झरोखा आदिमें सूयकी किरण पडती है उनाकिरणोंमें जो बहुत सूक्ष्म धूलके किनके उडते दीखते उस किनकेका तीसवा जो भाग है उसको परमाणु ऐसा कहते है ॥

## वंश्यादिकोंकेपरिमाण

षड्वंशीभिर्मरीचिःस्यात्ताभिःषड्भिस्तुराजिका।
तिसृभीराजिकाभिश्चसर्षपः प्रोच्यतेबुधैः।
यवोष्टसर्षपैःप्रोक्तोगुंजास्यात्तच्चतुष्टयम्.।

अर्थ—अबफिरउसी त्रसरेणुसें प्रमाण कहते हैकि ६ वंशी ( त्रसरेणु ) की १ मरीची होती है। छःमरीची की १ राई, ३ राई की १ सरसो, आठसरसोका १ यव ( जों ), चार जों की १ रत्ती ( घूंघची ) होती है ॥

## मासेकापरिमाण

षड्भिस्तुरक्तिकाभिःस्यान्माषकोहेमधान्यकौ।

अर्थ—छःरत्तीका एक मासा इस मासेको हेम और धान्यक भी कहते ॥

## शाणकाऔरकोलकापरिमाण

---

१बहुतसे इसपरिभाषाको कलिंगपरिभाषा कहतेहै औरकलिंगकोमागधिपरिभाषा कहतेहै

मापैश्चतुर्भिःशाणःस्याद्धरणःसनिगद्यते।
टंकःसएवकथितस्तद्द्वयंकोलउच्यते॥
क्षुद्रभोवटकश्चैवद्रंक्षणःसनिगद्यते।

अर्थ—चारमासेका १ शाण होता है, इसशाणको धरण और टंकभी कहते है, दोशाणका १ कोलकहाता है इसै क्षुद्रभ, वटक, और द्रंक्षण भी कहते है [ कोल-नाम भाषामें वेरका है अतएव तोलमे वेरके प्रमाण होने सें इसकी कोल संज्ञा वैद्योंने कही है ]

## कर्पकापरिमाण

कोलद्वयंतुकर्पःस्यात्सप्रोक्तः पाणिमानिका।
अक्षः पिचुः पाणितलंकिंचित्पाणिश्चतिंदुकम्॥
बिडालपदकंचैवंतथापोडशिकामता।
करमध्यंहंसपदंसुवर्णकवलग्रहम्
उदुंबरंचपर्यायैःकर्प एवनिगद्यते॥

अर्थ—दोकोलका १ कर्पहोताहै इसकर्पको पाणिमानिक–अक्ष–पिचु–पाणितल–किंचित्पाणि–तिंदुक–विडालपदक–पोडशिका–करमध्य–हंसपद–सुवर्ण–कवलग्रह–और उदुंवर भी कहते है अर्थात् ए तेरह नामभी उसीकर्पके है। कर्पकोलौकिकमें तोलाकहते है [ तोलेभर वस्तुका प्रमाण गूलरके समान होताहै इसीसें इसकी उदुंबरभी संज्ञाकही है ]

## अर्द्धपलतथापलकापरिमाण

स्यात्कर्पाभ्यामर्धपलंशुक्तिरष्टमिकातथा।
शुक्तिभ्यांचपलंज्ञेयंमुष्टिराम्रचतुर्थिका
प्रकुंचः पोडशीबिल्वंपलमेवात्रकीर्त्यते॥

अर्थ—दोकर्पका १ अर्धपल इसको शुक्ति ( सीप ) और अष्टमिकाभी कहतेहै दोशुक्तिका १ पलहोताहै उसको मुष्टी ( मुट्ठीभर ) आम्र चतुर्थिका–प्रकुंच–शोडशी और विल्वभी कहते है [ आम और वेलकी वरावर वस्तुकापरिमाण होनेसें पलकी आम्र और विल्वसंज्ञाहै ]

## प्रसृतिसेआदिलेकेमानिकापर्यंतकापरिमाण

पलाभ्यांप्रसृतिर्ज्ञेयाप्रसृतश्चनिगद्यते ॥
प्रसृतिभ्यामंजलिःस्यात्कुडवोर्धशरावकः ॥
अष्टमानंचसंज्ञेयंकुडवाभ्यांचमानिका ॥
शरावोष्टपलंतद्वज्ज्ञेयमत्रविचक्षणैः ॥

अर्थ—दोपलका १ प्रसृति इसे प्रसृतभी कहते है-दोप्रसृतिकी १ अंजली इसको कुडव-अर्ध शरावक और अष्टमान-भी कहते है. [ कुडवको लौकिकमें पावभर कहते है]दोकुडवकी मानिका होती है उसे शराव, और अष्टपल भी कहते है.[मानिकाकी लौकिकमें आधसेरसंज्ञाहै–शरवाके भरजानेसैं इसतौलका नामसराव है]

## प्रस्थकाऔरआढककापरिमाण

शरावाभ्यांभवेत्प्रस्थश्चतुःप्रस्थैस्तथाढकम् ।
भाजनंकंसपात्रंचचतुषष्टिपलंचतत् ॥

अर्थ—दोशरावका १ प्रस्थ अर्थात् सेर होताहै और चार प्रस्थका १ आढक आढकको भाजन और कंसमात्रभी कहतेहै इसके ६४ पल और २५६ तोले, होते है.

## द्रोणसैंलेकरद्रोणीपर्यंतपरिमाण

चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशोनल्वणोन्मनौ ॥
उन्मानश्चघटोराशिर्द्रोणपर्यायसंज्ञकाः ॥
द्रोणाभ्यांशूर्पकुंभौचचतुषष्टिशरावकाः ॥
शूर्पाभ्यांचभवेद्द्रोणीवाहोगोणीचसास्मृता ॥

अर्थ—चार आढकका १ द्रोणहोताहै उसको कलश-नल्वण–उन्मन–उन्मान घट–और राशि-कहते है [एकघडेभर वस्तुकी आढकसंज्ञाहै] दो द्रोणका एकशूर्प और कुंभहोताहै. उसशूर्पके ६४ सराव अर्थात् ५१२ पल और १०४८ तोले होते है-दोशूर्पकी १ द्रोणी उसको गोणीभी कहते है. ॥

## खारीकापरिमाण

द्रोणीचतुष्टयंखारीकथितासूक्ष्मबुद्धिभिः ॥
चतुःसहस्रपलिकापण्णवत्यधिकाचसा ॥

अर्थ—चार द्रोणकी १ खारी होती है. उसखारीके ४०९ पल तथा १६३८४ तोले होतेहै. ॥

## भारकाऔरतुलाकापरिमाण

पलानांद्विसहस्रंचभारएकः प्रकीर्त्तितः ॥
तुलापलशतंज्ञेयासर्वत्रैपविनिश्चयः ॥

अर्थ—दोहजार पलका एकभार होताहै. और सौं पलकी १ तुला होती है ऐसा निश्चय सर्वत्र जानना ॥

## सुखबोधार्थउक्तमानकोएकश्लोकमेंकहतेहैं ॥

मापटंकाक्षबिल्वानिकुडवः प्रस्थमाढकम् ॥
राशिर्गोणीखारिकेतियथोत्तरचतुर्गुणाः ॥

अर्थ—मासेसैं लेकर खारी पर्यंत एकसैं दूसरीतोल चौगुनी जाननी जैसैं चार मासेका १ शाण-चारशाणका१ कर्प-चारकर्पका १बिल्व-चारबिल्वकी१ अंजली-चारअंजलीका १ प्रस्थ- चारप्रस्थका १ आढक- चारआढककी १ राशि-चार-राशिकी १ गोणी- चारगोणीकी १ खारी इसप्रकार समझनी चाहिये ॥

## परिभाषाकेमतभेदकीऐक्यता

द्वात्रिंशन्मापकैर्मापश्चरकस्यततैःपलम् ।
अष्टचत्वारिंशतास्यात्

अर्थ—रत्तीके आधीन मापेका-मापेके आधीन कर्पपलादिकका ज्ञान है अर्थात् [जबतक यह निश्चय न करलेवे कि रत्ती कितने वजनको कहते है तथा कितने रत्तीका मापा और कितने मापेका कर्प होता है तब तक किसी तोलका प्रमाण नही होता ] अतएव मापकादि मानके स्थापनके अर्थ परिभाषा कहते है— ३२ धान्य मापकोंका ( मापकलायोंका ) चरकके मतसैं मापा होता है और उन्ही ४८ मासेका चरकके मतसैं पल होता है इसकारण कर्पकी लौकिकमें तोला संज्ञा कही है ॥

सुश्रुतस्यतुमापकः
द्वादशभिर्धान्यमापैश्चतुपष्ट्यातुतैःपलम् ॥

अर्थ—सुश्रुतके मतसें १२ ब्रीही मासक चावलोका एकमासा होता और ६४ मासेका पल होता है ॥

एतच्चतुलितंपञ्चरक्तिमापात्मकंपलं ।
चरकार्द्धपलोन्मानं

अर्थ—अब चरक शुश्रुत इन दोनोंके मतसैं जितनी रत्तियोंका मापाहोता है

उसको कहते है—बारह धान्यमापक करके करे हुए ६४ मासोंका जो सुश्रुतने पल कहा है वो रत्तियोंके तोलनेसें ५ रत्तीका मापा होकर चरकके मतसें आधा पल होवे गा ॥

चरकेदशरक्तिकैः ॥
मापैः पलं चतुःषष्ट्या यद्भवेत्तत्थेरितम् ॥

अर्थ—चरकके मतसें दश रत्तीका मापा होता है और ऐसे ६४ मासेका पल होता है अर्थात् ३२ मापकलाय करके करे हुए ४८ मासेका जो पलमान है वो दशरत्तीका मासा मानकर ६४ मासेसें तोले तो पूर्वोक्त मान होता है क्यो कि २४ मापकलाय ( मटर ) दशरत्तीके बरावर होती है ॥

तो अब दशरत्तीका मासा मानकर एसे ६४ मासोंको २४ सें गुण दिया तो १५३६ मासकलाय हो गए ॥

इसी प्रकार चरकके मतसैभी ३२ मापकलायका मापा मानकर असे४८ मासोको ३२ सें गुण दिया तो १५३६ मापकलाय होते है ॥

तो अब दशरत्तीके मासेवाले पलको ३२ मापकलाय प्रमाण मासेवाले पलके साथ मिलान करनेसें समानता प्रत्यक्ष मिलती है सुश्रुतके मतसें बारह मापेकलाय वाले ६४ मासेका पल होता है ॥

उनको ६४ मासोंको १२ मापकलाय सें गुणातो ७६८ ये चरकके मतसें आधामान सुश्रुतका हुवा

तस्मात्पलंचतुः षष्ट्यामापकैर्दशरक्तिकैः ।
चरकानुमतंवैद्यैश्चिकित्सासूपयुज्यते ॥

अर्थ—अब चरक सुश्रुत दोनोके मानमें चरककाही मान व्यवहारोपयोगी है यह कहते है पूर्वोक्त कारण करके दशरत्ती मासेके हिसाबसें ६४ मासेकाही पल चरकके मतका वैद्योंको चिकित्सामें लेना चाहिये सुश्रुतका नहीं. ॥

अब हमने लौकिकोदाहरणमें १ पलकी छटंकी मानी है तो इसकोभी विचारकर देखा जावे कुछ थोडाही फरक पडेगा जैसें चरकके मतमें १० रत्ती वाले मासोंसें ६४ मासे का पलकहा है यदि चौमटको दससें गुणोतो ६४० छ. सो चालीस रत्ती होवेगी ॥

परंतु आजकल इंग्रेजी राज्यमें ८ रत्तीका मासा मानते है तो इस हिसाब पांचतोले ओर पांचमासे की छिटंकी हुई—और हिसाबमें बडा फरक पडता है

पतलीगीलीऔरशुष्कऔषधइनकेयोगकामान ।
गुंजादिमानमारभ्ययावत्स्यात्कुडवस्थितिः ॥
द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणांतावन्मानंसमंमतं ॥
प्रस्थादिमानमारभ्यद्विगुणंतद्द्रवार्द्रयोः ॥
मानंतथातुलायास्तुद्विगुणंनक्वचित्स्मृतम् ॥

अर्थ—जलआदि पतले पदार्थ गीलीऔषध और सुखी औषध ये रत्तीसें लेकर कुडव पर्यंत बराबरलेवे तथा जलआदि पतले पदार्थ और गीली औषध येलेनी होयतो प्रस्थसें लेकर तुलापर्यंत दुगनीलेवे ऐसाकही नहीलिखा अतएव इनकामान सूखी औषधके समान ही लेनाचाहिये. ॥

दूधआदिपतलीवस्तुनापनेकी युक्ति
मृदुस्तुवेणुलोहादेर्भाण्डंयच्चतुरंगुलम् ।
विस्तीर्णंचतथोच्चंचतन्मानंकुडवंवदेत् ॥

अर्थ—नम्रबांस लोह आदिका चौखूंटा बरतन लंबा चौडा और ऊचाई तिचाईमें चारही अंगुलका हो उसको कुडव नाम कहते है कुडव नाम पावसेरका है परंतु व्यवहारका पौआ कुछ अधिक वजनवाला होता है इस कुडवपात्र द्वारा घी-दूध-तेल-आदि पतली वस्तु नापी जाती है ॥

कालिंग्यःपंचगुंजाभिर्मागधाःसप्तभिस्तथा ।
मापकंदशभिर्गौडामानज्ञाःकीर्तयंतिच ॥

अर्थ—कालिंग परिभापामें पांचरत्तीकामापाहोता है [ यही भास्कराचार्यनेभी माना है. ] और मागध परिभापाके मतसें सातरत्ती का मापा होता है और गौडदेशवासी १० रत्तीका मासा मानते है ॥

कालिंग्यंसौश्रुतंमानंमागधंचरकादिषु ॥
गौडादिदेशेगौडंच मानं मानविदोविदुः ॥

अर्थ—सुश्रुत कालिंग परिभापाको कहता है और चरकादि ग्रंथमागध परिभापाको एवं गौडदेशवासी गौड परिभापाको मानते है परंतु " कालिंगान्मागधं श्रेष्ठं " इसवाक्यसें मागध परिभापा उत्तम है. मध्ये देशमें इसका प्रचारहुआ इसी सें मागध परिभापा कहलाती है

१ सत्कालिंगं द्वादशभिरक्तिभिर्मापक स्मृता

# औषध तौलनेके विषयमें मागधि परिभाषाका वजन

३ परमाणुका १ त्रसरेणु इसे वंशीभी कहते है
६ वंशीकी १ मरीची
६ मरीचीकी १ राई
३ राईकी १ सरसो
८ सरसोका १ यव
४ यव ( जो ) की १ रत्ती ( घुंघची ) होती है इसे कुंचभी कहते है
६ रत्तीका १ मासा इसको हेम और धान्यकभी कहते है
४ मासेका १ शाण इसके व्यवहारिक मासे ३ होते है.
उस शाणको निष्क, धरण, और टंकभी कहते है

| | |
|---|---|
| दोटंकका १ कोल होताहै उसके व्यवहारिक मासे | ६ |
| उसकोलको क्षुद्रभ, वटक और द्रंक्षणभी कहते है | |
| दो कोलका १ कर्ष होता है जिसके व्यवहारिक तोला | १ |
| उसकर्षको पाणिमानिका–अक्ष–पिचु–पाणितल–किंचित्पाणि–तिंदुक–बिडालपदक–षोडशिका–हंसपद–सुवर्ण–कवलग्रह और उदुंबर भी कहते है | |
| दोकर्षका अर्धपल होता है उसके व्यवहारिक तोले | २ |
| इसअर्धपलको शुक्ति और अष्टमिका भी कहते है | |
| दोअर्ध पलका १ पल होता है जिसके व्यवहारिक तोले | ४ |
| इसपलको मुष्टि–आम्र–चतुर्थिका–प्रकुंच–षोडशी–और बिल्वभी कहते है | |
| दोपलकी प्रसृति होतीहै जिसके व्यवहारिक तोले | ८ |
| इसप्रसृतीको प्रसृत भी कहते है, | |
| दो प्रसृती की १ अंजली होती है जिसके व्यवहारिक तोले | १६ |
| इसअंजलीको कुडव–अर्धशराव और अष्टमानभी कहते है | |
| दोअंजलीकी १ मानिका जिसके व्यवहारिक तोले | ३२ |
| उसअंजलीको शराव और अष्टमिकाभी कहते है | |
| दोमानिकाका १ प्रस्थ जिसके व्यवहारिक तोले | ६४ |
| चारप्रस्थका १ आढक जिसके व्यवहारिक तोले | २५६ |
| उस आढकको भाजन और कंसपात्रभी कहते है | |
| चारआढकका १ द्रोण जिसके व्यवहारिक तोले | १०२४ |

उसद्रोणको कलश–नल्वण–उन्मान-घट–और राशि भी कहते है
दो द्रोणकाशूर्प जिसके शराव ६४ और व्यवहारिक तोले　२०४८
इसशूर्पको कुंभभी कहते है
दोशूर्पकी १ द्रोणी जिसके व्यवहारिक तोले　४०९६
इसद्रोणीको वाह और गोणीभी कहते हे
चारद्रोणीकी १ खारी जिसके व्यवहारिक तोले　१६३८४
दोहजार पलका १ भार जिसके व्यवहारिक तोले　८०००
सौं पलकी १ तुला जिसके व्यवहारिक तोले　४००

यदौषधंतुप्रथमंयस्ययोगस्यकथ्यते ।
तन्नाम्नैवसयोगोहिकथ्यतेऽत्रविनिश्चयः ॥

अर्थ—जिसप्रयोगमें जो प्रथम औषध हो उसी औषधके नामसें वह प्रयोग जानना जैसे-पीपरपाक- पेठापाक-शुंठ्यादिकाढा-प्रसारणीतैल–इनमें पीपरपाकमें प्रथम पीपरलीपी है इसीसें पीपरपाक कहता है-शुंठ्यादिकाढेमें प्रथम सोंठहै अत एव शुंठ्यादिकाढाकहाताहै इसीप्रकार प्रसारणीतेलमें प्रथम प्रसारणी औषधकहीहै इसीसें उसकानाम प्रसारणीतैलहै इसीप्रकार औरभी उदाहरण-जानने ॥

नाल्पं हंत्यौषधंव्याधिंयथाल्पांबुमहानलम् ।
दोषवच्चातिमात्रंस्यात्शस्यमत्युदकंयथा ॥

अर्थ—थोडी औषध रोगको दूरनही करती जैसें थोडाजल वहुतसी अग्निको शांति नहीकरता उसीप्रकार वहुत औषधभी रोगको नहीं दूरकरे जैसें वहुत सा जल नवीन वृक्षादिकको नष्टकरदेताहै. ॥

मात्रयाहीनयाद्रव्यंविकारंननिवर्त्तयेत् ।
द्रव्याणामतियोगाच्चव्यापत्संजायतेध्रुवम् ॥

अर्थ—थोडी मात्रासें विकार दूरनहीहोता उसीप्रकार वहुतमात्राके खानेसें अनेकप्रकारकी व्याधि होतीहै अतएव दोष-काल-अवस्था आदिके अनुसार औषधिखाना चाहिये ॥

भक्षणरूपमात्राकाअनियम

स्थितिर्नास्त्येवमात्रायाः कालमग्निंवयोवलम् ।
प्रकृतिंदोषदेशौचदृष्ट्वामात्रांप्रकल्पयेत् ॥

अर्थ—औषधिकी मात्राके प्रमाणकी स्थिति नहीं अर्थात् निश्चय नहींहै अतएव वैद्य काल-अग्नि-अवस्था-बल-प्रकृति-दोष और देश इनकाविचार करके अपनी बुद्धिके अनुसार मात्राकी कल्पनाकरे. ॥

## औषधसेवनकाप्रमाणकलिंगपरिभाषाकरकेकहतेहै

यतोमन्दाग्नयोह्रस्वाहीनसत्वानराःकलौ ।
अतस्तुमात्रातद्योग्याप्रोच्यतेसुज्ञसंमता ॥

अर्थ—कलियुगमे मनुष्य मंदाग्निवाले-छोटे और बलहीन है अत एव उनके उपयोगी तथा वैद्योंको मान्य ऐसीऔषधीका प्रमाणकहताहू ॥

## कलिंगपरिभाषाका वजन

यवोद्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यतेबुधैः॥यवद्वयेनगुंजास्या त्रिगुंजोवल्लउच्यते ॥ माषोगुजाभिरष्टाभिःसप्तभिर्वाभवे त्क्वचित्॥स्याच्चतुर्माषकैःशाणःसनिष्कष्टंकएवच॥ गद्या णोमापकैःषड्भिःकर्षःस्याद्दशमापकः॥चतुःकर्षैःपलंप्रोक्तं दशशाणमितंबुधैः॥चतुःपलैश्चकुडवंप्रस्थाद्याःपूर्ववन्मताः॥

अर्थ—बारहसपेद सरसोका १ यव होताहै-दोयवकी १ रत्ती ३ रत्तीका १ वल्ल आठरत्तीका अथवा कहीं सातरत्तीका मासाहोताहै. चार मासेका १ शाण उसको निष्क और टंकभी कहते है छःमासेका १ गद्याणक-दशमासेका १ कर्ष च्यारकर्षका१ पल कि जिसके दशशाण अर्थात्४० मासे होतेहै. चार पलका १ कुडव होताहै. और प्रस्थ आढक आदिका प्रमाण पूर्वोक्त मागधिपरिभाषाके समानजानने अर्थात् ४ कुडवका १ प्रस्थ चार प्रस्थका एक आढक इसीप्रकार औरभीजानो यह कलिंगपरिभाषा कही है ॥

## अथ कृष्णात्रेयात्

रजांसित्रीणिसिकताताभि षोडशभिस्तथा ।
सर्षपश्चभवेद्गौरस्तेचाष्टौतण्डुलंविदुः ॥
तद्द्वयंधान्यकमाषंतद्द्वयंरक्तिकामता ।
रक्तिकाद्वितयेनापिवल्ल प्रोक्तोविशारदैः॥
चतुर्भिश्चंडिकातैःस्यादेवंमानपरंपरा ॥

अर्थ—तीनरजकी १ सिकता १६ सिकताओंकी १ सपेदसरसो ८ सपेदसरसोका १ चावल २ चावलोंका १ धान्यक और माप– २ धान्यककी १ रत्ती २ रत्तीका १ वल्ल ४ वल्लकी १ चांडिका होती है–इसमकार मानपरंपरा जाननी यह कृष्णात्रेय ऋपिका मतहै. ॥

## औषधोंकायुक्तायुक्तविचार

नवान्येवहियोज्यानिद्रव्याण्यखिलकर्मसु ॥
विनाविडंगकृष्णाभ्यांगुडधान्याज्यमाक्षिकैः ॥

अर्थ—संपूर्ण कार्यमें नवीन औषधोकी योजनाकरनी चाहिये परंतु वायविडंग पीपर–गुड–चावल–घी और सहत ए छः पदार्थ पुराने ही लेने चाहिये.

## गीलीऔषधग्रहणीय

वासानिंबपटोलकेतकबलाकूष्मांडकैंद्रीवरी ॥
वर्षाभूकुटजाश्वकंदसहिताः सापूतिगंधाःस्मृताः ॥
मांसीनागबलाकुरंटकपुरोहिंग्वार्द्रकंचैक्षवं ॥
गृण्हीयात्सरसान्यमूनिनपुनःकुर्याद्द्विभागानिच ॥

अर्थ—अडूसा–नीमकीछाल–परवल–केतक–पेंठा–इंद्रायन–सतावर–पुनर्नवा कूढा– असकद–गंधभसारणी–छड–गुलसकरी–कटसरैया–गूगल–हींग–अदरक–और ईख इतनी वस्तु सरस लेय परतु गीली जानके दूनी न लेवे जितनी लिखीहो उतनीलेवे

## साधारणऔषधोंकीयोजना

जीर्णमेवप्रशस्तंस्यात्तांबूलंकांजिकंतथा ॥
शुष्कंनवीनद्रव्यंचयोज्यंसकलकर्मसु ॥
आर्द्रंचद्विगुणंयुंज्यादेषसर्वत्रनिश्चयः ॥

अर्थ—पान सुपारी और कांजीये पुरानेही उत्तम होते है. । सर्वकार्यमेंउक्त विडंग और पानसुपारी आदिको त्यागकर सबवस्तु नवीन और सूखी लेनाचाहीये. यदी वह औषध गीली होयतो वांसे आदिको त्यागकर बाकी की औषध दुनी लेवे यह सर्वत्र निश्चय है ॥

## अनुक्तकालादिकोंकीयोजना

कालेऽनुक्तेप्रभातंस्यादङ्गेऽनुक्तेजटाभवेत् ।

भागेनुक्तेतुसात्म्यंस्यात्पात्रेनुक्तेचमृन्मयम् ॥

अर्थ—जिसप्रयोगमें कालनहीं कहाहो उसजगेप्रातःकाल लेना चाहिये और जहां औषधीका अंग न कहा हो तहां औषधीकी जडलेवे और जिसप्रयोगमें भाग न कहा हो तहां समान भागलेगे. जिसजगे पात्रनकहाहो वहां पर मिट्टीका पात्रलेना चाहिये. ॥

पात्रोक्तौचापिमृत्पात्रमुत्पलेनीलमुत्पलम् ।
मूत्रेगोमूत्रमादेयंविशेषोयत्रनेरितः ॥

अर्थ—सामान्यता करके पात्र शब्द करके मिट्टीका पात्रलेवे उत्पल शब्दकरके ।नीलकमलले—मूत्रशब्द सै गोमूत्रलेना चाहिये यह जहां विशेष नाम न कहां हो तहांकरे ॥

पयःसर्पिःप्रयोगेषुगवामेवप्रशस्यते ।
स्त्रियंचतुष्पदेग्राह्याःपुमांसोविहगेषुच ॥
जांगलानांवयस्थानांचर्मरोमनखादिकम् ॥
हित्वाग्राह्यंपूतमांसंसास्थिकंखंडशः कृतम् ॥

अर्थ—जहां केवल दूध घी लिखा हो तहां गौका घी दूध लेवे। चौपाए जानवरोंमें स्त्रीग्राह्य है. जैसे गौभैंस और पखेरुओंमे पुरुषलेना जैसै कबूतर चिडा. जंगली जीवोंमें जवान जीवले. उसके चर्म. नख रोम आदिको त्यागकरके हड्डी सहितटुकडे २ करके मांसलेना चाहिये ॥

पक्तव्यमाजमासंचविधिनाघृततैलयोः ॥
हित्वास्त्रींपुरुषंचापिक्लीबंतत्रापिदापयेत् ॥

अर्थ—स्त्री पुरुषको त्याग नपुंसक बकरालेके उसके मांसको घी तेलमे भूने यदि नपुंसक बकरा न मिलेतो वंध्या बकरी लेवे. ॥

शृगालबर्हिणोः पाके पुमांसंतत्रदापयेत् ॥
मयूरी जम्बुकीछागीवीर्यहीनास्वभावतः ॥

अर्थ—स्यार और मोरके पाकमें पुरुषलेवे—क्योंकि मोरनी—स्यारनी और बकरी ये स्वभावसैं ही वीर्यहीन होती है ॥

स्त्रीणांतीक्ष्णंगवांमूत्रंनतुपुंसांविधीयते ॥
पित्तात्मिकाः स्त्रियोयस्मात्सौम्यास्तुपुरुषामताः ॥

क्षीरमूत्रपुरीषाणिजीर्णाहारेतुसंहरेत् ॥

अर्थ—यदि गौजातिकामूत्रलेना होयतो स्त्रीजातिकालेवे इसका कारण यह है कि स्त्रीगोजातिका मूत्र तीक्ष्ण और पितात्मक होता है. एवं पुरुषजातिका मूत्र शीतल और तीक्ष्णता रहित होता है। यदिदूध. मूत्रऔर गोवर लेना होवे तो जव पशुका आहार पचजावे तव लेय अजीर्ण वालेका न लेय. ॥

## विशेषकथन

एकमप्यौषधंयोगेयस्मिन्यत्पुनरुच्यते ।
मानतोद्विगुणंप्रोक्तंतद्द्रव्यंतत्त्वदर्शिभिः ॥

अर्थ—प्रयोगमे एक औषध दोवार आवे तो वह औषध वैद्यको दुगनी डालनी चाहिये. ॥

## औषधोंकेहीनवीर्यहोनेमेंप्रमाण

गुणहीनंभवेद्वर्षादूर्ध्वंतद्रूपमौषधं॥ मासद्वयात्तथाचूर्णंहीन
वीर्यत्वमाप्नुयात् ॥ हीनत्वंगुटिकालेहौलभतेवत्सरात्परम्।
हीनाःस्युर्घृततैलाद्याश्चतुर्मासाधिकास्तथा ॥ओषध्योल
घुपाकाःस्युर्निर्वीर्यावत्सरात्परं ॥ पुराणाःस्युर्गुणैर्युक्ताआ
सवाधातवोरसाः ॥

अर्थ—एक वर्षके पश्चात् औषधोंका तेज और उनके गुणहीन हो जाते है उनमेंभी दोमाहिनेके वाद चूर्ण हीनवीर्य होता है- तथागुटिका और अवलेह ये एक वर्षके उपरात हीनवीर्य होते है तथा घृत और तैलादिक ए चारमहिनेसे हीन वीर्य होता है. तथा औषधी हलके पाकवाली वर्षके पश्चात् हो जाति है. एव आसव ( कुमार्यासव द्राक्षासवआदि ) धातु ( सोने चादि. रागा लोहा आदि की भस्म ) और रस ( चद्रोदयादि ) एजितने पुराने होवे उतनेही गुणमें उत्तम होते है ॥

व्याधेरनुक्तंयद्द्रव्यं गणोक्तमपितत्त्यजेत् ।
अनुक्तमपियुक्तंयद्युज्यतेतत्रतद्बुधैः ॥

अर्थ—रोगमें चूर्ण और काढे आदि की योजना गणकरके करते समय यदि उसगणमें एक दो औषध रोगके विरुद्धहोवे तो वैद्य त्यागदेवे और जिसजगे गुणदायक औषध गणमें नही कही हो तो उसको वैद्य स्वबुद्धिसे मिलाय देवे.

## देशभेदकरकेऔषधोंकेभेद

आग्नेयाविंध्यशैलाद्याः सौम्येहिमगिरिर्मतः ॥
अतस्तदौषधानिस्युरनुरूपाणिहेतुभिः ॥
अन्येष्वपिप्ररोहंतिवनेषूपवनेषुच ॥

अर्थ—विंध्याचलपर्वत आदिकी औषध उष्णवीर्य होती है. और हिमालय पर्वत आदिकी सौम्य ( शीतल ) औषधी होती है। आतएव जैसी २ पृथ्वी होती है उसी २ प्रकारकी औषधी और २ वनोंमें तथाउपवनोमें होती है. उनको विचारकर वैद्यग्रहण करे ॥

## औषधीलानेकाप्रकार

गृण्हीयात्तानिसुमनाः शुचिःप्रातःसुवासरे ॥
आदित्यसन्मुखोमौनीनमस्कृत्यशिवंहृदि ॥
साधारणधराद्रव्यंगृह्णीयादुत्तराश्रितं ॥
वल्मीककुत्सितानूपश्मशानोषरमार्गजा ॥
जंतुवह्निहिमव्याप्तानौषधीकार्यसिद्धिदा ॥

अर्थ—औषधी लानेके समय प्रातःकालउठकर स्वस्थचित्त करके पवित्रहो उत्तमदिन और मुहूर्तमें सूर्यके सन्मुख खडाहोके नमस्कारकरे और हृदयमें शिवकाध्यानकरके और मौनधारणकरके जो औषधलानीहो उसके समीप जायकर औषधी के उत्तर के तरफकी छाल अथवा जड खोदकेलावे.

जो औषध सर्पकी बांवीके ऊपरहो, दुष्टपृथ्वीमेहो, जलमयपृथ्वीमे हो, श्मसान-ऊखर-और मार्ग ( रास्ते ) में हो, तथा जिसको कीडे खाय गएहो-अग्निसे या धूपसें झुलसगईहो-तथा जाडेकी मारीहो-ऐसी औषधको नलेवे क्योंकि ऐसी औषध कार्यकर्त्तानही होती ( परंतु यहां हिंदुस्तानमें वैद्य अहेरिया वा पंसारी आदिसें औषधलेतेहै-भला वो इसबातको क्याजाने के ऐसी जगेसें औषध लेनी और ऐसीजगेसें नलेनी-दूसरेदेखो शास्त्रवैद्यकोही आज्ञादेताहै कि आप जायकर औषधलावे परंतु पश्चात्तापहै यहांके वैद्य औषधके जाननेमें सर्वथा मूर्खहै.) ॥

## ऋतुविशेषकरकेरोगविशेषोंपरऔषधलेनेकाकाल

शरद्यखिलकार्यार्थंग्राह्यंसरसमौषधम् ।
विरेकवमनार्थंचवसंतांतेसमाहरेत् ॥

अर्थ—आश्विन और कार्त्तिक इनदोमहिनोंमें सर्व औषधी रससैं भरीहोतीहैं अतएव सर्व कार्यके वास्ते इन्ही दो महिनोमें औषधी लेनी चाहिये, और दस्त करानेको तथा वमनकेलिये वसंतांत ( वैशाख और ज्येष्ट ) इनदोमहिनोंमें औषधी वनसैं लावे ॥

## औषधविशेषकाअंगग्रहण

अतिस्थूलजटायाः स्युस्तासांग्राह्यास्त्वचोबुधैः ।
गृण्हीयात्सूक्ष्ममूलानिसकलान्यपिबुद्धिमान् ॥

अर्थ—जिसवृक्षकी जड अत्यंत स्थूलहो उसवृक्षकी छाल लेय. जैसे—नीम—वड—जामनआदि जानने—और जिस वनस्पति कीजडछोटीहो उसरूखडीकी जडलेय—तथासर्व अंग ( जड फल—पत्तेआदि ) लेवे जैसे—कटेरी-गोखरू—धमासो—अडूसा—आदि जानना तथा कितने वैद्योंका यहमतहै कि असी२छोटी वनास्पतियोंकीजडहीलेना ॥

न्यग्रोधादेस्त्वचोग्राह्याः सारंस्याद्वीजकादितः ।
तालीसादेश्चपत्राणिफलंस्यात्त्रिफलादितः
धातक्यादेश्चपुष्पाणिस्नुह्यादेः क्षीरमाहरेत् ॥

अर्थ—वड आदिशब्दकरके पापरी-जामुन-आम-और पीपर इत्यादिकोकी छाललेनी चाहिये, बीजकवृक्ष आदिशब्दसैं खैर-महुआ-इनकासारलेना जैसैं विजेसार, खैरसारलेवे-तालीस आदि शब्दकरके तमालपत्र ग्वारपाठा नागरवेल इत्यादिकोके पत्ते लेने चाहिये-त्रिफलाआदि शब्दसैं सुपारी आम-वेर इत्यादि कोंके फललेने चाहिये धाय आदिशब्दसैं गुलाव-केवडा आदिके फूललेवे-थूहर आदिकरके आक-तिधाराथूहर इत्यादिकोंका दूधलेय इसप्रकार औषधीलेनी चा हिये ॥

क्वचिन्मूलंक्वचित्कंदः क्वचित्पत्रंक्वचित्फलम् ।
क्वचित्पुष्पंक्वचित्सर्वंक्वचित्सारः क्वचित्त्वचः ॥

अर्थ—किसीकीजड किसीकाकंद-किसीके फल किसीके पत्ते-किसीके फूल-किसीका सर्वअंग और किसीका सार अथवा गोद वैद्यको यथायोग्य लेनाचाहिये ॥

चित्रकःसूरणोनिंबोवासाचत्रिफलाक्रमात् ।
धातकीकंटकारीचखदिरः क्षीरपादपः ॥

अर्थ—चित्रकली छाल-जमीकंद-नीम-अडूसेके पत्ते-हरडवहेडा आमला इनके फल धायकेफूल, कटेरीका सर्वांग,खैरकासार, इसप्रकारलेना चाहिये ॥

क्वचिन्निंबस्यगृण्हीयात्पत्राभावेत्वचामपि ।
बालंफलंतुबिल्वस्यपक्कमारग्वधस्यतु ॥

अर्थ—कहीं नीमके पत्ते नमिलनेमें छाललेनी चाहिये-बेलका कोमलफल लेवे और अमलतासकी पकी फलीलेनी चाहिये ॥

## पक्वपदार्थोंकोफिरपक्ककरनेमेंदोष

घृतंतैलंचपानीयंकषायंव्यंजनादिकम् ।
पक्त्वाशीतीकृतंतत्तत्सर्वंस्याद्विषोपमम् ॥

अर्थ—घृत-तेल-पानी-काढा-भोजनके पदार्थ ( दालभात रोटी आदि ) को एकवार सिजायकर जब शीतल होजायतो फिर गरम नकरे पुनः गरमकरनेसे येविषके समानहोजाते है. ॥

## द्रव्योंकीपरीक्षा

सूक्ष्मास्थिमांसलापथ्यासर्वकर्मणिपूजिता ।
क्षिप्ताभसिनिमज्जेद्याभल्लातक्यभयोत्तमा ॥

अर्थ—जितनी बारीक तथा ऊपरकी त्वचामोटीहो वो छोटीहरड सर्वकार्यमें अतिउत्तमहै. ओर जो जलमें गेरनेसें डूबजावे वो हरड और भिलाया उत्तमहै-ऐसा जानना ॥

## वाराहीकंदसंचरऔरसैंधवइनकीपरीक्षा

वराहमूर्धवत्कंदोवाराहीकंदसंज्ञितः ।
सौवर्चलंतुकाचाभंसैंधवंस्फटिकप्रभम् ॥

अर्थ—सूकरके मस्तक समानजो कंद होयवोबाराहकंद, जो कांचके समान चमके वो संचरनोन, और स्फटिकमणिके समानचमके वो सैंधानोन उत्तम होताहै

## सुवर्णमाक्षिकतथारौप्यमाक्षिककीपरीक्षा

सुवर्णछविकंज्ञेयंस्वर्णमाक्षिकमुत्तमम् ।
उडुपुष्पप्रतीकाशामनोह्वाचोत्तमोत्तमा ॥

अर्थ—सोंनेके रंगका सुवर्णमाक्षिक उत्तमहोताहै, और जो चंद्रमाके समान स्वच्छ और सपेद होय वो रौप्यमाक्षिक उत्तम जानना. ॥

## शिलाजीतपरीक्षा

श्रेष्ठंशिलाजतुज्ञेयंयत्क्षिप्तंनविशीर्यते ।

तोयपूर्णेकांस्यपात्रेप्रतानेनविवर्द्धते ॥

अर्थ—वो शिलाजीत उत्तमजाने जो जलमें गेरनेसै फूटे नहीं. किंतुकासेके पात्रमें जलभरके शिलाजीत डालेतो तारसे छूटने लगे वो उत्तम है. ॥

## कपूर इलायची औरचंदनकीपरीक्षा

कर्पूरस्तुवरास्निग्धएलासूक्ष्मफलावराः।
श्वेतचंदनमत्यंतंसुगंधिगुरुपूजितम् ॥

अर्थ—कपूर कपेला और चिकना उत्तम होताहै इलायची छोटी सुगंधदार उत्तम होतीहै सपेदचंदन अत्यंत सुगंधदार और भारी उत्तमहोताहै. ॥

## रक्तचंदनपरीक्षा

रक्तचंदनमत्यंतंलोहितंप्रवरंमतम् ।
काकतुंडनिभःस्निग्धोगुरुःश्रेष्ठोगुरुर्मतः ॥

अर्थ—जो रक्तचंदनअत्यंत काला तथा कौएके मुखमांस समान लालहो और चिकना तथा भारीहो वह उत्तमहै. ॥

## देवदारुऔरसरलकीपरीक्षा

सुगंधिलघुसूक्ष्मंचसुरदारुवरंमतम् ।
सरलंस्निग्धमत्यर्थंसुगंधिचगुणावहम् ॥

अर्थ—सुगंध, हलका, सूक्ष्म, ऐसादेवदार । और चिकना तथासुगंध वाला सरल बहुत उत्तम गुणकारी जानना ॥

## दारहल्दीऔरजायफलकीपरीक्षा

अतिपीताप्रशस्तातुज्ञेयादारुनिशाबुधैः ।
जातीफलंगुरुस्निग्धंसमंशुभ्रेतरद्वयम् ।

अर्थ—अत्यंत पीली एसी दारहलदी उत्तमहोती है. और जायफलभारि चिकना-गोल-और काला उत्तम होय है ॥

## दाखकीपरीक्षा

मृद्वीकासोत्तमाज्ञेयायास्याद्गोस्तनसंन्निभा ।
करमर्दफलाकारामध्यमासाप्रकीर्तिता ॥

अर्थ—गौके थनो के समान जो दाखहोवो उत्तम जाननी और करोदे फल-के समान हो वह मध्यमजाननी

## खांडऔर सहतकीपरीक्षा

खंडंतुविमलंश्रेष्ठंचन्द्रकांतसमप्रभम् ॥
गवाज्यसदृशंरुच्यंगंधंमधुवरंमतम् ॥

अर्थ—मिश्री चंद्रमाकि कांतिके समानसपेदचो उत्तमहोती है ( यह जोधपुरमें होती है ) और गौके घृतके समान रुचिकारी-गंधवाला ऐसा सहत उत्तम जानना

## स्वभावसें हितकरद्रव्य

शालीनांलोहितःशालिःपाष्टिकेषुचषष्टिका ।
शूकधान्येष्वपियवोगोधूमःप्रवरोमतः ॥

अर्थ—सर्वशालीन्में लालसाली ( धान्य विशेष ) और सांठीन्में सांठीचावल उत्तम होतेहै. सूकधान्योंमें गेंहू और जो उत्तम होते है. ॥

## शिंबीधान्योंमेंउत्तमधान्य

शिंबीधान्येवरोमुद्गोमसूराश्चाढकीतथा ।
रसेषुमधुरःश्रेष्ठोलवणेषुचसैंधवम् ।

अर्थ—फलीके धान्योंमें मूंग-मसूर और अरहर उत्तम होतीहै. रसोंमें मधुर रस श्रेष्टहै. नोनमें सैंधानिमक उत्तम जानना ॥

## उत्तमफल

दाडिमामलकंद्राक्षाखर्जूरंचपरूपकम् ।
राजादनंमातुलुंगंफलवर्गेप्रशस्यते ॥

अर्थ—अनार-आमले. दाख-छुहारे- फालसे-खिन्नी-और विजोरा ए फलवर्गोंमें उत्तम जानने ॥

## पत्रफल औरकंद इन शाकोंमेंउत्तम

पत्रशाकेषुवास्तूकंजीवंतीपोतिकावरा ॥
पटोलंफलशाकेषुकंदशाकेषुसूरणम् ॥

अर्थ—पत्तेके शाकमें वथुएका साग, डोडीकासाग, और पोईकासाग, उत्तम है । फलके सागोंमें परवलका साग उत्तम होती है । कंदोमें जमी कंदका साग उत्तम होता है. ॥

## मृग पक्षी और मछली इनमें उत्तम

एणः कुरंगो हरिणो जंघालेपु च शस्यते ।
पक्षिणां तित्तिरिर्लावो वरो मत्स्येषु रोहितः ॥

अर्थ—जंघाल (दौडनवाले) पशुओंमे एण. कुरंग और हरिण ए उत्तमहोतेहै पक्षियोंमें तीतर और लवा उत्तम होतेहै एवं मछलियोंमें रोहूमछली उत्तम होतीहै

## हरिणोंकेभेद

हरिणस्ताम्रवर्णः स्यादेणः कृष्णस्तथा मतः ।
कुरंगस्ताम्र उद्दिष्टो हरिणाकृतिकोमहान् ॥

अर्थ—लालवर्णके मृगको हरिणकहते है. काले रंगकेको एण तथा कुछलाल और शरीरमें भारी हो उसको कुरंग कहते हैं येहरिणोके भेद जानने. ॥

## जल, दूध, घृत, तेल, इक्षुविकार इनमें उत्तम

जलेषु दिव्यं दुग्धेषु गव्यमाज्येषु गोद्भवम् ।
तैलेषु तिलजं तैलमैक्षवेषु सिता हिता ।

अर्थ—जलोंमें मेघकाजल—दूध और घृतोंमें गौकादूध घी—तेलोंमें तिलका तेल—तथा ईखके सर्व पदार्थो में मिश्रीउत्तम होती है. ॥

## स्वभावसें अहितकारी द्रव्य

शिंबीपु माषान्ग्रीष्मतौ लवणेष्वौखरं त्यजेत् ।
फलेषु लकुचं शाकेसार्षपं न हितं मतम् ॥

अर्थ—दो दलके अन्नोंमें उडद त्याज्य है, निमकोंमें रेहका निमक और फलोंमें छोटा वढेर. और सागोंमें सरसोका साग त्याज्य है ॥

गोमांसं ग्राम्यमांसेषु न हिता महिषी वसा ॥ मेषीपयः कुसुंभस्य तैलं त्याज्यं च फाणितं इक्षुरसः परिपक्वो योऽर्धघनः फाणितं तद्धि ॥

अर्थ—मांसोंमें गौका मांसत्याज्य है, भैसकी वसात्याज्य है, दूधोंमें मेढीका दूध तेलोंमें कसूमका तेल त्याज्य है, ईखका रसनिकाले जब पकानेसें आधारहजावे उसको फाणितकहते है. यों राव अपथ्य है. ॥

## संयोगविरुद्धद्रव्य

मत्स्यमानूपमांसं च दुग्धयुक्तं विवर्जयेत् ।

कापोतंसार्षपस्नेहभर्जितंपरिवर्जयेत्॥

अर्थ—मछली और जलसमीप जीवोकामांसदूध मिलायके नखावे कबू-तरकामांस सरसोंके तेलमें भूनके नखाय क्योंकिये संयोग विरुद्ध है ॥

मत्स्यानिक्षोर्विकारेणतथाक्षौद्रेणवर्जयेत् ।
सक्तून्मांसपयोयुक्तानुष्णैर्दधिविवर्जयेत् ॥

अर्थ—ईखके पदार्थसैं मछलीका खाना अथवा सहत के साथ खाना निषेध है सत्तू मांस और दूध इनके साथभी मछली नखाय तथा गरम पदार्थके साथ-दही नखावे ॥

उष्णैर्दध्यंवुनाक्षौद्रंपायसंकृसरान्वितम् ।
रंभाफलंत्यजेत्तक्रंदधिविल्वफलान्वितम् ॥

अर्थ—उष्णपदार्थ दही के साथ, तथा दूध खीचडीके साथ, सहतजलके साथ, केलेकी फली छाछके साथ और वेलका फल दहीके साथ नभक्षणकरे ॥

दशाहमुषितंसर्पिःकांस्येमधुघृतेसमं ।
कृतान्नंचकषायंचपुनरुष्णीकृतंत्यजेत् ॥

अर्थ—घी कांसेके वासनमें दसदिन धरारहने सें त्याज्य है, सहत और घी व-रावरका मिलाहुआत्याज्य है भोजनका अन्न और काढा दूसरे गरमकरा हुआ त्याज्य है ॥

एकत्रबहुमांसानिविरुध्यंतेपरस्परम् ।
मधुसर्पिर्वसातैलपानीयानि यथा तथा ॥

अर्थ—एकत्रकरे हुए अनेक पशुपक्षी यों के मांस त्याज्य है—और सहत-घृत वसा—तेल—और जल एकत्रकरके हुए अपथ्य होते है अतएव इनको नखाय ॥

## औपधग्रहणमेंसंकेत

लवणंसैंधवंप्रोक्तंचंदनंरक्तचंदनं ॥ चूर्णलेहासवस्नेहाः
साध्याधवलचंदनैः॥कषायलेपयोः प्रायोयुज्यतेरक्तचं
दनं॥अंतःसंमार्जनेज्ञेयाह्यजमोदायवानिका॥बहिःसैव.
चविद्वभिर्विज्ञातव्याजमोदिका ॥ पयःसर्पिःप्रयोगेपुग
व्यमेवहिगृह्यते॥सक्टद्रसोगोमयजोमूत्रंगोमूत्रमुच्यते॥

अर्थ—औषधि ग्रहणमें जहां सामान्यकरके लवण कहाहो तहाँ सैंधानिमक लेना और चंदन कहने सें काढेमें लालचंदन लेना तथा चूर्ण घृततैलादि—अवलेह— और आसवमें सपेदचंदन डालना—परंतु लेपमें लाल चंदनडालना-भीतरकीशुद्धि करनेवाली औषधोंमें जहां अजमोद लिखा हो तहां अजमायन डालनी और बाहरकी शुद्धिमें अजमोदके स्थानमें अजमोदही लेना—दूध घृतके प्रयोगमें गौका दूधही लेना—गोबरकारस और मूत्रके स्थानमें गोमूत्र लेनाचाहिये ॥

अंतः संमार्जनेयोज्यंवचास्थानेकुलिंजनम् ।
बहिःसंमार्जनेसैवप्रयोक्तव्यामनीषिभिः ॥

अर्थ—अंतर्गतकी शुद्धिमें वचके स्थानमें कुलिंजन डाले और बाहर लेपादिकोंमें वचके स्थानमें वचही लेनी चाहिये. ॥

## औषधभक्षणमेंकाल

भैषज्यमभ्यवहरेत्प्रभातेप्रायशोबुधः ।
कषायांश्चविशेषेण तत्रभेदस्तुदर्शितः ॥

अर्थ—वैद्य रोगीको बहुधाकरके औषध प्रातःकालमें भक्षण करावे. तथा स्वरस—कल्क—काढे—फांट—हिम होयतो विशेषकरके प्रातःकालमें पिवावे. इसमेंभी कालका भेद वक्ष्यमाणप्रकार करके कहते है ॥

## औषधभक्षणकेपांचकाल

ज्ञेयःपंचविधःकालोभैषज्यग्रहणेनृणाम्
किंचित्सूर्योदयेजातेतथादिवसभोजने ।
सायंतनेभोजनेचमुहुश्चापितथानिशि ॥

अर्थ—मनुष्योंको औषध भक्षणके विषयमें पांचकाल है उनको कहते है, किंचित्सूर्योदयहोने पर औषध लेना वह प्रथमकाल है, तथादिनमें भोजनके समय औषधलेना द्वितीयकाल, सायंकाल में व्यारूके समय औषधलेना तृतीयकाल, वारंवार औषधलेना वहचतुर्थ काल है, और रात्रिमें औषधलेना वो पंचमकाल है इसप्रकार औषधसेवनके पांचकालकहे है अबइनको क्रमसें कहते है ॥

## प्रथमकाल.

प्रायःपित्तकफोद्रेके विरेकवमनार्थयोः ।
लेखनार्थेच भैषज्यं प्रभाते नान्नमाहरेत् ॥

एवंस्यात्प्रथमःकालोभैषज्यग्रहणेनृणाम् ॥

अर्थ—पित्त और कफ इनका प्रकोप होनेसैं पित्तको विरेचन और कफको वमन-तथा लेखन कहिये पतलीकरण इनविषयोंमें प्रातःकाल औषध लेवे । परंतु प्रातःकाल रोगीको अन्नदेवे यह औषधग्रहणमें प्रथमकाल कहा ॥

## द्वितीयकाल

भैषज्यंविगुणेपानेभोजनाग्रेप्रशस्यते ॥ अरुचौचित्रभोज्यैश्चमिश्रंरुचिरमाहरेत्॥ समानवातेविगुणेमंदेग्नावग्निदीपनं॥दद्याद्भोजनमध्येचभैषज्यंकुशलोभिषक्॥ व्यानकोपेचभैषज्यंभोजनान्तेसमाहरेत् ॥ हिक्काक्षेपकंपेषुपूर्वमंतेचभोजनात् ॥ एवंद्वितीयकालश्चप्रोक्तोभैषज्यकर्मणि ॥

अर्थ—गुदासंबंधी वायुके कुपित होनेमें भोजनके कुछ थोडी देरपहले औषध खाय।और अरुचि होनेसैं अनेक प्रकारके अन्न तथा अनेक प्रकारके रुचिकारी पदर्थोंके सायमिलायके वैद्य रोगीको औषध देवे।और नाभि संबंधी वायुके कुपित होनेसैं तथा मंदाग्निहोनेमें जैसें अग्निप्रदीप्त होवे ऐसी औषधभोजनके मध्यमें वैद्यरोगीको देवे। तथा सकल देह व्यापी व्यानवायुके कुपित होनेमें भोजनके अंतमे औषध भक्षण करावे।और हिचकी-तथा आक्षेपक वायु एवं कंपवायु इनका कोप होनेसै भोजनके प्रथम और अंतमें वैद्य रोगीको औषधी भक्षण करावे इसप्रकार औषध भक्षणमें दूसरा कालकहा ॥

## तृतीयकाल

उदानेकुपितेवातेस्वरभंगादिकारिणि ॥
ग्रासेग्रासांतरेदेयंभैषज्यंसांध्यभोजने ॥
प्राणेप्रदुष्टेसांध्यस्यभक्षस्यान्तेचदीयते॥
औषधंप्रायशोधीरैःकालोऽयंस्यात्तृतीयकः॥

अर्थ—कंठ संबंधी उदान वातके कोपहोनेसैं जो प्रगटहुएस्वरभंगादिरोग उनमें सायंकालमें भोजनके समय-ग्रासके साथ औषध देवे अथवा दोग्रासोंके बीच-

१ वातादि दोषोंको स्नेहादिक योगरूपसे पतले करना उसीप्रकार स्थूल मनुष्यको सहतपानी इत्यादिक देकर कृश करना ॥

में देय और हृदय स्थित प्राण पवनके कुपित होनेसे प्राय सायंकालके भोजनके अंतमें वैद्य औषधी देवे। इसप्रकार औषधिभक्षणका तीसरा कालकहा ॥

## चतुर्थकाल

मुहुर्मुहुश्चतृट्छर्दिहिक्काश्वासगरेषुच।
सान्नंचभेषजंदद्यादितिकालश्चतुर्थकः॥

अर्थ—प्यास-वमन-और हिचकी-श्वास-विषदोष येरोग होनेसे वारंवारअन्न-के साथ औषध भक्षण करावे-श्लोकमें जो चकारहै इस्से अन्न रहितभी भक्षण करे ऐसा जानना-यह औषध भक्षणका चतुर्थ कालकहा ॥

## पंचमकाल

ऊर्ध्वजत्रुविकारेषुलेखनेबृंहणेतथा॥
पाचनंशमनंदेयमनन्नंभेषजंनिशि॥
इतिपंचमकालःस्यात्प्रोक्तोभैषज्यकर्मणि॥

अर्थ—नाडके ऊपरके भागोके विकार (कर्ण-नेत्र-मुख-नासिका आदि रोगों) में तथा प्रवृद्धवातादिदोषोंके घटानेमें और अति क्षीण दोषोंके बढानेके वास्ते रात्रिमें पाचन रूप और शमनरूप औषध अन्नरहित भक्षणकरे इसप्रकार औषध भक्षणका पांचवाकालकहा ॥

## औषधिप्रतिनिधि

कदाचिद्द्रव्यमेकंवायोगेयन्ननलभ्यते।
तत्तद्गुणयुतंद्रव्यंपरिवर्त्तेनगृह्यते॥

अर्थ—कदाचित् किसी योगमें एक औषध न मिलेतो उसी उसीके समान गुणकारी दूसरी औषध तत् प्रयोगमें लेनी चाहिये॥

वज्राभावेतुवैक्रान्तंस्वर्णाऽभावेतुमाक्षिकम्।
हेममाक्षिकजंसत्वंमतंहेमसमंगुणैः॥

अर्थ—हीराके अभावमें वैक्रांत (कांसुला) लेवे- सुवर्णके अभावमें सुवर्ण माक्षिकले और जहां चांदीनही मिल सकतीहो वहां पर रूपामाखी लेवे॥

विमलामाक्षिकंज्ञेयंध्रुवंरजतवद्गुणैः।
मुक्ताऽभावेक्षिपेच्चूर्नंमुक्ताशुक्तिंचतद्गुणाम्॥

अर्थ—तथा माक्षिकका भेद विमला है उसको रूपेकी प्रतिनिधिमें लेवे-जहां

मोती न मिलता होतो उसकी एवजमें मोतीकी सीपडाले तो मोतीके तुल्यगुणकरे

अभावेऽभ्रकसत्वस्यकान्तलोहंप्रयोजयेत् ।
कान्ताभावेतीक्ष्णलोहमित्युक्तंरसदर्पणे ॥

अर्थ—जहां अभ्रकसत्व नमिले तहां कांतलोहकी भस्मलेवे, यदि कांतलोहकी भस्मभी न मिलेतो खेरीलोहकी वा गजवेललोहकी भस्म लेवे ऐसा रसदर्पण ग्रंथमें लिखाहै. ॥

चित्रकाभावतोदंतीक्षारःशिखिरिजोथवा ॥
अभावेधन्वयासस्यप्रक्षेप्तव्यादुरालभा ॥

अर्थ—चित्रकके अभावमें दंतीलेवे अथवा ओंगाका क्षारलेवे जवासेके अभावमें धमासालेना चाहिये ॥

यदिनस्याद्दारुनिशातदादेयानिशाबुधैः ॥
रसांजनस्याभावेतुसम्यक्दार्वीप्रयुज्यते ॥

अर्थ—यदि दारहलदीनमिले तो उसके पलटेमें हलदी ही डालनी और रसोत नमिले तो उसके पलटेमे दारहलदी लेनी चाहिये ॥

चविकागजपिप्पल्यौपिप्पलीमूलवत्स्मृते ।
अभावेसोमराज्यास्तुप्रपुंनाटफलंस्मृतम् ॥

अर्थ—पीपरामूलके अभावमें चव्य अथवा गजपीपर लेवे—और बावचीके अभावमें पवाडके बीजलेनें चाहिये ॥

पौष्कराभावतः कुष्ठंतथालांगल्यभावतः ।
स्थौणेयकस्यचाभावेभिषग्भिर्दीयतेगदे ॥

अर्थ—पुहकर मूलके कलिमारीके और ग्रंथिपर्णी इनके अभावमें वैद्य कुष्ठलेवे

जातीपुष्पंनयत्रास्तिलवंगंतत्रदीयते ।
अर्कपर्णादिपयसोह्यभावेतद्रसोमतः ॥

अर्थ—जहां जायफल न मिले उसके स्थानमें लौंगडाले—जहां आकके पत्तेका दूधकहा है यदि वहनमिले तो उसमें आकके पत्तोंका रस काममे लाना चाहिये॥

वकुलाभावतोदेयंकल्हारोत्पलपंकजं ।
नीलोत्पलस्याभावेतुकुमुदंदेयमिष्यते ॥

अर्थ—मौलसरी के अभावमें कल्हार ( लालकमल ) अथवा नीलकमल—

और नीलकमलके अभावमें—कुमुद ( रात्रिमें फुलनेवाला कमल ) लेवे ॥

अहिंस्रायाअभावेतुमानकंदः प्रकीर्तितः।
लक्ष्मणायाअभावेतुनीलकंठशिखामता ॥

अर्थ—अहिंस्रा ( थूहरकाभेद ) इसके अभावमें मानकंदलेना—और लक्ष्मणा रूखडी के नमिलनेपर मोरशिखा ( बूंटी ) वैद्यकोलेनी चाहिये ॥

तगरस्याप्यभावेतुकुष्टंदद्याद्भिषग्वरः।
मूर्वाभावेत्वचोग्राह्याजिंगिनीप्रभवाबुधैः ॥

अर्थ—तगरके अभावमें कूठ औषध लेवे—और मूर्वाऔषधके नमिलनेमें मजीठलेनी चाहिये ॥

भार्ग्यभावेतुतालीसंकंटकारिजटाथवा।
रुचकाभावतोदद्याल्लवणंपांशुपूर्वकम् ॥

अर्थ—भारंगीके अभावमें तालीसपत्र लेवे—अथवा कटेरीकी जडलेवे—और काले निमकके अभावमें खारी निमकलेना चाहिये ॥

सौराष्ट्र्यभावतोदेयास्फटिकातद्गुणाजनैः।
तालीसपत्रकाभावेस्वर्णतालीप्रशस्यते ॥

अर्थ—सोरठी माठीके अभावमें फिटकरी लेवे–और तालीसपत्रके अभावमें स्वर्णतालीस पत्र लेनाचाहिये ॥

अभावेमधुयष्ट्यास्तुधातकींतुप्रयोजयेत्।
अम्लवेतसकाभावेचुक्रंदातव्यमिष्यते ॥

अर्थ—मूलहटीके अभावमें धायके फूललेवे—जहां अमलवेत नमिले उसजगे चूकालेना चाहिये ॥

लवंगकुशुमंदद्यान्नखस्याभावतः पुमान्।
कस्तूर्यभावेकंकोलंक्षेपणीयंविदुर्बुधाः ॥

अर्थ—नख ( सुगंधद्रव्य ) के अभावमें लौंगलेनी—और कस्तूरीके अभावमें कंकोल लेना ऐसा बुद्धिमान् वैद्योंने कहा है ॥

द्राक्षायदिनलभ्येतप्रदेयंकाश्मरीफलम्।
तयोरभावेकुसुमंमधूकस्यमतंबुधैः ॥

अर्थ—जहां दाख न मिले उसजगे कंभारीके फललेने चाहिये, यदिदाख और कंभारीकेफल दोनों नमिले उसजगे महुआके फूललेने ॥

कंकोलस्याप्यभावेतुजातीपुष्पंप्रदीयते ।
सुगंधमुस्तकंदेयंकर्पूराभावतोवुधैः ॥

अर्थ—कंकोलके अभावमें—जावित्रीलेनी—जहांकपूर नामिलती हो वहांसुगंध मुस्तक अर्थात् नागर मोथा लेना वैद्योंने कहा है ॥

कचूराभावतोदेयंग्रंथिपर्णीविशेषतः ।
कुंकुमाभावतो दद्यात्कुसुंभकुसुमंनवम् ॥

अर्थ—कचूरके अभावमें ग्रंथिपर्णीलेवे जहांकेशर न मिलती होवे उसजगे नवीन कसूमका फूललेवे ॥

श्रीखंडचन्दनाभावेकर्पूरंदेयमिष्यते ।
अभावेत्वेतयोर्वैद्यः प्रक्षिपेद्रक्तचन्दनम् ॥

अर्थ—सपेदचंदनके अभावमें कपूर लेनी चाहिये और जहां चंदन और कपूर दोनों नामिले उसजगे लालचंदन लेना चाहिये ॥

रक्तचंदनकाभावेनवोशीरंविदुर्वुधाः ।
मुस्ताचातिविपाभावेशिवाभावेशिवामता ॥

अर्थ—लालचंदनके नमिलनेमें नवीन खसलेनी चाहिये अतीसके अभावमें मोथालेवे और छोटीहरडके अभावमें आमलेलेने चाहिये ॥

अभावेनागपुष्पस्यपद्मकेशरमिष्यते
मेदाजीवककाकोलीऋद्धिवृद्धेपिचासति
वरीविदार्यश्वगंधावाराहीश्वक्रमात्क्षिपेत् ॥

अर्थ—नागकेशरके अभावमें कमलकी केशर लेवे और मेदा, जीवक, काकोली, ऋद्धि वृद्धि, इनके अभावमें क्रमसे शतावर—विदारीकंद—असगंध और वाराही कंद ए चार औषध पृथक् २ लेवे ॥

वाराह्याश्चतथाभावेचर्मकारालुकोमत ॥ वाराहीकंदसं
ज्ञस्तुपश्चिमेगृष्टिसंज्ञकः ॥ वाराहीकंदएवान्यैश्चर्मका
रालुकोमत ॥ अनूपसंभवेदेशवाराहइवलोमवान् ॥

अर्थ—सपेद विदारी कदके अभावमें—वाराही कद लेवे इसको पछैया च-

मैकारालु औरग्रृष्टीभी कहते है यहकंदजलप्रायभूममें होता है और इसके ऊपर सूअरकेसें करडे २ वाल होते है ॥

भल्लातकासहत्वेतुरक्तचन्दनमिष्यते।
भल्लाताभावतश्चित्रंनलश्चेक्षोरभावतः ॥

अर्थ—भिलाएके अभावमें लालचंदन अथवा चित्रकलेवे और ईखके अभावमें नरसललेवे ॥

माक्षिकस्याप्यभावेतुप्रदद्यात्स्वर्णगैरिकम्।
सुवर्णमथवारौप्यंमृतंयत्रनलभ्यते ॥
तत्रलोहेनकर्माणिभिषक्कुर्याद्विचक्षणः।
कांताभावेतीक्ष्णलोहंयोजयेद्वैद्यसत्तमः ॥

अर्थ—सुवर्ण माक्षिकके अभावमें सुवर्णगेरूलेवे—और सुवर्ण तथा चांदी की भस्मके अभावमें लोहभस्मडालके कर्मकरे—और कांतलोहके अभावमें गजवेल लोहकी भस्मले ॥

मधुयत्रनविद्येततत्रजीर्णोगुडोमतः ॥ पुरातनगुडाभा
वेरौद्रेयामचतुष्टयं॥संशोष्यनूतनंग्राह्यंपुरातनगुणैषिणा॥

अर्थ—जहां सहत नमिले उसजगे पुराणा गुडलेना—जहांपुराणा गुडनमिलता हो वहां नएगुडको ४ प्रहर धूपमें सुखायके लेवे तो पुराने के समान गुणकरे ॥

क्षीराभावेभवेन्मौद्गोयूषोमासूरसंभवः।
सिताभावेचखंडंस्यात्शाल्यभावेचषाष्टिकः ॥

अर्थ—जहां दूधनमिलताहो वहां पर मूंगकायूपले अथवा मसूरका यूप लेवे मिश्रीके अभावमें खांडलेनी—और शाली चांवलोके अभावमें साठी चावललेने चाहिये ॥

नभवेद्दाडिमोयत्रवृक्षाम्लंतत्रदापयेत् ॥
सौराष्ट्र्यभावेचग्राह्यापंकस्यपर्पटी ॥

अर्थ—जहां अनारदाना नमिलता होय वहां तंतडीककी खटाई डाले और जहां फिटकरी नमिलती होय वहां पर कीचकी जमीहुई पपडीलेनी ॥

नतंतगरमूलंस्यादभावेसिंहलीजटा।

प्रयोगेयत्रलोहःस्यादभावेतन्मलंस्मृतम् ॥

अर्थ—छडके और तगरकी जडके अभावमें कटेरीकी जडलेवे-जहां प्रयोग में लोहलिखाहै यदि न मिले तो उस लोहकी कीटीलेवे ॥

सर्षपःशुक्लवर्णोयःसहिसिद्धार्थकोमतः ।
तत्रसिद्धार्थकाभावेसामान्यःसर्षपोमतः ॥

अर्थ—सपेदरंगकी सरसों को सिद्धार्थककहा है जहां यह सिद्धार्थक नमिले उसजगे सामान्यसरसो डालनी चाहिये ॥

अभावेप्रष्णपर्ण्याश्चसिंहपुच्छीविधीयते ।
कुंकुमस्याप्यभावेतुनिशाग्राह्याभिषग्वरैः ॥

अर्थ—प्रष्णपर्णीके अभावमें पिठवनलेनी चाहिये-केशरके अभावमें वैद्य हलदी योजनाकरे ॥

धान्यकाभावतोदद्यात्शतपुष्पांभिषग्वरः ॥
सासुद्रंसैंधवाभावेविडंवागृह्यतेबुधैः ॥

अर्थ—धनियेके अभावमें शोफलेवे-सामुद्र और सैंधेनिमकके अभावमें विड निमकलेना चाहिये ॥

पुष्पाभावेफलंचाममंविड्भेदेबिल्वतःफलम् ।
कर्पूरस्याप्यभावेऽपिसुगंधंमुस्तमिष्यते ॥

अर्थ—जहां जिसद्रव्यका पुष्पलिखा है उसके अभाव उसका कच्चाफललेवे उदरके रोगमें वेलकी गीरी ही डाले ॥

रास्नाभावेचवंदाकोजीराभावेचधान्यकम् ।
रसांजनस्यचाभावेदार्वीक्काथंप्रयोजयेत् ॥

अर्थ—रास्नाके अभावमें वंदाकलेवे-जीरेके अभावमें धनिया रसोतके अभावमें दारुहलकीका काढा लेके कार्य साधनकरे ॥

मेदाभावेश्वगंधास्यान्महामेदेतुसारिवा ।
जीवकर्षभकाभावेगडूचीचविदारिका ॥

अर्थ—मेदाके अभावमें असगंधलेवे. महामेदाके अभाव सारिवाले जीवक और ऋषभकके नमिलनेपर गिलोय-और विदारी कंद लेने चाहिये.

ऋद्ध्यभावेबलाग्राह्यावृद्ध्यभावेमहाबला ।

काकोलीयुगलाभावेनिक्षिपेच्चशतावरीम् ॥

अर्थ—ऋद्धिके अभावमें वलालेवे-वृद्धिके अभावमें महावला लेय दोनोकाकोलीके अभावमें शतावरीलेनी चाहिये ॥

देयोमृगमदाभावे पूतिकातद्गुणाबुधैः ॥
रोहीतकत्वचोऽभावेपिचुमर्दस्यगृह्यते ॥

अर्थ—कस्तूरीके अभावमें गंधमार्जार ( मुष्कविलाई ) लेनाचाहिये-रोहेडेकी छालके अभावमें नीमकी छाललेवे ॥

कापोतंसर्वमांसानां तुल्यंगुणकरंस्मृतम् ॥
मांसक्काथपरिप्राप्तौयूषोमौद्गः प्रदीयते ॥

अर्थ—सब मांसोंमें कबूतरका मांसतुल्य गुणकारी इसवास्ते यही देवे-और जहां मांसक्काथनमिले वहांपर मूंगकायूप देना चाहिये ॥

धेन्वाःप्रकटवत्सायाः क्षीरंकृत्स्नपयोगुणम् ॥
वेतसाम्लस्यचाभावेहरिमन्थाम्लमादिशेत् ॥

अर्थ—संपूर्णदुग्धके अभावमें-बछरेवाली गौकादूध लेना चाहिये—और अमवेतके अभावमें—चनाका खारलेना चाहिये. ॥

अभावेचंदनस्यापिमेलयेद्रक्तचंदनम् ।
तुगाभावेप्रदातव्यात्वक्क्षीरीतद्गुणाबुधैः ॥

अर्थ—सपेद चंदनके अभावमें लालचंदन लेवे—तवाखीरके अभावमें वंशलोचन लेनाचाहिये ॥

अभावेसतिपत्राणां रसादेर्भावनाविधौ ।
विषमुष्टि कषायेणषड्गुणाभावनाभवेत् ॥

अर्थ—जहां रसकी भावनालिखी है यदि उसजगे वो पत्ते नमिले तो कुचलेके काढेकी छःगुनी भावनादेनेसें पूर्ववत् गुणकरे ॥

फलमाममपुष्टंचत्यजेद्बिल्वादृतेसदा ।
द्राक्षाबिल्वाशिवादीनांफलंशुष्कंगुणोत्तरम् ॥

अर्थ—जितनेफलहैं उनमें बेलफलके सिवाय सबफल कचे और पुष्टि रहित त्याज्यहै—और सूखेफलभी त्याज्यहै परंतु—दाख—बेलगिरी—और आमले ये सूखे ही गुणकारी होतेहै. ॥

यत्रयद्द्रव्यमप्राप्तंभेषजेपरपूर्वतः ।
ग्राह्यंतद्गुणसाम्यात्तुनतत्रकापिदूषणम् ॥

अर्थ—जिस औषधके बनानेमें यदि एक औषध न मिलेतो वैद्यको उचितहै किउसके समान गुणकारी दूसरी औषध लेनेमें किसी प्रकारका दूषण नहींहै. ॥

अत्रप्रोक्तानिवस्तूनियानितेषुचतेषुच ।
योज्यमेकतराभावे परंवैद्येनजानता ॥

अर्थ—इसमें जो जो औषधादि कहीं है उनके नमिलनेपर बुद्धिवान् ज्ञाता वैद्य उक्त प्रमाण उसी २ की प्रतिनिधि ग्रहणकरे ॥

रसवीर्यविपाकाद्यैः समंद्रव्यंविचिंत्यच ।
युंज्यात्तद्विधमन्यच्चद्रव्याणांचरसादिवत् ॥

अर्थ—जो द्रव्य न मिले उसके रस वीर्य और विपाकके सदृश औषधी चितवन करके मिलावे–जैसें द्रव्योंमें रसादिविचारके मिलाए जाते है ॥

योगेयदप्रधानंस्यात्तस्यप्रतिनिधिर्मतः ।
यत्तुप्रधानंतस्यापिसदृशंनैवगृह्यते ॥

अर्थ—जो द्रव्य क्वाथ–चूर्ण–गुटी आदिमें मुख्य करके कही है [ जैसे योगराजगूगलमें गूगलमुख्यहै ) तो इस गूगलकी प्रतिनिधीनहीं लीनी जावेगी बाकी अप्रधान और २ औषधोंकी प्रतिनिधि लेनी चाहिये ॥

---

## अथातोरसविशेषविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः

अर्थ—अब मधुरादि रस विशेष विज्ञानीयाध्यायकी व्याख्या करते है तहां संपूर्ण रसोंका प्रथम कारण संभवदिखाते है । यह सुश्रुतकी अध्याय है ॥

आकाशपवनदहनतोयभूमिषुयथासंख्यमेकोत्तरवृद्धाःशब्दस्पर्शरूपरसगंधाः । तस्मादाप्योरसःपरस्परसंसर्गात्परस्परानुग्रहात् परस्परानुप्रवेशाच्चसर्वेषुसर्वेषांसान्निध्यमस्त्युत्कर्षापकर्षात्तुग्रहणम् ॥

अर्थ—आकाश–पवन–अग्नि–जल–और पृथ्वी इनमें क्रमसें एक २ वृद्धिके हिसाबसें शब्द–स्पर्श–रूप–रस–और गंध ५ रहते है[ जैसें शब्दगुण आकाश,शब्द

स्पर्श गुणवान् वायु,शब्द-स्पर्श-रूपगुणविशिष्ट अग्नि, शब्द-स्पर्श-रूप-रस गुणवान् जलहै, एवं शब्द-स्पर्श रूप-रस-गंधगुणवान् पृथ्वी है ।

इसी कारण रसहै सों जलका गुणहोनेसें आप्यकहलाताहै । परंतु यें संपूर्ण पंचभूत आपसमें परस्पर संयोगहोनेसें परस्पर एक दूसरेके सहायक होनेसे और परस्पर आपसमें एकात्मी भावहोनेसें सबभूतोमें सबभूतोकी सान्निध्यताहै [ अर्थात् जितने आकाशादि भूतहै ए पंचीकरणकी रीतिसें एकमेक हो रहे हैं ] परंतु वृद्धि और ह्रासके होनेसें ग्रहण करे जाते है. इन्हींके अंश सें पंचविधद्रव्यहै तहां आकाश अंश अधिक द्रव्यमें शब्दाधिक्य जानना, वाताधिक्यमें स्पर्शाधिक्य है-इसी प्रकार अन्य द्रव्योंमे जानो

सखल्वाप्योरसःशेषभूतसंसर्गाद्विदग्धःषोढाविभज्यते

अर्थ—वहीं आप्यरस अन्यभूत ( आकाश-अग्नि-पवन और पृथ्वी)के मिलापसें अप्रकटभी है परंतु कालकी सहायतासें पृथ्वी-आकाश-पवन-अग्नि इनके संसर्ग सें परिपाकको प्राप्तहो कर छ. प्रकारकाहो जाताहै ॥

तद्यथा- मधुरोऽम्लोलवणःकटुकस्तिक्तःकषायइति ॥

अर्थ—तहां मधुर ( मीठा ) अम्ल ( खट्टा ) लवण ( खारी ) कटुक ( चरपरा ) तिक्त ( कडुआ ) और कषायकहिये कषेला ए छः रसहैं ॥

तेचभूयःपरस्परसंसर्गात्त्रिषष्टिधाभिद्यंते ॥

अर्थ—वो छःरस अपसमें मिलकर ६३ भेदवाले होते है ए भेद आगे कहैंगे

तत्रभूम्यम्बुगुणबाहुल्यान्मधुरः। भूम्यग्निगुणबाहुल्या दम्लः। तोयाग्निगुणबाहुल्याल्लवणः। वाय्वग्निगुणबाहुल्यात्कटुकः । वाय्वाकाशगुणबाहुल्यात्तिक्तः। पृथिव्यनिलगुणबाहुल्यात्कषायइति ॥

अर्थ—तहां पृथ्वी—जल—गुण बाहुल्य मधुररसहै । पृथ्वी—अग्नि गुण बाहुल्य अम्ल रसहै । जल अग्नि गुण बाहुल्य लवण रसहै । वायु अग्निगुणबाहुल्य कटुक ( तीक्ष्ण ) रस है । वायुआकाश गुणबाहुल्य तिक्त ( कडुआ ) रस है । एवं पृथ्वी और पवनगुण बाहुल्य कषाय ( कसेला ) रसजानना ॥

तत्रमधुराम्ललवणावातघ्नाः ॥

मधुरतिक्तकषायाःपित्तघ्नाः ॥

कटुतिक्तकषायाःश्लेष्मघ्नाः ॥

अर्थ—तहां मधुर अम्ल और लवण ए तीन रसवादीके नाशक है। मधुर-तिक्त और कषाय ए तीन पित्तनाशक। एवं कटु तिक्त और कषायरस कफ नाशक जानने॥

तत्रवायुरात्मनैवात्मापित्तमाग्नेयंश्लेष्मासौम्यइति।
तएवरसाःस्वयोनिवर्द्धनाअन्ययोनिप्रशमनाश्च॥

अर्थ—तहां वायु-आत्मकर्केही अपनी आत्मा है-पित्त आग्नेय है अर्थात् इसकी अग्नि आत्मा है। और कफसौम्य है अर्थात् इस का शीतलता आत्मा है। येपूर्वोक्तछःहो रस अपनी योनिके ( जिस्सै जो प्रगट है ) बढानेवाले है और दुसरे कीयोनिको नाशकरते है

केचिदाहुरग्नीषोमीयत्वाज्जगतोरसाद्विविधाःसौम्या-
आग्नेयाश्च। तत्रमधुरतिक्तकषायाःसौम्याःकट्वम्लल-
वणाआग्नेयाः॥ मधुराम्ललवणाःस्निग्धागुरवश्च॥
कटुतिक्तकषायारूक्षालघवश्चासौम्याःशीताआग्नेयाश्चोष्णाः

अर्थ—कोई आचार्य असाकहते है कि जगत अग्नि और सोमीयत्वहोने सैं रस दोहीप्रकारके है जैसे—सौम्यरस और आग्नेयरस इनमेंभी मधुर-तिक्त-और कपेले एतीनरस सौम्य ( शीतल ) है। और कटु-अम्ल-औरलवण रसआग्नेय ( गरम ) है। तहां मधुर-अम्ल-और लवण एरस स्निग्ध और भारी है। कटु तिक्त और कषाय एतीनोरस रूखे और हलके है। इनमें सौम्यरस शीतल है और आग्नेय रस सब गरम है॥

तत्रशैत्यरौक्ष्यलाघववैशद्यवैष्टम्भ्यगुणलक्षणोवायुस्त
स्यसमानयोनिःकषायोरसःसोऽस्यशैत्यात्शैत्यंवर्द्ध-
यति रौक्ष्याद्रौक्ष्यंलाघवाल्लाघवं वैशद्याद्वैशद्यंवैष्ट
म्भ्याद्वैष्टम्भ्यमिति॥

अर्थ—तहां-शीतल-रूक्ष-हलका-विशद और विष्टंभ लक्षणवान् वायु उस की समान योनि कपेला रस है वहस्वयंशीतल होनेसैं वायुको बढाताहै रूक्षहोने सैं वायुमें रूक्षताको बढाता है उसीप्रकार हलकाहोने सैं हलके पनेको और विशद ( फैलने ) वाला होनेसैं इसवायुको फैलाता है, विष्टंभीगुणहोने कपेला रस इसवायुमें विष्टंभताको प्रगटकरे हैं-तात्पर्य ये है कि वायुके और कपेले रसके ( तुल्ययोनिके ) कारण जो कपेले रसमें गुण है वही वायुमें जानने॥

ओष्ण्यतैक्ष्ण्यरौक्ष्यलाघववैशद्यगुणलक्षणंपित्तं ॥ तस्यसमानयोनिःकटुकोरसःसोऽस्यौष्ण्यादौष्ण्यंवर्द्धयतितैक्ष्ण्यात्तैक्ष्ण्यंरौक्ष्याद्रौक्ष्यंलाघवाल्लाघवंवैशद्याद्वैशद्यमिति ।

अर्थ—उष्ण–तीक्ष्ण–रूक्ष–हलका–और विशदगुण इत्यादि लक्षणवाला पित्तहै उसके समानयोनि (तुल्यगुणवाला) कटुक ( चरपरा ) रसहै वो इसीपित्तको उष्णताके कारण गरमी–तीक्ष्णताके कारण तीखापना–रूक्षताके कारण रूखापना, हलकेके कारण हलकापना विशदताके कारण वैशद्यगुणोको वढाता है–कटुरस सेवनसें इन गुणो की वृद्धिहोती है॥

माधुर्यस्नेहगौरवशैत्यपैच्छिल्यगुणलक्षणःश्लेष्मातस्यसमानयोनिर्मधुरोरसःसोऽस्यमाधुर्यान्माधुर्यंवर्द्धयति ॥ स्नेहात्स्नेहं, गौरवाद्गौरवं, शैत्याच्छैत्यं,पैच्छिल्यात्पैच्छिल्यमिति ॥ तस्यपुनरन्ययोनिःकटुकोरसश्लेष्मणःप्रत्यनीकत्वाकटुत्वान्माधुर्यमभिभवतिरौक्ष्यात्स्नेहंलाघवाद्गौरवमौष्ण्याच्छैत्यंवैशद्यात्पैच्छिल्यमिति ॥ तदेतन्निदर्शनमात्रमुक्तम् ॥

अर्थ—मधुर–स्नेह (चिकनाई) गौरव (भारीपना) शीतल–पैच्छिल्य (लहसदार) इत्यादि लक्षणवाला कफ है उसकी समानयोनि (तुल्यगुणवाला )मधुर ( मीठा) रस है वो इस कफको मधुरके कारण माधुर्यता चिकनेके कारण चिकनाई, भारिहोनेके कारण भारीपना, शीतलताके कारण शीतलत्व, और लहसदार होनेके कारण कफमैं लहसदारपना वढावे है । अवकहते है कि उस कफकी अन्ययोनी ( विपरीतगुणवाला ) कटुक ( चरपरा ) रस है वहकफके विरुद्ध होनेसें और चरपरा होनेसै मिठासको नाशकर्त्ता है, रूक्षहोनेसैं चिकनाईको नाशकर्ता है, हलकेपनेसैं कफके भारीपनेको, उष्णहोनेसैं कफकी शीतलताको, और विशदगुणवान् होनेसैं इसकफके लहसदार गुणको हरणकरे है । यहकेवल एकनिदर्शनमात्र ( दृष्टांतमात्र ) कहा है इसी प्रकार बुद्धिमान् वैद्य सवरसोंमें उसके समानरस को पुष्टकर्ता और विपरीत रसको उसका नाशकर्ता जाने ॥

रसलक्षणमतऊर्ध्वंवक्ष्यामः ॥

अर्थ—अव इसके उपरांतरसोंके लक्षण कहते है ॥

तत्रयःपरितोषमुत्पादयतिप्रल्हादयतितर्पयतिजीवय
तिमुखावलेपंजनयति श्लेष्माणंचाभिवर्द्धयति स- मधुरः।

अर्थ—तहां-जो संतोषको प्रगटकरे-सुखवढावे-तृप्तीकरे-प्राणोंकोधारणकरे मुखमें मैलको प्रगटकरे-और कफकोवढावे उसको मधुर ( मीठा ) रसजानना अर्थात् इतने गुण मिष्टरस कर्त्ता है. ॥

योदन्तहर्षमुत्पादयतिमुखस्रावंजनयतिश्रद्धाश्चोत्पा
दयति सोऽम्लः ॥

अर्थ—जो दंतहर्ष ( दांतोकाखट्टापना ) प्रगटकरे-मुखसें पानी गिरावे और श्रद्धाप्रगटकरे उसको अम्लरस जानना । अर्थात् अम्लरसमें इतने गुणहै ॥

योभक्तरुचिमुत्पादयाति कफप्रसेकंजनयतिमार्दवंचा
पादयति सलवणः ॥

अर्थ—जोभोजनमें रुचिको प्रगटकरे-मुखसें कफके स्रावको प्रगटकरे और नम्रताको प्रगटकरे उसको लवण रस जानना । अर्थात् लवणरसमे इतने गुणहै।

योजिन्हाग्रंबाधतेउद्वेगंजनयतिशिरोगृह्णितिना
सिकांचस्रावयतिसकटुकः ॥

अर्थ—जो जिन्हाके अग्रभागमें बाधाकरे अर्थात् बुरालगे-तथा उद्वेगको प्रगटकरे-तथा उद्वेगके कारण मस्तकपकडे-और नाकसें पानीका स्रावकरे उस कोकटुकरस ( चरपरारस ) जानना ॥

योगलेचोषमुत्पादयतिमुखवैशद्यंजनयतिभक्त
रुचिंचापादयतिहर्षंच स तिक्तः ॥

अर्थ—जो गलेका आकर्षणकरे अर्थात् खींचे-मुखमें विशव्दता प्रगटकरे भोजनमें रुचि बढावे और जिस्केखानेसैं रोमांचखडे हो वो तिक्तरस ( कटु आ-रस ) जानना ॥

योवक्त्रंपरिशोपयतिजिन्हांस्तंभयतिकंठंबध्नाति
हृदयंकर्पयाति पीडयतिच सकपायः ॥

अर्थ—जो खानेसैं मुखकोमुखावे-जीभका स्तंभन ( जकडीसी ) करदेवे-कंठ-बांधे हृदयका आकर्पणकरे और पीडाकरै उसको कपाय ( कषेला ) रस जानना एरसोंके लक्षणकहै ॥

## रसगुणानतऊर्ध्वंवक्ष्यामः

अर्थ—अब इसके उपरांत रसोंके गुणोंको वर्णन करैंगे—

तत्रमधुरोरसोरसरक्तमांसमेदोऽस्थिमज्जौजः शुक्रस्तन्यवर्द्धनश्चक्षुष्यः केश्योवर्ण्योबलकृत्संधानः शोणितरसप्रसादनो बालवृद्धक्षतक्षीणहितः षट्पदपिपीलिकानामिष्टतमस्तृष्णामूर्च्छादाहप्रशमनः षडिन्द्रियप्रसादनः कृमिकफकरश्चेतिसएवंगुणोऽप्येकएवात्यर्थमासेव्यमानः कासश्वासालसकवमथुवदनमाधुर्यस्वरोपघातकृमिगलगंडानापादयति तथार्बुदश्लीपदवस्तिगुदोपलेपाभिस्यन्दप्रभृतीन्जनयति ॥

अर्थ—तहां मधुर ( मीठा ) रस, रस-रुधिर-मांस-मेदा-हड्डी-मज्जा-ओज शुक्र और स्त्रीके दूध इनको बढाताहै तथा नेत्रोंको परम हितकारी है. बालोंको बढाताहै-वर्णको उजलाकर्त्ता है. बलकारी टूटे हाडको जोडता है-रुधिर-रसको स्वच्छ कर्त्ता है बालक-वृद्ध—और क्षतक्षीण ( घावोंसें दुर्बल ) इनको हितकारी है मक्खी-चैंटी-इनको प्रियहै-ये प्यास-मूर्च्छा-और दाह इनको नष्टकर्त्ता है-तथा मनको प्रसन्न करेहै. एवं कफ और कृमिरोगको प्रगटकर्त्ता है यही मधुर रसऐसे गुणवालाभी है-परंतु यदि केवल इसी मिष्टरसका अत्यंत सेवनकरेतो श्वास-खांसी-अलसक-वमन-मुखका मीठा रहना-स्वरभंग ( गलेका बैठजाना ) कृमिरोग-गलगंड-आदि अनेक रोगोंको प्रगटकरे है तथा अर्बुद-श्लीपद-बस्ती-गुदाका उपलेप और अभिष्यंदी आदि रोगोंको उत्पन्न करताहै. ॥

अम्लोजरणः पाचनः पवनानिग्रहणोऽनुलोमनः कोष्ठविदाहीबहिःशीतः क्लेदनः प्रायशोहृद्यश्चेति सएवंगुणोप्येकएवात्यर्थमुपसेव्यमानो दन्तहर्षनयनसंमीलनरोमसंवेजनकफविलयनशरीरशैथिल्यान्यापादयति तथाक्षताभिहतदग्धदष्टभग्नशूलरुग्णप्रच्युतावमूत्रितविसर्पितच्छिन्नभिन्नविद्धोत्पिष्टादीनिपाचयत्यग्नेयस्वभावात् परिदहति कंठमुरो हृदयञ्चेति ॥

अर्थ—अम्ल ( खट्टा ) रस आहारको जरानेवाला-पाचक वादीका नाशक-सूजन आदिका अनुलोम कर्त्ता ( चढाने वाला ) कोष्टमें दाहकर्त्ता-बाहर शीतलकर्त्ता क्लेदन और प्राय हृदयको प्रिय है. एसा गुणवालाभी है परंतु केवल खट्टे रसकेही सेवन करनेसें दाँतोंका कुदहोना वा खट्टे होना. नेत्रोंका मुदना-रोमांचोंका खडा होना-कफविलीन कर्त्ता-शरीरको शिथिलकरे है तथा क्षताभिहत ( घावसें पीडित ) अग्निसें फुका-सर्पादिकसें काटा-चोटलगा सूजन-हड्डीका टेढाहोना तथास्थानसें हड्डीका हटना-जहरीजानवरकामूत्रलगना-तथाजहरी जानवरका स्पर्श होना-छिन्न भिन्न-विद्ध-उत्पिष्टादि भग्नरोग इनसबको अम्लरस आग्नेय स्वभावहोनेसें पाचनकर्त्ता है और इसी कारणसे कंठछाती और हृदयमें दाहकर्त्ता है ए लक्षण अम्लरसके कहे ॥

लवणः संशोधनः पाचनविश्लेषणः क्लेदनः शैथिल्यकृदुष्णः सर्वरसप्रत्यनीकोमार्गविशोधनः सर्वशरीरावयवमार्द्दवकरश्चेति सएवंगुणोऽप्येक एवात्यर्थमासेव्यमानो गात्रकंडूकोठशोफवैवर्ण्यपुंस्त्वोपघातेन्द्रियोपतापान् तथामुखाक्षिपाकंरक्तपित्तवातशोणिताम्लीकाप्रभृतीनापादयति ॥

अर्थ—अब लवणरसके गुणकर्म कहते है। तहाँ लवणरस वमनविरेचन द्वारा व्रणका शोधनकरे है पाचनहै. प्रत्येक अवयवोको न्यारे २ करे है-आर्द्र और शिथिलकरे है. तथागरमहै. सर्वरसमात्रकाविरोधी है मूत्र-नाडी-व्रणादिकके मार्गोंका शुद्धिकर्त्ता है शरीरके सर्व अवयवोंका नम्रकरने वालाहै । यदि केवल निमकहीनिमक सेवनकरेतो देहमें खुजली-कोठ ( चकते ) सूजन-देहका विवर्ण-और पुरुषार्थ ( शुक्र ) का क्षयकरे है. तथा नेत्र आदि इन्द्रियोंका घातकहै. तथा मुखपाक नेत्र पाक. रक्त-और खट्टी डकार आदि रोगोंको करे है. ॥

कटुकोदीपनः पाचनोरोचनः शोधनः स्थौल्यालस्यकफकृमिविषकुष्ठकंडूपशमनः संधिबंधविच्छेदनोऽवसादनः स्तन्यशुक्रमेदसामुपहन्ताचेति सएवंगुणोऽप्येकएवात्यर्थमुपसेव्यमानोभ्रममदगलताल्वोष्ठशोषगात्रसंतापबलविघातकम्पतोदभेदकृत्करचरणपार्श्वपृष्ठप्रभृतिषुचवातशूलानापादयति

अर्थ—अब चरपरे रसकी प्रकृति और कर्मदिखाते है. कटुक ( चरपरा ) र-

स दीपन-पाचन-रोचन-शोधनहै. स्थूलता आलस्य-कफ-कृमि-विष-कुष्ट खुजली इनको नाशकरे। संधिबंधनको खोलनेवाला-अनुत्साहकर्ता-स्तन्य ( स्तनसंबंधीदूध ) शुक्र मेदइनको नष्टकरे है एसाभी है परंतु यदि केवल इसी रसकाअत्यंत सेवनकरेतो.भ्रमकरे मदकरे गला-तालुए-होठ-इनकाशोषकरे-देहमें संताप-वलको नष्टकरे कंप-सुईकीसी चभक-तथातोडने कीसीपीडा-तथा हाथ-पैर-दोनो बगल-पीठ इत्यादि अंगमें वात शूलोंको प्रगटकरेहै ॥

तिक्तश्छेदनोरोचनोदीपनः शोधनः कंडूकोठतृष्णामूर्च्छाज्वरप्रशमनः स्तन्यशोधनोविण्मूत्रक्लेदमेदोवसापूयोपशोषणश्चेतिसएवंगुणोऽप्येकएवात्यर्थमुपसेव्यमानोगात्रमन्यास्तंभाक्षेपकादितःशिरः शूलभ्रमतोदभेदच्छेदास्यवैरस्यान्यापादयति ॥

अर्थ—अब कडुएरस की प्रकृति और कर्म दिखाते है-कडुआरस छेदन रोचन ( अन्यवस्तुओंका है किंतुस्वयंरोचननहीं है ) दीपन-शोधन है तथा खुजली-चकत्ते-प्यास-मूर्छा और ज्वर इनको नाशकर्त्ता है। स्त्रीकेस्तनसंबंधी दूधका शोधनकरे मलमूत्र-क्लेद-मेद-वसा-पूय ( राध ) इन इनको शोषणकर्ता है। इत्यादिगुणविशिष्टभी है परंतु यदिकेवलयही रसअत्यंत सेवनकराजायतो देहस्तंभ और मन्यास्तंभ-तथा आक्षेपकसे आदिले मस्तकशूल-भ्रम-चभका-छेदनेकीसी पीडा और मुखमें विरसता इत्यादि रोगोंकोकरे है ॥

कषायःसंग्राहकोरोपणः स्तंभनशोधनोलेखनः शोषणःपीडनः क्लेदोपशोषणश्चेतिसएवंगुणोऽप्येकएवात्यर्थमुपसेव्यमानोहृत्पीडास्यशोषोदराध्मानवाक्यग्रहमन्यास्तंभगात्रस्फुरणचुमचुमायनाकुंचनाक्षेपणप्रभृतीन्जनयति ॥

अर्थ—अब कषायरसके गुण-कर्म दिखाते हैं-कषेलारस संग्राही व्रणको रोपणकर्ता है देहको स्तंभनकारी है-अथवा मृदुको दृढकरे है-व्रणका शोधनकारी है. व्रणाच्छन्न मांसकालेखनकारी है. द्रवधातुका शोषणकर्त्ता है-अथवा व्रणप्रमेहकाशोषणकर्त्ता है. तथा व्रणका वा हृदयकापीडनकर्त्ता और क्लेदका शोषणकरता है. इत्यादि गुणवालाभी है परंतु केवल इसहीरसका अत्यंतसेवनकरेतो हृदयपीडा मुखकासूखना-उदररोग-अफरा-वाणीका रुकना-मन्यास्तंभ-अंगोंका फड़कना-रा-

ईलगानेके समान त्वचामें चुमचुमपीडाहो. देहसंकोच-देहका कांपना प्रभृतिके कहने अन्यभीवातके विकार अर्दित आदिहोवे ॥

अतःसर्वेषामेवद्रव्याण्युपदेक्ष्यामः

तद्यथा। कांकोल्यादिः क्षीरघृतवसामज्जाशालिषष्टि-
कयवगोधूममाषशृंगाटककसेरुकत्रपुसैर्वारुककर्कारु-
कालांबुकालिंदकतकगिलोड्यपियालपुष्करबीज-
काश्मर्यमधुकद्राक्षाखर्जूरराजादनतालनालिकेरेक्षु-
विकारबलातिबलात्मगुप्ताविदारीपयस्यागोक्षुरक-
क्षीरमोरटमधूलिकाकुष्मांडप्रभृतीनिसमासेन मधुरोवर्गः।

अर्थ—अब संपूर्ण रसोंकी द्रव्योंको कहते है-तहां प्रथम मधुरवर्ग कहतेहै-जैसें कांकोल्यादिगण-दूध-घी-वसा-मज्जा शालि और सांठी चावल-जौ-गैहू-उडद-सिंघाडे-कसेरू-खीरा-आर्या-ककडी-घीया-तरबूज-कतकफल-गिलोडच (गिल्लोठी) चिरोजी-कमलगट्टा-कंभारी-महुआ-दाख-खजूर ( छुहारा ) ,खिरनी-तालफल-गिरी-ईखके विकारमात्र-बला-अतिबला-तालमखाने-विदारीकंद-क्षीरकाकोली-गोखरू-दूधका मोरट ( छाछकाभेद ) मधूलिका और पेठा इनसें आदिले औरभी यह मधुरवर्ग संक्षेपसें कहाहै-

अम्लवर्गः

दाडिमामलकमातुलुंगाम्रातककपित्थकरमर्दबदरको-
लप्राचीनामलकतिंतिडीककोशाम्रभव्यपारावतवेत्र-
फललकुचाम्लवेतसदन्तशठदधितक्रसुराशुक्तसौवी-
रकतुषोदकधान्याम्लप्रभृतीनि समासेनाम्लोवर्गः ॥

अर्थ—अनार—आमले—बिजोरा—अंबाडे—कैथ—करोदा—बेर—बडाबेर—पानी आवला—तंतडीक—लाल वनकाआंब-कमरख—फालसा—बेतकाफल—बडहर—अमलवेती-जभीरी-दही-छाछ-दारू सिरका-गेहूंकीकांजी-तुषोदक ( जौंकीकांजी ) धान्याम्ल-इत्यादि संक्षेपसें यह अम्लवर्ग कहा ॥

लवणवर्गः

सैंधवसौवर्चलविडपाक्यरोमकसामुद्रकपक्तिमयवक्षा-
रोषप्रसूतसुवर्चिकाप्रभृतीनिसमासेनलवणोवर्गः ॥

अर्थ—सैंधानिमक-कालानिमक-विड-खारी-साम्हर-समुद्रकानिमक-फुला-निमक-जवाखार-रेहकानिमक-सज्जी-वा सोरा इत्यादिक यह संक्षेपसें लवण वर्गकहाहै ॥

## कटुकवर्गः

पिप्पल्यादिः सुरसादिःशिग्रुमधुशिग्रुमूलकलशुनसुमुखशीतशिवकुष्ठदेवदारुहरेणुकावल्गुजफलचंडागुग्गुलुमुस्तलांगलकीशुकनाशापीलुप्रभृतीनि सालसारादिश्च प्रायशः कटुकोवर्गः ॥

अर्थ—पिप्पल्यादिगण. सुरसादिगण-सहजना-सहत-सहजनेकीजड-लहसन-वैजयंती-तुलसी-कपूर-कूठ-देवदारु-हरेणु-बावची-अजमोदकेआकारसु गंधद्रव्य-गूगल-नागरमोथा-कलियारी-टेटू-पीलू-औरसालसारादिगण इत्यादियहसवसंक्षेपसें कटुक वर्ग है ॥

## तिक्तवर्गः

आरग्वधादिगुडूच्यादिर्मण्डूकपर्णीवेत्रकरीरहरिद्राद्वयेन्द्रयववरुणस्वादुकंटकसप्तपर्णबृहतीद्वयशंखिनीद्रवंतीत्रिवृतकृतवेधनकर्कोटककारवेल्लकवार्त्ताककरीरकरवीरसुमनःशंखपुष्प्यपामार्गत्रायमाणाऽशोकरोहिणीवैजयन्तीसुवर्चलापुनर्नवावृश्चिकालीज्योतिष्मतीप्रभृतीनिसमासेनतिक्तोवर्गः ॥

अर्थ—आरग्वधादिगण-गुडुच्यादिगण-मंडूकपर्णी ( ब्राह्मीकाभेद ) वेत करीरके अंकुर, हरदी-दारुहलदी-इन्द्रजो-वरना-विकंकत-सतोना छोटीकटेरी वडी कटेरी यवतिक्ता दंती-निसोथ-कडुईतोरई-ककोडा-करेला-वैंगन-करीर-चमेली-संखपुष्पी-ओंगा-त्रायमाण-कुटकी-अरनी-हुलहुल-सोंठ-वृश्चिकपत्री-मालकागनी इत्यादि सववस्तु संक्षेपमें तिक्तवर्ग है ॥

## कषायवर्गः

न्यग्रोधादिरंवष्ठादिःप्रियंग्वादि रोध्रादिस्त्रिफलाशल्लककीजंवाम्रवकुलतिन्दुक फलानि कतकशाकपापा-

**णभेदकवनस्पतिफलानि सालसारादिश्चप्रायसः कुर वककोविदारकजीवंतीचिल्लीपालक्यासुनिषण्णकप्र- भृतीनि निवारकादयोमुद्गादयश्चसमासेनकषायोवर्गः ॥**

अर्थ—न्यग्रोधादिगण–अंबष्टादिगण–प्रियंग्वादिगण–रोध्रादिगण–त्रिफला (हरड–बहेडा–आमला )सालवृक्ष–जामुन–आम्र– मौलसिरी–तेंदूकेफल–निर्मली– खरशाक– पाषानभेद–वडआदिवृक्षोंकेफल– सालसारादिगण–कुरबक–कोविदार ( कचनारकाभेद ) जीवंतीकाशाक-चिल्ली ( खेतकावथुआ ) पालक–चौपतिया आदिसाग—और समापसाई आदि तथा मूंगआदि ए संक्षेपसैं कषायवर्ग है ॥

**तत्रैषांरसानांसंयोगास्त्रिषष्टिर्भवन्तितद्यथा । पंचद- शद्विका विंशतिस्त्रिकाः पंचदशचतुष्काःषट्पंचकाए कशःषड्रसाएकःषट्कइतितेषांमन्यत्रप्रयोजनानिवक्ष्यामः**

अर्थ—पूर्वोक्त रसोंके संयोगहोने सैं ६३ भेदहोते है जैसे दोदोरसके मिलापसैं १५ तीनके मिलापसै २० चार २ केमिलापसैं १५ पांचपांचके मिलापसैं ६ छःरसोंके मिलापसे १ भेद और एक २ पृथक् होनेसे ६ भेद ऐसें कुलजोडनेसैं ६३ भेद होते है इनका प्रयोजन अन्यत्रवर्णनकरेंगे ॥

इनके भेदपद्यमें लिखते है

पद्येनच सुखस्मृत्यै रसभेदान् शृणुष्वमे । मधुरोम्लेन पटुनातिक्तेन कटुकेनच ॥ १ ॥ कषायेण पृथक् सार्धमम्लःसुलवणेनच । तिक्तेनकटुना सार्धं कषायेणपृथक् पृथक् ॥ २ ॥ पटुस्तिक्तेन कटुनाकषायेण पृथक् । तिक्तस्तुकटुनासार्धं कषायेण पृथक् पृथक् ॥३॥कटुकस्तु कषायेण द्विसंयोगे इतिस्मृताः। दशपंचच भेदास्तुसंख्याता विंशति स्त्रिके ॥४॥ मधुराम्लोतु पटुना तिक्तेन कटुना तथा । कषायेण तथा सार्द्धं तथा स्वादुपटू पृथक् ॥ ५ ॥ तिक्तेन कटुकेनापि कषायेण तथास ह । स्वादुतिक्तौतु कटुनाकषायेण पृथक् सह ॥ ६ ॥ स्वादूषणौ कषायेण स्वादोरेवंदश त्रिके । भेदास्त्वम्ललवणौ तिक्तेन कटुना पृथक् ॥७॥ कषायेण तथासार्धमम्लतिक्तौ पृथकसह । कटुकेनकषायेण तथाम्लकटुकौ सह ॥ ८ ॥ कषायेणेतिषट् प्रोक्ता भेदा अम्लस्यतुत्रिके। पटुतिक्तौ तु कटुना कषायेण पृथक्सह ॥ ९ ॥ पटूषणोकषायेण भेदाइति पटोस्त्रयः॥तिक्तोषणौ कषायेण तिक्तस्यैवंसकृत्स्मृतः॥१०॥ त्रिकंभेदाइतिप्रोक्ता चतुष्के दशपंचच । स्वाद्वम्ल लवणा सार्द्धं तिक्तेन कटुकेनच ॥ ११ ॥ पृथक्कषायेण तथा मधुराम्लौ सतिक्तकौ । कटुकेनतुसंपृक्तो कषायेणपृथक्तथा ॥ १२ ॥ स्वाद्वम्लकटुकाः सार्द्धंकषायेणेति पट्स्मृताः । सप्तमधारमधु-

रो लवणोषणतिक्तकैः ॥ १३ ॥ भेदोष्टमोमतः स्वादुकटुतिक्तकषायकैः । नवमस्तत्र मधुरः षडूषणकषायकैः ॥ १४ ॥ दशमोऽत्रभवेत्स्वादुतिक्तोषणकषायकैः । दशभेदा भवंत्येवंमधुरेणचतुष्कके ॥ १५ ॥ कटुतिक्ताम्ललवणै र्भेदएवश्चतुष्के । द्वितीयस्त्वम्ल लवण कषायकटुकैःस्मृतः ॥ १६ ॥ तृतीयोऽत्रभवेदम्लकटुतिक्तकषायकैः । चतुर्थोत्रभवेदम्लातिक्तोषणकषायकैः ॥ १ ॥ ७ एवमम्लेनभेदास्युश्चत्वारोत्रतुष्कके । षड्नैकोत्रलवणतिक्तोषणकषायकैः ॥ १८ ॥ एवंपंचदशख्याताश्चतुष्करससंख्यया । षड्भेदान् पंचके माहुस्तान्वक्ष्यामि विभागशः । ॥ १९ ॥ एकोभेदोम्ललवण तिक्तोषणकषायकैः । द्वितीयः स्वादुलवण तिक्तोषणकषायकैः ॥ २० ॥ तृतीयस्त्वम्लमधुरातिक्तोषणकषायकैः । चतुर्थस्त्वम्लमधुरषडूषणकषायकैः ॥ २१ ॥ पंचमस्त्वम्लमधुरपटुतिक्तकषायकैः । षष्टोभेदोम्लमधुरलवणोषणातिक्तकैः ॥ २२ ॥ षड्भेदा इतिनिर्दिष्टाः पंचकेप्रविभागशः । भेदःस्वाद्वम्ललवणतिक्तोषणकषायकैः ॥ २३ ॥ एकएवषड्रसेन पृथक्त्वेनतुषट्स्मृताः । स्वादुरम्लोऽथलवणतिक्तकश्चकटुस्तथा ॥ २६ ॥ कषायइतिभेदाःस्युः सर्वतोऽत्रत्रिषष्टिधा । क्षीरंसुराविडंनिंवश्चव्यापश्चं रसाश्रयम् ॥ २९ ॥ द्रव्यंस्वादुरसादीनांषण्णांविद्धियथाक्रमम् । द्रव्यंद्रव्यांतरेणैवयोजयेद्विरसादिषु ॥ २६ ॥ धात्रीफलं शर्करयालवणेनार्द्रकंतथा । एवमादीनि द्रव्याणियोजयेद्भिषगुत्तमः । ॥ २७ ॥ कानिचिद्विरसादीनिद्रव्याणिस्युः स्वभावतः । यथैण षड्रस. कृष्णो यथापंचरसा भया ॥ २८ ॥ मद्यंपंचरसंयद्वात्तिक्तोयद्यचतूरसः । एरंडतैलं त्रिरसंमाक्षिकंद्विरसंयथा ॥ २९॥ घृतमेकंस्वादुरसंमधुरादिविभागतः ॥ दिङ्मात्रादुदितादेषंशेषमूह्यमनीषिणा ॥ ३० ॥

## उदाहरण

| एकरसकेभेद | दोरसकेभेद | दोरसकेभेद |
|---|---|---|
| १ स्वादु | १ मधुर–अम्ल | ८ अम्ल–कटुक |
| २ अम्ल | २ मधुर–लवण | ९ अम्ल–कषाय |
| ३ लवण | ३ मधुर–तिक्त | १० लवण–तिक्त |
| ४ कटु | ४ मधुर–कटुक | ११ लवण–कटुक |
| ५ तिक्त | ५ मधुर–कषाय | १२ लवण–कषाय |
| ६ कषाय | ६ अम्ल–लवण | १३ तिक्त–कटुक |
| | ७ अम्ल–तिक्त | १४ तिक्त–कषाय |
| | | १५ कटु–कषाय |

## तीनरसकेभेद

| | |
|---|---|
| १ मधुर-अम्ल-लवण | ११ अम्ल-लवण-तिक्त |
| २ मधुर-अम्ल-तिक्त | १२ अम्ल-लवण-कटुक |
| ३ मधुर-अम्ल-कटुक | १३ अम्ल-लवण-कषाय |
| ४ मधुर-अम्ल-कषाय | १४ अम्ल-तिक्त-कटुक |
| ५ मधुर-लवण-तिक्त | १५ अम्ल-तिक्त-कषाय |
| ६ मधुर-लवण-कटुक | १६ अम्ल-कटु-कषाय |
| ७ मधुर-लवण-कषाय | १७ लवण-तिक्त-कटुक |
| ८ मधुर-तिक्त-कटुक | १८ लवण-तिक्त-कषाय |
| ९ मधुर-तिक्त-कषाय | १९ लवण-कटु-कषाय |
| १० मधुर-कटु-कषाय | २० तिक्त-कटु-कषाय |

## चाररसके भेद.

| | |
|---|---|
| १ मधुर-अम्ल-लवण-तिक्त | ८ मधुर-लवण-तिक्त-कषाय |
| २ मधुर-अम्ल-लवण-कटुक | ९ मधुर-लवण-कटु-कषाय |
| ३ मधुर-अम्ल-लवण-कषाय | १० मधुर-तिक्त-कटु-कषाय |
| ४ मधुर-अम्ल-तिक्त-कटुक | ११ अम्ल-लवण-तिक्त-कटुक |
| ५ मधुर-अम्ल-तिक्त-कषाय | १२ अम्ल-लवण-तिक्त-कषाय |
| ६ मधुर-अम्ल-कटु-कषाय | १३ अम्ल-लवण-कटु-कषाय |
| ७ मधुर-लवण-तिक्त-कटुक | १४ अम्ल-तिक्त-कटु-कषाय |
| | १५ लवण-तिक्त-कटु-कषाय |

## पांचरसोंकेभेद

| | |
|---|---|
| १ मधुर-लवण-तिक्त-कटुक-कषाय | ४ मधुर-अम्ल-लवण-तिक्त-कषाय |
| २ मधुर-अम्ल-तिक्त-कटु-कषाय | ५ मधुर-अम्ल-लवण-तिक्त-कटुक |
| ३ मधुर-अम्ल-लवण-कटु-कषाय | ६ अम्ल-लवण-तिक्त-कटु-कषाय |

## छःरसका एकहीभेद है

१ मधुर-अम्ल-लवण-कटु-तिक्त-कषाय.

घीमें केवल मिष्टरसरहे है-सहतमें दोरसरहते है-अंडकेतेलमें १ रसहै-तिलमें-

चाररस है-हरड और मद्यमें पांचरस है-तथा काले हरिणकेमांसमें छःरसरहतेहै-मिष्टरस दूधमें-अम्लरसदारूमें-निमकमें लवणरस-नीममें कडुआरस-चव्यमें चरपरा-और पद्ममें कपेलारसरहता है.

जग्धाःषडधिगच्छन्तिबलिनोवशतांरसाः ॥
यथाप्रकुपितादोषावशंयांतिबलीयसः ॥

अर्थ—भोजनकरेहु एछओंरसमेंजो बलवान् होताहै उसीके वशीभूतहोते है अर्थात् उसीकासा फळदेतेहै-जैसैकुपित वातादिदोषोंमें जो दोष बलवान् होताहै उसीके अनुगामी अन्यदोष होजातेहै अथवा अभ्यासकरेहुए एक २ रसबली-पुरुषके आधीन होते है अर्थात् उसको अवगुणनही करते जैसें बलीदोष-

---

मधुरादिकोंकेअन्यविशेषगुणतहांमधुररसकेगुण

मधुरंश्लेष्मलंसर्वमृतेशालेःपुरातनात्।
मुद्गाद्गोधूमतःक्षौद्रात्सितायाजांगलामिषात् ॥

अर्थ—मधुर पदार्थमात्र सब कफकारी होतेहै. परंतु पुराने शाली चावल-मूंग-गेहू-सहत-खांड-और जंगली जीवोंका मांस ये पदार्थ त्यागकर अर्थात् ए पदार्थ मधुरहोने परभी कफकारी नहीं है ॥

अम्लरसकेविशेषगुण

अम्लंपित्तकरंप्रायोविनाधात्रींचदाडिमम् ।

अर्थ—प्रायकरके संपूर्ण खट्टे पदार्थ पित्तकर्त्ता है परंतु आवले और अनार दानेके विनाअर्थात् आवले और अनार पित्तनही करते-

लवणरसकेविशेषगुण

लवणंप्रायशोह्निपिनेत्रयोः सैंधवंविना ॥

अर्थ—संपूर्ण लवण प्राय नेत्रोंको विगाडने वाले है. परंतु सैंधेनिमकके विना अर्थात् सैंधानिमकनेत्रोंको हितकारी हैं-

तीक्ष्णरसकेगुण

प्रायःकटुतयातिक्तमवृष्यंवातकोपनम् ।
शुंठीकृष्णारसोनानिपटोलममृतांविना ॥

अर्थ—प्राय तीक्ष्ण द्रव्य वातकोपकारी है परंतु सोठ–पीपर–लहसन–परवल- और गिलोय एवातकोपकर्त्ता नही है ॥

पिप्पलीनागरं मुस्तंकटुचावृष्यमुच्यते।
प्रायशःस्तंभनंप्रोक्तंकषायमभयांविना ॥

अर्थ—पीपल–सोठ–नागरमोथा इनके विना प्राय संपूर्ण तीक्ष्ण पदार्थ धातु नाशकहै और हरडको त्यागके वाकी कषेलारस स्तंभनकारी है. ॥

सामान्येनात्रनिर्दिष्टागुणाः षड्रससंभवाः।
रसानांयोगतस्तुस्यादन्यएवगुणोदयः॥

अर्थ—ये–छः रसोंके सामान्य गुणकहे है. परंतु दूसरे रसोंके योगकरके अन्य गुणभी होते है ॥

## संयोगीगुण

संयोगाद्विषतांयातिसममाज्येनमाक्षिकम्।
अमृतत्वंविषंयातिसर्पदष्टस्यवैयथा ॥

अर्थ— घी और सहतये संयोगमें समान होनेंसै विषरूपहोतेहै जैसै सर्पके- काटे हुएपुरुषको अमृत विषरूपहोताहैं उसीप्रकारजानना

## पृथिव्यादिभूतोंकेगुण

गुरुर्लघुस्तथास्निग्धोरूक्षस्तीक्ष्णइतिक्रमात्।
भूनभोवारिवातानांवन्हेरेतेगुणाः स्मृताः॥

अर्थ— गुरु- लघु- स्निग्ध- रूक्ष- तीक्ष्ण येक्रमसैं आकाश- पृथ्वी- जल-पवन और अग्नि इनके गुणजानने।

## गुरुलघुइत्यादिपदार्थोंकेगुण

गुर्वादयोगुणाद्रव्येपृथिव्यादौरसाश्रये ॥
रसेषुव्यपदिश्यंतेसाहचर्य्योपचारतः ॥

अर्थ— गुरुआदि गुण पृथ्वादिके द्रव्यमें रहतेहै वो उन पृथिव्यादिके साहचर्यसें पृथिव्यादिके रसादिगुणोंमें रहतेहैं।

## सुश्रुतोक्तविंशतिगुणाः

सुश्रुतेतुगुणाएतेविंशतिस्तानहंब्रुवे। गुरुर्लघुस्निग्ध-
रूक्षौतीक्ष्णः श्लक्ष्णः स्थिरः सरः॥ पिच्छलोविशदः

शीतउष्णश्चमृदुकर्कशौ। स्थूलसूक्ष्मौद्रवः शुष्कआशु
मंदः स्मृतागुणाः ॥

अर्थ— सुश्रुतमे ये वीसगुणकहेहै उनको हमकहतेहै १ गुरु- २ लघु- ३ स्निग्ध ४ रूक्ष ५ तीक्ष्ण ६ श्लक्ष्ण ७ स्थिर ८ सारक ९ पिच्छल १० विशद ११ शीत १२ उष्ण १३ मृदु १४ कर्कश १५ स्थूल १६ सूक्ष्म १७ द्रव १८ शुष्क १९ शीघ्र और २० मंद ये वीस गुणकहे

## गुरुगुण

गुरुवातहरंपुष्टिश्लेष्मकृच्चिरपाकिच ॥

अर्थ—गुरु(भारी)द्रव्य वातनाशक पुष्टता और कफको करेहै तथा देरमे पचतीहै

## लघुगुण

लघुपथ्यंपरंप्रोक्तंकफघ्नंशीघ्रपाकिच॥

अर्थ— लघु ( हलकी ) द्रव्य अत्यंतपथ्यकारकहै कफनाशक और जल्दी पचनेवालीहैं ॥

## स्निग्धगुण

स्निग्धंवातहरंश्लेष्मकारिवृष्यंबलावहम् ॥

अर्थ— स्निग्ध ( चिकनी ) द्रव्य वातहरणकरता कफकारी वृष्य और बलबढानेवाली जाननी ॥

## रूक्षगुण

रूक्षंसमीरणकरंपरंकफहरंमतम् ॥

अर्थ— रूक्षपदार्थ अत्यंत वादीकरे और कफको हरणकरनेवालाहै ।

## तीक्ष्णगुण

तीक्ष्णंपित्तकरंप्रायोलेखनंकफवातनुत ॥

अर्थ— तीक्ष्णपदार्थ प्राय पित्तकारी लेखन कफ और वादीकोनाशकरे ।

## श्लक्ष्णगुण

श्लक्ष्णःस्नेहंविनापिस्यात्कठिनोपिहिचिक्कणः ॥

अर्थ— श्लक्ष्णद्रव्य विनाचिकनाईकेभी कठिनऔर चिकना होताहै जैसे उद पत्थरकीसिल्लीआदि ॥

## स्थिर औरसरगुण

स्थिरोवातमलस्तंभीसरस्तेषांप्रवर्तने ॥

अर्थ— स्थिरपदार्थ-वात और मलका रोकनेवालाहै,और सर पदार्थ वात और मलको निकालने वालाहै अर्थात् दस्तावरहै ।

पिच्छलगुण

पिच्छलस्तंतुलोबल्यःसंधानःश्लेष्मलोगुरुः ॥

अर्थ— पिच्छलपदार्थ तंतुछूटनेवाला-वल-भग्नसंधानकर कफऔरभारीहै ॥

विशदगुण

क्लेदच्छेदकरःख्यातोविशदोव्रणरोपणः ॥

अर्थ—विशद पदार्थ-क्लेदकनाशक-दस्तावर-और व्रणको भरने वालाभेसाहै

शीतगुण

शीतस्तुल्हादनस्तंभीमूर्च्छातृट्स्वेददाहनुत् ।

अर्थ—शीतदार्थ-आनंदकारी-स्तंभक-और मूर्च्छा, तृषा, पसीना, दाह, इनका नाशकहै ॥

उष्णगुण

उष्णोभवतिशीतस्याविपरीतश्चपाचनः ॥

अर्थ—उष्णपदार्थ-आनंदनाशक-रेचक-मूर्च्छा-प्यास-पसीना-दाहको करनेवाला-तथा पाचकहै ॥

स्थूलगुण

स्थूलःस्थौल्यकरोदेहस्रोतसामवरोधकृत् ॥

अर्थ—स्थूलपदार्थ देहकोस्थूलकरे, तथा देहके छिद्रोंकोरोकताहै ॥

सूक्ष्मगुण

देहस्यसूक्ष्मछिद्रेषुविशेद्यत्सूक्ष्ममुच्यते ॥

अर्थ—जो देहके बहुत बारीक छिद्रोंमें प्रवेशकरे उसको सूक्ष्म कहते है ॥

द्रवगुण

द्रवःक्लेदकरोव्यापी ॥

अर्थ—द्रवपदार्थ-देहकोआर्द्रकरे-और सर्व देहमें व्याप्तहोवे ॥

शुष्कगुण

शुष्कस्तद्विपरीतकः ॥

अर्थ—शुष्कपदार्थ-देहको शुष्ककरे और सर्वदेहमेंव्याप्तनहीं हो ॥

## आशुकारीगुण

आशुराशुकरोदेहेधावत्यंभसितैलवत् ॥

अर्थ—आशुकारी पदार्थ देहमें—शीघ्रफैले है जैसै जलमेंतेलकी विंदु—फैलती है

## मंदगुण

मन्दःसकलकार्येषुशिथिलःसोपिकथ्यते ॥

अर्थ—मंदद्रव्य संपूर्ण कार्यमें शिथिलरहताहै ॥

## मृदुऔरकर्कश

प्रसिद्धौद्वाविमौलोकेगुणौचमृदुकर्कशौ ॥

अर्थ—इससंसारमें दोगुणप्रसिद्धहै एक मृदु ( नम्र ) दूसरा कर्कश ( कठोर)

## अथप्रस्तावाद्दीपनादयोगुणाःसलक्षणालिख्यन्ते ॥

पचेन्नामवन्हिकृच्च दीपनंतद्यथामिशिः ॥

अर्थ—जो औषधी आमको नपचावे और अग्निको दीप्तकरे वो औषध दीपनसंज्ञकजाननी—उदाहरण—जैसै—सौंफ—

## पाचनादिऔषध

पचत्यामंनवह्निंचकुर्य्याद्यत्तद्धिपाचनम् ।
नागकेशरवद्विद्याच्चित्रोदीपनपाचनः ॥

अर्थ—जो औषध आमको पचावे परंतु जठराग्निको दीप्तनकरे उस औषधको पाचन कहते है—जैसै—नागकेशर । औरजो आमकोभी पचावे तथा जठराग्निको दीप्तभी करे उस औषधकी दीपन पाचन संज्ञाहै जैसै चित्रक ( चीता )

## संशमनऔषध

नशोधयतिनद्वेष्टिसमान्दोषास्तथोद्धतान् ।
समीकरोतिविषमान्शमनंतद्यथामृता ॥

अर्थ—जो औषध वातादिसमान दोषोंको न शोधनकरे न बिगाडें किंतु उद्धत ( विषम ) भाव स्थितोंको जो समान करदेवे उस औषधीको शमनसंज्ञा कही है जैसै—गिलोय ॥

## अनुलोमनऔषध

कृत्वापाकंमलानांयद्भित्वाबंधमधोनयेत् ।
तच्चानुलोमनंज्ञेयंयथाप्रोक्ताहरीतकी ॥

अर्थ—जो औषध मल ( वातादिदोषों ) को पाककर तथा परस्पर मिलेहुए नको पृथक् २ कर अधोभाग ( नीचे गुदा लिंग ) में प्राप्तकरे अथवा अधोवात-मल-मूत्र इनके वंधनकों ( अर्थात् बद्धकोष्टताको) पृथक् २ करनीचेके भागमें लायके गुदाके द्वारा निकाले उस औषधको अनुलोमन कहते हैं-जैसे हरड-

## स्रंसनऔषध

पक्तव्यंयदपक्त्वैवश्लिष्टंकोष्ठेमलादिकम् ।
नयत्यधःस्रंसनंतद्यथास्यात्कृतमालकः ॥

अर्थ—पश्चात्पाक होनेवाले असे वातादिदोष कोष्टके आश्रितरहने वालोंको विनापाककरे ही उनकोनीचेलायगुदाके द्वारावाहर पटके उस औषधको स्रंसन संज्ञकजाननी उदाहरण-जैसे-अमलतासकागूदा ॥

## भेदनऔषध

मलादिकमबद्धंवायद्बद्धंपिंडितंमलैः ।
भित्त्वाधःपातयतितद्भेदनंकटुकीयथा ॥

अर्थ—वातादिदोष करके अवद्ध अथवा वद्ध ( वंधाहुआ ) जो मलमूत्रादि वो ग्रथित ( गांठदार ) हुएनको भेदकरजो औषध अधोभागमें लाय[1]गुदाद्वारावाहरगेरे उसको भेदन कहते है उदाहरण जैसे-कुटकी ॥

## रेचनऔषध

विपक्वंयदपक्वंवामलादिद्रवतांनयेत् ।
रेचयत्यपितज्ज्ञेयं रेचनंत्रिवृतायथा ॥

अर्थ—पेटमें विशेषकरके अन्नादिकका उत्तमपाक होनेपर अथवा कुछकच्चा रहनेपर उस अन्नको तथा वातादिकको पतलाकरके जो औषध अधोभागमें लाकर गुदाके द्वारा दस्तकरावे उस औषधकी रेचनसंज्ञाहै जैसे-निशोथ-जमालगोटा-सनाय आदि-

## वमनऔषध

अपक्वपित्तश्लेष्माणंबलादूर्ध्वंनयेत्तुयत् ।
वमनंतद्धिविज्ञेयं मदनस्यफलंयथा ॥

अर्थ—पक्वदशामें नही प्राप्तहुए असे पित्तकफको वल पूर्वक जो औषध मुखके

---

१ आदि शब्दकरके मलमूत्रादि जानने ।

द्वारा वमन करावे उसको वमनसंज्ञक जाननी उदाहरण जैसै—मैनफल॥

## संशोधनऔषध

स्थानाद्बहिर्नयेदूर्ध्वमधोवामलसंचयं।
देहेसंशोधनंतत्स्यादेवदालीफलंयथा॥

अर्थ—अपने स्वस्थानमें वातादिकोंका हुआजो संचयउसको ऊपरके भागमेंलायकर मुखके द्वारा—अथवा नाकके द्वारा बाहरकाढे अथवा उससंचयको अधोभागमें माप्तकर गुदाके द्वारा दस्तोंमे होकर यालिंगके द्वारा मूत्रमें होकर निकाले उस औषधको देहमें संशोधनजाननी जैसे—देवदाली (सोनैया—बंदाल)

## छेदनऔषध

श्लिष्टान्कफादिकान्दोषानुन्मूलयतियद्बलात्।
छेदनंतद्यवक्षारो मरिचानिशिलाजतु॥

अर्थ—जो औषध परस्पर एकसे एकमिले एंसेजे कफादिदोष उनको अपनी शक्ति करके तोडफोड न्यारे २ करे उस औषधको छेदन कहते है जैसे—जवाखारादि तथा कालीमिरच—सोंठ—पीपल—और शिलाजीत इत्यादिक जानने—

## लेखन

धातून्मलान्वादेहस्यविशोष्योल्लेखयेच्चयत्।
लेखनंतद्यथाक्षौद्रंनीरमुष्णंवचायवाः॥

अर्थ—जो औषध रसादिधातु और वातादि दोष इनका शोधनकर उनको पतलाकरे उसको लेखन जाननी—जैसे—सहत—गरमजल वच और जों॥

## ग्राहीऔषध

दीपनंपाचनंयत्स्यादुष्णत्वाद्द्रवशोषकम्।
ग्राहीतच्चयथाशुंठीजीरकंगजपिप्पली॥

अर्थ—जो औषधअग्निको प्रदीप्तकरे तथा आमादिकोंका पाचनकरे तथा उष्णवीर्यहोकर जलस्वरूप जों कफादिदोष—धातु—और मलका शोषण करे उस औषध ग्राही जानना उदाहरण—सोंठ—जीरा—गजपीपल॥

---

१ देवदालीको भाषामें बंदाल और सोनैयाकहते है इसके फलके काढेका आबदस्त बवासीरके ऊपरलेना लिखाहै.॥

## स्तंभनऔषधि

रौक्ष्याच्छैत्यात्कषायत्वाल्लघुपाकाच्चयद्भवेत् ॥
वातकृत्स्तंभनंतत्स्याद्यथावत्सकटुंटुकौ ॥

अर्थ—जो औषध रूक्षगुण करके-कषेले रसकरके युक्तहो और शीतलवीर्य करके तथा लघुपाकके कारण वादीकरे उसको स्तंभनसंज्ञककहते है-जैसे-कूडाकीछाल-टैंटू इत्यादि-

## रसायनऔषध

रसायनंचतज्ज्ञेयंयज्जराव्याधिनाशनम् ।
यथामृतारुदंतीचगुग्गुलुश्चहरीतकी ॥

अर्थ—जो औषध शरीर का जरा ( बुढापा ) और रोगोंको दूरकरे उसको रसायनकहते है जैसें गिलोय-रुदंती-गूगल-और हरड ॥

## मैथुनशक्तिवर्द्धकऔषध

यस्माद्द्रव्याद्भवेत्स्त्रीषुहर्षोवाजीकरंचतत् ।
यथानागवलाद्यास्तुवीजंचकपिकच्छुजं ॥

अर्थ—जिस औषधसें धातुवढकर स्त्रियोंके विषय हर्षयुक्त शक्तीवढे अर्थात् मैथुन करनेकी अधिक शक्तिहोवे उसको वाजीकरणसंज्ञक जाननी-जैसें नागवला आदि और कौंछकेवीज ।

## धातुवर्द्धकऔषधि

यस्माच्छुक्रस्यवृद्धिःस्याच्छुक्रलंचतदुच्यते ।
यथाश्वगंधामुशलीशर्कराचशतावरी॥

अर्थ—जिस औषधसें धातुकी वृद्धिहोय उस औषधको शुक्रलकहते है उदाहरण-असगंध-मूसली-शतावर-मिश्री आदि ॥

## वीर्योत्पादकतथावीर्यप्रवर्त्तकऔषधी ॥

दुग्धंमाषाश्चभल्लातफलमज्जामलानिच ।
प्रवर्त्तकानिकथ्यंतेजनकानिचरेतसः ॥

अर्थ—शुक्रधातुको चैतन्य करनेवाली और शुक्रको उत्पन्न करने वाली औषध दूध-उडद-भिलाए-फलकी मज्जा ( वीलकी गीरी ) और आमले इत्यादिक जाननी ॥

## मदकारीपदार्थ

बुद्धिंलुंपतियद्द्रव्यंमदकारितदुच्यते ।
तमोगुणप्रधानंच यथामद्यंसुरादिकम् ॥

अर्थ—जोपदार्थ तमोगुण प्रधानहोकर बुद्धिका आच्छादनकरे अर्थात् बुद्धि कानाशकरे उस औषध को मदकारी जाननी जैसे–मद्य–सुराआदि ॥

## प्राणहारकद्रव्य

व्यवायिचविकाशिस्यात्सूक्ष्मछेदिमदावहं ।
आग्नेयंजीवितहरंयोगवाहिस्मृतंविषम् ॥

अर्थ—पूर्वोक्त व्यवायी–विकाशी–सूक्ष्म–छेदि–मदकारी अग्नेय औषध इनछ द्रव्योंके गुणकरके जो युक्तहोय उसद्रव्यको प्राणहारी जानना–उदाहरण–जैसे विषवच्छनागादिकये योगवाहीभी है–इसका यह कारण है कि कोईआचार्य "योगवाह्यमृतंविषं" असा पाठकहते है उसका अर्थ यही है कि विषयोगवाही अर्थात् उसको किसी संस्कारविशेषकरके जिस २ अनुपानके साथदेउ उसी २ अनुपानके गुणवढायकर अमृतके तुल्यगुणकरे ॥

## प्रमाथीऔषध

निजवीर्येणयद्द्रव्यंस्रोतेभ्योदोषसंचयम् ।
निरस्यंतिप्रमाथिस्यात्तद्यथामरिचंवचा ॥

अर्थ—जो औषध अपने वीर्यकरके कान–मुख–नासिका इत्यादि छिद्रोंमेंसैं कफादि दोषसंचय हुएको दूरकरे उस औषधको प्रमाथी कहते है उदाहरण जैसे वच–औरकालीं मिरच इत्यादि ॥

## अभिष्पंदिपदार्थ

पैछिल्याद्गौरवाद्द्रव्यंरुद्धारसवहाःशिराः ।
धत्तेयद्गौरवंतत्स्यादभिष्यंदियथादधि ॥

अर्थ—जोपदार्थ अपने पिच्छल गुणकरके रसवाहिनी शिराओंको रोकशरीरको जडके समान करदेवे उसपदार्थको अभिष्यंदी अर्थात् कफकारक जानना उदा०जैसे दही ॥

## विदाहीपदार्थ

विदाहिद्रव्यमुद्गारमम्लंकुर्यात्तथातृपाम् ।

हृदिदाहंचजनयेत्पाकंगच्छातितच्चिरात् ॥

अर्थ—जोखट्टी डकार–तृषा–दाह–इनको उत्पन्न करके बहुत देरमें पचे उस द्रव्यको विदाही कहते हैं ॥

### योगवाहीद्रव्य

गृण्हातियोगवाहिद्रव्यंसंसर्गवस्तुजांश्चगुणान् ।
पचमानवद्यथैतन्मधुजलतैलाज्यसूतलोहादि ॥

अर्थ—योगवाही द्रव्य जिस द्रव्यके साथ जिसद्रव्यका संयोग करों वह उसीकेसे गुणकरे है जैसे-जल-तेल–घी-पारा लोहये पदार्थ दूसरेके गुणके समान अपने गुणकरे है उसी प्रकार अन्ययोग वाही पदार्थ जानने ॥

---

## अथवीर्यम्

उष्णशीतगुणोत्कर्षाद्बुधैःवीर्यंद्विधास्मृतम् ।
तत्सर्वमग्निषोमीयंदृश्यतेभुवनत्रयम् ॥

अर्थ—उष्ण ( गरम ) और शीत ( शीतल ) इनगुणोंके वीर्य दोप्रकारका है अतएव सब त्रिलोकीमें संपूर्ण वस्तुमात्र अग्नि और जल स्वरूपकी दीखती है ॥

### उष्णशीतवीर्योंकेगुण

उष्णंवातकफौहन्यात्पित्तंतुतनुतेतराम् ।
शीतं वातकफातंकान्कुरुतेपित्तहृत्परम् ॥

अर्थ—उष्णगुण–वात और कफको नष्टकरे है, और पित्तको बढाताहै एवं शीतगुण वात और कफके रोगोंको प्रगटकरे है तथा पित्तका शमन करे है ॥

### अन्यच्च

तत्रोष्णंभ्रमतृड्ग्लानिस्वेददाहाशुपाकताः ॥
शमंचवातकफयोः करोतिशिशिरंपुनः ॥
ल्हादनंजीवनस्तंभंप्रसादं रक्तपित्तयोः ॥

अर्थ—यहां उष्ण गुण-भ्रम, प्यास, ग्लानि, पसीने, दाह, और शीघ्रपाकको करे है एवंवायु और कफ इनको शांतिकरे । शीतगुण–आनंद, जीवन, और स्तंभनको करे है तथा रुधिर और पित्तको स्वच्छकरे है ॥

## अथविपाकाः

जाठरेणाग्निनायोगाद्यदुदेतिरसान्तरम् ॥
रसानांपरिणामांतेसविपाकइतिस्मृतः ॥
मिष्टःपटुश्चमधुरमम्लोम्लंपच्यतेरसः ॥
कटुतिक्तकषायाणांपाकःस्यात्प्रायशःकटुः॥
त्रिधारसानांपाकः स्यात्स्वाद्वम्लकटुकात्मकः ॥

अर्थ—जठराग्निके योगसें रस उत्पन्न होकर उस रससें जो रस उत्पन्नहोवे उसको विपाक ऐसा कहते है, तहां मिष्ट और खारी पदार्थका पाक मीठा होता है और खट्टे पदार्थका पाक खट्टाही होताहै । एवं चरपरा-कडुआ-और कषेले पदार्थका पाक प्राय चरपराही होताहै इसप्रकार सब रसोंका मीठा-खट्टा-और चरपरा ऐसें तीन प्रकारहीं पाक होता है चतुर्थ प्रकारका नहीं॥

## विपाककेगुण

श्लेष्मकृन्मधुरः पाकोवातपित्तहरोमतः ॥ आम्लस्तु
कुरुतेपित्तंवातश्लेष्मगदापहः ॥ कटुकरोतिपवनंकफं
पित्तंचनाशयेत् ॥ विशेषएषरसतोविपाकानांनिदर्शितः ॥

अर्थ—मीठा पाक कफकारक-और वात पित्तका नाशक, एवं खट्टापाक पित्तकारक और वायु तथा कफका नाशकारी है । एवं तिक्त ( कडुआ ) पाक वातकारी और कफ पित्त इनका नाशकहै । यह रसविपाकका विशेष गुण कहाहै ॥

## प्रभाव

रसादिसाम्येयत्कर्मविशिष्टंतत्प्रभावजं ॥ दंतीरसाद्यै-
स्तुल्यापिचित्रकस्यविरेचनी ॥ मधुकस्यचमृद्वीका-
घृतंक्षीरस्यदीपनम् । प्रभावस्तुयथाधात्रीलकुचस्य
फलादिभिः ॥ समापिकुरुतेदोषत्रितयस्यविनाशनम् ।
क्वचित्तुकेवलंद्रव्यंकर्मकुर्यात्प्रभावतः ॥ ज्वरंहंतिशि-
रोवद्धासहदेवजिटायथा ॥

अर्थ—परस्पर औषधोंके रसादि साम्य होनेसें जो विशिष्ट गुणहोताहै उसे प्रभाव कहते है । जैसे दंती रसादिकरके चीतेके समान होनेपरभी उसमें 'दस्त

कराना यह गुण अधिक है इसीको प्रभाव जानना। और दाख-मुलहटी ये समान रस होने परभी दाख दस्तलाती है मुलहटी नही तो यहां दाखमें अधिक प्रभाव है। तथा घृत और दूधके समान गुण है परंतु घृतमें दीपन शक्ति अधिकहै। एवं आवले और वडहर ये समान रसहैं तथापि आमला त्रिदोष नाशकहै वडहर नहीं। और कहीं२केवल एकही द्रव्य प्रभाव करके विलक्षण कर्मकरे है जैसें सहदेईकी जडमस्तकमें बांधनेसै ज्वरको नाशकरे है इत्यादि प्रभावके उदाहरणजानने।

अमीमांस्यान्यचिंत्यानिप्रसिद्धानिस्वभावतः।
आगमेनोपयोज्यानिभेषजानिविचक्षणैः॥

अर्थ-जो औषध स्वभावकरके प्रसिद्धहै उसको जहां शास्त्रकहे उसी जगेदेवे क्योंकि ओंषधियोंमें तर्क वितर्क नही करीजाय इनमें अचिंत्यवीर्य है अतएव विचारनकरे।

प्रत्यक्षलक्षणफलाः प्रसिद्धाश्चस्वभावतः।
नौषधीर्हेतुभिर्विद्वान्परीक्षेतकदाचन॥

अर्थ—जो औषधी प्रत्यक्ष फलदेने वाली और लक्षण जिसके प्रसिद्ध है उसकी विद्वान्-हेतुओंकरके कदाचित् परीक्षा न करे [ अर्थात् इस हेतुसै ये औषध शीतल होनी चाहिये इसने उष्णगुणकैसैं करा ] यह परीक्षा त्यागदेवे॥

विरुद्धगुणसंयोगेभूयसाल्पंहिजायते।
रसंविपाकस्तौवीर्यंप्रभावस्तान्व्यपोहति॥

अर्थ—विरुद्ध गुण औषधी वहुतसी एक ठिकाने पर होनेसैं विपाक रसका नाशकरे है तथा रस और विपाक इनकावीर्य नाशकर्त्ता हैं और रस-विपाक-और वीर्य इनका प्रभाव नाशकरे है ऐसा जानना॥

॥ इति रसवीर्य विपाकनिर्णयंसमाप्तम्॥

---

अथपंचकषायाः

स्वरसश्चतथाकल्कःक्वाथश्चहिमफांटकौ।
ज्ञेयाःकषायाःपञ्चैतेलघवःस्युर्यथोत्तरम्॥

अर्थ—स्वरस-कल्क-क्वाथ-हिम-फांड-येपांच कषाय है क्रमसैं एककी अपेक्षा दूसरी हलकी है-अर्थात् स्वरसकी अपेक्षा-कल्क कल्ककी अपेक्षा क्वाथ क्वाथकी अपेक्षा हिमहलका है इसी प्रकार और भीजानो॥

## तत्रादौस्वरसविधिः

आहतात्तत्क्षणाकृष्टाद्द्रव्यात्क्षुण्णात्समुद्धरेत्।
वस्त्रनिष्पीडितोयःसरसःस्वरसउच्यते॥आहतात्
शीताग्निकीटादिभिरनुपहतात् । क्षुण्णात्संपिष्टात् ॥

अर्थ—कीडा-शीत-अग्नि इत्यादीकरके अदूषित ऐसी वनस्पती को लायकर उसको कूटपीस कपडेमें डालके निचोडनेसें जो रस निकलेउसको स्वरस अथवा अंगरसकहते है ॥

## दूसराप्रकार

कुडवंचूर्णितंद्रव्यंक्षिप्तंचद्विगुणेजले ।
अहोरात्रंस्थितंतस्माद्भवेद्वारसउत्तमः ॥

अर्थ—पावभर सूखी औषधको कूट आधसेर जलमें भिगोय देवे उसको एकदिन रात्रि धरा रहनेदे फिर दूसरे दिन उसपानीको कपडेमें छानलेवे तो उसको भी रस वा स्वरस कहते है. यहभी एक प्रकार स्वरसका है ॥

## तीसराप्रकार

आदायशुष्कद्रव्यंवास्वरसानामसंभवे ।
जलेऽष्टगुणितेसाध्यंपादशिष्टंचगृह्यते ॥

अर्थ—जिस सूखीऔषधका स्वरस न निकलता होय उसको लाय कूटकर आठगुने पानीमें डालके मंदाग्निसे औंटावे जब चतुर्थांश जल बाकी रहे तब उतारके छानलेवे तो इसको भी स्वरस कहते है-यह तीसरा प्रकार कहा॥

स्वरसस्यगुरुत्वाच्चपलमर्द्धंप्रयोजयेत् ।
निशोषितंचाग्निसिद्धंपलमात्रंरसंपिबेत् ॥

अर्थ-किसी औषधका स्वरसहो सब भारी अधिक होते है अतएव यदि उस रसको किसी औषधमें डालना होवे तो अर्द्धपल( २ तोले ) डाले। तथा सुखायकर काढा हुआ अथवा अग्निपर काढाकरके काढा हुआरस ४ तोले पीनाचाहिये॥

## कल्कविधिः

द्रव्यमार्द्रंशिलापिष्टंशुष्कंवासज्जलंभवेत् ।
प्रक्षेपावापकल्कास्तेतन्मानंकर्पसंमितम् ॥

१ प्रक्षिप्यगालयेद्वस्त्रे तन्मानं कोलसंमितम् । इतिपाठांतरम् ।

अर्थ—गीली औषधको लाय चटनीके समान बारीक पीसे यदि सूखी औषधहोवे तो पानीडालके बारीक पिसावे उसको कल्क ऐसाकहते है इसके लेनेका प्रमाण, कर्षकहा है—अर्थात् एक तोला है इसको प्रक्षेप और आवापभी कहते है॥

कल्केमधुघृतंतैलंदेयंद्विगुणमात्रया।
सितागुडौसमौदद्याद्द्रवादेयाश्चतुर्गुणाः॥

अर्थ—कल्कमें सहत—घृत—और तेल ये डालनाहोयतो कल्कसैं दुगना मिलावे तथा खांड और गुड ये पदार्थ डालने होयतो कल्कके समान मिलावे तथादूध—जल आदि शब्दकरके पतले पदार्थ मिलाने होयतो कल्कके चौगुने मिलाने चाहिये॥

## क्वाथ ( काढेकी ) विधिः

पानीयंषोडशगुणंक्षुण्णेद्रव्येपलेक्षिपेत्।मृत्पात्रेक्वाथयेद्ग्राह्यमष्टमांशावशेषितम् तज्जलंपाययेद्धीमान्कोष्णमृद्वग्निसाधितं।शृतःक्वाथःकषायश्चनिर्यूहःसनिगद्यते॥आहारेरसपाकेचजातेचद्विपलोन्मितम्।वृद्धवैद्योपदेशेनपिबेत्क्वाथंसुपाचितम्॥

अर्थ— १ पलप्रमाण औषधले जो कुटकर उस औषधका सोलहगुना जल डाल किसी मिट्टीके पात्रमें भरके चूल्हैपर चढावे फिर नीचे मंद २अग्नि देवे जबजलका आढवा भाग शेष रहे तब उस काढेको उतारलेवे और कपडेसैं छान कर कुछगरम २ रोगीको पिलावे तथा रोगीके उत्तमप्रकार अन्नका परिपाक होनेबाद इसको वृद्धवैद्यकी आज्ञासैंदेवे—इसकाढेको शृत—क्काथ—कषाय—और निर्यूहभी कहते है अर्थात् ए नाम पर्यायवाचक है॥

कर्षादौतुपलं यावद्द्यात्षोडशिकंजलम्॥
ततस्तुकुडवं यावत्तोयमष्टगुणंक्षिपेत्॥
चतुर्गुणमतश्चार्द्धं यावत्प्रस्थादिकंजलम्॥

अर्थ—कर्षसै लेकर पल पर्यंत सोलह गुनाजल डाले, पलसैं उपरांत कुडव पर्यंत अठगुना जल डाले, और कुडवसे लेकर प्रस्थ पर्यंत क्वाथमे चौगुना जल डाले, यह क्वाथमें जल डालनेकी क्रियाकही॥

मात्रोत्तमापलेनस्यात्त्रिभिरक्षैस्तुमध्यमा।जघन्यातुपलार्द्धेनस्नेहक्काथौषधेपुच॥पानेक्वाथादिद्रव्यावस्था।

अर्थ—स्नेह-काढा-और औषध इसकी उत्तम मात्रा १ पलकी है और तीन अक्षअर्थात् ३ तोलेकी मध्यम है-और पलार्ध ( २ तोले ) की मात्रा मध्यमहै ॥

## क्राथमेतोलकापरिमाण

दशरक्तिकमानेनगृहीत्वातोलकद्वयम् ।
दत्त्वाम्भःषोडशगुणंग्राह्यंपादावशेषितम् ॥

अर्थ—दशरत्तीका मासा इसप्रमाणसें २ तोले औषध लेकर उसमें ३२ तोले जल मिलायमंदाग्निसें काढाकरे जब चतुर्थांश रहे तब उतार छानके रोगीकोदेवे॥

## क्राथमेंमिश्रीसहतडालनेकाप्रमाण

क्राथेक्षिपेत्सितामंशैश्चतुर्थाष्टमषोडशैः।
वातपित्तकफातङ्केविपरीतंमधुस्मृतम् ॥

अर्थ—काढेमें खांडडालनीहोयतो वातरोगमें काढेकी चतुर्थांश डाले, पित्तरोगमें आठवांहिस्साडाले,औरकफरोगमें सोलहवांहिस्साडाले और यदिसहत डालनाहोयतो खांडसें विपरीत डाले अर्थात् कफकेरोगमें सहत चतुर्थांश- वातमें षोडशांश और पित्तमें अष्टमांश. ॥

## हिमविधिः

क्षुण्णद्रव्यपलंसम्यक्षड्भिर्नीरपलैःप्लुतम् । निःशोषितंहिमःसस्यात्तथाशीतकषायकः।तस्यमानंमतंपानेपलद्वयमितंबुधैः।

अर्थ— कुटीऔषध १ पलको ६ पलजलमें भिगोयदेवे रात्रिभर परीरहनेदे. इसको हिम अथवा शीतकषाय कहतेहै । इसकी मात्रा ८ तोलेकाहै ॥ "तन्मानंफांटवद्ज्ञेयं सर्वत्रैव विनिश्चयः"अर्थात् इस हिमकी मात्रा फांटकेसमान जाननी यह सर्वत्र निश्चयहै ॥

## मंथ

मंथोपिफांटभेदःस्यात्तेनचात्रैवकथ्यते । जलेचतुःपलेशीतेक्षुण्णंद्रव्यंपलंक्षिपेत्।मृत्पात्रेमंथयेत्सम्यक्तस्माच्चद्विपलंपिबेत्॥

अर्थ—मंथभी फांटकाभेदहै अतएवउसको भी इसीजगे कहतेहैं । एकपल औषध ले उसको कूटकै४पलशीतलजलमें भिगोयदेवे, फिरमिट्टीके पात्रमें उसको मंथन करे फिर उसपानीको छानके देवे उसको मंथकहतेहै इसकी मात्रा दोपलकीहै॥

## अवान्तरभेदोतंडुलोदकमाह

तंडुलंकनशःकृत्यापलंग्राह्यंहितंडुलात् ।

चतुर्गुणंजलंदेयंतंडुलोदककर्मणि ॥
शीतकषायमानेनतंडुलोदककल्पना॥

अर्थ— १ पल चावलोंको कूट किनकीकरले उसको ४ पलवा ६ पल जलमें भिगोयदेवे. थोडीदेरकेवाद उसका नितराहुआ पानी लेलेवे तो तंदुलोदकवने. जहांकहींतंदुलोकाजल लिखाहोय वहां इसप्रकारवनाहुआजल लेवे ॥

### फांटविधिः

क्षुण्णेद्रव्यपलेसम्यक्जलमुष्णंविनिक्षिपेत् ।
मृत्पात्रेकुडवोन्मानंततस्तुस्रावयेत्पटात् ॥
तन्मानंफांटवत्ज्ञेयंसर्वत्रैषसुनिश्चयः।
मधुश्वेतागुडादींश्चकाथवत्तत्रनिक्षिपेत् ॥

अर्थ—१ पलऔषधको कूटके मिट्टीकेपात्रमें एककुडवप्रमाण गरमजल डालके भिगोवे फिर थोडी देरके वादउसको छानके पीवे-इसे फांट-तथा चूर्णद्रव भी कहतेहै. इसफांटकी मात्रा दोपलकीहै- तथा फांटमें सहत-मिश्री-तथा गुडआदिद्रव्यसैंऔर जो वस्तु डालनीहो वो जिसप्रमाण काढेमेंडालनाकहाहैउसीप्रकारडाले।

### यवागूकीविधिः

साध्यंचतुः पलंद्रव्यंचतुः षष्टिपलेजले।
तत्काथेनार्धशिष्टेनयवागूंसाधयेद्घनाम् ॥

अर्थ—चारपलप्रमाण औषधकोकूटके ६४ पलजलमें आधा रहनेपर्यंत औटावे जवआधारहे तवउतारके उसको छानलेवे. उसछानेहुएजलमें चावल. मूंगआदिद्रव्यजो कहेहै डालके फिरकाढाकरे तो इसको यवागू कहतेहै ॥

### विलेपीलक्षण

विलेपीचघनासिक्थासिद्धानीरेचतुर्गुणे ।
बृंहणीतर्पणीहृद्यामधुरापित्तनाशिनी ॥

अर्थ—चौगुनेपानीमें डालके औटायके ल्हापसीकेसमानगाढी और चिपकनेवाली वनावे उसको विलेपी ऐसा कहते है । यह विलेपी धातुवर्द्धक शरीरको पुष्टकारी-हृदयको हितकारी-तथामधुर होनेसैं पित्तकी नाशकर्त्ता है ॥

---

१ सत्याच्चूर्णद्रवःफांटस्तन्मानद्विपलोन्मितम् ।

## पानादिकल्पना

क्षुण्णंद्रव्यपलंसाध्यंचतुःषष्टिपलैर्जलैः।
अर्द्धशिष्टंचतद्देयंपानेभक्तादिसंविधौ ॥

अर्थ—कुटीहुई १ पलद्रव्य ६४ पलजलमें डालके आधापानी रहने पर्यंत औंटावे फिरउसको छानके प्यासलगनेमें पीनेको थोडा २ देवे–तथा भोजनके समय देनेका प्रकार आगे कहेंगे ॥

मधुश्वेतगुडक्षारान्जीरकंलवणंतथा।
घृतंतैलंचचूर्णादीन्कोलमात्रान्रसेक्षिपेत् ॥

अर्थ—सपेद सहत–गुड–क्षार–जीरा–लवण–घी–तेल–और इतर चूर्णादिक ये रसमें डालने होयतो छःछःमासे डालने चाहिये ॥

## प्रमथ्याकीविधिः

प्रमथ्याप्रोच्यतेद्रव्यपलात्कल्कीकृताच्छृतम्।
ततोऽष्टगुणितेतस्याः पानमाहुः पलद्वयम् ॥

अर्थ—एकपल औषधको कूटकर कल्ककरे यदि सूखी औषधहोयतो पानीमें पीसके कल्ककरे उसमें अठगुनापानी डालके दोपलरहने पर्यंत उसको औंटावे इसको प्रमथ्या कहते हैं इसके सेवनकी मात्रा २ पलकी है ॥

## यूषकीविधिः

कल्कद्रव्यपलंशुंठीपिप्पलीचार्द्धकार्षिकी।
वारिप्रस्थेनविपचेत्सद्रवोयूषउच्यते ॥

अर्थ—कल्ककी औषध सामान्य १ पललेय तथा जिस प्रयोगमें सोंठ–और पीपर होय वह प्रयोग तीक्ष्ण होनेसें आधा २ कर्षलेवे अथवा दोनोमिलायके आधे कर्षलेय फिर उनका कल्ककर उसमें पानी एक प्रस्थडालके औटावे जब औटके कुछ गाढापेयाके समान होजावे तब उतारले इसको यूषएसा कहते हैं ॥

## पेयालक्षण

द्रवाधिका स्वल्प सिक्था चतुर्दश गुणे जले ॥ सिद्ध पेया बुधैर्ज्ञेया यूष किंचिद्घनःस्मृतः ॥ पेयालघुतराज्ञेयाग्राहिणीधातुपुष्टिदा ॥ यूषोबल्यस्ततःकंठ्योलघुपाकःकफापहः ॥

अर्थ—द्रव्यसें चौगुना जलडालके पतली पेजके समान तथा कुछ गाढी हो-

य तवतक ओटावे इसकोपेया ऐसाकहते है । पेयाकी अपेक्षाजो कुछ अधिक गाढाहो उसको यूपकहते है । तहाँ वहपेया बहुत हलकी होनेसें मलादिकोंका स्तंभन करती है, तथा धातु पुष्टकरे । और यूपवलदेताहै, कंठको हितकारी-हलका तथा कफको दूर करने वालाहै ॥

## पुटपाककीविधिः

पुटपाकस्यकल्कस्यस्वरसोगृह्यतेयतः ।
अतस्तुपुटपाकानांयुक्तिरत्रोच्यतेमया ॥

अर्थ—पुटपाक और कल्क इन दोनोका स्वरस लेते है इसी कारण पुटपाककी युक्तिमें कहताहूं ॥

## पुटपाककीज्ञाति

पुटपाकस्यगात्रेयंलेपस्यांगारवर्णता ॥लेपंचद्व्यंगुलं-
स्थूलंकुर्याद्वांगुष्ठमात्रया॥काश्मरीवटजंव्वादिपत्रैर्वेष्ट
नमुत्तमम् ॥पलमात्ररसोग्राह्यःकर्पमात्रंमधुक्षिपेत्॥क-
ल्कचूर्णद्रवाद्यास्तुदेयास्स्वरसवद्बुधैः ॥

अर्थ—पुटपाककी मात्राका प्रमाण इसप्रकारकरे कि ऊपरकराहुआलेप अग्निमें अंगारेके समान लालवर्ण होने पर्यंत उसको अग्निमें राखे-तथा जिसद्रव्यपरलेप देना होयतो दो अंगुल अथवा एक अंगुलमोटा देवे और लेपके ऊपरनीचे पत्ते लपेटनेके लिये-कंभारी-वड-जामुन इत्यादिके उत्तम होते है-तथा पुटपाकरसडालना होयतो चारतोले तथा तोलेभर सहत और कल्कचूर्ण द्रवादिकपदा स्वरसके मान प्रमाण उत्तम जाननेवाला वैद्य मिलावे ॥

## पाठान्तरं

द्रव्यमापोथितंजंवूवटपत्रादिसंपुटैः ॥ वेष्टयित्वाततो
वद्वाद्दढंरज्ज्वादिनातथा ॥मृल्लेपद्व्यंगुलंकुर्यादथवांगु-
लिमात्रकं दहेत्पुटान्तरादग्नौयावल्लेपस्यरक्तता ॥

अर्थ-जिसवस्तुका पुटपाक करनाहो उसको कूटके गोलाबनावे उसको जामुन वड आदिके पत्तोंसें लपेट ऊपर रस्सी आदिसें कसदे फिर ऊपर दोदो अंगुल मोटा मिट्टीका लेपकरे अथवा एक अंगुल मोटालेपकरे उसको अग्निके बीच धरके अग्निदेवे जबलाल होजावे तब निकाल रसनिचोडले-यह दूसरीविधि

## चांवलधोनेकीक्रिया

कंडितं तंडुलपलंजलेष्टगुणिते क्षिपेत्।
भावयित्वाजलंग्राह्यंदेयंसर्वत्रकर्मसु ॥

अर्थ—एक पल विने फटके हुए चावललेकर उसमें आठपल जलडालके हाथोंसें मीडकर धोवे फिर उसपानीको सर्व कर्ममें देवे ॥

## अवलेहकल्पना

क्राथादीनांपुनःपाकात्घनत्वंसारसक्रिया। सोवलेहश्च लेहश्च प्राशइत्युच्यतेबुधैः। सिताचतुर्गुणाकार्याचूर्णाच्चद्विगुणोगुडः।द्रवंचतुर्गुणंदद्यादितिसर्वत्रनिश्चयः।सुपक्वेतन्तुमत्त्वंस्यादवलेहेऽप्सुमज्जनं। स्थिरत्वंपीडितेमुद्रागंधवर्णरसोद्भवः।दुग्धमिक्षुरसंयूषंपंचमूलकषायजं। वासाक्राथंयथायोग्यमनुपानंप्रशस्यते ॥

अर्थ—औषधोंके काढे तथा फांटादिकको फिर ओटाकर चासनीके समान गाढीकरे उसको रस क्रिया कहते है। उसरसक्रियाके पर्याय शब्द अवलेह-लेह-और प्राशये है। उस अवलेहके लेनेका प्रमाण एकपल कहाहै। तथा उसमे खांड क्राथचूर्णसें चौगुनी गुड चूर्ण सें दुगना-और पानी-दूध- मूत्र-और दूसरे पतले पदार्थ चूर्णसें चौगुने लेने चाहिये ऐसा अवलेहमें सर्वत्र नियमहै। उस अवलेहके उत्तम पाककी परीक्षा कहते है कि पाकहोनेपर अवलेहमें तार निकलने लगता है तथा उस अवलेहकी बूंदको पानीमें गेरनेसें डूब जाती है। तथा अवलेहको कडछुलेमें लगानेसें चिपक जाती है तथा उस पाकका गंध वर्ण और रस ये अपूर्व होते है इसप्रकार क्राथका उत्तम पाक होनेके लक्षण जानने। तथा उस अवलेहका अनुपान दूध ईखका रस-पंच मूलके काढेकायूप-अडूसेका काढा इत्यादिक है वो रोगका तारतम्य देखकर वैद्य अपनी बुद्धिके साथ योजनाकरे ॥

## चूर्णविधिः

अत्यंतशुष्कंयद्द्रव्यंसुपिष्टंवस्त्रगालितम्।
तत्स्याच्चूर्णंरजःक्षोदस्तन्मात्राकर्षसंमिता ॥

अर्थ—उत्तम सूखी औषधको लायकर कूटपीस वारीककरे उसको कपडेमें

१ तन्मात्रास्यात्पलोन्मिता इति पाठान्तरम्। २ खरत्वमितिपाठांतरं।

छानलेवे उसे चूर्ण ऐसा कहते है तथा रज और क्षोद ऐसाभी कहते है उसचूर्णके भक्षणकी मात्रा १ तोलेकी है ॥

## चूर्णमेंगुडादिडालनेकानियम

चूर्णेगुडःसमोदेय·शर्कराद्विगुणाभवेत् ।चूर्णेषुभर्जितंहिंगुदेयंनोत्क्लेदकारकम् । लिहेत्चूर्णंद्रवैःसर्वैर्घृताद्यैर्द्विगुणोन्मितैः। पिबेच्चतुर्गुणैरेवचूर्णमालोडितंद्रवैः।चूर्णावलेहगुटिकाकल्कानामनुपानकम् । पित्तवातकफातङ्केत्रिद्व्येकपलंहरेत् ॥

अर्थ—चूर्णमें गुडडालना होयतो चूर्णके वरावर डाले । खांडदूनी मिलावे। तथा हींग भुनीहुई डालनी तो वह विकार नहीकरे । घी-सहत-और अन्य विकनी वस्तुइसमें मिलानी होयतो वो चूर्णसैं दुगनी मिलावे । दूध गोमूत्र जल तथा अन्य पतलीवस्तु चूर्णसैं चौगुनीले उसजलादिमें चूर्णको डाल मिलायके पीवे । चूर्ण अवलेह गुटका तथा कल्क इनका अनुपान जो कहाहै वो पित्तरोग होयतो ३ पललेवे–वातरोग होयतो २ पल और कफरोग होयतो एकपलले इससैं औषध उत्तमरीतिसैं देहमें फैल जाती है ॥

यथातैलंजलेप्राप्तंक्षणेनैवप्रसर्पति ।
अनुपानवलादङ्गेतथासर्पतिभेषजम् ॥

अर्थ—इसविषयमें दृष्टांतहै जैसै पानीमें तेलकी बूंदक्षणमात्रमे फैल जाती है उसी प्रकार ओषधी अनुपानके वलसैं अंगमें शीघ्र फैल जाती है ॥

## भावनाविधिः

द्रवेणयावतासम्यक्चूर्णंसर्वंप्लुतंभवेत् भावनायाःप्रमाणंतुचूर्णेप्रोक्तंभिषग्वरैः । भाव्यद्रव्यसमंक्वाथ्यंक्वाथ्याद्दष्टगुणंजलं॥ अष्टांशशेषितःक्वाथोभाव्यानांतेनभावना॥दिवादिवातपेशुष्कंरात्रौरात्रौनिवासयेत् ॥शुष्कंचूर्णीकृतंद्रव्यंसप्ताहंभावनाविधिः ॥

अर्थ—चूर्णमें नीबूके रसकी–अथवा अन्य विजोरे आदिके रसकी पुटदेनी होयतो इतनारस डाले किवो चूर्ण उसरसमें बूडजावे यह चूर्णमें भावनाका प्रमाण वैद्योने कहाहै । जिस औषधीमें भावनादेनी है उसद्रव्यके समान क्वाथ द्रव्य

ले और उसमें आठगुनाजल मिलावे फिर अग्निपर चढाय मंद२ आंचसें काढाकरे जबजलअष्टमांस रहे तबउतार छानके उसरसकी भावनादेवे दिनादिन भावनादेके धूपमें सुखायदे और रात्रिमें उठायके धरदेवे इसप्रकार उसभावनाका सब रससूख जावे तब चूर्णकर धररक्खे इसप्रकार सातादिन भावनादेनी चाहिये। ॥इति भावनाविधि॥

## उष्णोदकविधिः

अष्टमेनांशशेषेणचतुर्थेनार्द्धकेनवा। अथवाक्कथनेनैव-
सिद्धमुष्णोदकंभवेत्। श्लेष्मामवातमेदोघ्नंबस्तिशो-
धनदीपनम्। कासश्वासज्वरान्हन्तिपीतमुष्णोदकंनिशि।

अर्थ—जल अग्निपरगरमकरके अष्टमांश ( अष्टावशेष ) चतुर्थांश अथवा अर्धांशावशेषकरे अथवा केवल भतोवालकरे तो उसको उष्णोदक कहतेहै। गरमजल कफ–आमवात–और मेदोरोग ( मोटापन ) इनको नाशकरे तथा अग्निकोदीप्तकरे–रात्रिको सोते समय गरमजलपीवेतो खांसी–श्वास–और ज्वरको नाशकरे॥

## वटक ( गोली )

वटकाश्चाथकथ्यन्तेतन्नामगुटिकावटी॥ मोदकोवटिका
पिंडीगुडोवर्त्तिस्तथोच्यते। लेहवत्साध्यतेवह्नौगुडोवा-
शर्कराथवा। गुग्गुलर्वाक्षिपेत्तत्रचूर्णंतन्निर्मितावटी॥

अर्थ—अब वटका कहते है कि जिसका नाम गुटिका–वटी–मोदक–वटिका पिंडी गुड और वर्त्ती है इसके बनानेकी विधि अवलेहके समान गुड अथवा खांडकापाककर उसमें गुगल वा चूर्ण मिलाय गोली बनावे॥

कुर्यादवन्हिसिद्धेनक्वचिद्गुग्गुलनावटीम्। द्रवेणमधु-
नावापिगुटिकांकारयेद्बुधः। सिताचतुर्गुणादेयावटी-
षुद्विगुणोगुडः। चूर्णेचूर्णसमःकार्योगुग्गुलुर्मधुसंयुतम्।
द्रवंतुद्विगुणंदेयंमोदकेषुभिषग्वरैः। कर्षप्रमाणातन्मा-
त्रावलंदृष्ट्वाप्रयुज्यते॥

अर्थ—कहीं कहीं २ अग्निके पाकाविना शुद्ध गूगलडाल चूर्णमिलायके एक जीवकर गोली बनायलेवे–अथवा जल–महत–दूध इत्यादिक पतली वस्तुमिला

यके गोली बनायलेवे। यदि खांडसें गोली बनानी होयतो चूर्णसें चौगुनी खांड डालके गोली बनावे। और गुडके साथ बनानी होयतो दूना गुडडालके गोली बनावे। गूगल अथवा सहत इनदोसै गोली बनानी होवेतो ये चूर्णके समानभाग लेकर गोलीकरे। पानी–सहत इत्यादि पतली वस्तुसै गोली बनानी होयतो वो चूर्णसैं दुगनालेकर उससैं गोलीकरे। गोलीकी मात्रा १ तोलेकी है अथवा रोगीके शक्त्यनुसार वैद्य मात्राकी कल्पनाकरे॥

## चूर्णस्यपाकनिषेधमाह

प्रायोनपाकश्चूर्णानांभूरिचूर्णस्यतेनहि।
आसन्नपाकेप्रक्षेपस्वल्पस्यपाकमागते॥

अर्थ—चूर्ण औषधका पाककरना उचितनही है-इसका कारण यहहै कि पाक करनेसैं चूर्ण द्रव्यका वीर्यनष्टहो जाताहै। किंतु चूर्णद्रव्यका परिमाण अत्यंत अधिक होयतो मोदकआदिके बनानेमें जबचासनी होनेपर आयजावे उस समय इसको उसचासनीमें डालदेना उचितहै। अन्यथा समग्रचूर्णका उस पाकमेंमिलना कठिन है। यदिचूर्ण थोडा होयतो जब चासनी लड्डूकी होकर उतारलीनी जावे और थोडीगरम रहे उससमय मिलावे तो गुणकरे अन्यथा नही॥

## अथानुवटिकाविधिः

धात्वादीनामुद्भिदां वा चूर्णमुक्तैर्द्रवैः कृतम्॥
अनुक्ततोययोगेनविमर्द्यविदधीतिच॥
यवसर्षपगुंजादिप्रमाणांवटिकांभिषक्॥
अनिर्दिष्टवटीसिद्धौप्रायोगुञ्जात्मिकामिति॥
तत्सेवनंयथादोषमनुपानेनचेष्यते॥

अर्थ–जडी बूंटी अथवा धातु आदि संपूर्ण द्रव्यका बारीकचूर्ण यथोक्तद्रव पदार्थके साथ अथवा जहां न कहाहो वहां जलके साथ सरसो–जो–अथवा रत्तीआदिके प्रमाण गोली बनानी चाहिये। जहां गोलीके विषयमें विशेषकुछनहीं लिखाउसजगे रत्ती २ की गोली बनानी. इसप्रकार बनाई हुई गोलियोंको अनुवटिका–अथवा सामान्यकरके वटिका कहते है। येदोष विशेषसें अनुपानविशेष करके सेवनकरनी चाहिये॥

## रसचूर्णम्

रसराजयुतंबलिहेममुखं विधिनापुटितंमनुशैत्यगतम्॥

उपनीयततः परिमर्दयता रसचूर्णमिदंकथितंमुनिभिः ॥

अर्थ—गंधक और स्वर्णादिक द्रव्यपारेकेसाथ खरलकर यथाविधिपुटपाक देकर जब स्वांगशीतलहो जावे तब चूर्णकर औषधार्थ प्रयोगोंमें वर्त्ते । इसप्रकार की औषधको रसचूर्ण कहते है ॥

## धन्वंतरीकाभाग

अर्द्धंसिद्धरसस्य तैलघृतयोर्लेहस्यभागोऽष्टमः
संसिद्धाखिललोहचूर्णगुटिकादीनां तथा सप्तमः ॥
योदीयेतभिषग्वरायसरुजानिर्दिश्यधन्वंतरिम् ।
देहारोग्यसुखाप्तयेनिगदितो भागः सधन्वंतरिः ॥ १॥

अर्थ—सिद्धरस ( पारदकी भस्म -चंद्रोदयादि ) मेंवैद्यका आधाभाग-तेल धृत और अवलेह इनमें आठवाभाग तथा संपूर्ण लोहो की भस्म ( सुवर्ण-चांदी तामा-रांगा लोहकी-भस्म ) चूर्ण-गोली, आदिशब्दसे-पाक-अर्क इत्यादिकमें सप्तमभाग जो रोगी-धन्वंतरिके उद्देशकरके वैद्यके वास्ते देता है उसकी देहमें आरोग्यहो-और सुखकी प्राप्तिहोती है-येभागधन्वंतरिका कहलाता है इसवास्ते, अवश्य देना चाहिये ॥

क्रीतद्रव्यस्यभैषज्यभागश्चैकादशोह्रियः ॥
वणिग्भ्योगृह्यते वैद्ये रुद्रभागः सकथ्यते ॥ २॥

अर्थ—खरीदीहुई औषधमें ग्यारवां भागजो दुकानदारसें वैद्यलता है वह रुद्रभाग कहलाता है-तात्पर्य यह है कि विकती औषधमें वैद्यरोगीसें कुछनलेवे किंतु वेचने वालेने जितनी औषध वेची है उसका ग्यारवाभाग वैद्यको लेना चाहिये येउसका हक्क है ॥

गृहीत्वाधिकमीशांशाद्योऽसमीचीनमौषधम्
दापयेल्लुब्धवद्वैद्यःसस्याद्विश्वासघातकः ॥

अर्थ—जो वैद्य ग्यारवे भागसें अधिकलेता है-अथवा उसवेचने वालेसें मिलकर आपकुछ अपने लिये हिस्सा ठेरायकर विकवावे वोलोभी वैद्य विश्वास घाती जानना-उसका न इससंसारमें भला होवे नपरलोकमें । प्रसंगवसयहां एकवात और लिखते है कि जिस्सै मनुष्य जाली मनुष्यके फंदेमेंनपडे ॥

यहां मथुरा-दिल्ली-आगरेमें सातिये लोग जो जातिके कायथ होते है और अकमर जर्राहीका वा नेत्रोंका इलाज किया करते है ये वाजारमें एकांतमें वैठे

रहते है जहां कोई गामका गमेरू मनुष्य अथवा प्रदेशी मनुष्य दीखा उसको इ-सारेसैं अपने पास बुलाकर कुछ न कुछ ऐसा रोग वतावे कि जिस्से वो डरजा-वे, और उस्से कहते है कि इस रोगसैं तुह्मारी वगलमें पसीने आते होंगे, और जब तुम सोंकर सुवहको उठते होगे तब वडे जोरसैं पेसाव उतरता होगा-यदि गरमी देखे तो कहते है कि तुह्मारे पैरोंके तलवा बहुत पसीजते होंगे-प्यास अधिक लगती होगी और आलकस जियादह आता होगा-वस ऐसी २ वात कहनेसैं उसविचारे भोले भाले प्रदेशीको इनका विश्वास आजाता है-और उ-स्सै वीचवीचमें यहभी कहते जाते है कि भाई यह तुह्मारा बुरा रोग देखके हम को तरस आगया यदि इसका इलाज न करोगे तो महिने दो महिनेमे मरजाओ-गे इसवास्ते हम खुदाकी राहपर तुमारा इलाज बताते हैं सो तुमकरो अल्लाता लाके फजलसैं वहुत जल्द तुमको आराम होजावेगा। इस तरह उसको काबूमें कर जहां इसकी सट्ट लगी हुई होती है उसी दुकानपर चटले पहुचते है-जाते खेम उस्से कहत है किफलां दवाई तेरेपास है वो कहे है अच्छानिकाल जब नि-काले तब ये खरल लेकर वैठ जातेहैं और कहे ये छः मासे डाल-दूसरी तोलेभर डाल, इसतरह पहले दमडी २ छदाम २ की दवाई वताए, फिर एक अनखटूटी नामलेकर दवाई मांगे वोपसारी कहे साहव वो वडे मोलकी दवाई है तब ए क-हे क्याग्रुजाका है निकालतो सही जब वो निकालकर लावे तो पिसा हुआ गोंद होता है उसको कुछ अपनी जीभपर डाले और एक चुकटी भरके अपने ग्रा-हकके मूंमे डलवावे जब वो चिपकने लगे तब कहे कि देखो जैसी ये मूंमे चेपदेती है। ऐंसी ही तुह्मारी धातको गाढीकर देवेगी-फिर पसारीसैं पूछे ये क्या तोले देवेगा वो कहे ए रुपे तोले तब ए कहे नहींनही आठ आने तोले दे-आखिरको आठ आने दश आने पक्कीकर तुलाते है तब यह देखते है इस आदमीके पास कितना पैसा है उसवखत पसारी सैं कहते है कि भाई इस दवाईको रुपा डालके तोलो हम और तरहसैं नहीं माननेके पसारी सधा हुआ होताही है चट कहदेता है किमेरे पास अभी रुपानही आया नही तोमैंमें रुपेसैं तोलदेता, उसवख्त ये हकीमसाहवअपने मवक्किलसैं कहते की आपके पास रुपा होयतो तोलनेके वास्ते देदीजिये ज्योंही उसने रुपानिकाला और हकीम साहव ताडगए कि इसके पास इतनी जमा है वसउसीके माफिक १रु०की-दोरुपेकी ८ आनेकी या वारह आने की दवाई कुटाई और दामादिलाए उसकी पुडिया वांधउसको सौपदेते है और उसकेसाथ २ चलकर सहरवाहर निकाल आते है कि जि-स्सैको ईसख्स उसको भेकाए नही और उसको अपनी नेकी जताते है कि दे-

खोतुह्मारे इसकाममें हमने कौडीभी नही खाई ईश्वरकी राहपर आपको दवाई वनवायदीनी है–इसतरह उसको सहरवाहरकर चट उसपंसारीके पास आनकर जैसा उस्से ठहराव हो वैसा रुपेमें वारहआने या दशआनेले कर फिर उसी मुकाम पर आनजमते है और दूसरी सिकारकी तलास करते हैं ॥

इसलिखनेसें हमारायही प्रयोजनहैकि सब भोले मनुष्यको जाहिर होजावे कि असे २ ठगिया–हकीम–जर्राह–ज्योतिशी–और मन्त्रशास्त्री या जादूगरोंके जालसे वचे असाकोईसा सहर नहीं है जहाँये पामर( नीच ) ठगियानहीं रहते इन की मुख्य पहचानयही है कि येविना जानपहचानके आनकर खुसामदकी और लोभ की वात सैआदमीके दिलको लुभाते है–वसउसी समय बुद्धिमान् जान ले कि ये विनाकारण यहपरदेशीहमारी क्यो खुसामद करताहै–यह शीक्षा दत्तराम चौवेकीयादरहे ॥

## अथस्नेहपाकस्यसाधारणोविधिः

### तत्रादौतिलतैलमूर्च्छा

कृत्वातैलंकटाहेदृढतरविमलेमन्दमन्दानलैस्तत् तैलं
निष्फेनभावं गतमिहयदाशैत्ययुक्तंतदैव ॥मंजिष्ठारा
त्रिलोध्रैर्जलधरनलिकैः सामलैःसाक्षपथ्यैः ॥ सूचीप
त्रांघ्रिनीरैरुपहितमथितैः गंधयोगंजहाति ॥

अर्थ—तैलमूर्च्छाके नियम कहते है–लोहेके दृढकढावमें मद२अग्निसें तैलपाक करे–जव यहतेल झागरहित होय तव चूल्हेसें उतारलेवे कुछशीतल होनेपर–पिसी हलदीको जलमें घोरकरक्रमसें धीरे२ उसतेलमें डाले और ओटाता जाय इसी प्रकार कुटी मजीठको जलमें घोरके धीरे२क्रमसे डाले–फिर लोध नागरमोथा–नलिका–आवला–वहेडा–हरड–केतकीकीजड–वडकीकोपल और नेत्रवाला इन सवको पीस जलमें मिलाय पृथक् २ तेलमें क्रमसे डाले–तथा इसतेलमें चौगुना जलमिलाय फिर पाककरे जव कुछजल वाकीरहे तवउतारके ७ दिनधरा रहनेदे तो तैलकी दुर्गंध दूरहोय । इसी हलदी और मजीठ आदि द्रव्यको मूर्च्छा द्रव्य कहते है ॥

तैलस्येन्दुकलांशिकैकविकसाभागोऽपिमूर्च्छाविधौ ॥
येचान्येत्रिफलापयोदरजनीह्रीवेरलोध्रान्विताः ॥
सूचीपुष्पवटावरोहनलिकास्तस्याश्चपादांशिका ॥

दुर्गंधंविनिहंतितैलमरुणंसौरभ्यमाकुर्वते ॥

अर्थ—अवइनके परिमाणका नियम कहते है कि जितनातेल होवे उसके षोडशांश मजीठ लेनी चाहिये और बाकी सब द्रव्य मजीठकी चतुर्थांश लेनी-जैसे तेल १६ सेर तो मजीठ १ सेर एवं हरदी–लोध–हरड–बहेडा–आमला–नागरमोथा–नेत्रवाला–इत्यादि द्रव्य सब पाव २ भरलेनीचाहिये मूर्च्छाके करनेसैं तेलकी दुर्गंध दूरहोती है और उत्तम सुगंध आने लगें है तथा उस तेलका लालवर्ण उत्पन्न होताहै ॥

## कटुतैलमूर्च्छा

वयस्थारजनीमुस्तविल्वदाडिमकेशरैः । कृष्णजीरक ह्रीवेरनलिकैः सविभीतकैः ॥ एतैः समांशैप्रस्थेचकर्ष मात्रंप्रयोजयेत् । अरुणोद्विपलंतत्र तोयंचाढकसंमितं कटुतैलंपचेत्तेन आमदोषोपशान्तये ॥

अर्थ—कटुतैलके मूर्च्छाकी औषधये है–आमला–हरदी–नागरमोथा–बेलकी छाल अनारकी छाल–केशर–कालाजीरा–नेत्रवाला–नलिका–बहेडा–और मजीठ । मूर्च्छा करनेकी विधि पूर्ववत् जाननी । अर्थात् तैल निरफेन होजावे तब उतारके हरदीजलमें घोरके तैलमें छिरके–फिरमजीठको छिडके–फिरअन्य २ सब वस्तुओंको तेलमें डाले ४ सेर कडुआतेल–मजीठ २ पल–और २ द्रव्य प्रत्येक दोदो तौलालेवे और जल १६ सेरमिलायके पाककरे ॥

## एरंडतैलमूर्च्छा

विकसामुस्तकंधान्यंत्रिफलावैजयन्तिका ॥ ह्रीबेरवनखर्जूरवटशुंगानिशायुगं । नलिकाभेपजंदेयंकेतकीच समंसमम् । प्रस्थेदेयंशुक्तिमितंमूर्च्छनेदधिकांजिकम् ॥

अर्थ—एरंडतेलकी मूर्छा द्रव्य ये है–मजीठ–नागरमोथा–धनिया–त्रिफला अरनीके पत्ते नेत्रवाला–वनखजूर–वडकीकोपल–हरदी–दारहलदी–नलिका–केतकीकीजड–दही–कौंजी–प्रत्येक चार २ तोला, तेल अंडीका ४ सेर–पूर्वोक्त रीतिके अनुसार मजीठ आदिसैं मूर्छा करे

## घृतमूर्च्छा

पथ्याधात्रीविभीतैर्जलधररजनीमातुलुंगद्रवैश्चद्रव्यै

रेतैसमस्तैः पलकपरिमितैर्मन्दमन्दानलेन। आज्यं प्रस्थंविफेनंपरिचपलगतंमूर्च्छयेद्वैद्यराजः तस्मा दामोपदोषंहरतिचसकलंवीर्यवत्सौख्यदायि ॥

अर्थ—हरड–आमले–बहेडा–नागरमोथा- हलदी–और नीबूकारस येसव वस्तु घृतकी मूर्च्छाद्रव्यहै। प्रथमहलदी–पश्चात् नीबूका रस फिर और २ द्रव्य संपूर्ण डालके पूर्ववत् मूर्च्छित करे-मूर्च्छाद्रव्य प्रत्येक एक २ पल लेवे घृत ४ सेरले और जलपाकार्थ १६ सेर मिलावे ॥

## वातहरतैलानांविशेषमूर्च्छाविधिः

आम्रजंबूकपित्थानांबीजपूरकबिल्वयोः ॥
गन्धकर्मणिसर्वत्रपत्राणिपञ्चपल्लवम् ॥
पंचपल्लवतोयेनगंधानांक्षालनंमतम् ॥

अर्थ—वातघ्न ( नारायणतैल -विषगर्भादि ) तैलोंकी मूर्छामें पूर्वोक्त साधारण नियमकरे। तथा पंचपल्लवजलमें फिरशोधनकरे। उसका नियम यह है कि- आम–जामुन–कैथ, बिजोरा–और बेल इनसबके पत्ते तेलके अष्टमांस लेकर चौगुने जलमें काढाकरे, जबचतुर्थांश बाकी रहे तबउतारके छानलेवे। फिरइसकाढे केसाथ उत्तममूर्छित तैलको फिरपाककरे ॥

## स्नेहपाकमेंकालकानियम

मूर्च्छास्यात्सप्तभिः सिद्धारात्रिभिर्बुधसंमता ॥ व्रीहि प्राण्यंगयोपाकःसद्यःसिध्यतिनान्यथा ॥ स्यात्पाकः पयसोद्वाभ्यांस्वरसादेस्तुतिसृभिः ॥ दधिकांजिकत क्राणांसिद्धोभवतिपञ्चभिः॥मूत्रादीनामेकयास्यात्ततः कल्कस्यसप्तभिः ॥ गंधानांपंचभिर्ज्ञेयः स्नेहपाकेत्वयंक्रमः ॥

अर्थ—तैलादिककी मूर्च्छा ७ दिनमें होती है—अर्थात् मूर्च्छा द्रव्य संपूर्ण पाकके अंतर ७ दिन तकउतारके डालते है। तत्पश्चात् मटरआदिका काढा और उसके पीछे मांसादिक काढेके साथ तैलकापाक करना। इत्यादिकमें एकएक दिनलगता है, फिरदूधके साथ पाककरना इसमें दोदिन लगते है, फिर स्वरस तथा क्काथके साथपाककरनेमें तीनदिनलगते है, फिरदही–काजी–और छाछइनके साथ पाकमें पांच ५ दिनलगते है। तत्पश्चात् मूत्रादिकके साथपाककर

नेमें एकदिनलगता है। फिरकल्कपाक ७ दिनमें होता है—सवके पीछे गंधपाक अर्थात् गंधद्रव्य केसाथपाक ५ दिनमें होता है, तथादूध—दही—इनकेसाथ पाकक रनेमें एकएक दिनलगता है॥

## चतुर्विधस्नेह

स्नेहश्चतुर्विधः प्रोक्तोघृतंतैलंवसातथा॥
मज्जाचतंपिवेन्मर्त्यः किंचिदभ्युदितेरवौ॥

अर्थ—स्नेह ( चिकनाई ) चारप्रकार की है—जैसे—घी—तेल—वसा ( मांसस्नेह) और मज्जा (हड्डी सें निकलातेल) एचारोप्रकारके तेल किंचिन्सूर्योदय होनेपर तथानहोनेपर पीनेचाहिये॥

## द्विविधस्नेह

स्थावरंजंगमंचैवद्वियोनिः स्नेहउच्यते॥
तिलतैलंस्थावरेषुजंगमेषुघृतंवरम्॥

अर्थ—वो स्नेह दोप्रकारका है एकस्थावर और दूसराजंगम ये दोही स्नेहकी योनि है, तिनमें स्थावर पदार्थके स्नेह बहुत है उनमें तिलका तैल उत्तम है। और जंगमपदार्थोंमें घी आदिशब्दसें वसादिक अनेक है उनमें घीश्रेष्ठ है इसप्रकार स्नेहके दोभेद जानने॥

## स्नेहकेभेद

द्वाभ्यांत्रिभिचतुर्भिस्तैर्यमकस्त्रिवृतोमहान्॥

अर्थ—घी और तेल दोनोके मिलनेसें उसको यमक कहते है—और घी—तेल तथा वसा ( चर्वी ) येतीन एकत्र होनेसें उसकी त्रिवृत संज्ञा हे। तथा घी—तेल—वसा—और मज्जा इन चारोके एकत्र मिलने सें उसकी महान् संज्ञा है। इसप्रकार स्नेहके तीन भेद जानने॥

## स्नेहपाकविधिः

विघ्नेशक्षेत्रपालौवटुकमपिशुभेवासरेपूजयित्वातैल
स्याज्यस्यकिंवारचयतुनिपुणः संस्कृतिंसंप्रदायात्॥

---

१ 'मांसा दष्टगुणं घृतं', अर्थात् मांसकी अपेक्षा घृत अठगुना अधिकहै, इसी कारण प्रथम घृत लिखाहै। २ मांससे घृतके समान तेल निकलता है अतएव उसको मांस स्नेह अथवा चर्वी कहते है। ३ जो नहीं चले [ जैसे वृक्षादि ] उनको स्थावर। ४ और चलनेवाले [ गौ,—भैस,—मनुष्य आदि ] को जंगम कहते है।

आदौवन्हिंप्रदद्याल्लघुरथशनकैः फेनशब्दावधिः स्यात् ॥ पश्चान्मृत्पिंडकैस्तद्दशभिरलघुभिर्नातिपीनैर्विशोध्यम् ॥

अर्थ—श्रीगणपती-क्षेत्रपाल और वटुक इनका शुभदिनमें पूजनकर-फिर तेल-अथवा घीकी विधिको कुशल वैद्य गुरु संप्रदायानुसार प्रारंभ करे-प्रथम तेलको लोह आदिके कढावेमें चढाय चूल्हे पररखके मंद मंद अग्निदेवे कि जवतक तैलमें झागन आवे और घीमेंशब्द नहोवे-फिरक्रमसैं अग्निको वढावे। पश्चात् मिट्टीके दशगोला कि जोनवहुत वडे और नवहुतछोटे हो ऐसेले करउनसैं शोधनकरे

कल्काच्चतुर्गुणीकृत्यघृतंवातैलमेववा ॥ द्रव्येचतुर्गुणेसाध्यंतस्यमात्रापलोन्मिता ॥

अर्थ—कल्कसैं चौगुना घीवा तेल लेवे उसको चतुर्गुण द्रव्यमें साधनकरे जिसकी मात्रा एकपल ( ४ तोले ) की है ॥

## स्नेहसाधनमेंक्वाथ्यऔरजलादिकाप्रमाण

निक्षिप्यक्वाथयेत्तोयंक्वाथ्यद्रव्याच्चतुर्गुणम् ॥ पादशिष्टं गृहीत्वातुस्नेहस्तेनैवसाधयेत् ॥ चतुर्गुणंमृदुद्रव्यकठिनेऽष्टगुणंजलं। मृद्वादिक्वाथ्यसंघातेदद्यादष्टगुणंपयः ॥ अत्यंतकठिनेद्रव्येनीरंषोडशिकंमतम् ॥

अर्थ—अनेक स्थलमें क्वाथके साथ घी वा तैलका पाककरते है इसीसैं क्वाथवनानेका नियम लिखतेहै। क्वाथ्यद्रव्य ( जिसकी क्वाथकरीजावेगी ) यदिनम्रहोवे तो चौगुनाजलडाले-और यदिमध्यमहोय अर्थात् न बहुत करडी और नवहुत नरम तो अठगुना जलमिलावे, तथा जो द्रव्य अत्यंत कठोर होवे तो सोलह गुना-जलडालके क्वाथ सिद्धकरे-जवचतुर्थांशशेषरहे तव उतारके छानलेवे। ऐसाकाढा स्नेहसै चौगुनालेना चाहिये ॥

## अन्यच्च

कर्षादितःपलंयावत्क्षिपेत्षोडशिकंजलं ॥ तदूर्ध्वंकुडवं-यावद्भवेदष्टगुणंपयः॥प्रस्थादितःक्षिपेन्नीरंखारीयावच्चतुर्गुणम्।

अर्थ—अन्यत्रभी लिखाहै कि क्वाथवनानेमें क्वाथ्य द्रव्यका परिमान १ कर्षसैं लेकर पलपर्यंत होनेसे सोलहगुनाजल डालना-और पलसैं लेकर कुडव पर्यंत

आठगुना जलडालना एवं प्रस्थसैं लेकरखारी पर्यंत द्रव्य होवेतो उसमें चौगु-ना जलडालना न्यूनाधिक नहीं डालना ॥

तुलाद्रव्येजलद्रोणोद्रोणेद्रव्यतुलामता ।

अर्थ—जहांजलका परिमाणकुछ नहीं कहा वहाँ १२॥ सेर द्रव्यमें ६४ सेर जलडालके क्काथकरे । एवं ६४ सेर जलमें क्काथ्यद्रव्य १२॥सेर डालनी चाहिये॥

अनिर्दिष्टप्रमाणानांस्नेहानांप्रस्थइष्यते ।
जलस्नेहौषधानांचप्रमाणंयत्रनोदितम् ॥
तत्रस्यादौषधात्स्नेहःस्नेहात्तोयंचतुर्गुणम् ।
स्नेहसिद्धौद्रव्येऽनुक्तेसर्वत्राम्भश्चतुर्गुणम् ॥
गन्धद्रव्याणिचेच्छन्तिकल्कस्यार्धांशिकानिच ॥

अर्थ—स्नेह पाकमें जहां विशेष कुछनहीं लिखा उसजगे स्नेह १ सेर लेना चाहिये, तथा जलस्नेह- और कल्कद्रव्यका परिमाणन लिखाहो तहां कल्कचौगुनाले-ना स्नेह और कल्कपाकार्थ जलका परिमाण स्नेहसैं चौगुनालेना चाहिये । स्नेह पाकमें द्रव्य पदार्थ का जहां उल्लेख न होवे तहां चौगुना जलडालके पाक करना। तथा तैल पाकमें गंधद्रव्यका परिमाण कल्कके परिमाणसैं आधा जानना चाहिये

स्नेहपाकविधौयत्रक्षीरमेकंतुकथ्यते ।
तोयादीनामनिर्देशेक्षीरमेवचतुर्गुणम् ॥
द्रव्यान्तरेणयोगेतुक्षीरंस्नेहसमंविदुः ॥

अर्थ—स्नेह पाकमें यदि दुग्धके सिवाय और पदार्थ नहो अर्थात् केवल दूधसैं ही पाककरना होवेतो दूधस्नेहसैं चौगुनालेना चाहिये । और यदि पाकमें जल अथवा अन्य द्रव्यका संयोग होवेतो दूधस्नेहके बराबरही लेना यह नियमहै।

वृन्देतु

स्वरसक्षीरमाङ्गल्यैर्पाकोयत्रेरितःक्वचित्।
जलंचतुर्गुणंतत्रवीर्याधानार्थमावपेत् ।
नमुंचतिरसंद्रव्यंक्षीरादिभिरुपस्कृतम् ।
सम्यक्पाकोनजायेततस्मात्तोयंचतुर्गुणम् ॥

अर्थ—वृन्दग्रंथमें लिखाहै कि स्वरस- दूध-अथवा दही इनकरके पाक करना कहाहो वहां कहीं २ चौगुना जल मिलाकर पाककरते है इसकातात्पर्ययहहै कि

१ कल्का चतुर्गुणः स्नेहः स्नेहात्क्काथश्चतुर्गुण. क्काथाच्चतुर्गुणंवारिक्काथ्य क्काथ्यमनेन

: दूधआदिके गाढा होनेपर कल्कादिद्रव्यका रस अच्छीतरहनहीं निकलता अतएव उत्तम पाकभी नहींहोवे–इसी कारण चौगुना जल डालनेसैं पाकठीक २ होताहै और द्रव्योंमें वीर्यकी प्राप्तिहोती है इससे चौगुना जल डालना चाहिये ॥

पंचप्रभृतियत्रस्युद्रव्याणिस्नेहसंविधौ ।
तत्रस्नेहसमान्याहुरर्वाक्चस्याच्चतुर्गुणम् ॥

अर्थ—स्नेहपाकमें पांच अथवा पांचसैं अधिक द्रव्य होवेतो प्रत्येक द्रव्यका प्रमाणस्नेहके समानलेना चाहिये । यदि पांचसे न्यून ( कम ) होवे तो उनको स्नेहसैं चौगुनालेना चाहिये ॥

अम्बुक्काथरसैर्यत्रपृथक्स्नेहस्यसाधनम् ।
कल्कस्यांशंतत्रदद्याच्चतुर्थंपष्ठमष्टमम् ॥

अर्थ—जलद्वारा स्नेह पाककरना होवे तो कल्क द्रव्यका परिमाणस्नेहसैं चतुर्थांशलेवे । क्वाथके द्वारापाककरना होयतो कल्कका परिमाण स्नेहसैं छटाभागलेवे । एवं स्वरस द्वारापाक करना होयतो स्नेहका अष्टमांस रसलेना चाहिये ॥

दुग्धेदधिरसेतक्रेकल्कोदेयोऽष्टमांशिकः ।
कल्काच्चसम्यक्पाकाथतोयमत्रचतुर्गुणम् ।
कल्कात्कल्कद्रव्यात्चतुर्गुणतोयंपेषणार्थं ॥

अर्थ— दूध–दही–स्वरस अथवा छाछद्वारा पाककरना होवेतो स्नेहका अष्टमांश कल्क और कल्कका चौगुनाजल डालना चाहिये । चौगुना जल कल्कके पीसनेके वास्ते लेतेहैं ॥

क्वाथेनकेवलेनैवपाकोयत्रोदितःक्वचित्।क्वाथ्यद्रव्यस्य-
कल्कोऽपितत्रस्नेहेप्रयुज्यते । कल्कहीनस्तुयःस्नेहः
ससाध्यःकेवलेद्रवे।केवलेद्रवेक्वाथेतरस्मिन्स्वरसादिरूपे॥

अर्थ—जहां केवल क्वाथ द्वारा स्नेह साधन कहाहो तो उसजगे क्वाथ्य द्रव्यका कल्कभी मिलायके पाककरे । जहां कल्कके विना स्नेहपाक करनाहोय उसजगे क्वाथके सदृश अन्य द्रव पदार्थके साथ अर्थात् स्वरसादिके साथ पाककरना चाहिये ॥

पुष्पकल्कस्तुयःस्नेहस्तत्रतोयंचतुर्गुणम् ।
स्नेहात्स्नेहाष्टमांशश्चपुष्पकल्कप्रयुज्यते ॥

अर्थ—कल्क द्रव्ययदि पुष्पहोयतो उसको स्नेहका अष्टमांसलेवे और पाकार्थे स्नेहका चौगुना जलडालना चाहिये ॥

आदौकल्कः प्रदातव्योगंधद्रव्यंततः परम् । तैलमुत्तार्यदातव्यंशिह्लकंकुङ्कुमंनखम् ।गंधचंदनकर्पूरमेलावीजंलवंगकम् ॥

अर्थ—प्रथम कल्कपाककरे–फिर गंधद्रव्यका पाककरे–गंधद्रव्य समग्रकल्कके परिमाणसैं आधी होनी चाहिये। तैलकादूनाजलदेकर गंधपाककरे गंध द्रव्यमें शिलारस, केशर, नख, सपेद चंदन, कपूर, छोटी इलायची, और लौग इनका पाक नहींकरना इनको पाकांतमें तैल चूल्हेसै उतार शीतलकर उसमें येद्रव्यपीसके डालदेवे और कौंचासे सबको मिलायके एकजीव करदेना चाहिये ॥

## गंधद्रव्याणि

एलाचंदनकुंकुमागरुमुराकङ्कोलमांसीशटी ॥ श्रीवासच्छदग्रन्थिपर्णशशभृत्क्षौणीध्रजोशीरकम् ॥ कस्तूरीनखपूतितैलजलमुङ्मेथीलवंगादिकम् गंधद्रव्यमिदंप्रदेयमखिलंश्रीविष्णुतैलादिषु ॥

अर्थ—छोटी इलायची,–सपेद चंदन,–केशर,–अगर,–जटामांसी,–कचूर,–सरलकाष्ठ,–तेज पत्र,–गठीला,–कपूर,–शिलाजीत,–खस,–कस्तूरी,–नख,–मुश्कविलाई,–शिलारस,–नागरमोथा,–मेथी, लौग, इत्यादि गंधद्रव्य कहाती है नारायण तैल आदिमें येसंपूर्ण गंधद्रव्य देनी चाहिये ॥

## स्नेहपाकपरिज्ञानम्

वर्तिवत्स्नेहकल्कःस्याद्यदाङ्गुल्याविवर्तितः ॥
शब्दहीनोऽग्निनिक्षिप्तः स्नेहःसिद्धोभवेत्तदा ॥
यदाफेनोद्गमस्तैलेफेनशांतिश्चसर्पिषि ॥
गंधवर्णरसोत्पत्तिः स्नेहः सिद्धोभवेत्तदा ॥

अर्थ—स्नेह पाकमें जब कल्कको उगलियोंके मींडनसैं बत्तीसी होने लगे तथा अग्निमें उसको गेरनेसैं चट चटाहट शब्द नकरे तब जाननाकि स्नेह, सिद्ध होगया। जिस समय तेलमें झाग आवे और घीमें झाग आना बंदहो जावे तथा उपयुक्त वर्ण गंध और रसकी उत्पत्ति होवे तब जाननाकि पाक सिद्ध होचुका ॥

## त्रिविधपाक

स्नेहपाकस्त्रिधाप्रोक्तोमृदुर्मध्यःखरस्तथा। ईषत्स्वर
सकल्कस्तुस्नेहपाकोमृदुर्भवेत्। मध्यपाकस्यासिद्धि
श्चकल्केनीरसकोमले। ईषत्कठिनकल्कश्चस्नेहपाको
भवेत्खरः। तदूर्ध्वंदग्धपाकः स्याद्दाहकृन्निष्प्रयोजनः
आमपक्वश्चनिर्वीर्योवह्निमांद्यकरोगुरुः ॥

अर्थ—स्नेहपाक तीन प्रकारका है १ मृदु— २ मध्य— ३ खर—तहां कल्क द्रव्यका कुछ थोडासारस अंश बाकी रहनेसें मृदुपाक कहाताहै। और जो कोमल होय तथा रस रहितहो उसको मध्यपाक कहतेहे। एवं कुछ थोडा कठिन होनेसें खर पाक कहाताहै। इसके उपरांत कठिन पाक होनेसें दग्ध पाक कहाताहै। ऐसा स्नेह कार्य साधक नही होता—येदाहको प्रगट करेहै तथा आमपक्व (कच्चे पाकका) स्नेह निर्वीर्य—मंदाग्नि करता औरभारी होताहै ॥

नस्यार्थंस्यान्मृदुः पाकोमध्यमः सर्वकर्मसु ॥
अभ्यंगार्थः खरप्रोक्तोयुंज्यादेवंयथोचितम् ॥

अर्थ—नस्यके अर्थ मृदुपाकवाला स्नेह लेना, और मालिसमें खरपाक लेना, तथा मध्यपाक स्नेह सर्व कार्योपयोगी जानना ॥

घृततैलगुडादींश्चसाधयेन्नैकवासरे ॥
प्रकुर्वंत्युषिताह्येतेविशेषाद्गुणसंचयम् ॥

अर्थ—घृत-तैल-औरगुड आदिपाक एक दिनमें न साधन करे, इसका यह-कारणहै किउषित ( वासित ) अर्थात् अधिक दिनमें सिद्धकरा हुआपाक विशेष गुणोंको करताहै इसी कारण धीरे धीरे साधन करे ॥

## अथस्नेहसेवनविधिः

गुरुशीतसरस्निग्धमंदसूक्ष्ममृदुद्रवम् ॥ औषधंस्नेहनं
प्रायोविपरीतंविरूक्षणम्। सर्पिर्मज्जवसातैलंस्नेहे
षुप्रवरंमतम् ॥ तत्रापिचोत्तमंसर्पिः संस्कारस्यानुवर्त्त
नात्। घृतात्तैलंगुरुर्वसातैलान्मज्जाततोऽपिच ॥

अर्थ—गुरु,-शीत,-सर,-स्निग्ध,-मंद सूक्ष्म,-मृदु,-और द्रव,-गुणयुक्त द्रव्य समस्त स्नेहन जाननी। इसके विपरीत अर्थात् लघु,-उष्ण,-स्थिर,-रूक्ष,-स्थूल,-क-

ठिन, और सांद्रगुण, विशेष द्रव्यमात्र माय रूक्षण जाननी। स्नेहपदार्थमें घृत-मज्जा-वसा-और तेल ये चार प्रधान है। इस स्नेहचतुष्टय मेभी घृत उत्तम है। कारण यहहै कि इस घृतके अन्य द्रव्यके साथ संस्कार होनेसें निजशक्ति और संस्कृत द्रव्यकी शक्तिकों प्रकाश करे है। घृतसे तैल, तैलसे भारीवसा है, औरवसासैं भारी मज्जा जाननी ॥

## स्नेहपीनेकाक्रम

पिबेत्र्यहंचतुरहं पंचाहंषडहंतथा ॥

अर्थ—घी तीन दिन पीवे-और तैल चार दिन पीवे तथा मांस स्नेह पांच दि पीवे-और हड्डीका तेल ६ दिन पीना चाहिये। इस प्रकार क्रम करके घृता स्नेह पीनेका क्रम जानना ॥

सप्तरात्रात्परंस्नेहः सात्मीभवतिसेवितः ॥

अर्थ—सात दिवसके अनंतर घृतादिक स्नेह पीनेसैं आहारके समान हो जाता है। फिर गुण अवगुण कुछ नही करता ॥

## स्नेहपानमेंयुक्ति

दोपकालाग्निवयसांबलंदृष्ट्वाप्रयोजयेत्।
हीनांचमध्यमांज्येष्ठांमात्रांस्नेहस्यबुद्धिमान् ॥

अर्थ—वातादिक दोप-काल-अग्नि-अवस्था इनका बलाबल विचारके घृतादिक स्नेहोंकी सेवनकी मात्रा हीन[1]-( अल्प ) और मध्य[2]-तथा ज्येष्ठ[3]-इनमेंसें शक्तिका तारतम्य देखकर देनी चाहिये ॥

## अविधिस्नेहसेवनकेदोप

अमात्रयातथाकालेमिथ्याहारविहारतः।
स्नेहःकरोतिशोफार्शस्तन्द्रानिद्राविसंज्ञितः ॥

अर्थ— घृतादिकस्नेह पीनेका प्रमाण कहाहै उसकी अपेक्षा कम अथवा ज्यादे पानेसैं, तथा पीनेका कालछोडकर अन्यकालमें पीनेसैं, तथा घृतादिकस्नेह पीकर मिथ्या आहार और मिथ्या विहार करनेसैं, उस स्नेहसें सूजन और बवासीर होतीहै तथा तंद्रा आनकर घोरनिद्रा आतीहै तथा संज्ञाका नाश होताहै।

१ स्नेह पीनेमे २ कर्षकी मात्रहीन है २ तीन कर्षकी मात्रा मध्यम जाननी ३ एक पल प्रमाणकी जो मात्रा है सो ज्येष्ट ( बडी ) जाननी

## स्नेहयोग्यमनुष्य

स्वेद्यसंशोध्यमद्यस्त्रीव्यायामासक्तचिंतकाः ।
वृद्धबालाबलकृशारूक्षक्षीणास्त्ररेतसः ॥
वातार्तसंधितिमिरदारुणप्रतिबोधिनः ॥

अर्थ— औषध करके जिसका पसीना काढाहो, रेचक औषध करके शुद्धकराहुआ, मद्य पीनेवाला, स्त्रीपरिश्रमसैं थकाहुआ, चिंताकरके व्याप्त, वृद्ध, बालक, कृश, रूक्ष, क्षीण, रुधिरवाला, धातुक्षीण, वादीकरकेपीड़ित, तिमिर, रोगसैं व्याप्त एसे प्रकारके मनुष्यघृतादिक स्नेहपीनेके योग्यहै ऐसा जानना ।

## स्नेहक्रियाअयोग्य

स्नेह्यानत्वतिमन्दाग्नितीक्ष्णाग्निस्थूलदुर्बलाः ।
उरुस्तंभातिसारामगलरोगगरोदरैः ॥
मूर्च्छाछर्द्यरुचिश्लेष्मतृष्णामद्यैश्चपीडिताः
अपप्रसूतायुक्तेचनस्येबस्तौविरेचने ॥

अर्थ—अत्यंत मंदाग्निवाला, अत्यंत तीक्ष्णाग्निवाला, अतिस्थूल, अत्यंतदुर्बल, एवं ऊरुस्तंभ, अतिसार, आम, गलरोग, विषरोग, उदररोगी, मूर्च्छा, वमन, अरुचि, कफ, तृषा और मदात्यय रोगसैं पीडित, अकाल प्रसूता नारी, इत्यादिरोगी तथा नस्य वस्ती और विरेचन करचुकाहो ऐसे मनुष्योंको स्नेहन क्रिया करना निषेधहै।

## ( घृतयोग्य )

तत्रधीस्मृतिमेधाग्निकांक्षिणांशस्यतेघृतम् ॥

अर्थ— तहां बुद्धि स्मृति ( स्मरण ) मेधा और अग्निवृद्धि इनके निमित्त स्नेह प्रयोग करनेंवालोंको घृत प्रयोग उत्तमहै ॥

## ( तैलयोग्य )

ग्रन्थिनाडीक्रिमिश्लेष्ममेदोमारुतरोगिषु॥तैललाघवदार्ढ्यर्थेक्रूरकोष्ठेषुदेहिषु॥वातातपाध्वभाषास्त्रीव्यायामाक्षीणधातुषु ॥

अर्थ— गांठ, नाडीव्रण, कृमि, कफ, मेदा, वायुरोगसैं पीडित, क्रूरकोठेवाला, एवं हवा, धूप मार्गचलना, अधिकपुकारना ( पढना गानाआदि ) स्त्रीसंभोग, और दंडकसरत, इत्यादिकारणोंसैं क्षीणधातुवालोंके पक्षमें तथा हलकापन और दृढताके निमित्त तैलका प्रयोग अतिउत्तमहै ।

## वसाऔरमज्जाकेअधिकारी

रूक्षक्लेशक्षमात्यग्निवातावृतपथेषुच ॥ शेषौवसातु

अर्थ— रूक्षदेह, क्लेशकासहनेवाला, अत्यंत अग्निदीप्तवाला, इनको करके मार्गरुका हुआ ऐसे मनुष्योंको वाकीके दोस्नेह वसा और . । री जानने ॥

## वसाकाप्रयोग

सन्ध्यस्थिमर्मकोष्ठरुजासुच ॥ तथादग्धाहतेभ्रष्टेयोनि- कर्णशिरोरुजि ॥

अर्थ—संधि, हड्डी, मर्म, कोष्ट, कर्ण, और मस्तककी पीडा, एवं दग्धयो .हतयोनि, और भ्रष्टयोनि, ऐसीस्त्रियोंके पक्षमें वसा अत्यंत हितकारी है॥

## ऋतुपरत्वघृततेलादिकासेवन

तैलंप्रावृषिवर्षान्तेसर्पिरन्यौतुमाधवे॥ऋतौसाधारणे- स्नेहः शस्तोऽन्हिविमलेरवौ ॥

मध्यमायत्रिकर्षास्याज्जघन्यायद्विकार्षिकी॥

अर्थ—जिसमनुष्यकी दीप्ताग्नि होवे उसको घृतादिक स्नेहकी मात्रा १ पल पिलानी चाहिये। और जिसकी मध्यम अग्निहै उसमनुष्यको तीनकर्ष प्रमाणदेवे तथा जिसकी मंद अग्निहोवे उसको दोकर्ष प्रमाणकी मात्रा देनीचाहिये।

## प्रकारांतर

अथवास्नेहमात्राः स्युस्तिस्रोन्याः सर्वसंमताः॥
अहोरात्रेणमहतीजीर्यत्यह्नितुमध्यमा॥
जीर्यत्यल्पादिनार्द्धेनसाविज्ञेयासुखावहा॥

अर्थ—संपूर्ण ऋषियोंको मान्य—ऐसी दूसरी घृतादिक स्नेह—व्यवस्थापक मात्रा तीनप्रकारकीहै उसको कहतेहै। जोमात्रा आठप्रहरमें पचे उसको बडीमात्रा कहतेहै वो एक पलकी जाननी। और जोमात्रा एकदिनमें पचे उसको मध्यम कहतेहै वो तीनकर्षकीहै। तथा जों मात्रादोप्रहरमें पचे उसको अल्पा(छोटीमात्रा) कहतेहै वो दोकर्षकी जाननी यह सुखदायकहै अर्थात यह सबको पचनहोसक्तीहै।

## अल्पादिकमात्राओंकेगुण

अल्पास्याद्दीपनीवृष्यास्वल्पदोषेसुपूजिता।
मध्यमास्नेहनीज्ञेयाबृंहणीभ्रमहारिणी॥
ज्येष्ठाकुष्ठविषोन्मादग्रहापस्मारनाशिनी।

अर्थ—घृतादिक स्नेह पीनेकी जो दोकर्षकी अल्पमात्रा है वह जठराग्नि दीप्तकर स्त्रीसंगकी रुचि बढावे है, तथावातादिक दोषोंके अल्पप्रकोपको दूरकरे है। तथातीनकर्षकी जो मध्यममात्रा है। वोदेहको पुष्टकर धातुकी वृद्धिकरे तथाभ्रमको दूरकरे। एवं १ पलकीजो ज्येष्टमात्रा है वो कुष्ट—विष भूतोन्माद और अपस्मार इनका नाशकरे॥

## दोषोंमेंअनुपानविशेष।

केवलंपैत्तिकेसर्पिर्वातिकेलवणान्वितम्।
देयंबहुकफेवापिव्योपक्षारसमन्वितम्।

अर्थ—केवल पित्तके कोपमें घी मिलावे और वायुके कोपमें घी और निमक मिलायके पिवावे। तथा कफके अत्यंत कोप होनेसें व्योप[१]—तथाजवाखार. इनके चूर्णके साथदेवे॥

---

१ सोंठ,—मिरच,—पीपल, इन तीनोके समुदायको व्योप कहते है—

मध्यमायत्रिकर्षास्याज्जघन्यायद्विकार्षिकी॥

अर्थ—जिसमनुष्यकी दीप्ताग्नि होवे उसको घृतादिक स्नेहकी मात्रा १ पल पिलानी चाहिये। और जिसकी मध्यम अग्निहै उसमनुष्यको तीनकर्ष प्रमाणदेवे तथा जिसकी मंद अग्निहोवे उसको दोकर्ष प्रमाणकी मात्रा देनीचाहिये।

## प्रकारांतर

अथवास्नेहमात्राः स्युस्तिस्रोन्याः सर्वसंमताः॥
अहोरात्रेणमहतीजीर्यत्यह्नितुमध्यमा॥
जीर्यत्यल्पादिनार्द्धेनसाविज्ञेयासुखावहा॥

अर्थ—संपूर्ण ऋषियोको मान्य-ऐसी दूसरी घृतादिक स्नेह व्यवस्थापक मात्रा तीनप्रकारकीहै उसको कहतेहै। जोमात्रा आठप्रहरमें पचे उसको बडीमात्रा कहतेहै वो एक पलकी जाननी। और जोमात्रा एकदिनमें पचे उसको मध्यम कहतेह वो तीनकर्षकीहै। तथा जो मात्रादोप्रहरमें पचे उसको अल्पा(छोटीमात्रा) कहतेहै वो दोकर्षकी जाननी यह सुखदायकहै अर्थात यह सबको पचनहोसक्तीहै।

## आल्पादिकमात्राओंकेगुण

आल्पास्याद्दीपनीवृष्यास्वल्पदोषेसुपूजिता।
मध्यमास्नेहनीज्ञेयावृंहणीभ्रमहारिणी॥
ज्येष्ठाकुष्ठविषोन्मादग्रहापस्मारनाशिनी।

अर्थ—घृतादिक स्नेह पीनेकी जो दोकर्षकी अल्पमात्रा है वह जठराग्नि दीप्तकर स्त्रीसंगकी रुचि बढावे है, तथावातादिक दोषोंके अल्पप्रकोपको दूरकरे है। तथातीनकर्षकी जो मध्यममात्रा है। वोदेहको पुष्टकर धातुकी वृद्धिकरे तथाभ्रमको दूरकरे। एव १ पलकीजो ज्येष्टमात्रा है वो कुष्ट-विष भूतोन्माद और अपस्मार इनका नाशकरे॥

## दोषोंमेंअनुपानविशेष।

केवलंपैत्तिकेसर्पिर्वातिकेलवणान्वितम्।
देयंबहुकफेवापिव्योपक्षारसमन्वितम्।

अर्थ—केवल पित्तके कोपमें घी मिलावे और वायुके कोपमें घी और निमक मिलायके पिवावे। तथा कफके अत्यंत कोप होनेसे व्योप[1]-तथाजवाखार-इनके चूर्णके साथदेवे॥

---

१ सोंठ,-मिरच,-पीपल, इन तीनोके समुदायको व्योप कहते है—

## घृतयोग्य

रूक्षक्षतविषार्त्तानांवातपित्तविकारिणाम् ।
हीनमेधास्मृतीनांच सर्पिःपानंप्रशस्यते ॥

अर्थ—रूक्षमनुष्य–उरक्षत–और विषार्त्त मनुष्य–तथा वातपित्तके विकारी- एवं बुद्धि–स्मृति–करके हीन है उनको घृतकापिलाना उत्तम है ॥

## तैलयोग्य

कृमिकोष्ठानिलाविष्टाः प्रवृद्धकफमेदसः ॥
पिबेयुस्तैलसाम्ययेतैलंदीप्ताग्नयस्तुये ॥

अर्थ—कृमिरोगी, उदरविकारी–तथा वायुकरके व्याप्त है शरीर जिन्होका तथा प्रवृद्धहुआ है कफ और मेद जिनके ऐसे मनुष्योको तैल पिलावे । तथा जिनकी प्रकृतिको तेल सुहाता हो एवं प्रदीप्त है अग्नि जिनकी उनमनुष्योंको तैल पिलाना चाहिये ॥

## चर्वीयोग्य

व्यायामकर्षिताः शुष्करेतोरक्तामहारुजः ।
महाग्निमारुतप्राणावसायोग्यानराः स्मृताः ॥

अर्थ—कुस्ती कसरत तथा धनुष्यादिककाखींचना इनकरके जो पीडित है शरीर जिसका तथा क्षीणहै धातु और रक्त जिनका तथा देहमें घोरपीडाहै जिनके एव अग्नि और वायुहै प्रवल जिसके ऐसे मनुष्योको मासस्नेह पिलाना चाहिये ॥

## मज्जा( हड्डीकातेल )

क्रूराशयाः क्लेशसहावातार्तादीप्तवह्नयः ।
मज्जानंचापिबेयुस्तेसर्पिर्वासर्वतोहितम् ॥

अर्थ—दुष्ट है कोष्ठ जिन्होका तथा दुःख सहन करनेवाले मनुष्य तथा जो मनुष्य वायुकर्के पीडित है एवं प्रदीप्त है जठराग्नि जिन्होकी ऐसे मनुष्योंको हड्डीका तेलपिलाना अथवा घी पिलावे तो इसकार्यसें शरीरको हितहोता है ॥

---

१जिनमनुष्योंकी प्रदीप्त अग्निहै–तथा वायुका शरीरमें जैसा वर्त्तना चाहिये ऐसा वर्त्ते तथा अग्निके साथहो अन्नको पचन करे इसीसें अग्नि और वायु ये शक्तिदेनेवाले है तथा ये अनुकूल होवे तो मासका स्नेह पचन होय और ये अनकूल न होय तो नही पचे

२ आम २ अग्नि–३ पक्व–४ मूत्र–५ यकृत–६ प्लीहा–७ हृदय–८ उडुक–९ और फुप्फुस नो स्थानोको कोष्ट कहतेहै अर्थात् ए पदार्थ कोष्टमें रहते है

## स्नेहपानकाल

शीतकालेदिवास्नेहमुष्णकालेपिबेन्निशि ।
वातपित्ताधिकेरात्रौवातश्लेष्माधिकेदिवा ॥

अर्थ—शीतकालमें घृतादिकस्नेह दिनमें पीवे, और गरमीमें वात पित्त प्रबल होनेसैं रात्रिके समय पीवे । तथा कफवायु प्रबल होनेसै दिनमें पीवे इसप्रकार स्नेह पीनेका क्रमजानना ॥

## स्नेहकीस्थलविशेषमेंयोजना

नस्याभ्यंजनगंडूषमूर्धकर्णाक्षितर्पणे ।
तैलंघृतंवायुंजीतदृष्ट्वादोषबलाबलम् ॥

अर्थ—नाकमें डालनेके विषयमें तथा अंगमें मालिस करना कुल्ले करना-तथा मस्तक कान-और नेत्रोंकी तृप्तिके विषयमें वातादिकोंका बलाबल देख. तेल अथवा घृतकी योजनाकरे ॥

## स्नेहकेपृथक्२अनुपान

घृतेकोष्णजलंपेयंतैलेयूषः प्रशस्यते ।
वसामज्ज्ञोः पिबेन्मंडमनुपानंसुखावहम् ॥

अर्थ—घृतपीकर उसके ऊपर गरम जल पीवे-तथा तेल पीके ऊपर ज्योष[१] पीवे-मांस स्नेह अथवा हड्डीका तेल पीकर ऊपरसैं मंड[२]पीवे । तो सुखकारी होय याप्रकार स्नेहका अनुपानजानना ॥

## भातकेसंगस्नेहदेनेयोग्य

स्नेहद्विषः शिशून्वृद्धान्सुकुमारान्कृशानपि ।
तृष्णातुरानुष्णकालेसहभक्तेनपाययेत् ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेहसैं जिनको द्वेष (नफरत) है, तथा बाल-वृद्ध-सुकुमार मनुष्य और कृश तथा तृषा करके पीडित असे मनुष्यको गरमीके दिनोंमें भातके साथ घृतादिक स्नेह पिवावे ॥

## यवागूकेसद्यःस्नेहकारित्व

सर्पिष्मतीबहुतिलायवागूः स्वल्पतंडुला ।

---

१ चावल कुल्थी इत्यादिक धान्य एक पल ले उसमें जल १ मस्थ डालके औटावे और गाढीकरे उसको ज्योष असा कहतेहैं   २ भातके पेंजको मंड असा कहते है

सुखोष्णासेव्यमानातुसद्यःस्नेहनकारिणी ॥

अर्थ—तिलोंको कूट उसमें थोडे चावल मिलाय घी और पानी उनमें डालके चूल्हेपर चढायके ओंटावे मंदाग्निसें पतली लहपसीसी बनावे उसको यवागू कहते है यहयवागू कुछ गरम २ सेवनकरनेसें उसीसमय देहमें धातु उत्पन्न होती है अर्थात् सद्यस्नेहनकारिणी है ॥

घारोष्णदुग्धसैंतत्कालधातुउत्पन्नहोतीहै

शर्कराचूर्णसंमृष्टेदोहनस्थेघृतेतुगाम् ।

दुग्ध्वाक्षीरंपिबेदुष्णंसद्यःस्नेहनमुच्यते ॥

अर्थ—मिश्रीका चूरा धीमें डालके उस घीको चूल्हे परचढाय थोडा गरमकर दूधदुहनेके पात्र ( दोहनी ) में डाले फिरउसपात्रमें गौकादूध उसीसमय गरम २ होय उसको पीवे असाकरनेसें तत्काल स्नेहनहोताहै अर्थात् उसीसमय देहमें धातु उत्पन्न करता है ॥

मिथ्योपचारसैंजिसकोस्नेहनपचेउसकायत्न

मिथ्याचाराद्बहुत्वाद्वायस्यस्नेहोनजीर्यति ।

विष्टभ्यवापिजीर्यंतवारिणोष्णेनवामयेत् ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेह पीनेके पश्चात् व्यायामादिक परिश्रम करनेसैं यो स्नेह पचेनही अथवा बहुत पीनेसे नहीं पचा-अथवा मलके अवरोध करके जीर्णनही हुआ असे स्नेहाजीर्णी मनुष्यको गरम२ जल पीलाय कर उलटी करावे जिस्से स्नेहके अजीर्णका दोष दूरहोय ॥

दूसरायत्न

स्नेहस्याजीर्णशंकायांपिबेदुष्णोदकंनरः ।

ततोद्गारोभवेच्छुद्धोभक्तप्रीतिरुचिस्तथा ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेह पीनेसैं यदि अजीर्णहुआ असी शंका होय तो गरमागरम जल पीवे जिस्सै शुद्ध उत्तम डकार आकर अन्नके ऊपर रुचि आवे आतेही अजीर्णदूरहुआ असा जानना ॥

स्नेहनकरकेपित्तकोपहोतृषालगेउसकाउपाय

स्नेहनपैत्तिकस्याग्निर्यदातीक्ष्णतरीकृतः ।

तदास्योदीयतेतृष्णाविषमांतस्यपाययेत् ॥

शीतंजलंवामयेच्चपिपासातेनशाम्यति ॥

अर्थ—जिस मनुष्यकी आधी पित्तकी प्रकृति उसमें वो मनुष्य घृतादिक स्नेह पदार्थ पीवे तो उसकरके उसमनुष्यकी अग्नि अत्यंत तीक्ष्ण हो तृषाको वढावे उसतृषाके दूर करनेको उस मनुष्यको शीतलजल पिवावे तथा उलटीकरवावे कि जिस्सें अत्यंत प्यासका लगना दूरहो ॥

## वर्जितस्नेहीमनुष्य

अजीर्णीवर्जयेत्स्नेहमुदरीतरुणज्वरी ॥
दुर्बलोरोचकीस्थूलोमूर्च्छार्तोमदपीडितः ॥
दत्तवस्तिर्विरक्तश्ववांतितृष्णासमन्वितः ॥
अकालप्रसवानारीदुर्दिनेचविवर्जयेत् ॥

अर्थ—अजीर्णका विकार—उदररोगी—तरुणज्वरवाला[1]—दुर्बलमनुष्य—अरुचिवाला—अतिस्थूल—मूर्च्छारोगी—मद्यपीनेसें पीडित एवं वस्तिकर्म[2]कराहुआ—तथा जिसको दस्त होतेहो—उलटी करताहो—प्याससे पीडित तथा अकालमें प्रसूता स्त्री इन सब रोगियोंको घृतादिक स्नेह पान नहीकरना चाहिये—तथा जिसदिन वद्दलसें आकाश घिररहाहो उस दिनभी स्नेह पानकरना वर्जितहै ॥

## उत्तमस्नेहकेलक्षण

वातानुलोम्यंदीप्तोग्निर्वर्चःस्निग्धमसंहतम् ॥
मृदुस्निग्धांगताग्लानिः स्नेहोद्वेगोथलाघवं ॥
निर्मलेन्द्रियतासम्यक्स्निग्धेरूक्षेविपर्ययः ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेहपीकर अंगका रूखापन दूर होकर मनुष्य उत्तम स्निग्धहोनेसें उसके लक्षण दिखाते है कि वायु देहमें उत्तमरीतिसें संचारकरे । तथा मल सचिक्कण होवे और अधिक उतरे । तथा शरीर नम्र और सचिक्कण होवे—तथा ग्लानि रहितहो । तथा घृतादिकस्नेहके सेवन करनेसे किसी प्रकारका उपद्रव न होय शरीर हलका होय तथा इन्द्री निर्मल होवे एलक्षण उत्तमके है। और रूक्ष मनुष्य जो होताहै उसके लक्षण इनलक्षणोंसें विपरीत होते है तात्पर्य यहहै कि देहमे यथार्थ स्नेहन ( चिकनाई ) न होनेसे जो ऊपर लक्षणकहे है उस्सें विपरीत लक्षण होते है ॥

---

१ जिसका ज्वर परिपक्व न हुआ हो वो मनुष्य ।
२ गुदाके द्वारा तैल आदिकी पिचकारी मारनेका प्रयोग ।

## अधिक स्नेहपानकेउपद्रव

भक्तद्वेषोमुखस्रावोगुदेदाहः प्रवाहिका ॥
तन्द्रातिसारः पांडुत्वंभृशंस्निग्धस्यलक्षणम् ॥

अर्थ—जो मनुष्य घृतादिक स्नेह अधिक पीताहै उसके लक्षण ये है कि अन्नसैं द्वेषकरे मुखसैं लारगिरे-गुदामें दाहहोय-मल पतला उतरे-नेत्रोंमें तन्द्राहो-अतिसारहोय-तथा शरीर पीले रंगका होजावे ये अतिस्निग्धके लक्षण जानने ॥

## रूक्षकोंस्निग्धकरनाऔरस्निग्धकोरूक्षकरनेकाप्रकार

रूक्षस्यस्नेहनंस्नेहैरतिस्निग्धस्यरूक्षणम् ।
श्यामाकचणकाद्यैश्चतक्रपिण्याकसक्तुभिः ॥

अर्थ—रूक्षमनुष्यको स्निग्धपदार्थ-मक्खननिकाला हुआ, तत्कालका मट्ठा-तथा तिलोंका कल्क-तथा जोंका सत्व इत्यादिकरके स्निग्धकरे और स्निग्ध मनुष्यको रूक्ष पदार्थ जे साँमाखिया-पसाई-धान्य और चना इत्यादिककरके रूक्षकरना चाहिये ॥

## स्नेहसेवनका फल

दीप्ताग्निःशुद्धकोष्ठश्चपुष्टधातुर्जितेन्द्रियः ।
निर्जरोबलवर्णाढ्यःस्नेहसेवीभवेन्नरः ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेहके सेवनकरनेसै मनुष्यके लक्षण-जैसै कि अग्निदीप्तहो कोष्ठ शुद्धहोय-शरीरमें रसादिक धातु पुष्ट हो-तथावो मनुष्य जितेन्द्रीहोय तथा वृद्धावस्थारहितहो बल और कांति इनकरके युक्त होवे-एलक्षण होतेहै ॥

## स्नेहसेवनकेनियम

उष्णोदकोपचारीस्याद्ब्रह्मचारीक्षपाशयः । नवेगरोधीव्यायामक्रोधशोकहिमातपान् ॥ प्रवातयानपानाध्वभाष्याऽत्यासनसंस्थितीः । नीचात्युच्चोपधानाहःस्वप्नधूमरजांसिच । यान्यहानि पिबेत्तानि तावन्त्यन्यान्यपित्यजेत् ॥

अर्थ—घृतादि स्नेहसेवनकरनेवाला गरम जल पीवे-शीतलनपीवे-ब्रह्मचर्यमें रहे-रात्रिमें शयनकरे दिनमें न सोवे-मलमूत्रादिके वेगको रोकेनहीं उसी समय त्यागे-दंडकसरत-क्रोध-शोक-सरदी-धूप-अत्यंत हवाखाना-घोडे आदिकी

सवारी-मद्यआदिकापान-मार्गका चलना-बहुत बोलना-अत्यंतबैठारहना अत्यंत नीचा अथवा अत्यंतऊंचा मस्तकके नीचे तकिया धरके सोना-दिनमें सोना-धूंआके घरमें रहना-उडती धूरमें जानाआना इत्यादिक सब कर्म त्यागदेवे ये संपूर्ण नियम जितने दिन स्नेहपानकरे उतनेही दिन आगेतक पालनकरने चाहिये ॥

त्र्यहमच्छंमृदौकोष्ठेक्रूरेसप्तदिनंपिबेत् ॥
सम्यक् स्निग्धोऽथवायावदतःसात्मीभवेत्परम् ॥

अर्थ—मृदुकोष्ठवाला ३ दिन, क्रूरकोष्ठवाला७ दिन, अच्छ स्नेह पानकरें, मध्यकोष्ठवाला पांच दिन सेवनकरे, तब इसस्नेहका फल दीखे । सामान्यताकरके यह नियमहै किंतु जहांतक स्नेहपानके संपूर्ण लक्षण न मालुमहो तबतक स्नेहपानकरे तत्पश्चात् स्नेहपान सात्म्य अर्थात् अभ्यासमें आयजाताहै ॥

## स्नेहव्यापत्तीकायत्न

तक्रारिष्टखडोद्दालयवश्यामाककोद्रवम् । पिप्पली
त्रिफलाक्षौद्रपथ्यागोमूत्रगुग्गुलु ॥ यथास्वंप्रतिरोगंच
स्नेहव्यापदिसाधनम् ॥

अर्थ—स्नेहके उपद्रवसें यदि क्षुधा-तृषाजातीरहे वमन होय-पसीने आवे-तो रूक्षपान-रूक्षअन्नका भोजन-रूक्षऔषधि-तक्र-अरिष्ट-खड ( कताम्र विशेष ) उद्दाल ( धान्याविशेष ) यव-सामाखिया-कोदोधान्य-पीपल-त्रिफला-सहत हरड-गोमूत्र-तथागूगलइत्यादिकदेवे-तथा जिस २ रोगपरजैसी २ चिकित्सालिखी है वो स्नेह व्यापत्ती रोगोंमें करनी चाहिये ॥

## अथस्वेदविधि

स्नेहपानके अनंतर पसीने काढनेकी विधिकहते है तहां प्रथम पसीनेके भेद दिखाते है ॥

स्वेदश्चतुर्विधःप्रोक्तस्तापोष्मौस्वेदसंज्ञितौ ।
उपनाहोद्रवःस्वेदःसर्वेवातार्तिहारिणः॥

अर्थ—पसीना निकालना चारप्रकारका है उसके नाम जैसे-ताप-उष्म-उपनाह-और द्रव ये चार प्रकारके पसीने वादीकी पीडा दूर करने वाले है ॥

दोषकीतारतम्यतासेंस्वेदविधिः
महाबलेमहाव्याधौशीतेस्वेदामहान्स्मृतः ।

दुर्बलेदुर्बलस्वेदोमध्येमध्यतमोमतः ॥

अर्थ—जिसकेदेहमें घोर वादीका रोग है उसके अंगोंसें अत्यंत पसीना काढना चाहिये, तथा हलका रोग होयतो उसके अंगसें थोडा पसीनानिकाले, और मध्यमरोगीके देहसें मध्यम पसीने निकालने चाहिये ॥

## रोगविशेषमेंस्वेदविधिः

बलासेरूक्षणःस्वेदोरूक्षः स्निग्धःकफानिले। कफमेदावृतेवातेकोष्णगेहरवेःकरान्॥ नियुद्धंमार्गगमनंगुरुप्रावरणंध्रुवं।चिंताव्यायामभारांश्वसेवेतामयमुक्तये ॥

अर्थ—कफका रोगहोनेसें रूक्षपदार्थ जो वालुकादिक उस्सै देहका पसीनानिकालना और कफवायुका रोगहोनेसें स्निग्ध और रूक्षइनदोनो प्रकारके पदार्थोंसें पसीना निकालना चाहिये तथा कफ मेदोयुक्त वादीकारोग होनेसें—घरमें जिसजगे गरमी हो उसजगे वैठ अंगको सहन होय असीथोडी२गरमीलेनी चाहिये तथा सूर्यकी किरण अंगपरलेनी चाहिये। तथा कुस्तीकरे एवं कुछ थोडी रास्ता चले-कंवल,-धुस्सा,-इत्यादिक ओढे-तथा चिंतायुक्तहोना चाहिये परिश्रमकरे तथा कोई भारीवस्तु अंगोपर धारण करनी-इतने उपायपसीने निकालनेके अर्थकरने चाहिये जिस्से कफमे दोषयुक्तजो वायुका रोग सो दूरहोवे ॥

## पसीनेकाढनेयोग्यमनुष्य

येषांनस्यंविधातव्यंवस्तिश्वापिहिदेहिनाम् ।
शोधनीयाश्चयेकेचित्पूर्वस्वेद्याश्चतेमताः॥

अर्थ—जोनस्यकर्मके योग्यहै तथा वस्ति कर्मके योग्य तथा विरेचन देनेके योग्यउन सब मनुष्योंके अंगका पसीना प्रथम काढकर फिर नस्यादि उपाय करना चाहिये ॥

स्वेद्याः पूर्वंत्रयोपीहभगंदर्यर्शसीतथा ।
आश्मर्या चातुरोजंतुः शमयेच्छस्त्रकर्मणा ॥

अर्थ—भगंदररोगी-ववासीररोगी-और पथरीरोगी इनतीनोको प्रथम पसीने निकालके फिर शस्त्रकर्म कर रोगको शमनकरना चाहिये ॥

## पश्चात् स्वेदनीयमनुष्य

पश्चात्स्वेद्यागतेशल्येमूढगर्भगदेतथा ।

कालेप्रजाताकालेवापश्चात्स्वेद्यानितंविनी ॥

अर्थ—जिसस्त्रीके पेटमें गर्भका शल होवे उसका पतन होने उपरांत तथा नौ महिनेके पश्चात् अथवा नौमहिनेके प्रथम प्रसूत होनेसें उसके देहका पसीना निकलवाना चाहिये ॥

## स्वेदकर्मयोग्यदेशकाल

सर्वान्स्वेदान्निवातेचजीर्णाहारेचकारयेत् ॥

अर्थ—ये चाऱ्यो प्रकारके स्वेद मनुष्यका आहार पचन होनेके अनंतर जिसजगे हवा न आतीहो उसजगे काढने चाहिये॥

## पसीनेकाढनेपरकिसमार्गसेंदोषदूरहोतेहै ।

स्वेदाद्धातुस्थितादोषाः स्वेदः स्विन्नस्य देहिनः ॥
द्रवत्वंप्राप्यकोष्टांतर्गतायांतिविरेकताम् ॥

अर्थ—औषधादिक करके मनुष्यके अंगका पसीना काढनेके पश्चात् उसको तथावडे वासनमें तेल भरके उसमें मनुष्यको बैठानेसें उसके वातादिक दोषरसादि सप्तधातुमें रहनेवालेभी कोष्टकेमध्येजानेसें वो दोषपतले होकर गुदाके द्वारा दस्तकेसाथ निकल्ते है । प्रथम दोषपसीनेके द्वारानम्रहोकर कोष्ठमें जाते है वहांसें दस्तोके राहबाहर गिरते है यह इस श्लोकका तात्पर्य है ॥

## स्वेदनमेंविधि

स्वेद्यमानशरीरस्यहृदयंशीतलैः स्पृशेत् ।
स्नेहाभ्यक्तशरीरस्यशीतैराच्छाद्यचक्षुषी ॥

अर्थ—मनुष्यके देहकापसीना काढनेसें उसयोगकरके पेटके भीतरके दोषपतले होकर गुदाके द्वारादस्तोंमे निकलते है तबउसमनुष्यकी छाती में चंदनका लेपकरे जिससें प्रकृतिस्वस्थहोय । तथा जो मनुष्य तेलमें बैठाहुआ है उस योगसें उसके दोषपतले होकर गुदाके रास्तेसें दस्तोंके साथ निकलनेसें उसके नेत्रोंपर कमलके पत्ते अथवा केलाके पत्ते शीतलता करनेके लियेलगाने चाहिये उसठंडकके करनेसें ग्लानिदूर होकर प्रकृति स्वस्थहोती है ॥

## स्वेदकर्मवर्जितमनुष्य

अजीर्णीदुर्बलोमेहीक्षतक्षीणपिपासितः ॥
अतिसारीरक्तपित्तीपांडुरोगीतथोदरी ॥

मदार्त्तोगर्भिणीचैवनहिस्वेद्याविजानता ॥
एतानपिमृदुस्वेदैः स्वेदसाध्यानुपाचरेत् ॥

अर्थ—जिसमनुष्यको अजीर्णहो, तथा दुर्बल मनुष्य—तथा जिसको प्रमेहहो. तथा उरःक्षत करके पीडित तथा जिसको अत्यंतप्यासलगरही हो वो तथा अतिसार—रक्तपित्त-पांडुरोगी—उदररोगी-मदार्त—येरोग जिसमनुष्योंके होय वो तथा गर्भिणीस्त्री—इतने रोगीनूका पसीना नहीं काढना चाहिये ये पसीना काढनेमें अयोग्य है यदि इनरोगियोंके पसीना काढनेसैं ही रोगनष्टहोता दीखेतो हलके उपायसैं थोडा पसीना काढना चाहिये ॥

, अल्पपसीनेकाढनेयोग्यस्थल

मृदुस्वेदंप्रयुंजीततथाहृन्मुष्कदृष्टिषु॥

अर्थ—हृदय और अंडकोश तथा नेत्र इनका पसीना काढना होवेतो हलका काढे विशेपनहीं ॥

अत्यंतपसीनेनिकलनेकेदोष

अतिस्वेदात्संधिपीडादाहस्तृष्णाक्लमोभ्रमः ॥
पित्तासृक्पिटिकाकोपस्तत्रशीतैरुपाचरेत् ॥

अर्थ—अंगेसैं बहुत पसीना निकालनेसैं सर्व संधियोंमें पीडा—तृषा—ग्लानि—भ्रम—रक्तपित्त—येउपद्रव होते है तथा अंगमें मरोडी उत्पन्न होती है । इनके शमनकरनेको शीतल उपाय करना कि जिस्सै उपद्रव दूरहोवे ॥

उक्तचारप्रकारकेस्वेदोंमेंतापसंज्ञकस्वेदकेलक्षण ॥

तेषुतापाभिधः स्वेदोवालुकावस्त्रपाणिभिः ॥
कपालकंदुकांगारैर्यथायोग्यंप्रजायते ॥

अर्थ—चारप्रकारके पसीनोंमें ताप इसनामकरके जो पसीना है इसको वालू वस्त्र—हाथ—खीपडा—कपडेकी गेंद और अंगार इनकरके वालूकादिक आदि जिस २मे जैसी २ शक्ती है तैसा २ पसीना उत्पन्न होता है । ये छःप्रकार कहेहै इनकी क्रियाकैसै करे उसको कहते है खैरके अथवा कणसर लकडीके धूमरहीत जलते हुए कोले करकेउसकेऊपरवालूको तपायके उसवालूको अंड़के पत्तोंमें धरके उसपत्तेकी पुडिया वनाय उसपुडियामें मनुष्यके अंगोंकोसेके जिस्सै अंगका पसीना निकले यह एकप्रकार है । तथा अंगारोपर अपने हाथ गरम कर रोगीके अंगोंकोसेकैं । अथवा स्थड कपड़ेकी गेंदभी वनाय अंगारोपर गरम

करके उसगैदसैं रोगीके अंगसिकावे । तथा कपडेको गरम करके देहको सेके । अथवा अंगारो को खीपरेमें भरके उससुहाते २ खिपरेसैं सेककरे येसवउपायप सीनेनिकालनेकेकहे इनसैं वैद्यको जिसउपायसै पसीने काढने हो काढे ॥

## उष्मसंज्ञकस्वेदकेलक्षण

उष्मास्वेदःप्रयोक्तव्यो लोहपिंडेष्टिकादिभिः । प्रतप्तै-
रम्लसिक्तैश्च काये रल्लकवेष्टिते । अथवा वातनिर्ना-
शिद्रव्यक्वाथरसादिभिः । उष्णैर्घटं पूरयित्वा पार्श्वे
छिद्रं निधाय च।विमुद्र्यास्यं त्रिखंडा च धातुजां का
ष्ठवंशजां । षडंगुलास्यां गोपुच्छां नलीं युञ्ज्याद्विह-
स्तिकां ॥सुखोपविष्टं स्वभ्यक्तं गुरुप्रावरणावृतं। ह-
स्तिशुंडिकया नाड्या स्वेदयेद्वातरोगिणं ॥पुरुषाया-
ममात्रं वा भूमिमुत्कीर्यखादिरैः॥काष्ठैर्दग्धा तथाभ्यु-
क्ष्य क्षीरधान्याम्लवारिभिः॥वातघ्नपत्रैराच्छाद्य शया
नं स्वेदयेन्नरम् ॥एवं माषादिभिः स्विन्नैः शयानः स्वे
दमाचरेत् ॥

अर्थ—उष्माइसनाम करके जो स्वेद ( पसीना ) है–उसकी क्रियाकहते है। लोहेके गोलाको अथवा ईटको अग्निमें तपायकर उसपर थोडा खट्टा पदार्थ छिडक कर रोगीको कंवल उढाय उस गोले करके अथवा उस ईटकरके रोगी-के देहकोसेके, जिस्से पसीनेनिकले यह एकप्रकार कहा । अथवा दशमूलादि-क जो वातहरणकर्त्ता औषधी उनका काढा अथवा उन औषधियोंका रस गर-मकर मिट्टीके घडेको भर उस घडेके मुखको वंदकर उसके एक बाजूमें छेदक-र धातुकी अथवा लकडीकी तथा वांसकी नली बनाय उसनलीमें तीनसंधी करे तथा उसकामुख छःअंगुल लंबा और चोडा करे । अथवा गौके पुच्छके आकार करे, इस नलीका आकार हाथीकी सूंडके समान होताहै, अतएव इसको ह-

१ छाछ, काञ्जी, इत्यादिक खट्टे पदार्थ जानने । २ सालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेरी, वडीकटेरी, गोखरू, वेलगिरी, अरनी, टेंटू, पाढल और गंभारी, इनकी मूलको दशमूल कहते है । ३ उसघडेके मुखमें डाटदेकर दहकते हुए कोलेनपर धरदेवे–जिस्से उस नलीकेरास्ते वाफ अच्छीरीतिसैं निकले ।४ तावे, पीतल, लोहआदि धातुकी नली चाहिये।

मदार्त्तोगर्भिणीचैवनहिस्वेद्याविजानता ॥
एतानपिमृदुस्वेदैः स्वेदसाध्यानुपाचरेत् ॥

अर्थ—जिसमनुष्यको अजीर्णहो, तथा दुर्बल मनुष्य–तथा जिसको प्रमेहहो. तथा उरःक्षत करके पीडित तथा जिसको अत्यंतप्यासलगरही हो वो तथा अतिसार–रक्तपित्त-पांडुरोगी–उदररोगी-मदार्त–येरोग जिसमनुष्योंके होय वो तथा गर्भिणीस्त्री–इनने रोगीनका पसीना नही काढना चाहिये ये पसीना काढनेमें अयोग्य है यदि इनरोगियोंके पसीना काढनेसैं ही रोगनष्टहोता दीखेतो हलके उपायसैं थोडा पसीना काढना चाहिये ॥

## अल्पपसीनेकाढनेयोग्यस्थल

मृदुस्वेदंप्रयुंजीततथाहृन्मुष्कदृष्टिषु॥

अर्थ—हृदय और अंडकोश तथा नेत्र इनका पसीना काढना होवेतो हलका काढे विशेपनहीं ॥

## अत्यंतपसीनेनिकलनेकेदोष

अतिस्वेदात्संधिपीडादाहस्तृष्णाक्लमोभ्रमः ॥
पित्तासृक्पिटिकाकोपस्तत्रशीतैरुपाचरेत् ॥

अर्थ—अंगेसैं बहुत पसीना निकालनेसैं सर्व संधियोंमें पीडा–तृपा–ग्लानि–भ्रम–रक्तपित्त–येउपद्रव होते है तथा अंगमें मरोडी उत्पन्न होती है। इनके शमनकरनेको शीतल उपाय करना कि जिससैं उपद्रव दूरहोवे ॥

## उक्तचारप्रकारकेस्वेदोंमेंतापसंज्ञकस्वेदकेलक्षण ॥

तेषुतापाभिधः स्वेदोवालुकावस्त्रपाणिभिः ॥
कपालकंदुकांगारैर्यथायोग्यंप्रजायते ॥

अर्थ—चारप्रकारके पसीनोंमें ताप इसनामकरके जो पसीना है इसको वालू वस्त्र–हाथ–खीपडा–कपडेकी गेंद और अंगार इनकरके वालूकादिक आदि जिस २मे जैसी २ शक्ती है तैसा २ पसीना उत्पन्न होता है। ये छःप्रकार कहे इनकी क्रियाकैसे करे उसको कहते है खैरके अथवा कणम्वर लकडीके धूमरहीत जलते हुए कौले करके उसके ऊपरवालूको तपायके उसवालूको अंडके पत्तोंमें धरके उसपत्तेकी पुडिया वनाय उसपुडियामें मनुष्यके अंगोंकोसेके जिससैं अंगका पसीना निकले यह एकप्रकार है। तथा अंगारोपर अपने हाथ गरम कर रोगीके अंगोंकोसेकें। अथवा रूअड कपडेकी गेंदसी वनाय अंगारोपर गरम

करके उसगेदसें रोगीके अंगसिकावे १। तथा कपडेको गरम करके देहको सेके। अथवा अंगारो को खीपरेमें भरके उससुहाते २ खिपरेसें सेककरे येसवउपायप सीनेनिकालनेकेकहे इनसें वैद्यको जिसउपायसें पसीने काढने हो काढे॥

## उष्मसंज्ञकस्वेदकेलक्षण

उष्मास्वेदःप्रयोक्तव्यो लोहपिंडेष्टिकादिभिः। प्रतप्तै-रम्लसिक्तैश्च काये रल्लकवेष्टिते। अथवा वातनिर्ना-शिद्रव्यक्काथरसादिभिः। उष्णैर्घटं पूरयित्वा पार्श्वे छिद्रं निधाय च।विमुद्र्यास्यं त्रिखंडा च धातुजां का ष्ठवंशजां। षडंगुलास्यां गोपुच्छां नलीं युज्याद्विह-स्तिकां॥सुखोपविष्टं स्वभ्यक्तं गुरुप्रावरणावृतं। ह-स्तिशुंडिकया नाड्या स्वेदयेद्वातरोगिणं॥पुरुषाया-ममात्रं वा भूमिमुत्कीर्यखादिरैः॥काष्ठैर्दग्ध्वा तथाभ्यु-क्ष्य क्षीरधान्याम्लवारिभिः॥वातघ्नपत्रैराच्छाद्य शया नं स्वेदयेन्नरम्॥एवं माषादिभिः स्विन्नैः शयानः स्वे दमाचरेत॥

अर्थ—उष्माइसनाम करके जो स्वेद ( पसीना ) है–उसकी क्रियाकहते है। लोहेके गोलाको अथवा ईंटको अग्निमें तपायकर उसपर थोडा खट्टा पदार्थ छिडक कर रोगीको कंवल उढाय उस गोले करके अथवा उस ईंटकरके रोगी-के देहकोसेके, जिस्से पसीनेनिकले यह एकप्रकार कहा। अथवा दशमूलादि-क जो वातहरणकर्त्ता औषधी उनका काढा अथवा उन औषधियोंका रस गर-मकर मिट्टीके घडेको भर उस घडेके मुखको बंदकर उसके एक बाजूमें छेदक-र धातुकी अथवा लकडीकी तथा वांसकी नली बनाय उसनलीमें तीनसंधी करे तथा उसकामुख छःअंगुल लंबा और चोडा करे। अथवा गौके पुच्छके आकार करे, इस नलीका आकार हाथीकी सूंडके समान होताहै, अतएव इसको ह-

१ छाछ, कांजी, इत्यादिक खट्टे पदार्थ जानने। २ सालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेरी, बडीकटेरी, गोखरू, वेलगिरी, अरनी, टेंटू, पाडल और गंभारी, इनकी मूलको दशमूल कहते हे। ३ उसघडेके मुखमें डाटदेकर दहकते हुए कौलेनपर धरदेवे–जिसै उस नलीकेरास्ते वाफ अच्छीरीतिसैं निकले।४ तांबे, पीतल, लोहआदि धातुकी नली चाहिये।

रितशुंडिका नाडी कहते है। फिर वायुसैं पीडित जो मनुष्य उसको स्वस्थ बैठाकरके अंगमें घी अथवा तेल लेपकर उसको रिजाई अथवा कंवल उढाय उस नलींको उसके भीतर करदेवे कि जिस्सैं वाफ लगकर अंगोंसैं पसीने निकले। अथवा मनुष्यके साडेतीन अथवा चारहाथ लंवा जमीनमें गड्ढा खोद उसमें खैरकी लकडीभर अग्निजलायके कोलाकरे, फिर शीघ्र कोलान्को वाहर निकाल उसजमीनको दूध अथवा धान्यके पानी अथवा छाछ तथा कांजीसैं छिडककर उस जमीनपर वातहारक औषधोंके पत्ते मिछायकर उसपर रोगीको सुलायके उसके अंगसैं पसीने निकाले। इसी प्रकार उडद लेकर उनको थोडी-वाफदे अधकचे सिजाय उस तपेहुए ठौरमें विछाय ऊपर सूर्त्तीं अंडके पत्ते आदि वातहरक औषधीकेपत्ते डालके उसपर रोगीको सुलायके ऊपरसैं कंवल उढाय उसके अंगका पसीना निकलवावे। इसप्रकार उष्मसंज्ञक पसीनेके लक्षण जानने ॥

## उपनाहसंज्ञकस्वेदकेलक्षण

अथोपनाहस्वेदं च कुर्याद्वातहरौषधैः।
प्रदिह्य देह वातार्त्तक्षीरमांसरसान्वितैः॥
अम्लपिष्टैः सलवणैः सुखोष्णैः स्नेहसंयुतैः॥

अर्थ—उपनाह इसनामका स्वेदहै उसकी क्रिया लिखते है। दशमूलादि वायुहारक औषधको लाय कूटके चूर्णकरे उसमें दूध और हरिणादिकके मांसका स्नेह ये दोनो मिलाय थोडा गरमकर वायुपीडित मनुष्यके अंगोंको सुहाता २ ऐसा गाढा लेपकर वस्त्रादिकसैं बांधके पसीना निकाले। अथवा वातहारक औषधका चूर्णकर छाछमें अथवा कांजीमें पीस उसमें थोडा सैंधानिमक और तिलकातेल मिलाय कुछगरम करके वायुपीडितके अंगमें सुहाता २ गाढा लेपकर कपडेसैं बांध उसकेअंगका पसीना निकाले॥

## दूसराप्रकारतथा महाशाल्वणप्रयोग

उपग्राम्यानूपमांसैर्जीवनीयगणेन च। दधिसौवीरकक्षारैर्वीरतर्वादिना तथा॥ कुलित्थमाषगोधूमैरतसीतिलसर्षपैः। शतपुष्पादेवदारुशेफालीस्थूलजीरकैः॥ एरंडमूलवीजैश्च रास्नामूलकशिग्रुभिः। मिशिकृष्ण-

१ सूर्त्तीअंड, आक, और निर्गुंडी इत्यादिकोंके पत्ते वातहारक है॥

कुठेरैश्च लवणैरम्लसंयुतैः ॥ प्रसारण्यश्वगंधाभ्यां वलाभिर्दशमूलकैः । गुडूचीवानरीबीजैर्यथालाभंसमाहृतैः ॥ क्षुण्णैःस्विन्नैश्चवस्त्रेणवद्धैः संस्वेदयेन्नरम् ॥ महाशाल्वणसंज्ञोयंयोगःसर्वानिलार्त्तिजित् ॥

अर्थ—ग्राम्यमांस, अनूपमांस, जीवनीयगणकी औषधी, तथा गौकादही, सौवीर, सर्जीखार, जवाखार, रेहकाखार वीरतर्वादिगणकी औषधी और कुलथी, उडद, गेंहू, अलसी, सौंफ, देवदारु, निर्गुंडी, कलौंजी, अंडकी जड, अंडके वीज, रास्ना, मूली, सेहजना, छोटीसौंफ, पीपल, वनतुलसी, पांचोनिमक, अनारदाना-प्रसारणी, असगंध, खरेटीकी जड, दशमूलकी दश औषधी, और गिलोय, कौंचकेवीज, ये सब औषध जो मिलसके उनको लेकर कूट थोडीगरमकर कपडेमें पोटली बांधकर उससें रोगीका अंगसेके, कि जिस्सें संपूर्ण वायुकी पीडा दूरहोवे। इस प्रयोगको महाशाल्वण प्रयोग कहतेहै। इसप्रकार उपनाह संज्ञक स्वेद (पसीने) की विधि जाननी ॥

## द्रवसंज्ञकस्वेदकेलक्षण

द्रवस्वेदस्तु वातघ्नद्रव्यक्राथेन पूरिते। कटाहे कोष्टके वापि सूपविष्टोवगाहयेत् ॥ नाभेः षडंगुलं यावन्मग्नः क्वाथस्य धारया। कोष्टके स्कंधयोः सिक्तास्तिष्ठेत्स्निग्धतनुर्नरः ॥ एवं तैलेन दुग्धेन सर्पिषास्वेदयेन्नरं। एकान्तरे द्व्यंतरे वा स्नेहो युक्तोवगाहने ॥ शिरामुखै रोमकूपैर्धमनीभिश्च तर्पयेत्। शरीरेबलमाधत्ते युक्तस्नेहावगाहने ॥ जलसिक्तस्य वर्द्धते यथामू

---

१ मुरगा, वकराआदि केमांसको ग्राम्य मांस कहते है। २ चकवा,—चकवी,—वतक जलमुरगावी और मछलीआदि जलसंचारी जीवोंके मांसको अनूपमांस कहते है। ३ काकोली,—क्षीरकाकोली,—जीवक,—ऋषभक,—मेदा,—महामेदा,—जीवंती,—मुलहटी,—मुद्गपर्णी,—माषपर्णी—इन दशऔषधोके समुदायको जीवनीय गणकहते है। ४ कच्चे जों अथवा भुने जोंओंको कूट पानीमें तीनदिन भिगोनेसें उस पानीको सौवीर कहतेहै,— इसी प्रकार गेहूका भी सौवीर होता है। ५ सैंधा,—संचर,—विड,—समुद्र,—और रेहका निमक—इस पांचोंको पंचलवण कहते तथा उपनाह संज्ञकस्वेदका दूसरा भेद महाशाल्वण प्रयोगहै

लेङ्कुरास्तरोः। तथा धातुविवृद्धिर्हि स्नेहसिक्तस्यजायते॥ नातः परतरःकश्चिदुपायो वातनाशनः। मुहूर्तैकं समारभ्य यावत्स्यात्तच्चतुष्टयं। तावत्तदवगाहेत यावदारोग्यनिश्चयः॥

अर्थ—द्रव या नामका स्वेद उसकी विधि लिखते है। दशमूलादि वायुहारक औषधका काढा कर रोगीके देहके घी अथवा तेल लगाय उसको कढाईमें अथवा तामेके वडे पात्रमें वैठारके पूर्वोक्त गरमागरम काढेको अंगपर और कंधेपर सहती२धारडाले, इसीप्रकार तेलकी अथवा दूधकीअथवा घीकी धारडाले परंतु जवतक वह काढा डालोकि नाभिके छः अंगुल ऊपर तक नचढे। पश्चात् मनुष्यको धर्मयुक्त होना चाहिये। इसप्रकार एक २ दिनके अथवा दो २ दिनके अंतरसे करना चाहिये कि जिस्से शिराओंके मुखद्वारा रोमांचोंके मुखमे होकर तथा नाडीन्के द्वारा वो स्नेहादिक पदार्थ शरीरके भीतर प्रवेश होकर शरीरको तृप्तकरके वल उत्पन्नकरे। इसमें दृष्टांत है कि जैसे वृक्षकीजडमे पानी-देनेसें वृक्ष वढता है उसीप्रकार तैलादिकमें वैठनेसें मनुष्यके रसादि सातधातु वढती है, और वायुका नाश होता है इसउपायकी अपेक्षा वायुनाशक दूसरा उपाय नहीहै यह उपाय पराकाष्टाकाहै। एकमूहुर्त्तसें लेकर चारमुहूर्त्त अर्थात् एकमहर होनेपर्यंत तैलके पात्रमें वैठना चाहिये तथा जवतक आरोग्यता न दीखे तावत्कालपर्यंत यही विधिकरे॥

## स्वेदकीसमाप्ति

शीतशूलाद्युपरमे स्तंभगौरवनिग्रहे।
दीप्तेऽग्नौ मार्दवे जाते स्वेदनाद्विरतिर्मता॥

अर्थ—अंगकी शरदी और शूल इनकी शांति होनेपर तथा अंगका स्तंभ तथा जडपना ये दूरहोने पर एवं अग्निप्रदीप्त होनेपर तथा अंगमें मृदुपना आनेपर रोगीके अंगसें पसीने न निकाले अर्थात् समाप्ति करदेवे॥

## पसीनेनिकालनेकेअनंतरउपचार

सम्यक्स्विन्नं विमृदितं स्नानमुष्णांवुभिःशनैः।
भोजयेच्चानभिष्यंदि व्यायामं च विवर्जयेत्॥

अर्थ—जिसमनुष्यके अंगका पसीना काढाहो उसको तथा अंगमेंतेल लगाया हो उसको हलके २ गरम जलसें स्नानकरावे। तथा कफकारक पदार्थ भोजनमें

नदेवे तथा पारिश्रम न करे, इस प्रकार द्रवसंज्ञक स्वेदमें करना चाहिये। अव, आगे वमनकी विधिलिखी जातीहै ॥

---

## वमनमेंऋतुप्रधान

शरत्काले वसंते च प्रावृट्काले च देहिनाम् ।
वमनं रेचनं चैव कारयेत्कुशलो भिषक् ॥

अर्थ—शरद ऋतु, वसंत ऋतु, वर्षाऋतु, इनमे मनुष्यको वमन और विरेचन ये कुशल वैद्यको कराने चाहिये [ कुशलवैद्यके लिखनेसें यह प्रयोजन है कि यह वमन विरेचनका देना अत्यंत सावधानीका काम है इस्सें मूर्खवैद्यसें वमन विरेचन लेनासर्वथा त्याज्य है ॥

## वमनयोग्यमनुष्य

बलवंतं कफव्यार्तं हृल्लासार्तिनिपीडितम् ।तथा वमनसात्म्यं च धीरचित्तं च वामयेत् ॥ विषदोषे स्तन्यरोगे मन्देग्नौ श्लीपदेर्बुदे। हृद्रोगकुष्ठवीसर्पमेहाजीर्णभ्रमेषु च ॥ विदारिकापचीकासश्वासपीनसवृद्धिषु । अपस्मारज्वरोन्मादे तथा रक्तातिसारिषु ॥ नासाताल्वोष्ठपाकेषु कर्णस्रावे द्विजिह्वके । गलशुंड्यामतीसारे पित्तश्लेष्मगदे तथा ॥ मेदोगदेरुचौ चैव वमनं कारयेद्भिषक् ॥

अर्थ—बलवान्मनुष्य, कफसैंव्याप्त, हृल्लाससें पीडित ( अर्थात जिसके मुखसें लारगिरती ) हों, तथा जिसको वमनका महावरा हो और धीरचित्तहो इनको वमनकरावे। तथाविषदोष, स्तनसंबंधी रोग, मंदाग्नि, श्लीपद, अर्बुद, हृदयरोगी, कोढी, विसर्परोगी, प्रमेही, अजीर्णी, भ्रमरोगी, विदारिका, अपची रोग, खाँसी श्वास, पीनस, अंडवृद्धि, मृगीरोगी, ज्वर, उन्माद, रक्तातिसार, नासापाक, तालुपाक, ओष्टपाक, कर्णस्राव, द्विजिव्हक, गलशुंडी, अतीसार, पित्तकफकेरोग, मेदोरोग, अरुचि, इनरोगोमें तथा इसीप्रकारके जो अन्यरोगहैं उनमें वैद्य रोगीको वमन करावे ॥

## वमनकेअयोग्यमनुष्य

न वामनीयस्तिमिरी न गुल्मी नोदरी कृशः । नातिवृद्धो गर्भिणी च न च स्थूलक्षतातुरः ॥ मदार्त्तोबालको रूक्षः क्षुधितश्च निरूहितः । उदावर्त्त्यूर्ध्वरक्ती च दुःछर्दिः केवलानिली ॥ पांडुरोगक्रिमिव्याप्तः पठनात्स्वरघातकः। एतेप्यजीर्णव्यथिता वाम्या ये विषपीडिताः ॥ कफव्याप्ताश्च ते वाम्या मधुकक्वाथप्रपानतः॥

अर्थ—तिमिररोगी, गुल्मरोगी, उदररोगी, तथाकृश, अतिवृद्ध, गर्भिणीस्त्री अत्यंतमोटा, उरःक्षत करके तथा मद करके पीडित, बालक, रूक्ष, क्षुधित, निरूहित कहिये गुदाद्वारा पिचकारी माराहुआ, तथा उदावर्तरोगी, उर्ध्वरक्ती, तथा जिससे वमनन सही जावे, जिसके केवल वादीका रोगहो, पांडुरोगी, क्रमिरोगसें व्याप्त, वेदशास्त्रके अत्यंत पढने सै जिसका कंठ बैठ गयाहो, इतने रोगियोंको वमन ( उलटी करानेकी ) औषध नहीं देनी चाहिये यादि ये पूर्वोक्त रोगवाले अजीर्णसें अथवा विषदोष करके कफकरके व्याप्तहोवेतो इनको मुलहटीके अथवा मुहुआकी छालके काढेको पिलायकर वमन करानी चाहिये ॥

## वमनअयोग्य

सुकुमारं कृशं बालं वृद्धं भीरुं न वामयेत् ।

अर्थ—सुकुमार ( नाजुकमनुष्य ) कृश,—बालक-वृद्ध—डरपोक-इनमनुष्योंको वमनकी औषधी नदेनी चाहिये ॥

## रद्दकरनेमेंविहितपदार्थ

पीत्वा यवागूमाकंठं क्षीरतक्रदधीनि च । असात्म्यैः श्लेष्मलैर्भोज्यैर्दोषानुत्क्लिश्यदेहिनः ॥ स्निग्धस्विन्नाय वमनं दत्तं सम्यक्प्रवर्त्तते ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको उलटी करानीहो उसको प्रथम पेटभरके यवागू पिवावे

१ रक्तपित्तके कोप करके जिनके ऊपर मुखादिद्वारा रुधिरगिरे उसको ऊर्ध्वरक्ती नानना। २ कृश और बालक तथा वृद्ध—इनको वमन न करावे इसप्रकार प्रथम कह आएहैं परंतु निश्चय करनेके वास्ते यहांपर फिर कहाहै । ३ चावलका चूरा कर उसमें छः भाग पानी मिलायके औटावे, पतलीकरे इसको यवागू कहते हैं। -

अथवा दूध, छाछ, दही, ये पेटभरके पिवावे, तथा प्रकृतिको जो न भावे वो पदार्थ तथा कफकारी पदार्थ खानेको देकर, मनुष्यकेदोषोको उखाडे जिस्से मनुष्य अच्छीतरह उलटीकरे तथा जिसमनुष्यने घृतपान करा है उस मनुष्यको एकदिनके पश्चात् वमनकरावे तो अच्छीतरह वमन होवे ॥

## वमनमेंहितकारीपदार्थ

वमनेषुच सर्वेषु सैंधवं मधु वा हितम्।
बीभत्सं वमनं दद्याद्विपरीतं विरेचनम् ॥

अर्थ—जितने वमनके प्रयोगहै उनमे सैंधानिमक अथवा सहत इनका मेलन कराना चाहिये तो हितकारी होताहै। अथवा बीभत्स वमनदेवे और विरेचन इस्से विपरीतदे अर्थात् दस्त देनाहोयतो घीके विना देवे ॥

## वमनमेंकाढेकाप्रमाण

क्वाथ्यद्रव्यस्य कुडवं श्रपयित्वाजलाढके।
अर्धभागावशिष्टं च वमनेष्ववचारयेत् ॥

अर्थ—काढेकी औषधी १ कुडव प्रमाण लेकर कूट उसमें एक आढक प्रमाण पानी डाले जब औटकर आधारहे तबतक औटावे फिर उतार छानके पिवावे॥

## वमनमें काढापीनेका प्रमाण

क्वाथपाने नवप्रस्था ज्येष्ठामात्रा प्रकीर्तिता।
मध्यमाषण्मिताप्रोक्ता त्रिप्रस्था च कनीयसी ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको वमनकरना होय उसको नौप्रस्थ ,काढापिलाना बडीमात्राहे, तथा छःप्रस्थ काढापीना मध्यममात्रा, और तीनप्रस्थकाढा पीना हलकी मात्राजाननी ॥

## वमनविषयमें कल्कादिकोंका प्रमाण

कल्कचूर्णावलेहानां त्रिपला श्रेष्ठमात्रया।
मध्यमं द्विपलं विद्यात्कनीयस्तु पलं भवेत् ॥

अर्थ—कल्क, चूर्ण, और अवलेह ये तीनपल मनुष्यको देनेसे बडी मात्राजाननी, तथा दोपल देनेसे मध्यममात्रा और एक एक पलदेनेसे हीन मात्रा कहलातीहै। इसवास्ते वैद्यको यथायोग्य मात्रा देनी चाहिये ॥

---

१ वमनकी औषधमें घी डालके वमनकरानेको बीभत्स वमन कहते है ॥

### वमनकेउत्तममध्यमकनिष्ठवेग

वमने चापि वेगाःस्युरष्टौ पित्तांतमुत्तमाः ।
षड्वेगा मध्यवेगाश्च चत्वारस्त्ववरामताः ॥

अर्थ—मनुष्यको वमनकी औषध देनेसैं सातवेग पर्यंत संपूर्ण दोष पडके आठवे वेगमें पित्तपडनेसैं उत्तमवेग जानना । उसी प्रकार पांच वेगपर्यंत दोष पडकर छटे वेगमें पित्तपडनेसैं मध्यमवेग जानना । तथा तीनवेग पर्यंत दोष निकलके चौथेवेगमें पित्तपडेतो कनिष्टवेग जानने । जेंदफे रद्दहोवे उतने वेग जानने अर्थात् रद्दहोनेको ही वेग कहते है ॥

### वमन विरेचन आदिमे प्रस्थका प्रमाण

वमने च विरेके च तथा शोणितमोक्षणे ।
सार्द्धत्रयोदशपलं प्रस्थमाहुर्मनीषिणः ॥

अर्थ—वमनहोनेमें तथा दस्त होनेके विषयमें जो औषध प्रस्थप्रमाण लेना कहाहै तहां १३॥ साडे तेरह पलका प्रस्थलेना । तथा फस्तखोलनेमें एक प्रस्थ रुधिर कढाना जहाँ लिखाहै वहाँ परभी साडे तेरह पलका प्रस्थ जानना ॥

### कफपित्तऔरवातहारकऔषधी

कफं कटुकतीक्ष्णेन पित्तं स्वादुहिमैर्जयेत् ।
सस्वादुलवणाम्लोष्णैःसंसृष्टं वायुना कफम् ॥

अर्थ—तीक्ष्ण औषध करके कफको जीते, तथा मधुर और शीतल औषधो करके पित्तको जीते । एवं मधुर और खार तथा अम्ल और गरम इनकरके वायु सैंमिले कफको जीते ॥

### वातादिदोषोकेनिकालनेकोपृथक्२औषधी

कृष्णराठफलैः सिंधुकफेकोष्णजलैः पिबेत् ॥
पटोलवासानिंबैश्च पित्ते शीतजलं पिबेत् ॥
सश्लेष्मवातपीडायां सक्षीरं मदनं पिबेत् ॥
अजीर्णे कोष्णपानीयं सिंधुंपीत्वा वमेत्सुधीः ॥

अर्थ—कफदोषमें पीपल और मैनफल तथा सैंधानिमक इनसबके चूर्णको गरम पानीके साथ पीवे तो वमनके साथ कफ गिरे। तथा पित्तके दोषमें पटोलपत्र, और अडूसा तथा कडुअेनीमके पत्ते इनका चूर्णकर शीतलजल डालके पीवेतो

उलटीके साथ पित्त निकले। एवं कफवायुकी पीडामें मैनफलका चूर्ण दूधमें मिलायके पीवेतो उलटीके साथ मनुष्यके कफ वायु निकल कर पीडादूरहो। तथा अजीर्णमें गरमजलमें सैंधानिमक डालके पीवेतो उलटी होनेसैं मनुष्यका अ-जीर्ण दूरहो ॥

## वमनकरतेसमयबाह्योपचार

वमनं पाययित्वा च जानुमात्रासने स्थितं।
कंठमेरंडनालेन स्पृशंतं वामयेद्भिषक् ॥
ललाटं वमतः पुंसः पार्श्वौ द्वौ च प्रबोधयेत्॥

अर्थ—रोगीको वमन करनेकी औषध देकर पृथ्वीमें घोंटू टेककर केवरावर ऊंचे आसनपर चाहिये। अंडके पत्तेकी लंबी बारीक नाल लेकर मुखमें डालके हलके हाथसैं धीरे २ कंठको स्पर्शकरे तो उसीसमय उलटीआवे इसप्रकार आगे पीछे उसको फिरायके वैद्य रोगीको उलटीकरावे। तथा उस उलटी करने वालेके क-पालके दोनो भागोंको धीरे धीरे हलके हाथसैं एक मनुष्य सिराता जावे ॥

## दुष्ट वमन होनेके उपद्रव

प्रसेको हृद्ग्रहः कोठकंडूर्दुश्छर्दिताद्भवेत् ॥

अर्थ—मनुष्यको वमनकी औषध देनेसैं यदि उससै कोई विकार होयतो उ-सके मुखसैं लारागिरे तथा हृदयमें पीडाहोवे, तथा देहमें खुजली होतीहै ॥

## अतिवमनहोनेके उपद्रव

अतिवांते भवेत्तृष्णा हिक्कोद्गारोविसंज्ञिता।
जिह्वा निः सर्पणं चाक्ष्णो व्यावृत्तिर्हनुसंहतिः ॥
रक्तछर्दिष्ठीवनं च कंठे पीडा च जायते ॥

अर्थ—मनुष्यकै अत्यंत वमन होनेसैं अत्यंत प्यासलगे, हिचकी, डकारआवे, और अंग जडहोवे, तथा संज्ञाका नाशहो, जीभ बाहर निकलआवे, नेत्र जहाँके तहां ठैरजावे, वा चंचलहोवे, तथा भ्रमहोय, ठोडीका स्तंभहोय, अथवा पीडाहो, मुखकेरास्ते रुधिर गिरे, वारंवारथूके और कंठमें पीडाहोय ये लक्षण अत्यंत वमनके है ॥

## अत्यंतवमनकायत्न

वमनस्यातियोगेन मृदुकुर्याद्विरेचनम् ॥

अर्थ—जिस मनुष्यके अत्यंत उलटी होतीहो उसके बंदकरनेको मृदु जुलाब देवे

## उलटी करते२ जीभ भीतरीचली गईहो उसका यत्न

वमनान्तः प्रविष्टायां जिव्हायां कवलग्रहः ।
स्निग्धाम्ललवणैर्हृद्यैर्घृतक्षीररसैर्हितः ॥
फलान्यम्लानि खादेयुस्तस्य चान्येऽग्रतो नराः ॥

अर्थ—यदि उलटी करते २ मनुष्यकी जीभ भीतर चलीगईहो उसके मनको प्रसन्नकर्त्ता ऐसे खट्टे तीखे-मिष्ट और खारी पदार्थ भातके साथ खानेको देवे, तथा घृत और दूध भातके साथदेवे, तथा उसरोगीके आगे दूसरा मनुष्य बैठकर नींबू अथवा नारंगी चूसर२कर खाय, ऐसा करनेसैं मनुष्यकी जीभ ठिकानपर आयके प्रकृतिस्थ होयहै ॥

## उलटी करते२ जीभ वाहरनिकलआईहो उसका यत्न

निसृतां तु तिलद्राक्षाकल्कं लिप्त्वा प्रवेशयेत् ॥

अर्थ—यदि उलटी करते २ जीभ वाहर निकल आईहोवे तो उसको तिल और दाख इनका कल्क करके उसकी जीभमें लेपकर वैद्य धीरे २ भीतर करदेवे

## वमनसैंनेत्रोंमेंविकारहोनेकायत्न

व्यावृत्ताक्षिण घृताभ्यक्ते पीडयेच्च शनैः शनैः ॥

अर्थ—उलटी करते २ नेत्र फटजावे तो उसको वैद्यहाथोंमें घी चुपडकर नेत्रोंको सिरायकर ठिकानेपर स्थितकरे ॥

## वमन करते२ ठोडी स्तंभित होगईहो उसका उपचार ॥

हनुमोक्षे स्मृतः स्वेदो नस्यं च श्लेष्मवातहृत् ॥

अर्थ—वमन करते करते ठोडी स्तंभित होगई होवे तो उसके अंगका पसीना निकाले, तथा कफवायुनाशक नाकमें औषध डाले अर्थात् नस्य देय तो ठोडीका स्तंभितहोना जातारहे ॥

## वमन करते२ रदमें रुधिर आनेलगे उसका उपचार॥

रक्तपित्तविधानेन रक्तछर्दिमुपाचरेत् ॥

अर्थ—यदि रद करते २ उलटीमें रुधिर गिरने लगे तो जोउपाय रक्तपित्तपर कहाहै वो उपाय करके रुधिरकी उलटीको दूरकरे ॥

## अत्यंत वमनके होनेसैं प्यासलगे उसका यत्न ॥

धात्रीरसांजनोशीरलाजाचन्दनवारिभिः ।

मंथं कृत्वा पाययेच्च सघृतक्षौद्रशर्करम् ॥
शाम्यंत्यनेन तृष्णाद्याः पीडाच्छर्दिसमुद्भवाः ॥

अर्थ—आवले, रसोत, खस, चावलकीखील, लालचंदन, नेत्रवाला, इन छः औषधोंका मंथकरके उसमें घी और सहत तथा मिश्री डालके पिवावे तो उलटी करनेसैं जो तृष्णादिक उपद्रव होतेहै वो सब दूरहोय ॥

## उत्तमवमनहोनेकेलक्षण

हृत्कंठशिरसांशुद्धिर्दीप्ताग्नित्वंचलाघवम् ।
कफपित्तविनाशश्चसम्यग्वांतस्यचेष्टितम् ॥

अर्थ—जिसमनुष्यको उत्तमउलटी होगईहो उसके लक्षण—हृदय कंठ और मस्तक इनमें जो कफादिक दोषहै वोदूरहो कर उसकी शुद्धिहो तथा अग्निप्रदीप्त और अंगहलके होय तथा कफदोष और पित्तदोष येदूरहो ॥

## उत्तमवमनहोनेकेपश्चात्पथ्य

ततोपराण्हे दीप्ताग्निमुद्गषष्टिकशालिभिः ।
हृद्यैश्च जांगलरसैः कृत्वा यूषं च भोजयेत् ॥

अर्थ—मनुष्यको उत्तम उलटी होनेके अनंतर तीसरे पहरमें अग्नि प्रदीप्तहोवे ऐसा मूग और साठीचावल इनको मनके प्रियकारी ऐसे जंगलीजीव हरिणादिकोंके मांस रसके यूषकेसाथ भोजनकरे ॥

## उत्तमवमनकाफल

तन्द्रा निद्रास्यदौर्गंध्यकण्डूश्च ग्रहणी विषम् ।
सुवांतस्य न पीडायै भवंत्येते कदाचन ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको उत्तम प्रकारकी उलटी होगईहो उसके नेत्रोंमें तंद्रा और निद्रा तथा मुखमें दुर्गंधी और खुजली तथा संग्रहणीरोग और विषदोष ये उपद्रव कदाचित् नही होवे ॥

---

१ दारु हल्दीके काढेमें बराबरका बकरीका दूध मिलायके ओटावे जब गाढा होजावे सुखायके जमायले उसको रसाजन कहते है । २ मुग और साठीचावल एक पल्लेवे उसमें १ प्रस्थ पानीडालके ओटावे कुछ गाढा कर पेजके समानकरे उसको यूष कहते है इसप्रकार हरिणादिकके मांसमें पानीडालके सिजावे पेजके समान करे उसको मासरस कहतेहै तथा वोभी यूषहै ।

मंथं कृत्वा पाययेच्च सघृतक्षौद्रशर्करम् ॥
शाम्यंत्यनेन तृष्णाद्याः पीडाच्छर्दिसमुद्भवाः ॥

अर्थ—आवले, रसोत, खस, चावलकीसील, लालचंदन, नेत्रवाला, इन छः औषधोंका मंथकरके उसमें घी और सहत तथा मिश्री डालके पिवावे तो उलटी करनेसें जो तृष्णादिक उपद्रव होतेहै वो सब दूरहोय ॥

## उत्तमवमनहोनेकेलक्षण

हृत्कंठशिरसांशुद्धिर्दीप्ताग्नित्वंचलाघवम् ।
कफपित्तविनाशश्चसम्यक्वांतस्यचेष्टितम् ॥

अर्थ—जिसमनुष्यको उत्तमउलटी होगईहो उसके लक्षण–हृदय कंठ और मस्तक इनमें जो कफादिक दोषहै वोदूरहो कर उसकी शुद्धिहो तथा अग्निप्रदीप्त और अंगहलके होय तथा कफदोष और पित्तदोष येदूरहो ॥

## उत्तमवमनहोनेकेपश्चात्पथ्य

ततोपराण्हे दीप्ताग्निमुद्गषष्टिकशालिभिः ।
हृद्यैश्च जांगलरसैः कृत्वा यूषं न भोजयेत् ॥

अर्थ—मनुष्यको उत्तम उलटी होनेके अनंतर तीसरे प्रहरमें अग्नि प्रदीप्तहोवे ऐसा मूग और सांठीचावल इनको मनके प्रियकारी ऐसे जंगलीजीव हरिणादिकोंके मांस रसके यूषकेसाथ भोजनकरे ॥

## उत्तमवमनकाफल

तन्द्रा निद्रास्यदौर्गंध्यकण्डूश्च ग्रहणी विषम् ।
सुवांतस्य न पीडायै भवंत्येते कदाचन ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको उत्तम प्रकारकी उलटी होगईहो उसके नेत्रोंमें तंद्रा और निद्रा तथा मुखमें दुर्गंधी और खुजली तथा संग्रहणीरोग और विषदोष ये उपद्रव कदाचित् नही होवे ॥

---

१ दारु हल्दीके काढेमें बराबरका बकरीका दूध मिलायके ओटावे जब गाढा होजावे सुखायके जमायले उसको रसांजन कहते है । २ मुंग और साठीचावल एक पल्लेवे उसमें १ प्रस्थ पानीडालके ओटावे कुछ गाढा कर पेजके समानकरे उसको यूष कहते है इसप्रकार हरिणादिकके मांसमें पानीडालके सिजावे पेजके समान करे उसको मांसरस कहतेहै तथा वोभी यूषहै ।

## वमनकर्ममेनिषिद्धपदार्थ

अजीर्णं शीतपानीयं व्यायामं मैथुनं तथा ।
स्नेहाभ्यंगं प्रकोपश्च दिनैकंवर्जयेत्सुधीः ॥

अर्थ—भारीपदार्थ, शीतलजल, परिश्रम, और मैथुन, देहमें तेलकी मालिस करना, और क्रोधकरना, इत्यादिक विषय जिसदिन वमनकी औषध लेवे उस दिन वर्जितहै ॥

---

## अथरेचनाधिकारः

स्निग्धस्विन्नस्यवांतस्य दद्यात्सम्यंक्विरेचनम् ।
अवांतस्य त्वधः स्रस्तो ग्रहणीं छादयेत्कफः ॥
मंदाग्निं गौरवं कुर्याज्जनयेद्वा प्रवाहिकाम् ।
अथवा पाचनै रामं बलासं च विपाचयेत् ॥

अर्थ—अब वमनके अनंतर विरेचन ( जुल्लाव ) की विधि कहते है । प्रथम मनुष्यको घृतादिक पिलायके स्निग्धकरे फिर उसको स्विन्नकरे अर्थात् उसके पसीने निकाले, फिर वमन करावे, वमनके अनंतर उत्तम प्रकार जुल्लावकी दवाइ देकर दस्तकरावे यदि विना रद्दके कराये जो वैद्य दस्तकराताहै तो उस रोगीका कफ अधोभागमें ( नीचे ) जायकर ग्रहणी ( छटी पित्तधरा और अग्नि धरा जो कला उसका ) आच्छादन करेहै, कि जिस्सें अग्निमांद्य तथा गौरव कहिये अंगोंका भारीपना और प्रवाहिका रोग ( अतिसारका भेद ) इन रोगोंको उत्पन्न करेहै अथवा अधस्स्त ( नीचेगएहुए ) कफ और आमको पाचन ( शुष्कएरंडमूलादिक ) करके ( पाचयेत् ) अर्थात् पचावे ॥

हमको इस स्थलपर इतना लिखेविन नहींरहा जाता कि हकीम लोग कहते है कि हमारे यहां जैसा जुल्लाव देनेका उत्तम कायदा है ऐसा हिंदी वैदकमें ख्वाव (स्वप्न)मेंभी नहीं मिलनेका, जैसा हमारे जुल्लावसे विमारकी तवियत प्रसन्न रह-

१ वमनके अनंतर दस्त क्यो करावे ऐसी शंका होनेसें कहते है कि–भेड, चरक, सुश्रुत, और वागभट इत्यादिक ग्रंथोंका यह अभिप्रायहै कि वमनदेकर. छः दिनके पश्चात् तीनदिन स्निग्ध करे फिर तीनदिन अंगमेंसे पसीने निकाले, फिर तीनदिन हलका भोजन देकर सोलहवे दिन रेचन ( दस्त ) करावे यह ग्रंथकारोंका अभिप्राय श्लोकमें "सम्यक्" पद धरनेसें जानाजाताहै ।

ती है और साफ होताहै ऐसा वैद्य कभी नही करसकेगा, इसका कारण यही है कि हमलोग प्रथम मरीजको मुंजिस देकर मलको फुलाय मुलायम कर फिर दस्त कराते है तो वहुत जल्द और बहुत सफाईके साथ दस्त होते है और विमारभी खुसी रहता है ॥

परंतु इस तरह कहनेवाले हकीमोंको हम निरे वैशापनंदन ही जानेहै खैर मुसलमान हकीम कहेतो कहे, परंतु दो दिनसैं पैर अडानेवाले कि जिन्होनें अच्छीरीतिसैं हिकमतके भी पूरे २ ग्रंथ नही देखे, फिर हमारे ग्रंथ देखना तो उनको मानो एक वडाभारी समुद्रका तैरना है । जैसै हमारेही हिंदु हकीम हमारी और हमारे शास्त्रोंकी निंदा करते है तो हमको उनकी वुद्धिपर अत्यंत शोक होता है कि देखो जैसै कोई वालक अपने घरमें अमूल्य पदार्थ धरेहुए ओंको अंधकार वस न दीखनेसैं तुच्छ मोलके दूसरोंके पदार्थ लेकर अपने मनमें यह विचार करता है कि ऐसे पदार्थ अमूल्य हमने नहीं देखे और उनकी वो अत्यंत इज्जत करता है । यादि उसका पिता आदि कोई वडा मनुष्य उसको दीपकका उजेला दिखाकर घरके धरे हुए पदार्थोंके दिखलाये और उनका गुनभी वतलावे तो उस लडकेको कितनी खुसीहो और फिर वो दुसरेकी तुच्छ वस्तुओंकी तरफ देखेभी नहीं? क्यो देखे जिसके हाथमें चिंतामणी आगई वो कोडी पैसोंकी तरफ क्यो देखेगा ॥

इसी दृष्टांतके अनुसार हमारे हिंदुभाइ जो हकीमी विद्याके जालमें पडके अपनी अमोल वैद्यविद्याका प्रभाव न जानके इसकी निंदा करते है वो उक्त वालकके वतौर है; यदि उनको उनके घरकी धरीहुई वस्तु दिखलाई जाय तो अवश्य फिरजो दुराग्रही और जाहिल नही है वो इसकी प्रशंसा करते २ थकजावेगे और उनको यह निश्चय होजावेगा कि हकीमी और डाक्टरी आदि विद्या हमारी ही उच्छिष्ट ( जूठन ) है–

उन भोलेभाले भाईयोंको हम इसजगे हिंदी जुल्लावकी विधि दिखलाकर कहते है कि हमारे हिन्दी वैद्यकका कायदा ठीकहै कि अन्य मुल्कके हकीमोका कायदा ! ॥

अव आप देखिये कि हमारे प्रथक जिसको जुल्लाव लेनाहो वो प्रथम घृतादिको पीवे कि जिस्सैं देहकी रगरग और नाडीआदिकि जिन्में मवाद भराहै वो अत्यंत चिकनी होजावे । वाद इसके उसरोगीके पसीने निकाले, पसीने निकालनेका यही कारणहै की प्रथम घीके पीनेसैं उसका देह चिकनाहो गया फिर जो स्वेदन करातो जहा २ पर मवाद विकट रहाया वो पसीनेके निकालनेही तत्काल सवदेहसे अलगहो गया। जैसा स्नेहन और स्वेदनमें मवाद फूलताहै

और ढीला पडता है असा आप लाख मुंजिस पिलायाकरो कभी नही मवाद मुलायम होगा ? इसीसै हम लोगोमें मुंजिस नही देते ॥

अव पीछे कराई उलटी तो जितना छातीके ऊपर कफ जमा हुआ है वो सव निकलजावेगा यदि इसको विना निकाले जुलाव देवे तो वो कफ नीचे जायकर मंदाग्नि; प्रवाहिका आदि रोगकरता है इसी कारण रोगीको वलावल विचारके रद्द करावे जिस्सै ऊपरका भाग साफहो जावे ॥

फिर दीना जुल्लाव तो वो सव मवाद फुलाहुआ और अलग धराहुआ जल्द निकल जावेगा, फिर भी उसको देहमे रहे हुए मवाद साफ करनेको वस्तिकर्म करतेहै । अर्थात् दवाइयोंके रसकी पिचकारी उसकी गुदामें मारते है कि जिस्सै रहा सहा विलकुल्ल मल साफ होजावे । इसप्रकार पूर्ववस्वी और उत्तर वस्ती तथा शिरोवस्ती आदि अनेकप्रकारसै हमारे रोगीको साफ करना लिखाहै

इसरीतिसैं जव वो शुद्धहोजाता है तव नकाहत वहुत आयजातीहै इसके वास्ते फिर वृंहण चिकित्सा द्वारा उसको पुष्ट और वलवान करनेकी विधि लिखीहै

इसप्रकार शुद्धहुए मनुष्यके कदाचित् रोग नही होते इसीसैं हमारे शास्त्रमें जहां लिखाहै तहां यही आज्ञाहै कि " ये तु संशोधने शुद्धा न तेषा पुनरुद्भवः "

वाकी संपूर्णविधि इस हमारे वृहन्निघंटुरत्नाकरमें गौर करके देखिये और जिनको जो शंकाहोवे वो हमसैं पूछे हम अपनी वुद्धिके अनुसार उनका समाधान करेगे—इसीप्रकार प्रत्येक वस्तु हमारे शास्त्रसैही अन्य विलायतवालोंने ली नीहै कहांतक लिखे ॥

## दस्तोंकादूसराप्रकार

**स्निग्धस्य स्नेहनैः कार्यं स्वेदैः स्विन्नस्य रेचनम्॥**

*अर्थ—घृतदुग्धादिक स्नेहद्रव्य करके स्निग्ध मनुष्यको तथा पिंडेष्टिकादि* करके स्विन्न ( अर्थात् जिसके पसीना काढाहो ) असे मनुष्यको दस्त कराने चाहिये ॥

## विनावमनकेदस्तकरानेयोग्य

**शरदतौ वसंते च देहशुद्धौविरेचयेत् ।**
**अन्यदात्ययिके काले शोधनं शीलयेद्बुधः ॥**

अर्थ—शरदऋतुमें और वसंतकालमें मनुष्यके शरीरशुद्धीके वास्ते जुलाव देवे कि जिस्सै देह शुद्धीहोकर शरीर उत्तमदीखे । तथा रक्तकालके सिवाय दू-

१ माटीका गोला टिकिया आदि करके ।

सरे कालमें रोग उत्पन्नहोनेसें उसकालमें वैद्य रोगीका अच्छीरीतिसें विचार करके दस्तकरावे तात्पर्य यहहै कि शरद और वसंतऋतुमें विना वमनके भी दस्तकरावे परंतु अन्य ऋतुमें नहीं ॥

## दस्तकरानेयोग्यरोग

पित्ते विरेचनं दद्यादामोद्भूते गदे तथा।
उदरे च तथाध्माने कोष्ठाशुद्धौ विशेषतः॥

अर्थ—पित्तके विकारमें, आमवात, उदररोग, अफरा, और, बद्धकोष्ठ (मलनउतरे) इन रोगोंमें वैद्यको विशेपताकरके दस्तकराने चाहिये ॥

## दोषदूरकरनेमें विरेचनकी उत्कृष्टता

दोषाःकदाचित्कुप्यंति जिता लंघनपाचनैः।
येतु संशोधने शुद्धा न तेषां पुनरुद्भवः॥

अर्थ—कफादिकदोप लंघन और पाचन औषधसें यद्यपि शमन (शांति) हो जातेहै फिर कालपायकर कुपित होतेहै, परंतु जो दोष वमन विरेचन आदिसंशोधन करके शुद्धहुए है उनदोषोंकी फिर कदाचित् उत्पत्ती नही होती अर्थात् संशोधन द्वारा दोप जडसें नष्टहो जाते है ॥

## दस्तकरानेयोग्यमनुष्य

जीर्णज्वरी गरव्याप्तो वातरक्ती भगंदरी। अर्शःपांडूदरग्रंथिहृद्रोगारुचिपीडिताः॥ योनिरोगप्रमेहार्त्ता गुल्मप्लीहव्रणार्दिताः। विद्रधिच्छर्दिविस्फोटविषूची कुष्ठसंयुताः॥ कर्णनासाशिरोवक्रगुदमेढ्रामयान्विताः यकृत्शोथाक्षिरोगार्त्ताः कृमिक्षारानिलार्दिताः॥ शूलिनो मूत्रघातार्त्ता विरेकार्हा नरा मताः॥

अर्थ—जीर्णज्वर,वच्छनाग विपादिकसें व्याप्त, वातरक्ती, भगंदर, बवासीर, पांडुरोगी, उदररोगी, गाठकारोगी, हृदयरोग, अरुचि, प्रमेह, योनिरोग, गोलावाला, तिल्ली, व्रणरोगी, विद्रधि, वमन, विस्फोटक, विषूची (हैजा) कोढ,

१ उदररोगीको दस्तकरावे ये प्रथम कह आये है परंतु विशेपता दिखानेको यहांपर फिर कहाहै। २ देखो हैजामें दस्त करना स्पष्ट लिखाहै परंतु यह लोक विरुद्ध होने से वैद्यको वर्जित है।

कर्णरोग, नासारोग, मस्तकरोग, मुखरोग, गुदारोगी, लिंगमेंउपदंशादिकरोग, कलेजेकारोगी, सूजन, नेत्ररोग, कृमिरोग, सोमरोग, क्षारजन्यविकार, वातरोग, शूलरोग, और मूत्राघातरोग, इतनेरोगोंसे व्याप्त मनुष्यदस्तकराने योग्यहै अर्थात् इतनेरोगवाले मनुष्योंको दस्तकरना चाहिये ।

## दस्तदेनानिषेध

बालवृद्धावतिस्निग्धक्षतक्षीणोभयान्वितः । श्रांतस्तृषार्तःस्थूलश्चगर्भिणी च नवज्वरी ॥ नवप्रसूतानारी च मंदाग्निश्च मदात्ययी । शल्यार्दितश्च रूक्षश्च नविरेच्या विजानता ॥

अर्थ—बालक, अतिवृद्ध, अतिस्निग्धमनुष्य, उरःक्षतकरकेक्षीणमनुष्य, भयकरकेयुक्त, श्रमित ( जोमेहनतकरनेसेंथका ) है, प्याससेंघबरायाहुआ, अत्यंतमोटामनुष्य, गर्भिणीस्त्री, नवीनज्वरकरकेपीडित, नवप्रसूतास्त्री, मंदाग्निवालामनुष्य, मदात्ययरोगी, शल्यकरकेपीडित, तथा रूक्ष ( निस्तेज ) मनुष्य इनको चतुरवैद्य दस्त न करावे [ जो करावेतो वो मूर्खजानना ]

## मृदु मध्यऔरक्रूरकोष्ठ

बहुपित्तो मृदुः प्रोक्तो बहुश्लेष्मा च मध्यमः । बहुवातःक्रूरकोष्ठो दुर्विरेच्यः सकथ्यते । मृद्वीमात्रा मृदौकोष्ठे मध्यकोष्ठे च मध्यमा ।क्रूरे तीक्ष्णामता तज्ज्ञैर्मृदुमध्यमतीक्ष्णकैः॥

अर्थ—जिस मनुष्यका कोठा अत्यंत पित्तकरके व्याप्तहै वो मनुष्य मृदुकोष्ट ( नरमकोठेवाला ) जानना । तथा जिसके कोठेमें अत्यंत कफहोवे वो मध्यम कोष्टका जानना । तथा जिसके कोठेमें अत्यंत वायुहोवे वो मनुष्य क्रूर (कठिन) कोठेका जानना । यह क्रूरकोठेवाला दस्त करानेमें दुखदाई है [ अर्थात् इसको करडीसेंभी करडी दवादेने परभी दस्त नहीं होते ] और जिसका नरमकोठाहै उसको मृदु ( नरम ) औषधकरके मृदुमात्रादेवे । तथा जिसका कोठा मध्यमहै उसको मध्यम औषध करके मध्यम मात्रादेनी । तथा जिसका कोठा क्रूरहै उसको तीक्ष्ण औषध करके तीक्ष्णमात्रा देनी चाहिये । वो औषध आगेके श्लोकमें कहतेहैं॥

---

१ तथा मंदाग्निवालेको भी वैद्य दस्त न करावे कारण कि रहीसही जो जठराग्नि है वो भी दस्त करानेसें शाति होजाती है । २ कांच. काटा- सुई. नख. इत्यादिक शरीरमें रहनेसे जो दुखी होताहै उसे शल्यार्दित जानना ।

## मृदुमध्यमादिकोष्ठोंमें मृदुमध्यमादिक औषध

मृदुर्द्राक्षापयश्चंचुतैलैरपि विरच्यते ॥ मध्यकस्त्रिवृता-
तिक्ताराजवृक्षैर्विरिच्यते ॥ क्रूरः स्नुक्पयसा हेमक्षीरी
दंतीफलादिभिः ॥

अर्थ—जिसका नरमकोठाहै उसको कालीदाख, दूध, और अंडीकेतेलसेही दस्त होतेहैं और जिसका मध्यमकोठाहै उनको निसोथ, कुटकी, और अमलतासकागूदा इन तीनऔषधोकरके दस्तहोतेहै अतएव एही औषध देवे । तथा जिसका क्रूरकोठाहै उसको थूहरकादूध, हेमक्षीरी ( चौक ) जमालगोटा, आदि शब्दसे जलफ इन्द्रायनकीजड सनाय आदि इन करके दस्त करावे, तो दस्तहोवे परंतु वैद्यको उचितहै कि इसमें विपरीत न करे अर्थात् मृदुकोठेवालेको क्रूरकोठेकी औषध नदेय, और क्रूरकोठेवालेको नम्रकोठेकी न देवे ।

## दस्तोंकीहीनोत्तमादिमात्रा

मात्रोत्तमाविरेकस्य त्रिंशद्वेगैः कफांतिका ।
वेगैः विंशतिभिर्मध्या हीनोक्ता दशवेगिका ॥

अर्थ—दस्तके वेग ३० होकर अंतके दस्तमें कफगिरेतो उत्तममात्रा जाननी तथा दस्तके २० वेगहोकर कफ निकलेतो मध्यम और दशवेग होनेके उपरांत यदि कफगिरने लगेतो हीन मात्रा जाननी। यदि दस्तचहिये जितने होवे परंतु जबतक कफ नहीं निकले तकतक जुलाब उत्तम नही कहलाता, आंव और कफके निकलनेपरही जुलाबकी तारीफहै ।

## दस्तोंमेंकाढेआदिकीमात्राकाप्रमाण

द्विपलं श्रेष्ठमाख्यातं मध्यमं च पलंभवेत् ।
पलार्द्धं च कषायाणां कनीयस्तु विरेचने ॥

अर्थ—दस्तहोनेमें दोपल काढादेनेसें उत्तम दस्त होतेहै, और एकपल देनेसे दस्त मध्यमहोते है, तथा अर्द्धपल ( दोतोले ) देनेसें दस्त कनिष्ठ होते है ॥

---

१ आँव ये नाभिके चारचो तरफ लिपटी है और ऊपरसें बडाभारी मलका लपेटा लगाहुआ है. जब यह प्राणी दस्तकी दवाई लेताहै तो ऊपरके मलके लपेटेमेंसें थोडाबहुत मल निकलताहै परंतु जब आम निकलनेकी होती है तब इसप्राणीके नाभिके चारोतरफ थोडा बहुत मरोडा होने लगता है उस समय जाननाकि अब आम निकलेगी ।

## दस्तोंमेंकल्कादिकोंकाप्रमाण

कल्कमोदकचूर्णानां कर्षमध्वाज्यलेहतः ।
कर्षद्वयं पलं वापि वयोरोगाद्यपेक्षया ॥

अर्थ—कल्क,–मोदक ( लड्डू ) और चूर्ण ये प्रत्येक सहत और घीमें मिलायके, कर्ष १ दस्तहोनेके अर्थ देवे, अथवा–अवस्था और रोग इनका तारतम्य विचारके दोकर्ष अथवा पलमात्र देने चाहिये ॥

## वातपित्तकफमेंऔषधी

पित्तोत्तरे त्रिवृच्चूर्णं द्राक्षाक्काथादिभिः पिबेत् ।त्रिफला-
क्काथगोमूत्रैः पिबेत् व्योषं कफार्दितः ॥ त्रिवृत्सैंधवशुं-
ठीनां चूर्णमम्लैः पिबेन्नरः । वातार्दितो विरेकाय जां-
गलानां रसेन च ॥

अर्थ—पित्तकी अधिकतामें–निसोथका चूर्ण कर दाखके काढेमे मिलायके देवे, आदि शब्दकरके गुलकंद, गुलाबकेफूल,–सोफ,–सनाय इत्यादिकके काढेसैं देवे । और कफके प्रकोप होनेसैं त्रिफलाका काढा और गोमूत्र दोनोको मिलाय उसमें सोंठ, मिरच, पीपल, इनका चूर्णडालके देवे । तथा जो मनुष्य वायुके कोपसैं पीडितहो उसको निसोथ, सैंधानिमक, और सोंठ, इनका चूर्णकर नीबूके रससै देना चाहिये । अथवा जंगली जीवोंके मांसरसके साथ देवे तो दस्तहोय ॥

## अन्यऔषधकरकेदस्तोंकाविधान

एरंडतैलं त्रिफला क्काथेन द्विगुणेन च ।
युक्तं पीत्वा पयोभिर्वा नाचिरेण विरिच्यते ॥

अर्थ—अंडीके तेलसैं दूना त्रिफलेका काढा मिलाय दोनोको एककरके पीवे अथवा उसअंडीके तेलको दूधमें मिलायके पीवेतो बहुत जल्दी दस्तहोवे ॥

## ऋतुभेदकरकेदस्तकीविधि

त्रिवृताकौटवीजं च पिप्पली विश्वभेषजम् ।
समृद्वीका रसक्षौद्रं वर्षाकाले विरेचनम् ॥

अर्थ—निसोथ,–इन्द्रजो,–पीपल,–सोंठ,–दाखकारस और सहत इनऔषधोंको दस्तहोनेके वास्ते वर्षाकालमें देना चाहिये ॥

## शरद्कालमेंविरेचन

त्रिवृद्दुरालभा मुस्ता शर्करादिव्यचंदनं ।
द्राक्षांबुना सयष्टीकं शीतलं च घनात्यये ॥

अर्थ—निसोथ,–धमासा,–नागरमोथा,–शक्कर,–उत्तम सपेद चंदन,–और मुलहटी इनका चूर्ण कर दाखके पानीमें मिलाय शरद कालमें पीवे, तो इस्सैं दस्त होवे । ये दस्त शीतलहै असा जानना चाहिये ॥

## हेमंतऋतुमेंविरेचन

त्रिवृता चित्रकं पाठामजाजीसरलां वचां ।
हेमक्षीरी च हेमंते चूर्णमुष्णांबुना पिबेत् ॥

अर्थ—निसोथ,–चित्रक,–पाडकीजड,–जीरा, देवदारु, वच, और चोक,– अथवा पीलादूधकाथूहर,–इनका चूर्णकर गरमजलसैं हेमंतऋतु ( अगहन और पौषमास ) में लेवे तो दस्तहोय ॥

## शिशिरऔरवसंतमेंविरेचन

पिप्पली नागरं सिंधु श्यामात्रिवृतया सह ।
लिहेत्क्षौद्रेण शिशिरे वसंते च विरेचनम् ॥

अर्थ–पीपर,–सोंठ,–सैंधानिमक,–विधायरा,–और निसोथ इन औषधोंका चूर्णकर सहतमें मिलायके शिशिरऋतु और वसंतऋतुमें लेवेतो इस्सै दस्तहोय ॥

## ग्रीष्मऋतुमें विरेचन

त्रिवृताशर्करातुल्या ग्रीष्मकाले विरेचनम् ॥

अर्थ—निसोथका चूर्णकर उसमें मिश्री मिलायके दस्तहोनेके वास्ते ग्रीष्म ( गरमीकी ) ऋतुमें सेवनकरे तो दस्तहोय ॥

## सुखसैं दस्तहोनेके लिये अभयादि मोदक

अभयामरिचं शुंठी विडंगामलकानिच । पिप्पलीपि-
प्पलीमूलं त्वक्पत्रं मुस्तमेव च॥ एतानि समभागानि
दंती च द्विगुणा भवेत् ॥ त्रिवृदष्टगुणाज्ञेया षड्गुणा
चात्र शर्करा॥मधुना मोदकं कृत्वा कर्षमात्रप्रमाणतः।
एकैकं भक्षयेत्प्रातः शीतं चानु पिबेज्जलम्॥तावद्विर-

च्यते जंतुर्यावदुष्णं न सेव्यते॥पानाहारविहारेषु भवे-
न्नियंत्रणं सदा॥विषमज्वरमंदाग्निपांडुकासभगंदरान्॥
विदाहप्लीहमेहांश्च यक्ष्माणं नयनामयान् ॥ वातरोगं
तथाध्मानं मूत्रकृच्छ्राणि चाश्मरीं पृष्टपार्श्वोरुजघ-
नकट्यूदररुजं जयेत् ॥ सततं शीलनादेष पलितानि
विनाशयेत् ॥अभयामोदकोह्येतद्रसायनवरास्मृता ॥

अर्थ—हरड, कालीमिरच, सोंठ, वायविडंग, आवले, पीपर, पीपरामूल, दालचीनी, पत्रज, और नागरमोथा, ये दश औषध समान भागले तथा दंतीकीजड, तीनभागले, निसोथ आठभाग, मिश्री छः भाग इस प्रमाण सब औषधोंके भागले कर सबका चूर्णकर सहतडाल एकएक तोलेकी गोली बनावे, इसमेंसें एकगोली प्रातःकाल दस्तहोनेके अर्थ भक्षणकरे ऊपरसें थोडा शीतलजल पीवे, और जबतक दस्तहोवे तब तक गरम पदार्थोंका सेवन न करे, तथा पान और भोजन तथा विहार कहिये परिश्रमादिक इनको सदैव नियमित ( परमाणका ) करे, कि जिस्से विषमज्वर, मंदाग्नि, पांडुरोग, खांसी, भगंदर, कुष्ट, गुल्मरोग, ववासीर, गलगंड, भ्रम, उदररोग, दाह, तिल्ली, प्रमेह, राजयक्ष्मा, नेत्ररोग, वातरोग, पेटकाफूलना, मूत्रकृच्छ्र, पथरीरोग, और पीठ–पसवाडे–कमर–ऊरु–जांघ–उदर–की पीडा इन सबरोगोंको दूरकरे। इस मोदकको अभयादिमोदक कहते है । यह अभयादिमोदक निरंतर सेवन करनेसें पलित ( सपेदवालोंका होना ) दूर होय और कालेवालहो यह अभयादि मोदक उत्तम रसायन रूपहै ॥

### दस्तोंकोसहायकरनेवालेपदार्थ

पीत्वाविरेचनं शीतजलैः संसिच्य चक्षुषी ।
सुगंधं किंचिदाघ्राय तांबूलं शीलयेन्नरः ॥

अर्थ—मनुष्यको दस्तकी औषध देकर पश्चात् उसके नेत्रोंको शीतलजलसें, छिडके और सुगंधित वस्तु ( अतर आदि अर्गजा आदि ) सुंघावे, तथा बीडा चबावे इत्यादि विधिके करनेसें उत्तम प्रकारके दस्तहोते है ॥

### दस्तहोनेपररहनेकेनियम

निर्वातस्थो न वेगांश्च धारयन्न स्वपेत्ततः ।
शीतांबु न स्पृशेत्क्वापि कोष्णनीरं पिबेन्मुहुः

अर्थ—दस्त होनेके अनंतर हवामें न बैठे, मल मूत्रका जब २ वेग आवे उसी वखत त्यागे रोके नही, जबतक दस्तहोय तबतक सोवे नही [ जुल्लावमें किसी २ को निद्रा अधिक आती है ] शीतलजलका स्पर्श करे नही। दस्तोंमें गरमजल बीच २ में पीतारहे असा करनेसैं उत्तम दस्त होतेहै ॥

## दस्तोमेंनिकलनेवाली वस्तू

बलासौषधपित्तानि वायुर्वांते यथा व्रजेत् ।
रेकात्तथा मलंपित्तं भेषजं च कफो व्रजेत् ॥

अर्थ—वमनकी औषध लेनेसैं कफ तथा जो औषध लीनी है वो एवं पित्त और वायु ये पदार्थ जैसैं वमनेके साथ बाहर गिरते है। उसी प्रकार दस्तकी औषध लेनेसैं मल-पित्त और जो औषधलीनी है वो एवं कफ ये पदार्थ गुदाके द्वारा बाहर गिरते है ॥

## दुष्टविरेचनकेअवगुण

दुर्विरक्तस्य नाभेस्तु स्तब्धत्वं कुक्षिशूलता। पुरीष वातसंगश्च कंडुमंडलगौरवाः॥ विदाहो रुचिराध्मानं भ्रमश्छर्दिश्च जायते।

अर्थ—उत्तम दस्त न होनेसैं इस प्राणीकी नाभिमें स्तब्धता, कूखमेंशूल, मल और अधोवायु इनकी अप्रवृत्ति, शरीरमें खुजली, तथा चकत्ते, ये उत्पन्नहो तथा अंगोंका जडपना, दाह, अरुचि, पेटका फूलना, भ्रम और वमन ये उपद्रवहोते है ॥

## (जिसकेउत्तमदस्तनहुएहोउसकायत्न)

तं पुनः पाचनैःस्नेहैःपक्कासंस्नेह्यरेचयेत् ।
तेनास्योपद्रवायांति दीप्तोग्निर्लघुताभवेत् ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको उत्तम जुल्लाब न हुआहो उसे आरग्वधादि पाचन काढे देकर आमको पचन करावे, फिर उसको स्नेहपान ( घृतपिलायके ) उसके कोठेको चिकनाकरके फिर दस्तकरावे। असा करनेसैं संपूर्ण उपद्रव दूरहोकर जठराग्नि प्रदीप्तहोय, और अंग हलका होयहै ॥

## अत्यंतदस्तहोनेकेउपद्रव

विरेकस्यातियोगेन मूर्च्छाभ्रंशो गुदस्य च।

शूलं कफातियोगःस्यान्मांसधावनसंनिभं ॥
मेदोनिभं जलाभासं रक्तंचापि विरिच्यते ।

अर्थ—मनुष्यको वहुत दस्तहोनेसैं मूर्च्छा–गुदा ( कांछका ) निकलआना और गुदामें पीडा–ये उपद्रव होते है । तथा कफ अत्यंतगिरे, और मांस धुले हुए पानीके समान तथा मद्यके समान अथवा चर्वीके सामान तथा जलके समान गुदाके द्वारा जल और रुधिरभी गिरे है ॥

## अत्यंतदस्तोंकाउपाय

तस्य शीतांबुभिः सिक्तं शरीरं तंडुलांबुभिः ।
मधुमिश्रैस्तथाशीतैः कारयेद्वमनं मृदु ॥

अर्थ—दस्त अत्यंत होनेसै मनुष्यके शरीरको शीतलजलकी धारसैं भिगोवे तथा चामलके धोवनके जलमें सहत मिलायके पिवावे, तथा नरम वमन करावे, तो असा करनेसैं अत्यंत दस्तोंकी शांति होय ॥

## दस्तबंदहोनेकाउपाय

सहकारत्वचःकल्को दध्नासौवीरकेन वा ।
पिष्टो नाभिप्रलेपेन हंत्यतीसारमुल्बणम् ॥

अर्थ—आमकी छालको गौकी छाछमें अथवा सौवीरमें पीस कल्ककर नाभीके ऊपरलेपकरे तो अत्यंत दस्तहोना वंदहोय ॥

अजाक्षीरं पिबेद्वापि वैकिरंहारिणं तथा । शालिभिः पष्टिकैः स्वल्पं मसूरैर्वापि भोजयेत् । शीतैः संग्राहि भिर्दिव्यैः कुर्यात्संग्रहणं भिषक् ॥

अर्थ—दस्त बंद होनेवास्ते बकरीका दूध पिवावे । अथवा विष्किर पक्षी

---

१ कच्चेजों अथवा भुनेजोओंको कूट उसमें पानीडालके उस पात्रका मुख वंदकर तीनंदिन धरा रहनेदे तो सौवीर वनकर तयारहो इसीप्रकार गैंहूंका भी वनायलेना ।

टीका कारोंने दस्त वंद करनेका विषय होनेके कारण सौवीर शब्दकरके कांजी लेना असा कहाहै । उसकांजी वननेकी विधि इस प्रकार है कि एकमिट्टीका पात्रलायके उसके भीतर सरसोंकातेला चुपडदेवे फिर उसमें निर्मल जल भरके राई,–जीरा,–सैंधानिमक,–हींग,–सोंठ,–हलदी,–इन छःऔषधोंका चूर्ण तथा भातसहितपेज,–कुलथी.काकादा,–ओर थोडे वांसकेपत्तेये सव वस्तु उसपात्रमें डाले तथा घीके तलेहुअे उडदके वडे दस पाच उसमें डाले,–उसका मुख बंदकर तीनदिन धरा रहनेदे जब उसमें खटाईकी वास आने लगे तव जानेकी कांजी वनकर तयार होगई ।

लवाआदिका मांसरस, तथा हरिणका मांसरस सेवन करे, तथा सांठी वा साली चावलोंका भात करके थोडा खाय, अथवा मसूरको सिज़ायके थोडी खाय, और भी अनार आदिशब्दकरके शीतल और ग्राहक ऐसे पदार्थ सेवनकरे कि जिस्सै दस्त बंदहोवे ॥

## उत्तमजुल्लावहोनेकेलक्षण

लाघवे मनसस्तुष्टया मनुलोमगते निले ।
सुविरक्तं नरं ज्ञात्वा पाचनं पाययेन्निशि ॥

अर्थ—उत्तम दस्तहोनेसैं देह हलकाहो जावे, चित्तमें प्रसन्नता,– अधो वायुका स्वस्थानमें गमन,–इतने लक्षण होनेसैं उस मनुष्यको दस्त उत्तमहुए ऐसा जानना। उसको रात्रिके समय पाचन ( सोंठ,–अंडकीजड,–और धनिया, ये तीन औषधोंका काढा पाचनार्थ देवे ) ॥

## उत्तमजुल्लावहोनेकाफल

इन्द्रियाणां बलं बुद्धेः प्रसादो वन्हिदीप्तता ।
धातुस्थैर्यं वयःस्थैर्यं भवेद्रेचनसेवनात् ॥

अर्थ–जुलावके लेनेसैं मनुष्यकी इन्द्रियोंमें बलआवे, बुद्धिप्रसन्नहो,–तथा जठराग्नि प्रदीप्त, और धातु तथा अवस्था इनका स्थिरपना होयहै अर्थात् रसादिधातु और आयु बढेकर बहुतदिनतक रहे ॥

## जुल्लावमेंअपथ्य

प्रवातसेवा शीताम्बु स्नेहाभ्यंगमजीर्णताम् ।
व्यायामं मैथुनं चैव न सेवेत विरेचितः ॥

अर्थ—मनुष्य दस्तहोने उपरांत अत्यंत हवा नखाय,–तथा शीतल और तैलादिककी मालिस,–अजीर्णकारी पदार्थ भोजन,–परिश्रम,–और मैथुन इनका सेवन न करे ॥

## जुल्लावमेंपथ्य

शालिषष्टिकमुद्गाद्यैर्यवागूं भोजयेत्कृताम् ।
जांगलैर्विष्किराणां वा रसैः शाल्योदनं हितम् ॥

अर्थ—दस्तहोनेके पश्चात् सांठीचावल और मूंग आदिशब्दसें अन्यधान्यकी यवागू करके सेवनकरे, तथा जंगली जीव ( हरीण ससे आदि ) का मांसरस अथवा विष्करजीव ( लवावटेरआदि ) पक्षियोंका और मुरगा इनके मांसरसके साथ चावलका भात सेवन करे ॥

## नाराचरस

तुल्यं पारदटंकणं समरिचं गंधाश्मतुल्यं त्रिभि र्विश्वं च त्रिगुणंतातो नवगुणं जेपालबीजं क्षिपेत् ॥ खल्वे दंडयुगं विमर्द्य विधिवत्संन्यस्य पर्णे ततः स्विन्नं गोमय वन्हिना सतु भवेन्नाराचनामा रसः । गुंजैक प्रमितोरसो हिमजलैः संसेवितो रेचयेद्यावत्कोष्णजलं भजेत्खलु-नरो भोज्यं तु दध्योदनम् ॥

अर्थ—शुद्धपारा,-फुलायाहुआ सुहागा,-कालीमिरच,-ये समान भाग लेवे और शुद्धगंधक तीनोके समान लेवे तथा सोंठ तीनभाग,-जमालगोटाके वीज नौ भाग,- इन सबको दोप्रहर खरलकर-पत्तेपर निकाल आरने उपलो की अग्निपर स्वेदन करे इस रसका नाम नाराचरस है यह एकरत्ती खांडकेसाथ देवे ऊपरसैं शीतलजलपीवे तो दस्तहोय और गरमजलपीनेसैं दस्तवंदहोते हैं, इसके ऊपर दहीभात खाना पथ्य है ॥

## द्वितीयनाराचरसः

जेपालेन समैः सूतव्योषटंकणगंधकैः।नाराचः स्याद्र-सोमापमात्रः सर्पिःसितायुतः॥ हंतिसंग्रहमानाहमाम-शूलं तथाज्वरम्॥वेलाज्वरं विरेकेण शीतलांबुनिषेवणम्॥

अर्थ—जमालगोटा,-पारा,-सोठ,-काली मिरच,-सुहागा,-गंधक ये समानभाग लेकर एकत्रकरके खरलकरे तो यह नाराचरस सिद्धहोवे,-इसमेंसे ६ रत्ती रस खांड और घीके साथ देवे तथा ऊपर शीतल जल पिवावे तो मलसंग्रह,-अनाहवायु ( अफरा ) आमशूल, वेलाज्वर, इनका दस्तहोने सैं नाश करे है ॥

## इच्छाभेदीरसः

शुंठीतीक्ष्णरसेन्द्रटंकणवलिः प्रोक्तः समंतात्रिधा कुंभीवीजयुतं विमर्द्य सभवेदिच्छाविभेदीरसः॥वल्लंशर्कर्या युतेन चुल्कं पुंसः सुखं रेचयेन्निः शेषं मलदोप-मेपविनिहंत्युच्चैर्यथेभं हरिः ॥

अर्थ—सोंठ,-कालीमिरच,-पारा,- सुहागा, गंधक ये समानभागले उसमें जमालगोटा तिगना डालके खरलकरे इसको इच्छाभेदी रस कहते है इस रस-

को २ रत्तीले खांडके साथ खाय ऊपरसैं जितने चुल्लू शीतलजलके पीवे उतने-ही दस्त इस प्राणीको होते है यह सुखजुलाव सवरोगोंको नाशकरे जैसैं सिंह हाथीका नाश करता है ॥

## द्वितीयइच्छाभेदीरसः

शंभोर्वीर्यं च टंकं बलिमरिचयुतं शृंगवेरं च तुल्यं यो-
ज्यं नैकुंभबीजं समशिखिसहितं मर्दितं याममेकं ॥
भुक्तंगुंजाद्विमात्रं शिशिरजलयुतं त्यक्ततल्पत्वमुच्ये-
दिच्छाभेदी रसोऽयं प्रबलमलहरः सर्वरोगैकहर्त्ता ॥

अर्थ—शुद्धपारा १ तोला, गंधक, कालीमिरच, सोंठ. जमालगोटेकेबीज, चित्रक, ये सब औषध समानभाग लेकर एक प्रहर खरलकरे इसको इच्छाभेदी-रस कहतेहै यह प्रबलमलका नाशकर संपूर्णरोगोंको हरणकरे है ।

---

## अथबस्तिप्रकर्णम्

बस्तिर्द्विधानुवासाख्यो निरूहश्च ततःपरं । यःस्नेहै-
र्दीयते सस्यादनुवासननामकः ॥ कषायक्षीरतैलैर्यो-
निरूहः स निगद्यते । बस्तिभिर्दीयते यस्मांतस्मात्
वस्तिरितिस्मृतः ॥

अर्थ—अंडकोशादिक करके गुदामें जो पिचकारी मारतेहै उसको वस्ती कहतेहैं वो वस्ति अनुवासन, और निरूहन इस भेदसैं दो प्रकारकीहै उसमें तेल घी- इत्यादि चिकनाईकीजो पिचकारी मारतेहै उसको अनुवासन और काढे दूध-तेल-इनको एकत्र करके जो पिचकारी मारतेहै उसको निरूह वस्ती कहते है।

## प्रकारांतर

वातोल्बणेषु दोषेषु वातेवा वस्तिरिष्यते ।
उपक्रमाणां सर्वेषां सोग्रणीस्त्रिविधश्च सः ॥
निरूहोन्वासनोवस्तिरुत्तरःसंप्रकीर्तितः ॥

अर्थ—वातोल्बणदोषोंमें अथवा केवल वातके दोषमें वस्तिकर्म करना चाहिये, यह सपूर्ण कर्मोंमें अग्रगण्य ( मुख्य ) है । सो तीनप्रकारकीहै १ निरूहवस्ति, २ अनुवासनवस्ति, और तीसरी उत्तरवस्ती ॥

## प्रथमअनुवासनबस्ति

तत्रानुवासनाख्योहि बस्तिर्यः सोऽत्र कथ्यते॥पूर्वमे-
वततोबस्तिनिरूहाख्योभविष्यति ॥ निरूहादुत्तरं चै
व बस्तिस्यादुत्तराभिधः । अनुवासनभेदश्च मात्राव
स्तिरुदीरितः॥पलद्वयंतस्यमात्रा तस्मादर्धापिवाभवेत् ॥

अर्थ—तहां प्रथम अनुवासन नामक वस्तिको कहके फिर निरूहवस्ती तथा उत्तरवस्ती कहैंगे । तथा उस अनुवासनवस्तीका भेद मात्रावस्ती है, उस मात्रावस्तीमें स्नेहादिकोंकी मात्रा दोपलकी है । अथवा पलमात्रकी जाननी इसप्रकार वस्तीके चारभेद जानने ॥

## अनुवासबस्तीमेंयोग्यप्राणी

अनुवास्यस्तु रूक्षः स्यात्तीक्ष्णाग्निः केवलानिली ॥

अर्थ—रूक्ष ( स्नेहपान रहित ) और प्रदीप्तहै अग्नि जिसकी वो और केवल वातरोगी ऐसे मनुष्योंको अनुवासन वस्तीके योग्य जानने ॥

## अनुवासनअयोग्यपुरुष

नानुवास्यास्तु कुष्ठीस्यान्मेही स्थूलस्तथोदरी ॥ नास्था-
प्या नानुवास्याः स्युरजीर्णोन्मादतृड्युताः ॥ शोकमू-
र्च्छारुचिभयश्वासकासक्षयातुराः ॥

अर्थ—कुष्टी, प्रमेही, स्थूलपुरुष, उदररोगी, ए अनुवासन वस्तीके योग्य नहींहैं । तथा उन्माद ( पागल ) अजीर्ण, तृषा, शोक, मूर्च्छा, अरुचि, भय, श्वास, खांसी, और क्षय इनकरके पीडित जो मनुष्यहै वो आस्थाप्य (निरूहवस्ती) में योजनाकरे "नानुवास्याः" अर्थात् उनकी अनुवासन वस्तीमें योजना न करे।

## ( वस्तीका मुखस्थापन विषयमें सुवर्णादिकोंकीनली )

नेत्रंकार्यं सुवर्णादिधातुभिर्वृक्षवेणुभिः ।
नलैर्दंतैर्विषाणाग्रैर्मणिभिर्वाविधीयते ॥

अर्थ—नेत्र कहिये गुदामें पिचकारी मारनेके लिये नली- वो सुवर्णादि धातुकी, अथवा वांसकी, अथवा नरसलकी, हाथीदांतकी, अथवा सींगके अग्र तथा विछौर अथवा सूर्यकांतादि ( आतसीकांचआदि मणियोंकी करनीचाहिये) ॥

(रोगीकी अवस्थानुसार नलीका प्रमाणकरे)

एकवर्षात्तु षड्वर्षं यावन्मानंषडंगुलम् ।
ततो द्वादशकं यावन्मानंस्यादष्टसंयुतं ॥
ततः परं द्वादशभिरंगुलैर्नेत्रदीर्घता ॥

अर्थ—वस्तीकी नली एक वर्षसैं लेकर छः वर्ष पर्यंत छः अंगुल प्रमाण, तथा छःवर्षसैं लेकर वारह वर्षपर्यंत आठ अंगुल प्रमाण लंबी, तथा वारह वर्षके पश्चात् वारह अंगुलकी लंबी नली बनानी चाहिये ॥

नलीकेछिद्रकाप्रमाण

मुद्गछिद्रं कलायाभं छिद्रं कोलास्थिसन्निभं । यथासंख्यं भवेन्नेत्रं श्लक्ष्णं गोपुच्छसंनिभं ॥ आतुरांगुष्ठमानेन मूलेस्थूलंविधीयते । कनिष्ठिकापरीणाहमग्रे चगुटिकामुखं ॥ तन्मूलेकर्णिके द्वे च कार्येभागाच्चतुर्थकात् । योजयेत्तत्र वस्तिं च वंधद्वयविधानतः ॥

अर्थ— जो छः अंगुलकी नलीहै उसका छिद्र मूंगके दानेके समान, और जो आठ अंगुलकी नलीहै उसका छिद्र मटरके दानेके वरावर, और जो वारह अंगुल लंबी नलीहै उसका छिद्र वेरकी गुठलीके प्रमाण इसप्रकार क्रमकरके नलीका छिद्रकरे । और वो नली चिकनी होकर गौके[१]पूंछके समान होनी चाहिये । तथा उस नलीका मूल रोगीके अंगूठाके वरावर मोटा और अग्रभागमें कनिष्ठका उंगलीके प्रमाण मोटी करके उसका मुख गोलकरे, तथा उस नलीके तीन भाग छोडके चतुर्थभागके मूलमें दोकर्णिका कमलपत्रके समान वनाय हरिणादिकोंके अंडकोवस्ति उस जगे लगाय उसकर्णिकासे वस्तीके दोनो भागं वाँधदेवे, कि जिस्सैं संधि न रहने पावे ।

वस्तीकिसकेआंडेकीवनावेसोकहतेहै

मृगाजसूकरगवां महिपस्यापि वा भवेत् ।
मूत्रकोशस्य वस्तिस्तु तदभावेन चर्मजः ॥
कषायरक्तः सुमृदुर्वस्तिः स्निग्धो दृढो हितः ।

१ जैसे गौकी पूंछ ऊपरसैं पतली होती है बीचमें मोटी और नीचे फिर क्रमसैं पतली होती चली गई है ऐसी बनावे ।

अर्थ—हरिण, वकरा, सूअर, वैल, अथवा भैसा इनके आंडोकी वस्ती वनानी, यदि ये न मिलेतो इनके चामकी वस्ती वनावे तथा उसवस्तिको वेरकीछाल इत्यादिकोंके काढेमें रंगे एवं नम्र और चिकनी तथा दृढ होनी चाहिये।

## व्रणवस्तीकाप्रमाण

व्रणवस्तेस्तु नेत्रं स्यात् श्लक्ष्णमष्टांगुलोन्मितं।
मुद्गच्छिद्रं गृध्रपक्षनालिकापरिणाहि च।

अर्थ—व्रणमें जो वस्ती योजना करीजायहै उसके नेत्र (नली) आठ अंगुल की लंवी और चिकनी तथा उसकाछिद्र मूंगके समान करे। तथा गीधके पंखकी नली जितनीमोटीहोतीहै इतनीमोटी इसप्रकार व्रणवस्तीकी नली वनानी चाहिये॥

## वस्तीकेगुण

शरीरोपचयं वर्णं वलमारोग्यमायुषः।
कुरुते परिवृद्धिं च बस्तिःसम्यगुपासितः॥

अर्थ—वस्तीका उत्तम प्रकार सेवन करनेसैं शरीरकीवृद्धि, कांति, वल, आरोग्य और आयुकीवृद्धि ये गुण उत्पन्न होतेहैं॥

## वस्तीकासेवनकाल

दिवसांते वसंते च स्नेहे बस्तिः प्रदीयते। ग्रीष्मवर्षा
शरत्काले रात्रौ स्यादनुवासनम्॥ न चातिस्निग्धम
शनं भोजयित्वानुवासयेत्। मदं मूर्च्छां च जनयेत् द्वि
धास्नेहः प्रयोजितः॥ रूक्षं भुक्तवतोत्यन्नं वलं वर्णं च
हीयते। युक्तः स्नेहमतो जंतुंभोजयित्वानुवासयेत्॥

अर्थ—वसंतऋतुमें स्नेहवस्ती (अनुवासन वस्ती) सायंकालमें करे। ग्रीष्मऋतु, वर्षाऋतु और शरदऋतुमें रात्रिमें वस्तिकर्म करे। तथा रोगीको अत्यंत स्निग्ध भोजन करायके अनुवासनवस्तीका प्रयोग कदाचित् न करे क्योकि इसप्रकार करनेसैं मद, और मूर्च्छाको करेहै। तथा अत्यंत रूखा भोजन करायके वस्तीप्रयोग करनेसैं वल और कांति इनकी हानी होतीहै इस वास्ते थोडा स्नेहयुक्त भोजन करायके फिर अनुवासन वस्तीदेवे॥

## (वस्तीमें हीन और अतिमात्राका निषेध)

हीनमात्रावुभौ वस्तीनातिकार्यकरौ स्मृतौ।

अतिमात्रौ तथानाहक्लमातीसारकारकौ ॥

अर्थ—अनुवासनवस्ती तथा निरूहवस्ती इनकीमात्रा होनेसें अत्यंतकार्य न-हींहो, अर्थात् रोग उत्तमरीतिसें दूर नहींहो। तथा पूर्वोक्तदोनोवस्तियोंकी अति-मात्रा होनेसें अनाहरोग, ग्लानि और अतिसार ये रोग उत्पन्न होतेहै।

## उत्तमादिमात्राकथन

उत्तमस्यपलैः षड्भिर्मध्यमस्य पलैस्त्रिभिः।
पलद्वयर्धेन हीनस्य युक्ता मात्रानुवासने ॥

अर्थ—उत्तम बलवाले बली मनुष्यको अनुवासन वस्तिमें छः पलकी मात्रा जाननी,—मध्यम बलवाले मनुष्य उसको तीन पलकी मात्रा जाननीं। और हीनबली मनुष्योंको डेढ पलके प्रमाण मात्रा जाननी। यह वस्तीकी मात्राका प्रमाण कहा॥

## स्नेहमेंसैंधवआदिकीमात्रा

शताह्वासैंधवाभ्यां च देयं स्नेहे च चूर्णकम्।
तन्मात्रोत्तममध्यांत्या षट्चतुर्द्वयमाषकैः ॥

अर्थ—सतावरी और सेंधानिमक इनका चूर्ण अनुवासन वस्तीमें देनाजो कहाहै उसकी मात्रा छःमासेकी है वो उत्तम, और चारमासेकी मध्यम, एवं दोमासेकी हीनमात्रा जाननी। [ शतावर और सेंधेनिमकका चूर्ण तेलमें मिलाया जाताहै ]

## अनुवासवस्तीदेनेकासमय

विरेचनात्सप्तरात्रे गते जातबलाय च।
भुक्तान्नायानुवास्याय वस्तिर्देयोनुवासनः॥

अर्थ—मनुष्यको रेचन ( जुल्लाव ) देकर सातदिन जानेके बाद बल आनेपर उसको भोजन कराय अनुवासन नामक वस्तीमें जो योग्य मनुष्य उसको अनुवासन वस्ती देनी चाहिये॥

## वस्तीदेनेकाप्रकार

अथानुवास्यं स्वभ्यक्तमुष्णांबुस्वेदितं शनैः। भोजयि-
त्वा यथाशास्त्रं कृतं चंक्रमणं ततः॥ उत्सृष्टानिलवि-
ण्मूत्रं योजयेत्स्नेहवस्तिना। सुप्तस्य वामपार्श्वेन

वामजंघाप्रसारिणः ॥ कुंचितापरजंघस्य नेत्रं स्निग्धे गुदे न्यसेत् । वध्वावस्तिमुखेसूत्रं वामहस्तेन धारये-त् ॥ पीडयेद्दक्षिणेनैव मध्यवेगेन धीरधीः । जृंभाका-सक्षवादींश्च बस्तिकाले न कारयेत् ॥

अर्थ—अनुवासन वस्तीके योग्य मनुष्योंके देहमें तेल लगाय गरमजलसैं अंग-में हलका पसीना काढ उसको यथाशास्त्र लिखित भोजन कराय थोडासा इधर उधरको फिराय यदि उसको मलमूत्र अधोवायु त्यागनेकी इच्छा होयतो करा यके फिर बस्तिकर्ममें योजना करे । और उसको वाई करवट सुलाय वाएपैरको लंवा पसार दहने पैरको संकुचित करे और गुदाको चिकनीकर वस्तीकीनली वस्तीके मुखमें डोरेसैं बांध उन नलीको गुदाके ऊपर धरे तथा कुशलवैद्य उस नलीको वाए हाथमें लेकर दहने हाथसैं मध्यमवेग करके दावे,–तथा वस्तीके समय जंभांईलेना,–खांसना,–और छींकना इत्यादिक रोगीको न करनेदेवे [ खांसी आदिके करनेसैं पिचकारीका तैल ऊपर चढ जाताहै अथवा नीचेही रहे ठीकस्थानपर नहीं पहुचे इसीवास्ते जंभाई और खांसना आदि वर्जितहै )

### पिचकारीलगानेमेंकाल

त्रिंशन्मात्रामितः कालः प्रोक्तो बस्तेस्तुपीडने ।
ततः प्रणिहितः स्नेहउत्तानोवाक्शतं भवेत् ॥

अर्थ—पिचकारी मारनेके समय तीसमात्रा पर्यंत काल जानना और वो स्नेह भीतर जानेसैं सौवाक ( जितनीदेरमें सौवार आंख मिचे ) इनती देरतक चित्त सोया करे उसमात्राका प्रमाण आगेके श्लोकमें कहते है ॥

### मात्राकाप्रमाण

जानुमंडलमावेष्ट्य कुर्याच्छोटिकयायुतं ।
एकामात्रा भवत्येषा सर्वत्रैप विनिश्चयः ॥

अर्थ—घोटूके चाऱ्योतरफ हाथफेरके चुटकी वजावे इतने कालकि एकमात्रा होती है । यह सर्वत्र निश्चय है तथा मात्राकाप्रमाण अन्यत्रभी ग्रंथोमें लिखा है सो देखलेना ॥

### वाङ्मात्राकाप्रमाण

निमेषोन्मेषणं पुंसामंगुल्या छोटिकाथवा ।

१ उसको चाँवलीकी पतली पेयाकरके पिवावे । २ गुदामें घी लगायकर ।

गुर्वक्षरोच्चारणं वा वाङ्मात्रेयं स्मृताबुधैः ॥

अर्थ—निमेषोन्मेषण ( पलकोका खोलना मूंदना ) चूटकी वजाना,–अथवा गुरुअक्षरके उच्चारण इनमें जितना समय लगता है उसको वाङ्मात्रा कहते है ॥

## पिचकारीलगानेकेपश्चात्क्रिया

प्रसारितैः सर्वगात्रैर्यथावीर्यं प्रसर्पति।
ताडयेत्तलयोरेनं त्रीन्वारांश्च शनैः शनैः ॥
स्फिजोश्चैवं ततः श्रोणिं शय्यां चैवोत्क्षिपेत्ततः।
जाते विधाने तु ततः कुर्यान्निद्रां यथासुखम् ॥

अर्थ—पिचकारी मारनेके पश्चात् रोगी हाथपैर आदि सब देहको ढीलाकरके पसारदेवे कि जिस्तै रसादिकधातु अपने २ स्थानपरजावें। तथा रोगीके हाथपैरके तलको तीनवार हलकी ( धीरे २ )तीन २ ताल देवे उसीप्रकार स्फिज ( कूला ) औरश्रोणी ( कटिपश्चात्भाग ) में तीन २ वार ताल मारे। फिर उसको शय्या ( पलंगपर ) बैठावे। इसप्रकार वस्तीविधि होनेके अनंतर रोगीको सुखपूर्वक सुलायदे ॥

## उत्तमवस्तिकर्महोनेकेगुण

सानिलः सपुरीषश्च स्नेहः प्रत्येति यस्य तु।
उपद्रवं विना शीघ्रं स सम्यगनुवासितः।

अर्थ—गुदाके भीतर गयाहुया जोस्नेह वो वायु तथा मल–इनके साथ उपद्रवके विना तत्काल वाहर आनेसैं उस मनुष्यको वस्तीकर्म उत्तम हुआ असा जानना ॥

## स्नेहकाविकारदूरहोनेमेंउपाय

जीर्णान्नमथसायाह्ने स्नेहे प्रत्यागते पुनः। लघ्वन्नं भोजयेत्कामं दीप्ताग्निस्तु नरो यदि ॥ अनुवासिताय देयं स्यादितरेह्निसुखोदकं। धान्यशुंठीकषायो वा स्नेहव्यापत्तिनाशनम् ॥

अर्थ—गुदाके रास्ते स्नेहनिःशेष ( संपूर्ण )वाहर आनेसैं और यदि मनुष्यकी अग्नि प्रदीप्त होवे तो उसको सायंकालमें पुराने अन्न किंचित् नित्यके आहारकी

१ एक वर्षके चावल अथवा साठदिनके पकनेवाले ( साँठी ) चावल पथ्यमें देवे।

अपेक्षा कम पथ्यमें देवे और अनुवासित मनुष्यको दुसरे दिन सुखोदक देवे अर्थात् गरमजल पीनेको देवे अथवा धनिया,–और,–सोंठ,–इनका काढा करके देयतो स्नेहका विकार दूरहोय ॥

## वातादिदोषोंमेंपिचकारीमारनेका प्रमाण

अनेन विधिना षड्वा सप्त चाष्टौ नवापि वा ।
विधेया वस्तयस्तेषामन्ते चैव निरूहणम् ॥

अर्थ—पूर्वोक्तविधिकरके वातादिक दोषोंमें छःवार अथवा आठवार अथवा नौवार पिचकारी मारे उस पिचकारियोंके अंतमें निरुहवस्ति योजना करे ॥

## बस्तीकेगुण

दत्तस्तु प्रथमो बस्तिःस्नेहयेद्बस्तिवंक्षणौ। सम्यक्दत्तो द्वितीयस्तु मूर्धस्थमनिलं जयेत्॥बलं वर्णं च जनयेत्तृतीयस्तु प्रयोजितः।चतुर्थपंचमौ दत्तो स्नेहयेतां रसासृजी॥षष्ठो मांसं स्नेहयति सप्तमो मेद एवच। अष्टमो नवमश्चापि मज्जानं च यथाक्रमं ॥ एवं शुक्रगतान्दोषान् द्विगुणः साधु साधयेत्।अष्टादशाष्टादशकान्वस्तीनां योनिषेवते॥सकुंजरबलोश्वस्य रमेत्तुल्योमरप्रभः॥

अर्थ—प्रथम वस्ति ( पिचकारी ) मारनेसैं वह वस्ती वंक्षण ( अंडसंधि ) द्वारा शरीरमें स्नेह न करे है अर्थात धातु वढावे है । दूसरी पिचकारी मारनेसें मस्तककी वायुको दूरकरे । तीसरी पिचकारी मारनेसैं शरीरमें वल–कांति आवे।चौथी और पांचवी पिचकारी मारनेसैं रस और रक्त इनकी वृद्धि होय । छटी और सातवी पिचकारी मारनेसै मांस और मेदमें स्निग्धता आती है। आठवी और नवम पिचकारी मारनेसैं मज्जामें और श्लोकमें जो चकारहै इस्सै शुक्रधातुमें स्निग्धता आती है । इस प्रकार द्विगुण ( १८ ) पिचकारी देनेसैं शुक्रधातुगत जो दोषहै उनका नाश होय तथा जो मनुष्य ३६ पिचकारियोंका सेवनकरे उसमें हाथीके समान बल और वेगमें घोडेके समान होय एवं देवस्वरूप कांतिहोयहै॥

## अनुवासनवस्तीऔरनिरूहनवस्तीयेकिसकोदेनीइसकाप्रकार

रूक्षाय वहुवाताय स्नेहवस्तिं दिने दिने। दद्याद्वैद्यस्त थान्येषामन्यांबाधामपाहरन् ॥ स्नेहोल्पमात्रो रूक्षाणां

दीर्घकालमनात्ययः । तथा निरूहस्निग्धानामल्पमा
त्रः प्रशस्यते ॥

अर्थ—रूक्ष होकर जो अत्यंत वायुसैं पीडित मनुष्य उसको वैद्य दिन २ में स्नेहवस्ती देवे । अर्थात् स्नेहकी पिचकारी नित्त मारे । उसी प्रकार " अन्येषां " कहिये स्निग्ध और स्थूलादिक मनुष्य उनके " अन्या " कहिये निरूहण वस्ती दिन२में देवेतो " बाधा " कहिये रोग दूरहोय । तथा रूक्ष मनुष्य उनके स्नेहवस्ती अल्पदेवे अर्थात् स्नेहकी पिचकारी हलकी मारे । परंतु रोगी बहुत दिनका बचाहुआ होय तो स्निग्ध मनुष्य उसके निरूहवस्ती अल्पदेवे ॥

तत्कालस्नेहबाहरनिकलेउसकाउपाय

अथवा यस्य तत्कालं स्नेहो निर्याति केवलः ।
तस्यान्योऽन्यतरो देयो नहि स्निग्धस्य तिष्ठति ॥

अर्थ—स्निग्ध मनुष्यकी गुदामें पिचकारी मारनेसे उसी वखत चिकनाई बाहर निकल आती हैं ठहरे नही है इसीसें स्नेहवस्ती देकर उसी समय निरूहवस्ती देवे, इसप्रकार पलटकर दोनो प्रकारकी वस्तीदेवे ॥

( स्नेहबाहर न निकले उसके उपद्रव और उपाय )

अशुद्धस्य मलोन्मिश्रः स्नेहो नैति यदा पुनः तदा शै-
थिल्यमाध्मानं शूलं श्वासश्च जायते । पक्वाशये गुरुत्वं
च तत्र दद्यान्निरूहणम् । तीक्ष्णं तीक्ष्णौषधियुता फल-
वर्त्तिर्हिता तथा॥यथानुलोमनोवायु मलस्नेहश्च जायते ॥
तथा विरेचनं दद्यात्तीक्ष्णं नस्यं च शस्यते ॥

अर्थ—वमन और विरेचन इत्यादिक करके जिसकी शुद्धी नही करी उसकी गुदासें यदि मलमिश्रित स्नेह बाहर आवे नहीं तो उसके देहमें शिथिलता, और अफरा ( पेटका फूलना ) शूल, श्वास, और पक्वाशयमें भारीपना, ये उपद्रव होते है । इनके दूरहोनेके वास्ते तीक्ष्णनिरूहण वस्ति देनी चाहिये । इसीप्रकार तीक्ष्ण औषध करके युक्त ऐसी फलवर्त्तीदे जिस्से वायु अधोगामी होकर मल मिश्रित स्नेह गुदाके रास्ते बाहर आवे, तथा उसीप्रकार तीक्ष्णजुलाब और तीक्ष्णनस्य ए देने चाहिये ॥

( स्नेह बस्ती जिसको उपद्रव करे नही उसका विधान। )

यस्य नोपद्रवं कुर्यात्स्नेहबस्तिरनिःसृता ।

सर्वोल्पो व्यावृते रौक्ष्यादुपेक्ष्यः सविजानता ॥

अर्थ—स्नेहवस्ती ( स्नेहकी पिचकारी ) गुदामें मारनेके अनंतर गुदाका संपूर्णभाग व्यावृत ( व्याप्त ) होनेसे अथवा मनुष्यके रूक्षपनेके कारण गुदाके एकदेशमें व्याप्तहोके रहनेसैं शूलादिक उपद्रव नहीं करे । तो पिचकारी ( स्नेहवस्ती ) उसीप्रकार गुदामें धरी रहनेदे ॥

## अहोरात्रिमें भी स्नेह वाहर न आवे तो उसका उपाय ।

अनायाते त्वहोरात्रे स्नेहं संशोधनैर्हरेत् ।
स्नेहवस्तावनायाते नान्यः स्नेहो विधीयते ॥

अर्थ—स्नेहकी पिचकारी मारनेसैं जो स्नेह वाहर नहींआवे उसकै दोवार पिचकारी मारके स्नेह वाहर आवे असायत्नकरे । अथवा जो स्नेह अहोरात्र ( दिनरात्रि ) में वाहर न आवे उसको जुलाव देकर तेलको वाहर निकाले ॥

## अनुवासनतैल

गुडूच्येरंडपूतीकभार्गीवृषकरोहितम् । शतावरी सहचरं काकनासा पलोन्मितम् ॥ यवमाषातसीकोलकुलित्थान् प्रसृतोन्मितान् । चतुर्द्रोणांभसा पक्त्वा द्रोणशेषेण तेन च ॥ पचेत्तैलाढके पेष्यैर्जीवनीयैः पलोन्मितैः ॥ अनुवासनमेतद्धि सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ—गिलोय,-अंडकीजड,-कंजाकीछाल,-भारंगी,-अडूसा,-रोहितृण,-शतावर,-पियाँवासा,-काकतुंडी, ये नौ औषध एक २ पललेवे । जों,-उडद,-अलसी,-वेरकी गुठली,-और कुलथी, ये पांच औषध दो दो पलले, इन सबको कूट पानी ४ द्रोण डालके एकद्रोण जल वाकी रहने पर्यंत ओंटावे, उसमें तिलका तेल एक आढक डालके और जीवनीय गणकी औषधी एक २ पल कूट चूर्णकरके गिलावे, फिर उसको ओटावे जब काढा जलके तेलमात्र शेष रहे तब नीचे उतारके तेल छानलेवे । इसको अनुवासन तेल कहते है । ये तेल संपूर्ण वायुके रोगोंको दूर करताहै ॥

## शव्यादितैलम्

शटीपुष्करकृष्णाव्हा मदनामरदारुभिः।शताव्हाकुष्ट-
यष्टयाव्हवचाबिल्वहुताशनैः॥सुपिष्टैर्द्विगुणं क्षीरं तैलं

तोयं चतुर्गुणम् । पक्का बस्तौ विधातव्यं मूढवातानु-
लोमनम्॥अर्शांसि ग्रहणीदोषमानाहं विषमज्वरम् ॥
कट्यूरुपृष्ठकोष्ठस्थान् वातरोगांश्च नाशयेत् ॥

अर्थ—तिलतैल ४ सेर, दूध ८ सेर, कल्कके वास्ते कचूर, पुह्करमूल, पीपल, मैनफल, देवदारु, सोंफ, कूठ, मुलहरी, वच वेलगिरी, और चीतेकीछाल, ए सब मिलायके सेरभर लेवे । जल १६ सेरले, सबको मिलाय तेलकी विधिसे सिद्धकरे । यह वस्तिक्रियामें प्रयोग करनेसें कुपित वायुको अनुलोम करे । तथा ववासीर, ग्रहणीदोष, अफरा, विषमज्वर, और जांघ,–कमर,–और पीठके वातरोगको दूरकरे । इसे शठ्यादि तैल कहते है ॥

## वचादितैलम्

वचापुष्करकुष्ठैला मदनामरसिंधुजैः॥कांकोलीद्वयय-
ष्टयाह्व मेदायुग्मनराधिपैः ॥ पाठाजीवकजीवंती भा-
र्गीचंदनकट्फलैः ॥ सरलागरुबिल्वाम्बुवाजिगंधाग्नि-
वृद्धिभिः॥विडंगारग्वधश्यामा त्रिवृन्मागधिकर्द्धिभिः॥
पिष्टैस्तैलं पचेत्क्षीरं पञ्चमूलरसान्वितम् ॥ गुल्मा-
नाहाग्निषंगार्शोग्रहणीमूत्रसंगिनाम् ॥ अन्वासनवि-
धौयुक्तंशस्यतेऽनिलरोगिणाम् ॥

अर्थ—तिलतैल ४ सेर, छोटा पंचमूलका काढा १६ सेर,–दूध, १६ सेर, कल्कके वास्ते वच,–पुहकरमूल,–कूठ,–इलायची,–मैनफल,–देवदार,–सैंधानिमक,–कांकोली,–क्षीरकांकोली,–मुलहटी,–मेदा,–महामेदा,–अमलतास,–पाठ,–जीवक,–जीवंतीशाक,–भारंगी,–लालचंदन,–कायफल,–सरलकाष्ट,–अगर,–वेलगिरी, नेत्रवाला,–असगंध,–चीता,–वृद्धि, वायविडंग,–कीरवारेकीगिरी,–सारिवा,–निसोथ,–पीपर,–वृद्धि,–यह सब औषध १ सेर ले । जल १६ सेर, तेलकी-विधिसें सिद्धकरे, यह तैल गोला,–अफरा,–मदाग्नि,–ववासीर,–संग्रहणी,–मूत्ररोग, और वातरोग इन समस्त रोगोंमें अनुवासन प्रयोगमें देवे. ॥

## चित्रकादितैलम्

चित्रकादिविषापाठा दन्तीबिल्ववचाग्निपैः सरलांशु-
मतीराष्णा नीलिनीचतुरंगुलैः॥ चव्याजमोदकांकोली

मेदायुग्मसुरद्रुमैः जीवकर्षभवर्षाभूवस्तगंधशताह्वयैः॥ रेन्वश्वगंधामंजिस्का शटीपुष्करतस्करैः॥ सक्षीरं विपचे- त्तैलं मारुताभयनाशनम्॥ गृध्रसीखंजकुब्जाढ्यमूत्रो- दावर्त्तरोगिणाम्॥शस्यतेऽल्पबलाग्नीनां बस्तावाशु- नियोजितम्॥

अर्थ—तिलतेल ४ सेर,–दूध १६ सेर, कल्ककेवास्ते चीतेकीछाल,–अतीस– पाठा,–दंती,–वेलगिरी,–वच,–सौंफ,–निसोथ, सालपर्णी,–रास्ना,–नीली,–अ- मलतास,–चव्य,–अजमायन,–कांकोली,–मेदा,–महामेदा,–देवदारु,–जीवक,– ऋषभक,–सांठ,–अजमोद,–सोफ,–रेणुक,–असगंध,–मजीठ,–कचूर,- पुहकरमू- ल,–चौरकाचरी,–यहसव १ सेर ले। जल १६ सेर,–तेलपाककी विधिसैं वनावे। यह ग्रभसी,–खंजता,–कुवडापना,–मूत्राधिक्य,–और,–उदावर्त्तरोग,–वलहीन,– तथा मंदाग्नि, इत्यादि रोगमें इस तैलका अनुवासन कर्म उत्तम है॥

## भूतिकादितैलम्

भूतिकैरंडवर्षाभू रास्नावृषकरोहिषैः॥ दशमूलसहा- भार्गीषड्ग्रंथामरदारुभिः॥बलानागबलामूर्वा वाजिगं- धामृताह्वयैः॥ सहाचरवरीविश्वा काकनासाविदारि- भिः॥ यवमापातसीकोल कुलत्थैः क्वथितैः शृतम्॥ जीवनीयप्रतीवापं तैलं क्षीरं चतुर्गुणं॥ जंघोरुत्रिक- पार्श्वांशबाहुमन्याशिरःस्थिताम्॥ हन्याद्वातविकारां स्तु बस्तियोगैर्निषेवितम्॥

अर्थ—तिलतैल ४ सेर, क्वाथकेवास्ते अजमायन,–अंडकीजड,–सांठ,–रास्ना, अडूसा,-रोहिषतृण,-दशमूल,-मुद्गपर्णी,-भारंगी,-वच,-देवदारु,-खरेटी,-गगेरन,मूर्वा, असगंध, गिलोय, पियावांसा, सतावर, सोंठ, काकडोडी, विदारीकंद, जों, उडद- अलसी, वेर, कुलथी, ये सब २॥ सेरले जल ६४ सेर लेके काढाकरे, जब १६ सेर रहे तब उतारके छानलेय, फिर जीवनीय गणका कल्क, दूध १६ सेर, सब- को एकत्र कर तैलकी विधिसैं सिद्धकरे। इस तेलको अनुवासन द्वारा प्रयोग करेतो जंघा, ऊरू, त्रिक, पसवाडे, कंधे, भुजा, मन्यानाडी, और मस्तकगत वातकरोग यह नष्ट होवे॥

## जीवन्त्यादितैलम्

जीवन्त्यातिबलामेदाकाकोलीद्वयजीरकैः। ऋषभातिविषाकृष्णाकाकनासावचामरैः॥ राष्णामदनयष्टयाह्वमरलाभीरुचन्दनैः। स्वयंगुप्ताशठीशृंगीकलशीसारिवाह्वयैः॥ पिष्टैस्तैलघृतं पक्कं क्षीरेणाष्टगुणेनतु॥ तच्चानुवासने देयं शुक्राग्निबलवर्द्धनम्॥ बृंहणं वातपित्तघ्नं गुल्मानाहहरं परम्। नस्ये पाने च संयुक्तंमूर्द्धजत्रुगदापहम्॥

अर्थ—तिलतेल ४ सेर। घृत १ सेर। जीवंती, अतिबला, मेदा, महामेदा, कांकोली, क्षीरकांकोली, जीवक, ऋषभक, अतीस, पीपल, काकडोडी, वच, देवदारु, रास्ना, मैनफल, मुलहटी, सरल, सतावर, रक्तचंदन, कौंछके बीज, कचूर, काकडासिंगी, पिठवन, सारिवा, ए सब औषधी १ सेरले। दूध ४० सेर लेके विधि पूर्वक तेलसिद्धकरे। इसका अनुवासन करनेसैं शुक्र, अग्नि, और बलकी वृद्धिकरै, देहको पुष्टकरे, वायु और पित्तकी शांति, एवं गोला और अफरा रोगको नष्टकरे। नस्य—तथा पानमें इसका व्यवहार करेतो उर्ध्वजत्रुगत रोगोंका नाशकरे। इसे जीवंत्यादि तैल कहते है॥

## मधुकादितैलम्

मधुकोशीरकाश्मर्यकटुकोत्पलचंदनैः। श्यामापद्मकजीमूत शक्राह्वातिविषांबुभिः॥ तैलपादं पचेत्सर्पिः पयसाष्टगुणेन च। न्यग्रोधादिगणक्काथयुक्तं वस्तिषु योजितम्॥ दाहासृग्दरवीसर्पवातशोणितविद्रधीन्। पित्तरक्तज्वराद्यांश्च हन्यात्पित्तकृतान् गदान्॥

अर्थ—तिलतैल ४ सेर। घृत १ सेर। न्यग्रोधादिगणकीकाथ २० सेर। दूध ४० सेर। कल्कके वास्ते मुलहटी,—खस,—कंभारी,—कुटकी,—कमलगट्टा,—रक्तचंदन,—अनंतमूल, पद्माख,—नागरमोथा,—इन्द्रजो, नेत्रवाला,—अतीस,—ए सब १ सेरलेवे। सबको तेलकी विधिसैं औटायके तेल सिद्ध करलेवे, उसका अनुवासन करनेसैं दाह,—प्रदर,—विसर्प,—वातरक्त,—विद्रधि,—तथा पित्तकृत अनेक प्रकारके रोग दूरकरे॥

## मृणालादितैलम्

मृणालोत्पलशालूकसारिवाद्वयकेशरैः । चंदनद्वयभूनिंब पद्मबीजकसेरुकैः ॥ पटोलकटुकारक्तागुंद्रापर्पटवासकैः ॥ पिष्टैस्तैलमिदं पक्कं तृणमूलरसेन च । क्षीरद्विगुणसंयुक्तं बस्तिकर्मणि योजितम् । नस्येऽभ्यंजनपाने वा हन्यात्पित्तगदान् बहून् ॥

अर्थ—तिलतेल ४ सेर । तृणपंचमूलका काढा १६ सेर । दूध ८ सेर । कल्कके वास्ते कमल,–नीलकमल,–नीलकमलकीजड,–सारिवा,–अनंतमूल, केशर,–रक्तचंदन,–सपेदचंदन,–चिरायता,–कमलगट्टा,–कसेरू,–पटोलपत्र, कुटकी मजीठ,–भद्रमोथा,–पित्तपापडा,–अडूसा, ये सब १ सेरले । सबका यथाविधि तैल सिद्धकरे । इस तेलकी नस्य–मालिस–पीना–और वस्ति क्रियामें प्रयोग करनेसे अनेक प्रकारके पित्तरोगोको निवारण करे ॥

## त्रिफलाद्यंतैलम्

त्रिफलातिविषामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः । निंवारग्वधषड्ग्रंथासप्तपर्णनिशाद्वयैः ॥ गुडूचीन्द्रसुराकृष्णाकुष्टसर्षपनागरैः । तैलमेभिःसमैः पक्कं सुरसादिरसाप्लुतम्॥पानाभ्यंजनगंडूषनस्यवस्तिषु योजितम् । स्थूलतालस्यकंड्वादीन् जयेत् कफकृतान् गदान् ॥

अर्थ—तिलतेल ४ सेर । सुरसादिगणकास्वरस १६ सेर– । कल्कके लिये–त्रिफला,–अतीस,–मूर्वा,–निसोथ,–चीतेकीछाल, अडूसा,–नीमकीछाल,–अमलतासके पत्ते, वच, सतोनाकीछाल, हरदी, दारुहलदी, गिलोय, मह्लाल्लू, पीपल, कूठ, सरसो, और सोंठ, सब, १ सेरलेवे । तैलसिद्धकरे इसतेल्के पीनेसे मालिससे कुरला नस्य–और वस्तीकर्म करनेसें स्थूलता, आलस्य, और खुजलीआदि कफके विविधविकार दूरहो । यहत्रिफलादितैलहै ।

## पाठाद्यंतैलम्

पाठाजमोदाशार्ङ्गेष्टा पिप्पलीद्वयनागरैः । सरलागरुकालीयभार्गीचव्यामरद्रुमैः ॥ मरिचैलाभयाकट्वीशटीग्रंथिकवत्फलैः। तैलमेरंडतैलंवा पक्कमेभिः समा

युतम् ॥ वल्लीकंटकमूलाभ्यां क्वाथेन द्विगुणेन च ॥ ह-
न्यादन्वासनैर्दत्तं सर्वान् कफकृतान् गदान् ॥

अर्थ—तिलतेल अथवा अंडीकातेल ४ सेर—। वल्लीपंचमूलका काढा ८ सेर कंटक पंचमूलकाकाढा ८ सेर । कल्ककेवास्ते– पाढ, अजमोद, महाकरंज, पीपल, गजपीपल, सोंठ, सरल, अगर, कालीयकाष्ट, भारंगी, चव्य, देवदारु, कालीमिरच, इलायची, हरड, कुटकी, कचूर, पीपरामूल, और कायफल सब १ सेरलेवे । इनसैं तेलको विधिपूर्वक सिद्धकरे इसका अनुवासन कफकृत समस्त रोगोंको निवारणकरे । इसैं पाठादि तैल कहतेहै ॥

## विडंगाद्यंतैलम्

विडंगोदीच्यसिंधूत्थ शठीपुष्करचित्रकैः । कट्फला-
तिविषाभार्गी वचाकुष्ठसुराह्वयैः ॥ मेदोमदनयष्ट्याह्व
श्यामानिचुलनागरैः ॥ शताह्वानीलिनीरास्ना कदली
वृषरेणुभिः ॥ बिल्वाजमोदकृष्णाह्वादंतीचव्यनरा-
धिपैः । तैलमेरंडतैलं वा मुष्ककादिरसाप्लुतम् ॥ प्ली-
होदावर्तवातासृग्गुल्मानाहकफामयान् । प्रमेहशर्करा
र्शांसि हन्यादाश्वनुवासनात् ॥

अर्थ—तिलतेल अथवा अंडीकातेल ४ सेर । मुष्ककादिगणकारस १६सेर– । कल्कके वास्ते वायविडंग नेत्रवाला, सैंधानिमक, कचूर, पुहकरमूल, चीतेकीछाल,– कायफर,– अतीस,– भारंगी,–वच,–कूठ,–देवदारु,–मेदा,–मैनफल,– मुलहटी,–अनंतमूल, -हिंगलकेबीज,- सोंठ,–सोफ,–नीलकीजड,–रास्ना,–केलाकीजड,–अडूसा,–रेणुक,–बेलगिरी–अजमोद,–पीपल,–दंती,–चव्य,–और अमलतासकेपत्ते सब १ सेरलेवे । विधिपूर्वक तैलसिद्धकरे–इसतेलके अनुवासनवस्ती करनेसैं प्लीह,–उदावर्त,–वातरक्त,–गोला,–अफरा,–कफकीअनेकव्याधि.–प्रमेह, शर्करा, और ववासीर, रोगको दूरकरे । यहविडंगादितैलहै–ये पूर्वोक्त संपूर्णतेल सुश्रुतके वस्ती अधिकारमें लिखेहै ॥

( अनुवासन वस्तिमें विपरीत होनेसे रोगहोतेहै उनको कहते है ॥ )

षट्सप्ततिव्यापदस्तु जायंते वस्तिकर्मणः ।

१ संपूर्ण औषधोंके गण ( जैसे मुष्ककादिगण–सुरसादिगण ) ए आगे कहेंगे ।

दूषितात्समुपायेन ताश्चिकित्स्यास्तु सुश्रुतात् ॥

अर्थ—वस्तीकर्ममें दोषरूप कुछभी विपरीतता होनेसें ७६ प्रकारकी व्यापत्ती(रोग )उत्पन्न होतेहै।उसकी चिकित्सा सुश्रुत ग्रंथमें लिखीहै वो करनीचाहिये।

वस्तिकर्ममेंपथ्य

पानाहारविहाराश्च परिहारश्च कृत्स्नशः ॥

स्नेहपानसमाः कार्या नात्र कार्या विचारणा ॥

अर्थ—अन्न, पान-और विहार आहारादिक इनके आचरण जैसा स्नेहपानमें कहाहै उसीप्रकार इस जगे वस्तीकर्ममें करे-इस विषयमें विचार न करे ॥

---

निरूहवस्तीकीविधिः

निरूहबस्तिर्बहुधा भिद्यते कारणांतरैः ।

तैरेव तस्य नामानि कृतानि मुनिपुंगवैः ॥

अर्थ—निरूहवस्ती कारणभेदकरके अनेकप्रकारकी होतीहै और जैसे २ कारण होतेहै उसी २ प्रकारका उसका नाम होताहै । उदाहरण- उत्क्लेशनबस्ति,-दोषहरवस्ति,- दोषशमनवस्ति, इत्यादिक नाम जानने ।

निरूहवस्तीकेदूसरेनाम

निरूहस्यापरं नाम प्रोक्तमास्थापनं बुधैः ।

स्वस्थानस्थापनाद्दोषधातूनां स्थापनं मतम् ॥

अर्थ—निरूह वस्तीका दूसरा नाम आस्थापनहै उसकी व्युत्पत्ती--दोष और रसादिक धातु इनको अपने २ स्थानपर बैठालेहै, इसासें इसको आस्थापन बस्ति कहतेहै । तथा वातादिक दोष अथवा रोग इनको दूरकरेहै इसीसें उसको निरूह ऐसा कहतेहै ।

( निरूहवस्तीमें काढेआदिका प्रमाण )

निरूहस्य प्रमाणं तु प्रस्थपादोत्तरं मतम् ।

मध्यमं प्रस्थमुद्दिष्टं हीनस्य कुडवास्त्रयः ॥

अर्थ—निरूहवस्ती देनेमें काढे आदिका प्रमाण सवा प्रस्थ उत्तमहै, और एकप्रस्थ मध्यम, तथा तीनकुडव कनिष्ठ जानना ।

## निरूहवस्तीअयोग्य

अतिस्निग्धो क्लिष्टदोषो क्षतोरस्कः कृशस्तथा । आध्मानछर्दिहिक्कार्शःकासश्वासप्रपीडितः ॥ गुद-शोफातिसारार्त्तो विशूचिकुष्टसंयुतः । गर्भिणीमधुमेही च नास्थाप्यश्च जलोदरी ॥

अर्थ—अत्यंतस्निग्धमनुष्य, तथा जिसके ऊर्ध्वगामीदोष हुएहो वो, तथा उरःक्षत करके पीडित, कृश, अफराका रोगवाला, छर्दिरोगी, हिचकी, ववासीर, खांसी, श्वास, इन करके पीडित जो मनुष्य होवे वह; गुदामें पीडा, सूजन, अतिसार, विशूचि, कोढ, गर्भवतीस्त्री, मधुमेहरोगी, और जलंधरका रोगवाला, इतने रोगी निरूहवस्तीमे अयोग्य अर्थात् इन रोगियोंके निरूहवस्ती न करे ।

## निरूहवस्तीयोग्यमनुष्य

वातव्याधावुदावर्ते वातासृक्विषमज्वरे । मूर्च्छातृष्णोदरानाह मूत्रकृच्छ्राश्मरीषुच ॥ वृद्धत्र्सृगुदरमंदाग्निप्रमेहेषु निरूहणम् । शूले ऽम्लपित्ते हृद्रोगे योजयेद्विधिवद्बुधः ॥

अर्थ—वातव्याधिरोगी, उदावर्त्त, वातरक्त, विषमज्वर, मूर्च्छा, प्यास, उदर, अफारारोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरीरोग, वहुतदिनोंका असृग्दर ( प्रदर ) मंदाग्नि, प्रमेह[१], शूलरोग, अम्लपित्त, हृदयरोग, इतनेरोगी निरूह वस्तीके विषयमें योग्यहै अर्थात् इनरोगियोंके निरूहवस्ती करै ।

## निरूहवस्तीदेनेकाप्रकार

उत्सृष्टानिलविण्मूत्रं स्निग्धं स्विन्नमभोजितम् । मध्यान्हे गृहमध्ये च यथायोग्यं निरूहयेत् ॥ स्नेहवस्तिविधानेन वुधः कुर्यान्निरूहणम् । जाते निरूहे च ततो भवेदुत्कटकासनः ॥ तिष्टेन् मुहूर्तमात्रं च निरूहागमनेच्छया । अनायातं मुहूर्तंतु निरूहं शोधनैर्हरेत् ॥

अर्थ—निरूहवस्ती जिसमनुष्यको देनीहोवे वह मलमूत्र त्याग चुकाहो, अ-

---

१ मधुमेहके विना और दूसरे प्रमेह वस्ती विषयमें योग्य जानने ।

र्थात् उसरोगीसैं कह देवे कि जब तक ये बस्तिकर्म होवेगा तबतक तुमको मल मूत्रत्यागना न होगा, यदि भीतरसैं अधोवायु निकले तो उसको निकाल कोठा शुद्धकर उसके देहमें स्नेहपदार्थ लगाय, थोडे देहसैं पसीने निकाल उसको भोजन न देकर मध्यान्हके समय घरमें जिसप्रकार जिसरोगपर बस्तीदेना लिखाहै उसप्रकार स्नेहवस्तीका विधान कर तैलादिककी पिचकारी गुदामें मारनी। और निरूहवस्तीके कर्महोनेके अनंतर वह निरूह बाहरआनेके वास्ते दो घडी पर्यंत उँकरू बैठा रहे। यदि दोघडीमें निरूहकी औषधी गुदामेंसैं न निकले तो उसको शोधन करके बाहर आनेका यत्नकरे सो आगेलिखते है॥

### निरूहकोबाहरलानेवालीऔषध

निरूहैरेवमतिमान् क्षारमूत्राम्लसैंधवैः॥

अर्थ—निरूहवस्ती गुदासैं बाहर न आनेपर जवाखार, और गोमूत्र, नीबूका रस, अथवा जंभीरीकारस, और सैंधानिमक, ए चार औषधी एकत्रकर गुदामें फिर निरूहण करे कि जिस्से पहलादियाहुआ निरूह बाहर निकले॥

### निरूहवस्ती उतम होनेके लक्षण

यस्य क्रमेण गच्छन्ति विट्पित्तकफवायवः।
लाघवं चोपजायेत सुनिरूढं तमादिशेत्॥

अर्थ—जिस मनुष्यके निरुह वस्ती देनेसैं उसके मल–तथा पित्त एवं कफ और अधोवायु ये क्रमकरके गुदाके रास्ते बाहर निकलनेपर शरीरमें हलकापनाहोवे तो निरूहण वस्तीका कर्म उत्तम हुआ अैसा जानना॥

### जिसकोउत्तमनहुईहोउसकेलक्षण

यस्य स्याद्बस्तिरल्पाल्पवेगोहीनमलानिलः।
मूत्रार्तिजाड्यारुचिमान् दुर्निरूढं तमादिशेत्॥

अर्थ—जिसको निरूहवस्ती देनेसैं उसका बाहार आनेकावेग अल्प आनेपर मल और अधोवायु ये जितने बाहर आने चाहिये इतने न आवे, अर्थात् थोडे आवे और मूत्र करनेमें पीडा तथा शरीरमें जडपना, अरुचि, ए सब लक्षण करके युक्त मनुष्यको निरूहवस्ती उत्तम नहीं हुई, ऐसा वैद्यको जानना चाहिये॥

### (निरूहवस्ति और स्नेहवस्ति उत्तमदेनेकाफल)

विविक्तता मनस्तुष्टिः स्निग्धता व्याधिनिग्रहः।
आस्थापनस्नेहवस्त्योः सम्यक्दाने तु लक्षणम्॥

अनेन विधिना युंज्यान्निरूहं बस्तिदानवित् ॥

अर्थ—रोगीके अंगमें हलकापना, मनकासंतोष, अंगमें पसीने आना, तथा रोगोंका नाश, ये आस्थापन ( निरूहवस्ति ) तथा स्नेहवस्ती इनके उत्तम देनेके लक्षण जानने । और पूर्वोक्त ( जो वस्तीदेनेका कर्म कहाहै ) उस कर्मके जानने वाले वैद्यको निरूहवस्ती देनी चाहिये [ और जो वस्तिकर्म न जानताहो उस वैद्यसें कदाचित् वस्तीकर्म न करावे ]

## निरूहबस्तिदेनेमेंसमयकाप्रमाण

द्वितीयं वा तृतीयं वा चतुर्थं वा यथोचितं । सस्नेहए-
कः पवने पित्ते द्वौ पयसा सह ॥ कषायकटुरूक्षाद्याः
कफे कोष्णास्त्रयोमताः ॥ पित्तश्लेष्मानिलाविष्टं क्षी-
रयूषरसैः क्रमात् । निरूहं योजयित्वा च ततस्तदनुवासयेत् ॥

अर्थ—निरूहवस्ती दोवार–अथवा तीनवार–अथवा चारवार–जैसा दोष होवे उसीके अनुसार देनीं, तथा वातरोग होनेसें स्नेहयुक्त निरूह वस्ती एकवार देवे, तथा पित्तरोग होनेसें दूधकेसाथ दोवार देवे, एवं कफरोग होनेसें कषाय और कटु तथा रूक्ष इत्यादि पदार्थ एकत्रकर तथा कुछ गरम करके तीनवार निरूहवस्ती देवे, अर्थात् इस औषधकी तीनवार पिचकारी मारनी चाहिये । अथवा कफ और पित्तवायु इन करके मनुष्य पीडितहोनेसें दूध और यूष तथा रस ( मांसरस ) इनके क्रमकरके गुदादिकमें वस्तीदेवे फिर अनुवासनवस्ती देय अर्थात् स्नेहकी पिचकारी मारे ॥

## ( सुकुमारादि मनुष्योंके निरूहबस्तिकी योजना )

सुकुमारस्य वृद्धस्य बालस्य च मृदुर्हितः ।
बस्तिस्तीक्ष्णः प्रयुक्तस्तु तेषां हन्याद्बलायुषी ॥

अर्थ—सुकुमार ( नाजुक ) और वृद्ध तथा बालक इनके हलकी पिचकारी मारनी क्योंकि सुकुमारादिकोंके दारुण वस्ती देनेसें इनके बल और आयुका नाश होताहै ॥

## ( आदि मध्य और अंत्य इनमें वस्तीकी योजना )

दद्यादुत्क्लेशनं पूर्वं मध्ये दोषहरं ततः ।
पश्चात्संशमनीयं च दद्याद्बस्तिं विचक्षणः ॥

अर्थ—प्रथम दोषोंके उत्क्लेद ( उखाडने ) को उत्क्लेदकारी औषधोंकी वस्ती देवे। तथा बीचमें दोषनाशक औषधोंकी वस्ती देवे, तथा अंतमें अपने २ स्थानपर दोष बैठजावे ऐसी औषधोंकी पिचकारी मारनी चाहिये॥

## उत्क्लेशनवस्ती

एरंडबीजं मधुकं पिप्पली सैंधवं वचा।
हवुषाफलवल्कश्च बस्तिरुत्क्लेशनः स्मृतः॥

अर्थ—अंडीके बीज, महुआकी छाल, पीपल, सैंधानिमक, वच, हौउवेर, ये छः औषध समान भाग लेकर पीसके कल्ककरे, इसको दोषोंके उखाडनेके वास्ते देवे इसें उत्क्लेशन वस्ती कहते है॥

## दोषहरवस्ती

शताव्हा मधुकं विल्वं कौटजं फलमेव च
सकांजिकः सगोमूत्रो बस्तिर्दोषहरः स्मृतः॥

अर्थ— शतावर, मुलहटी, वेलगीरी, इन्द्रजों, ए चार औषध समान भाग ले, कांजीमें वारीकपीस तथा इसमें गोमूत्र मिलाय गुदामें पिचकारी मारे, कि जिस्सै वातादिकदोषोका शमनहो इसको दोषहर बस्ती कहतेहै॥

## शोधनबस्ती

शोधनद्रव्यनिकाथस्तत्कल्कैः स्नेहसैंधवैः।
युक्त्या खजेन मथिता बस्तयः शोधनाः स्मृताः॥

अर्थ—निशोथआदि जो शोधनद्रव्यहै उनका काढाकर उसमें इन्ही औषधों का कल्क और सैंधानिमक मिलाय कलछीसें मथनकर दोषोंके शोधन विषयमें पिचकारी मारे, इसको शोधन बस्ती कहतेहै॥

## दोषशमनवस्ती

प्रियंगुर्मधुकोमुस्ता तथैव च रसांजनम्।
सक्षीरः शस्यते वस्तिर्दोषाणां शमने स्मृतः॥

अर्थ—फूलप्रियंगु, अथवा राल, महुआकीछाल, नागरमोथा, रसोत ये चार औषध समान भाग लेकर दूधमें वारीकपीस दोषशमन होनेसें इसकी पिचकारी मारे, इसे दोषशमन बस्ती कहते है।

## लेखनवस्ति

त्रिफलाक्वाथगोमूत्रक्षौद्रक्षारसमायुताः ।
ऊषकादिप्रतीवापैर्बस्तयो लेखनाः स्मृताः ॥

अर्थ—त्रिफलेका काढा करके उसमें गोमूत्र, सहत, जवाखार, डालके तथा ऊपकादिगणकी औषधीका चूर्ण उसमें मिलायके मेदरोगादिकमें कृश करनेको बस्ती देवे, इसे लेखन बस्ती कहतेहै ॥

## बृंहणवस्ति

बृंहणद्रव्यनिक्वाथः कल्कैर्मधुरकैर्युतः ।
सर्पिर्मांसरसोपेतवस्तयो बृंहणा मताः ॥

अर्थ—मूसली, गोखरू, कौचकेबीज, इत्यादिक जो धातुवर्द्धक द्रव्य उनका काढा कर उसमें महुआकी छाल और दाख तथा अनार इत्यादिक मधुरद्रव्य और कल्क तथा घी और मांसरस ये सब औषध डालके पुष्टहोनेके अर्थ वस्ती देवे, इसको बृंहण वस्ती कहतहै ॥

## पिच्छलवस्ति

बदर्यैरावतीसेलुशाल्मलीधन्वनागराः । क्षीरसिद्धाः क्षौद्रयुक्ता नाम्ना पिच्छलसंज्ञिताः ॥ अजोरणैणरुधिरैर्युक्तादेया विचक्षणैः । मात्रापिच्छलवस्तीनां पलैर्द्वादशभिर्मताः ॥

अर्थ—बेरकीछाल, नारंगी, बहुआरकी छाल, सेमरकीछाल, धमासो, सोंठ, ये छः औषध समान भाग लेकर दूधमें पीस सहत मिलाय उसमें बकरा और मेंढा तथा हरिण इनका रुधिर मिलायके कुशल वैद्य दोषोंके पतले करनेको वस्तीदेवे, इसको पिच्छल वस्ती कहते है । इस वस्तीकी मात्राका प्रमाण बारह पल जानना ॥

## निरूहणमात्राकीविधि

दत्वादौ सैंधवस्याक्षं मधुनः प्रसृतिद्वयं । विनिर्मथ्य ततो दद्यात्स्नेहस्य प्रसृतित्रयम् ॥ एकीभूते ततः स्नेहे कल्कस्य प्रसृतिं क्षिपेत् । संमूर्छितकषाये तु

चतुःप्रसृतिसंमितं ॥ क्षिप्त्वा विमथ्य दद्याच्च निरूहं कुशलो भिषक्। वाते चतुःपलं क्षौद्रं दद्यात्स्नेहस्य षट्पलं ॥ पित्ते चतुःपलं क्षौद्रं स्नेहस्य च पलत्रयम् । कफे षट्पलकं क्षौद्रं स्नेहस्यैव चतुःपलम् ॥

अर्थ—प्रथम सैंधानिमक १ कर्ष, तथा सहत ४ पल, इन दोनोको एकत्र मर्दनकर फिर उसमें घी अथवा तेल छःपल डालके एक जगे मिलाय उसमें कल्ककी जो औषध कही हैं उनका कल्ककरके उसमें स्नेहमिलायदे, अथवा उस कल्कका काढाकरके उस स्नेहमें मिलावे। फिर कुशलवैद्य गुदामें पिचकारी मारे, यह निरूहवस्तीकी साधारण विधि जाननी । विशेषविधि वातरोगमें सहत चारपल, और स्नेह तीनपल दोनोको एकत्रकर वस्तीदेवे तथा पित्तके रोगमें सहत४ पल और स्नेह ३ पलभि लांपवस्तीदे । एवं कफरोग होयतो सहत छःपल—और स्नेह चारपल लेवे दोनोको एकत्रकर वस्ती देनी चाहिये ॥

### मधुतैलवस्ति

एरंडक्काथतुल्यांशं मधुतैलं पलाष्टकम् । शतपुष्पापलार्द्धेन सैंधवार्धेन संयुतम् ॥ मधुतैलकसंज्ञोयं वस्तिः खजविलोडितः। मेदो गुल्मकृमिप्लीहमलोदावर्त्तनाशनः॥ वलवर्णकरश्चैव वृष्यो बृंहणदीपनः ॥

अर्थ—अंडकी जडका काढा ८ पल, सहत और तेल ये चार २ पल, सोंफ, और सैंधानिमक आधे २ पल लेके सबको एकजगे एकत्रकर गढमढ करलेवे, इसको मधुतैलक वस्ती कहते है, यह गुदामें देनेसें मेदोरोगको, गलेकेरोगको, कृमिरोगको, प्लीह, और उदावर्त्त इनको नाशकरे । और यहवस्ती वल तथा कांति, और स्त्रीसंगमेंप्रीति, धातुकीवृद्धि देयहै और अग्निको प्रदीप्तकरे है ॥

### दीपनवस्ति

क्षौद्राज्यक्षीरतैलानां प्रसृतिं प्रसृतिं भवेत् ।
हपुषा सैंधवाक्षांशौ वस्तिः स्याद्दीपनः परः ॥

अर्थ—सहत, घी, दूध, प्रत्येक दो दो पल, तथा हाऊबेर और सैंधा निमक दोनो कर्षभरलेय; बारीक पीस उस सहत–घी और दूधमें मिलायके जठराग्नि प्रदीप्तहोनेके वास्ते वस्ती देवे । इसे दीपनवस्ती कहते है ॥

## युक्तरथबस्ति

एरंडमूलनिःक्वाथो मधुतैलं ससैंधवम् ।
एष युक्तरथो बस्तिः सवचापिप्पलीफलः ॥

अर्थ—अंडकीजड़का काढा करके उसमें सहत और तेल डालके सैंधानिमक वच, पीपल, और मैनफल, ये चारऔषध समान भागले चूर्णकर उस काढेमें मिलायके गुदामें वस्ती (पिचकारी मारे) इसको युक्तरथ वस्ती कहतेहै यह वस्ती सर्व रोगोंपरहै ॥

## सिद्धबस्ति

पंचमूलस्यनिःक्वाथस्तैलंमागधिकामधु ।
ससैंधवः समधुकः सिद्धबस्तिरितिस्मृतः ॥

अर्थ—पंचमूलका काढा करके तेल, पीपलकाचूर्ण, सैंधानिमक, और महुआ कीछाल, अथवा मुलहटी, ये सव उस काढेमें डालके वस्ती देनी चाहिये । इस को सिद्धवस्ती कहतेहै । यह वस्ती सर्व रोगोंपर है

## ( वस्तीमें सेव्य पदार्थ और निषिद्ध पदार्थ )

स्नानमुष्णोदकैः कुर्याद्दिवास्वप्नमजीर्णताम् ।
वर्जयेदपरं सर्वमाचरेत्स्नेहबस्तिवित् ॥

अर्थ—पिचकारी लगनेवाला मनुष्य गरम पानीसें स्नानकरे । दिनमें सोवे नहीं, तथा अजीर्ण होनेदे नही, तथा दूसरे सब आचरण स्नेहवस्तीके समान करने चाहिये ।

---

## उत्तरबस्तिकीविधि

अतः परं प्रवक्ष्यामि बस्तिमुत्तरसंज्ञितम् । निरूहादुत्तरो यस्मात्तस्मादुत्तरसंज्ञितः ॥ द्वादशांगुलकं नेत्रं मध्ये च कृतकर्णिकम् । मालतीपुष्पवृन्ताभं छिद्रं सर्षपनिर्गमम् ॥

अर्थ—अब इसके उपरांत में उत्तर वस्तीका प्रमाण कहताहूं । निरूहवस्तीके उत्तर होनेसें इसको उत्तरवस्ती कहतेहै । इसकी बारहअंगुलकी लंबी नली होक-

२ उस नलीका मध्यभाग कमलपत्तेके कर्णिकाके समान करे। और वो नली मालतीफूलके बराबर मोटी होकर उसमें सरसों चली जाय इतना बडा छिद्र करना चाहिये ॥

### वयोनुमानकरके मात्राका प्रमाण

पंचविंशतिवर्षाणामधोमात्राद्विकार्षिकी।
तदूर्ध्वं पलमानंच स्नेहस्योक्ता विचक्षणैः ॥

अर्थ—मनुष्यकी पच्चीस वर्षकी अवस्था होने पर्यंत वस्तीविषयमें स्नेहकी मात्रा दोकर्ष प्रमाण विचक्षण वैद्य देवे। तथा पचीसवर्षके उपरांत १ पलकी मात्रा देनी चाहिये ॥

### (उत्तरबस्तीकी योजना कैसैं करावे उसे कहतेहै)

अथास्थापनशुद्धस्य तृप्तस्य स्नानभोजनैः। स्थितस्य जानुमात्रेण पीठे त्विष्टशलाकया ॥ स्निग्धया मेढ्रमार्गे च ततो नेत्रं नियोजयेत्। शनैः शनैः घृताभ्यक्तं मेढ्ररंध्रेङ्गुलानि षट् ॥ ततोवपीडयेद्वस्तिं शनैर्नेत्रं च निर्हरेत्। ततः प्रत्यागते स्नेहे स्नेहबस्तिक्रमोहितः ॥

अर्थ—निरूहवस्ती करके शुद्धहुए तथा स्नान और भोजन इन करके तृप्त हुए ऐसे मनुष्यको आसनपर घोटू टेकके बैठावे फिर यथा योग्य सलाई सचिक्कणहो उस सलाईकी नलीमें घी लगायके शिष्णमार्ग (लिंगके छिद्र) में प्रवेश करे, तथा उस नलीको लिंगके भीतर धीरे २ छःअंगुल प्रवेश कर पिचकारीमारे फिर उस नलीको धीरे २ बाहर निकाल लेवे, जब भीतरका स्नेह बाहर आय जाय तो उत्तम वस्तीकर्म होताहै। इसी प्रकार स्नेहवस्ती क्रम जानना ॥

### स्त्रियोंके वस्तिदेनेका प्रमाण

स्त्रीणांकनिष्ठिकास्थूलं नेत्रं कुर्याद्दशांगुलम्। मुद्गप्रवेशं योज्यं च योन्यंतश्चतुरंगुलं ॥ द्व्यंगुलं मूत्रमार्गे च सूक्ष्मं नेत्रं नियोजयेत् ॥

अर्थ—स्त्रियोंके वस्ती देनेमें उस वस्तीकी नली छोटी उंगलीके समान मोटी और दस अंगुल लंबीहो, तथा उसका छिद्र इतना बडा होवे कि जिसमें मूंग च-

ली जाय। तथा उस नलीके योनिके भीतर चार अंगुल प्रवेश करके फिर पिचकारी मारे। परंतु स्त्रियोंके मूत्रमार्गमें बारीक नली प्रवेशकरे तो उस नलीका दो अंगुल प्रवेश होनेपर पिचकारी मारनी चाहिये॥

## बालकोंके वस्तिदेनेके विषयमें प्रमाण

मूत्रकृच्छ्रविकारेषु बालानां त्वेकमंगुलम्। शनैर्निकंपमाधेयं सूक्ष्मनेत्रविचक्षणैः॥

अर्थ—बालकोंके मूत्रकृच्छ्र विकारमें वैद्य जैसें हाथ नहिले असें धीरे २ बारीक नलीको उसकी इंद्रीमें १ अंगुल प्रवेश करके पिचकारी मारे॥

## ( स्त्री और बालकोंके वस्तिदेनेमें स्नेहकी मात्रा )

योनिमार्गेषु नारीणां स्नेहमात्रा द्विपालकी। मूत्रमार्गे पलोन्माना बालानां च द्विकार्षिकी॥ उत्तानायै स्त्रियै दद्यादूर्ध्वजान्वै विचक्षणः। अप्रत्यागच्छति भिषक् बस्तावुत्तरसंज्ञिके॥

अर्थ—स्त्रियोंके योनिमें वस्तीकर्म करनेमें स्नेहकी मात्रा दोपल जाननी। तथा स्त्रियोंके मूत्रमार्गमें वस्ती देनी होय तो स्नेहकी मात्रा १ पलकी जाननी तथा बालकोंके दो कर्षकी मात्रा जाननी। और उत्तर संज्ञक वस्तीमें कुशलवैद्य उस स्त्रीको सीधी चित्त लिटाय कर उसके घोटू ऊपरको धर फिर वो स्नेह जैसें बाहर न आवे असी पिचकारी मारे॥

## शोधनद्रव्यकरके वस्तीका विधान

भूयोबस्तिं निदध्याच्च संयुक्तैः शोधनैर्गणैः। फलवर्तिं निदध्याद्वा योनिमार्गे दृढं भिषक्॥ सूत्रैर्विनिर्मितां स्निग्धां शोधनद्रव्यसंयुतां। दह्यमाने तथा वस्तौ दद्याद्बस्तिं विचक्षणः॥क्षीरवृक्षकषायेण पयसा शीतलेन च॥ वस्तिः शुक्ररुजः पुंसां स्त्रीणामार्तवजा रुजः॥ हन्यादुत्तरबस्तिस्तु नोचिता मोहिनां क्वचित्॥

अर्थ—मूत्रकृच्छ्रादि रोगोंमें शोधनद्रव्य ( अंडीकातेल आदि जो ) औष-

घी उनके समुदायोंकरके योनिके मार्गमें पिचकारी मारे अथवा अंडीके बीज आदि औषधोंकी दृढवत्ती बनाय अथवा सूतकीवत्ती बनाय उसवत्तीमें एरंड बीजादिक औषधी चुपडके उसको योनिमें प्रवेश करनी चाहिये । यदि उसबत्तीके अधोभागमें बस्तिस्थानहै वो विगडजावे अर्थात् उसमें दाहादिक होवेतो गूलर, वड, इत्यादि क्षीरवृक्षहै उनका काढा करके वस्ती देवे । अथवा शीतल दूधकी वस्तीदेवे तो बस्तिस्थान शुद्धहो । और यह वस्ती शुक्रधातु संबंधी जिस पुरुषके पीडाहोती हो उसके तथा स्त्रियोंके आर्त्तव संबंधी पीडा होतीहोवे उनको दूर करती है । तथा जिस मनुष्यके प्रमेह है उसके उत्तरवस्ती कभी उपयोगी नही होवे असा जानना ॥

## उत्तमउत्तरबस्तिहोनेके लक्षण

सम्यक्दत्तस्य लिंगानि व्यापदः क्रमएव च ।
बस्तेरुत्तरसंज्ञस्य शमनं स्नेहबस्तिना ॥

अर्थ—उत्तरवस्ती स्नेहवस्ती करके उत्तम प्रकार योजनाकरीहुई उसके लक्षण क्रमकरके येहै शुक्रधातु संबंधी जो प्रमेहादिक पीडा वो दूर होती है ॥

## गुदामें फलवर्तीकी योजना

घृताभ्यक्ते गुदे क्षेप्या श्लक्ष्णस्वांगुष्ठसंनिभा ।
मलप्रवर्त्तिनीवर्तिः फलवर्तिश्चसास्मृता ॥

अर्थ—गुदामें घी लगायके रोगीके अगूठेके प्रमाण उत्तम दृढवत्ती बनाय मलहोनेके वास्ते अंडीके बीज आदि जो रेचक औषध उनका उस वत्तीमें लेप कर उसको गुदामें धरे तो मल निकले, इस वत्तीको फलवर्ती कहते है ॥

## नस्यविधि

नस्यं तत्कथ्यते धीरैर्नासा ग्राह्यं यदौषधं ।
नावनं नस्यकर्मेति तस्य नामद्वयं मतम् ॥

अर्थ—जो औषध नाकमेंडाली जावे उसको नस्य कहते है उसनस्यके नाम-नावन और नस्यकर्म असे दोजानने ॥

## नस्यकेभेद

नस्यभेदो द्विधाप्रोक्तो रेचनं स्नेहनं तथा ।
रेचनं कर्षणं प्रोक्तं स्नेहनं बृंहणं मतम् ॥

अर्थ—इस नस्यके दो भेदहै–एक रेचन, और एक स्नेहन, इनमें जो नस्य रेचन है उसको कर्षण संज्ञक जाननी अर्थात् वातादि दोषोंको उच्छेद करताहै एवं जो स्नेहन नस्यहै उसको बृंहण जाननी ये धातुवृद्धिकरनेवाली है ॥

## नस्यकाकाल

कफपित्तानिलध्वंसे पूर्वमध्यापराह्णके ।
दिनस्य गृह्यते नित्यं रात्रौ वाप्युत्कटे गदे ॥

अर्थ—कफके नाशकरनेको नस्य प्रातःकालमें ले, पित्तके नाशको दोपहरमें ले,–वादीके नाशकरने को औषधी नासिकामें सायंकालमें डालनी, यदि रोगका अत्यंत बल होयतो रात्रिमेंभी डालना कहा है ॥

## नस्यकानिषेध

नस्यं त्यजेद्भोजनान्ते दुर्दिने चापतर्पणे ॥ तथा नवप्रतिश्यायी गर्भिणी गरदूषितः ॥अजीर्णी दत्तबस्तिश्च पीतस्नेहोदकासवः। क्रुद्धः शोकाभिभूतश्च तृषार्तो वृद्धबालकौ ॥ वेगावरोधीस्नातश्च स्नातुकामश्च वर्जयेत् ॥

अर्थ–नाकमें नस्य डालना होयतो भोजनके अंतमें जिसदिन, बद्दलहोय उसदिन और अपतर्पण तथा लंघनकराहो इनमें नस्य न देवे । जिसके नवीन पीनसरोग हुआहो, गर्भिणीस्त्री, तथा विषदोषकरके तथा अजीर्णकरके पीडित मनुष्य तथा जिसके वस्तिप्रयोग कराहै तथा घृत,–तेल इत्यादिक स्नेह और पानी तथा मद्य इनका सेवन करेहुए मनुष्यके,–क्रोधी,–शोक करे तथा तृषाकरके पीडित,–वृद्ध,–बालक, वात मूत्र इनका निरोध करनेवाला मनुष्य, तथा स्नानकराहुआ,–तथा स्नान करनेको जो तयार हो इन सब मनुष्योंको नस्य न देवे ॥

## नस्यकर्ममेंयोग्यअयोग्यमनुष्य

अष्टवर्षस्य बालस्य नस्यकर्मसमाचरेत् ।
अशीतिवर्षादूर्ध्वंचनावनंनैवदीयते ॥

अर्थ—आठवर्षके बालकके नासिकामें औषधी डाले और अस्सी वर्षके उपरांत अवस्था वालेके नाकमें औषधि नहीं डालनी चाहिये॥

## रेचकनस्यकाविधान

अथवैरेचकं नस्यं ग्राह्यं तैलैः सुतीक्ष्णकैः।
तीक्ष्णभेषजसिद्धैर्वा स्नेहैः क्वाथै रसैस्तथा॥

अर्थ—जो रेचन नस्य नाकमें डालनी वो अजमायन,—सरसो इत्यादिकोंके तीक्ष्णतेल निकालके नाकमें डाले अथवा तीक्ष्ण औषधडालके स्नेह सिद्धकरे,—अथवा तीक्ष्ण औषधका काढा अथवा रस इनसैं स्नेह सिद्ध करके नाकमें डाले

## रेचननस्यप्रकार

नासिकारंध्रयोरष्टौ षट्चत्वारश्च विंदवः।
प्रत्येकं रेचने योज्यामुख्यमध्यांत्यमात्रया॥

अर्थ—रेचनके वास्ते नाकके दोनो छिद्रोंमें औषधकी आठ विंदु डालना यह उत्तम मात्राहै, छः विंदु डालनेसैं मध्य मात्रा जाननी, और चारबूंद डालनेसैं कनिष्टमात्रा जाननी चाहिये॥

## नस्यकर्ममें औषधीका प्रमाण

नस्यकर्मणि दातव्यं शाणेकं तीक्ष्णमौषधं॥हिंगुस्या-
द्यवमात्रं तु माषैकं सैंधवं मतम्॥ क्षीरं चैवाष्टशाणं
स्यात्पानीयं च त्रिकार्षिकम्। कार्षिकं मधुरं द्रव्यं
नस्यकर्मणि योजयेत्॥

अर्थ—नस्यकर्ममें जो तीक्ष्ण औषधी होय वो एक शाण प्रमाण डाले। तथा हींग एक यव प्रमाण, सैंधानिमक १ मासे, दूध आठ साण, पानी तीनकर्ष, और खांड—अनार इत्यादिक मधुरद्रव्यजो है वो प्रत्येक कर्षलेवे, इस प्रकार इनकी योजनाकरे॥

## विरेचननस्यकेदूसरेदोभेद

अवपीडः प्रधमनं द्वौ भेदावपरौ स्मृतौ।
शिरोविरेचनस्थाने तौ तु देयौ यथायथम्॥

अर्थ—उस विरेचन नस्यके दो भेदहै—एक अवपीडन, तथा दूसरा प्रधमन, ऐसे जानना इन दोनोंको मस्तकके विरेचनमें देना चाहिये॥

## अवपीडनऔरप्रमधनकेलक्षण

कल्कीकृतादौषधाद्यः पीडितो निसृतो रसः। सोव-

पीडः समुद्दिष्टस्तीक्ष्णद्रव्यसमुद्भवः ॥ षडंगुलाद्विवक्राया नाडीचूर्णं तथा धमेत्। तीक्ष्णकोलमितं वक्त्रवातैः प्रधमनं हितत्॥

अर्थ—अब उन दोनोंके लक्षण कहते है-तीक्ष्ण औषधको पीस उसका कल्कर निचोडनेसें जो रस निकलताहै उसको अवपीड कहते है। तथा छः अंगुल प्रमाण लंबी और सीधी ऐसी नली करके उसमें तीक्ष्ण चूर्ण १ कोल प्रमाण डालके मुखकी हवासें नाकमें फूकदेना उसको प्रधमन कहते है ॥

## रेचनऔरस्नेहननस्यकेयोग्य

ऊर्ध्वजत्रुगते रोगे कफजे स्वरसंक्षये। अरोचके प्रतिश्याये शिरःशूले च पीनसे ॥ शोफापस्मारकुष्ठेषु नस्यं वै रेचनं हितम्। भीरुस्त्रीकृशबालानां नस्यं स्नेहेन दीयते ॥

अर्थ—ऊर्ध्वजत्रुगतरोग, कफ संबंधी स्वरभंग; अरुचि, सरेकमां, मस्तक शूल, पीनस, सूजन, अपस्मार, कुष्ठ, इनरोगोंमे रेचक नस्य हितकारी जाननी—डरपा हुआ मनुष्य, कृश मनुष्य, तथा वालक, और स्त्री इनको स्नेहयुक्त नस्य देवे॥

## अवपीडननस्ययोग्य

गलरोगे सन्निपाते निद्रायां विषमज्वरे
मनोविकारे कृमिषु युज्यते चावपीडनम्

अर्थ—गलरोग, संनिपात, अत्यंत निद्रा, विषमज्वर, मनके विकार और कृमिरोग, इनमें अवपीडन नस्य देय ॥

## प्रधमननस्यकेयोग्य

अत्यंतोत्कटदोषेषु विसंज्ञेषु च दीयते
चूर्णं प्रधमनं धीरैस्तद्धि तीक्ष्णतरं यतः ॥

अर्थ—मूर्च्छा, अपस्मारादिक, संज्ञा नष्टहोय जिससें ऐसेसंन्यासादिकरोग-इनमें अत्यंत तीक्ष्ण ऐसेप्रधमन संज्ञक चूर्णकी नस्य देवे ॥

## रेचनसंज्ञकनस्य

नस्यं स्याद्गुडशुंठीभ्यां पिप्पली सैंधवेन च।

जलपिष्टेन तेनाक्षिकर्णनासाशिरोगदाः ॥
हनुमन्यागलोद्भूता नश्यंति भुजपृष्ठजाः ॥

अर्थ—सोंठको गरमपानीमें ओटाय उसमें गुडडालके नस्य देवे। पीपल और सैंधानिमक इनको गरमपानीमें ओटाय नाकमें डाले, तो इस्सें नेत्र, कान, मस्तक, ठोडी, मन्यानाडी, भुजा, और पीठ, इनमें जो पीडाहोती है सो दूरहोय।

## रेचननस्यकी दूसरीविधि

मधूकसारकृष्णाभ्यां वचा मरिचसैंधवैः ।
नस्यं कोष्णजले पिष्टं दद्यात्संज्ञाप्रबोधनम् ॥
अपस्मारेतथोन्मादेसंनिपातेपतंत्रके ॥

अर्थ—महुआकी लकडीके भीतरका गूदा, पीपल, वच, कालीमिरच, और सैंधानिमक ये औषध गरम जलमें पीसके नस्य देवे तो मृगी, उन्माद, संनिपात, और अपतंत्रक वायु, इत्यादि जिनसें चेष्टा ज्ञान ये नष्ट होते है वो दूरहोकर मनुष्य शीघ्र सावधान होवे इसप्रकार जानना ॥

## रेचननस्यकातीसराप्रकार

सैंधवं श्वेतमरिचं सर्षपा कुष्टमेव च ।
बस्तमूत्रेण पिष्टानि नस्यं तन्द्रानिवारणम् ॥

अर्थ—सैंधानिमक, सपेदमिरच, पीलीसरसो, और कूठ, इन औषधोंको बकरेके मूत्रमें पीस नस्य देवेतो नेत्रोंमें तंद्रा आती है वो दूरहो। तथा पूर्वोक्त अपस्मारादिक रोग दूरहों ॥

## प्रधमनसंज्ञकनस्य

रोहितमत्स्यपित्तेन भावितं सैंधवं वचा । मरिचं पिप्पलीशुंठी कंकोलं लशुनं पुरं ॥ कट्फलं चेति तच्चूर्णं देयं प्रधमनं बुधैः ॥

अर्थ—सैंधानिमक, वच, कालीमिरच, पीपल, सोंठ, कंकोल, लहसन, गूगल, और कायफल, इनका चूर्ण कर रोहित (रोहू) संज्ञक मछलीके पित्तेके चूर्णमें पुटदेवे, फिर पूर्वप्रधमनके लक्षणमें नलीका मान कहआएहै उसरीतिसें नलीले उसमें यह चूर्णभरके नाकमें फूंकदेवे। इस करके पूर्वोक्त अपतंत्रादिक रोग दूर होतेहै। इस चूर्णको प्रधमन ऐसा कहते है ॥

## बृंहणनस्यकी कल्पना

अथ बृंहणनस्यस्य कल्पना कथ्यतेऽधुना॥मर्शश्च प्रतिशश्च द्वौ भेदौ स्नेहने मतौ ॥ मर्शस्य तर्पणीमात्रा मुख्या शाणैः स्मृताष्टभिः । मध्यमा च चतुःशाणैर्हीना शाणमिता स्मृता॥ एकैकस्मिंस्तु मात्रेयं देया नासापुटे बुधैः । मर्शस्य द्वित्रिवेलं वा वीक्ष्य दोषबलाबलम् ॥ एकांतरं द्व्यंतरं वा नस्यं दद्याद्विचक्षणः । अहः पंचाहमथवा सप्ताहं वा सुयंत्रितः ॥

अर्थ—अब बृंहण नस्य ( धातु वृद्धि करनेवाली तथा नाकमें औषध डालनेवाली ऐसी नस्य ) कल्पना कहताहूं–उस बृंहण नस्यके दो भेदहै१मर्श और २प्रतिमर्श, ये दोनो स्नेहन विषयमें योग्यहै । इनमें मर्शनस्यकी तर्पणी मात्रा जाननी, वो आठ शाणकी मुख्य मात्रा है । तथा चार शाणकी मध्यम मात्राहै । और एकशाणकी हीनमात्रा जाननी । ये मात्रादोषोंका बलाबलदेखके मनुष्यको वस्त्रादिकसैं ढककर एक एक नाकके पुटमें दो दो वार अथवा तीन तीन वार अथवा एकदिन वीचमे देकर तथा दोदिन वीचमें देकर अथवा तीन दिन वीचमें अथवा पांचवे या सातवे दिन नस्य देनी चाहिये ॥

## (मर्शसंज्ञकनस्य तथा विरेचन संज्ञक नस्य इनके आधिक्य होनेसैं जो रोग होतेहै उनका उपाय।)

मर्शे शिरोविकारे च व्यापदो द्विविधाः स्मृताः । दोषोत्क्लेशात्क्षयाच्चैव विज्ञेयास्ता यथाक्रमम् ॥ दोषोत्क्लेशनिमित्तासु युंज्याद्वमनशोधनम् । अथ क्षयनिमित्तासु यथास्वं बृंहणं मतम् ॥

अर्थ—मर्शनस्यकी मात्रा धात्वादिकोंकी तृप्तिकरनेवाली है । उसके आधिक्य होनेसैं तथा दोषोंकी वृद्धी होनेसै तथा मस्तकके विरेचन विषयमें विरेचनसंज्ञक नस्यकी मात्रा अधिक होकर मस्तकके भीतरके मेदादिकों का क्षय होनेसैं अनेक प्रकारकी पीडा होती है जिस दोषके उत्कर्ष निमित्त पीडा होय उसके दूर होनेको वमन तथा विरेचन औषध देवे। तथा क्षय निमित्तसे जो पीडा होती है उसके दूर करनेको धातुवृद्धि करनेवाली औषध नाकमें अथवा पेटमें खानेके वास्ते देवे ॥

## जोबृंहणनस्यमेंयोग्यहै

शिरोनासाक्षिरोगेषु सूर्यावर्त्तार्धभेदके। दंतरोगे बले हीने मन्याबाव्हंसजे गदे ॥ मुखशोषे कर्णनादे वातपित्तगदे तथा। अकालपलिते चैव केशश्मश्रुप्रपातने ॥ युज्यते बृंहणं नस्यं स्नेहैर्वामधुरद्रवैः ॥

अर्थ—मस्तकरोग, नासारोग, नेत्ररोग, सूर्यावर्त्तरोग, आधासीसी, दंतरोग दुर्बलमनुष्य, मन्यानाडी, भुजा, कंधा, इनमें जिसके पीडाहोतीहो, तथा मुखशोष, कर्णनादरोग, वातपित्तसंबंधीविकार, विनासमयकेवालोंका सपेदहोना सो पलित कहाताहै, मस्तककेवाल, डाढीके वाल उखड २ के गिरे वो, तथा इन्द्रलुप्तरोग, इन सव रोगोंमें घृतआदि स्निग्ध पदार्थ करके तथा मिश्री आदि जो मधुरपदार्थ है इन करके नस्य देना चाहिये ॥

## पक्षघातादिरोगोंपरनस्य

माषात्मगुप्तारास्नाभिर्बलाऋभुकरोहिषैः । कृतोश्वगंधया क्वाथो हिंगुसैंधवसंयुतः ॥ कोष्णो नस्यप्रयोगेण पक्षाघातं सकंपनम् । जयेदर्दितवातं च मन्यास्तंभापबाहुकम् ॥

अर्थ—उडद, कौचकेवीज–रास्ना, वलाकीजड, अंडकीजड, सुगधतृण, असगंध, इन सात औषधोंका काढा करके उसमें भुंजीहींग और सैंधानिमक डालके गरम गरम उस काढेकी नस्य देवे, जिससैं कंप सहित पक्षाघात वायु, अर्दितवायु, मन्यास्तंभवायु, तथा अपवाहुकवायु ये दूरहोय ॥

## प्रतिमर्शनस्यकीदोविंदुरूपमात्रा

प्रतिमर्शस्य मात्रा तु द्विद्विविंदुमिता मता।
प्रत्येकशो नस्तकयोः स्नेहेनेति विनिश्चितम् ॥

अर्थ—घृतआदि करके जो स्निग्धपदार्थ उनके दो २ बूंद एक २ नासिकाके पुटमें डालनेसैं वह प्रतीमर्शनस्यकी दोविंदु मात्रा जाननी ॥

## विंदुसंज्ञकमात्रा

स्नेहे ग्रंथिद्वयं यावन्निमग्ना चोद्धृता ततः। तर्जनीयं स्रवेत् बिन्दु सा मात्रा बिन्दुसंज्ञिता॥ एवं विधैर्वि-

न्दुसंज्ञैरष्टाभिः शाण उच्यते । सदेयो मर्शनस्येतु प्र-
तिमर्शो द्विबिन्दुकः ॥

अर्थ—घी तेल आदिसें जो स्नेहपदार्थ तिनमें तर्जनी उंगलीके दो पोरुआ बू-
ड़जावे ऐसी तर्जनीको निकालके उस पोरुआसें जो बूंद टपकाई जावे उसको
बिंदुमात्रा कहतेहै। इस प्रकार बिंदुसंज्ञक आठ मात्राओंकी एक शाण संज्ञक
तोल होतीहै। वो शाणमात्रा मर्शनस्यमें देवे। और प्रतिमर्शनस्यमें दोबूंदकीदे
य, इतनाही मर्शनस्य और प्रतिमर्श इनमें विशेषताहै ॥

## प्रतिमर्शनस्यकासमय

समयाः प्रतिमर्शस्य बुधैः प्रोक्ताश्चतुर्दश । प्रभाते
दंतकाष्ठान्ते गृहान्निर्गमने तथा ॥व्यायामाध्वव्यवा-
यांते विण्मूत्रान्त्तेंजने कृते।कवलान्ते भोजनान्ते दि-
वास्वप्नोत्थिते तथा॥वमनांते तथासायं प्रतिमर्शःप्रयुज्यते।

अर्थ—प्रतिमर्शनस्यके १४ समयहै, जैसे–१ प्रातःकाल २ मुख धोनेके समय
३ घरसें बाहर निकलनेके समय, ४ परिश्रमके अंतमे, ५ रस्ताचलकर आनेपर,
६ मैथुनके अंतमें ७ मल और ८ मूत्रकरनेके अंतमें, ९ नेत्रोंमें अंजन करनेके
उपरांत, १० ग्रासके, तथा ११ भोजन तथा १२ दिवसमें सोयकर उठनेके सम
य, १३ वमनके अंतमें, १४ सायंकाल–इतने समय प्रतिमर्श संज्ञक नस्यदेवे॥

## प्रतिमर्शद्वारातृप्तहुएकेलक्षण

ईषदुच्छिंकनात्स्नेहो यदा वक्रं प्रपद्यते ।
नस्ये निषिक्तं तं दद्यात्प्रतिमर्शप्रमाणतः ॥
उच्छिंदं न पिबेच्चैतन्निष्ठीवेन्मुखमागतम् ॥

अर्थ—नस्यदेनेपर थोडीछींक आनकर वो स्नेह मुखमें उतरआवे तो उसमनु-
ष्यको प्रतिमर्शनस्यकरके तृप्तहुआ जानना, तथा मुखमें जो उतरआया स्नेह उ-
सको निगले नहीं किंतु थूकके बाहर पटक देवे ॥

## प्रतिमर्शकेयोग्य

क्षीणे तृष्णास्यशोषार्ते बाले वृद्धे च युज्यते ।
प्रतिमर्शेन शाम्यंति रोगाश्चैवोर्ध्वजत्रुजाः ॥
वलीपलितनाशश्च बलमिंद्रियजं भवेत् ।

अर्थ—धातुक्षीणमनुष्य, बालक, वृद्ध, तृषा—और मुखशोप, इन करके पीडित मनुष्योंके प्रतिमर्श संज्ञक नस्य देना चाहिये, तो उक्तरोग दूरहो तथा नाडके उपरके जो रोगहै वो तथा त्वचाका सिथिलपना, कुसमय सपेद बालोंका होना उसको वलीपलित कहते है—ये संपूर्ण रोग प्रतिमर्श संज्ञक नस्यसैं दूरहो। तथा नेत्रादिक इन्द्रियोंमें बलवढे ॥

## कुसमयसपेदबालहोनेपरनस्य

बिभीतनिंबकंभारी शिवा शेलुश्च काकिनी।
एकैकं तैलनस्येन पलितं नश्यति ध्रुवम् ॥

अर्थ—बहेडा, नीमकीछाल, कंभारी, हरड, बहुवार, काकडोडी, इनके बीजके भीतरकी मिंगीका तेल पृथक्२निकाल कर—एक एक न्यारी२नस्य देवे तोमनुष्यके विना समय जो वालसपेदहुएहै वो तरुणावस्थाके समान काले होय निश्चय॥

## नस्यकीविधि

अथ नस्यविधिं वक्ष्ये नस्यग्रहणहेतवे। देशे वातरजो मुक्ते कृतदन्तनिघर्षणं ॥ विशुद्धं धूमपानेन स्विन्नमालगलं तथा । उत्तानशायिनं किंचित्प्रलंबशिरसं नरम् ॥ आस्तीर्णहस्तपादं च वस्त्राच्छादितलोचनम् । समुन्नमितनासाग्रं वैद्यो नस्येन योजयेत् ॥ कोष्णमछिन्नधारं च हेमतारादिशुक्तिभिः । शुक्त्या वा यंत्र युक्त्या वा स्रोतैर्वा नस्य माचरेत् ॥

अर्थ—नस्य देनेके वास्ते नस्यकी विधि कहते है—जिस स्थानमें वायु अथवा धूल न होवे वहां मनुष्य दांतुन—और धूमपान करके कपाळ और गलेको शुद्धकर पसीने युक्त करावे, फिर सीधा ( चित्त ) सुलाय मस्तकको लंबा और कुछ नीचेकी तरफ झुकता कर हाथपैरोंको लंबे पसारदे फिर कपडेसैं नेत्रोको ढांकके वैद्य अपने हाथसैं मनुष्यकी नाकको ऊंचीकर जो नस्य डालनेकी वस्तु है उसकुछ २ गरमको एकसी धारसैं तथा उस नस्यको सुवर्ण, चांदी, इनके पात्र करके अथवा सीप करके तथा कौडी वा फोहेसै नाकमें निचोडदेवे, दोनो नथनोंमें समान निचोडे ॥

## नस्यग्रहणमेंआज्ञा

नस्येष्वासिच्यमानेषु शिरो नैव प्रकंपयेत्। न कुप्ये-

न्न प्रभाषेत नोच्छिदेन्न हसेत्तथा॥ एतैर्हि विहितः स्नेहो नैवान्तः संप्रपद्यते। ततः कासप्रतिश्याय शिरोक्षिगदसंभवः ॥

अर्थ—मनुष्य नस्यलेते वखत मस्तकको कंपावे नहीं, तथा क्रोध न करे, किसीसें बोले नही, किसी तिनका आदिको तोडे नही, न हसे यदि इसप्रकार न करेगा तो वो नस्य पदार्थ मस्तकके भीतर अच्छे प्रकार प्रवेशनहीं करनेका और खांसी, सरेकमा, और मस्तकनेत्र-इनमें पीडा आदि उपद्रव होने लगते है॥ अतएव बडी सावधानीके साथ नस्य ग्रहण करना चाहिये॥

## नस्यसंधारणकाप्रकार

शृंगाटकमभिह्राव्य स्थापयेन्न गलद्रवम्। पंचसप्तदशैवस्युर्मात्रा नस्यस्य धारणे॥ उपविश्याथ निष्ठीवेन्नासावक्त्रगतं द्रवम्। वामदक्षिणपार्श्वाभ्यांनिष्ठीवेत्सन्मुखे नहि॥

अर्थ—मनुष्यको नस्य देकर नासावंशके आगे भ्रूमध्य देशमें चतुष्पथ ( चौराहेके समान ) है उसको उस नस्यके स्नेहसें भिगोय उस नस्यको धरदेवे। उसका धारण ५। ७ मात्रा अथवा दशमात्रा कालपर्यंत करे, फिर बैठारहे और नाकमें तथा मुखमें उतरा जो पानी वा कफ उसको दहनी तरफ अथवा बांई तरफ थूकता जावे साह्मने न थूके॥

## नस्यकर्मकरनेमेंवर्जितवस्तु

नस्ये नीते मनस्तापं रजः क्रोधं च संत्यजेत्। शयीत निद्रां त्यक्त्वा च उत्तानो वाक्शतं नरः॥तथैव रेचनस्यांते धूमो वा कवलो हितः॥

अर्थ—नस्य कर्म होनेके उपरांत-मनमें संताप न आने दे,-जहां धूर उडतीहो तहां बैठे नहीं, तथा क्रोध न करे, जैसे नींद न आवे इसप्रकार सौवाक् ( सौवार पलक खुले मुंदे इतने समय ) पर्यंत सीधा सुलावे। इसीप्रकार विरेचन नस्यके अंतमें धूम और ग्रास ये न देवे॥

## नस्यमेंशुद्धादिभेद

नस्ये त्रीण्युपदिष्टानि लक्षणानि समासतः।

शुद्धिहीनातियोगानि विशेषाच्छास्त्रचिंतकैः ॥

अर्थ—नस्यमें शुद्धिलक्षण,—तथा हीनयोगलक्षण,—तथा अतियोगलक्षण, ये तीन ही लक्षण विशेष करके शास्त्रज्ञ वैद्योंनें कहे है उन लक्षणोंको आगे संक्षेपसें कहते है ॥

## उत्तमशुद्धीकेलक्षण

लाघवं मनसः शुद्धिः स्त्रोतसां व्याधिसंक्षयः ।
चित्तेन्द्रियप्रसादश्च शिरसः शुद्धिलक्षणम् ॥

अर्थ—नस्य करके मस्तकभी उत्तमशुद्धि होनेसें शरीर हलकाहो,—मन शुद्धहो-तथा मुख,—नाक,—कान,—गुदा,—इत्यादि वाहिर्द्वारवाले मार्ग उनका शोधन होनाहै। तथा शिरोरोगादिक दूरहो,—अंतःकरण और नेत्रादिक इन्द्री ये प्रसन्न रहतीहै॥

## हीनशुद्धीकेलक्षण

कंडूपदेहो गुरुता स्रोतसां कफसंस्त्रवः ।
मूर्ध्निहीनविशुद्धे तु लक्षणं परिकीर्त्तितम् ॥

अर्थ—नस्य करके मस्तककी अल्पशुद्धि होनेसें देहमें खुजली,—तथा भारीपणा,—ये लक्षण होतेहै तथा, मुख—नासिकादिक वहिर्द्वार है उनसें कफका स्राव होता है ॥

## अतिशुद्धिके लक्षण

मस्तुलुंगागमो वातवृद्धिरिन्द्रियविभ्रमः ।
शून्यता शिरसश्चापि मूर्ध्निगाढं विरेचिते ॥

अर्थ—नस्य करके मस्तककी अत्यंत शुद्धिहोनेसें मस्तकके भीतरजो तरल पदार्थ रहताहै उसका नाकसें स्रावहोने लगे,—तथा वायुकी वृद्धि होय,—इन्द्रियोंका विभ्रम होय तथा मस्तकमें शून्यता आती है ॥

## हीनशुद्ध्यादिमेंचिकित्सा

हीनातिशुद्धे शिरसि कफवातघ्नमाचरेत् ।
सम्यक्विशुद्धे शिरसि सर्पिर्नस्ये निषेचयेत्॥

अर्थ—नस्य करके मस्तककी अल्पशुद्धि अथवा अत्यंत शुद्धिहोनेसें कफ वायु हारक ऐसी नस्य देवे तथा उत्तमशुद्धि होनेसें नाकमें घीका नासदेवे ॥

## अतिस्निग्धकेलक्षण

कफप्रसेकः शिरसो गुरुतेन्द्रियविभ्रमः ।

लक्षणं तदातिस्निग्धरूक्षं तत्र प्रदापयेत्॥

अर्थ—नस्य करके मनुष्यका मस्तक अति स्निग्धहोनेसें कफका स्राव,मस्तकका भारीपना, इन्द्रियोंकी भ्रांति, ये लक्षण होते है । इस कारण इस अत्यंत स्निग्धताके दूर करनेको रूक्षपदार्थकी नस्य देवे ॥

## नस्यमेंपथ्य

भोजयेच्चानभिष्यंदि नस्याचरितमादिशेत्।

अर्थ—नस्यलेनेवाला मनुष्य अभिष्यंदी पदार्थ अर्थात् भैंसका दही आदि कफकारी पदार्थ भक्षण न करे, और नस्यमें जैसें शिष्टजन आचरण करते है उसप्रकार आचरण करे।ये नस्यकर्ममें पथ्य है ॥

## पंचकर्मोंकीसंख्या

वमनं रेचनं नस्यं निरूहमनुवासनम्।
एतानि पंचकर्माणि कथितानिमुनीश्वरैः॥

अर्थ—वमन, रेचन, नस्य, निरूहवस्ती, और अनुवासनवस्ती, इन पांचोंको पंचकर्म कहते है ॥

---

## धूमपानविधिः

धूमस्तु षड्विधः प्रोक्तः शमनो बृंहणस्तथा।
रेचनः कासहा चैव वामनो व्रणधूपनः॥

अर्थ—धूमपान छःप्रकारका है उनके नाम शमन,-१ बृंहण, २ रेचन, ३ कासघ्न, ४ वामन, ५ और व्रणधूपन ६ इसप्रकार छःप्रकार जानने ॥

## शमनादिकधूमोंकेपर्यायशब्द

शमनस्यतुपर्यायौ मध्यः प्रायोगिकस्तथा।
बृंहणस्यापि पर्यायौ स्नेहनो मृदुरेवच॥ रेच-
नस्यापि पर्यायौ शोधनस्तीक्ष्ण एव च।

अर्थ—तहां शमनधूमके पर्यायवाचक शब्द मध्य और प्रायोगिक असे दो है, तथा बृंहणधूमके पर्यायशब्द स्नेह, और मृदु जानने। तथा रेचन धूमके पर्यायशब्द शोधन और तीक्ष्ण जानने ॥

## धूमसेवनके अयोग्य

अधूमार्हाश्च खल्वेते शांतो भीरुश्च दुखितः। दत्तबस्तिर्विरक्तश्च रात्रौ जागरितस्तथा ॥ पिपासितश्च दाहार्त्तस्तालुशोषी तथोदरी। शिरोभितापी तिमिरी छर्द्याध्मानप्रपीडितः ॥ क्षतोरस्कः प्रमेहार्तः पांडुरोगी च गर्भिणी। रूक्षः क्षीणोऽभ्यवहृतः क्षीरक्षौद्रघृतासवैः ॥ भुक्तान्नदधिमत्स्यश्च बालो वृद्धः कृशस्तथा। अकाले चातिपीतश्च धूमः कुर्यादुपद्रवान् ।

अर्थ--श्रमितमनुष्य, डरपाहुआ, दुःखसैंपीडितमनुष्य, जिसके वस्तीप्रयोग करा, जिसका कोठा दस्तकरके रीताहो वह,रात्रिमें जागने वाला, तृषा करके पीडित, तथा दाह करके पीडित, तालुशोषी, उदररोगी, शिरोभितापकरके पीडित, तिमिररोगी, वमन, वादीसैं पेटफूलाहुआ, उरक्षतरोग, प्रमेह, पांडुरोग, इनकरके पीडित मनुष्य, गर्भिणीस्त्री, रूक्ष, तथा क्षीणमनुष्य, दूध, घी और आसव ( मद्य ) अन्न, दही, और मछली, इनका भक्षणकरनेवाला मनुष्य, तथा बालक, और दुर्बलमनुष्य ये धूमपानमें अयोग्यहै। यदि कुसमयमें अत्यंत धूमपानेकरे तो वह घोर उपद्रवोंको करे है। अतएव उक्त मनुष्यों को तथा कुसमय धूमपान करना त्यागदेवे ॥

## धूमपानकेउपद्रवोंकायत्न

तत्रेष्टं सर्पिषः पानं नावनांजनतर्पणम्। सर्पिरिक्षुरसं द्राक्षा पयो वा शर्करांबु वा ॥ मधुराम्लौ रसौ वापि शमनाय प्रदापयेत् ॥

अर्थ—धूमपानसैं यदि उपद्रवहोवे तो उस मनुष्यको घी पिवावे। नासिका में नस्य देवे, तथा नेत्रोंमें अंजन तथा तर्पण अर्थात् देहमें तृप्ति करनेवाला ऐसा द्राक्षादि मंड देवे। तथा घी, ईखकारस, और दाख, दूध, सरवत, अथवा मिश्री, पानी, अथवा मधुरपदार्थ और खट्टेपदार्थ भोजनको देवे, तो धूमपान संबंधी उपद्रव दूरहो ॥

## धूमपानकाकाल और उसकेगुण

धूमश्च द्वादशाद्वर्षाद् गृह्यतेशीतिकान्न च।

कासश्वासप्रतिश्यायान्मन्याहनुशिरोरुजः ।
वातश्लेष्मविकारांश्च हन्याद्धूमः सुयोजितः ॥

अर्थ—धूमपान बारहवर्षकी अवस्थासैं लेकर अस्सी वर्षपर्यंत करे फिर न करे और उस धूमपानको उत्तम योजनाहोने सैं श्वास, खांसी, सरेकमां, मन्यानाडी, ठोडी, और मस्तकमेंजो पीडा होतीहै उसको तथा वातकफ संबंधी विकार ये संपूर्ण रोग दूरहोवे ॥

## धूमोपयोगहोनेपरगुण

धूमोपयोगात्पुरुषः प्रसन्नेन्द्रियवाङ्मनः ।
दृढकेशद्विजश्मश्रुः सुगंधिवदनो भवेत् ॥

अर्थ—धूमका उपयोग होने सैं मनुष्य चक्षुरादिक इन्द्री तथा वाणी—अंतःकरण इन करके प्रसन्न रहताहै, और केश तथा दांत और डड्ढी इनमें वल आताहै तथा मुख सुगंधित रहता है ॥

## धूममेंनलीकाविधान

धूमनाडी भवेत्तत्र त्रिखंडा च त्रिपर्विका । कनिष्ठिका-
परीणाहा राजमाषागमान्तरा ॥ धूमनाडी भवेद्दीर्घा
शमने रोगिणोंगुलैः । चत्वारिंशन्मितैस्तद्वत् द्वात्रिं-
शद्भिर्मृदौ स्मृता ॥ तीक्ष्णे चतुर्विंशतिभिः कासघ्ने
षोडशोन्मितैः । दशांगुलैर्वामनीये तथा स्याद्व्रणना-
डिका ॥ कलाय मंडलस्थूला कुलित्थागमरंध्रिका ॥

अर्थ—धूमपानके विषयमें नली तीन टुकडेकी और तीन गांठकी करे, तथा कनिष्ठिका ( छोटी ऊंगली ) के समान मोटीकरे, तथा उसमें चोराका दाना भीतर चला जाय ऐसा चौडा छिद्र करे । इस प्रकारकी नली सामान्य धूमपानमें होनी चाहिये । वह नली रोगीके चालीस उंगल लंबीहो । तथा मृदुसंज्ञक जो धूमहै उसके सेवनमें बत्तीस अंगुलकी लंबी लेय । तथा काससंज्ञक धूम उसके सेवनमें सोलह अंगुलकी ले । तथा वामनीय संज्ञक धूमके सेवनमें दश अंगुललंबी लेनी । उसीप्रकार व्रणके धूनी देनेको जो नली ले वो दश अंगुलकी ले, तथा वो व्रणके धूनी वाली नली मटरके दानेके प्रमाण मोटी और उसमें छिद्र कुलथीका दाना भीतर चला जावे इतना बारीक करे । इस प्रकारकी वैद्यको बनानी चाहिये ॥

## धूमपानार्थईषिकाका विधान

अथेषिकां प्रलिंपेच्च तु श्लक्ष्णां द्वादशाङ्गुलाम् । धूमद्रव्यस्य कल्केन लेपश्चाष्टांगुलःस्मृतः ॥ कल्कं कर्षमितं लिप्त्वा छायाशुष्कं च कारयेत् । ईषिकामपनीयाथ स्नेहाक्तां वर्तिमादरात् ॥ अंगारैर्दीपितां कृत्वा धृत्वा नेत्रस्य रंध्रके । वदनेन पिवेद्धूमं वदनेनैव संत्यजेत् ॥ नासिकाभ्यां ततः पित्वा मुखेनैव वमेत्सुधीः । शरावसंपुटे क्षिप्त्वा कल्कमंगारदीपितं ॥ छिद्रे नेत्रं सुवेश्याथ व्रणं तेनैव धूपयेत् ।

अर्थ—ईपिका ( सरकंडेका टुकडा ) वारह अंगुलका चिकना लेवे, उसपर धूँआँ लेनेकी वस्तुओंके कल्कका लेप ८ अंगुलपर्यंत करे कल्क द्रव्यका परिमाण २ तोले होना चाहिये । फिर उसकल्कके लेपको छायामें सुखाय लेवे, जव वो कल्क सूखजाय तव युक्तिके साथ उसमेंसैं सरकंडेके टुकडेको निकास लेवे, कि वो कल्ककी लंवी नलीसी रहजावे, उसके छिद्रमें दूसरी स्नेहकी बत्ती धरके उसको अंगारोंसैं जलायके पूर्वोक्तनलीके छिद्रमें धरे फिर उसनलीको मुखमें रखके धूंआ ईंचे और मुखके द्वाराही उस धूएको छोडदेवे । तथा नाकके छिद्रसैं धूंआंको खींचकर मुखसैं छोडदे । एवं सराव संपुटके ऊपरले सरावमें छिद्रकर उसमें अंगारे भरके उनमें व्रणकी धूनीको जो कि कल्ककराहुआ तयारहै उसे डालदे जव धूंआं उठने लगे तव उसके उस छिद्रके द्वारपर नलीका छिद्र लगाय व्रणको धूनीदेवे ॥

## कौनसीऔपधकाकल्ककौनसेधूममेंदेवे

एलादिकल्कं शमने स्निग्धं सर्जरसं मृदौ । रेचने तीक्ष्णकल्कं च कासघ्ने क्षुद्रिकोपणम् ॥ वामने स्नायुचर्माद्यं दद्याद्धूमस्य पानकं । व्रणे निंववचाद्यं च धूपनं संप्रचक्षते ॥

अर्थ—शमन संज्ञक धूनी उसमें एलादिक औपधोंका गणहै उनका कल्ककरके देय तथा मृदुसंज्ञक धूममें घृतादिकस्नेह पदार्थोंमें राल डालके कल्ककरके देय । तथा रेचनसंज्ञक धूममें सरसो- राई इत्यादि औपधोंका कल्क करकेदेवे ।

तथा कासघ्न धूममें कटेरी और कालीमिरच इत्यादिक औषधोंका कल्क करके देय। तथा वामनधूम ( वमन करानेवाली धूम ) में स्नायु और चर्मादिकोंका कल्ककरके पान करनेको देवे तथा व्रणमें नीम और वच इत्यादिकोंका कल्क करके धूम देवे ॥

## बालग्रहादिदूरकरनेकोधूनी

अन्या हि धूमा गेहेषु कर्तव्या रोगशांतये। तद्यथा। मयूरपिच्छं निंबस्य पत्राणि बृहतीफलं। मरिचं हिंगुमांसी च बीजं कार्पाससंभवम् ॥ छागरोमाहिनिर्मोकं विष्टावैडालिकी तथा। गजदंतश्च तच्चूर्णं किंचिद् घृतविमिश्रितम् ॥ गेहेषु धूपनं दत्तं सर्वान् बालग्रहान् जयेत्। पिशाचान् राक्षसान् जित्वा सर्वज्वरहरं भवेत्। एष माहेश्वरो नाम्ना धूपः शिवमुखोद्गतः ॥

अर्थ—बालग्रहमें रोगशांतिकेअर्थ घरमें धूनीदेनी तहां मयूरपिच्छादि धूनी कहते है; मोरकेपंख-१, नीमकेपत्ते २, कटेरीकेफल ३, कालीमिरच ४, हिंग ५, जटामांसी ६, कपासके बीज ७, बकरेकेबाल ८, सापकीकांचली-९, बिल्लीकिविष्टा १०, हाथीकादांत ११, इन ग्यारह औषधोंका चूर्णकर और थोडासा इसमें घी मिलाय घरमें इस चूर्णकी धूनी देवे तो संपूर्ण बालग्रह ( शकुनी,-पूतना,-नैगमेयादि ) तथा पिशाच राक्षस-इनके उपद्रव दूरहोय, तथा सर्वप्रकार के ज्वर दूरहोवे। यह मयूरपिच्छादि धूनीहै इसी प्रकार माहेश्वरादि धूनी जानो

## धूममेंपरिहार

परिहारस्तु खंडेषु कार्यो रेचननस्यवत्। नेत्राणि धातुजान्याहुर्नलवंशादिजान्यपि ॥

अर्थ—रेचन सज्ञक नस्यमें रोगोंके परिहारके विषयमें जो उपाय कहाहै वोही उपाय इस धूममें करावे। तथा नळीका मुख सुवर्णादी धातुका अथवा नरसल तथा वांस इत्यादिकोंका करावे ॥

## धूमपीनेकायंत्र

चतुर्विंशत्यंगुलानि त्रीणि युक्तानि युक्तितः। योजिता या त्रिखंडेयं नलिका नेत्रसंज्ञिता ॥

अर्थ—चौविस अंगुल लंबी–तीन नली लेके युक्तीसें जोडे ये त्रिखंडनलीका इसीकी नेत्र संज्ञाहै ॥

## धूमपानकेगुण

मनस्तापं रजः क्रोधं धूमपाने निवारयेत् ॥

अर्थ—धूमपान करनेसें मनकासंताप, रजोगुण, क्रोध, ये दूरहोते है ॥

---

## ( गंडूष और कबल तथा प्रतिसारणकी विधिः ॥ )

चतुर्विधः स्याद्गंडूपः स्नैहिकः शमनस्तथा ।
शोधनो रोपणश्चैव कवलश्चापि तद्विधः ॥

अर्थ—गंडूप ( कुरलाकरना ) चारप्रकारकाहै– १ स्नेहिक,– २ शमन, ३ शोधन, और चौथा रोपण । तथा कवल ( गस्सा–कौर ) भी चार प्रकारकाहै ॥

## स्नेहिकादिगंडूपोंकीदोपभेदकरकेयोजना

स्निग्धोष्णैः स्नैहिको वाते स्वादुशीतैः प्रसादनः ।
पित्तेकट्वम्ललवणैरुष्णैः संशोधनः कफे ॥
कपायतिक्तमधुरैः कदुष्णे रोपणे व्रणे ।
चतुःप्रकारो गंडूपः कवलश्चापि कीर्तितः ॥

अर्थ—स्निग्ध और गरम पदार्थोंकरके जो कुरले करने उसको स्नेहिक गंडूप जानना । इसको वादीके रोगोंमें योजना करे । तथा मधुर और शीतल पदार्थके कुल्ले प्रसादन ( शमनगंडूप ) जानने उनको पित्तमें योजना करे । तथा तीक्ष्ण, खट्टे, खारी और गरम पदार्थके कुल्ले शोधन गंडूप कहाते है उनको कफके विषयमें योजना करना । तथा कपेले, कडुए, और मधुर पदार्थ करके रोपण गंडूप जानना, इसको कुछ गरम करके व्रणमें योजना करे । इसीप्रकार कवलभी चार प्रकारका कहाहै ॥

## गंडूपऔरकवलइनमेंभेद

असंचारी मुखे पूर्णे गंडूपः कवलश्वरः ।
तत्र द्रवेण गंडूपःकल्केन कवलः स्मृतः ॥

अर्थ—काढे आदिशब्दसें जो द्रवपदार्थ उनसें मुखको भरके उसको इधर उधर मुखमें चलायमान न करे थोडी देर रखके कुरलाकरदेवे उसको गंडूप कहते है

तथा कल्कादिक पदार्थोंको मुखमें भरके इधर उधर फिरावे इसप्रकार रखने-
को कवल कहते है ॥

## गंडूषऔरकवलकी औषधका प्रमाण

दद्याद्द्रव्येषु चूर्णं च गंडूषे कोलमात्रिकम् ।
कर्षप्रमाणः कल्कश्च दीयते कवले बुधैः ॥

अर्थ—गंडूषमें काढे आदि द्रव ( पतली ) द्रव्य उनमें चूर्ण एक कोलके प्रमाण मिलाना चाहिये । तथा कवलमें कल्क कर्ष प्रमाण जानना ॥

## किस अवस्थामें गंडूषकरे और कैसेकरे

धार्यंते पंचमाद्वर्षाद्गंडूषकवलादयः । गंडूषान्सुस्थि-
तः कुर्यात्स्विन्नभालगलादिकः ॥ मनुष्यस्त्रींस्तथापं-
च सप्त वा दोषनाशनात् ॥

अर्थ—गंडूष अथवा कवलादिक पांचवर्षकी अवस्थाके पश्चात् कराने चाहिये । तथा मनुष्यको स्वस्थ चित्त कर बैठावे, फिर रोग दूरहोनेके अर्थ कपाल, और गला तथा आदि शब्दकरके मुख इनमें थोडा २ पसीना आवे तबतक तीन अथवा पांच अथवा सात कुरले करावे, अथवा दोष दूरहोने पर्यंत कराने चाहिये॥

## प्रमाणान्तर

कफपूर्णास्यतां यावच्छेदो दोषस्य वा भवेत् ।
नेत्रघ्राणस्रुतिर्यावत्तावद्गंडूषधारणम् ॥

अर्थ—कफकरके मुख भराआवे तबतक अथवा दोषोच्छेदन होय तहांतक तथा नेत्र और नाक इनमें स्रावछूटे तबतक गंडूष धारण करे ॥

## वातरोगमेंचिकनाईकेकुरले

तिलकल्कोदकं क्षीरं स्नेहो वा स्नैहिके हितः ॥

अर्थ—तिलोंकाकल्क, पानी, दूध, तेल, आदिशब्दकरके स्नेहपदार्थ, ये स्नैहिक गंडूषमें देवे ॥

## पित्तरोगमेंशमनसंज्ञकगंडूष

तिलानीलोत्पलं सर्पिः शर्कराक्षीरमेव च ।
सक्षौद्रो हनुवक्त्रस्थो गंडूषो दाहनाशनः ॥

अर्थ—तिल, नीलकमल, घी, मिश्री, और दूध ये पदार्थ एकत्र कर इसमें

सहत डालके कुरले करे—तो पित्तसंबंधी, ठोडी और मुख इनमें जो दाह होता है वह दूर होवे ॥

### व्रणादिरोगोपरमधुगंडूष

वैशद्यं जनयत्यास्ये संदधाति मुखव्रणात् ।
दाहतृष्णाप्रशमनं मधुगंडूषधारणम् ॥

अर्थ—सहतके कुरले करनेसैं मुखके छाले, घाव, तथा दाह, तृषा ये रोग दूरहोकर मुखमें स्वच्छता आती है ॥

### गंडूषधारणकेगुण

व्याधेरपचयस्तुष्टिर्वैशद्यं वक्त्रलाघवम् ।
इन्द्रियाणां प्रसादश्च गंडूषे विधृते भवेत् ॥
हरेदास्यस्य वैरस्यं शोषं पाकं व्रणं तृषाम् ।
दंतचालं च गंडूषो वैशद्यं तु करोति हि ॥

अर्थ—कुरले करनेसैं व्याधिका नाश, तुष्टी, स्वच्छता, मुखमें हलकापना, सर्व इन्द्री प्रसन्न हो तथा मुखकी अरुचि, शोष मुखकेछाले, व्रण, प्यास, दांतोंका हिलना इतने रोगोंका नाशकर सब शरीरको निर्मल करेहै ॥

### कवलधारणकेगुण

वातपित्तकफघ्नस्य द्रव्यस्य कवलं मुखे । अर्द्धं निक्षिप्य संचर्व्य निष्ठीवेत्कवले विधिः ॥ कवलः कुरुते कांक्षां भक्षेषु हरते कफम् । तृषां शोषं च वैरस्यं दंतचालं च नाशयेत् ॥

अर्थ—वात-पित्त-कफ-इनके नाशकर्ता औषधोंका कवल ( ग्रास ) मुखमें लेकर आधा चबायके थूक देवे । तो अन्नभक्षण करनेकी इच्छा हो तथा कफका नाशकरे । एवं शोष, प्यास, और अरुचि इनका नाशकरके हलतेहुए दांतोंके उसीसमय जमाय देवे ॥

---

### प्रतिसारणम् ( मंजन )

दंतजिह्वामुखानां च चूर्णकल्कावलेहकैः । शनैर्घर्षणमंगुल्या तदुक्तं प्रतिसारणं ॥ वैरस्यं मुखदुर्गंधं मुख-

शोषं तथा तृषाम्।अरुचिं दंतपीडां च निहन्यात्प्रतिसारणं॥

अर्थ-दांत-जीभ-मुख-इनको चूर्ण-कल्क-और अवलेह ऐसें तीन प्रकारकी औषधीसें धीरे धीरे उंगलीसें रगडे उसको प्रतिसारण ( मंजन ) कहते है ये प्रतिसारण करनेसें मुखका कडुआपना, दुर्गंध, मुखका सूखना, प्यास, अरुचि, और दांतोंकी पीडा इन सबको नाश करे है ॥

## गंडूप कवलऔरप्रतिसारणकीविधि

क्षीरस्नेहकषायादिद्रव्यैः संपूर्णमाननम् ।
आपूर्य स्थीयते तावद्विधिर्गंडूषधारणे ॥

अर्थ—दूध तथा घृतादि स्निग्धपदार्थ तथा काढा आदिशब्दसें पतली औषधको मुखमें भरके थोडीदेर रहनेदे फिर उसको कुरला ( कुछा ) करदेवे, यह गंडूप लेनेकी विधिजाननी ॥

## विषादिमेंगंडूष.

विषक्षाराग्निदग्धे च सर्पिर्धार्यं पयोथवा ॥

अर्थ—विषदोष-( संखियाआदि ) और क्षारादिजन्य विकार तथा अग्निदग्धजन्यविकार इनसें घी अथवा दूध इनके कुछे करे ॥

## दंतचालनमेंगंडूष.

तैलसैंधवगंडूषो दंतचाले प्रशस्यते ॥

अर्थ—तिलकातेल, और सैंधानिमक, दोनोकों मिलाय कुछे करे तो दांत हिलतेहुए जमजावे ॥

## मुखशोषपरगंडूप

मुखशोषं मुखस्य वैरस्यं गंडूपः कांजिको जयेत् ॥

अर्थ—मुखशोष तथा मुखकी विरसताको कांजीके कुछे नाश करते है ॥

## कफपरगंडूष.

सिंधुत्रिकटुराजीभिरार्द्रकेण कफे हितः ॥

अर्थ—सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, और राई इनका चूर्णकर अदरखक मिलायके कुछे करे तो कफदोष दूरहोय ॥

## कफतथारक्तपित्तपरगंडूप

त्रिफलामधुगंडूपः कफासृक्पित्तनाशनः ॥

अर्थ—त्रिफलेका चूर्ण सहतमें सानके उसके कुल्ले करे तों कफ और रक्त पित्त नष्टहो ॥

## मुखपाकपरगंडूष

दार्वी गुडूची त्रिफला द्राक्षा जात्याश्च पल्लवाः।
यवासश्चेति तत्क्वाथःषष्ठांशः क्षौद्रसंयुतः॥
शीतो मुखे धृतो हन्यान्मुखपाकं त्रिदोषजं ॥

अर्थ—दारुहलदी, गिलोय, त्रिफला, दाख, चमेलीकेपत्ते, जवासा, इन औषधोंको समान भागले काढा करे, तथा काढेका छटांभाग सहत मिलाय काढेको शीतलकरके कुल्ले करेतो त्रिदोषजन्य मुखके छाले दूरहोवे ॥

यस्यौषधस्य गंडूषस्तथैव प्रतिसारणम्।
कवलश्चापि तस्यैव ज्ञेयोऽत्रकुशलैर्नरैः॥

अर्थ—जिस औषधोंका गंडूप उसीका प्रतिसारण करना, तथा कवल भी उन्ही औषधोंका होता है ऐसा कुशलवैद्योंको जानना चाहिये ॥

## कवलकाप्रकार

केशरं मातुलिङ्गस्य सैंधवं व्योपसंयुतं।
हन्यात्कवलतो जाड्यमरुचिं कफवातजाम्॥

अर्थ—बिजोरेकी केशर, सैंधानिमक, तथा सोंठ, मिरच, पीपल, इन औषधोंको एकत्रकर इनका कल्ककर कवल करेतो मुखकी जडता तथा कफवातकी अरुचि रोग दूरहोवे ॥

## प्रतिसारणकाभेद

कल्कोऽवलेहश्चूर्णं च त्रिविधं प्रतिसारणम्।
अंगुल्यग्रगृहीतं च यथास्वं मुखरोगिणाम्॥

अर्थ—कल्क, अवलेह, और चूर्ण, इन भेदोंसें प्रतिसारणतीन प्रकारकाहै। इनमें मनुष्यको जैसी दोषकी तारतम्यताहो उसके सदृश उंगलीके अग्रभागसें लेकर जीभमें लगा और संपूर्ण मुखको रगडे ॥

## प्रतिसारणचूर्ण-

कुष्ठं दार्वी समंगा च पाठा तिक्ता च पीतिका।
तेजनी मुस्तलोध्रं च चूर्णं स्यात्प्रतिसारणम्॥

रक्तस्रुतिं दंतपीडां शोथं दाहं च नाशयेत् ।

अर्थ—कूठ, दारहलदी, धायकेफूल, पाठ, कुटकी, हलदी, तेजवल, नागरमोथा, और लोध, ये नो औषधोंका चूर्ण करके जीभ तथा सब मुखमें उंगलीके अग्रभागसै लेकर रगडे, तो दातोके मसूढोंसैं जो रुधिरगिरे वह, दातोंकीपीडा, सूजन, दाह, ये संपूर्णरोग दूरहोवे । इस चूर्णको प्रतिसारण ( मंजन ) कहते है॥

### गंडूषादिकोंकेहीनयोगहोनेकेलक्षण

हीनयोगात्कफोत्क्लेशो रसाज्ञानाऽरुची तथा ।
अतियोगान्मुखे पाकः शोषस्तृष्णा क्रमो भवेत् ॥

अर्थ—गंडूषादिका हीनयोग होनेसै कफकी अधिक्यता होतीहै । तथा मधुरादिक रसोंका यथार्थ स्वाद मालूम नहींहो । तथा अन्नादिकमें अरुचिहोय । तथा गंडूषादिका अतियोग होनेसै मुखपाकके समान मुख उपडआवे, तथा शोष और प्यास ये लक्षण होतेहै ।

### शुद्धगंडूषकेलक्षण

व्याधेरपचयस्तुष्टिर्वैशद्यं वक्त्रलाघवम् ।
इन्द्रियाणां प्रसादश्च गंडूषे शुद्धिलक्षणम् ॥

अर्थ—गंडूषादिकका उत्तमयोग होनेसैं मुखसंबंधी व्याधीका नाश अंतःकरणमें सतोष, मुखमेंनिर्मलता और हलकापना, तथा रसनादिइन्द्रियोंमेंप्रसन्नता, ये लक्षण होतेहै । ये शुद्धगंडूष होनेके लक्षण जानने ॥

इतिगंडूषादिविधिःसमाप्तः

---

## अथनेत्ररोगचिकित्साविधिः

### नेत्रअच्छेहोनेकेउपचार

सेक आश्चोतनं पिंडी विडालस्तर्पणं तथा ।
पुटपाकोंजनं चैभिः कल्कैर्नेत्रमुपाचरेत् ॥

अर्थ—सेक, आश्चोतन, पिंडी, विडाल, तर्पण, पुटपाक, और अंजन, ये सातप्रकार नेत्ररोगमें कहेहै, इनका कल्ककरके जिस प्रकार नेत्ररोगमें उपचार करनेका कहाहै उसप्रकार करना चाहिये ॥

## सेकके लक्षण

सेकस्तु सूक्ष्मधाराभिः सर्वस्मिन्नयने हितः ।
मीलिताक्षस्य मर्त्यस्य प्रदेहश्चतुरंगुलात् ॥

अर्थ—मनुष्यके नेत्रबंदकर दूध, घी, रस, इत्यादिकोंका सार, नेत्रपर चार अंगुलके अंतरसें वारीक धार देवे इसे सेक कहतेहैं ॥

## सेकके भेद

सचापि स्नेहने वाते रक्ते पित्ते च रोपणः ।
लेखनश्च कफे कार्यस्तस्य मात्राऽधुनोच्यते ॥

अर्थ—वातरोगमें स्नेहन सेक करे, रक्तपित्तके कोपमें रोपण सेक करे, तथा कफरोगमें लेखन सेक करना चाहिये ॥

## सेककी मात्रा

षड्वाक्शतैः स्नेहनेषु चतुर्भिश्चैव रोपणे ।
वाक्शतैश्च त्रिभिः कार्यः सेके लेखनकर्मणि ॥

अर्थ—स्नेहनकर्ममें छःसौवाक् होनेपर्यंत नेत्रोंपर तरडा जिस औषधका देना कहा वो देवे । रोपण कर्ममें चारसौ वाक्पर्यंत धार देनी । तथा लेखनकर्म में तीनसौ वाक्पर्यंत धार देनी चाहिये ॥

## सेककर्मका काल

कार्यस्तु दिवसे सेको रात्रौ चात्ययिके गदे ।

अर्थ—यदि नेत्रमें सेक करनाहोयतो दिनहीमें करे, कदाचित् रोगकी आधिक्यता होयतो रात्रीमें भी करे, असी शास्त्रकी आज्ञाहै ॥

## वाताभिष्यंदादिरोगपरसेक

एरंडत्वक्पत्रमूलैः शृतमाजं पयोहितम् ।
सुखोष्णं सेचनं नेत्रे वाताभिष्यंदनाशनम् ॥

अर्थ—सुरतीअंडकीछाल, पत्ते, जड, इनसबको बकरीके दूधमें औटायके फिर सुहाते २ गरमदूधकी धार वाताभिष्यंदरोग दूरकरनेके वास्ते नेत्रोंमें देय ॥

### तथादूसराक्रम

परिषेके हितं नेत्रे पयः कोष्णं ससैंधवम् ।
रजनीदारुसिद्धं वा सैंधवेन समन्वितम् ॥
वाताभिष्यंदशमनंहितं मारुतपर्यये ।
शुष्काक्षिपाके च हितमिदं सेचनकं तथा ॥

अर्थ—बकरीकेदूधमें सैंधानिमकडाल गरमकर सहनहोयऐसा गरम २ धार नेत्रोंपर गेरे, अथवा हलदी, देवदार, सैंधानिमक, इनका चूर्णकर उसको दूधमें डाल गरमकर सुहाता २ गरमनेत्रोंपर धार देय तो वाताभिष्यंदरोग और वा तविपर्यय तथा शुष्काक्षिपाक ये रोग दूरहोय ॥

### पित्त; रक्त और अभिघातपरसेक

सावरं मधुकं तुल्यं घृतभृष्टं सुचूर्णितम् ।
छागक्षीरे धृतं सेकात् पित्तरक्ताभिघातजित् ॥

अर्थ—पठानीलोध और मुलहटी, इन दोनो औषधोंको समान भागले घीमें भून चूर्णकर बकरीके दूधमें डालके उस दूधकी सुहाती गरम २ धार नेत्रोंपरडाले तो पित्तविकार,रक्त विकार, और अभिघातजन्य विकार ये सब दूरहोवे॥

### रक्ताभिष्यंद

त्रिफलालोध्रयष्टीभिः शर्कराभद्रमुस्तकैः ।
पिष्टैः शीतांबुनासेको रक्ताभिष्यंदनाशनः ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, लोध, मुलहटी, खांड, नागरमोथाका भेद भद्रमोथा, ये सब औषध समानभागले सीतल जलमें पीस उसपानीकी नेत्रोंपर धारदेवे तो रक्ताभिष्यंद दूरहोय ॥

### तथादूसरा

लाक्षामधुकमंजिष्ठा लोध्रकालानुसारिवा ।
पुंडरीकयुतः सेको रक्ताभिष्यंदनाशनः ॥

अर्थ—लाख, मुलहटी, मजीठ, लोध, सारिवा और सपेदकमल इन औषधोंको पानीमें पीस उस पानीकी नेत्रोंमें धारदेवे तो रक्ताभिष्यंद ( रुधिरके कोपसें आंख दूखने आईहो ) सो दूरहो ॥

## नेत्रशूलमेंसेक

श्वेतलोध्रं घृतेभृष्टं चूर्णितं पटविस्तुतम् ।
उष्णांबुना विमृदितं सेकाच्छूलघ्नमंबके ॥

अर्थ—पठानी लोधको घीमें भून कूटकर कपडछान चूर्णकर गरम जलमें पीस उस पानीका नेत्रोंपर धार डाले तो नेत्रका दरद दूरहो - कोई इसकी पोटली बनाय गरमपानीमें भिगोयके नेत्रको सेकतेहै जिससे नेत्रपीडा जाती रहती है ॥

## आश्चोतनकेलक्षण

अथ आश्चोतनं कार्यं निशायां न कथंचन
उन्मीलितेक्षिण दृङ्मध्ये बिंदुभिर्द्व्यंगुलाद्धितम् ॥

अर्थ—मनुष्यके नेत्रोंको उघाड नेत्रमें दोअंगुलपर्यंत दूधकाढा इत्यादिकी बूंद डाले इसको आश्चोतन कहते है यह आश्चोतनकर्म रात्रिमें न करे ॥

## अथआश्चोतनविधिः

क्वाथक्षौद्रासवस्नेहबिंदूनां यत्तु पातनम् ।
यद्द्व्यंगुलोन्मिते नेत्रे प्रोक्तमाश्चोतनं हि तत् ॥

अर्थ—दूखते नेत्रको दोअंगुल प्रमाण खोलके उसमें काढा, सहत, आसव, तथा स्नेह पदार्थ की बुँद डाले उसको आश्चोतन क्रिया कहते है ॥

## लेखनादिक आश्चोतनमें कितनी बूंदडाले

बिन्दवोष्टौ लेखनेषु स्नेहने दशबिन्दवः । रोपणे द्वा-
दशप्रोक्तास्तेशीते कोष्णरूपिणः ॥ उष्णे च शीत-
रूपाः स्युः सर्वत्रैष विनिश्चयः ॥

अर्थ—लेखनकर्ममें नेत्रमें आठबूंदडाले—स्नेहनकर्म होयतो दशबिंदुडाले—रोपणकर्म होनेसें बारह बिंदूडाले—चोबूंदशीतल औरनेत्रोंको सुहाती २ गरम २ डालनी चाहिये और यदि गरमीके दिन होयतो शीतल २ बूंदडाले ॥

## वातादिकमेंआश्चोतन

वाते तिक्तं तथा स्निग्धं पित्ते मधुरशीतलम् ।
तिक्तोष्णरूक्षं च कफे क्रमादाश्चोतनं हितम् ॥

अर्थ—वादीके रोगमें कटू और चिकना ऐसा आश्चोतनकरे । पित्तरोगदोष-

तो मधुर और शीतल ऐसाकरे। कफरोग होयतो कटु गरम–रूक्ष असा आश्चोतन करना चाहिये इसप्रकार आश्चोतनकर्म करना हितकारी है ॥

## आश्चोतनकी मात्राकाक्रम

आश्चोतनानां सर्वेषां मात्रास्याद्वाक्शतं हितम्।
निमेषोन्मेषणं पुंसामंगुल्योश्छोटिकाथवा ॥
गुर्वक्षरोच्चारणं वा वाङ्मात्रेयं स्मृताबुधैः।

अर्थ—मनुष्यके आखोंके पलक मुदना और खुलना अथवा चुटकी बजाना अथवा गुरु ( दीर्घ ) अक्षरका उच्चारण करना इनमें जितनी देरी लगती है उस काल ( देरी ) को एक वाङ्मात्रा कहते हैं; ऐसी सौ वाङ्मात्रा संपूर्ण आश्चोतनोंमें हितकारक जाननी। अर्थात् सौवाक् पर्यंत उक्त औषधोंकी बूंद नेत्रोमें धारण करनी ॥

## वातभिष्यंदपरआश्चोतन

बिल्वादिपंचमूलेन बृहत्येरंडशिग्रुभिः।
क्वाथआश्चोतने कोष्णो वाताभिष्यंदनाशनः ॥

अर्थ—बेलहै आदिमें जिनके ऐसी पांचं औषधोके मूल, कटेरी, अंडकीजड, सहजनेके जडकी छाल, इन सब औषधोंका काढाकरके जैसा २ सहन होये ऐसी गरम बूंद नेत्रमें डाले, तो वाताभिष्यंद रोग दूरहो ॥

## ( वायुजन्यवारक्तपित्तजन्यअभिष्यंदपरआश्चोतन )

अंबुपिष्टैर्निंबुपत्रैस्त्वचं लोध्रस्य लेपयेत्।
प्रतापवन्हिनापिष्ठा तद्रसो नेत्रपूरणात् ॥
वातोत्थं रक्तपित्तोत्थमभिष्यंदं विनाशयेत्।

अर्थ—कडुए नीमके पत्तोंको जलमें पीसके लोधकी छाल पर लेपकरे, फिर उस छालको अग्निमें तपावे पीछे पीसके उसकारस निकाल नेत्रोमें कुछ गरम २ बूंद डाले तो वातजन्य रक्तपित्तजन्यअभिष्यंद दूरहो ॥

## सर्वअभिष्यंदोंपरआश्चोतन

त्रिफलाश्चोतनं नेत्रे सर्वाभिष्यंदनाशनम्।

---

१ बेल, अरनी, टेंटू, पाढल, कुमारी, ये बिल्वादि पंचमूल जानना इसीको बृहत्पंच मूल कहते है।

अर्थ—त्रिफलेके काढेकी गरम २ सुहाती बूंद नेत्रोंमें डाले तो सर्वप्रकारके अभिष्यंद दूरहो ॥

## रक्तपित्तजन्यअभिष्यंदपरआश्चोतन

स्त्रीस्तन्याश्चोतनं नेत्रे रक्तपित्तानिलार्त्तिजित् ।
क्षीरसर्पिर्घृतं वापि वातरक्तरुजं जयेत् ॥

अर्थ—स्त्रीके दूधके बूंदको नेत्रोमें डाले तो रक्तपित्त और वायु इनकी पीडा को दूरकरे । उसी प्रकार दूधके ऊपरकी मलाई और घी इनकी बूंद अथवा फाये नेत्रोंमें बांधे तो वातरक्त संबंधी पीडादूरहो ॥

## पिंडिकाकेलक्षण

पिंडी कवलिका प्रोक्ता बध्यते पट्टवस्त्रकैः ।
नेत्राभिष्यंदयोग्या सा व्रणेष्वपि निबध्यते ॥

अर्थ—नेत्ररोग नाशक औषधको पीस टिकिया करके नेत्रोंपर धरके कपडेकी पट्टीसें उसको बांधदेवे, इसको पिंडी अथवा कवलिका कहते है यह पिंडी नेत्राभिष्यंद रोगके योग्यहै । तथा व्रणके ऊपरभी बांधना कहाहै ॥

स्निग्धोष्णा पिंडिका वाते पित्ते सा शीतला मता ।
रूक्षोष्णा श्लेष्मणि प्रोक्ता विधिरुक्तो बुधैरयम् ॥

अर्थ—वातव्याधिपर चिकनी और गरम–पित्तपरशीतल–तयाकफपररूखी और गरम ऐसी पिंडी बांधनेकी विधिकही है ॥

## नेत्राभिष्यंदमेंशिरोविरेचन

अभिष्यंदेऽधिमंथे च संजाते श्लेष्मसंभवे ।
स्निग्धस्विन्नोत्तमांगस्य शिरस्तीक्ष्णैर्विरेचयेत् ॥

अर्थ—कफसंबंधी अभिष्यंद तथा अधिमंथ रोगीके मस्तकमें तेल चुपड पसीने निकाले फिरमस्तक शोधन करनेको तीक्ष्ण औषधकरके नाकमें नस्य देवे ॥

## उपायांतर

अधिमंथेषु सर्वेषु ललाटे वेधयेच्छिराम् ।
अशांते सर्वथा मंथे भ्रुवोस्तु परिदाहयेत् ॥

अर्थ—संपूर्ण अधिमंथमे ( नेत्रदूसनेमें) मस्तककी शिरा वेधे (फस्तखोले ) तो नेत्रदूसना शांतिहो । यदि सब उपाय करनेपरभी आंख दूसनेसें न रहे तो भ्रुकुटी ( भौह ) में दाग देवे ॥

## वाताभिष्यंदकायत्न

वाताभिष्यंदशान्त्यर्थं स्निग्धोष्णा पिंडिका भवेत् ॥

अर्थ—संपूर्ण अभिष्यंद रोगमें नेत्रोंकी पीडा दूरकरनको ओषध कहीं है उनकी टिकिया करके वांधे। तथा वाताभिष्यंदमें चिकनी और गरम टिकियाबांधनी

## वाततथापित्ताभिष्यंदकायत्न

एरंडपत्रमूलत्वङ्निर्मिता वातनाशिनी ।
पित्ताभिष्यंदनाशाय धात्रीपिंडी सुखावहा ॥

अर्थ—अंडकेपत्ते, छाल, जड, इन सबको एकत्र पीस टिकिया बनाय वाताभिष्यंद दूरकरनेको नेत्रोंपर वांधनी । पित्ताभिष्यंद दूरकरनेको आमलोंको पीस टिकियाकरके नेत्रोंपर वांधेतो नेत्रपीडा दूरहोवे ॥

## पित्ताभिष्यंदपरदूसरीपिंडी

महानिंबफलोद्भूता पिंडी पित्तविनाशिनी ।

अर्थ—बकायनके फलको पीस टिकिया बनाय पित्ताभिष्यंद रोगवालेके नेत्रोंपर वांधे तो पीडा दूरहो ॥

## श्लेष्माभिष्यंदपरपिंडी

शिग्रुपत्रकृतापिंडी श्लेष्माभिष्यंदनाशिनी ।

अर्थ—सहजनेके पत्तोंकी टिकिया बनायके वांधेतो कफसें नेत्रदूखना दूरहोय

## कफपित्ताभिष्यंदपरपिंडी

निंबपत्रकृता पिंडी श्लेष्मपित्तहरा भवेत् ।
त्रिफला पिंडिका प्रोक्ता नाशने श्लेष्मपित्तयोः ॥

अर्थ—नीमकेपत्तोंकी टिकिया बनायके रोगीके नेत्रोंपर वांधेतो कफपित्ताभिष्यंदकी पीडा दूरहो। तथा त्रिफलेकी टिकिया वांधेतो कफपित्ताभिष्यंद नाशहो

## रक्ताभिष्यंदपरपिंडी

पिष्टा कांजिकतोयेन घृतभृष्टं च पिंडिका ।
लोध्रःप्रहरति क्षिप्रमभिष्यंदमसृग्भवम् ॥

अर्थ—लोधको कांजीसे पीसके टिकिया बनाय घीमें सेकके नेत्रोंपर वांधे तो रक्ताभिष्यंद ( रुधिरकी दुष्टतासें जो नेत्र दूखनेको आते है वो ) दूरहो ॥

## सूजनऔरखुजलीआदिपरपिंडी

शुंठीनिंबदलैः पिंडी सुखोष्णा स्वल्पसैंधवा ।
धार्या चक्षुषि संयोगात् शोथकंडूव्यथापहा ॥

अर्थ—सोठ और नींमके पत्तोंको पीस उसमें थोडा सेंधानिमक डाल टिकिया वनाय गरमकरके नेत्रोंपर वांधे तो—नेत्रोंका सूजना नेत्रोकी खुजलीकी पीडाको दूरकरे ॥

## विडालककेलक्षण

विडालको बहिर्लेपो नेत्रपक्ष्मविवर्जितः ।
तस्य मात्रा परिज्ञेया मुखलेपविधानवत् ॥

अर्थ—नेत्रके पलकोको मूंदके ऊपर सर्वत्र लेपकरनेको विडालक कहते है। इस लेपकी मात्रा मुखलेपकी विधिके माफिक जाननी, अर्थात् जैसे मुखलेप करनेमें जो मात्रा लेनी लिखी है वही मात्रा इस विडालककी लेवे ॥

## सर्वनेत्ररोगोंमेंलेप

यष्टीगैरिकसिंधूत्थदार्वीताक्ष्यैः समांशिकैः ।
जलपिष्टैर्बहिर्लेपः सर्वनेत्रामयापहः ॥

अर्थ—मुलहटी,-गेरू,-सैंधानिमक,-दारहलदी,-और खपरिया,-ये पांच औषध वरावरले पानीमेंपीस नेत्रोंके वाहर २ लेपकरे तो सर्वअभिष्यंद (नेत्रोंका दूखना) दूरहो ॥

## तथादूसरालेप

रसांजनेन वा लेपः पथ्याविश्वदलैरपि । कुमारिका ग्निपत्रैर्वा दाडिमीपल्लवैरपि ॥ वचा हरिद्राविश्वैर्वा तथा नागरगैरिकैः ॥

अर्थ—रसोतको जलसें पीस लेप करे । उसीमकार हरड, सोंठ, तमालपत्र-इन तीनो औषधोंको जलमें पीस लेपकरे । अथवा घीगुवार और चीनेके पत्तोंको एकत्र जलसें पीस लेपकरे । अथवा अनारके पत्तोंको पीस लेपकरे अथवा वच, हलदी, और सोंठ, इन तीन औषधोंको जलमें पीस लेपकरे उसीमकार सोंठ और गेरू इनको जलमें पीसके नेत्रके वाहरले भागमें चारों तरफ लेप करे तो सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूरहो । ये छःलेप पृथक् २ कहे है ॥

### तथातीसरालेप

दग्ध्वाग्नौ सैंधवं लोध्रं मधूच्छिष्टयुते घृते ।
पिष्टमंजनलेपाभ्यां सद्यो नेत्ररुजापहम् ॥

अर्थ—सैंधानिमक और लोध इन दोनो औषधोंको अग्निमें भून-मौम और घी एकत्रकर उसमें वो औषध पीसके नेत्रोंमें अंजन करे, और पूर्वोक्त औषधोंका नेत्र के बाहर लेप करे तो नेत्रसंबंधी पीडा तत्काल दूरहोय ॥

### चतुर्थलेप

लोहस्य पात्रे संघृष्टो रसो निंबुफलोद्भवः ।
किंचिद्घनो बहिर्लेपान्नेत्रबाधां व्यपोहति ॥

अर्थ—लोहेके पात्रमें नींबूके रसको घोटे जब गाढा होजावे तब नेत्रके बहिर्भागमें लेप करे तो नेत्रसंबंधी सर्वपीडा दूरहो ॥

### अर्मरोगपरलेप

संचूर्ण्य मरिचं केशराजं स्वरसमर्दनात् ।
लेपनादर्मणांनाशंकरोत्येषप्रयोगराट् ॥

अर्थ—कालीमिरचोंको भांगरेके रसमें पीसके नेत्रोंपर लेप करे, तो शुक्कार्म और अधिमांसार्म इत्यादिक नेत्ररोगोंमें जो अर्मरोग है वो दूरहो ॥

### अंजननामिकापरप्रतिसारण

स्विन्नां भित्वा विनिष्पीड्य भिन्नामंजननामिकाम् ॥
शिलैकानतसिंधूत्थैःसक्षौद्रैः प्रतिसारणम् ॥

अर्थ—नेत्रोंकी-पलकोंमें अंजननामिका नामकी फुंसी होतीहै उसको आंजनी कहतेहैं, उस फुंसीका वफारेसैं पसीने निकालके चीरडाले फिर उसका मवाद निकाल पश्चात् मनसिल, इलायची, तगर, सैंधानिमक, इन चार दवाइयोंका चूर्णकर सहतमें मिलाय उस फुंसीमें प्रतिसारण करे अर्थात् ये औषध उस फुंसी पर चुपडदेवे तो आंजनी फुंसी दूरहो ॥

### नेत्ररोगमेंतर्पण

अथ तर्पणकं वच्मि नेत्रतृप्तिकरं परं । यद्रूक्षं परिशु-
ष्कं च नेत्रं कुटिलमाविलम् ॥ शीर्णपक्ष्मशिरोत्पात-
कृच्छ्रोन्मीलनसंयुतम् । तिमिरार्जुनशुक्राद्यैरभिष्यं-

दाधिमंथकैः ॥ शुक्राक्षिपाकशोथाभ्यां शुक्तं वातविप
र्ययैः। तन्नेत्रतर्पणे योज्यं नेत्रकर्मविशारदैः ॥

अर्थ—नेत्रमें तृप्तिकरता ऐसा तर्पण कहते है; जिस नेत्रोंमे रूखापना, शुष्कता, टेढापना, और गदलाहटपनाहै ऐसेनेत्र, तथा जिसके पलकोंके वाल गिर गएहो, शिरोघात, कृच्छ्रोन्मीलन, ( कठि-सैनेत्रमुदे ) तिमिर, अर्जुन, शुक्र (मोतियाबिंद ) अभिष्यंद, अधिमंथ, शुक्राक्षिपाक, सूजन, और वातविपर्यय इन रोगसैं व्याप्त नेत्ररोगीकैं तर्पण करे, अर्थात् तृप्ति करता औषधीकी योजना करे॥

## हीनाधिकतर्पणमेंउपचार

पूर्णे चापांगतः स्नेहं स्रावयित्वा क्षिशोधयेत्।
स्विन्नेन यवपिष्टेन स्नेहवीर्येरितं ततः ॥
यथास्वं धूमपानेन कफमस्य विरेचयेत्।
एकाहं वा त्र्यहं वापि पंचाहं तर्पणं चरेत् ॥

अर्थ—नेत्र पूर्णहोनेके पश्चात् अपांग ( नेत्रकोण ) के द्वारा स्नेह बाहर निकालके नेत्रका शोधन करे। फिर स्नेहवीर्यसैं दुष्टनेत्रोंका जोंके चूनको फिगो बाफदेकर अर्थात् कुछ गरम करके नेत्रोके ऊपर बांधे अथवा धूमपान करके उसके कफको निकाले, इस प्रकार एक अथवा तीन अथवा पांचदिन तर्पण करे

## तर्पणकानिषेध

दुर्दिनात्युष्णशीतेषु चिंतायासंभ्रमेषुच ।
अशांतोपद्रवे चाक्षिण तर्पणं न प्रशस्यते ॥

अर्थ—जिसदिन आकाश वदलोंसैं घिरा हुआहो, अत्यंत शरदी या गरमीहो, शरीरमें चिंताहो, परिश्रम और भ्रम ये उपद्रव होनेसैं तथा नेत्रसंबंधी शूलादिक उपद्रवशांत न हुए होवे तो तर्पण न करे ॥

## तर्पणका विधान

वातातपरजोहीने देशे चोत्तानशायिनः । आधारौ
माषचूर्णेन क्लिन्नेन परिमंडलौ ॥ समौ दृढावसंबाधौ
कर्त्तव्यौ नेत्रकोशयोः। पूरयेत् घृतमंडेन विलीनेन
सुखोदकैः ॥ अथवा शतधौतेन सर्पिषा क्षीरजेन वा।

निमग्नान्यक्षिपक्ष्माणि यावत्स्युस्तावदेव हि ॥ पूर-
येन्मीलिते नेत्रे ततः उन्मीलयेच्छनैः ॥

अर्थ—पवन, धूप, धूल, ये जिसजगे न हो उस स्थानमें मनुष्यको चित्त सु-लायके नेत्र कोशोंमें भीगे उडदोंके चूनका गोल थामलासा बनावे फिर नेत्रोंको बंदकर उनके ऊपर पतला घी अथवा मंड ( पेया ) अथवा गरमजल अथवा सौं-वारका धुला हुआ घी अथवा दूध येपदार्थ जबतक नेत्रोंके पलककी बरुनी न डूबे तब तक नेत्रोंमें डाले, फिर धीरे २ नेत्रोंको उघाडे; इसप्रकार करने को तर्पण कहते है इस्सैं नेत्र तृप्तहोते है ॥

## तर्पणकीमात्राकाप्रमाण

धारयेद्वर्त्मरोगेषु वाङ्मात्राणां शतं बुधाः । स्वच्छे
कफे संधिरोगे मात्रा पंचशतं हितम् ॥ शुक्ले च षट्-
शतं कृष्णरोगे सप्तशतं मतम् ॥ दृष्टरोगेष्वष्टशतम-
धिमंथे सहस्रकम् । सहस्रं वातरोगेषु धार्यमेवं हि तर्पणम् ॥

अर्थ—नेत्रसंबंधी पलकोंके रोगमें १०० सौ वाङ्मात्र तर्पणरूप औषधको नेत्रोंमें धारण करे, केवल कफका रोग होय अथवा नेत्रकी संधिगत रोग होनेसें ५०० पांचसौ वाक्पर्यंत, नेत्रके सपेद भागमें रोग होनेसें ६०० छःसौ— । तथा काले भागमें रोगहोनेसैं ७०० सातसौ— । दृष्टिरोग होयतो ८०० आठसौ । अधिमंथ रोग होयतो १००० एकहजार । वातकारोग होयतो १००० एक हजार वाङ्मात्र होने पर्यंत औषधको नेत्रोंपर धारणकरे । इसप्रकार तर्पणके धारण का प्रमाणकहा ॥

## ( तर्पणसैंस्नेहकेअधिकयोगद्वाराकफाधिक्यहोनेकाउपाय )

स्विन्नेन यवपिष्टेन स्नेहवीर्येरितं ततः ।
यथास्वं धूमपानेन कफमस्य विशोधयेत् ॥

अर्थ—तर्पणके स्नेहवीर्य करके उत्पन्न हुआ जो कफ ( नेत्रोंमें कीचड ) उसको भीगे जोओंको पीस उससैं तथा धूमपान करके शोधन करना चाहिये ॥

## तर्पणकी मर्यादा

एकाहं वा त्र्यहं वापि पंचाहं चेष्यते परम् ॥

अर्थ—नेत्रमें तर्पण प्रयोग करना होयतो एकदिन अथवा तीनादिन अथवा पांचादिन पर्यंत करे, यह उत्कृष्ट प्रमाण जानना ॥

## तर्पणकरकेतृप्तकेलक्षण

तर्पणे तृप्तिलिंगानि नेत्रस्येमानि भावयेत्। सुखस्व-
प्नावबोधत्ववैशद्यं वर्णपाटवम् ॥ निवृत्तिर्व्याधिशां-
तिश्च क्रियालाघवमेव च ॥

अर्थ—सुखपूर्वक निद्रा आवे, सुखपूर्वकजागे, नेत्रोंमें निर्मलताहोय, नेत्रोंकी कांति उत्तमहोय, नजर साफहोवे, रोगका नाशहोय, और नेत्रोंके खोलने मूंदने में हलकापना, आवे, येलक्षण तर्पण करके नेत्रतृप्त हुए प्राणीके होते है ॥

## तर्पणअत्यंतहोनेकेलक्षण

गुर्वाविलमतिस्निग्धमश्रुकंडूपदेहवत्।
घर्षतोदयुतं नेत्रमतितर्पितमादिशेत् ॥

अर्थ—भारी, गदले, अतिचिकने, आंसू, खुजली, कीचडसें चिकटे हुए, घर्षण, पीडा, ये लक्षण अति तर्पित नेत्रवाले प्राणीके जानने ॥

## हीनतर्पणकेलक्षण

आस्रावशोफरागाढ्यमुपदेहसमाकुलम् ।
रूक्षमस्राविलं रुग्णं नेत्रं स्याद्धीनतर्पितम् ॥

अर्थ—पानीगिरना, सूजन, लाली, चिकटेहुए, रूखे, रक्त, गदले, और, पीडायुक्त ये लक्षण जिसके नेत्रोंमें होय उसको हीततर्पित जानना । अर्थात् ठीक तर्पण नहीं हुआ ॥

## तर्पणसेंहीनाधिक्यस्निग्धकायत्न

अनयोर्दोषबाहुल्यात्प्रयतेत चिकित्सिते ।
रूक्षस्निग्धोपचाराभ्यामेतयोःस्यात्प्रतिक्रिया ॥

अर्थ—अधिकतृप्त और हीनतृप्त हुए रोगीकी वैद्य रूक्षस्निग्ध उपचार करके चिकित्साकरे अर्थात् अधिकतृप्तकी रूक्ष और हीन तृप्तकी स्निग्ध चिकित्सा करनी चाहिये ॥

---

## पुटपाक

अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि पुटपाकस्य साधनम् । द्वौ वि-

त्वमात्रौ मांसस्य पिंडौ स्निग्धौ सुपेषितौ ॥ द्रव्या-
णां बिल्वमात्रं तु द्रवाणां कुडवो मतः । तदेकस्थं
समालोड्य पत्रैः सुपरिवेष्टितं॥ पुटपाकेन तत्पक्वाद्गृ-
ण्हीयात्तद्रसंबुधः । तर्पणोक्तविधानेन यथावदुपचारयेत् ॥

अर्थ—अब इसके उपरांत हम पुटपाक साधन ( बनाना ) कहैगे;-हरिणादि-कोंका मांस दोबिल्व लेके उसको घृतादिक स्नेह पदार्थमें मिलाय बारीक पीसे, तथा सूखी औषध जो कहीहै वो एक बिल्व प्रमाण ले तथा सहत,-पानी,-इत्यादिक द्रवपदार्थ-एक कुडव प्रमाण ले, इस सबको उस पूर्वोक्त मांसमें मिलायके गोला बनावे, फिर जामुन, अथवा आंम, इत्यादिके पत्ते उस गोलेके चाऱ्यो तरफ लपेट देवे, फिर उसपर मिट्टीका लेप करे, पश्चात् पुटपाककी रीतिसैं गोला को अग्निमें भूनके बाहर निकाले मिट्टी पत्ते दूरकर उस गोले-को निचोड़ कर रसनिकाल लेवे, इस रसको तर्पणकी विधिसैं ऊपर कहेप्रमाण नेत्रोंमें डाले, तो यह सर्वनेत्रविकारोंको दूरकरे ॥

## पुटपाकसंबंधीरसनेत्रमेंडालनेकीविधि

दृष्टिमध्ये निषेच्यः स्यान्नित्यमुत्तानशायिनः ।
स्नेहनो लेखनश्चैव रोपणश्चेति सत्रिधा ॥

अर्थ—वह पुटपाक संबंधी रस स्नेहन,-लेखन और रोपण इन भेदोंकरके तीन प्रकारकाहै । इस मनुष्यको सीधा चित्त लिटायकर नेत्रोंमे दृष्टिके मध्यभागमें नित्य डालना चाहिये ॥

## स्नेहनादिभेदसैंपुटपाककीयोजना

हितः स्निग्धोतिरूक्षस्य स्निग्धस्यापिहि लेखनः ।
दृष्टेर्बलार्थमितरः पित्तासृक्व्रणवातनुत् ॥

अर्थ—रूखे नेत्रवालेको स्निग्धपुटपाक, स्निग्ध नेत्रवालेको लेखन पुटपाक, तथा दृष्टीमें बल आनेके वास्ते रोपण पुटपाक की योजनाकरे वो पुटपाक नेत्रसं-बंधी दुष्टहुए जे पित्त रक्त व्रण और वायु इनको दूरकरे इस पुटपाककी विधि आगेके श्लोकमें कहते है ॥

## स्नेहपुटपाक

सर्पिर्मांसवसामज्जामेदस्वाद्वौषधैः कृतः ।

स्नेहनः पुटपाकस्तु धार्यो द्वेवाक्शते दृशोः ॥

अर्थ—घी, हरिणादिकोंके मांस,-मज्जा,-औरमेद ए सब घीमें मिलाय के पीसे और कांकोल्यादि गणकी औषधोंका चूर्ण कर उस मांसादिकमें मिलाय देवे फिर एक गोला बनाय जामुन,-आंव, इत्यादिकोंके पत्तोंमें लपेट मिट्टी चढाय पुटपाककी विधिसैं अग्निदेवे फिर उस गोलेको अग्निसैं निकाल मिट्टी और पत्ते दूरकरके निचोड रस निकाल लेवे, इस रसको नेत्रोंमें डाले और २०० वाक् मात्र पर्यंत धारणकरे। इसको स्नेहनपुटपाक कहते है आगे लेखनपुटपाक कहते है ॥

## लेखनपुटपाक

जांगलानां यकृन्मांसैर्लेखनद्रव्यसंयुतैः ।
कृष्णलोहरजस्ताम्रशंखविद्रुमसिंधुजैः ॥
समुद्रफेनकासीसस्रोतोजलधिमस्तुभिः ।
लेखने वाक्शतं धार्यस्तस्य तावद्विधारणम् ॥

अर्थ—हरिणादिक जंगली जीवोंका मांस,लोहचूर्ण(ताम्रचूर्ण)शंख, मूंगा,सैंधा निमक, समुद्रफेन, कसीस, सुरमा, और बकरीके दहीकी छाछडालके पीस गोला करे, उसको पूर्वोक्त पुटपाककी विधिसैं पचाय रसनिकाल नेत्रोंमें डाले और सौ १०० मात्रा होनेपर्यंत धारणकरे इसको लेखन पुटपाक कहते है ॥

## रोपणपुटपाक

स्तन्यजांगलमध्वाज्यतिक्तकद्रव्यपाचितः । लेखनात्रिगुणो धार्यः पुटपाकस्तु रोपणः ॥ वितरेत्तर्पणोक्तां तु क्रियां व्यापत्तिदर्शने ॥

अर्थ—स्त्रीकादूध, हरिणादिक जंगली जीवोंका मांस,सहत, और घी, कुटकी ये सब उसमांसमें मिलाय पीसके गोला करे, उसको पूर्वोक्त पुटपाककी विधिसैं परिपक्व कर बाहरनिकाले तथा मिट्टी और पत्ते दूरकरे निचोड रस निकालले इसको नेत्रोंमें डाल तीनसौं ३०० वाक्पर्यंत धारणकरे, इसको रोपण पुटपाक कहतेहै। यदि पुटपाकके आधिक्य अथवा न्यूनताके कारण भारीपना तथा निस्तेजता आदि उपद्रव होवेतो तर्पणमें जैसी क्रिया कहआएहै उसके माफिक यत्न करना चाहिये ॥

## (दोषपक्कहोनेसैंअंजनऔरअंजनकासाधारणविधान)

अथ संपक्कदोपस्य प्राप्तमंजनमाचरेत् । हेमंते शिशिरे चैव मध्यान्हेंजनमिष्यते ॥ पूर्वाण्हे चापराण्हे च ग्रीष्मे शरदिचेष्यते ।वर्षासु नाभ्रे नात्युष्णे वसंतेचसदैवाहि।

अर्थ—जिसके दोप परिपक्क हो उसमाणीके अंजन लगना होयतो पांचादेनके पश्चात् लगावे, अंजनकी साधारणविधि-हेमंतऋतु और शिशिरऋतु इनमें दोप्रहर दिनचढे अंजन लगावे, ग्रीष्मऋतु और शरदऋतु इनमें प्रातःकाल अथवा सायंकालमें अंजन लगावे,-वर्षामें और अत्यंत गरमीमें अंजन न लगावे। एवं वसंत ऋतुमें सवकालमें आंजन ( आंजना ) उत्तम है ॥

## अंजनकेभेद

लेखनं रोपणं चैव तथा तत्स्नेहनांजनम् । लेखनं क्षारतीक्ष्णाम्लरसैरंजनमिष्यते॥ कषायतिक्तरसयुक् सस्नेहं रोपणं मतम् । मधुरस्नेहसंपन्नमंजनं च प्रसादनम् ॥

अर्थ—लेखन, रोपण, और स्नेहन, इनभेदोंसैं अंजन तीन प्रकारकाहै। तिनमें खार, तीक्ष्ण, और खट्टा ये रस जिस अंजनमें है उसको लेखनांजन कहतेहै। तथा कषेला, कडुआ, ये दो रस करके युक्त जो अंजनहै तथा स्नेहयुक्तहो उसको रोपणांजन कहते है। और जो मधुररस संपन्न तथा स्नेहयुक्त हो उसको स्नेहनांजन जानना ॥

## अंजनकेगुटिकादितीनभेद

गुटिका रसचूर्णानि त्रिविधान्यंजनानि च ।
कुर्याच्छलाकयांगुल्या हीनानि च यथोत्तरम् ॥

अर्थ—गोली, रस, और चूर्ण, इन भेदोंसै अंजन तीनप्रकारका है। इन अंजनोंमें गुटिकांजन की अपेक्षा रसगुणवाला न्यूनहै, और रसरूप अंजनकी अपेक्षा चूर्णरूप जो अंजनहै सो गुणोंमें न्यूनहै, ऐसैं उत्तरोत्तर गुणोंमें हलके जानने। इन अंजनोंको सलाईसैं अथवा उंगली करके नेत्रोंमें लगावे तहां वत्ती चंद्रोदयादिक जानबी, रगडा आदि रसांजनहै, और सुरमा आदि चूर्णांजन जानने चाहिये ॥

## अंजनकेअयोग्य

श्रांते प्ररुदिते भीते पीतमद्ये नवज्वरे ।
अजीर्णे वेगघाते च नांजनं संप्रचक्षते ॥

अर्थ—परिश्रमसें थका, रुदित, डरपाहुआ, मद्य ( दारू ) पानकरचुकाहो, नवीन ज्वरवाला, अजीर्णमें, मलमूत्रकी बांधा रोकनेवाला इतने मनुष्योंके अंजन नहीं लगाना ॥

## अंजनमेंबत्तीकाप्रमाण

हरेणमात्रां कुर्वीत वर्तितीक्ष्णांजने भिषक् ।
प्रमाणं मध्यमेऽध्यर्धं द्विगुणं तु मृदौ भवेत् ॥

अर्थ—तीक्ष्ण अंजनमें हरेणुबीजं ( मटर ) के समान गोली लंबी बत्तीके समान बनावे, अर्थात् मटरके समान उसका मुटापा होय । उसीप्रकार मध्यम अंजनमें मटरसें ड्योढी बत्ती बनावे तथा मृदु अंजनमें हरेणुबीज ( मटर ) दोकी बराबर अर्थात् दूनी गोल बत्ती बनावे ॥

## अंजनमेंरसकाप्रमाण

रसक्रिया तूत्तमा स्यात्त्रिविडंगमिताहिता ।
मध्यमा द्विविडंगं स्याद्धीनात्वेकविडंगकम् ॥

अर्थ—द्रवरूप अंजनकी मात्रा तीन वायविडंगके समान नेत्रोंमें सलाईसे लगावे यह उत्तम रसक्रिया है । दो वायविडंगके प्रमाण लगाना मध्यम रस क्रिया जाननी, और एक वायविडंगके बराबर मात्रा कनिष्ट अर्थात् छोटी है ॥

## विरेचनअंजनमेंचूर्णकाप्रमाण

विरेचनिकचूर्णं तत् द्विशलाके विधीयते ।
मृदौ तु त्रिशलाकं स्याच्चतस्रः स्नेहिकेंजने ॥

अर्थ—विरेचनिक[१] चूर्णको सलाईमें दोवार लगाय दोवारनेत्रोंमें फेरके निकाललेय । मृदु अंजनमें औषधका चूर्ण तीनवार सलाईमें लगावे और तीनवार नेत्रोंमे फेरके निकाल लेय । तथा घृतआदि जो स्नेहपदार्थ तिनकरके युक्तजो अंजनहै उनको सलाईमें चारवार लगावे और चारवारही नेत्रोंमें फेरके निकाल लेय, यह अंजन लगानेका प्रमाण कहाहै ॥

१ जिसअंजनके लगानेसें नेत्रोंसें अधिक पानी गिरे उसको वैरेचनिक चूर्ण कहते है ।

## सलाईबनानेकीयुक्ति

मुखयोः कुंठिता श्लक्ष्णा शलाकाष्टांगुलोन्मिता।
अश्मजा धातुजा वा स्यात्कलायपरिमंडला॥

अर्थ—अब सलाईके लक्षण कहते है, कि जो पाषाणकी अथवा सुवर्णादि धातुओंकी सलाई आठ अंगुलकी बनावे उसके दोनों आगेके भाग गोलकरें तथा उसको बहुत पतली न करे तथा मटरके दानेके समान सुंदर गोल बनावे॥

## लेखनादिमेंशलाईकाप्रमाण

ताम्रलोहाश्मसंजाता शलाका लेखने मता।
सुवर्णरजतोद्भूता शलाका स्नेहनेमता॥
अंगुली च मृदुत्वेन कथिता रोपणे बुधैः॥

अर्थ—लेखन अंजनमें तांबेकी अथवा लोहकी वा पत्थरकी सलाई लेनी, स्नेहांजनमें सोनेकी अथवा चांदीकी शलाईले, उंगलीमें मृदु ( नरम ) ताहै अतएव रोपण अंजनमें उगलियोंसें नेत्रोंमें अजन आंजना चाहिये, सलाईसें नहीं॥

## अंजनमेंसमयका निश्चय

सायंप्रातर्वांजनं स्यात्तत्सदा नैव कारयेत्।
नातिशीतोष्णवाताभ्रवेलायां संप्रशस्यते॥
कृष्णभागादधः कुर्यादपांगं यावदंजनम्।

अर्थ—सायंकाल और प्रातःकालमें अंजन लगावे, सर्वकालमें अंजन नहीं लगाना। अत्यंत शरदी, अत्यतगरमी, अत्यंतहवा, तथा जिसदिन आकाश बदलोंसें घिराहो, इनमें अजन नहीं करना। नेत्रोंके कालेभागके नीचे अर्थात् सपेद भागमें अंजन करना चाहिये॥

## चंद्रोदयवर्त्ती

शंखनाभिर्बिभीतस्य मज्जापथ्यामनःशिला। पिप्पली मरिचं कुष्ठं वचाचेति समांशकं॥ छागीक्षीरेण संपिष्य वर्त्तिं कुर्याद्यवोन्मितां। हरेणुमात्रां संघृष्यजलैः कुर्यादथांजनम्॥ तिमिरं मांसवृद्धिं च कालं पटलमर्बुदम्। रात्र्यंधं वार्षिकं पुष्पं वर्त्तिश्चन्द्रोदया जयेत्॥

अर्थ—शंखकीनाभि, वहेडेके फलके भीतरकी मिंगी, हरड, मनसिल, पीपर-कालीमिरच, कूठ, वच, ये औषध समान भागले वकरीके दूधमें वारीकपीस जौं के वरावर गोल बत्तीके सदृश वनावे। इसको चंद्रोदयावर्त्ती कहते है। फि, र इस गोलीमेंसें छोटी मटरके प्रमाण जलमें घिसके अंजनकरे तो तिमिर, मांस वृद्धि, कांचबिंदु, पटलगतरोग, अर्बुद, रतोंध, तथा एकवर्षकाफूला, ये संपूर्णरोग दूरहो ॥

## ( फूलाछरइत्यादिकरोगोंपरलेखनीवर्त्ती )

पलासपुष्पस्वरसैर्बहुशः परिभाविता।
करंजबीजवर्तिस्तु शुक्रादीन् शस्त्रवल्लिखेत् ॥

अर्थ—कंजेके बीजोंका चूर्णकर, केसूलाके फूलोंके स्वरसकी अनेक भावना देकर वारीकर वर्त्तीके समान लंवी गोली वनावे। फिर इस गोलीको पानीमें पीस नेत्रोंमें लगावे तो शुक्र कहिये फूलेको, मांसवृद्धि, छर इत्यादि सकलरोगों-को शस्त्रसें काटनेके समान दूरकरे ॥

## दूसरीबिधि॰

समुद्रफेनसिंधूत्थ शंखदक्षांडवल्कलैः
शिग्रुबीजयुतैर्वर्तिः शुक्रादीन् शस्त्रवल्लिखेत्

अर्थ—समुद्रफेन, सैंधानिमक, शंख, मुरगीके अंडेके ऊपरकी सपेदी, सहज-नेके बीज, इन पांच औषधोंको वरावरले पानीमेंपीस वत्तीके समान लंवी गो-ली वनावे। इसको जलमें घिसके नेत्रोंमें अंजन करे तो फूला, छड, इत्यादिक रोगोंको शस्त्रसें काटनेके समान दूरकरेहै ॥

## लेखनीदंतवर्त्ती

दंतैर्दंतिवराहोष्ट्रगोहयाजखरोद्भवैः।
शंखमुक्तांभोधिफेनयुतैः सर्वैर्विचूर्णितैः ॥
दंतवर्तिः कृता श्लक्ष्णा शुक्राणां नाशिनीपरा।

अर्थ—हाथी, सूअर, वैल, घोडा, वकरा, और गद्धा, इनके दांत; शंख, मो-ती, और समुद्रफेन, इन सवका चूर्णकर पानीमें वारीक पीस वत्तीके समान लंवी गोली वनावे। इस गोलीको दंतवर्त्ती कहते है। इसको जलसें घिसके अं-न करेतों फूला दूरहोय [ और अनेकनेत्रके विकारोंको दूरकरे है ]

## तंद्रानाशकलेखनवर्त्ती

नीलोत्पलं शिग्रुबीजंनागकेशरकं तथा।
एतत्कल्कैः कृतावर्त्तिरतितन्द्रा विनाशयेत्॥

अर्थ—नीलाकमल, सहजनेके बीज, नागकेशर, इनतीनोंको समान ले पानीसैं पीसके लंबी २ बत्तीके आकार गोली बनावे। इसको जलमें घिसके लगाये तो तंद्राको दूर करे है॥

## रोपणीकुसुमितावर्त्ती

तिलपुष्पाण्यशीतिः स्युः षष्टिसंख्याकणाकणाः।
जातीकुसुमपंचाशत् मरिचानि च षोडश ॥ सूक्ष्मं
पिष्ट्वा जले वर्त्तिः कृताकुसुमिकाभिधा। तिमिरार्जुन
शुक्राणां नाशनी मांसवृद्धिहृत् ॥ एतस्याश्चांजने
मात्रा प्रोक्तासार्धहरेणुका।

अर्थ—तिलकेफूल ८०, पीपलकेभीतरकेदाने ६०, चमेलीकेफूल ५० कालीमिरच १६, इन सबका चूर्णकर पानीसैं पीस बत्तीके समान गोली बनावे,इसको कुसुमिकावर्त्ती कहते है यह गोली डेढ मटरके समान जलमें पीसके नेत्रोंमें अंजनकरे तो तिमिर, अर्जुन, फुला, और मांसवृद्धि, ये रोग दूरहोय॥

## नक्तांध्यनाशिनीवर्त्ती

रसांजनं हरिद्रेद्वे मालतीनिंबपल्लवाः।
गोशकृद्रससंयुक्ता वर्तिर्नक्तांध्यनाशिनी॥

अर्थ—रसोत, हलदी, दारुहलदी, चमेलीकेपत्ते, नींबकेपत्ते ये पांचवस्तु समान लेके गौके गोवरके रसमें वारीक पीस गोली वनावे, जलमें घिसकैं नेत्रोंमें अंजन करेतो रतोंध ( जिसको रातमें न दीखे वह रोग ) दूरहोवे॥

## नेत्रस्रावनाशकवर्त्ती

धात्र्यक्षपथ्याबीजानि एकद्वित्रिगुणानि च।
पिष्ट्वावर्त्तिं जलैः कुर्यादंजनं द्विहरेणुकम्।
नेत्रस्रावं हरत्याशु वातरक्तरुजंतथा॥

आंवलेके भीतरकाबीज १ भाग, बहेडेके भीतरकी मिंगी, २ भाग
रकी मिंगी ३ भाग, सब बीजोंको एकत्र कर पानीसे वारीक पीस

वत्तीके समान लंवी गोली वनावे, फिर उस गोलीमेसें दो रेणुकावीजकी वरावर पानीमें घिसके अंजन करे तो नेत्रोंसें जलका स्राव होनेको तत्काल दूरकरे, तथा वातरक्त संवंधी पीडा दूरहोवे ॥

## रसक्रिया

तुत्थमाक्षिकसिंधूत्थसिताशंखमनःशिलाः । गैरिको दधिफेनं च मरिचं चेति चूर्णयेत् ॥संयोज्य मधुना कुर्यादंजनार्थं रसक्रियाम्।वर्त्मरोगार्मतिमिरकाचशुक्रहरांपरां॥

अर्थ—नीलाथोथा, सुवर्णमाक्षिक, सैंधानिमक, मिश्री, शंख, मनसिल, गेरू, समुद्रफेन, और कालीमिरच, इनसवकों, समान भागले वारीक चूर्णकर सहतमें मिलाय अंजनकरे तो पलकोका रोग, अर्मरोग, तिमिर, कांच, और शुक्ररोग इनको हरणकरे ॥

## फूलादूरहोनेकोरसक्रिया

वटक्षीरेण संयुक्तो मुख्यः कर्पूरजः कणः
क्षिप्रमंजनतो हंति कुसुमं च द्विमासकम् ॥

अर्थ—वडके दूधमें कपूरको घिसके नेत्रोंमें अंजन करे तो दोमहिनेका फूला शीघ्र दूरहो ॥

## अतिनिद्रादूरहोनेकोंलेखनीरसक्रिया

क्षौद्राश्वलालासंघृष्टैर्मरिचैर्नेत्रमंजयेत् ।
अतिनिद्राशमं याति तमः सूर्योदयादिव ॥

अर्थ—सहत और घोडेकीलार इन दोनोकों एकत्र कर इसमें कालीमिरचको पीस अजन करे तो अत्यंत निद्राका आनादूरहो । जैसे सूर्योदय होनेसें अंधकार नष्टहोताहै इस प्रकार इस औषधके लगानेसे नीद तत्काल जातीहै ॥

## तंद्रानाशिनीरसक्रिया

जातीपुष्पं प्रवालं च मरिचं कटुकी वचा ।
सैंधवं वस्तमूत्रेण पिष्टं तन्द्राघ्नमंजनम् ॥

अर्थ—चमेलीकेफूल, मूंगा, कालीमिरच, कुटकी, वच, और सैंधानिमक, ये औषध समान भागले. वकरेकेमूत्रमें पीसके अंजन करेतो तंद्रा दूरहो ॥

## सन्निपातमेंलेखनीरसक्रिया

शिरीषबीजगोमूत्र कृष्णामरिचसैंधवैः ।
अंजनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥

अर्थ—सिरसकेवीज, पीपल, कालीमिरच, सैंधानिमक, लहसन, मनसिल, औरवच, ए सब समानले गोमूत्रमे बारीक पीसके अंजन करेतो सांनिपातजन्य संज्ञानष्टताको दूरकर मनुष्यको चैतन्यकरे ॥

## तिमिरादिरोगोंमेंरोपणीरसक्रिया

गुडूचीस्वरसैः कर्षः क्षौद्रं स्यान्माषकोन्मितं । सैंधवं क्षौद्रतुल्यं स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ अंजयेन्नयनं तेन पिल्लार्मतिमिरं जयेत् । काचं कंडू लिंगनाशं शुक्लकृष्णागतान् गदान् ॥

अर्थ—गिलोकयका स्वरस-१ कर्षलेउसमे सहत, और सैंधानिमक, ए एक २ मासे डालके अच्छी रीतिसैं खरलकरे; इसका नेत्रोंमें अजन करे तो पिल्लार्म, तिमिर, कांच, खुजली, लिंगनाश, नेत्रोके सपेदभागमें और काले भागमें होने वाले सपूर्ण नेत्ररोग दूरहो ॥

## पुनर्नवाकेअनुपान

दुग्धेन कंडुं क्षौद्रेण नेत्रस्रावं च सर्पिषा ।
पुष्पं तैलेन तिमिरं कांजिकेन निशांधतां ॥
पुनर्नवाजयेदाशु भास्करस्तिमिरं यथा ।

अर्थ—पुनर्नवा ( सांठकीजड ) को दूधमें पीस नेत्रोंमें अंजन करेतो नेत्रोंकी खुजली दूरहो । सहतमें घिसके लगावे तो नेत्रसें पानीका गिरना दूरहो । घीमें घिसके लगावे तो फूलाको दूरकरे । तेलमें घिसके लगावे तो तिमिर दूरहो । कांजीमें घिसके लगावे तो रत्तोंध दूरहो । जैसें सूर्य अंधकारको शीघ्र नष्ट करे है इस प्रकार पुनर्नवा अनुपान भेदकरके सर्व रोगोको दूरकरे । किसी ग्रंथमें इसपाठसें कुछ २ फरक लिखा है ॥

## नेत्रस्रावमेंरोपणीरसक्रिया

वब्बूलदलनिःक्वाथो लेहीभूतस्तदंजनात् ।

---

१ घृतेन पुष्पं मधुनास्रुपात तैलेन काड तिमिर जलेन ।
रात्र्यंधतो वा सहकांजिकेन पुनर्नवा नेत्रपुनर्नवाकरी ॥

नेत्रास्रावं जयत्येष मधुयुक्तो न संशयः ॥

अर्थ—बबूरके पत्तोंका क्वाथ गाढा होनेपर्यंत ओंटावे, फिर उसमें थोडा सहत डाल नेत्रोंमें अंजनकरे तो नेत्रोंके जल गिरनेको अवश्य दूरकरे ॥

### दूसराप्रकार

हिज्जलस्य फलं घृष्ट्वा पानीये नित्यमंजनात् ।
नेत्रस्रावं जयत्येष मधुयुक्तो न संशयः ॥

अर्थ—हिंजलके फलको पानीसैं पीस सहतडाल नित्य अंजन करे तो नेत्रोंसे पानी गिरना दूरहोवे ॥

### नेत्रप्रसादन

कतकस्यफलं घृष्ट्वा मधुना नेत्रमंजयेत् ।
ईषत्कर्पूरसहितं स्मृतं नेत्रप्रसादनम् ॥

अर्थ—निर्मलीके फलको सहतमें घिस और उसमें थोडासा कपूर मिलाय नेत्रोंमें लगावे तो नेत्र स्वच्छहो ॥

### शिरोत्पातरोगमेंअंजन

सर्पिः क्षौद्रं चांजनं स्यात् शिरोत्पातस्य शांतये ।

अर्थ—घी और सहत दोनोको एकत्र कर इसको नेत्रोंमें अंजन करेतो नेत्ररोगमें जो शिरोत्पात रोगहै वो दूर होवे ॥

### आंधरापनदूरहोनेकोरसक्रिया

कृष्णसर्पवसाशंखः कतकाफलमंजनम् ।
रसक्रियेयमचिरादंधानां दर्शनप्रदा ॥

अर्थ—काले सांपकी चर्बी, शंख, और निर्मलीके बीज, इनको एकत्र बारीक पीस नेत्रोंमें अंजनकरे तो यह रसक्रिया अंधे मनुष्यको शीघ्र दीखनेलगे ऐसा करतीहै ॥

### अंजनयोग

दक्षांडत्वक्शिलाकाचैः शंखचंदनगैरिकैः ।
द्रवैरंजनयोगोऽयं पुष्पार्मादिविलेखनः ॥

अर्थ—मुरगेके अंडेकी सपेदी, मनसिल, सपेदकांच, शंख, सपेदचंदन, गै-

६, इन छः वस्तुओंको समानभागले वारीक चूर्ण कर नेत्रोंमें अंजन करेतो फूला और मांसार्मादिक रोग नष्टहोवे ॥

## रतोंधदूरहोनेकोलेखनचूर्णांजन

कणा छागयकृन्मध्ये पक्का तद्रसपेषिता ।
अचिराद्धंति नक्तांध्यं तद्वत्सक्षौद्रमूषणम् ॥

अर्थ—बकरेके कलेजेके मांसमें पीपल भरके अंगारोंपर पाक करे, फिर उस मांसका रस निचोड उस रसमें उस पीपलको पीसके नेत्रोंमें अंजन करे तो रतोंध बहुत जल्दी दूरकरे ॥

## कंडूकाचादिपरलेखनचूर्णांजन

शाणार्द्धं मरिचं द्वौ च पिप्पल्यर्णवफेनयोः ।
शाणार्द्धं सैंधवं शाणानवसौवीरकांजनम् ॥
पिष्टं सुसूक्ष्मं चित्रायां चूर्णांजनमिदं शुभम् ।
कंडूकाचकफार्त्तानां मलानां च विशोधनम् ॥

अर्थ—कालीमिरच आधे शाण, पीपल और समुद्रफेन ये दोदो शाण लेवे, सैंधा निमक आधे शाण, सुर्मा नौ शाण, इन सब औषधोंको जिसदिन चित्रा नक्षत्रहोय उसदिन उत्तमप्रकार पीसके चूर्णकरे; फिर इस चूर्णका नेत्रोंमें अंजन करे तो खुजली, कांच ये दूरहोवे । तथा कफकरके पीडित नेत्रोंके मलको शोधन करेहै ॥

## सर्वनेत्रकेरोगमेंअंजन

शिलायारसकं पिष्ट्वा सम्यगाछाव्य वारिणा । गृण्हीयात्तज्जलं सर्वं त्यजेच्चूर्णमधोगतम् ॥ शुष्कं च तज्जलं सर्वं पर्पटीसंनिभं भवेत् । विचूर्ण्य भावयेत्सम्यक् त्रिवेलं त्रिफलारसैः ॥ कर्पूरस्य रजस्तत्र दशमांशेन निक्षिपेत् । अंजयेन्नयने तेन सर्वदोपहरं हि तत् ॥ सर्वरोगहरं चूर्णं चक्षुषोः सुखकारि च ।

अर्थ—खपरियाको स्याभूसाके खरलमें उत्तम रीतिसें पीस बारीक चूर्ण करे फिर इस चूर्णको पानीमें डाल देवे, और उस पानीको हाथोंसें खूब हिलावे, तत्काल दूसरे पात्रमें कर ले पहले पात्रमें जो बडे २ टुकडे निकले

उनको फेंकदेवे। फिर उसको थोडीदेर धरा रहनेदे इस प्रकार करनेसें वो खप-रियाका सब चूर्ण पानीके तले जम जावेगा उसको दूसरे पात्रमें सुखाय लेवे तो उसकी पपडी जम जावेगी उस पर्पटीका चूर्ण कर उस चूर्णमें त्रिफलेके काढेकी तीन पुट देवे, फिर उस चूर्णका दशवाँ भाग कपूर मिलावे, सबको एक जीव कर इसका नेत्रोंमें अंजन करे तो सर्वदोष और नेत्रके सर्व रोग दूर हो कर नेत्रोंको सुख होवे॥

## सर्वनेत्ररोगोंपरसौवीरांजन

अग्नितप्तं च सौवीरं निषिंचेत् त्रिफलारसैः। सप्तवेलं तथा स्तन्यैःस्त्रीणां सिक्तं विचूर्णितम्॥ अंजयेन्नयने तेन प्रत्यहं चक्षुषे हितं। सर्वानक्षिविकारांस्तु हन्या-देतन्न संशयः॥

अर्थ—सुरमाको अग्निपर तपाय २ के त्रिफलेके काढेमें बुझायदे जब शीतल होजावे तब फिर गरम करे और बुझावे इसप्रकार सातवार बुझावे, इसी प्रकारस्त्रीके दूधमें सातवार बुझावे फिर उसको शीतलकर बारीक चूर्ण कर नेत्रमें अंजनकरे, यह अंजन नेत्रोंको परमहितकारी है। इससें सर्व नेत्रके विकार दूर होते है इसमें संशय नहीं है॥

## शिशेकीसलाईबनानेकाक्रम

त्रिफलाभृंगशुंठीनां रसैस्तद्वच्च सर्पिषा। गोमूत्रमध्व-जाक्षीरैः सिक्तो नागः प्रतापितः॥ तच्छलाका भव-त्येव सर्वान्नेत्रभवान् गदान्॥ नाशयेदितिशेषः॥

अर्थ—शीशेको गलाय २ के त्रिफलेका काढा, भागरेकारस, सोंठकाकाढा, घी, गोमूत्र, सहत, और बकरीका दूध, इन प्रत्येकमें सात २ बार बुझावे, फिर उसकी सलाई बनावे; इस सलाईको नेत्रोंमें फेराकरेतो नेत्रके सर्वविकार दूरहोवे॥

## प्रत्यंजनकरनेकाविधान

गतदोषमपेताश्रु संपश्यन्सम्यगंभसि।
प्रक्षाल्याक्षि यथादोषं कार्यं प्रत्यंजनं ततः॥

अर्थ—उस शीशेकी सलाईसे नेत्रोंमें अंजन करे, जब दोष दूरहोकर नेत्रोंसें पानी गिरजावे तब रोगी एकक्षण शीतलपानीको देखे, फिर उस रोगीके नेत्रों

लसैं धोयके दोषोंके अनुसार फिर नेत्रोंमें प्रत्यंजन करे, उस प्रत्यंजनको कहतेहै ॥

## सदोषनेत्रमेंनिषेध

न वा निर्गतदोषेक्ष्णि धावनं संप्रयोजयेत् ।
प्रत्यंजनं तीक्ष्णतप्ते नेत्रे चूर्णः प्रसादनः ॥

अर्थ—नेत्रोंसैं दोषोंके न निकलने पर नेत्रोको जलसैं धोवे नही, और तीक्ष्णअंजन करके नेत्र संतप्त होनेपर उनमें प्रत्यंजन चूर्णकरे सो आगेके श्लोकोंमें कहा है । अथवा प्रसादनचूर्णकरे ॥

## प्रत्यंजनचूर्ण

शुद्धे नागे द्रुते तुल्ये शुद्धं सूतं विनिक्षिपेत् । कृष्णांजनं तयोस्तुल्यं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ दशमांशेन कर्पूरं तस्मिन् चूर्णे प्रदापयेत् । एतत्प्रत्यंजनं नेत्रगदजिन्नयनामृतम् ॥

अर्थ—शुद्धशीशेको तपावे जब गलजावे तब उसमें बराबरका शुद्धपारा मिलायदे फिर इन दोनेके समान सुरमा मिलायके एककर सबका बारीक चूर्णकरें, तथा सब चूर्णका दशवां भाग भीमसेनी कपूर मिलावे, इसको प्रत्यंजन चूर्ण कहते है । इसके लगानेसैं संपूर्ण नेत्ररोग दूरहो, तथा यह चूर्ण नेत्रोंको अमृतके समान सुखकारी है ॥

## सर्पविषनाशकअंजन

जयपालस्य मज्जा च भावयेन्निंबुकद्रवैः । एकविंशतिवेलं ततो वर्त्तिं प्रकल्पयेत् ॥ मनुष्यलालया घृष्ट्वा ततो नेत्रे तयांजयेत् ॥ सर्पदष्टविषं जित्वा संजीवयति मानवम्

अर्थ—जमालगोटेके भीतरकी मिंगी लेकर चूर्णकरे फिर इसमें नींबूके रसकी २१ इसकी पुट देवे, पीछे इसकी लंबी बत्तीबनावे, इस गोलीको मनुष्यकी लारमें घिसके नेत्रोंमे आंजे यह सांप काटे हुए प्राणीके विषको दूरकर जिवाता है अर्थात् सावधान करताहै ॥

## नेत्ररोगनाशनसुगमोपाय

भुक्त्वापाणितलं घृष्ट्वा चक्षुषोर्यदि दीयते।
जातरोगा विनश्यंति तिमिराणि तथैव च॥

अर्थ—भोजन करनेके पश्चात् हाथोंको धोवे फिर वोही गीले हाथोंकी ह-थेलीको आपसमें घिसकर नेत्रोंमें लगावे तो उत्पन्नहुए नेत्ररोग—तथा तिमिर-रोग आदि संपूर्ण नेत्ररोग दूरहोवे॥

## तथाउपायांतर

शीताम्बुपूरितमुखः प्रतिवासरं यः कालत्रयेण नयन
द्वितयं जलेन। आसिंचति ध्रुवमसौ न कदाचिदक्षि
रोगव्यथा विधुरतां भजते मनुष्यः॥

अर्थ—नित्य दिन दिनमें तीनवार शीतलजलसैं मुखको भरके और दूसरे शी-तलजलसैं नेत्रोंके तीनवार छींटा मारे तो अति दुखदायक नेत्ररोगसंबंधी पीडा कदाचित् नहीं होय। यह उपाय बहुतही सहजका और अत्यत गुणदायकहै सब मनुष्योंको उचित है कि इसको अवश्य किया करे इतनी दत्तरामचौबे की प्रार्थना है॥

---

## अथसंधानविधिः

द्रवेषु चिरकालस्थं द्रव्यं यत्संधितं भवेत्।
आसवारिष्टभेदैस्तु प्रोच्यते भेषजोचितम्॥ १॥

अर्थ—उपयुक्त जलादि द्रव पदार्थोंमें औषध डालके फिर पात्रके मुखको बांध मुद्रादेकर बहुत काल (मास, पक्ष) पर्यंत धरा रहनेदे, फिर उससैं उत्से-क (दारूनिकालनेकी क्रिया) द्वारा एक नवीन पदार्थ उत्पन्न होवे उस क्रि-याको संधान क्रिया कहते है तथा उस औषधोंचित संधान को आसव और अरिष्ट ऐसें दो भेदो करके कहते है॥

## आसवारिष्टयोर्लक्षणम्

यदपक्वौषधांबुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः।
अरिष्टः क्वाथसाध्यः स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम्॥ २॥

अर्थ—अपक्व औषध और जलद्वारा संपादित (बनाएहुए) मद्य (दारू)

को आसव कहते है और काथसें बनेहुए मद्यको अरिष्ट कहते है, इनदोनोंकी मात्रा ४ तोले है ॥

आप्लाव्यसुरया सम्यग् द्रव्याणि विविधानि च ।
सप्ताहान्ते परिस्राव्य रसं वस्त्रेण गालयेत् ॥ ३ ॥
एषोऽरिष्टाभिधानेन भिषग्भिः परिकीर्त्तितः ।
अरिष्टस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः ॥ ४ ॥

अर्थ—दारूमें संपूर्ण द्रव्य भिगोयके सात दिन पर्यंत धरी रहनेदे पश्चात् इसका भवकेके द्वारा रसचुवावे उसको कपडेमें छानके बोतल आदिमें भरके धरदेवे, इसको अरिष्ट कहते । जिस २ द्रव्यको भिगोयके अरिष्ट बनाया जाताहै उसी २ द्रव्यके गुण वो अरिष्ट करता है ॥

## सामान्यतोऽरिष्टविधिः

अनुक्तमानारिष्टेषु द्रवद्रोणे गुडात्तुलाम् ।
क्षौद्रं क्षिपेद्गुडादर्द्धं प्रक्षेपं दशमांशिकम् ॥ ५ ॥

अर्थ—अरिष्ट साधनमें जहां किसी वस्तुका मान न कहाहो वहा नीचे लिखी विधिके अनुसार वर्त्तना चाहिये । जैसे ६४ सेर प्रमाण जल आदि द्रव द्रव्यमें गुड १०० पलले, और सहत गुडसें आधा लेवे, अर्थात् ५० पंचास पलले, तथा प्रक्षेप वस्तु गुडके दशमांश ( दशमाहिस्सा ) अर्थात् १० पल डाले, सबको एकत्र कर यथाविधि अरिष्टको बनाना चाहिये ॥

## द्विविधसीधुमाह

ज्ञेयः शीतरसः सीधुरपक्वमधुरद्रवैः ।
सिद्धः पक्वरसः सीधुः संपक्वमधुरद्रवैः ॥ ६ ॥

अर्थ—अब सीधूकी विधि कहते है; तहा सीधु दो प्रकारकाहै जैसे-शीतरस सीधू बनताहै । अर्थात् ईख आदि अपक्व रसको वासित करनेसे ( धरारखनेसे ) शीतरस सीधू बनताहै । अर्थात् ईखकारस अथवा और कोई मधुर रसको पात्र में भर धरदेवे फिर सातदिनके बाद रस नितारलेवे । इसीप्रकार पके हुए ईखके रसके द्वारा उत्पन्न सीधुको पक्वरससीधु कहते है । सीधुको भाषामें सिर्का कहते है । इसका प्रचार प्राय पूरबके देश ( काशी, पटना, आदि प्रांतोंमें ) अधिकहै

## सुरादिलक्षणम्

दिनानि कतिचित् छिन्नं गुडादौ स्थापयेद्विपक्व ।

ततो विक्लित्तिमापन्नं यंत्रैश्च नाडिकादिभिः ॥ ७ ॥
विधिवत्स्रावयेच्चास्मादन्यपात्रे सृतं रसम् ।
गृण्हीयात्सा सुरा ख्याता तीक्ष्णोष्णवीर्यशालिनी ॥ ८

अर्थ—सुरोपादानद्रव्य ( दारू बनानेकी दवाई ) उन सब गुडादिकको पात्र-में डालके कुछदिन उसी प्रकार धराराखे, जब सब द्रव्य गलजावे ओर वो जल उठ आवे अर्थात् गंधदेनेलगे तब उसको नाडिकादियंत्र द्वारा चुवायके रस निकाल लेवे। इस निकले हुए द्रवपदार्थको सुरा कहते है यह तीक्ष्णवीर्य तथा उष्णवीर्य वाली है ॥

## सुरा प्रसन्नादि मद्योंके भेद

परिपक्वान्नसंधानात्समुत्पन्नां सुरां जगुः ।
सुरामंडः प्रसन्ना स्यात्ततः कादंबरी घना ॥ ९ ॥
तदधो जगलो ज्ञेयो मेदको जगलाद्घनः ।
वक्कसो हृतसारः स्यात्सुराबीजं च किण्वकम् ॥ १० ॥

अर्थ—तंडुलादिक धान्यको सिजाय अग्निके संयोग करके यंत्रद्वारा जो मद्य उत्पन्न करते है उसको सुरा कहते है उस सुराके फेन ( झाग ) को प्रसन्ना कहते है । उस प्रसन्नाके मध्यमें जो घन ( गाढा ) भाग है उसको कादंबरी कहते है । उस सुराके अधोभागमें जो द्रव्य भाग है उसको जगल कहते है और उस जगल सैं भी गाढे भागको मेदक—उस मेददको पक्क करके उसमेंसैं सारकाढके शेप रहे हुए पदार्थको सुराबीज अथवा किण्व कहते है ॥

## वारुणी

यत्तालखर्जूररसैः संधिता साहि वारुणी ।

अर्थ—ताडकारस अथवा खजूरके रससै संधानक्रिया द्वारा वारुणी उत्पन्न हो, अर्थात् ताड अथवा खर्जूरके रससै अग्निके संयोगकरके यंत्रद्वारा जो पदार्थ उत्पन्न करते है उसको वारुणी कहते, इस वारुणी मद्यको भाषामें ताडी कहते है

## शूक्त

कन्दमूलफलादीनि सस्नेहलवणानि च ॥ ११ ॥
यत्रद्रवेऽभिषूयंते तच्छूक्तमभिधीयते ॥

अर्थ—अनेक प्रकारके कद, मूल, फलादि, स्नेह, और सैंधानिमक, इनको

पानी आदि द्रवपदार्थमें डालके कुछदिन धरारहनेदे जब उठआवे तब काममेलावे उसको सूक्त कहते हैं। भाषामें सूक्तको अचार, वा अथाना, वा संधाना, कहते है जैसें आमका नींबूका अचार॥

विनष्टमम्लतां यातं मद्यं वा मधुरद्रवैः॥ १२॥
विनष्टः संधितो यस्तु तच्छूक्तमभिधीयते।

अर्थ—मद्य विनष्टहोकर खटाई आयजावे अथवा कोई मीठी द्रव्यको पात्रमें बंदकर मुखपर मुद्रा देकर महिना या पक्षपर्यंत धरा रहनेदे जब सिद्धहोय उस मद्यको शुक्त ( चूक ) कहते है॥

## गुडशूक्त

गुडाम्बुना सतैलेन कन्दशाकफलैस्तथा॥ १३॥
संधितश्चाम्लतां यातं गुडशूक्तं तदुच्यते॥

अर्थ—गुड, पानी, तैल, कंद, मूल, फल, साक, इन सबको किसी पात्रमें भरके मुखबंद कर १ महिने या पंद्रह दिन धरा रहनेदे जब खटाई आयजावे तब कार्यमें लावे इसे गुडशूक्त कहते है॥

एवमेवहि सूक्तं स्यान्मृद्वीका संभवस्तथा॥१४॥

अर्थ—इसीप्रकार ईखका तथा दाखका शूक्तभी बनताहै॥

## तुषांबुऔरसौवीर

तुषाम्बुसंधितं ज्ञेयमामैर्विदलितैर्यवैः।
यवैस्तुनिस्तुपैः पक्वैः सौवीरं साधितं भवेत्॥ १५॥

अर्थ—निस्तुप कच्चे जौ कूट उसमें पानी डाल किसीपात्रमें भरके थोडेदिन धरा रहनेसे जब खटाई आयजावे उसको तुषांबु कहतेहै। और भुनेहुए—अथवा सीजे हुए जो कूट पानीडाल खटाई आने पर्यंत धरारहनेदे उसको सौवीर कहते है

## ग्रंथांतरे

सौवीरस्तु यवैरामैः पक्वैर्वा निस्तुपीकृतैः।
गोधूमैरपि सौवीरमाचार्याः केचिदूचिरे॥ १६॥

अर्थ—अपक्व अथवा पक्व निस्तुप जौंको सधित ( पूर्वोक्तक्रिया ) करनेसें सौवीर बनताहै। किसी २ वैद्यके मतसें गेहूं द्वाराभी सौवीर ( पूर्वोक्त क्रियासे बनताहै )॥

## आरनाल

आरनालस्तुगोधूमैरामैः स्यान्निस्तुषीकृतैः ।
पक्वैर्वा संहितं तत्तु सौवीरसदृशं गुणैः ॥ १७ ॥

अर्थ—कच्चे अथवा पक्के निस्तुप गेहूंलेकर संहित ( साधित ) करनेसैं आरनाल उत्पन्न होताहै, इसके गुण सौवीरके समान जानने ॥

## कांजिक

संधितंधान्यमण्डादि कांजिकं कथ्यते जनैः ।

अर्थ—धान्य के मंडादिसैं साधितको कांजी कहते है ॥

## सांडाकी

सांडाकी संधिता ज्ञेया मूलकैः सर्षपादिभिः ॥१८॥

अर्थ—ओर मूली तथा सरसो आदिका वना रसउसमें पानीडाल हलदी,-हींग,-राई, सैंधानिमक,-जीरा,-सोंठ,-इसादिका चूर्ण डालके पात्रका मुख वंद-कर तीन चार दिन धरा रहनेदे इसको मांडाकी कहते है ॥

त्पिहितं प्रयत्नात् ततस्तु कल्कं सकलं निरस्येत्तत्
कांजिकं कथ्यत आरनालम् । तद्भेतितीक्ष्णं लघुपा-
चनं च दाहज्वरघ्नं कफवातनाशि ।

अर्थ—१२॥ साडे वारह सेर स्वच्छ सांठी चांवल लेवे, उनको ६४ सेर जलमें भिगोय देवे, इस प्रकार उनको रक्षापूर्वक सात दिन भीगनेदे, वाद सातदिनके उसको छानके पानी नितारले, इस कल्कको आरनाल अथवा कांजी कहते है, यह दस्तकरानेवाली, तीक्ष्णगुणयुक्त, हलकी, और पाचनहै तथा दाह, ज्वर और कफवातको नाशकरती है। परंतु हमारेदेशमे इसको कांजी नहीं कहते, हमारे राईके पानीमें उडदके वडा भीगोनेसें जो बनती है उसको कांजी कहते

---

यद्यपि भूमिपरीक्षा देशपरीक्षामें लिखआए हे परंतु यहांपर यह पूर्वपरीक्षासें भिन्नहै सो नीचेके अर्थमें दिखामे हे यह सुश्रुतसें लिखते है ॥

---

## अथातोभूमिप्रविभागविज्ञानीयाध्यायंव्याख्यास्यामः

अर्थ—अब हम भूमिप्रविभाग विज्ञानीयाध्यायका वर्णन करैंगे अर्थात् भूमिका जो उत्तम भाग उसके अर्थका विज्ञान जिस अध्यायमें उसकी व्याख्या करैंगे। यद्यपि आतुरोपक्रमणीयाध्यायके देशवर्णनमें भूमिपरीक्षा कहीं है परतु वह परीक्षा भूतोंके[१] कार्य (शीतोष्णवर्षादिको) करके तथा पर्वतवृक्षादिको करके करी है। और इस भूमिप्रविभागविज्ञानीयाध्यायमें खास भूतगणोंकरके[२] परीक्षा करीहै यहभेदहै। वो पृथ्वीका विभाग दोप्रकारका है, एकसामान्य और दूसरा-विशिष्ट वहां प्रथम सामान्य भूमिविभागको कहतेहै ॥

### सामान्यभूमिभागकावर्णन

श्वभ्रशर्कराश्मविषमवल्मीकश्मशानाऽघातनदेवता-
यतनसिकताभिरनुपहतामनूपराममंगुरामदूरोदकां

१ भूतशब्दसें पृथ्वी जल आदि पंचभूत जानने इनके शीतत्व उष्णता आदि कार्य जानने। २ भूतगुण अर्थात् पृथ्वी जल आदिके गुण काले पीले कठोर मृदु आदिजानने।

स्निग्धां प्ररोहवतीं मृद्वीं स्थिरां समां कृष्णां गौरीं लोहितां वा भूमिमौषधार्थं परीक्षेत तस्यां जातमपिक्रिमिविषशस्त्रातपपवनदहनतोयसम्बाधमार्गैरनुपहतमेकरसं पुष्टं पृथ्ववगाढमूलमुदीच्यां चौषधमाददीतेत्यौषधभूमिपरीक्षाविशेषः सामान्यः ॥

अर्थ—जो पृथ्वी सर्प मूसेआदिके विले, शर्करा, पत्थर, आदिसैं विषम अर्थात् ऊंची नीची न हो तथा वाँवी, श्मशान, वधस्थान, देवस्थान, और वालूरेत आदिसैंदूषितनहो, ऊपर नहो, रेखावाली नहो, जिस्मे वहुत नीचापानी नहो, चिकनी, वीजमेअंकुरोत्पादक, कोमल, स्थिर ( पानी और हवासे जिसको मिट्टी न जाय ) समान अर्थात् एकसी, काली, गौरी, ( सुवर्णके समान वर्णवाली ) लोहित ( लाल रंगकी ) इत्यादि गुणवाली पृथ्वी की परीक्षा औषधग्रहण ( औषधलानेके ) अर्थकरे ॥

अव कहते है कि केवल पृथ्वीके गुणोंकरकेही औषधोंको ग्रहण न करे, किंतु औषधोंके दोष गुणकोभी विचार करके औषधलेनी यह दिखाते है ॥

तहां उक्तपृथ्वीमें भी उत्पन्नहुई, जो कृमि ( कीडा ) विष, शस्त्र धूप, हवा, अग्नि, संकट,और मार्ग ( रस्ता ) इत्यादि करके दूषित ( विगडी हुई ) नहो, जिसमें एकरस ( उत्कृष्टरस ) हो, देखनेमेंपुष्टहो तथा जिसकी पृथ्वीके भीतर दूरतक जड चलीगईहो [ चकारसैं वो जडभी उत्तमहो दूषित नहो ] इत्यादि गुणविशिष्ट औषधको वैद्य उत्तरामुख करके उखाडे । यह औषध भूमिकी परीक्षासामान्यता करकेकही है ॥

इस प्रकार सामान्य पृथ्वीके गुणोंको कहकर अव विशेष गुण प्रत्येक भूतोंको दिखाते है ॥

## स्वगुणभूयिष्ठपृथ्वीके गुण

विशेषतस्तु । तत्राश्मवती स्थिरा गुर्वी श्यामा कृष्णा वा स्थूलवृक्षशस्यप्राया स्वगुणभूयिष्ठा ।

---

१ आगे रसायनके प्रकर्णमें कपोती नामकी रूखडीको वाँवीपरसैं लाना लिखाहै फिर निषेध क्यों करा ! तहाँ कहते है कि दिव्योषधियोंका वीर्य सर्पादि विषसैं नष्ट नहीं होता अथवा वो उसी जगे ऊगनेमे अधिक वीर्यवाली होती है । २ जहां मुर्दे जलाए जाते है ।

अर्थ–अब विशेषता दिखाते है कि जो पृथ्वी पत्थरवाली, (पथरीली-ककरीली,) कठोर, भारी, कालेरंगकी, अथवा स्याम रंगकीहो तथा जिसमें वडे २ पुष्टवृक्ष-( दरख्त ) और लंबी २ घास आदि तृणहो, वो पृथ्वी ( जमीन ) स्वगुणभूयिष्ठं अर्थात् पृथ्वीगुण भूयिष्ठ जाननी ॥

## जलगुणभूयिष्ठपृथ्वी

स्निग्धा शीतलासन्नोदका स्निग्धशस्यतृणकोमलवृ-
क्षप्राया शुष्काम्बुगुणभूयिष्ठा ।

अर्थ—जोपृथ्वी चिकनी, शीतल, जलप्राय, अर्थात् जिसमें समीपही जलहो तथा जिसमें सचिक्कण, छोटी २ और वडी घांस ( दूव आदितृण ) हो, कोमलवृक्ष, और प्राय सर्वत्र गीलीहो वो जमीन जलगुणभूयिष्ठ जाननी अर्थात् इसमें जलका भाग अधिक रहताहै ॥

## अग्निगुणभूयिष्ठपृथ्वी

नानावर्णा लघ्वश्मवती प्रविलाल्पपाण्डुवृक्षप्ररोहा-
ऽग्निगुणभूयिष्ठा ॥

अर्थ—जो पृथ्वी अनेकवर्णकी, हलकी पथरीली, कहींकहीं थोडे और पीले वृक्षादिकहो वो जमीन अग्निगुणभूयिष्ठ जाननी, अर्थात् इसमें अग्निका गुणअधिक जानना ॥

## पवनगुणभूयिष्ठपृथ्वी

रुक्षाभस्मरासभवर्णा तनुरूक्षकोठराल्परसवृक्षप्राया-
ऽनिलगुणभूयिष्ठा ॥

अर्थ—जोपृथ्वी रूखी, भस्म ( खाक ) और गद्धेके वर्णसमान खाकी रंगकी हो तथा जिस्मे छोटे २ रूखे, पोले, थोडे रसवाले असे वृक्षहो वो जमीन पवनगुण भूयिष्ठ जाननी । अर्थात् इसमें पवनका गुण अधिक है ॥

## आकाशगुणभूयिष्ठपृथ्वी

मृद्वी समा श्वभ्रवत्यव्यक्तरसजला सर्वतोऽसारवृक्षा
महापर्वतवृक्षप्राया श्यामाचाकाशगुणभूयिष्ठा ॥

अर्थ—जो पृथ्वी नरम, समान, गड्ढेवालीहो, तथा जिसमे रस हीन ( मल-

१ इसमें पृथ्वीका अंश अधिक रहता है ।

स्निग्धां प्ररोहवतीं मृद्वीं स्थिरां समां कृष्णां गौरीं लोहितां वा भूमिमौषधार्थं परीक्षेत तस्यां जातमपिक्रिमिविषशस्त्रातपपवनदहनतोयसम्बाधमार्गैरनुपहतमेकरसं पुष्टं पृथ्ववगाढमूलमुदीच्यां चौषधमाददीतेत्यौषधभूमिपरीक्षाविशेषः सामान्यः ॥

अर्थ—जो पृथ्वी सर्प मूसेआदिके बिले, शर्करा, पत्थर, आदिसैं विषम अर्थात् ऊंची नीची न हो तथा बाँवी, श्मशान, वधस्थान, देवस्थान, और बालूरेत आदिसैंदूषितनहो, ऊपर नहो, रेखावाली नहो, जिस्मे बहुत नीचापानी नहो, चिकनी, बीजमेंअंकुरोत्पादक, कोमल, स्थिर ( पानी और हवासैं जिसको मिट्टी न जाय ) समान अर्थात् एकसी, काली, गौरी, ( सुवर्णके समान वर्णवाली ) लोहित ( लाल रंगकी ) इत्यादि गुणवाली पृथ्वी की परीक्षा औषधग्रहण ( औषधलानेके ) अर्थकरे ॥

अब कहते है कि केवल पृथ्वीके गुणोंकरकेही औषधोंको ग्रहण न करे, किंतु औषधोंके दोष गुणकोभी विचार करके औषधलेनी यह दिखाते है ॥

तहां उक्तपृथ्वीमें भी उत्पन्नहुई, जो कृमि ( कीडा ) विष, शस्त्र धूप, हवा, अग्नि, संकट,और मार्ग ( रस्ता ) इत्यादि करके दूषित ( बिगडी हुई ) नहो, जिसमें एकरस ( उत्कृष्टरस ) हो, देखनेमेंपुष्टहो तथा जिसकी पृथ्वीके भीतर दूरतक जड चलीगईहो [ चकारसैं वो जडभी उत्तमहो दूषित नहो ] इत्यादि गुणविशिष्ट औषधको वैद्य उत्तरामुख करके उखाडे । यह औषध भूमिकी परीक्षासामान्यता करकेकही है ॥

इस प्रकार सामान्य पृथ्वीके गुणोंको कहकर अब विशेष गुण प्रत्येक भूतोंको दिखाते है ॥

### स्वगुणभूयिष्ठपृथ्वीके गुण

विशेषतस्तु । तत्राश्मवती स्थिरा गुर्वी श्यामा कृष्णा वा स्थूलवृक्षशस्यप्राया स्वगुणभूयिष्ठा ।

---

१ आगे रसायनके प्रकर्णमें कपोती नामकी रूखडीको बाँबीपरसैं लाना लिखाहै फिर निषेध क्यों करा ? तहां कहते है कि दिव्यौषधियोंका वीर्य सर्पादि विषसैं नष्ट नहीं होता अथवा वो उसी जगे ऊगनेसै अधिक वीर्यवाली होती है । २ जहां मुर्दे जलाए जाते है ।

अर्थ—अब विशेषता दिखाते है कि जो पृथ्वी पत्थरवाली, (पथरीली-ककरीली,) कठोर, भारी, कालेरंगकी, अथवा स्याम रंगकीहो तथा जिस्में बडे २ पुष्टवृक्ष-( दरख्त ) और लंबी २ घास आदि तृणहो, वो पृथ्वी ( जमीन ) स्वगुणभूयिष्ठं अर्थात् पृथ्वीगुण भूयिष्ठ जाननी ॥

## जलगुणभूयिष्ठपृथ्वी

स्निग्धा शीतलासन्नोदका स्निग्धशस्यतृणकोमलवृ-क्षप्राया शुष्काम्बुगुणभूयिष्ठा ।

अर्थ—जोपृथ्वी चिकनी, शीतल, जलप्राय, अर्थात् जिसमें समीपही जलहो तथा जिसमें सचिक्कण, छोटी २ और बडी घांस ( दूब आदितृण ) हो, कोमलवृक्ष, और प्राय सर्वत्र गीलीहो वो जमीन जलगुणभूयिष्ठ जाननी अर्थात् इसमें जलका भाग अधिक रहताहै ॥

## अग्निगुणभूयिष्ठपृथ्वी

नानावर्णा लघ्वश्मवती प्रविलाल्पपाण्डुवृक्षप्ररोहा-ऽग्निगुणभूयिष्ठा ॥

अर्थ—जो पृथ्वी अनेकवर्णकी, हलकी पथरीली, कहींकहीं थोडे और पीले वृक्षादिकहो वो जमीन अग्निगुणभूयिष्ठ जाननी, अर्थात् इसमें अग्निका गुणअधिक जानना ॥

## पवनगुणभूयिष्ठपृथ्वी

रूक्षाभस्मरासभवर्णा तनुरूक्षकोठराल्परसवृक्षप्राया-ऽनिलगुणभूयिष्ठा ॥

अर्थ—जोपृथ्वी रूखी, भस्म ( खाक ) और गद्धेके वर्णसमान खाकी रंगकी हो तथा जिस्मे छोटे २ रूखे, पोले, थोडे रसवाले असे वृक्षहो वो जमीन पवनगुण भूयिष्ठ जाननी । अर्थात् इसमें पवनका गुण अधिक है ॥

## आकाशगुणभूयिष्ठपृथ्वी

मृद्वी समा श्वभ्रवत्यव्यक्तरसजला सर्वतोऽसारवृक्षा महापर्वतवृक्षप्राया श्यामाचाकाशगुणभूयिष्ठा ॥

अर्थ—जो पृथ्वी नरम, समान, गड्ढेवालीहो, तथा जिसमे रस हीन ( मल-

१ इस्में पृथ्वीका अंश अधिक रहता है ।

मलेखादके ) जलहो, सारहीनवृक्ष, वडे २ पर्वत और वडे २ वृक्ष जिसमें सर्वत्रहो तथा रंगमें स्यामहो वो जमीन आकाश गुण भूयिष्ठ जाननी अर्थात् इसमें आकाशका गुण अधिक है ॥

पंचभूतोंके गुणकहनेसैं यह प्रयोजनहै कि प्रत्येक वमन विरेचनादिमें अपने २ गुणभूयिष्ट दवाईलेनी, जैसै वमनकी औषध आकाशगुण भूयिष्ट होती है तो उनको आकाशगुणभूयिष्ठ जमीनसैं लेनी इसी प्रकार जुल्लावमें जलगुणभूयिष्ट होनेवाली औषधी जलगुणभूयिष्ठ पृथ्वीसैं वैद्य लेवे, कारण यह कि स्वगुणभूयिष्ठ औषधी बलवान् होती है ॥

## औषधग्रहणमेंमतभेद

तत्र केचिदाहुराचार्य्याः । प्रावृड्वर्षाशरद्धेमन्तवसन्तग्रीष्मेषु यथासंख्यं मूलपत्रत्वक्क्षीरसारफलान्याददीतेति, तत्तु न सम्यक् कस्मात् सौम्याग्नेयत्वाज्जगतः । सौम्यान्यौषधानि सौम्येष्वृतुष्वाददीताग्नेयान्याग्नेयेष्वेवमव्यापन्नगुणानि भवन्ति । सौम्यान्यौषधानि सौम्येषु ऋतुषु गृहीतानि सोमगुणभूयिष्ठायां भूमौ जातान्यतिमधुरस्निग्धशीतानि जायन्ते । एतेन शेषं व्याख्यातं ।

अर्थ—तहां कोई २ आचार्य कहते है कि प्रावृट्, वर्षा, शरद, हेमंत, वसंत और ग्रीष्म इन ऋतुओंमें यथाक्रम जड, पत्ते, त्वचा, दूध, सार, और औषधोंके फललेने चाहिये ॥ परंतु यहमत उत्तम नहीं है, क्योकि यह जगत सौम्य और आग्नेयके भेदसे दोही प्रकारका है, जब दोप्रकारका जगहै तब सौम्य ( शीतल ) औषधोंको सौम्यऋतु ( शरद, हेमंतादि ) में लेवे, और आग्नेय ( गरम ) औषध गरमऋतु ( ग्रीष्मआदि ) में लेवे तो ये निर्दोष गुणवाली होती है । सौम्य औषध सौम्यऋतुओंमें ग्रहणकरीगई तथा सौम्यगुण भूयिष्ट पृथ्वीमें उत्पन्न, हुई वो अत्यंत मधुर स्निग्ध और शीतल होती है । इसीप्रकार आग्नेय औषधी आग्नेय ऋतुओंमें ग्रहण करीगई तथा आग्नेयगुणभूयिष्ठ पृथ्वीमें उत्पन्नहुई वो अत्यंत–तीक्ष्ण–और-रूक्ष और गरमहोती है ॥

## विरेचनादिद्रव्यकिसपृथ्वीकीलेनी

तत्र पृथिव्यम्बुगुणभूयिष्ठायां भूमौ जातानि विरे-

चनद्रव्याण्याददीताम्याकाशमारुतगुणभूयिष्ठायां व-
मनद्रव्याणि । उभयगुणभूयिष्ठायामुभयतो भागानि ।
आकाशगुणभूयिष्ठायां संशमनान्येवं बलवत्तराणि भवन्ति ॥

अर्थ—तहां पृथ्वी और अंबु ( जल ) गुणभूयिष्ट पृथ्वीमें उत्पन्न होने वाली ऐसी विरेचन अर्थात् दस्तकारी औषधोंको वैद्य लेवे । और आकाश पवन गुणभूयिष्ट पृथ्वीमें उत्पन्नहो ऐसी वमन करानेवाली औषधोंको वैद्य लेवे । एवं दोनोगुण अर्थात् आकाश और पृथ्वीमें-तथा जल और पवन गुणभूयिष्ठ पृथ्वीमेंसे वमन विरेचन दोनो कराने वाली औषधोंको वैद्यलेवे । एवं आकाशगुण भूयिष्ठ पृथ्वीमें उत्पन्न होनेवाली औषधी संशमन[१] संज्ञक औषध होती है उनको उसी स्थानसें लेवे ॥

सर्वाण्येवचाभिनवान्यन्यत्र मधुघृतगुडपिप्पलीविड-
ङ्गेभ्यः । सर्वाण्येवंसक्षीराणि वीर्यवन्ति तेषामसम्प-
त्तावनतिक्रान्तसंवत्सरान्याददीतेति ॥

अर्थ—वैद्यको उचितहै कि जितनी औषधले सव नवीन ले परंतु सहत, घी- गुड, पीपल और वायविडंग ए पुरानेही लेना [ तथा दोष वर्जित अर्थात् कृमि-विषादि दोष रहित औषधी लेना ] एवं सब क्षीर [ दूधवाली वा रसवान् ] ले कारण की रस औषध वीर्यवान् होती है कदाचित् कहे हुए लक्षण वाली औषध न मिले तो फिर कैसाकरे तहां कहते है कि यदि पूर्वोक्त गुणवान् औषध न मिले अर्थात् सहत घृत आदि पुराने तथा औषधी आदि नवीन न मिले तो जिनको लाए वर्षदिन न हुआहो ऐसी औषध लेवे ॥

## औषधजाननेकाउपाय

भवन्ति चात्र ॥
गोपालास्तापसा व्याधा ये चान्ये वनचारिणः ।
मूलाहाराश्च ये तेभ्यो भेषजव्यक्तिरिष्यते ॥

अर्थ—गोपाल ( गौ, भैस, बकरी, आदिके पालन करने वाले चरवाहे ) तपस्वि ( जटाधारी, स्थंडिलशायी आदि ) व्याध ( सिकारी, अहेरिया आदि ) वनचारी ( भील, चुआड, गौण, माली, काछी, वंजारे, नाथ, कालवेलिया,

१ जो द्रव्य न वमन करावे न दस्त करावे किंतु रोगके साथमें एकीभूतहो उस व्याधिको शमन करे उसको संशमन संज्ञक औषधी कहते है ।

इत्यादि ) तथा मूलफलकंदभक्षणकर्त्ता तपस्वि इनसैं औषधका स्वरूप और नाम मालूमहो सक्तेहै। अर्थात् उक्तप्राणी नित्य वनमें रहा करते है अतएव इनको सब वनस्पती, बूंटी, आदिकी पहचान होती वैद्यको उचित है कि इनके सकाससैं औषधोंको जाने ॥

सर्वावयवसाध्येषु पलाशलवणादिषु । व्यवस्थितो न कालोऽस्ति तत्र सर्वो विधीयते ॥ ३ ॥

अर्थ—संपूर्ण मूलादि अवयव ग्राह्य ऐसैं पलाश लवण अर्थात् पत्रलवणादि[1] योगोंमें जहां कालकी मर्यादा नहीं कही वहां पर संपूर्ण(प्रावृडादि) काल जानना

गन्धवर्णरसोपेता षड्विधा भूमिरिष्यते ।
तस्माद्भूमिस्वभावेन बीजिनः षड्रसायुताः ॥

अर्थ—वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, शब्द, और सर्व लक्षणा ऐसैं छःप्रकारकी पृथ्वी है अतएव इस पृथ्वी के स्वभावसैंही वृक्षादिकभी षड्रस करके युक्त है अथवा ए छःरस भूमि के स्वभावसैं मिलकर वृक्षादिरूपसै प्रगट होतेहै ॥

अब कहते है कि द्रव्योंके परिणाम विशेषकरके मधुरादि रस होते है फिर आप 'आप्योरसः' अर्थात् रस है सो आप्य है ऐसा क्यो कहते है तहां कहते है ॥

अव्यक्तः किल तोयस्य रसो निश्चयनिश्चितः ।
रस एव स चाव्यक्तो व्यक्तो भूमिरसाद्भवेत् ॥

अर्थ—जलका रस ( मधुरादि भावकरके ) अप्रकट है यह प्रमाण निश्चय है अर्थात् जलमें रसतो है परंतु मीठा वा खरी है यह निश्चय नही है, तहां वही अप्रकट रस भूमिके रससैं प्रगट होता है ॥

भूमिद्रव्यकाकारणकहतेहै

सर्वलक्षणसम्पन्ना भूमिः साधारणा स्मृता ।
द्रव्याणि यत्र तत्रैव तद्गुणानि विशेषतः ॥

अर्थ—सर्वलक्षण ( पृथिव्यादि पंच महाभूत लक्षणों करके ) युक्त पृथ्वी साधारण कही है ऐसी साधारण पृथ्वीकी द्रव्य ( औषधी ) विशेषकरके साधारण गुणवाली जाननी ॥

---

१ पत्रलवणका योग वातव्याधिमें कहाहै सो वैद्योंको देखलेना ।

## नवीनवापुरानीकैसीद्रव्यलेनी

विदग्धे नापरामृष्टमविपन्नं रसादिभिः ।
नवं द्रव्यं पुराणं वा ग्राह्यमेव विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—जो औषधी विरोधी गंध करके स्पर्श न करी गई हो [ अर्थात् जिसमें जोसुगंध आया करे उससे विपरीत गंध न आवे जैसे गुलाबमे प्याजकीगंध, ] और रसादि करके क्षीण न हो अर्थात् रसादि संपन्नहो, ऐसी नवीन अथवा प्राचीन लेनी चाहिये ॥

विडङ्गं पिप्पली क्षौद्रं सर्पिश्चाप्यनवं हितं ।
शेषमन्यत्त्वभिनवं गृह्णीयाद्दोषवर्जितं ॥ ४ ॥

अर्थ—तहां वायविडंग, पीपल, सहत, और घी, ए पुराने लेवे इससैं अन्य औषधी सब नवीन और पूर्वोक्त विषादि दोष रहित लेनी चाहिये ॥

इसप्रकार स्थावरोंको कहकर अब जंगमों को कहते है ॥

जङ्गमानां वयःस्थानां रक्तरोमनखादिकं ।
क्षीरमूत्रपुरीषाणि जीर्णाहारेषु संहरेत् ॥

अर्थ—तहां वयस्थ जंगम[1] ( अर्थात् ) तरुण प्राणीयों के रुधिर, रोम, और नखादिक लेवे, और यदि इनके क्षीर, मूत्र गोवर लीद आदि लेने होयतो जब इनका आहार पचजावे तब लेवे, अजीर्णवस्थाका नलेय ॥

## औषधरखनेकाउपाय

प्लोतमृद्भाण्डफलकशङ्कु, विन्यस्तभेषजं ।
प्रशस्तायां दिशि शुचौ भेषजागारमिष्यते ॥ ५ ॥

अर्थ—इन औषधोंको[2] कपडेके टुकेडोमें, मिट्टीके वासन ( इमरतवान् हांडी,

---

१ जंगम शब्दसैं सजीव चलने फिरनेवाले मनुष्य, घोडा, हाथी, शेर, बकरी, मेंढा, हरिण, मुरगा, आदि जानने । जंगम प्राणी जो जवान होते है उनके मांस, रुधिरादिभी अधिक वीर्यवाले होते है । और बच्चे, तथा बुड्ढे निर्बली और हीनवीर्य होते है । इस वास्ते इस जगे [ वयस्थ ] ऐसा पद धरा है ।

२ जो दानेदार औषधहै उनको कपडेमें बांधके धरे, जो चूर्ण आदि हैं उनको मिट्टीके पात्र तथा शीशी आदिमें धरे परंतु उनके ऊपर नाम लिखदेवे कि जिससैं भूल न हो । जो लंबी और भारी वस्तुहै उनको तक्ते आदिपर धरे, और जो रुखडी जडी

चीनीके प्याले, सकोरा, गागर, मांट, तथा शीशीआदि ) फलक (तक्ता, पट्टी) और शंकु ( कील, मेख, ) इनमें धरी है औषधी, जिसमें असा औषधालय पूर्व अथवा उत्तर दिशा और पवित्र स्थानमें होना चाहिये ॥

पिछाडी वस्ती प्रकरणमें लिख आए है कि औषधोंके गण आगे कहेंगे, इस वास्ते अब द्रव्यसंग्रहणीयाध्यायकरके औषधोंके ३७ गण कहते है ॥

---

## अथातो द्रव्यसंग्रहणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः।

अर्थ—अब हम द्रव्यसंग्रहणीय अध्यायका वर्णन करेंगें, तहां संग्रह शब्दसें संक्षेपार्थलेना अर्थात् द्रव्योंका संक्षेप मुख्यकरके करी अध्याय उसका हम व्याख्या करेंगें, द्रव्योंका विस्तारसें वर्णन आगे चिकित्सा खंडमें कराजायगा जैसें इसी अध्यायके अंतमें लिखेंगे 'समासेन गणा ह्येते प्रोक्तास्तेषां तु विस्तरम्। चिकित्सितेषु वक्ष्यामि ज्ञात्वा दोषबलाबलम् " जैसे इस सुश्रुतमें ३७ गणकहे है उसीप्रकार वाग्भटके शोधनादिगणसंग्रहाध्यायमें ३३ ही औषधोंके गण कहेहै

---

आदि है उनको डोरसें बांधके कील, खूटी, मेख आदिमें लटकाय देवे। तेल घृत आदि को कुप्पी, चिकने वासन, आदिमें वैद्य एक सुडोल रीतिसें अपने औषधालयमें धरे कि जिसें मकानभी सजजाय और औषधभी न विगडे तथा वखतपर शीघ्र मिलजावे।

३ पवित्रस्थान कहनेका यह प्रयोजन है कि जो सपेदी आदिसें स्वच्छ तथा नीचें कूडे आदिसें रहित, जिसमें उत्तम ऊंचे २ द्वार हो जिस्से पवनका संचार अच्छे प्रकारहो, और उज्वल चांदनी आदि कपडे बिछेहो, तथा ऊपरभी ऐसेही तने हो, तथा उस मकानके और पास दुर्गंध न हो, इत्यादिक सामिग्रीसें पवित्रहो, ऐसा न होवे कि कहीं कुछ रूखडी पडी है, कहीं कूडेका ढेर लगाहै, पासही टूटे फटे जूतेके जोडे पडे है, पुराना धुराना कुछ बिछैया बिछाहै, मकानकी छत्त और भीतोंसें मिट्टीकी वर्षा होरही है मक्खी भिन भिनाती है, दुर्गंधआती है, टूटे फूटे वासनोंसे कुछ दवाई धरतीमें फैल रही है, कुछ उस पात्रमें है। पोथी पत्तरे अस्तव्यस्त पडे है कुरूप और मलीन असे औषध बनानेके पात्र कहीं पडेहै इत्यादि अनेक कारणोंसे अपवित्रता होती है। उससे वैद्यको सदैव सावधान रहना चाहिये ॥

यह वैद्य अन्यरोगी आदिको स्वच्छ रहनेकी आज्ञा देताहै फिर दीपकके नीचे अंधकारहो तो रोगिजन क्या कहेंगे। देखो डांक्टर लोक वैसी अस्पताल और अपने मकानकी स्वच्छता रखते है और उनहीका अनुकरण सीखो ॥

## तहांअध्यायकापिंडार्थ

**समासेन सप्तत्रिंशद्द्रव्यगणा भवन्ति तद्यथा ।**

अर्थ—संक्षेपसें द्रव्योंके सैंतीस गण होते है, जैसे—आगे लिखते है ॥

## विदारीगंधादिगण

**विदारिगन्धा विदारी सहदेवा विश्वदेवा श्वदंष्ट्रा पृथक्पर्णी शतावरी सारिवा कृष्णसारिवा जीवकर्षभकौ महासहा क्षुद्रसहाबृहत्यौ पुनर्नवैरण्डौ हंसपादी वृश्चिकाल्य् षभीचेति ।**

**विदारीगन्धादिरयं गणः पित्तानिलापहः ।**
**शोषगुल्माङ्गमर्दोर्द्ध्वश्वासकासविनाशनः ॥ १ ॥**

अर्थ—विदारीगंधा ( शालपर्णी ) विदारीकंद, सहदेवा ( सहदेई ) विश्वेदेवा ( गगेरन गुडसकरीनामसेंप्रसिद्ध ) स्वदंष्ट्रा ( गोखरू ) पृथक्पर्णी ( पिठवन ) शतावर, सारिवा, कृष्णसारिवा, जीवक, ऋषभक, महासहा ( मासपर्णी ) क्षुद्रसहा ( मुद्रपर्णी ) बृहती ( छोटेफलकी और बडेफलकी दोना कटेरी ) पुनर्नवा ( सांठ ) अंड, हंसपदी, वृश्चिकाली ( मेढासिंगीकाभेद ) और ऋषभी ( कौंच, किवाच )

ये ऊपर लिखीहुई संपूर्ण औषध विदारीगंधादिगण जानना । यह पित्त, वा-

---

१ विदारीकंद कोहला ( पेठे ) के समान लाल फलका होताहै । इसके दो भेदहै–पेहला लंबाकंद और बहुत दूधवाला, दूसरा हाथीके पैरके समान बहुतथोडा दूधवाला होताहै । ये पूरबके देशोंमें बहुत मिलताहै । सारिवा जामुनके पत्तेसमान पत्तेवाली दूधवालीबेल इसी नामसें प्रसिद्धहै. । २ कृष्णसारिवा छिलहिंटाके समान पत्तेवाली और उसमें चदनकीसी सुगंध आती है, भाषामें कालीबेल कहते है । ४ हंसपदीइसके पत्ते हंसके पैरके सदृश होते है, और पीलाफूल–तथा जलमूल गयाहो उस पृथ्वीमें होताहै. लोकमें हंसराज कहते है; परंतु हंसराज यह नहीं है । इसकी परीक्षा और रूप हम इसी बृहन्निघंटुरत्नाकरके निघंटभागमें लिखेंगे । ५ वृश्चिकाली रूखडी कांटेवाली मेढाके सींगके समान ऊंचे फलवाली होती है । कोई कहताहै कि पाढकेसे पत्ते–कुछ २ रूआं वाली सफेद फूलकी दक्षिणावर्त्त बेलमेढासिंगीका भेद होताहै ॥

वाग्भटमें देवदारू तथा जीवनीयगणको इसीगणमें लिखाहै ॥

दी, शोप ( राजयक्ष्मा ) अंगमर्द ( अंगोकाटूटना ) उर्द्धश्वास, और खांसीको दूरकरे है ॥

वातपित्त हरण करने सैं इस गणको दोप नाशक और शोपादि हरण करने सैं इस गणको व्याधिनाशक अर्थात्व्याधियोंकाशत्रुजानना।दोपोंपर कहकर व्याधियोंके ऊपर कहनेसै इस गणको अवस्था, काल, और देशादि भेदकरके संपूर्ण अथवा आधाजो मिले उतना लेकर काढा, फांट, स्वरस, कल्क, चूर्ण और गुटिकाआदि बनायकर रसक्रिया, लेप, नस्य, परिपेक, और स्नान तथा घृत तैलादिक यथायोग्य योजित करने चाहिये । इसीप्रकार अन्य गणोंमें भी जानना

तथा जीवकऋपभकआदि द्रव्योंका अन्नपानादिकमें गुण नहीं कहे उनको संपूर्ण गणके गुणाभिधान करके पृथक् द्रव्यगुण जानने चाहिये ॥

## आरग्वधादिगण

आरग्वधमदनगोपघोण्टाकुटजपाठाकण्टकीपाटला-
मूर्वेन्द्रयवसप्तपर्णनिम्बकुरुण्टकदासीकुरुण्टकगुडू-
चीचित्रकशार्ङ्गष्टाकरञ्जद्वयपटोलकिराततिक्तकानि
सुपवींचेति ।

आरग्वधादिरित्येपगणः श्लेष्मविपापहः ।
मेहकुष्ठज्वरवमी कण्डूघ्नो व्रणशोधनः ॥ २ ॥

अर्थ—आरग्वध ( अमलतास ) मदन ( मैनफल ) गोपघोंटा ( ककडीकाभेद ) कूडाकावृक्ष, पाढ, विकंकत ( कांटेवालावृक्ष कटेरीनाममेंप्रसिद्ध ) पाढल, मूर्वा, इन्द्रजों, सतेवन, नीम, कुरुंटक ( कटसरैया, पीलेफूलका पीयाबांसा ) दासीकुरुंटक ( नीलफूलका पियाबांसा ) गिलोय, चीता, शार्ङ्गष्टा ( काकजंघा, विकसवनी करके प्रसिद्ध ) करंज, ( कंजा ) और पूतीकरंज, पटोलपत्र, किराततिक्तक ( चिरायता ) कारवी ( कलोंजी अथवा काकडासिंगी ) ॥

यह आरग्वधादिगण कफ, विप, प्रमेह, कुष्ट, ज्वर, वमन, खुजली, इनको दूर करे तथा [ दुष्ट ] घावको भरने वाला है ॥

---

१कोई गोपघोंटाको बेरका भेद बताते हैं। और कोई सुपारीका भेद कहते हैं । २सतोना यह इस शरदि ऋतुमें खिलता है और हाथीके मदकीसी इसमें गंध आती है । ३ कोई शार्ङ्गष्टाको काकमाची—और कोई काकतिक्ता कहते हैं ।

## वरुणादिगण

वरुणार्त्तगलशिग्रु मधुशिग्रु तर्कारीमेषशृङ्गीपूतीकन-
क्तमालमोरटाग्निमन्थसैरीयकद्वयविम्बीवसुकवसिर
चित्रकशतावरीबिल्वाजशृङ्गीदर्भा बृहतीद्वयश्चेति।
वरुणादिर्गणोह्येषकफमेदोनिवारणः ॥ ३ ॥

अर्थ—वरुणा ( वरना इसवृक्षके पत्तोंका कडुआ साग होता है ॥ आर्त्तगल ( कोह. ) शिग्रु ( सहजना ) मधुशिग्रु ( लालसहजना ) तर्कारी ( अरनी ) मेषशृंगी ( मेढासिंगी ) पूतिक ( कंजा ) नक्तमाल ( बडाकरंज ) मोरट ( मूर्वा ) आग्निमंथ ( अगेथू पूरवदेशप्रसिद्ध अरनीका भेद ) सैरीयकद्वय ( दो प्रकारकी कटसरैया, लालफूलवाली जिसको कुरवक कहते है । और पीलेपुष्प का पियावांसा ) बिंवी ( कंदूरी ) वसुक ( वकपुष्प ) अथवा वसुक ( आक ) वसिर ( मर्कटपिप्पली, ओंगानामसेप्रसिद्ध, ) चीता, शतावर, बेल, अजशृंगी ( मेढासिंगीकाभेद ) कुश, और छोटीवडीकटेरी ॥

यह वरुणादिगण कफ, मेदा, मस्तकशूल, गोला, और भीतरकी विद्रधि इनको दूरकरे है ॥

## वीरतर्वादिगण

वीरतरुसहचरद्वयदर्भवृक्षादनीगुन्द्रानलकुशकाशा
श्मभेदकाग्निमन्थमोरटावसुकवसिरभल्लूककुरुण्टके-
न्दीवरकपोतकङ्काश्वदंष्ट्राचेति ॥
वीरतर्वादिरित्येष गणो वातविकारनुत् ।
अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्रघातरुजापहः ॥ ४ ॥

अर्थ—वीरतरु ( वेल्वंतर ) दोनोकटसरैया, दर्भ(डाभ)वृक्षादनी (वंदाक, वादा प्रसिद्ध ) गुन्द्रा ( गोदर ) नल ( नरसल ) कुशा, कांस, अस्मभेदक ( पाखानभेद ) अरनी, मोरट ( मूर्वा )वसुक ( वकपुष्प ) वसिर ( ओंगा ) भल्लूक ( स्योनाक ) कुरुंट( सिरवालिका ) इन्दीवरी ( नीलाकमल ) कपोतकंका ( हुलहुल ) औरगोखरू ॥

यह वीरतर्वादिगण वातके विकारोंको तथा पथरी–शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, आदिकी पीडा इनसबको दूरकरे ॥

ष्पीक्षुद्रश्वेतामहाश्वेतावृश्चिकाल्यलवणास्तापसवृक्षश्चेति ।
अर्कादिको गणो ह्येष कफमेदोविषापहः ।
कृमिकुष्ठप्रशमनो विशेषाद्व्रणशोधनः ॥ ७ ॥

अर्थ—अर्क(लालफूलकाआक) अलर्क ( सपेदफूलकाआक ) कंजा, दंती, ओंगा ( चिरचिटा ) भारंगी, रास्ना, इन्द्रपुष्पी ( कटेरी ) क्षुद्रश्वेता ( फेसंद ) महाश्वेता ( नीलपुष्पसंकंद ) वृश्चिकाली ( मेढासिंगीकाभेद ) अलवणा ( मालकांगनी, ) काकमर्दनिका और इंगुदीवृक्ष ( गोंदीवा हिंगोट वृक्ष ) ये अर्कादिगणहै॥

यह कफ, मेद, विष, कृमि, कुष्ट, इनको दूरकरे और व्रणको शोधन करे है॥

## सुरसादिगण

सुरसाश्वेतसुरसाफणिज्झकार्जकभूस्तृणसुगन्धकसु-
मुखकालमालकासमर्दक्षवकखरपुष्पाविडङ्गकट्फल-
सुरसीनिर्गुण्डीकुलाहलोन्दुरुकर्णिकाफञ्जीप्राचीवल-
काकमाच्यो विषमुष्टिकश्चेति ।
सुरसादिर्गणो ह्येष कफहृत् कृमिसूदनः ।
प्रतिश्यायारुचिश्वासकासघ्नो व्रणशोधनः ॥८॥

अर्थ—सुरसा ( सपेदतुलसी ) और कालीतुलसी, फणिज्झक ( मरुआ ) अर्जक ( सपेद आजवला ) भूस्तृण ( गुंदाक रोहिसतृण ) सुगंधक ( वढासुगंधतृण ) सुमुख ( राई, वा ववैरी ) कालमाल ( कारीचमेली ) कासमर्द ( कसौंदी ) क्षवक ( जिव्हारिपाक इसप्रकार पारियात्र पर्वतमें प्रसिद्ध ) खरपुष्प ( क्षवकका भेदहै ) वायविडंग, कायफल, सुरसी ( बिल्वनासी ) निर्गुंडी, कुलाहल ( मुंडिका ) उंदुरकर्णी ( मूसाकर्णी ) भारंगी, प्राचीवल ( मछेछी ) काकमाची ( मकोय अथवा गुडफला ) विषमुष्टिक, ( राजनिंब ) ये सुरसादि गणहै ॥

यह कफरोग, कृमिरोग, पीनस, अरुचि, श्वास, खांसी, इनको नाशकरे, तथा व्रणको शोधन करे है ॥

मुष्ककपलाशधवचित्रकमदनवृक्षशिंशपावज्रवृक्षास्त्रि-
फलाचेति ।
मुष्ककादिर्गणो ह्येप मेदोघ्नः शुक्रदोषहृत् ।
मेहार्शःपाण्डु रोगघ्नः शर्कराश्मरिनाशनः ॥ ९॥

अर्थ—मुष्कक ( मोख वा मोक्षवृक्ष ) पलास ( ढाक ) धव ( धौं ) चित्रक ( चीता ) मैनफलका वृक्ष, सीसो, थूहर और त्रिफला ( हरड–बहेडा–आमला ) ये मुष्ककादिगणहै ॥

यह मेद, शुक्र ( वीर्य ) के दोष, प्रमेह, पांडुरोग, शर्करा, पथरी, इनको दूरकरे है॥

## पिप्पल्यादिगण

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेरमरिचहस्ति-
पिप्पलीहरेणकैलाजमोदेन्द्रयवपाठाजीरकसर्षपमहा
निम्बफलहिङ्गुभार्गीमधुरसातिविषावचाविडङ्गानि
कटुरोहिणी चेति।
पिप्पल्यादिः कफहरः प्रतिश्यायानिलारुचीः।
निहन्याद्दीपनो गुल्मशूलघ्नश्चामपाचनः॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चीता, अदरख, कालीमिरच, गजपीपल, हरेणुक ( रेणुकाद्रव्य ) इलायचीछोटी, अजमोद, इन्द्रजौ, पाढ, जीरा, सरसों, चकायन, हींग, भारंगी, मूर्वा, अतीस, वच, वायविडंग, और कुटकी यह पिप्प-लादिगणहै ॥

यह कफको तथा पीनस, वादी, अरुचि, गोला, शूल, और आमवात रोगको हरणकरे। तथा अग्निको दीपनकरे है ॥

## एलादिगण

एलातगरकुष्ठमांसीध्यामकत्वक्पत्रनागपुष्पप्रियङ्गु-
हरेणुकाव्याघ्रनखशुक्तिचण्डास्थौणेयकश्रीवेष्टकचो
चचोरकवालकगुग्गुलुसर्जरसतुरुष्ककुन्दुरुकाऽगुरु-
स्पृक्कोशीरभद्रदारुकुङ्कुमानिपुन्नागकेशरञ्चेति ।
एलादिको वातकफौ निहन्याद्विषमेवच ।
वर्णप्रसादनः कण्डूपिडकाकोठनाशनः॥११॥

अर्थ—छोटीइलायची, तगर, कूठ, जटामांसी, रोहिषतृण, तज, पत्रज, नाग-केशर, प्रियंगु, रेणुका द्रव्य, वृहन्नख, शुक्ति ( उसीव्याघ्रनखकाभेद ) चंडा, स्थौणेयक ( थुनेर ) श्रीवेष्ट ( सरलवृक्ष ) चोच ( तजकाभेद ) चोरक ( ग्रंथिप-र्णीकाभेद ) वालक ( नेत्रवाला ) गूगल, राल, सिल्हक, सल्लकी, अगर, पृक्का

( सुगंधिद्रव्य उत्तरमें प्रसिद्ध ) उशीर ( खस ) भद्रदारु ( देवदारु ) कुंकुम ( केशर ) पुन्नाग, और कमलका केशरा, ये एलादिगणहै ॥

यह वातकफ, विषविकार, खुजली, पिडका ( फुंसी ) रुधिर विकारके काले काले चकत्ते, इन सबको नाशकरे । तथा देहके रंगको स्वच्छ ( गोरा ) करे ॥

## वचाहरिद्रादिगण

वचामुस्तातिविषाभयाभद्रदारूणि नागकेशरश्चेति ।
हरिद्रादारुहरिद्राकलशीकुटजबीजानि मधुकंचेति ॥
एतौ वचाहरिद्रादी गणौ स्तन्यविशोधनौ ।
अमाती सारशमनौ विशेषाद्दोषपाचनौ ॥ १२ ॥

अर्थ—वच, मोथा, अतीस, हरड, देवदारु, नागकेशर, ये वचादि गणहै । हलदी, दारुहलदी, पृष्ठपर्णी, इन्द्रजों, और महुआ ये हरिद्रादि गणहै ॥

यह दोनों गण स्त्रीके स्तनसंबंधी दूधको शोधन करे. तथा आमातिसारको शमनकरे, तथा विशेषकरके वातादि दोषोंको पाचन करे है ॥

## श्यामादिगण

श्यामामहाश्यामात्रिवृद्दन्तीशंखिनीतिल्वककम्पिल्ल-
करम्भकक्रमुकपुत्रश्रेणीगवाक्षीराजवृक्षकरञ्जद्वयगुडू-
चीसप्तलाच्छगलान्त्रीसुधाः सुवर्णक्षीरी चेति ॥
उक्तः श्यामादिरित्येष गणो गुल्मविषापहः ।
आनाहोदरविड्भेदी तथोदावर्त्तनाशनः ॥ १३ ॥

अर्थ—श्यामा ( सपेद निसोथ ) महाश्यामा ( विधायरो ) त्रिवृत ( लालजडकी निशोथनामसैं प्रसिद्ध ) दंतीशंखिनी ( यवतिक्ताकाभेद ) तिल्वक (लोध ) कपिल्लक ( कबीला ) रम्यक ( बकायन ) क्रमुक ( सुपारी ) पुत्रश्रेणी ( संवरी ) गवाक्षी ( इन्द्रायन ) राजवृक्ष ( अमलतास ) करंज, पूतीकरंज, गिलोय, थूहर, छगलांत्री ( वृद्दारककाभेद ) सुधा ( सेहुड ) स्वर्णक्षीरी ( चोक ) ये श्यामादिगणहै ॥

यह गोला, विषविकार, अफरा, उदररोग, इनको दूरकरे मलको भेदक है अर्थात् दस्तावरहै, और उदावर्त्तका नाशकहै ॥

## बृहत्यादिगण

बृहतीकण्टकारिकाकुटजफलपाठा मधुकञ्चेति ।
पाचनीयो बृहत्यादिर्गणः पित्तानिलापहः ।
कफारोचकहृल्लासमूत्रकृच्छ्ररुजापहः ॥ १४ ॥

अर्थ—बडीकटेरी, छोटीकटेरी, इन्द्रजो पाढ, और महुआ, यह बृहत्यादि गण है। यह पाचन है तथा पित्त वादीका और कफ, अरुचि, हृल्लास, मूत्रकृच्छ्र, इत्यादि रोगोंको नष्ट करे है ॥

## पटोलादिगण

पटोलचन्दनकुचन्दनमूर्व्वागुडूचीपाठाः कटु, रोहिणोचेति । पटोलादिर्गणः पित्तकफरोचकनाशनः ।
ज्वरोपशमनो व्रण्यश्छर्दिकण्डू विषापहः ॥ १५ ॥

अर्थ—पटोलपत्र, चंदन, लालचंदन, मूर्वा, गिलोय, पाढ, और कुटकी, यह पटोलादि गण है ॥

यह ज्वर, पित्त, कफ–अरुचि छर्दि, खुजली, विप इनको दूरकरे तथा घावको हितकारी है ॥

## कांकोल्यादिगण

काकोलीक्षिरिकाकोलीजीवकर्षभमुद्गपर्णीमापपर्णीमेदामहामेदाछिन्नरुहाकर्कटशृङ्गीतुगाक्षीरीपद्मकप्रपौण्डरीकर्द्धिवृद्धिमृद्वीकाजीवन्त्यो मधुकञ्चेति ॥ काकोल्यादिरयं पित्तशोणितानिलनाशनः । जीवनो-
बृंहणो वृष्यः स्तन्यश्लेष्मकरस्तथा ॥ १६ ॥

अर्थ—कांकोली, क्षीरकांकोली, जीवक, ऋपभक, मूंगोन, मापपर्णी, मेदा, महामेदा, गिलोय, कांकडासिंगी, बंशलोचन, पद्मास, कमल, ऋद्धि, वृद्धि, दाख, डोडी, और मुलहटी, यह कांकोल्यादि गण है ॥

यह पित्त, रुधिर, वादी, इनको नाशकरे तथा जीवन बृंहण ( शरीरको पुष्टकारी ) वृष्य, स्तनोंमें दूधका वढानेवाला, और कफकारी है ॥

## उपकादिगण

उपकसैन्धवशिलाजतुकासीसद्वयहिङ्गूनि तुत्थकञ्चे-

ति । उषकादिः कफं हन्ति गणो मेदोविशोषणः ।
अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्रगुल्मप्रणाशनः ॥ १९ ॥

अर्थ—उषक ( क्षारमृत्तिका यह काशीके पास वढहर देशमें अधिक होती है ) सेंधानिमक, शिलाजीत, कसीस, पुष्पकसीस, हिंग, और लीलाथोथा, ये ऊषकादि गण है ॥

यह कफ, पथरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, गोला, इनको नष्टकरे, तथा मेद (चर्वी) को शोषण करे ॥

## सारिवादिगण

सारिवामधुकचन्दनकुचन्दनपद्मककाश्मरीफलमधु-
कपुष्पाण्युशीरश्चेति । सारिवादिः पिपासाघ्नो रक्त-
पित्तहरो गणः । पित्तज्वरप्रशमनो विशेषाद्दाहनाशनः ॥

अर्थ—सारिवा ( सरिवनगौरी सर ) मुलहटी, चंदन, लालचंदन, पद्माख, कंभारी, महुआके फूल, और खस, ये सारिवादि गण है ॥

यह, प्यास, रक्तपित्त, पित्तज्वर, और विशेषकरके दाहको हरण करे है ॥

## अंजनादिगण

अञ्जनरसाञ्जननागपुष्पप्रियङ्गु नीलोत्पलनलदनलिन-
केशराणिमधुकश्चेति ।
अञ्जनादिर्गणो ह्येष रक्तपित्तनिवर्हणः ।
विषोपशमनो दाहं निहन्त्याभ्यन्तरं तथा ॥ १६ ॥

अर्थ—सुमारा, रसोत, नागकेशर, प्रियंगु, नीलाकमल, जटामांसी, कमलकेशर, और महुआ, ये अंजनादि, गण है ॥

यह रक्तपित्तको दूरकरे, विष, दोषको शमनकरे, भीतरके दाहको नष्ट करेहै

## परूपकादिगण

परूपकद्राक्षाकट्फलदाडिमराजादनकतकफलशाक-
फलानि त्रिफला चेति ।
परूपकादिरित्येष गणोऽनिलविनाशनः ।
मूत्रदोषहरो हृद्यः पिपासाघ्नो रुचिप्रदः ॥

अर्थ—फालसे, दाख, कायफल, अनार, खीरनी, कतकफल (निर्मली) शाकवृक्षका फल, और त्रिफला, ये परूपकादि गण है ॥

यह वादीके दोष, मूत्रकेविकार, और प्यास इनको हरण करे तथा हृदयके हितकारी तथा रुचि उत्पन्न कर्ता है ॥

## प्रियंगु औरअंबष्टादिगण

प्रियङ्गु, समङ्गाधातकीपुन्नागरक्तचन्दनकुचन्दनमोचरसरसाञ्जनकुम्भीकस्रोतोऽञ्जनपद्मकेशरयोजनवल्ल्यो दीर्घमूलाचेति ॥ १७ ॥

अम्बष्ठाधातकीकुसुमसमङ्गाकट्वङ्गमधुकबिल्वपेशिकारोध्रसावररोध्रपलाशनन्दीवृक्षपद्मकेशराणि चेति ।

गणौ प्रियङ्ग्वम्बष्ठादौ पक्वातीसारनाशनौ ।
सन्धानीयौ हितौ पित्ते व्रणानाञ्चापि रोपणौ ॥

अर्थ—प्रियंगु, लजालु, धायकेफूल, पुंनाग, लालचंदन, चंदन मोचरस, रसोत, कुंभीनामा वृक्ष ( जिसकी छाल वस्त्रके आकार होती है ) सूरमा, कमलकेशर, मजीट, और धमासा ये प्रियंग्वादि गण है ॥

अंबष्टा ( कुरंड ) धायकेफूल, लजालू, रेणुक, मुलहटी, वेलगिरी, लोध, पठानीलोध, पलाश ( ढाक ) नंदीवृक्ष ( काश्मरी ) और पद्मकेशर, ये अंबष्टादिगण है ॥

ये दोनो ( प्रियंग्वादि और अंबष्टादि गण ) पक्वातिसारको नष्ट करते है टूटी हड्डीको जोडने वाले, पित्तमें परम हितकारी, और व्रणोंको रोपण करे है

## न्यग्रोधादिगण

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षमधुककपीतनककुभाम्रकोशाम्रचोरकपत्रजम्बुद्वयप्रियालमधुकरोहिणी वञ्जुलकदम्बवदरीतिन्दुकीसल्लकीरोध्रसावररोध्रभल्लातकपलाशा नन्दीवृक्षश्चेति । न्यग्रोधादिर्गणो व्रण्यः संग्राही भग्नसाधकः रक्तपित्तहरो दाहमेदोघ्न योनिदोषहृत ॥

अर्थ—वड, गूलर, पीपल, पाम्बर, महुआ, अंवाडा, कोह, आम, कोशाम्र, चोरकपत्र, ( लाम्बकावृक्ष ) छोटीजामुन ( काकजामुन, ) वडीजामुन ( गज-

खिरनी, मुलहटी, कायफर, वेत, कदंब, वेर, तेंदू, सालवृक्ष, लोध, प-
ध, मिलाए, ढाक, और नंदीवृक्ष ये न्यग्रोधादि गण है ॥
ई व्रणको हितकारी, ग्राही, टूटेहाडआदिको जोडने वाला, रक्तपित्त, दा-
ह, मद, और योनिके दोप इनको नाश करे है ॥

## गुडूच्यादिगण

गुडूचीनिम्बकुस्तुम्बुरुचन्दनानि पद्मकश्चेति ।
एष सर्वज्वरान् हन्ति गुडूच्यादिस्तु दीपनः ॥
हृल्लासारोचकवमीपिपासादाहनाशनः ॥

अर्थ—गिलोय, नीम, धनिया, लालचंदन, और सफेद चंदन तथा पद्माख ये गुडूच्यादि गणहै । यह सर्वज्वरोका नाशकरे, और जठराग्निको दीपनकरे है । तथा हृल्लास, अरुचि, वमन, प्यास, दाह, इनको नष्टकरे ॥

## उत्पलादिगण

उत्पलरक्तोत्पलकुमुदसौगन्धिककुवलयपुण्डरीकाणि
मधुकश्चेति । उत्पलादिरयं दाहपित्तरक्तविनाशनः ।
पिपासाविषहृद्रोगच्छर्दिमूर्च्छाहरोगणः ॥

अर्थ—नीला कमल, लालकमल, कमोदनी ( वघोला, नीलोफर ) सौगंधिक ( नीलकमलके आकार सुगंधवाला ) कुवलय ( कुछनील और सपेदीयुक्त कमल ) पुंडरीक ( सपेद कमल ) और मुलहटी, ये उत्पलादि गण है ॥
यह दाह, रक्तपित्त, प्यास, विपदोप, हृदयकेरोग, वमन, और मूर्च्छा इनको हरण करे है ॥

## मुस्तादिगण

मुस्ताहरिद्रादारुहरिद्राहरीतक्यामलकविभीतककु-
ष्ठहैमवतविचापाठाकटुरोहिणीशार्ङ्गष्टातिविषाद्रावि
डीभल्लातकानि चित्रकश्चेति । एष मुस्तादिको ना-
म्ना गणः श्लेष्मनिपूदनः । योनिदोषहरःस्तन्यशो-
धनः पाचनस्तथा ॥

अर्थ—मोथा, हलदी, दारुहलदी, हरड, आमला, बहेडा, कुष्ट ( कूठ ) सपे-

दवच, वच, पाढ, कुटकी, यवतिक्ता, अतीस, छोटीइलायची, भिलाया, और चीता ये मुस्तकादि गण है

यह कफको दूरकरे, योनिदोपको हरण करे, स्तन संबंधी दूधको शुद्धकरे और पाचन है ॥

## त्रिफलागण

हरितक्यामलकविभीतकानि त्रिफला ।
त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहकुष्ठविनाशनी ॥
चक्षुष्या दीपनी चैव विपमज्वरनाशनी ॥

अर्थ—हरड, बहेडा और आमला, ये त्रिफला है यह कफ, पित्त, प्रमेह, कुष्ट और विपमज्वर, इनको नाशकरे नेत्रोंको परमहितकारी, और अग्निको दीपन करे है।

## त्रिकटुगण

पिप्पलीमरिचशृंगवेराणि त्रिकटुकम् ।
त्र्यूपणं कफमेदोघ्नं मेहकुष्ठत्वगामयान् ।
निहन्याद्दीपनं गुल्मपीनसाग्न्यल्पतामपि ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, और पीपल, ये त्रिकटुकगण है इसको त्र्यूपण कहते है यह कफ, मेदा, प्रमेह, कोढ, त्वचाके रोगोंको, गोला, पीनस, और मंदाग्नि, इस सबको दूरकरे और अग्निको दीपन करे है ॥

## आमलक्यादिगण

आमलकीहरीतकीपिप्पल्यश्चित्रकश्चेति ।
आमलक्यादिरित्येप गणः सर्वज्वरापहः ।
चक्षुष्यो दीपनो वृष्यः कफारोचकनाशनः ॥

अर्थ—आमला, हरड, पीपल, और चीतेकी छाल, ये आमलक्यादि गण है यह सर्व ज्वरोंको और कफ तथा अरुचिको नाश करे, नेत्रोंको हितावह, दीपन और वृष्य है ॥

## त्रप्वादिगण

त्रपुसीसताम्ररजतकृष्णलोहसुवर्णानि लोहमलश्चेति ।
गणस्त्रप्वादिरित्येप गरक्रिमिहरः परः ।

पिपासाविषहृद्रोगपाण्डुमेहहरस्तथा ॥

अर्थ—रांग, शीशा, तामा, चाँदी, खेडीलोह, सुवर्ण ( सौना ) और लोहमल ( लोह कीटी ) ये त्र्प्वादि गण कृत्रिम विषदोष, कमिरोग, प्यास, विषदोष, हृदयरोग, पांडुरोग, और प्रमेह–रोग, इनको हरण करे ॥

## लाक्षादिगण

लाक्षारेवतकुटजाऽश्वमारकट्फलहरिद्राद्वयनिम्बसप्तच्छदमालत्यस्त्रायमाणा चेति ।

कषायस्तिक्तमधुरः कफपित्तार्त्तिनाशनः ।
कुष्ठक्रिमिहरश्चैव दुष्टव्रणविशोधनः ॥

अर्थ—लाख, आरेवत ( अमलतास ) इन्द्रजो, कणेर, कायफल, हरदी, दारुहरदी, नीम, सतोना, मालती, और त्रायमाण, यह लाक्षादिगण कषेला, कडुआ, मिष्ट असाहै । तथा कमिकुष्टको नाशकरें तथा दुष्टनासूर आदि फोडोंको शोधन करे है ॥

## लघुपंचमूलगण

पञ्च पञ्चमूलान्यत ऊर्ध्वं वक्ष्यामः । तत्र त्रिकण्टकबृहतीद्वयपृथक्पर्णी विदारिगन्धा चेति कनीयः ।

कषायतिक्तमधुरं कनीयः पञ्चमूलकम् ।
वातघ्नं पित्तशमनं बृहणं बलवर्द्धनम् ॥

अर्थ—अब पाच पंचमूलोंको कहते है । तहां गोखरू, छोटीकटेरी, बडीकटेरी, पृष्टपर्णी, और शालपर्णी, यह छोटा पंचमूल है । यह कषेला, कडुआ, और मीठाहै तथा वात और पित्तको शमन करे, बृहण ओर बलको बढाताहै ॥

## बृहत्पंचमूल

बिल्वाग्निमन्थटुन्टुकपाटलाकाश्मर्य्यश्चेति महत् ।

सतिक्तं कफवातघ्नं पाके लघ्वग्निदीपनम् ।
मधुरानुरसञ्चैव पञ्चमूलं महत् स्मृतम् ॥

अर्थ—बेलगिरी, अरनी, स्योनाक, पाढल, और कंभारी, ये बृहत्पंचमूल है । त्ताई लिये मीठाहै, कफ वादी इनको नष्टकरे, पचने पर हलका और दीपन करे है ॥

## दशमूल

अनयोर्दशमूलमुच्यते ।
गणः श्वासहरो ह्येष कफपित्तानिलापहः ।
आमस्य पाचनश्चैव सर्वज्वरविनाशनः ॥

अर्थ—छोटे और बडे दोनो पंचमूलोंके मिलानेसैं दशमूल होताहै। यह दशमूल गण श्वासरोग, कफ, पित्त, और वादी तथा ज्वरको नाशकरे और आमको पाचन करे है ॥

## वल्लीपंचकतथाकंटकपंचक

विदारीसारिवारजनीगुडूच्योऽजशृङ्गी चेति वल्ली-
संज्ञः । करमर्दत्रिकण्टकसैरीयकशतावरीगृध्रन-
ख्य इति कण्टकसंज्ञः ॥
रक्तपित्तहरौ ह्येतौ शोफत्रयविनाशनौ ॥
सर्वमेहहरौ चैव शुक्रदोषविनाशनौ ॥

अर्थ—विदारीकंद, सारिवन, हलदी, गिलोय, और मेढासिंगी, ये वल्लीपंचकहै। करोंदा, गोखरू, कटसैरैया, सतावर, गृध्रनखी, ये कंटकपंचमूलहै ॥
वल्ली पंचक और कंटक पंचक, दोनोंगण रक्तपित्तको हरणकरे, त्रिविध शोथरोगको नाशकरे तथा सर्वप्रमेह और शुक्रके दोषको हरणकरे है ॥

## तृणपंचक

कुशकाशनलदर्भकाण्डेक्षुक इति तृणसंज्ञकः ।
मूत्रदोषविकारञ्च रक्तपित्तं तथैव च ।
अन्त्यः प्रयुक्तः क्षीरेण शीघ्रमेव विनाशयेत् ।

अर्थ—कुश, कांस, नरसल, डभा ( मूंज ) और कांडेक्षुक ( सरपता ) ये तृणपंचकहै। यह मूत्रदोष तथा मूत्रके विकारोंको रक्तपित्तको शीघ्र दूरकरे है ॥

## पाचोंकेगुणएकश्लोकसैंकहतेहै

एषां वातहरावाद्यावन्त्यः पित्तविनाशनः ॥
पञ्चकौ श्लेष्मशमनावितरौ परिकीर्त्तितौ ॥

अर्थ—इन पांचो पंचकोमें आदिके दोपंचक ( लघुपंचमूल और बृहत्पंच-

मूल ) वादीको हरण करते है। और अंसपंचक ( तृणपंचमूल ) पित्तको शमन करे है। और वीचके ( वल्लीसंज्ञक और कंटकसंज्ञक पंचमूल ) कफको शमन करे है॥

त्रिवृतादिकमन्यत्रोपदेक्ष्यामः।

अर्थ—त्रिवृतादिकगण अन्यत्र काहिये आगे संशोधन सशमनीयाध्यायमें कहेंगे॥

इनकोसंक्षेपत्वदिखातेहै

समासेन गणाह्येते प्रोक्तास्तेपान्तु विस्तरम्।
चिकित्सितेषु वक्ष्यामि ज्ञात्वा दोषबलाबलम्॥

अर्थ—ये संक्षेपसें ( औषधोंके ) गण कहे है दोषोंका बलाबल विचारके आगे चिकित्सास्थानमें इनको विस्तारसें वर्णन करेंगे दोषोका बलाबल कहनेसें संपूर्ण परीक्षाओंका ग्रहण जानना॥

इन गणोंका क्याकरे इसवास्ते कहतेहै

एभिर्लेपान् कषायांश्च तैलं सर्पिंषि पानकान्।
प्रविभज्य यथान्यायं कुर्वीत मतिमान् भिषक्॥

अर्थ—कुशलवैद्य इस औषधोंका यथाक्रम विभाग करके लेप, कषाय ( शृत-शीत, स्वरस, फांट, कल्क, आदि पांच कषाय ) तैल, घृत, और मंद्यादिकोंकी कल्पना करे॥

औषधरक्षणकीविधि

धूमवर्षानिलक्लेदैः सर्वर्त्तुष्वनभिद्रुते।
ग्राहयित्वा गृहे न्यस्येद्विधिनौषधसंग्रहं॥

अर्थ—विविध औषधसंग्रहको लेकर धूंआ, वर्षा, हवा, और क्लेदोसें सर्व ऋतुमें न विगडने पावे ऐसे उत्तम मकानमें औषधोंको रखनी चाहिये॥

( इस द्रव्यगणकी कैसेयोजनाकरे सो कहतेहै )

समीक्ष्य दोषभेदांश्च गणान् भिन्नान् प्रयोजयेत्।
पृथङ्मिश्रान् समस्तान् वा गणं वा व्यस्तसंहतं॥

अर्थ—वैद्य दोषोंको पृथक् २ देखके अभिश्रित गणोंकी योजना करे तथा द्विदो-

प मिले देखके मिश्रित गणोंको देवे, और संपूर्ण मिले दोष देखके तीनों गणोंको मिलायके देवे ॥

## ( इति द्रव्यसंग्रहणीयाध्यायसमाप्तः )

'पहलीअध्यामें लिखआए हे कि " त्रिवृतादिमन्यत्रोपदेक्ष्यामः " अर्थात् त्रिवृतादिगण आगे ( संशोधन-संशमनीयाध्यायमें ) कहैंगे अतएव हमसंशोधन संशमनीया ध्यायको कहते है ॥

## अथातः संशोधनसंशमनीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अर्थ--अब संशोधन और संशमनीयअध्यायकी व्याख्याकरते है । पूर्व द्रव्यसंग्रहणीयाध्यायमे व्याधिके नाशक द्रव्योंके गण कहे, और इस संशोधन संशमनीयाध्यायमें दोषोंके प्राय नाशकरी पंचकर्मोपयोगी शोधन द्रव्य संग्रहगणोंको तथा वातादि शमनद्रव्य गणोंको कहैंगे । तहां सशोधन दोमकारका है, जैसैं–वमन और विरेचन, तहां विरेचनके पूर्व वमन कराते है इस कारण वमनद्रव्यगणको कहते है ॥

### वमनद्रव्यगण

मदनकुटजजीमूतकेक्ष्वाकुधामार्गवकृतवेधनसर्षप विडङ्ग पिप्पली करञ्ज प्रपुन्नाटकोविदार कर्बुदारारिष्टा श्वगन्धा विदुलबन्धुजीवक श्वेता सणपुष्पी बिम्बी वचा मृगेर्वारुचित्रा चेत्युर्ध्वभागहराणि । तत्र कोविदारपूर्वाणां फलानि । कोविदारादीनां मूलानि ॥

अर्थ—मैनफल, इन्द्रजौ, वंदाल, कडुईतूंबी, धामार्गव ( पीले फूलकीतोरई ) कृतवेधन ( सपेद फूलकीतोरई ) सपेदसरसो, वायविडंग, पीपल, कंजा, पवांर, कोविदार ( कचनारकाभेद ) कर्बुदार ( लिसोडेहल्लेसुआ ) नीम, असगंध, वेत, मञ्जनियाकापुष्प, सपेदवच, सनहुली, कदूरी, लालवच, इन्द्रायण, चित्रांडजा ( जिसकाफल परवलके आकार होताहे ) ये ऊर्ध्वभाग हरण कर्ता गण है अर्थात वमनकारी हैं । तहा वंदालसैं पूर्व मैनफलादिकके फल लेने, और कोविदार आ-

दिकी जडलेनी चाहिये। यह औषध कोईतो अकेलीही उलटी लाती है। और कोई वमनकारी द्रव्यके साथ मिलानेसें वमन ( उलटी ) लाती है ॥

## विरेचनद्रव्यगण

त्रिवृता श्यामा दन्ती द्रवन्ती सप्तला शङ्खिनी विषाणिका गवाक्षी च्छगलान्त्री स्नुकसुवर्णक्षीरी चित्रककिणिही कुशकाश तिल्वककम्पिल्लकरम्भकपाटलापूगहरीतक्यामलक विभीतकनीलि चतुरङ्गुलैरण्डपूतीक महावृक्ष सप्तच्छदार्क ज्योतिष्मती चेत्यधोभागहराणि ॥

तत्र तिल्वकपूर्वानां मूलानि। तिल्वकादीनां पाटलान्तानां त्वचः। कम्पिल्लकफलरजः। पूगादीनामेरण्डान्तानां फलानि। पूतीकारग्वधयोः पत्राणि। शेषाणां क्षीराणीति।

अर्थ—लालजडकी निसोथ, सपेदनिसोथ, दंती ( दांतन ) द्रवंती ( दंतीकाभेदजिसको वरी कहतेहै ) थूहर, शंखिनी, मेढासिंगी, सपेदफूलकी इन्द्रायण, विधायरा, सेहुड, चोक, चीता, कटभी, कुश, कांस, तिल्वक ( छोटीलोध ) कबीला, पटोलकीजड, पाडल, सुपारी, हरड, आमला, बहेडा, नीली, अमलतास, अंड, कंजा, महावृक्ष ( थूहरकाभेद ) सतोना, और मालकांगनी, यह संपूर्ण औषधी अधोमाग हरहै अर्थात् दस्त लाती है। इनमे तिल्वकसे पूर्व अर्थात् निसोथ आदि जितनी द्रव्यहै उनकी जडलेनी, तिल्वकसें लेकर पाडल पर्यंतकी त्वचा (छाल) लेनी। कबीले आदिके फलका चूर्णले, और सुपारीसें लेकर अंडपर्यंतके फल लेने, कंजा और अमलतासके पत्ते, बाकी जो रही उनका दूध लेना चाहिये॥

## वमनविरेचनकर्त्ताद्रव्यगण

कोशातकी सप्तला शंखिनी देवदाली कारवेल्लिकाचेत्युभयतोभागहराणि। एषां स्वरसा इति।

अर्थ—तोरई (कडवी तुरैयां) थूहर, शंखिनी, बंदाल, और करेला यह दोनों भागसें हरणकर्त्ता है।अर्थात् वमन और विरेचन दोनों करातेहै,इनका स्वरसलेना।

## शिरोविरेचन

पिप्पलीविडङ्गापामार्गशिग्रु सिद्धार्थकशिरीषमरिच-करवीरबिम्बीगिरिकर्णिकाकिणिहीवचाज्योतिष्मती-करञ्जार्कालर्कलशुनातिविषाशृङ्गवेरतालीशतमाल-सुरसार्जकेङ्गुदीमेषशृङ्गीमातुलुङ्गीमुरुङ्गीपीलुजाती-शालतालमधुकलाक्षाहिङ्गुलवणमद्यगोशकृद्रसमूत्राणीति शिरोविरेचनानि ॥

तत्र करवीरपूर्वाणां फलानि । करवीरादीनामर्कान्तानांमूलानि । तालीशपूर्वाणां कन्दाः । तालीशादीनामर्जकान्तानां पत्राणि । इङ्गुदीमेषशृङ्गीत्वचौ । मातुलुङ्गीमुरुङ्गीपीलुजातीनां पुष्पाणि । शालतालमधुकानां साराः । हिङ्गुलाक्षे निर्य्यासौ । लवणानि पार्थिवविशेषाः । मद्यान्यासवसंयोगाः । गोमूत्रशकृद्रसौ मलाविति ।

अर्थ—पीपर, वायविडंग, ओंगा, सहजना, सरसो सिरस, कालीमिरच, कणेर, कंदूरी, सेफन्द, कटभी, वच, मालकांगनी, कंजा, आक, सपेदआक, लहसन, अतीस, अदरख, तालीसपत्र, तमालपत्र, तुलसी, कुठेरक, हिंगोट, मेढासिंगी, बिजोरा, अरण्यबीज, पीलू, चमेली, शाल, ताल, महुआ, लाख, हिंग, निमक मद्य, गोवरकारस, और गौका मूत्र, यह मस्तकके, विरेचक है । कणेरके, जो, प्रथम है उनके फल लेवे, कणेरसें आदिले आकपर्यंतकी जडले, तालीससें जो प्रथम है उनके कंद लेवे, तालीससें लेकर कुठेरक तकके पत्ते लेवे । हिंगोट और मेढासिंगी इनकी छालले बिजोरा अरण्यबीज और पीलू इनके फूलले शाल ताल, महुआ इनका सारले हिंग, लाख, इनका गोंदले, पृथ्वीका विकार निमक, आसवआदिके संयोगसें मद्य जानने गोवर और गोमूत्र आदि मल ए सव प्रसिद्धही है अत एव इनको स्वरूपसें ही ग्रहण करे ॥

### संशमनान्यत ऊर्द्ध्वं वक्ष्यामः ।

अर्थ—संशोधनको कहकर अब संशमन वर्गोंको कहते है, उत्तम रीतमें दु-

ष्ट दोषोंको विना निकालेही शमन करे और जो दोष दूषित नही है उनको बढा-वे नहीं अर्थात् जो देहमें व्याधि है उसको संशमन करे, अर्थात् दूर करे, और जो व्याधि होनेवाली है उसको प्रगट न करे, उस औषधको संशमन कहते है। जैसें प्रमाण है "नशोधयति यद्दोपान् समान्नोदीरयत्यपि-समीकरोति च क्रुद्धान् तत्सं-शमनमुच्यते" दोषशब्द इसजगे दोषोमें दोषोंके कार्योंमें और रोगमें भी कहा है॥

## वातसंशमनोवर्ग

तत्र भद्रदारुकुष्ठहरिद्रावरुणमेषशृङ्गीवलातिवलार्त्त-गलकच्छुरासल्लकीकुवेराक्षीवीरतरुसहचराग्निमन्थव-त्सादन्येरण्डाश्मभेदकालर्कार्कशतावरीपुनर्नवावसु-कवसिरकाञ्चनकभार्गीकार्पासीवृश्चिकालीधत्तूर वद-रयवकोलकुलत्थप्रभृतीनि विदारिगन्धादिश्च द्वे चा-द्येपञ्चमूल्यौ समासेन वातसंशमनोवर्गः ॥

अर्थ—देवदारु, कूठ, हलदी, वरना, मेढासिंगी, वला ( खिरेटी ) अतिवला (कंगही) कोह, कौछ, साल, काष्टपादर, वीरतरु, कटसरैया, अरनी, गिलोय, अंड पापानभेद, सपेदआक, आक, सतावर, सांठ, वकपुष्प, ओंगा, धतूरा, भांरगी वनकपास, वृश्चिकपाक, पतंग, वेर, जो, वेर, कुलथी, विदारिगंधादिगण और दोनोंपंचमूल, यह संक्षेपसें वात संशमन अर्थात् वातनाशक वर्ग है। ( प्रभृति ) शब्द ग्रहणसें उडद, तिल, और आलसीआदिका ग्रहण है॥

## पित्तसंशमनोवर्ग

चन्दनकुचन्दनह्रीवेरोशीरमञ्जिष्ठापयस्याविदारिश-तावरीगुन्द्राशैवालकह्लारकुमुदोत्पलकदलीकन्दलीदू-र्वामूर्वाप्रभृतीनि काकोल्यादिन्यग्रोधादिस्तृणपञ्चमू-लमिति समासेनपित्तसंशमनो वर्गः ।

अर्थ—चंदन, पतंग वा लालचंदन, नेत्रवाला, खस, मजीठ, क्षीरकाको-ली, विदारीकंद, शतावर, सुगंधितृण, शिवार ( काई ) लालकमल, कमोद-नी, नीलकमल, केला, कंदली [ नवीन अंकुर ] दूर्वा, मूर्वा, आदि काकोल्या-

दिगण, न्यग्रोधादिगण, तृणपंचमूल, ये संक्षेपसैं पित्त संशमनवर्ग है आदि-
शब्दसैं मधुर, कडुए, और कषेले पदार्थोंका ग्रहण है ॥

## कफसंशमनवर्ग

**कालेयकागुरुतिलपर्णीकुष्ठहरिद्राशीतशिवशतपुष्पा-
सरलारास्नाप्रकीर्य्योदकीर्य्येङ्गुदीसुमनःकाकादनीला-
ङ्गलकीहस्तिकर्णमुञ्जातकलामज्जकप्रभृतीनि वल्लीक-
न्टकपञ्चमूल्यौपिप्पल्यादिर्बृहत्यादि मुष्ककादिर्व-
चादिः सुरसादिरारग्वधादिरिति समासेन श्लेष्मसं-
शमनो वर्गः ॥**

अर्थ—कालेयक ( चंदनविशेष ) अगर, हुलहुल, कूठ, हलदी, कपूर, सोंफ निसोथ, रास्ना, कटेरी, कंजा, हिंगोट, चमेली, काकडोडी, कलयारी, भूपला-स, सुजातक, लामज्जक ( खसकाभेद ) इत्यादि तथा, वल्लीपंचक, कंटकपंचक, दशमूल, पिपल्यादिगक, बृहत्यादिगण, मुष्ककादिगण, वचादिगण, सुरसादिग-ण, और आरग्वधादिगण, येसंक्षेपसैं कफ संशमनवर्ग है ॥

## संशमनऔरसंशोधनद्रव्योंकीमात्रा

**तत्र सर्वाण्येवौषधानि व्याध्यग्निपुरुषबलान्यभिसमी
क्ष्य विदध्यात् ।**

अर्थ—तहां संपूर्ण संशोधन संशमन औषधोंको रोगीके रोगको अग्नि, और उसके बल ( शक्ति ) को देखके अल्प मात्रा याबृहत् मात्रा देवे ॥

## व्याधिमेंबलाधिक्यऔषधकेअवगुण

**तत्रव्याधिबलादधिकमौषधमुपयुक्तमुपशमय्यव्या
धिं व्याधिमन्यमावहति । अग्निबलादधिकमजीर्णं
विष्टभ्य वा पच्यते । पुरुषबलादधिकं ग्लानिमूर्च्छा
मदानावहति ।**

अर्थ—तहां व्याधिके बलसैं अधिक औषध देनेसैं वह औषध उस रोगको शमनकर दूसरी व्याधिको प्रगटकर । इसीप्रकार जठराग्निकी शक्तिसैं अधिक

औषध देनेसैं वह व्याधि देरमें पचे, अथवा विष्टब्ध होकर पचे। इसीप्रकार पुरुषके बलसैं अधिक औषध देनेसैं ग्लानि, मूर्च्छा, और मत्तावस्थाको करे है॥

## संशोधनकेदोष

संशमनमेवं संशोधनमतिपातयति।

अर्थ—इसीप्रकार संशमन और इस्से अधिक संशोधन दोषोंको करे है अर्थात् रोगीके बलको नष्ट करे है॥

## औषधकीहीनमात्रादेनेमेंदोष

हीनमेभ्यो दत्तमकिञ्चित्करं भवति।

अर्थ—रोगके बलसैं हीनमात्रा रोगीको देनेसैं वो व्यर्थ जाती है उस्सै कुछ कार्य नहीं होता॥

## सिद्धिहेतुउपाधियोंकोदिखातेहै

तस्मात् सममेव विदध्यात्॥

अर्थ—तस्मात् कहिये वही न्यूनाधिक देनेसैं रोगीको हित नहीं पडे इसीसैं रोगके अनुसार यथार्थ मात्रा वैद्यको देनी चाहिये॥

## ( दुर्बलकोतीक्ष्णवमनविरेचनदेनानिषेध )

भवन्तिचात्र।

रोगे शोधनसाध्ये तु यो भवेद्दोषदुर्बलः।
तस्मै दद्याद्भिषक् प्राज्ञो दोषप्रच्यावनं मृदु॥

अर्थ—जो प्राणी शोधनसाध्य रोगमें दोषोंकरके दुर्बलहो ( किंतु उपवासादि करके दुर्बल न हो ) उसको बुद्धिवान्वैद्य दोषोंका निकालनेवाला नम्र विरेचन देवे॥

## अवस्थाविशेषकरकेव्याधिदुर्बलकोभीशोधनकरे

चले दोषे मृदौ कोष्ठे नेक्षेतात्र बलं नृणां।
अव्याधिदुर्बलस्यापि शोधनं हि तदा भवेत्॥

अर्थ—दोषोंके अपने स्थानसैं चलायमान होनेपर-तथा नम्रकोष्टवालेका ( आम अवस्थामें ) बलाबल न देखे, उपवासादिसैं दुर्बल भी हो तथापि उसका शोधन करना चाहिये॥

( मध्यवलीतथामध्यअग्निवालेमनुष्यकोकितनी- )
मात्रादेयहकहतेहै

व्याध्यादिषु तु मध्येषु क्वाथस्याञ्जलिरिष्यते ।
विडालपदकं चूर्णं देयः कल्कोऽक्षसंमितः ॥

अर्थ—व्याधिआदिके मध्यवल होनेसैं क्वाथ और शृतशीत आदिकी मात्रा चारपलकी देवे, और चूर्ण १तोलेदेवे, तथा कल्ककी मात्रा भी एक तोले मात्र कहिये

स्वयं प्रवृत्तदोषस्य मृदुकोष्ठस्य शोधनं ।
भवेदल्पवलस्यापि प्रयुक्तं व्याधिनाशनं ॥

अर्थ—यदि दोषस्वयं निकलतेहो तथा मृदुकोष्ठ एवं हीनवली पुरुषको शोधन व्याधि नाशकहै ।

इति संशोधन संशमनीयाध्यायः समाप्तः

---

अथातो द्रव्यविशेषविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अर्थ—अव द्रव्यविशेष विज्ञानीयाध्यायकी व्याख्या करतेहै ।

पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशानां समुदायाद्द्रव्याभिनिर्वृत्तिरुत्कर्षस्त्वभिव्यञ्जको भवतीदं पार्थिवमिदमाप्यमिदं तैजसमिदं वायव्यमिदमाकाशीयमिति ।

अर्थ—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इनके एकत्र होनेसैं द्रव्योंकी उत्पत्ति वृद्धि और अभिव्यापकता ( प्रसीद्धी ) होतीहै । जैसैं यह द्रव्य पार्थिव ( पृथ्वी संवंधी ) है, यह आप्य ( जलसंवंधी ) है, यह तैजस ( अग्निसंवंधी है यह वायुसंवंधी और यह आकाश संवंधी द्रव्य है ॥

उत्कर्ष उपाधिभेदको दिखातेहै

तत्र स्थूलसारसान्द्रमन्दास्थिरखरगुरुकाठिनगन्धवहुलमीषत्कषायं प्रायशो मधुरमिति पार्थिवं तत् स्थैर्य्य वलसंघातोपचयकरं विशेषतश्चाधोगतिस्वभावमिति ।

अर्थ—तहां स्थूलसार ( मोटापणा ) सान्द्र (भराहुआ) मंद, स्थिर, खर (तै

क्ष्ण ) गुरु ( भारी ) कठिन, अधिक गंधयुक्त, कुछकषेला, और प्राय मधुर, जो पदार्थ है उसको पार्थिव जानना अर्थात् यह पूर्वोक्त गुणयुक्त पदार्थको पृथ्वीसंबंधी जानना ॥

पार्थिवगुणवत्व कहकर उसीको क्रियावत्व कहते है कि—वह स्थिर ( अचलता ) बलसंघात (दृढबल) और उपचय ( बृंहण ) को करे है । विशेष करके इस पार्थिव द्रव्यका अधोगमनशील स्वभावहै अर्थात् यह नीचेको जाती है ॥

## जलद्रव्यकीउत्कर्षउपाधि

शीतस्तिमितस्निग्धमन्दगुरुसरसान्द्रमृदुपिच्छिलरसबहुलमीषत्कषायाम्ललवणं मधुररसप्रायमाप्यं तत् स्नेहनप्रल्हादनक्लेदनबन्धनविष्यन्दनकरमिति॥

अर्थ—शीत, स्तिमित ( आर्द्रता ) स्निग्ध ( चिकना ) मंद, गुरु, सरस, सान्द्र, मृदु ( नरम ) पिच्छल ( लहसदार ) रसबहुल ( बहुतरसवाला ) ईषत्कषाय ( कुछकषेला ) खट्टा, निमकीन, और मधुर रसप्राय ऐसा आप्य ( जल ) पदार्थ होताहै ॥

वह स्नेहन ( चिकनाई करनेवाला ) प्रह्लादन ( सुखोत्पादन ) क्लेदन ( आर्द्रकरता ) बंधन और विष्यंदनकर ( झरने वाला ) इत्यादि गुणोंको यह आप्य द्रव्यकरे है ॥

## तैजसद्रव्यकेगुणऔरस्वभाव

उष्णतीक्ष्णसूक्ष्मरूक्षखरलघुविशदं रूपगुणबहुलमीषदम्ललवणं कटुकरसप्रायं विशेषतश्चोर्द्धगतिस्वभावमितितैजसं तद्दहनपचनदारणतापनप्रकाशनप्रभावर्णकरमिति ॥

अर्थ—उष्ण, तीक्ष्ण ( तीखा—चरपरा ) सूक्ष्म ( छिद्रोंमें प्रवेशकरता ) रूक्ष ( रूखा)खर ( पैना ) लघु ( हलका ) विशद ( फैलनेवाला ) रूपगुण बहुल( इसमेंरूपगुण अधिक रहता ) है, कुछ खट्टा, निमकीन, और कटुरसप्रायहै तथा इसका स्वभाव ऊर्द्ध गति (ऊपरको जानेवाला) है ये तैजस पदार्थका स्वभाव है॥

अब इसको गुण कहते है कि ये दहन ( दाह ) पचन ( पाचक ) दारण ( चीरना ) तापन ( संतापकारी ) प्रकाशन ( उजेलाकरने वाला ) तथा प्रभा ( तेज) औ र वर्ण ( गौरसपेद ) इत्यादि गुणोंको करे है ॥

## वायवीय द्रव्यके गुण स्वभाव

सूक्ष्मरूक्षखरशिशिरलघुविशदं स्पर्शबहुलमीषत्तिक्तं विशेषतः कषायमिति वायवीयं तद्वैशद्यलाघवग्लपनविरूक्षणविचारणकरमिति ॥

अर्थ—सूक्ष्म, रुक्ष, खर, शिशिर ( शीतल ) लघु, विशद, स्पर्शबहुल ( इसमें छूनेका गुण अधिकहै ) कुछ कडुआ और विशेषकरके कपेला इत्यादिगुणवान् वायवीय अर्थात् वायु संबंधी द्रव्य होता है ॥

अव इसके गुण कहते हैं कि यह वैशद्य ( फैलना ) लाघव ( हलकापना ) ग्लपन ( वृष्यताके विरुद्ध ) विरुक्षण ( रुक्षता कारक ) और विचारणकर(मनमें अनेक विचार करता ) इत्यादि पवन द्रव्यके गुण जानने ॥

## आकाशीय द्रव्यके गुण स्वभाव

श्लक्ष्णसूक्ष्ममृदुव्यवायिविविक्तमव्यक्तरसं। शब्दबहुलमाकाशीयं तन्मार्दवशौषिर्य्यलाघवकरमिति ॥

अर्थ—श्लक्ष्ण ( गिलगिला ) सूक्ष्म, मृदु, व्यवायी ( प्रथम सब देहमें व्याप्त होकर पकने वाला ) विविक्त ( पृथक् हुआ अर्थात् अवयव द्वारा करके शून्य) अव्यक्तरस(जिसमें मधुरादि रसकी प्रतीत नहो) तथा शब्दबहुल ( इसमें शब्दका गुण अधिकहै ) कुछ कडुआ, और विशेष करके कपेला इत्यादि गुण विशिष्ट आकाशीय अर्थात् आकाश संबंधी द्रव्य जानना ॥

अब इसके गुण कहते हैं कि यह मार्दव ( मृदुता ) शौषिर्य ( छिद्रभाव वाला ) और हलका करनेवाला आकाश संबंधी द्रव्य जानना ॥

## सब औषधोंको पांचभौतिकत्व

अनेन निदर्शनेन नानौषधीभूतं जगति किञ्चिद्द्रव्यमस्तीति कृत्वा तं तं युक्तिविशेषमर्थं वाभिसमीक्ष्य स्ववीर्य्यगुणयुक्तानि द्रव्याणि कर्मकराणि भवन्ति ।

अर्थ—इस पूर्वोक्त पांचभौतिक द्रव्योंके कहनेसें यह दिखाया कि इस स्थावर जंगमात्मक जगत्में कोईसी द्रव्य अनौषधिभूत ( जो औषध न कहलाती हो ) नहीं है [ अर्थात् जितनी संसारमें वस्तुहै वो सब औषध रूपहै ] इसीसें

उनकी पृथक २ युक्ति विशेष और अर्थ विशेषको विचार स्ववीर्य गुणयुक्त द्रव्य देनेसे वो कर्मके करनेवाली होती है ॥

**तानि यदा कुर्वन्ति स कालः यत्कुर्वन्ति तत् कर्म, येन कुर्वन्ति तद्वीर्यं, यत्र कुर्वन्ति तदधिकरणं, यथा कुर्वन्ति स उपायो, यन्निष्पादयति तत् फलमिति॥३॥**

अर्थ—वो द्रव्य जिस कालमें क्रियाकरे है वो कौल जानना, और जो कार्य करे वो कर्म है, तथा जिस करके करे वो वीर्य है, जिसमें करे वो अधिकरणहै, जैसे करे वो उपायहै, एवं उस क्रियाद्वारा जो रोग अथवा आरोग्य प्रगट होवे उसको फल कहते है ॥

## औषध ज्ञानमें अनुमानकी योजना

**तत्र विरेचनद्रव्याणि पृथिव्यम्बुगुणभूयिष्ठानि पृथिव्यापो गुर्व्यो गुरुत्वादधोगच्छन्ति तस्माद्विरेचनमधोगुणभूयिष्ठमनुमानात् ।**

अर्थ—तहां विरेचन द्रव्य ( निसोथ, जमालगोटा आदि ) पृथ्वी और अंबुगुण भूयिष्ट है, तो अब जानना चाहिये कि पृथ्वी और जल यह दोनो भारी है भारीहोनेमें दोनों नीचेको जाते है, अतएव जितनी विरेचन द्रव्यहै अर्थात् जुलाव लानेवाली औषधी है सो अधोगुण भूयिष्ट कहिये अधिक करके नीचेको जानेवाली है । यह अनुमान ( अटकल ) से जाना जाता है । [ उदाहरण जैसे–पत्थर ईंट, जल, तेल आदि जानने ] ॥

---

१ युक्ति विशेष करके जल, अग्नि, संस्कार, भावना, मात्रा, और काल आदिकी योजना विशेष जानना । २ अर्थ करके अनेक व्याधि नाशरूप प्रयोजनका ग्रहण है । ३ काल करके शीतोष्णवर्षालक्षण संवत्सरात्मक रोगोंके अनुकूल्यका ग्रहणहै । ४ कर्मशब्दसें शोधनादि द्रव्योंका व्यापार जानना । ५ शक्तिहै । ६ अधिकरणशब्दसें पंचमहाभूतोंके बने हुऐ इस मनुष्यदेहका ग्रहणहै । ७ उपाय इस शब्दमें स्वरस, कल्क, शृतशीत, फांट, घृत, तैल, लेह, मोदकादि प्रकार जानना । ८ इस जगे भारी और हलकापना निशोथआदि और मैनफल आदि द्रव्य प्रभावविशेष करके मिश्रित लेना केवल गुरु लघुत्व मानही करके नहीं लेना क्योंकि यदि गुरु लघुत्व मात्रसेंही दस्त कै होती है ऐसा मानोगे तो मछली, पिष्ठ आटामें और मसर आदि भारी हैं इनके खानेसें दस्त होने चाहिये ।

वमनद्रव्याण्यग्निवायुगुणभूयिष्ठान्यग्निवायू हि लघू लघुत्वाच्च तान्यूर्ध्वमुत्तिष्ठन्ति तस्माद्वमनमप्यूर्ध्वगुणभूयिष्ठ मुक्तं ।

अर्थ—इसीप्रकार संपूर्ण वमनद्रव्य (कैलानीवाली औषधी) अग्निऔर पवन गुण भूयिष्ट है तो अव विचारना चाहिये कि अग्नि और वायु ये दोनो हलके है हलके होनेसैं यह दोनो ऊपरको जाते है इसी कारण वमनद्रव्य ऊर्ध्वगुण भूयिष्ट ऐसा कहाहै अर्थात् अनुमानसैं जाना जाता है [ उदाहरण जैसै-धूंआ और अग्निकीज्वाला आदि जानने ]॥

उभयगुणभूयिष्ठमुभयतोभागं।

अर्थ—इसी प्रकार उभय गुणभूयिष्ट द्रव्य अर्थात् जिसमें पृथ्वी और अग्नि इसप्रकारदो तत्वोंके गुण मिले हो तो अव विचारना चाहिये कि पृथ्वी भारी है और अग्नि हलकी है तो ऐसी उभय गुणवाली औषधी दोनों तरफ गमन करती है अर्थात् दस्त और रद्द दोनों कराती है ऐसा अनुमानसै जाना जाताहै॥

आकाशगुणभूयिष्ठं संशमनं । संग्राहकमनिलगुणभूयिष्ठमनिलस्यशोषणात्मकत्वात् । दीपनमग्निगुणभूयिष्ठं । लेखनमनिलानलगुणभूयिष्ठं । बृंहणं पृथिव्यम्बुगुणभूयिष्ठं । एवमौषधकर्माण्यनुमानात् साधयेत् ॥

अर्थ—आकाशगुण भूयिष्ट द्रव्य संशमन है [ जैसे आकाश निश्चल और सर्वत्र व्यापकहै उसीप्रकार संशमन औषधी है ] जिसमें पवन गुण भूयिष्ट है वो द्रव्य संग्राहक ( शोषक ) है, [ जैसें पवन शोषण कर्त्ता है इसी प्रकार संग्राही द्रव्य ( आर्द्रता ) शोषण करे है ] अग्नि दीप्त गुणवाला होनेसैं अग्नि गुणभूयिष्ट द्रव्यभी दीपन जानना । तथा पवन ओर अग्निगुण भूयिष्ट द्रव्य लेखन अर्थात् ( कफ भेदाको पतला करनेवाला जानना । पृथ्वी और जलगुण भूयिष्ट द्रव्य बृंहण ( पुष्टकारी ) जाननी । इसीप्रकार औषधोंके कर्मोंको अनुमानद्वारा वैद्य साधनकरे ॥

---

१तथा सपेद तीतर और ख्वा पक्षियोंकामांस हलकाहै तो इससें भी रद्द होनीचाहिये। परंतु ऐसा नही होता तो इस्मे यही सिद्धहुआ कि प्रभाव विशिष्ट भारी हलकी औषधोंमे दस्त और रद्द होती हैं ।

भवन्ति चात्र।

भूतेजोवारिजैर्द्रव्यैः शमं याति समीरणः।
भूम्यम्बुवायुजैः पित्तं क्षिप्रमाप्नोति निर्वृतिं॥
खतेजोऽनिलजैः श्लेष्मा शममेति शरीरिणां।

अर्थ—तहां पृथ्वी, तेज, और जल गुण भूयिष्ट द्रव्यसें वादी शमन होती है। पृथ्वी-जल और वायुगुणभूयिष्ट द्रव्यसें पित्त तत्काल शांति होता है। एवं आकाश, अग्नि, और पवनगुण बहुलद्रव्यसे मनुष्योंका कफ शांति होताहै॥

वियत्पवनजाताभ्यां वृद्धिमाप्नोति मारुतः॥
आग्नेयमेव यद्द्रव्यं तेन पित्तमुदीर्य्यते।
वसुधाजलजाताभ्यां बलासः परिवर्द्धते॥
एवमेतद्गुणाधिक्यं द्रव्ये द्रव्ये विनिश्चितं।
द्विशो वा बहुशो वापि ज्ञात्वा दोषेऽवचारयेत्॥

अर्थ—तथा आकाश पवन जन्य औषधोंसे वादी बाढती है, अग्नि गुण संबंधी द्रव्य सें पित्त बढता है, और पृथ्वीजल जन्य औषधोंसें कफकी वृद्धि होती है। इसप्रकार प्रत्येक द्रव्यमें गुणाधिक्य जानना, उन दो दो गुणों सें-तथा तीन२ गुणोंसें उत्पन्न द्रव्योंको दो दो दोषोंमें अथवा बहुतसे दोषोंमें विचार करके देवे

तत्र यइमे गुणा वीर्य्य संज्ञकाः शीतोष्णस्निग्धरूक्षमृदुतीक्ष्णपिच्छिलविशदास्तेषां तीक्ष्णोष्णावाग्नेयौ। शीतापिच्छिलावम्बुगुणभूयिष्ठौ। पृथिव्यम्बुगुणभूयिष्ठः स्नेहः। तोयाकाशगुणभूयिष्ठं मृदुत्वं। वायुगुणभूयिष्ठं रौक्ष्यं। क्षितिसमीरणगुणभूयिष्ठ वैशद्यं।

अर्थ—तहां शीत, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष, मृदु, तीक्ष्ण, पिच्छल, विशद, ये जो वीर्यसंज्ञक गुण है इनमें तीक्ष्ण और उष्ण ये अग्निसंबंधी गुण है। शीत और पिच्छल अंबुगुण भूयिष्ट है अर्थात् जल संबंधी है। पृथ्वी और अंबुगुण भूयिष्ट स्नेहगुण है। जल और आकाश गुणभूयिष्ट मृदगुण है। रूक्षगुण पवन भूयिष्ट है पृथ्वी और पवन गुण भूयिष्ठ विशद गुण है॥

गुरुलघुविपाकावुक्तगुणौ। तत्रोष्णस्निग्धौ वातघ्नौ। शीतमृदुपिच्छिलाः पित्तघ्नाः। तीक्ष्णरूक्षविशदाः

श्लेष्मघ्नाः । गुरुपाको वातपित्तघ्नः । लघुपाकः श्लेष्मघ्नः । तेषां मृदुशीतोष्णाः स्पर्शग्राह्याः । पिच्छिलविशदौ चक्षुःस्पर्शाभ्यां । स्निग्धरूक्षौ चाक्षुषौ । शीतोष्णौ सुखदुःखोत्पादनेन । गुरुपाकः सृष्टविण्मूत्रतया कफोत्क्लेशेन च । लघुर्बद्धविण्मूत्रतया मारुतोकोपेन च । तत्र तुल्यगुणेषु भूतेषु रसविशेषमुपलक्षयेत् । तद्यथा । मधुरो गुरुश्च पार्थिवः मधुरः स्निग्धश्चाप्य इति । (भवंति चात्र ।)

अर्थ—लघु और गुरु विपाक दोनोंके गुण प्रथम कह आए है । उष्ण और स्निग्ध वीर्यसंज्ञक गुण वातको शमन करते है। शीत मृदु और पिच्छल वीर्यसंज्ञक गुण पित्तको। तीक्ष्ण रूक्ष और विशद वीर्यसंज्ञक गुण कफको शमन करते है गुरुपाक वातघ्न है । लघुपाक कफघ्न है । इनमें मृदु शीत और उष्णगुण स्पर्शनेन्द्री अर्थात् त्वचाकरके ग्राह्य है । पिच्छल ( गिल गिला ) और विशद दोनो चक्षुइन्द्री तथा स्पर्शनेंद्री करके ग्राह्य है । स्निग्ध रूक्ष नेत्र करके। शीत और उष्ण सुखदुःखके उत्पादन से ग्राह्य है अर्थात् प्रतीत होते है ॥

तहां मल मूत्रके निकलनेसें और कफके उत्क्लेशकरके गुरुपाकहुआ जानना, तथा मलमूत्रके न उतरनेसे और वायुके कुपित होनेसे लघुपाक हुआ जानना तहा तुल्यगुण पृथिव्यादि भूतोंमें रसविशेषको जाने । जैसे मधुर और गुरये पृथ्वीके है और मधुर स्निग्ध ये जलके है ॥

गुणा य उक्ता द्रव्येषु शरीरेष्वपि ते तथा ।
स्थानवृद्धिक्षयास्तस्माद्देहिनां द्रव्यहेतुकाः ॥ ४।८।६

अर्थ—जो वीस गुण द्रव्य ( औषधादिक ) में कहे है वो इस देहोंमेभी है अतएव है, वोस्थान ( दोष, धातु, मलकी साम्यता ) वृद्धि ( दोषादिकोंकी अधिकता) और ह्रास ( दोषादिकोके घटने करके ) पांचभौतिक द्रव्यके हेतु होते है । अर्थात् जैसे २ दोषधातु मलादिक इस प्राणीकी देहमें घटते बढते है तैसें२ पृथ्वीजल, तेज, वायु और आकाश जन्य द्रव्योंको इस देहमें घटाते बढाते है यह अध्याय सब वैद्योंका विचारने योग्य है ॥इतिश्री माथुर कृष्णलालतयन दत्त राम संकलिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे द्रव्यविशेष विज्ञानाया ध्याय. स०

## अथातो हिताहितीयमध्यायं व्याख्यास्यामः।

अर्थ—अब हम हिताहितीय अध्यायकी व्याख्या करते हैं। अर्थात् इसमाणीको ये वस्तु हित ( पथ्य ) है, और ये वस्तु अहित ( अपथ्य ) है, इन दोनोंका इस अध्यायमें वर्णन किया जावेगा ॥

### प्रथमऔरोंकेमतकोकहतेहैं

**यद्वायोः पथ्यं तत्पित्तस्यापथ्यमित्यनेन हेतुना न किञ्चिद्द्रव्यमेकान्तेन हितमहितं वास्तीति केचिदाचार्य्या ब्रुवते तत्तु न सम्यक्।**

अर्थ—जो वस्तु वादीके रोगमें पथ्य है वह पित्तके रोगमें अपथ्य है [ कारण यह है कि वादीको वही वस्तू दूरकरेगी जो गरम होवेगी, और जो गरम है वह अवश्य पित्तके रोगमें अपथ्य होवेगी जैसे तेल और कांजी है ] इस हेतुसे कोईसी द्रव्य निरंतर हितकारी नहीं होसके क्योंकि पित्तको अहितकारी है और न निरंतर अहितकारीहो सक्ती है कि वातको हितकरे है। ऐसें कोई आचार्य कहतेहैं परंतु उनका यह कहना ठीक नही है क्योनहीं है इसवास्ते कहते हैं।

### अपनामतकहतेहैं

**इह खलु यस्माद्द्रव्याणि स्वभावतः संयोगतश्चैकान्तहितान्येकान्ताहितानि हिताहितानि च भवन्ति।**

अर्थ—इस सौश्रुत ग्रंथमें द्रव्य, स्वभाव ( प्रकृति ) सें और संयोगसें निरतर

---

हे वृहन्निघंटुरत्नाकरके ग्राहक मित्र गणहो ! इस हिताहितीयाध्यायके नीचे हम चरकसें यज्ञः पुरपी याध्यायका केवल भाषातर मात्र करके आपकी सेवामें निवेदन करते है यदि आप प्रसन्न होकर इसको स्वीकारकरेंगे तो हम अपने परिश्रमको सफल मानेंगे ॥

श्रीहरि—पहिले प्रत्यक्ष धर्मस्वरूप भगवान् पुनर्वसु आत्रेय की महर्षियोंके साथ यह वार्त्ता चलीकि आत्मा, इन्द्री, मन, और इनकेअर्थ इनका समूह यह पुरुषसंज्ञक है इस पुरुषका और पुरुषके देहमें जो रोग उत्पन्न होते है उनके प्रथमहीं रोगोत्पत्तिका निश्चय किस प्रकारहो। तब उससभामें काशीपति जिसको वामकभी कहते है वो सब ऋषियोंको प्रणामकर अपनी संमती इसप्रकार कहने

---

१ जोसपूर्ण अवस्थाओंमे छूटे नहीं वो द्रव्यकी प्रकृती है। जैसें अग्निमें उष्णत्व, औ-जलमें द्रवत्व, तो यहा उष्णत्व और द्रवत्व येही अग्नि और जलद्रव्यकी प्रकृति जाननी।

लगा कि हितकारी और निरंतर अहितकारी एवं निरंतर हिताहित कर्त्ता होती हैं। इस जगह चकार जो पडा है इस्से संयोगमें स्वभावभी हेतु जानना तथा देश, काल, मात्रा, संस्कार ये सब स्वभावके संबंधसें जानने ॥

प्रथमएकांतहितोकोकहतेहै

तत्रै कान्तहितानि जातिसात्म्यात् सलिलघृतदुग्धौ दनप्रभृतीनि ।

---

यह पुरुष जिन कारणोंसें होता है वही कारण जन्य इसके देहमें व्याधिहोती है यह बात जो मैंने कही है हेऋषिहो ! यह ठीक है या नाहिं ? तब उस सभाके मध्यमें श्रीपुनर्वसु आत्रेय महर्षि सब ऋषियोंके प्रति बोले कि हेऋषिहो ! तुम सब अचिंत्य ज्ञान विज्ञान करके संशय रहितहो आपही इन महात्मा काशीराजके संशयको दूरकरो। यह वचन सुन मौद्गल्य ऋषि बोले कि ॥

यह पुरुष आत्मासें उत्पन्न होता है अत एव इसके जो रोगहोते है वो भी सब आत्मजन्य है अर्थात् आत्मासें प्रगट होते है। यह पुरुष कर्मोको संचय करता है अतएव उन कर्मोंके फलको भोगता है, ये जितनें आत्माजन्य सुखदुःखहै वो सुखदुःख चैतन्यरूपको नही है यह मौद्गल्यके वचन सुन शरलोमा ऋषि बोलाकि ॥

यह आपका कथन ठीक नही है, क्योंकि आत्मासें आत्मा नहीं हो, न यह पुरुष आपको दुखदाई कर्मोंका संग्रह करता है। इसका यह कारण है कि दुःखोंसें द्वेपकर्त्ता प्राणी अपनी आत्मको दुखदाई व्याधियोंमें कदाचित् नियुक्त नहीं करनेका। कदाचित् सब ऋषि प्रश्णकरे कि फिर यह पुरुष कैसै होता है तहां शरलोमा अपने मतको कहे है।कि यह सत्व संज्ञक मन रजोगुण तमोगुणसें मिलाहुआ इस मनुष्य देहका और इस मनुष्यदेहमें होनेवाले रोगोंका कारण है यह शरलोमाके वचन सुन वार्णीविद ऋषि बोलेकि ॥

यह आपका कहना ठीक नही है ? क्योकि एक मनही इनका कारण नहीं होसक्ता देहके अंतमें न शरीररहे न शरीरके रोगरहे न मन रहता है इस्से मेरी समझमें यह आता है कि संपूर्ण प्राणी राजसी अर्थात् रजोगुणसें प्रगटहै। और संपूर्ण व्याधिभी राजसी है। यह शरलोमाके वचन सुनके हिरण्याक्ष ऋषि बोलेकि

यह कथन ठीक नहीं है। क्योंकि आत्मा राजसी नहीं है और इन्द्रीरहित मनभी नही है और न शब्दादि जन्यरोगहै। इस्से मेरी समझमें यह आता है कि यह पुरुष छःधातुओमें प्रगटहै, और रोगभी षड्धातु जन्यहै। अतएव यह छःधातु

अर्थ—तहां हिताहित द्रव्योंमें मनुष्य मात्रक जातिसात्म्य होनेके कारण जल, घृत, दूध, भात, और आदिशब्दसें गेंहू जो आदिनिरंतर सबको हितकारी है ॥

## एकान्तअहित

**एकान्ताहितानि दहनपचनमारणादिषुप्रवृत्तान्यग्नि-क्षारविषादीनि। संयोगादपराणि विषतुल्यानि भवन्ति।**

अर्थ—तथा दहन ( जराना ) पचन ( पचाना ) और मारणादिकोंमें प्रवृत्त ऐसे अग्नि, क्षार, विषादिक ये सब प्राणिमात्रके जाति असात्म्य होनेसें निरंतर अहितकारी है। परंतु यह कथन नैरोग्य पुरुषोंके प्रति है, रोगीको तो रोगमात्राकी अपेक्षा करके अग्नि क्षारादि हितकारी ही होते है। और बहुतसी द्रव्य द्रव्यांतरोंके संयोग वससें विषके तुल्य होजाती है ॥

---

ओंका समूहहै। इस वचनको सुन सांख्यायन आद्यपरीक्षित और कुशिकऋषि बोलेकि हमारी समझमेंभी ऐसाही आता है। इसप्रकार कुशिकऋषिके वाक्यको सुन शौनकऋषि बोलेकि ॥

यदि आप इसपुरुषको षड्धातुसें उत्पन्नहुआ बतातेहो तो में आपसे पूछताहूं कि बिना माता पिताके कैसे यह पुरुष षड्धातुज प्रगट होसक्ताहै। इस्सें मेरी समझमें ऐसा आताहै किपुरुषसें पुरुषहोताहै। गौसें गौ।घोडेसें घोडा उत्पन्नहोता है। और जितने प्रमेहादिक रोग है वो पितृजन्य अर्थात् पितासें ही होते है यह सौनक ऋषिके कहनेको सुनकर भद्रकाप्य नामक ऋषि बोला यह ठीक नही है ॥

क्योंकि अंधेमनुष्यसे अंधा बालक नहीं होता पहले मातापिताहीकी उत्पत्ति नहींथी फिर बालक कहांसें हुआ, इस्सै मेरी समझमें ऐसा आता है कि यह प्राणी कर्मज हैं अर्थात् कर्मसें प्रगट होता है और जितने रोग इस प्राणीके होनेवाले है वह सब कर्मज हैं। क्योंकि कर्मके विना न पुरुषका जन्म और नरोगोंका जन्म है। इस प्रकार भद्रकाप्यके वाक्यको सुन भरद्वाजबोलेकि यह ठीकनहीं क्योंकि उस कर्मकाभी रचनेवाला उसके प्रथमथा ऐसा देखागया है जिसकर्मका फल पुरुष है ऐसा अकृतकर्म नहीं देखा गया अतएव हमारी समझमें ऐसा आता है कि इस प्राणीके और रोगोंके उत्पन्नहोनेमें स्वभावही हेतु है। जैसे द्रव्योंमें खर, द्रव, चल, उष्ण, तेज, इनमें स्वभावही कारण है उसीप्रकार इस पुरुष और रोगोंके होनेमेंभी स्वभाव कारण है ॥

---

१ जो वस्तु आत्मा और देहके साथ रहकर देहमें विकार न करे उसको सात्म्य कहते है।

## एकांतहिताहित

### हिताऽहितानितु यद्वायोः पथ्यं तत्पित्तस्यापथ्य मित्यतः सर्वप्राणिनामयमाहारार्थं वर्ग उपदिश्यते ॥

अर्थ—और वहुतसी द्रव्य हितकारी तथा अहितकारी दोनों प्रकारकी है जैसे जो द्रव्य वादीको पथ्य है वह पित्तको अपथ्य है इसप्रकार सकल द्रव्य हिताहित कर कहाती है, अब सब प्राणियोंके आहारके वास्ते एकांतहितवर्ग एकांत अहितवर्ग और एकांत हिताहितीय वर्गोंको कहते है ॥

---

इस वचनको सुन कांकायनऋषि बोला यह भी ठीक नही है-क्योंकि यदि स्वभावही पुरुष और व्याधिका कारणहै तो उस स्वभावका फल प्रारंभमेंही क्यों नही होता, भावों के होने न होनेकी सिद्धी अथवा असिद्धी स्वभावसे होती है यदि स्वभावसें ही पुरुष होताहै तो उस ब्रह्माको रचनेवाला और प्रजापति कहते है वो व्यर्थ है, और संतानहोनेके निमित्त जो प्रजाहितैषी दु ख उठाते है वोभी नहोना चाहिये क्योंकि वह तो स्वभावसेंही होतीहै ? फिर दुःख क्यों उठाना इसवास्ते मेरी बुद्धिमें यह आताहै कि यह पुरुष कालज्ञ अर्थात् कालसें उत्पन्नहै और इसके होनेवाले रोगभी कालजन्यहै और यह संपूर्ण जगत कालके वशहै। इसवास्ते सर्वत्र कालही कारण है ॥

इस प्रकार ऋपियोंके आपसमे विवाद ( झगडा ) करनेमें श्रीपुनर्वसु आत्रेय वोलेकि भाईहो ऐसा विवादमतकरो, क्योकि जहां पक्षपात है वहा पर तत्व निश्चय अर्थात् किसी बातका निर्णयद्वारा सिद्धांत करना दुष्प्राप्य है । वाद और प्रतिवादोंको कहते है २ उस पक्षकी समाप्तिको नही पहुचे, जैसे तेलकी घानीका बैल चलते २ समाप्तिको नही पहुचे [ तात्पर्य यह हैकि जैसे घानीका बैल बराबर उस घानीके और पास डोलाही कर्त्ता है, उसीप्रकार पक्षपाती दो विवाद करनेवालोंका झगडा नहीं समाप्ति होवे इसवास्ते आत्रेय महर्षि कहते है कि इस विवादको त्यागके अध्यात्म ( सिद्धांत ) का चिंतवन करो ॥

जैसे अंधकारमें एक खंभखडाहुआ है उसको जाननेवाले जब तक नहीं जानेगे कि यावत् वह अंधकार दूर नांहिंहो । जिन भावोंकी संपत्य इस प्राणीको उत्पन्न करेहे वोही उन प्राणियोकी अनेक प्रकारकी व्याधियों को उत्पन्न करे हे।

इसप्रकारका आत्रेय ऋपिके वचन सुन काशीपति वामक फिर आत्रेयसे बोलाकि हेप्रभो ! संपन्निमित्तजन्य प्राणिके संपन्निमित्तजन्य रोगके वढनेमें क्याकारणहे ॥

तद्यथा-रक्तशालिषष्टिककङ्गुकमुकुन्दकपाण्डुकपीतकप्रमोदककालकाशनकपुष्पककर्दमकशकुनाहृतसुगन्धककलमनीवारकोद्रवोद्दालकश्यामाकगोधूमवेणुयवादयः ।

अर्थ—लालचावल, सांठीचावल, कंगू ( कांगुनी ) मुकुंदक ( कालेरंगकेसाठीचावल ) पांडुक ( पीले रंगके चावल ) पीतक-प्रमोदक-कालक-अशनक-पुष्पक-कर्दमक-शकुनाहृत-सुगंधक-( देवशालि ) कलमक-(कल्मी) इत्यादिचावलोंको जाति-गेहूं तथा-वेणुयव ( वांसके चावल ) इत्यादिधान्य ॥

---

तब आत्रेय महर्षि बोलेकि अहित आहार अर्थात् कुपथ्य भोजन करना व्याधि होनेका कारण है इस प्रकार कहरहे जो आत्रेय उनसें अग्निवेश ऋषि बोलाकि हेभगवन् ! हित और अहित आहारका लक्षण वादरहित हम किसप्रकार जाने तथा हम देखतेहेकि मात्रा, काल, क्रिया, भूमि, देह, दोष, पुरुषकी अवस्थांतर और, इनमें युक्तभी आहार अपने विपरीत गुणकरता है इस्से आप कहियेकी इनमें क्या कारण है ॥

## हिताहित आहारके लक्षण

तव आत्रेयमहर्षि वोले कि प्रथममें तुमसें हितआहारके लक्षण कहताहू सो सुनो हे अग्निवेश ! जो आहार शरीरकी समान धातुओंको प्रकृतिमें स्थापनकरे अर्थात् घटने वढने न देवे, और जो धातु विषम होरहीहो उनको समानकरे उसको हित आहार जानना। यह सव प्राणियोंके सेवन करनेयोग्य है, और इस कहेहुए लक्षणसे विपरीतहो वह आहार अहित है, उसको मनुष्य त्यागदेवे ॥

इस प्रकार हिताहित कहने वाले भगवान् आत्रेयसें अग्निवेश वोला कि हेभगवन्। यहजो आपने हिताहित कहा इसको क्या वैद्य जान जावैगे? तव आत्रेय बोले कि हेपुत्र ! जिनको गुणोंसें, द्रव्य सें, कर्मसें, संपूर्णअवयवोंसें, मात्रासें और भावसें आहारतत्वका ज्ञानहै वोही वैद्य जानसक्ते है अन्यनहीं परंतु जैसें सब वैद्य जाने उसको में कहताहूं ॥

मात्रादि भावोंके कहनेसें उनके अनेक भेद होते हे इसवास्ते आहार विधि विशेषोंको लक्षण सें ओर अवयवो करके व्याख्यान करें है ॥

एकप्रकारका आहार अर्थभेदसें वह स्थावर जंगमात्मक द्वियोंनिके कारण दोप्रकारका तथा द्विविध प्रभाव अर्थात् एक हितकारीदूसरी अहितकारी होकर

## एणहरिण-कुरङ्गमृगमातृकाश्वदंष्ट्राकरालककरकपोत-लावतित्तिरिकपिञ्जलवर्त्तीरवर्त्तिकादीनांमांसानि ।

कालामृग-लालवर्णकामृग-कुरंग ( काले हरिणके बराबर कुछ २ लालरंगका ) मृगमात्रिका (कुरंगकी स्त्री ) स्वदंष्ट्रा ( अतिदुष्टकर्कटका ) कराल ( कस्तूरीमृग ) क्रकर ( क्रकसपक्षी ) कपोत ( पिंडुकिया ) लवा, कालातीतर-सपेदतीतर-बटेर-वर्त्तिक ( बटेरका भेद घर्घर ) इनसबका मांस ॥

---

उसको चारप्रकारसैं उपयोग करते हे जैसैं भक्ष ( बूरा, खांड, चूर्णआदि ) भोज्य ( लड्डू पेडा आदि ) लेह्य ( अवलेह, लहापसी, चटनीआदि ) और चोष्य ( जो चूसने योग्य पदार्थ हे जैसे ईखकी गडेरी और आम इत्यादि ॥

उस आहारमें रसोंके भेदसैं छःप्रकारका ( मीठा, खट्टा, चरपरा, निमकीन, कडुआ, और कसेला) स्वाद है। और वीस गुण हैं जैसैं गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध रूक्ष, मंद, तीक्ष्ण, स्थिर, रस, मृदु, कठिण, विपद, पिच्छल, श्लक्ष्ण, खर, सूक्ष्म, स्थूल, सांद्र, द्रव, इनके आपसमें संयोगहोनेसै असंख्यात भेद होजाते है॥

द्रव्य संयोग करणकी अधिकतासैं उस आहारके जो जो विकारके अवयव अत्यंत प्रगटहोते है । वह मनुष्योंकी प्रकृतिसैं हिततम और अहिततम अधिक कल्पना होती हे उन्ही २ कल्पनाओंको हम व्याख्यान करते है ॥

तहां लालचावल शूकधान्योंमे पथ्यतम और उत्तमहै, इसीप्रकार-फलीके धान्योंमें मूंग उत्तम, निमकोंमें सैंधानिमक, शाकोंमें ( तरकारियोंमे ) डोडीका साग उत्तमहै, हिरनके मांसोंमें कालेहिरनका मांस, पक्षि ( परंदों ) में लवा, विलेमें रहने वाले जीवोंमें गोह, मछलियोंमें रोहू मछली, घीयोंमें गौका घी, दूधोंमे गौका दूध, स्थावर अर्थात् वृक्षादिजातिके तेलोंमे तिलकातेल, चर्बियोंमे सूअरकी चर्वी, रूपमृग चर्बियोंमें सेह ( जो कांटेवाला जानवर होताहै उसकी ) चर्वी, मछलियोंकी चर्वोंमें जो पाकहंस नाम मछली होती है उसकी वसा, जलमें रहनेवाले पक्षियोंमे जलमुर्गावीकीचर्वी, पखेरुओंमें विष्कर ( जो खानेकी चीजको विखेरके खाने वाले असे)मुरगा, कबूतर, पिंडुकिया, और चिडाआदि उत्तमहै, चारपैरोंके जीवोंमें बकरी-दुंबा आदि पथ्यहै । कंदोंमें अदरख पथ्य है। फलोंमें मुनकादाख पथ्यहै । ईखके विकारोंमें मिश्री वा चीनी उत्तम है ॥

ये आहारकी अर्थात् खानेयोग्य वस्तु सब मनुष्यकी प्रकृतिसैंही हितहै ( ये पदार्थ सबकोखाने चाहिये ) ये हित अहार समूह मेने संक्षेपमैं कहाहै ॥

अपथ्यगण

अब अहित पदार्थोंको कहते है। शूकधान्योंमें जौं अपथ्य हैं, फलीवाले धान्यों-

मुद्गवनमुद्गमकुष्ठकलायमसूरमङ्गल्यचणकहरेण्वाढकी
सतीलाः। चिल्लिवास्तुक-सुनिषण्णकजीवन्तीतण्डु
लीयकमण्डूकपर्ण्यः।

अर्थ–वनकीमूंग–मूंग–मौंठ–मटर–मसूर–पीलेरंगकी मसूर–चना–गोलमटर–अरहर–और केराव इतने फलीवाले धान्य ॥
खेतकावथुआ–वनका वथुआ–चौ पतिया–डोडी–चौलाई–और ब्राह्मी ये सागोंमें

---

में उडद अपथ्य है, नदियोंमें वारिषका जल कुपथ्य है। निमकोंमेंऊपर जमीनमें जो निमक होता है वह कुपथ्य है। सागोंमें सरसोंका साग कुपथ्य है। चरपाएन् में गौका मांस कुपथ्य है [इसी कारण हमारे हिन्दुओंमें गोमांस खाना निषेधहै] अब मांसखाने वालोंसें हम प्रार्थना करते है कि जब यह गोमांस खानेको निषेध करताहै तो*हेगोमांसभक्षीहो तुम क्यों हठसें अवगुणकारी पदार्थको खाकर अपनी आत्मा और अस्मदादि हिंदुओंके दुशमन होते हो] पक्षि (परंदो) में कौऐका मांस कुपथ्यहै। विलेमें रहने वालोमें भेडका कुपथ्य है। मछलियोंमें चिलचिम मछली कुपथ्यहै। घृतोंमें भेडका घी कुपथ्यहै। दूधोंमेंभी भेडका दूध कुपथ्यहै। तेलोंमें स्थावर तैल (अर्थात् वृक्षसंबधी तेलोंमें) कसूम (करड) का तेल कुपथ्यहै। जलसमीप रहनेवाले जानवरोंमें भैंसकी चर्वी कुपथ्य है। मछलीकी वसामें कुंभीर नामक मछलीकी वसा कुपथ्यहै। जलमें रहनेवाले जीवोंमें जल कौआ कुपथ्य है। कंदोंमें मूली कुपथ्यहै। पक्षियोंकी वसामें विष्कर पक्षियोंकी वसा कुपथ्य है। जो वृक्षोकी शाखा (गुदे) खाने वाले है उनमें हाथीकी वसा कुपथ्यहै। फलोंमे लकुच (कटहर) फल कुपथ्यहै। ईखके विकारोंमें उस ईखकी राव कुपथ्यहै। ये आहार की वस्तुओंमें ये सब प्रकृतिसें ही कुपथ्यतम है इनमें जो मुख्य २ द्रव्यहै सो हमने कहीं ॥

अब हिताहित अवयव रूप आहार विहारको फिर दूसरे प्राधान्यतासें और अनुबंध सहित द्रव्योंका व्याख्यान करते है ॥

कि अन्न देहरक्षा करनेवाले में श्रेष्ठहै। जल, प्राणरक्षकोंमें श्रेष्ठहै मद्य, श्रम हरनेवालोंमें श्रेष्ठहै। जीवनदाताओंमें, दूध श्रेष्ठहै। पुष्ट करनेवालोंमे, मांस श्रेष्ठहै।

---

☞ *गोमांसभक्षणनिषेधकाकारण मुख्ययही है फिर भी जिह्वास्वाद लंपट सर्व नाशी विधर्मी क्यामानेंगे 'प्राणजायपरवचननजाऊ'। यह वचन इनही दुराग्रही पामरोंमें चरितार्थ होताहै नही तो इस अभक्षको क्योंभक्षणकरै सभ्यता इसीसे प्रगटहोती है धन्यरे कलियुगके अंडबंड सालेसभ्यहो ?!।

गव्यं घृतं क्षौद्रसैन्धवदाडिमामलकमित्येष वर्गः सर्वप्राणिनां सामान्यतः पथ्यतमः। तथा ब्रह्मचर्य्यनिवाताशयनोष्णोदकनिशास्वमव्यायामाश्चैकान्ततः पथ्यतमाः।

अर्थ—घृतोंमें गौकाघी, सहत, निमकोंमें सैंधानिमक, विलायतीअनार अथवा अनार दाना, और फलोंमें आमले, इत्यादि कहेहुएवर्ग सब प्राणीमात्रों को सर्वथा हितहै

तथा ब्रह्मचर्य ( स्त्रीसेवनसैं बचना ) निवात स्थानमें शयन करना, गरमजलसैंस्नान, रात्रिमेंसोंना, और दंड कसरत करना, ये एकान्त हित है अर्थात एक २ ही हित है॥

---

भोजनद्रव्य रुचि करानेवालोंमें निमक श्रेष्ठहै। हृदय प्रियोंमेंखटाई श्रेष्ठहै। बलकारियोंमे मुरगेका मांस श्रेष्ठहै। वीर्यके वढाने वालोंमें मगरका वीर्य श्रेष्ठहै

कफपित्त नाशकारियोंमें सहत उत्तम है। वातपित्त नाशकर्त्ताओंमें घी उत्तम है। वात पित्तशमनकर्ता ओंमें तेल उत्तम है। कफ हरणकारियोंमें वमन कराना उत्तमहै। पित्त हरणकरनेवालोंमें जुल्लाव कराना उत्तम है। वस्तीकर्म वात हरण कर्त्ताओंमें उत्तम है। नम्र करनेवालोंमें पसीने निकालना यह कर्म उत्तम है। स्थिर करनेवालोंमें दंडकसरत करना उत्तम है। नपुंसक (हिजडा)करने वालोंमें खार( सजीखार, जवाखार और निमक, आदि ) उत्तम है। अन्न द्रव्यरहित जो पदार्थ है उनमें रुचिकर्त्ताओंमें तेंदुआ उत्तमहै। हृदयके अहितकारियोंमें भेडका घी उत्तमहै। देहसूखनेके रोग हरणकरने वालोंमें बकरीका दूध उत्तमहै। समान रुधिरके संग्रहण करनेवालोंके शांतिकरनेमें स्त्रीका दूधउत्तमहै। कफ पित्तके संचय करनेवालोंमें भेडीका दूध उत्तम है। निद्रा उत्पन्न करनेवालोंमें भैसका दूधउत्तमहै। देहके छिद्र रोकनेवालोंमें दही उत्तम है। कर्षण (देहसुखानेवालो) में समापसाईअन्न उत्तमहै। देहमे रुखाई करनेवालोंमें कोदो अन्न उत्तम है। मूत्र पैदाकरनें वालोंमें ईख उत्तमहै। वादी पैदाकरने वालोंमें जामुनका फल उत्तमहै। कफ और पित्त करनेवालोंमें पूडी पिरामठे उत्तम है। अम्लपित्त करनेवालोंमें कुलथी उत्तमहै। कफपित्तकरनेवालोंमे उडद उत्तमहै। वमन, आस्थापनवस्ती, अनुवासन वस्ती, इनके उपयोगी पदार्थोंमें मैनफल उत्तम है। सुखपूर्वक दस्तलानेवालोंमें निसोथ उत्तम है। नरम जुल्लावोंमें अमलतास उत्तम है। तीक्ष्णजुल्लाव लानेवालोंमें थूहरका दूध उत्तम है। शिरोविरेचनीय द्रव्योंमें सपेद औंगा उ-

**एकान्तहितान्येकान्ताहितानि प्रागुपदिष्टानि। हिताहितानि तु यद्वायोः पथ्यं तत्पित्तस्यापथ्यमिति ॥**

अर्थ—एकान्तहित जल है और एकान्त अहित अग्निये प्रथम कह आए है और हिताहित वही जानना कि जो वादीमें पथ्य है वो पित्तमें अपथ्यहै ॥

---

त्तम है। पेटके कीडें नाशकोमें वायविडंग उत्तमहै। विप हरणकरनेवाले पदार्थोंमे सिरस उत्तम है। कोढरोग हरणकरनेवालोंमें खैर ( खैरसार ) उत्तम है। वादी हरणकरनेवालोंमें राण्णा उत्तम है। अवस्था स्थापनकरनेवालोंमें आमले उत्तम है। पथ्यवस्तुओंमे हरड उत्तम है ' वृष्य और वात हरणकरनेवालोंमें अंडकी जड उत्तमहै। दीपनीय पाचनीय और अफरा हरण करनेवाली औपधोंमे पीपरामूल उत्तम है। दीपनीय गुदाका शूल और सूजन हरणकरनेवालोंमें चीतेकीजड उत्तम है। हिचकी, श्वास, खाँसी, और पसवाडेके शूल हरण करनेवालोंमें पुष्करमूल उत्तम है। संग्राहक, दीपनीय, और पाचनीयोंमें मोथा उत्तम है। शीतलकरना, दीपन, वमन, और अति सार, हरणकरने वालोंमें नेत्रवाला ( सुगंधवाला ) उत्तमहै। संग्राहक और दीपनीयोंमें स्योनाक अर्थात् टेंटू उत्तम है। संग्राहक और रक्तपित्तनाशकोमें अनंतमूल उत्तमहै संग्राहक वातहर-दीपनी कफ और रुधिरकें विबंधको नाशकरने वालोंमें गिलोयउत्तमहै। संग्राहक दीपनीय, औरवातकफनाशकोमें बेलफल उत्तम है। दीपनीय पाचनीय संग्राहक और सर्वदोप हरनेवालोंमें अतीस उत्तम है। संग्राहक और रक्तपित्त नाशकोमें उत्पल ( नीलाकमल ) कमोदनी और कमलका केशरा उत्तम है। पित्तकफके शोपणकरने वालोमें धमासा उत्तम है। रक्तपित्तके अत्यंत गिरनेको दूर करनेवालोंमें गंधप्रियंगु उत्तमहै। कफपित्त रक्तके संग्राहक और शोपण करनेवालोंमें कूडाकी छाल उत्तम है। रक्तसंग्राहक नाशकोमें कंभारीके फल उत्तम है। संग्राहक वातहर-दीपनीय और वृष्योंमें पृश्निपर्णी ( पिठवन ) उत्तम है। वृष्य और सर्वदोप करने वालोंमें विदारीगंधा उत्तम है। संग्राहक और बंधवातहरण करनेवालोंमें खिरेटी उत्तम है। मूत्रकृच्छ्र और वादी हरणकरने वालोंमें गोखरू उत्तम है। छेदनीय और भेदनीय दीपनीय अनुलोमनी और वातकफके नाशकर्त्ता ओंमें अमलवेत उत्तम है। संसनीय और पाचनीय और ववासीर नाशकों मे जों उत्तम है। ग्रहणीदोप-ववासीर-घृतके विकार इनके नाशकरनेवालोंमें छाछपीनेका अभ्यास उत्तम है। वृष्यहो और उदावर्त्तहरण कर्त्ता ओंमें समान घृत-सत्तूकाखानेका अभ्यास उत्तम है। प्रांतोंमें बल और रुचि-

## संयोगविरुद्ध

### संयोगतस्त्वपराणि विषतुल्यानि भवन्ति; तद्यथा, वल्लीफलकरककरीराम्लफललवणकुलत्थपिण्याकदधितैलविरोहिपिष्टशुष्कशाकाजाविकमांसमद्यजाम्बवचिलिचिममत्स्यगोधावराहांश्च नैकध्यमश्नीयात् पयसा ॥

अर्थ—और वहुतसी द्रव्य संयोग होनेसे विषके तुल्य होजाती है अर्थात् विषके समान एकांत अहित हो जाती है। जैसे वेलके फल (पेठा, कोला, घीया, तोरई, आदि) करक (छत्राक छतोना) करील, वाँसकी कोपल, खटाई वालेफल, निमक-कुलथी-खल-दही-तेल-विरोहि (जिस्केअंकुर नहो) चावलोंकाचून-सूखेसाग, मेंढेका मांस, मद्य, जामुन, चिलचिलनामकी मछली, गोह, और सूअरकामांस इनसबवस्तु ओंको दूधके साथनभक्षणकरे

---

कारियोंमें तेलकेकुल्ले करनेका अभ्यास उत्तम है। निर्वापण (शांतकरना) और लेपकरनेवालोंमें चंदन और गूलर उत्तम है। शीव्रनाशक और लेपकी औषधोंमें रास्ना उत्तम है। दाह त्वचाके दोष-पसीने और लेपकारी औषधोंमें लोमज्जक-और खस उत्तम है। वातहर-उवटना-और पसीनेवालोंमें कूठ उत्तम है। नेत्रकाहितकारी-वालोंकोहितकारी-कंठसुधारनेवाला वर्णको उज्ज्वल करनेवाला रंगनेवालोंमें और घावके भरने वालोंमें महुआ उत्तम है। प्राणसंज्ञाप्रधानहेतु ओंमें पवन उत्तमहै। जल-स्तंभ-शीत-शूल-कंपइनके नाशकरनेवालोंमें अग्नि उत्तम है। आमदोष करने वालोंमें अति भोजनकरना उत्तम है। अग्निको चैतन्यकारियोंमें यथा अग्निके अनुसार भोजन करना उत्तम है। चेष्टाऔर व्यवहारोपसेवियोंमें सात्म्य (अपनी आत्माको जो हितहोसो) उत्तम है। आरोग्यकरने वालोंमें यथासमयभोजन करना उत्तम है। रोगीकरनेको मलमूत्रोंका वेग धारण उत्तम है। आहारके गुणोंमें तृप्तिहोना उत्तमहै। मन प्रसन्न करनेवालोंमें मद्य (दारू) उत्तम है। धी-धृति-स्मृति-हरण करने वालोंमें मद्यका अत्यंतसेवन उत्तमहै। पेटमें दुष्टपाक करने वालोंमें भारी पदार्थोंका भोजन उत्तम है। सुख-और परिणाम करने वालोंमें एकवार भोजन करना हितकारी है। देहका शोषण करनेवालोंमें स्त्रीसंग उत्तम है। नपुंसककरने वालोंमें

---

१ पीलेरंगका खसके समान तृणहोताहै।

## क्वचितविरुद्धकाभीप्रयोगदिखातेहै

**रोगं सात्म्यंश्च देशश्च कालं देहश्च बुद्धिमान् ।
अवेक्ष्याग्न्यादिकान् भावान् रोगवृत्तेः प्रयोजयेत् ॥**

अर्थ—उदरादिकरोग, सात्म्य, देश, ( अनूपादि ) काल ( शीतादिक ) देह ( स्थूलकृशादि ) और अग्न्यादिभाव कहिये जठराग्निआदिकी सामर्थ्य विचारके बुद्धिमान् वैद्य उक्त विरुद्धपदार्थोंको भी रोगीकोदेवे ॥

---

अत्यंत शुक्रकेवेग ( स्तंभनदवाई द्वारा ) रोकना उत्तमहै । देहके घटाने वालोंमें अन्नका त्यागदेना उत्तम है । देहके सुखानेमें थोडा भोजन करना उत्तम है । ग्रहणीके दूपितकरनेमे अजीर्ण और अध्यशन उत्तम है । विषमाग्निकरने वालोंमें विषमाशन करना उत्तम है। दुष्ट रोगकरने वालोंमें विरुद्धवार्य पदार्थ खाना, उत्तम है । पथ्योंमे प्रशम ( क्रोध मोहादि त्याग ) उत्तम है । संपूर्ण अपथ्योंमें कुछभीकर्म न करना एकजगह बैठारहना उत्तम है। व्याधिके मुलोंमें मिथ्यायोग उत्तम है । अलक्ष्मी ( तेजवलादि ) हरणकरने वालोंमें रजस्वला स्त्रीसें गमन करना उत्तम है । आयुकरने वालोंमे ब्रह्मचर्य उत्तम है ॥

सब वृष्योंमें मनको प्रसन्न राखना उत्तम है । अवृष्य कारियोंमें दौर्मनस्य अर्थात् चित्तको दुखित रखना उत्तम है । प्राणोंके हरणकर्त्ता कर्मोंमें ठीक विचारके विना करना उत्तम है । रोगवढाने वालोंमें दुखी रहना उत्तम है । परिश्रम हरण करनेवालोंमें स्नान करना उत्तम है । प्रसन्न करताओंमें हर्ष परमोत्तमहै।शोषण करनेवालोंमें शोक ( सोच ) करनाउत्तम है । पुष्टिकारियोंमें मैथुनादि कर्मसें निवृत्ति होना उत्तमहै। तंद्रा करनेवालोंमें निद्रा उत्तम है । वलवढाने वालोंमें सर्वरस भोजन करना उत्तम है । दुर्बलकरने वालोंमें एकरसका सेवन करना उत्तम है । निकालनेयोग्योंमें गर्भशल्यका निकालना उत्तम है । उद्धारकरनेमें अजीर्ण उत्तम है । नम्र औषधोंके देनेमें वालक उत्तम है । याप्यकर्मोंमें वृद्ध उत्तम है । तीक्ष्ण औषध और परिश्रमसे वचाने वालोंमें गर्भिणी स्त्री उत्तम है । गर्भधारणकर्त्ती ओंमें प्रसन्न चित्त रहना उत्तम है ॥

दुश्चिकित्स्य रोगोंमें सन्निपातका रोग उत्तम है । विषम चिकित्सा वाले रोगोंमें

---

१ सात्म्य आठ प्रकारका है जैसे जातिसात्म्य, आतुरसात्म्य, औषधसात्म्य अन्नसात्म्य, रससात्म्य, देशसात्म्य, ऋतुसात्म्य, जलसात्म्य, । २ भोजनके ऊपर भोजन करना । ३ कभीथोडा और कभी अधिक कभीसिदौसी कभीअवेरी ।

अबकहतेहैकिहिताहितत्वनहींहै
अवस्थान्तर बाहुल्याद्रोगादीनां व्यवस्थितम् ।
द्रव्यं नेच्छन्ति भिषज इच्छन्ति स्वस्थरक्षणे ॥

अर्थ—रोगादिककी अवस्था विशेषा धिक्यतासें वैद्य यह द्रव्यहितहै, और यह अहितहै ऐसी द्रव्य व्यवस्था नहीं मानते, किंतु स्वस्थ रक्षणमें उस द्रव्य व्यवस्थाको मानते है ॥

---

आमका रोग श्रेष्ठहे । संपूर्ण रोगोंमे ज्वर श्रेष्ठ है । दीर्घरोगोंमें कुष्टरोग श्रेष्ठ हे । रोगोंके समूहोंमे राजयक्ष्मा रोग श्रेष्ठ है । अनुतगिकरोगोंमें प्रमेह श्रेष्ठ है ॥

अनुशस्त्रोंमें जोख लगाना उत्तम है । तंत्रोमें वस्तीकर्म करना उत्तम है । औषध उत्पन्न होने वाली संपूर्ण पृथ्वीभरमें हिमालय पर्वत श्रेष्ठहै । आरोग्य देशोंमें माडवारकी पृथ्वी उत्तम है । अहित देशोंमें अनूपदेश श्रेष्ठहे । आज्ञा कर्त्ता रोगी उत्तमहै । चिकित्साके अंगोंमें वैद्य श्रेष्ठ है । वर्जितोंमें नास्तिक उत्तम हैं । क्लेशकारियोंमे हांसी ठठोरी करना श्रेष्ठहै।अनिष्टोंमें वैद्यकी आज्ञा न मानना श्रेष्ठ है । वमनके लक्षणोंमें जीका मचलाना श्रेष्ठ है।वैद्यके गुणोंमे औषधका योग जानना उत्तम है । औषधोंमें पहचान करना उत्तम है । साधनोंमें शास्त्रके साथ तर्क ( बहिस ) करना श्रेष्ठ है । कालज्ञान प्रयोजनोंमें सप्रतिपत्ति उत्तम है । रुजगारमें आपत्ति डालने वालोंमें उद्योग ( कोशिश ) न करना श्रेष्ठ है । निःसंशय करनेवालोंमें ढीठता श्रेष्ठ है । भयकारियोंमें असामर्थ्य होना श्रेष्ठ है । जो विद्याआप पढाहो उसमें यादकरना उस विद्याकी वृद्धिमें श्रेष्ठ है । शास्त्रप्राप्ति होनेमें आचार्य श्रेष्ठ है । अमृत ( जरामरण रहितकरने ) में वैद्यविद्या श्रेष्ठहै । अनुष्ठान करनेमें सद्वचन ( उत्तमवाणी ) श्रेष्ठ है । सर्वहितोंमें परित्याग उत्तम है सुखोंमें सबका संन्यास श्रेष्ठ ॥

इसप्रकार जो जो वस्तु जिस २ में उत्तम हे सब १ १५२ एकसौ बावन उत्तर सब रोगोंको दूरकरनेको मेनेरहेहै । समान अर्थ उत्तम और निकृष्टोका उदाहरण देकर दिखाए है तथा वातपित्त और कफ इनपर जो जो नाशकरनेमें हित है वो कहे है । ये मैने व्याधिहरणकर्त्ता जोजो मुख्य है सो सो कहेहै निपुण वैद्य इनकोविचारके चिकित्सामें प्रयोगकरे ॥

श्री आत्रेय महर्षिकहते है कि जो वैद्य इसप्रकार करता है वो धर्म और काम नाओंको प्राप्तहोता है । इनमें आपको अप्रिय और अपथ्य है उसको यह प्राणी

---

१ आदिशब्दसे सात्म्य और देशादिकोंका ग्रहणहै ।

पूर्वोक्तअर्थकोस्पष्टकरतेहैं

द्वयोरन्यतरादाने वदन्ति विषदुग्धयोः ।
दुग्धस्यैकान्तहिततां विषमेकान्ततोऽहितम् ॥

अर्थ—तहां स्वस्थ मनुष्यको इनदोनो विष और दूधमें विष सर्वथा एकान्त अहित और दूधको वैद्यजन हितकारी बताते है ॥

एवं युक्तरसाद्येषु द्रव्येषु सलिलादिषु ।
एकान्तहिततां विद्धि वत्स सुश्रुत ! नान्यथा ॥

अर्थ—हेसुश्रुतवत्स!इसीप्रकार स्वस्थोपयोग प्रकारकरके रसादिद्रव्योंमें और जलआदिमें एकांतहितता जानना अन्यथा अर्थात् जो स्वस्थता हरणकरे उनमें एकांत अहितता जानना ॥

अतोऽन्यान्यपि संयोगादहितानि वक्ष्यामः । न च विरूढधान्यैर्वसामधुपयोगुडमाषैर्वा ग्राम्यानूपौदकपिशितादीनि नाभ्यवहरेत् । न पयोमधुभ्यां रोहिणीशाकं जातुशाकं वाश्नीयात् । बलाकां वारुणीकुल्माषाभ्याम् । काकमाचीं पिप्पलीमरिचाभ्यां । नाडीभङ्गशाककुक्कुटदधीनि च नैकध्यम् । मधु चोष्णोदकानुपानं पित्तेन वा मांसानि । सुराकृशरापायसाश्च नैकध्यम् । सौवीरकेण सह तिलशष्कुलीम् । मत्स्यैः सहेक्षुविकारान् । गुडेन काकमाचीं मधुना मूलकं गुडेन वाराहं मधुना च सह विरुद्धम् । क्षीरेण मूलकम् । आम्रजाम्बवश्वाविच्छूकरगोधाश्च सर्वांश्च मत्स्यान् विशेषेण चिलिचिमं पयसा । कदलीफलं

---

कदाचित् सेवन न करे । और जो आपको पथ्यहो तथा प्रियहो उसका सेवन करे । मात्रा, काल, क्रिया, भूमि, देह, दोष, और गुणान्तर, इनमें द्रव्यादिभाव प्राप्तहोकर उसी उसीके अनुसार दीखते है ॥

तालफलेन पयसा दध्ना तक्रेण वा। लकुचफलं पयसा दध्ना माषसूपेन वा मधुना घृतेन च। प्राक्पयसं पयसोऽन्ते वा ॥

अर्थ—अब अन्य जो संयोग विरुद्धहै उनको कहते है। विरूढधान्य ( जिसमेंसें अंकुर निकले हो या अंकुर दूर होगएहो ) उनको वसा ( चर्बी ) सहत, दूध, गुड, उडद, इनके साथ भक्षण न करे। गामके जीवोंका मांस अनूप संचारी जीवोंका मांस,जलसंचारी जीवोंका मांस इनकोभी वसा सहत आदिके साथ न खाय, क्योंकि संयोगसें विरुद्ध है। कुटकीकाशाक और कमलकाशाक दूध और सहत केसाथ न खावे। बलाका ( बगलाका भेद ) का मांस मद्य और उबालेहुए उडदके साथ न खाय। पीपर और काली मिरचके साथ काकमाचीके[1] सागको न खाय। नाडी सागके पत्तोंका साग मुरगेका मांस और दही इनको दो मिलायके अथवा तीनो मिलायके न खावे। गरमजलके साथ अथवा पित्तके साथ सहतको न खाय। अथवा मांसोंको पित्तके साथ न खाय। दारू खिचडी और खीर इनको मिलायके न खाय। तिलकी पूडियोंको काँजीके साथ न खाय। मछलीके साथ कोईसा ईखका विकार ( खांड, मिश्री, गुडआदि ) न खाय। काकमाचीको गुडके साथ न खाय। सहतसें मूली न खाय। तथा सूअरका मांस सहतके साथ खाना विरुद्धहै। दूधके साथ मूली न खाय। आम जामुन–सेह ( कांटेवाला जानवर ) सूअर और गोह तथा सब प्रकारकी मछली उनमेंभी चिलचिम नामकी मछली इन सबको दूधके साथ न खावे। केलाका फल ( गहर ) को ताडफलके साथ वा दूधके साथ वा दहीकेसाथ अथवा छाछके साथ न खाय। बढहरके फलकोदूध, दही, उडदकीदाल, सहतअथवा घीके साथ नखावे। दूध पीनेके प्रथम अथवा अंतमें बडहरका फल नखावे। इति।

## कर्मविरुद्ध

अतः कर्मविरुद्धान् वक्ष्यामः। कपोतान् सर्षपतैलभृष्टान्नाद्यात्। कपिञ्जलमयूरलावतित्तिरिगोधाश्चैरण्ड-

---

इसी हेतुसें यह प्राणी और स्वभाव और मात्राविके आश्रित कहाहै अतएव स्वभाव और मात्राका प्रथम विचारकरके सिद्धीकी इच्छा करनेवाले वैद्यको प्रयोग करना चाहिये ॥

---

[1] काकमाचीको मकोय कहते है।

दार्वग्निसिद्धा एरण्डतैलसिद्धा वा नाद्यात्। कांस्यभाजने दशरात्रपर्य्युषितं सर्पिर्मधुचोष्णैरुष्णे वा। मत्स्यपरिपचने शृङ्गवेरपरिपचने वा भाजने सिद्धां काकमाचीम्। तिलकल्कसिद्धमुपोदिकाशाकम्। नारिकेलेन वराहवसापरिभृष्टां बलाकाम्। भासमङ्गारशूल्यं नाश्नीयादिति॥

अर्थ—अब संयोग विरुद्धोको कहकर कर्मविरुद्धोको कहते है। तहां कपोत (कबुतरका भेद पिंडुकिया) को सरसोंके तेलमें भूनके न खावे। सपेदतीतर, मोर, लवा, कालातीतर, गोह, इनको अंडकी और दारहलदीकी लकडियोंकी आंचमें भूनके न खावे। तथा अंडीकेतेलमें भी तलके न खाय। गरमीकी ऋतुमें काँसेकेपात्रमें अथवा गरम कांसेके पात्रमें घी-सहत ए दशदिन धरेहुएनको न खाय। मछली जिस पात्रमें बनाईहो अथवा अदरखका साग जिस पात्रमें किया होवे उस पात्रमे सिद्धकरी काकमाचीका साग न खाय। तिलकल्कमें सिद्धकरा (पकाया हुआ) पोईका साग न खाय। सूअरकी चर्बीमें भुनीहुई बगलीके मांसको नारियलकी गिरीके साथ न खाय। भास (जो एक गीधका भेद है) उसको लोहेके सूएसें भेदकर आगमें सिकेहुएको न खाय॥

## अथमानविरुद्ध

अतो मानविरुद्धान् वक्ष्यामः। मध्वम्बुनी मधुसर्पिषी मानतस्तुल्ये नाश्नीयात्। मधुस्नेहौ जलस्नेहौ वा तैलसर्पिषी तैलवसे तैलमज्जानौ सर्पिर्वसे सर्पिर्मज्जानौ विशेषादान्तरीक्षोदकानुपानौ॥

अर्थ—अब कर्मविरुद्ध कहनेके अनंतर मान (तोल) विरुद्धोको कहते है

---

आगे इसअध्यायमें ८४ आसव इस प्रकार कहे है॥

तहा धान्य, फल, सार, पुष्प, कांड, पत्र, छाल, ये सात वस्तु आसवकी योनि है अर्थात् आसव इन्हीसें बनती है तथा शर्करा और नवमद्रव्य संयोग इनके मिलापसें अनेक आसव अमृतके तुल्य बनती है। तिनमे ८४ आसव पश्यतम हैं। उनको सुन। सुरा, सौवीर, तुषोदक, मैरेय, मेदक, धान्याम्ल, ये छः धान्यासव है॥

सहत जल और सहत घी ए समान भाग मिलायके न खावे। सहत और घृतादि स्नेह। तथा जल और घी आदि तेल और घी तेल और चर्वी। तेल और मज्जा। घी और चर्वी तथा घी और मजा ए समान भाग मिलायके न खाय। तथा घी और मज्जाको पीकर अतरीक्ष संबंधी जल न पीवे॥

## दोदोरस रसवीर्यऔरविपाकसैंविरुद्ध

अत ऊर्ध्वं रसद्वन्द्वानि रसतो वीर्य्यतो विपाकतश्च विरुद्धानि वक्ष्यामः। तत्र मधुराम्लौ रसवीर्य्यविरुद्धौ मधुरलवणौ च, मधुरकटुकौ च सर्वतः। मधुरतिक्तौ रसविपाकाभ्यां मधुररसकषायौ च, अम्ललवणौ रसतः। अम्लकटुकौ रसविपाकाभ्यां,। अम्लतिक्तावम्लकषायौ च सर्वतः। लवणकटुकौ रसविपाकाभ्यां लवणतिक्तौ लवणकषायौ च सर्वतः। कटुतिक्तौ रसवीर्य्याभ्यां॥ कटुकषायौ तिक्तकषायौ च रसतः।

अर्थ—मान विरुद्धोंको कहकर अब दोदो रसोंको रस, वीर्य, और विपाक सैं विरुद्धको कहते है। तहां मधुर और खट्टे दोनोरस–रस और वीर्यसैं विरुद्ध है अतएव मिलायके न खावे एवं मधुर और लवणरसभी रसवीर्य सैं विरुद्ध है मधुर और तीक्ष्णरस सर्व रसवीर्य विपाक से विरुद्ध है, मधुर और कडुआ रस-रसविपाक सैं विरुद्ध है। एवं मधुर और कसेला रसभी रसविपाकसैं विरुद्ध है खट्टा ओर निमकीनरस रससैं विरुद्ध है। खट्टा और चरपरा रस तथा विपाक सैं विरुद्ध है। अम्ल, तिक्त, तथा अम्ल और कषाय ये रसवीर्य और विपाक सैं विरुद्ध है। लवण कटुक रस रसविपाक सैं विरुद्ध है। लवण तिक्त तथा लवण औ-

---

मुनक्कादाख, खजूर, कंभारी, धन्वन, राजादन, तृणशूल्य, परूप, अभया, आमलक, मृगलिंडिका, जाम्बव, वक, कैथ, कुवल, बदर, कर्कंधु, पीलू, पियाल, पनस, न्यग्रोध, अश्वत्थ, द्राक्षा, कपीतन, उदुंबर, अजमोद, सिंघाडे, और संखनी इन फलोसैं बननेवाले २६ फलासव है॥

---

१ दही बूरा यद्यपि खट्टे और मीठे रसहोनेपरभी उपयोगी होनेमें दोष नहींहै, परंतु जो खटाई और मिठाई मिली किसी उपयोगमें नहीं आवे वो विरुद्धहै उसको ग्रहण नहीं करना।

र कषाय ये सवसैं विरुद्ध है। चरपरा और कडुआ रस एवं कटु कषाय रस रसवीर्यसैं विरुद्ध है। तिक्त (कडुआ) और कषाय सवसैं अर्थात् रस वीर्य- और विपाक सैं विरुद्ध है॥

तहां गयदास इस रसवीर्य विपाक विरुद्धोंको नही माने कारण यह है कि प्रथम मधुररस भोजन करना लिखा है फिर सब रसखाय एकरसकाही सेवन निषेद्ध है परंतु प्राचीन ग्रंथोमें लिखा देखकर हमनेभी लिखकर व्याख्या करदी-

अब कहते है कि अत्यंत गुणकारी भैसके दूधआदि पदार्थ हितभी है, परंतु स्वस्थ मनुष्यको उसी एकका सेवन अहितकारी होता है यह कहते है॥

तरतमयोगयुक्तांश्च भावानतिरूक्षानतिस्निग्धानत्यु-
ष्णानतिशीतानित्येवमादीन् विवर्जयेत्॥

अर्थ—अत्यंत स्नेहादि सहित जैसै अतिरूक्ष, अतिस्निग्ध, अतिउष्ण, अतिशीतल, इत्यादि पदार्थोंका सेवन इसप्राणीको वर्जनीय है। इसमे चकार जो पडा उससैं अत्यंत पथ्यतम, अत्यंत आयुके वढानेवाले, अत्यंतवृष्यपदार्थोंको भी सेवन न करे॥

### पूर्वोक्तकोस्पष्टकरतेहै

विरुद्धान्येवमादीनि रसवीर्य्यविपाकतः।
तान्येकान्ताहितान्येव शेषं विद्याद्धिताहितम्॥

अर्थ—पूर्वोक्तजो विरुद्ध पदार्थ कहे है उनसैं आदिले जोजो अन्य पदार्थ रस वीर्य और विपाकसैं विरुद्ध है, उनको एकान्त अहित. वैद्य अपनी बुद्धिसैं विचारलेवे। बाकी जो द्रव्य है वो एकांत हिताहित है॥

### विरुद्धपदार्थभक्षणकेअवगुण

व्याधिमिन्द्रियदौर्बल्यं मरणश्चाधिगच्छति।
विरुद्धरसवीर्य्यादीन् भुञ्जानोऽनात्मवान्नरः॥

अर्थ—रस-वीर्यादि विरुद्ध अहित कारी द्रव्य भोजन करनेसैं उस चंचल

---

विदारीगन्धा, असगंध, कृष्णगंध, शतावर, श्यामा, त्रिवृत्त, दंती, द्रवंती, बिल्व, आरुक, और चित्रक ए११मूलासव अर्थात् जडसे वननेवाली आसव है

---

१ जैसें भैस गौकादूध अत्यंत स्निग्धहै इसी वास्ते नैरोग्य मनुष्यको अपनी समाग्निके रक्षाके वास्ते ये नहीं खाना चाहिये।

चित्तवाले मनुष्यके अनेक प्रकारकी व्याधि, इन्द्रियोंमें दुर्बलता, अथवा मृत्यु-पर्यंतको करे है, इसवास्ते विरुद्ध पदार्थको सर्वथा त्याग देवे ॥

## विकारकर्त्तापदार्थ

यत्किञ्चिद्दोषमुत्क्लेश्य भुक्तं कायान्न निर्हरेत् ।
रसादिष्वयथार्थं वा तद्विकाराय कल्पते ॥

अर्थ—कोई २ द्रव्य भोजनके अंतमें भोजनके पदार्थको प्रकुपित करके वमनकीसी इच्छा कराती है, उसको वमनके द्वारा देहके बाहर न निकाले तो वह कोई न कोई पीडाको करे असा जानना। यह केवल दोषकारी होकर व्याधिमात्रको ही नहीं करे किंतु रसादिधातु दुष्टकारी व्याधियोको भीकरे हैं। तहां बहुतसी द्रव्य दोषोंको दुष्टकरे है और बहुतसी द्रव्य धातुओंको दुष्टकारी है उनको ग्रंथ बढनेके भयसैं इसजगेपर नहीं लिखा ॥

## विरुद्धभोजनजनितरोगोकीचिकित्सा

विरुद्धाशनजान् रोगान् प्रतिहन्ति विरेचनम् ।
वमनं शमनं वापि पूर्वं वा हितसेवनम् ॥

अर्थ—विरुद्ध भोजनसें उत्पन्न रोगोंको विरेचन ( दस्तकराना ) दूरकरता है तथा वमन करना और शमनकर्त्ता औषध नष्ट करती है। एवं उस विरुद्धपदार्थजन्य व्याधिके होनेसैं प्रथम ही हितसेवन करे तो विरुद्धदोष शमनहोवे। तहां बलवान्का वमन विरेचन द्वारा रोग शांति करे। और हीनबलीका शमन औषधसैं शमनकरना चाहिये ॥

## ( विरुद्धभोजनकरनेपरभीकिसीकोरोगनहीहोयहकहतेहै )

सात्म्यतोऽल्पतया वापि दीप्ताग्नेस्तरुणस्य च ।
स्निग्धव्यायामबलिनां विरुद्धं वितथं भवेत् ॥

अर्थ—जो अपने सात्म्यते अल्प भोजन करते है-अर्थात् जिसका थोडा २

---

साल, प्रियकसाल, चंदन, स्यंदन, खैर, कंदर, सतवन, कोह, विजेसार, अरिमेद, तिंदुक, किणही, शमी, शुक्ति, सीसव, सीरीस, वंजुल, धान्यरू, और महुआ, ए बीस सारसै बननेवाली मारासव है ॥

---

१ गरमदूधमें चीनी बूरा शीतल ड लना विरुद्ध होनेपरभी विकारनही करे। २ विरुद्धपदार्थजन्यरोगोंको विरेचन दूरकरता है अतएव विरुद्धभोजन जन्य कुष्टरोगकोभी दूरकरे है इसैं यह सिद्धहुआकि विरेचन कुष्टरोगका शत्रु है ॥

अभ्यास कराहो ऐसी द्रव्य तथा जिसकी दीप्ताग्निहै, और जो तरुण है एवं जो स्निग्ध ओर दंडकसरत करनेसें बलिष्ठ है अथवा जो दंडकसरत करते है और बली है ऐसें प्राणियोंके विरुद्धभोजनभी निष्फल होजाता है। अर्थात रोग नहींकरे॥

व्यायामशीलो बलवान्शिशुश्च स्निग्धोऽग्निमांश्चापिमहाशनश्च। आप्नोतिरोगान्नविरुद्धजातान् अभ्यासतो वाल्पतया च जन्तुः॥

अर्थ—जो दंडकसरत करा कर्त्ता है, बलीपुरुप, बालक, स्निग्ध देहवाला, प्रबल जठराग्निवाला, अत्यंत भोजन करनेवाला, तथा जिसने जिसविरुद्ध वस्तु का अभ्यास करलीना होवे तथा वह विरुद्ध पदार्थ बहुत अल्प खायतो वह प्राणी विरुद्धभक्षणजन्य रोगोंको नहीं प्राप्त होवे॥

अव इस अध्यायकी समाप्तिमें वातके गुणकहते है तहां हितकारीभी पवन दिशाओंके संयोगसें अहितकारी होजाती है अतएव उनके पृथक् २ गुण कहते है।

## पूर्वपवनकेगुण

पूर्वः समधुरः स्निग्धो लवणश्चैव मारुतः। गुरुर्विदाहजननो रक्तपित्ताभिवर्द्धनः॥ क्षतानां विषजुष्टानां व्रणिनःश्लेष्मलाश्चये। तेषामेव विशेषेण सदा रोगविवर्धनः॥ वातलानां प्रशस्तश्च श्रान्तानां कफशोषिणाम्। तेषामेव विशेषेण व्रणक्लेदविवर्द्धनः॥

अर्थ—पूरवकीपवन मीठी, स्निग्ध, और निमकीनहै; भारी, दाहउत्पन्नकरता, ओर रक्तपित्तके वढाने वाली है, घाववाले और विषसेंपीडित तथा जिसके फोडेहो एवं कफसें व्याप्त है उनको यह पूरवकी पवन सदैव रोगके बढाने वाली है। बादीवाले, श्रांत ( थकेहुए ) और जिनका कफ सूखगया है उनको विशेष करके पूरवकी पवन अति उत्तम है। तथा यह घावोंमें सदैव क्लेदके बढाने वाली है॥

---

पद्म, उत्पल, नलिन, कुमुद, सौगंधिक, शतपत्र, मधूक, प्रियंगु, धायके फूल, ये पुष्पासव है इक्षु, कांडेक्षु, इक्षुवालिका, पुंड्रक, ए छालकी आसव है और शर्करा मद्य इस प्रकार आसवोंके भेद ८४ है॥

॥ इति यज्जःपुरुषीयाऽध्यायः॥

## दक्षिणपवनकेगुण

मधुरश्चाविदाही च कषायानुरसो लघुः। दक्षिणो मारुतः श्रेष्ठश्चक्षुष्यो बलवर्द्धनः। रक्तपित्तप्रशमनो न च वातप्रकोपनः ॥ विशदो रूक्षपरुषः खरः स्नेहबलापहः।

अर्थ—दक्षिणकीपवन मधुर है, दाहनही करे, और कपेले रसवाली हलकी है, तथा नेत्रोंको हितकारी, बलको बढाने वाली, रक्तपित्त रोगको हरणकर्त्ता, और वातको कुपित नहीं करे, विशद, रूक्ष, कठोर, तीखी, चिकनाईके बलको नाशक है, और उत्तम है ॥

## पश्चिमकीपवन

पश्चिमो मारुतस्तीक्ष्णः कफमेदोविशोषणः॥ सद्यः प्राणक्षयकरः शोषणस्तु शरीरिणाम् ।

अर्थ—पश्चिमकी पवन तीखी, कफ और मेदाको शोषणकरने वाली है, तथा सद्यप्राण नाशिनी, और प्राणियोंके देहको सुखाने वाली है ॥

## उत्तरकीपवन

उत्तरो मारुतः स्निग्धो मृदुर्मधुर एव च। कषायानुरसःशीतो दोषाणामप्रकोपनः ॥ तस्माच्च प्रकृतिस्थानां क्लेदनो बलवर्द्धनः। क्षीणक्षयविपातानां विशेषेण तु पूजितः ॥

अर्थ—उत्तरकी पवन चिकनी, नम्र, मीठी, और कुछ कपेली है, शीतल दोषोंको कुपितनहींकरे, इसी कारण जो प्रकृतिस्थ अर्थात् नैरोग्य पुरुष है उनको आर्द्रकरे और बलको बढावे है। तथा जो प्राणी क्षीणहै क्षईरोगवाले और विपरोगी उनको प्राय माननीय है ॥

॥ इति हिताहितीयाध्यायः समाप्तः ॥

---

इति श्रीमाथुरकृष्णलालतनय दत्तरामप्रणीते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे मिश्रप्रकर्णम् समाप्तम् ॥

**समाप्तोऽयंमिश्रखंडः**

ॐ

आयुर्वेदोद्धारान्तर्गतबृहन्निघण्टुरत्नाकरे

# चिकित्साखण्डः।

हिंदीभाषानुवादसमेतः

तथाच विविधरोगाणामतिप्रशस्तचिकित्सापरिपूर्णः

## पाठकज्ञातीयमथुरानिवासिश्रीकृष्ण-लालमाथुरतनयदत्तरामेण

संकलितःस्वकृतभाषाटीकाविभूषितः संशोधितश्च

स च

श्रीकृष्णदासात्मज-

गंगाविष्णु, खेमराजाभ्यां

मुंबय्यां

स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर" मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः

संवत् १९४७ शके १८१२

ॐ

# बृहन्निघण्टुरत्नाकरके चिकित्साखण्डकी अनुक्रमणिका।

## व्याधिसमुदेशीयाध्यायः



## त्रिविधरोग विज्ञानीयाध्यायः

## ज्वरप्रकरणम्



## ज्योतिःशास्त्रका अभिप्राय

## प्रत्येक चरणका फल



## ज्वररोगकाकर्मविपाक

## निदानपंचक



## ज्वर निदान



## ज्वरचिकित्सा

## पित्तज्वर

## वातपित्तज्वर



## वातकफज्वर

## वातोल्बण



## पित्तोल्बण

## संधिक



## अंतक



## रुग्दाह



## चित्तभ्रम

## शीतांग



## तंद्रिक



## कंठकुब्ज



## कर्णक

## बृहन्निघण्टुरत्नाकरके तीसरेभागकी अनुक्रमणिका-

समाप्त ।

"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना (बंबई.)

ॐ

श्रीशंवन्दे

श्रीनिकुंजबिहारिणे नमः

## आयुर्वेदोद्धारांतर्गत बृहन्निघंटुरत्नाकरे

# चिकित्साखण्ड प्रारम्भः

शिष्य—चिकित्साकिसकोकहते है. ?

गुरु—शरीरमें धात्वादि विकृत दोष समान करनेवाले कर्मको चिकित्सा कहते है जैसे-वाग्भटमें लिखाहै ।

याभिः क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातवः समाः ।
सा चिकित्सा विकाराणां कर्मतद्भिषजां मतम् ॥

अर्थ—जिनक्रियाओंकरके देहमें रसरक्तादि धातु समानहोवे वही रोगोंकी चिकित्साहै, और वैद्योंका वही कर्मकहाहै ॥

सुश्रुतेऽपि

चतुर्णां भिषगादीनां सत्तानां धातुवैकृते ।
प्रवृत्तिर्धातुसाम्यार्था चिकित्सेत्यभिधीयते ॥

अर्थ—सुश्रुतमेंभी लिखाहै कि उत्तम वैद्यादि (वैद्य, रोगी, सेवक, और औषध ) चतुष्टयोंका विकृत (कुपित ) धातुके समान करनेके लिये जो प्रवृत्ति है उसको ( चिकित्सा ) असे कहते है ॥

अन्यच्च

या क्रिया व्याधिहरणी सा चिकित्सा निगद्यते ।

दोषधातुमलानां या साम्यकृत्सैव रोगहृत् ॥

अर्थ—अन्यत्रभी लिखाहै कि जो क्रिया व्याधिके हरण करने वाली है उस को चिकित्साकहते है। जोचिकित्सा दोष ( वातादि ) धातु ( रसरक्तादि ) और मलादिकोंको समान करती है वही रोगहरणकर्त्ता जाननी। क्रिया शब्द करके इसजगे कर्मका ग्रहणहै ॥

## क्रियाकेलक्षण

याह्युदीर्णं शमयति नान्यं व्याधिं करोति च।
सा क्रिया न तु या व्याधिं हरत्यन्यमुदीरयेत् ॥

अर्थ—जो बढीहुई व्याधिको शमनकरे परंतु अन्य व्याधिको प्रगट न करे उसीको क्रिया ( चिकित्सा ) कहते है। और जो एकव्याधिको हरणकरे और तत्काल दूसरी व्याधिको प्रगटकरदे उसे क्रिया नहीं कहते। ( क्रिया ) शब्द करके इसजगे ( चिकित्साका ) ग्रहणहै. जैसे " आरंभो निष्कृतिः शिक्षा पूजनं संप्रधारणं। उपायः कर्मचेष्टा च चिकित्सा च नवक्रियाः " यह अमरकोषमें नो नाम चिकित्साके कहे है ॥

## चिकित्सा औरउसका प्रयोजन

यद्व्याधिनिर्घातकरंवक्ष्यतेतच्चिकित्सितम्
चिकित्सितार्थएतावान्विकाराणांयदौषधम्

अर्थ—जोव्याधि अर्थात् रोगका नाशकरे वहीचिकित्सा जाननी–उस चिकित्साका प्रयोजन इतनाही है कि विकारोंकी औषधि करना ॥

## चिकित्साकेनाम

चिकित्सितं व्याधिहरं पथ्यं साधनमौषधम्
प्रायश्चित प्रशमनंप्रकृति स्थापनं हितम्॥
विद्याद्भेषजनामानि

अर्थ—अब प्रथम चिकित्साके नाम कहते है जैसै चिकित्सित, व्याधिहर, पथ्य, साधन, औषध, प्रायश्चित–प्रशमन–प्रकृतिस्थापन–और हित ये भेषज ( औषधी और चिकित्सा ) के नाम है ॥

उपचारास्तूपचर्या–चिकित्सारुक्प्रतिक्रिया
निग्रहोवेदना निष्टक्रियाचोपक्रमश्रमाः

अर्थ—ग्रंथांतरमें चिकित्साके नामकहते है जैसे-उपचार, उपचर्या-चिकित्सा- रुक्प्रतिक्रिया-निग्रह-वेदनानिग्रह-उपक्रम और श्रमये चिकित्साके नाम

प्रायश्चित्तं प्रशमनं चिकित्सा शांतिकर्मच
पर्यायास्तस्यनिर्दिष्टा

अर्थ-सुश्रुतमे भीलिखाहै जैसे कि प्रायश्चित,प्रशमन,चिकित्सा,और शांतिकर्म ये चिकित्साके पर्यायवाचकशब्द है ॥

शिष्य—चिकित्सा कितने प्रकारकी है?

गुरु—चिकित्सा दो प्रकारकी है जैसे-लिखाहै "चिकित्सितं कर्षणबृंहणाख्यं" अर्थात् चिकित्सा दो प्रकारकी है एककर्पण-दूसरी बृंहणं। परंतु किसी आचार्यके मतसे तीन प्रकारकी है। जैसें लिखाहे ॥

(निदानरोगविपरीतऔरतदर्थकारिणीचिकित्सा)

निदानविपरीता च विपरीतारुजस्तथा।
तदर्थकारणीचेति चिकित्सा त्रिविधा मता ॥

अर्थ—निदानविपरीत-और रोगविपरीत तथा निदानरोगविपरीत ऐसें चिकित्सा तीनप्रकारकी है निदान विपरीत चिकित्सा जैसें विषभक्षणजन्य गरमीमें दूध घृतका पान करना, रोगविपरीत चिकित्सा जैसे अतीसार रोगमें दस्तोंका वंद करना, उसीप्रकार निदान और रोगविपरीतचिकित्सा जैसे-शीत कफज्वरमें सोंठकाकाढा-परंतु एतीनोप्रकारकी चिकित्सा उन्ही पूर्वोक्त कर्पण बृंहणके अंतर्गत है ॥

दैवीमानुषीऔरराक्षसीचिकित्सा

रसादिभिर्याक्रियते चिकित्सा दैवीति वैद्यैः परिकीर्तिता सा।
सा मानुषी याऽथ कृताफलाद्यैः सा राक्षसी शस्त्रकृताभवेद्या ॥

अर्थ—जो रसादिकरके चिकित्सा करीजावे उसको दैवी चिकित्सा वैद्यकहते है, और जो फलमूलादि करके करीजावे उसे (मानुषीचिकित्सा) तथा शस्त्रकृत अर्थात् चीरने फाडनेको (राक्षसी चिकित्सा कहते है) यह अधमहै ॥

---

१ जो दोषधातमलादिकों को क्षीणकरदे उसको कर्पण चिकित्सा कहते जैसे-वमन विरेचन, लंघनादि। २ जो दोषधातुमलादिकोंको बढाकर रोगको दूरकरे उसको बृंहण चिकित्सा कहते है अर्थात् जिसमें रोगीका देहभी यथार्थ वगार है और रोग दूर होजाय इस चिकित्साको प्राय हकीम और डाकटर लोग बहुतमसन्न करते है।

आसुरी मानुषी दैवी चिकित्सा त्रिविधा मता ।
शस्त्रैः कषायैर्लोहाद्यैः क्रमेणांत्यासुपूजिता ॥

अर्थ—चिकित्सा-आसुरी, मानुषी, और दैवी, इन भेदोंसें तीनप्रकारकी है तहां शस्त्रसे अर्थात् चीरना फाडना, काटना आदि चिकित्साको आसुरी ( राक्षसी ) कहते है। और काढे, चूर्ण, गुटिका, आदिकरके जो चिकित्सा करीजाय वो मानुषी चिकित्साहै। और जो सुवर्ण, चांदी, और लोह आदि शब्दसे पारा, गंधक, रसोपरस, रत्नोपरत्न, और विषादिकसे चिकित्सा करीजावे वो दैवीचिकित्सा कहलाती है। इनमें अंतकी चिकित्सा अर्थात् दैवी चिकित्सा माननीय है ॥

शिष्य—-चिकित्सामें कौन २ वस्तु जानने योग्यहै।

गुरु—-चिकित्साकरने वालेको प्रथम चिकित्साके अंगोंका जानना अति आवश्यक है।

शिष्य—-तो आप कृपापूर्वक चिकित्साके अंगोको कहिये।

गुरु—-जैसे अंगहीन मनुष्य अच्छा नही इसी प्रकार अंगहीन चिकित्सा कीभी शोभा नही अतएवमें उन अंगोको कहता हूं।

अथचिकित्साङ्गानि

रोगी दूतो भिषग्दीर्घमायुर्द्रव्यं सुसेवकः ।
सदौषधं चिकित्साया इत्यंगानि बुधा जगुः ॥

अर्थ—रोगी,-दूत,-वैद्य,-दीर्घआयु,-द्रव्य,-उत्तमसेवक,-और उत्तम औषधी ये चिकित्साके अंग विद्वानोंने कहे है। जैसे-अंगहीन मनुष्य अशोभितहोता है उसीप्रकार चिकित्साभी अंगहीन उत्तमनहीं कहलाती ॥

शिष्य—आपने "चतुर्णांभिषगादीनां" इसश्लोकमेंजो वैद्यादिचतुष्टय कहे उनका चिकित्सामें क्याप्रयोजन है और उनको क्याकहते है ॥

गुरु—वो चिकित्साके पादचतुष्टयहै अर्थात् चिकित्साके चारपैरहै इनके विना चिकित्सा चलनहीं सक्ती यहीप्रयोजन है ॥

चिकित्साकेपादचतुष्टय

भिषग्द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम् ।
गुणवत्कारणं ज्ञेयं विकारस्योपशान्तये ॥

अर्थ—वैद्य,-द्रव्य ( औषधि ) रोगीका सेवक,—और रोगी, ये चिकित्सा केचारपैरहै। यह पादचतुष्टय उपयुक्त गुणसंपन्न होनेसें रोगशांतिकरनेको समर्थ होते है ॥

## पाठांतरं

वैद्यो व्याध्युपसृष्टश्च भेषजं परिचारकः।
एते पादाश्चिकित्सायाः कर्मसाधनहेतवः॥

अर्थ—वैद्य, रोगी, औषध और परिचारक (सेवक) ए चिकित्साकेचार पैर-कर्मसाधनके हेतुहै; अर्थात् इनके विना चिकित्सा कर्म नहीं होसक्ता ॥

## वैद्यविना पादत्रको निष्फलत्व

वैद्यहीनास्त्रयः पादागुणवंतोऽप्यपार्थकाः।
उद्गातृहोतृब्रह्माणो यथा ध्वर्युंविनाध्वरे ॥

अर्थ—वैद्यरहित चिकित्साके अन्य तीनपाद गुणवान्‌भी निरर्थक है, जैसे—यज्ञमें विना अध्वरी ( उपाध्याय ) के उद्गाता, होता, और ब्रह्मा, ए निष्फल है। जैसें अध्वरी—उद्गाता होता और ब्रह्माको पृथक २ कर्ममें युक्ति वताता रहता है उसीप्रकार वैद्य—रोगी सेवक और औपधमें युक्ति वताता रहता है ॥

## पादत्रयविनाभीवैद्यकोमुख्यत्व

वैद्यस्तुगुणवानेकस्तारयेदातुरान्सदा।
प्लवं प्रतितरैर्हीनं कर्णधारइवार्णवम्॥

अर्थ—गुणवान् अकेला वैद्यही रोगियोंको सदैव उद्धार करता है अर्थात रोगसे निर्मुक्त करता है जैसें प्रतिवर ( भीतरभरे हुए जलके उलीचने वालों करके ) हीन नावको अकेला मल्लाह (केवटिया) पार लगाता है ॥

## पादचतुष्टयमें वैद्यको प्राधान्यत्व

कारणंषोडशगुणंसिद्धौपादचतुष्टयं। विज्ञाता शासिता योक्ता प्रधानं भिषगत्र तु। पक्तौहि कारण पक्तुर्य था पात्रेंधनानलाः॥ विजेतुर्विजये भूमिश्चमूः प्रहरणानि च। आतुराद्यास्तथा सिद्धौ पादाकारण संज्ञिताः॥ वैद्यस्यातश्चिकित्सायां प्रधानं कारणंभिषक्।

मृद्दंडचक्रसूत्राद्याः कुंभकारादृतेयथा ॥ नावहांति गु-
णं वैद्यादृतेपादत्रयं तथा ।

अर्थ—चिकित्साकी सिद्धीमें सोलहगुण संपन्न पादचतुष्टय कारण है, तथा चिकित्साके पादचतुष्टयोंमें जाननें वाला, आज्ञा करनेवाला, युक्ति वताने वाला वैद्य है, इसीसें वैद्यको मुख्यत्व है। इनको दृष्टांत देकर समझाते है कि जैसें रसोई करने वाले प्राणीको रसोईके करनेमें पात्र, ईधन, और अग्नि ये कारण है तथा जीतनेकी इच्छा करने वाले राजा को जीतनेंमें जैसै पृथ्वी, फौज, और हथियार कारण है। इसी प्रकार वैद्यको चिकित्साकी सिद्धिमें अतुरादि (रोगी आदि) तीनपाद कारण है, इसीसें चिकित्सामें प्रधान कारण वैद्यहै। ओर दृष्टांत देते है कि जैसें मिट्टी (जिस्से वरतन वनते है) दंड (चाक फिरानेकी लकडी) और वासन तयार होनेपर काटनेका डोरा इत्यादि सव वस्तु धरी है परंतु विना कुह्मार (वनाने वाले) के वोअपने २ गुणोंको नहीं करते [ मिट्टी स्वयं वासनरूप नहीं वनती, लकडी स्वयं चाकको घुमाती नहीं है, और डोरा काटता नहीं हैं, तात्पर्य यह है कि जैसै मिट्टी, लकडी, और डोरा उस कुह्मार के आधीन है वो उनसें काम लेसक्ता है ] इसीप्रकार रोगी–औषधी और सेवक ये वैद्यके आधीन है विना वैद्य कुछ नहीं करसक्ते परंतु वैद्य सव कार्य करा सक्ता है ॥

## तहांप्रथमवैद्यकेलक्षण

चिकित्सां कुरुते यस्तु स चिकित्सक उच्यते ।
सच यादृक् समीचीनस्तादृशोऽपि निगद्यते ॥

अर्थ—जो चिकित्साकरे उसको चिकित्सक कहहे है वो वैद्य जैसा उत्तम उसको लिखते है ॥

## वैद्यशब्दकीव्युत्पत्ति

पंचतत्वात्मकं सर्वं वेत्ति यस्मादशेषतः ।
तस्माद्वैद्य इति ख्यातो तस्यनामानि कथ्यते ॥

अर्थ–संपूर्णब्रह्मांडके पदार्थोंको पंचतत्वात्मक जाननेसैं इसको वैद्य कहते है अथवा (विद्ज्ञाने) इस धातुसें वैद्य पद सिद्ध होताहै इससें संपूर्ण–त्रिस्कंधात्मक आयुर्वेद तथा अन्य व्याकरण–न्याय–ज्योतिषादि संपूर्ण शास्त्रोंके आशयोंको तथा लौकिकके संपूर्ण व्यवहारोंको जाननेसैं इसको वैद्य ऐसा कहते है ] अब उस वैद्यके नामोंको कहते हैं।

## वैद्यकेनाम

वैद्यः श्रेष्ठोऽगदंकारो रोगहारी भिषग्विधिः ।
रोगज्ञो जीवनो विद्वान् आयुर्वेदी चिकित्सकः ॥

अर्थ—वैद्य, श्रेष्ठ, अगदंकार, रोगहारी, भिषक्, विधि, रोगज्ञ, जीवन, विद्वान्, आयुर्वेदी, और चिकित्सक, ये वैद्यके संस्कृत नाम है इसी प्रकार गदहागदारि, प्राणाचार्य, प्राणद, और वैद्यराज, इत्यादि औरभी अनेक नाम वैद्यके है

## वैद्यकेलक्षण

तत्वाधिगतशास्त्रार्थो दृष्टकर्मा स्वयंकृती । लघुहस्तः
शुचिः शूरः सज्जोपस्करभेषजः॥ प्रत्युत्पन्नमतिर्धीमान्
व्यवसायी प्रियंवदः[1]सत्यधर्मपरो यश्च वैद्यईदृक् प्रशस्यते ॥

अर्थ—जिसने यथायोग्य आयुर्वेदशास्त्र अध्ययन कर उसका यथार्थ तात्पर्य हृदयंगम अर्थात् हृद्गत करलियाहो, अन्यवैद्यके करेहुए छेदनादि और स्नेहपाकादि क्रियादि चिकित्साको अनेकवार देखचुकाहो, स्वयं चिकित्सामें कुशल, तथा जिसका हलकाहाथहो, अर्थात् छेदनादि क्रियामें जिसका हाथ कांपे नहीं। पवित्राचार, ( वाहरभीतरसै शुद्ध ) शूर (खेदरहित)नवीन तयार करीहुई औषधयुक्त, तथा अग्रोपहरणीयाध्यायमें पठित यंत्र शस्त्रादि युक्त, तात्काल स्फुरणवाली बुद्धि, अर्थात् वादकी किसी अवस्थामें मोहित न हो। बुद्धवान् (जो अनुक्त और दुरुक्त ग्रहण करनेवाली और त्यागनेवाली बुद्धिवाला ) उद्योगी ( रोगीकी विगडीहुई अवस्थामेंभी यत्नकरनेमें मोहित न हो) प्रियवचन वोलने वाला, कोई प्रियंवदकेस्थानमें ( विशारद )ऐसा पाठ कहते है तहां विशारद कहिये शास्त्रके कठिन शब्दोंको देखकरभी न घवडावे, सत्य और धर्ममें तत्पर अैसा वैद्य उत्तम कहाहै ॥

## वैद्यकेगुणचतुष्टय

श्रुतेपर्यवदातृत्वंवहुशोदृष्टकर्मता ।
दाक्षंशौचमितिज्ञेयं वैद्येगुणचतुष्टयम् ॥

अर्थ—शास्त्रमें प्रवीणत्व तथा अनेक प्राचीन वैद्योंकी कर्मसिद्धीको जिसने अनेक वारदेखाहो, चतुर औ पवित्र ये वैद्यमें चारगुण जानने ॥

---

१ विशारदः इतिपाठांतरम् ।

अब प्रसंगवस चरकसैं तीनप्रकरके वैद्योको यहाँपरवर्णन करतेहे ॥

## त्रिविधवैद्य

भिषक्छद्मचराः सन्ति सन्त्येके सिद्धिसाधिताः।
संति वैद्यगुणैर्युक्ता स्त्रिविधा भिषजो भुवि ॥

अर्थ—इस पृथ्वीमें तीनप्रकारके वैद्यहै-जैसे कि छद्मचर ( कपटी ) वैद्य, दूसरे सिद्धसाधित,–और तीसरे वैद्यगुणोकरके युक्त अर्थात् उत्तम वैद्य है ॥

## ठगवैद्यकेलक्षण

वैद्यभांडौषधैः पुस्तैः पल्लवै रवलोकनैः ।
लभन्ते ये भिषक्शब्दमज्ञास्ते प्रातिरूपकाः ॥

अर्थ—वैद्योंके पात्र,–औषधि,–पुस्तक और पत्तेआदिके देखनेसैं जो भिषक ( वैद्य) शब्दको माप्तहोते है वो वैद्य मूर्खहै, उनको प्रातिरूपक अर्थात् ठगिया कपटकेवने वैद्यजानने चाहिये, तात्पर्य यहहै कि जो मूर्खवैद्य ठगियाहोते है वोअनेक शीशी,–अमृतवान् आदि पात्रोसे और बूँटी औषध, पोथी, रूखडीआदिसैं अपने स्थानको सजायेहुए रखते है कि जिससैं रोगियोंको यह मालूम होवेकि ये कैसे वडेभारीवैद्य हैं, परंतु ऐसे दुष्टवैद्य रोगियोंको त्यागदेने चाहिये ॥

## सिद्धिसाधितवैद्यकेलक्षण

श्रीयशोज्ञानसिद्धीनां व्यपदेशादतद्विधा ।
वैद्यशब्दं लभंते ये ज्ञेयास्ते सिद्धिसाधिताः ॥

अर्थ—चिकित्साश्री और यशोज्ञान कहिये चिकित्साक्रियाकी सिद्धी इनके मिससैं जो वैद्य शब्दको प्राप्त होते है परंतु उनमें उक्तगुण होवे नहीं उनको सिद्धि साधित वैद्य कहतेहै। अर्थात् विना चिकित्साकरे और विना चिकित्साकी क्रियाके करे जिनका संसारमें यह नाम होजावे कि अमुक वैद्यकी चिकित्साके बराबर दूसरेकी चिकित्सा ( इलाज ) नहीं है, और वो इसकर्ममें अत्यंत निपुणहै उसको सिद्धसाधित वैद्य शास्त्रमें कहाहै । [ ऐसे वैद्य क्या काम करते है कि किसी नवीन सहरमें जाकर आप वैद्यवन बैठते है,और उसीसहरके अथवा दशवीस अन्य सहरके धूर्त्त मनुष्योंको कुछ लोभदेकर अपनानाम इसप्रकार प्रसिद्ध कराते है कि वो उस सहरमें जाकर यह प्रसिद्धी करतेहै कि भाईहो ये नए वैद्य आएहै इनका भगवान् मंगलकरे कि मेरें वर्षोंसें कोढका रोग था सो इन्होने दश-

ही दिनमें दूर करदिया। दूसरा मनुष्य कहताकि मेरें महिनोंके पुराने ज्वरको दोतीन पुडियोंमें खोय दिया। तीसरा कहताहैकि मेरे दमेंके रोगको जो बडे २ वैद्य और डाक्टरोसें अच्छा न होसका उसको इन्होने थोडेहीदिनमें बिलकुल जडसे उखाड दीना परमात्मा इनकी जयकरे, इसी प्रकार कोई कुछ और कोई कुछ रोगका नामलेते है। बस इन दुष्टमनुष्योंके वचनरूप जालमें फसकर उससहरके भोले भाले मनुष्य इनबनेहुए सिद्धसाद्धक वैद्योंके पास खिचेहुअे चलेजाते है। और जब ठगा जाते है तब पश्चात्ताप करते उन दुष्टमनुष्योंकी निंदा करते हुए ( जोकि उन वैद्योंकी बडाई करतेथे ) चुपहो बैठ रहते है. ]

## सद्वैद्यकेलक्षण

प्रयोगज्ञानविज्ञानसिद्धिसिद्धाःसुखप्रदाः

जीविताभिषरास्तेस्युर्वैद्यत्वंतेष्ववस्थितम् ॥

अर्थ—प्रयोग ( औषध प्रयोग करण ) ज्ञान ( शास्त्रज्ञान ) विज्ञान ( लोक व्यवहारज्ञान ) सिद्धि ( चिकित्साकर्मकी सिद्धी ) इन करके जो विख्यातहै। और रोगियोंको सुखकेदेनेवाले वो प्राणाभिपर अर्थात् प्राणरक्षक वैद्य है ये रोगियों करके उपादेय है अर्थात् अैसे वैद्योंसें अपनी चिकित्सा करानी चाहिये ॥

अब प्रसंगवसचरकसें द्विविध वैद्यवर्णनके वास्ते दशप्राणायतनीया ध्यायकावर्णन करते है ॥

---

## अथातोदशप्राणायतनीयमध्यायंव्याख्यास्यामः

अर्थ—अबहम दशप्राणायतनीय अध्यायकी व्याख्याकरैंगे अर्थात् प्राणोके रहनेके दशस्थान जिस्मेंकहे अतएव उसका वर्णन इस अध्यायमें कराजायगा ॥

दशैवायतनान्याहुः प्राणोयेषुप्रतिष्ठितः ।

शङ्खौमर्मत्रयंकण्ठोरक्तशुक्रौजसीगुदः ॥

तानीन्द्रियाणिविज्ञानं चेतनाहेतुमामयम् ।

जानीतेयः सविद्वान्वै प्राणाभिसरउच्यतेइति ॥

अर्थ—जिनमें प्राणरहतेंहै वो दशस्थान कहे है जैसे—दोनोकनपटी, तीनमर्म, कंठ, रुधिर, शुक्र, ओज, और गुदा, इनदशस्थानमें प्राणरहाकरते है—इनको

और इन्द्रियोंके विज्ञानको तथा चेतनाके हेतुको और रोगको जो जानता है उस विद्वान् वैद्यको प्राणाभिसर अर्थात् प्राणरक्षक वैद्य जानना ॥

अब इसजगे यह जिज्ञासाहुई किप्राणाभिसर किसका नाम है इसवास्ते कहते है ॥

## द्विविधवैद्यवर्णनम्

द्विविधास्तुखलुभिषजोभवंत्यग्निवेश-
प्राणानामेकेऽभिसराहन्तारोरोगाणा-
मेकेऽभिसरारोगाणांहन्तारःप्राणिनामिति ।

अर्थ—अब चरकके मतसै दोप्रकारके वैद्य कहते है । महर्षिआत्रेय प्रियशिष्य अग्निवेशको संबोधन देकर बोलेकि हेवत्स ! इसपृथ्वीमें दोप्रकारके चिकित्सक ( वैद्य ) है, एक प्राणाभिसर अर्थात् प्राणोंके रक्षक और रोगोंके नाशक । दूसरे रोगाभिसर अर्थात् रोगोंके रक्षक और प्राणोंके नाशकर्त्ता ॥

एवं वादिनं भगवन्तमात्रेयमग्निवेशउवाच । भगवंस्ते
कथमस्माभिर्वेदितव्याभवेयुरिति । भगवानुवाच । ये
इमे कुलीनाः पर्यवदातश्रुताः परिशिष्टकर्माणो द-
क्षाः शुचयोजितहस्ता जितात्मानः सर्वोपकरणवन्तः
सर्वेंद्रियोपपन्नाः प्रकृतिज्ञाः प्रतिपत्तिज्ञास्ते प्राणि-
नामभिसरा हन्तारो रोगाणाम् ॥

अर्थ—इसप्रकार आचार्यके वाक्यको श्रवणकर अग्निवेश बोलेकि हेभगवन् ये दोप्रकारके जो वैद्य आपने वर्णनकरे उनको हम किसप्रकार जाने, अतएव अनुग्रह करके उनके लक्षण कहो। तब महर्षि बोले किहेवत्स! श्रवणकर अबमें दोनोप्रकारके वैद्योंके लक्षण वर्णन करताहूं । उत्तम कुलमें जन्म जिन्होंका शुद्ध शास्त्रज्ञान संपन्न, कृतकर्मा ( जिन्होंने वैद्यकी क्रिया स्वयं करलीनीहो ) कर्मकरनेमें चतुर,-पवित्र,-जितहस्त ( चोरीआदि दुष्टकर्ममें रहित ) जिती है आत्मा जिन्होंने,-सर्व चिकित्साकी सामग्री करके युक्त,- सर्व इन्द्रीन् करके युक्त ( अर्थात काणा,-भैड़ा,-लूला,-लगड़ा,-टोंटा,-इत्यादि लक्षण युक्त नहो ) रोगियोंकी प्रकृतिको जानने वाला,-और प्रतिपत्तिवेत्ता अर्थात् ज्ञानी असेवैद्य रोगियोंके प्राणोंके रक्षक और रोगोंके नाश करनेवाले होते है ॥

तथाविधाहि केवले शरीरज्ञाने शरीराभिनिवृत्तिज्ञाने-प्रकृतिविकारज्ञाने च निःसंशयाः सुखसाध्यकृच्छ्रसाध्ययाप्यप्रत्याख्येयानां च रोगाणां समुत्थानपूर्वरूपलिंगवेदनोपशयविशेषविज्ञाने व्यपगतसंदेहाः ॥

अर्थ—उसीप्रकार जो शारीर विज्ञान और प्रकृति तथा विकृतिके नियम विषयमें भलेप्रकार जानने वाला, सुखसाध्य, कृच्छसाध्य, याप्य तथा असाध्यरोग समस्तकी उत्पत्ति, पूर्वरूप, लक्षण, पीडा और उपशयज्ञानमें संदेहशून्यहो,

त्रिविधस्यायुर्वेदसूत्रस्य ससंग्रहव्याकरणस्य सत्रिविधौषधग्रामस्य प्रवक्तारः सर्वेषां मूलफलानां चतुर्णां महास्नेहानां पंचानां लवणानामष्टानां च मूत्राणामष्टानां च क्षीराणां क्षीरत्वक्वृक्षाणां च षण्णां शिरोविरेचनादेश्च पंचकर्माश्रयस्यौषधगणस्याष्टाविंशतेश्च यवागूनां द्वात्रिंशतश्च सर्वेषां चूर्णप्रदेहानां षण्णां विरेचनशतानां पंचानां च कषायशतानामितिस्वस्थवृत्तौ च भोजनपाननियमस्थानचंक्रमणशय्याशनमात्राद्रव्यांजनधूमनावनाभ्यंजनपरिमार्जनवेगविधारणाविधारणव्यायामसात्म्येन्द्रियपरोक्षोपक्रमसद्वृत्तकुशलाः चतुष्पादोपगृहीते च भेषजे-षोडषकले सविनिश्चये सत्रिपर्येषणे-सवातकलाकलज्ञाने व्यपगतसंदेहाः ॥

अर्थ—जिसका संग्रह तथा व्याकरण एवं त्रिविध ( वृद्धिमाप्तदोषके घटानेवाली, घटेहुएरोगकी बढानेवाली, तथा समभावावस्थित दोषोंके संरक्षक ) औषधसहित त्रिस्कंध ( हेतु, लक्षण, और औषधज्ञानात्मक ) आयुर्वेदमें विशिष्टज्ञानसंपन्न सर्वप्रकारके मूल, फल, चतुर्विधमहास्नेह, पाँचप्रकारके निमक, आठमूत्र, आठ प्रकारके दूध, त्वचामें क्षीरवाले वृक्षोंके तथा छः प्रकारके शिरोविरेचन पंचकर्म संबंधी २८ औषधसमूह, और ३२, प्रकारकी यवागू–सर्वप्रकारके-चूर्ण, और प्रदेहसमस्त, छः सौ विरेचन और पांचसौ कषाय ( काढे ) आदि

द्रव्यगण, स्वस्थावस्था भोजन, और पानके नियम, अवस्थान डोलना फिरना, शयन, बैठना द्रव्यादिकोंका परिमाण अंजन, धूमपान, नस्यविधि उबटना, देहकापोंछना उपस्थितरोगका धारण, और अधारण, व्यायाम सात्म्यता, उसीप्रकार, इन्द्रियोंके अप्रत्यक्षस्थलमें क्रिया संपादनका नियम उत्तम आचरणमें इत्यादि सर्वविषयोंको जानमेमें कुशल, पाद चतुष्टयोपगृहीत, औषध तथा सोलहकला करके निश्चित त्रिश्रैपणाका ज्ञाता सवात कलाकल ज्ञानमें संदेहरहित हो॥

चतुर्विधस्यच स्नेहस्य-चतुर्विंशत्युपनयस्य चतुःषष्टिपर्यंतस्य व्यवस्थापयितारो बहुविविधविधान युक्तानां च स्नेह्यस्वेद्यवम्यवि रोध्यौषधोपचाराणां कुशलाः

अर्थ—चार प्रकारकेस्नेह चौवीसप्रकारके उपनय तथा चौसठ पर्यंतका स्थापन करनेको भलेप्रकार जानताहो। अनेक प्रकार विधिकेसाथ स्नेहनीय, स्वेदनीय, वमनीय, और विरेचनीय औषध समस्तोंके प्रयोग विषयमें कुशल।

शिरोरोगादेश्च दोषांशविकल्पज्ञस्य व्याधिसंग्रहस्य संक्षयपीडकाविद्रधेः सर्वेषां च शोफानां बहुविधशोफानुबंधानामष्टचत्वारिंशतश्च रोगाधिकारिणां चत्वारिंशस्य च नानात्वजस्य व्याधिशतस्य तथा विगर्हितातिमलातिकृशानां सहेतुलक्षणोपक्रमाणां स्वप्नस्य च हिताहितस्यास्वप्नातिस्वप्नस्य च सहेतूपक्रमस्य षण्णांचलंघनादीनामुपक्रमाणां संतर्पणापतर्पणज्ञानां रोगाणांस्वरूपप्रशमनानां शोणितज्ञानां च व्याधीनां मदमूर्च्छासंन्यासानां च सकारण रूपौषधानां कुशलाः कुशलाश्च।

अर्थ—शिरोरोग, दोषोंके अंश, विकल्पजात, आदिव्याधिसंग्रह, क्षय, पिडका, विद्रधि, समस्त प्रकारकी सूजन, संपूर्ण सोथोंके १४८अनुबंध मुख्यरोग४०,तथा अनेक प्रकारकी १०० व्याधि, तथा दुष्ट मल, अतिकृशोंके सहेतु लक्षणकर्मोका जानने वाला, स्वप्नका शुभाशुभ ज्ञाता, सोना तथा अत्यंत सोना इनके सहेतु चिकित्साका ज्ञाता अनुबंध, लंघनादि छः वस्तुओंका उपक्रम, संतर्पण, और

अपतर्पण मद मूर्च्छा और संन्यास, इत्यादि सकल रक्तजन्य व्याधि एवं इनके निदान, लक्षण, और प्रशमक औषध समस्त विषयमें विशेष विज्ञान शाली

आहारविधिविनिश्चयस्य प्रकृत्याहिततमानामाहारविकाराणामग्र्यसंग्रहस्यासवानांच चतुरसीते द्रव्यगुणविनिश्चयस्य रसानुरससंश्रयस्य सविकल्पकवैरोधिकस्य द्वादशवर्गाश्रयस्य चान्नपानस्य सगुणप्रभावस्य सान्नपानगुणस्य नवविधार्थसंग्रहया आहारगतेश्च हिताहितोपयोगविशेषात्मकस्य च शुभाशुभविशेषस्य धात्वाश्रयाणां च रोगाणामौषधसंग्रहाणांच दशानां च प्राणायतनानां यं च वक्ष्याम्यर्थे दशमहामूलीयं त्रिंशततमाध्याये तत्र च कृत्स्नस्य च तंत्रोद्देशलक्षणस्य तंत्रस्य च ग्रहणधारणविज्ञानप्रयोगकर्मकार्यकालकर्तृकरणकुशलाः कुशलाश्च।

अर्थ—आहारकी विधिका निश्चय, प्रकृतिके हिततम आहारविकारोंका ज्ञाता, अग्निसंस्कारसें वने चौरासी आसवोंके, द्रव्यगुणोंका निश्चय, रसानुरससंश्रय सविकल्प और उनके विरोधी तथा द्वादशवर्गाश्रित अन्नपानका सगुणप्रभावका तथा अन्नपान आहारगतीके हिताहित उपयोग विशेष शुभाशुभका ज्ञाता, धातु संश्रित रोग सकलकी औषध प्रयोग विषयमें निपुण, तंत्रोक्त निखिल लक्षण और तंत्रका ग्रहण धारण विज्ञान तथा प्रयोगादि विषयमें भलेप्रकार जाननेवाला,

स्मृतिमतिशास्त्रयुक्तिज्ञान आत्मनः शीलगुणै रविसंवादनेन संपादनेन सर्वप्राणिषुचेतसो मैत्रस्य मातृपितृभातृबंधुवदेवं च परंकृपालव इत्येवं वहुविधगुणयुक्ता भवंत्यग्निवेश प्राणानामभिसराहन्तारोरोगाणामिति।

अर्थ— स्मृति, बुद्धि, युक्ति और शास्त्रज्ञान संपन्न, एवं सर्वप्राणीमात्रमें मातापिता भैयाके और वांधवोंके समान परम कृपाकरने वाला, इत्यादि समस्त

और इसीप्रकार अन्यान्यबहुगुणविशिष्ट वैद्य प्राणरक्षक और रोगनाशक कहाताहै.

## प्राणनाशकवैद्यकेलक्षण

अतो विपरीता रोगाणामभिसरा हन्तारःप्राणिनामिति तेभिषक्छद्म प्रतिछन्ना राज्ञां प्रमादाच्चरंति राष्ट्राणि तेषामिदं विशेषविज्ञानमत्यर्थं वैद्यवेशेन श्लाघमानाविशिखान्तरमनुचरंति कर्मलोभात् श्रुत्वा च कस्यचिदातुर्यमभितः परिपतन्तिगृध्राइव मांसलोभात्, संश्रवणेचास्यात्मनोवैद्यगुणानुच्चैर्वदंति यश्चास्य वैद्यः प्रतिकर्मकरोति तस्य च दोषान् मुहुर्मुहुरुदाहरंत्यातुरमित्राणि च प्रहर्षणोपजापोपसेवाभिरिच्छन्त्यात्मीकर्तुमल्पेच्छतांचात्मनः ख्यापयंतिकर्मचासाद्य मुहुर्मुहुरवलोकयंति दाक्ष्येणाज्ञानमात्मनश्छादयितु कामा व्याधितं चापवर्त्तयतुमशक्नुवंतोव्याधितमेवानुपकरणमपचारिकमनात्मवन्तमुद्दिशंति अन्तगतं चाभिसमीक्ष्यान्यमाश्रयंति देशमपदेशमात्मनः कृत्वाप्राकृतजनसन्निपाते चात्मनः कौशलमकुशलवद्वर्णयन्ति अधीरवच्च धैर्यमपवदन्ते विद्वज्जनसन्निपातं चाभिसमीक्ष्य प्रतिभयमिव कान्तारमध्वगाः परिहरंति।नचैषामाचार्याः शिष्यावा स ब्रह्मचारी वैवादिको वा कश्चित्प्रज्ञायते इति ॥

अर्थ—अब दुष्टवैद्यके लक्षण कहते है–कि जो लक्षण कह आएहै इस्सैं विपरीत लक्षण वाले वैद्यको रोगाभिसर अर्थात् रोगोंका रक्षक और प्राणोंका नाशक जानना। ऐसे कपटीवैद्य छिपेहुए राजाके प्रमादसैं (राजाके वंदोवस्त न करनेसैं) नगर सहरोंमें फिरते है [इसकहने सैं यह प्रयोजन है किएसे दुष्ट वैद्योंको राजा अवश्य दंडदेवे जिस्सैं ए वढे नही] अब इन दुष्टवैद्योंके जाननेके लिये कुछ लक्षण कहते है। कि ये दुष्ट-वैद्यवेशको धारण करे रहते है। और अपनी वडाई आप अत्यंत करते है, और कुछ कर्म वैद्योंकेसे कराकरते है, एवं किसी मनु-

ध्यको रोगी सुनकर इसप्रकार उसके ऊपर गिरते है जैसैं मांसके लोभी गीध गिरते है, [इस्सैं यह दिखायाकि गीध केवल मांसके लोभसै गिरताहै उसीप्रकार ए छलिया वैद्य द्रव्य और उसरोगीके प्राणहरण करनेको जाते है] अनेक उपायोंको करके उसरोगीके पास पहुच उसको प्रसन्न करते है,-उसके सुनते ऊंचे स्वरसैं पुकारकर अपने वैद्यगुणोंको कहते है,-यदि कोई दूसरावैद्य उसरोगीकी चिकित्सा करताहोवे तो उसके वारंवार दोषोंको कहै अर्थात् इस वैद्यमें ये ये अवगुनहै,-और रोगीके मित्र बांधवोंको अनेक प्रसन्नता-जप-सेवादि कर्मकरके अपनाय लेनेकी चेष्टा करे। और इसप्रकार अपनेको बेपरवाही दिखावें कि रोगीके बांधवोको यह प्रतीत होजावेकि इनको इसके चिकित्सा करनेका कुछ आग्रह नही है,-केवल हमारे कहनेसैं लाचारहोकर करते है.-जब रोगी इन दुष्टवैद्योंके हस्तगत होजाताहै तब किसीक्रिया प्रयोगके विगडनेसैं वारंवार क्रियाके फलको देखते है [अर्थात् हमने यह रोगविचारकर इसरोगीको यह औषधदीनी परंतु यह विपरीत गुणवाली क्यों होगई,] इसचिंतामें डूबजाते है। जब रोगी अच्छा न होसके तब अपने दोष छिपानेके निमित्त रोगीको उपकरण विहीन कहै,[अर्थात् हमक्याकरे जो वस्तु रोगीको चाहिये सोतो इसके यहां नहींथी] और यह रोगी अत्याचारी है [पथ्यसैं नहीं रहता] और सत्त्वसून्य है, इस प्रकार उस रोगीको दोष देते है। रोगीके मरनेपर अपनेऊपर विपत्यके भयसैं छलकरके दूसरे देशमें चलेजाते है [अर्थात् रोगीके मरनेपर उसके बांधव कहीं सरकारमें रपट न करदेवे, अथवा लडनेको तयार न होजावे, इसकारण परदेशको चलेजाते है] और ये सामान्यमनुष्योंके समीप अकुशलके समान अपनी कुशलता और अधीरके समान अपने धैर्यको प्रगट करते है। विद्वानोंके समूहको देखके जैसैरास्ता चलनेवाला मनुष्य घोर वनको त्याग देताहै उसीप्रकार ये दुष्टवैद्य उस विद्वानोंके समाजको देखकर चलेजाते है इन दुष्टोके न आचार्य (गुरु) जाने जावे, न शिष्य न सहाध्याई न विवादकर्ताजाने जावे॥

## मूर्खवैद्योंकेलक्षण

भिषक्छद्मप्रतिछन्ना व्याधितांस्तर्कयन्ति ये।
वीतंसमिव संश्रित्य वने शाकुन्तिको द्विजान्॥
श्रुतदृष्टक्रियाकालमात्राज्ञानवहिष्कृताः।
वर्जनीया हि ते मृत्योश्चरन्त्यनुचरा भुवि॥

वृत्तिहेतोर्भिषङ्मानपूर्णान् मूर्खविशारदान् ॥
वर्जयेदातुरो विद्वान् सर्पास्ते पीतमारुताः ॥

अर्थ—जैसैं वधिकलोग ( अहेरकरनेवाला ) जाल आदिको लेकर वनमेंजाय एकांतमें बैठकर यथार्थ पक्षी ( पखेरुओं ) की खोज करता है । उसीप्रकार ये कपटी दुष्टवैद्य किसी सहरमें प्रवेशकर उसजगे रोगी मनुष्योंको ढूंढते है । इन दुष्टवैद्योंने किसीगुरुके समीप रहकर कभी किसीचिकित्साका विशेष विवरण सुना नही है । कभी किसीकी चिकित्सा देखी नही चिकित्साका समय नहीं जानते । औषधादिकी मात्राका ज्ञाननही ये संपूर्ण इस वैद्यकविषयमें मूर्ख है । ये मृत्यूके दूतस्वरूपहोकर पृथ्वीमें विचरते है । ये जिविके हेतु, वैद्याभिमानी, मूर्खतामें कुशल, द्रव्यकेलोभी, अैसे वैद्य बुद्धिवान् रोंगियोंको त्याग करने योग्यहै। तथा पवनभक्षक सर्पके समान भयंकरहै ॥

अबवैद्यकेकुछपालनेयोग्यनियमकहतेहै

भिषजा सर्वथा सर्वप्राणभृतां शर्माशासितव्यम् । अहरहरुत्तिष्ठताचोपविशता च सर्वात्मना चातुराणामारोग्ये प्रयतितव्यम्,जीवितहेतोरपि चातुरानदोग्धव्याः ॥

अर्थ—अब वैद्यके अवश्य प्रतिपालनीय कितनेक नियम वर्णन करते है— जैसैं कि चिकित्सक (वैद्य) सर्वतो भावसैं (सबप्रकारसै) संपूर्ण प्राणियोंके मंगलकी आकांक्षा करे [ यह न कहे कि कब मनुष्योंकै रोगउठे और कब हमारी जीविका चेते ] उठते बैठते अनेक प्रकारके भावकरके और आप क्लेशोंको सहकर सर्वप्रयत्नसैं देह मनवाणी करके रोगीके आरोग्यके निमित्त निरंतर यत्नशील होवे । अपने प्राणभी जाते हो तथापि आतुर ( रोगी ) को क्लेशित (दुःखित ) करके उससैं धन हरण न करे,

मनसापि च परस्वम् निभृतवशेपरिच्छदेन भवितव्यम् श्लक्ष्णशुल्कधर्म्याशम्य धन्यसत्यहितमितवचसा-देशकालविचारिणास्मृतिमताज्ञानोत्थानोपकरणसंपत्सुनित्यंयत्नवतानकदाचिद्राजद्विष्टानांमहाजनद्विष्टानां वाप्यौषधमनुविधातव्यम् ॥

अर्थ—परस्व(परायाधन)ग्रहण और पराईस्त्रीको धर्षणादि चिंतवनको मनकरकेभी

न करे। वैद्यको शांतवेश धारणकर्ताहोना चाहिये, तथा जडता रहित, निः संदेह, निर्दोष, धर्मात्मा, प्रशंसायुक्त, सत्य, हित, और परिमाणका बोलनेवाला होना चाहिये, उसीप्रकार देश, कालकाविचारवान् और स्मृतिमान् होकर सर्वदा ज्ञानके वढानेका उद्योगी होवे, राजा और महात्माआदिके शत्रु मनुष्योंकी कदाचित् चिकित्सा न करे॥

एवंसर्वेषामत्यर्थं विकृतदुष्टदुःखशीलाचारोपचाराणां मुमूर्षतां तथैवासन्निहितस्वराणांस्त्रीणामनध्यक्षाणां वा विशेषतस्तु युवतीनां नप्राति कर्त्तव्यम्॥

अर्थ—जो अत्यंत विकृत होगए हो दुष्ट, दुःशील, तथा दुराचारी आदिका एवं जो मरनेकी इच्छा करताहो, तथा अपनास्वामी ( मालिक ) अथवा जो अध्यक्ष ( सरदारपुरुष ) है उनके परोक्षमें ( हाजिर न रहते ) उनकी स्त्रियोंकी चिकित्सा न करे, और विशेष करके जो स्त्री युवा अवस्था वाली अर्थात् थोडी उमरकी है उनके रोगकी चिकित्सा उनके स्वामीके न होनपर कदाचित् न करे।

आतुरकुलं चानुप्रविशता विदितेनानुमतप्रवेशिना- सार्द्धं पुरुषेणसुसंवीतेनावाक्शिरसास्मृतिमतास्ति- मितेनावेक्ष्यावेक्ष्यबुद्ध्यासम्यगनुप्रवेष्टव्यं अनुप्रवि- श्यचवाङ्मनोवुद्धीन्द्रियाणिनक्वचित् प्रणिधातव्या- नि अन्यत्रातुरोपकारार्था दातुरगतेष्वन्येष्वाभावेषु नचातुरकुलप्रवृत्तयो वहिर्निश्चारयितव्याः॥

अर्थ—विना आज्ञाके रोगीके घरके भीतर न जावे, रोगीका कोईभी सुहृद संबंधीकी आज्ञाहोय तव घरके भीतर जाय, जव रोगीको देखने जावे तव वैद्यको उचितहै कि शुद्ध ओर उज्ज्वल कपडे पहन देहको ढककर और म-

१ ऐसी स्त्रियोंके इलाजकरनेमें वैद्यको अपलांछनका भय रहता है। २ बिनाकिसी मालिकके कहे घरके भीतर वैद्य जाय और उसको कोई वस्तु गुप्तरखनी हो अथवा घरमे स्त्री आदि अंग खोलें वैठी होतोउस वख्त उनको वो वहुत बुरालगताहै अथवा कोई कारण वस उस रोगीको लाकर बाहरही वैद्यको दिखादेते है यदि ऐसे मौकेपर भीतर जावेतो सिवाय मानिहानिके और वो क्या प्राप्तिकरसक्ताहै।

स्तकको नीचा झुकाके–स्मृतिमान, शांति स्वरूप, स्थिरबुद्धि, और रोगसंबंधी शास्त्रका चिंतवन करने वाला होना चाहिये । रोगीके घरकी कोईभी छिपीं हुई वात वाहर निकलके किसीके आगे कहे नहीं

ह्रसितंचायुषः प्रमाणंनवर्णयितव्यम् जानतोपितत्रयत्रोच्यमानमातुरस्यान्यस्यवाप्युपघातायसंपद्यते तेनैतदप्यवश्यंचितनीयं यज्जीवनाशाच्छेदात्प्राणिनां धैर्यगांभिर्यादि प्रभृष्टाः परंशोचनीयतांयान्ति अपिचनकश्चिज्जगत्यप्रमत्तो विद्यते, कदाचित् व्याधेः साध्यत्वेऽप्यसाध्यताभ्रांतेस्तद्वत् व्याख्यानात् तद्वचनप्रतीतोह्यातुर आयुष्मानापिविपद्यते अतोनानिवार्यहेतुंविनारिष्टलक्षणंप्रकटनीयम् । ज्ञानवतापि चनात्यर्थमात्मनोज्ञानेकथितव्यम् । आप्तादपिकथमानादत्यर्थमुद्विजंत्येके ॥

अर्थ—तथा रोगीके आगे अथवा रोगीके किसी आत्मीय बांधवके आगे जिस्सैं उनको दुःख होय ऐंसी रोगीकी भावी ( होनहार मृत्यु ) को जानकरभी न कहे, क्योंकि कहनेसैं उस रोगी और उसके बांधवोंकी धैर्यता जाती रहती है,और वो घवडा जाते है अतएव इस वातको अवश्य याद रखना चाहिये। इस मनुष्य की जीवनआशा टूटीसुनतेही धीरज और गांभीर्यतादि गुण तत्काल पलायमान होजाते है, और वो घोर शोकसागरमे डूव जाते है, इसीसै उसदुष्टवैद्य की वरावर दूसरा प्रमत्त और कौन होगा । दूसरा कारण यह है किजिस रोगीको वैद्यने भ्रमसै असाध्य वताया यदि वो साध्य होय तो उस वैद्यके वाक्यका विश्वास जाता रहता है । और जिसको वैद्यने भ्रांतीसैं साध्य वताया है

३ देहढकने और मस्तक नीचाकरने सैं वैद्यकी साधुरवता प्रगट होती है अन्यथा उद्धत और वेवूफ तथा वदमास जाहिरहोता है । ४ जव वैद्य रोगीके घरमें जाता है तो उसके घरकी सवीभली और बुरीवात इसको जाहिरहो जाती है उस वस्त वाहर आनके उसकी धूरनउडावे यह बडे भारी ऐवकी वातहै । ५ यदि वैद्यको उस रोगीका अशुभ कहनेकी ही अतिआवश्यताहो तो उसके किसी बुद्धिवान् बांधवको एकांतमें ले जाकर कहदेवे ॥

और जो रोगी मरजावे तो फिरभी मनुष्योंको उसके कहनेका विश्वास नहीं रहता अतएव जब तक यह वैद्य अरिष्ट लक्षणोंको भलेप्रकार न विचार लेवे तव तक भला और बुरा कुछभी न कहे। यद्यपि आप विशेषज्ञानवान्भी है परंतु अपनी बहुत प्रशंसा आप न करे क्योंकि यथार्थ विद्वान और बहुदर्शीके भी मुखसैं आत्मश्लाघा सुननेसैं बहुतसैं मनुष्य उस सें विरागलेआते है अर्थात् फिर उनकी वो श्रद्धा नहीं रहती है। ये वैद्यकोही क्या मनुष्य मात्रको अपनी बडाई आपकरना एक तुच्छता दिखानेकाकारण होता है इससैं अच्छे मनुष्यको आत्म श्लाघा करना त्याज्य है॥

## प्रसंगवसकलियुगियावैद्योंकासिद्धांत

स्वस्थैरसाध्यरोगैश्च जन्तुभिर्नास्तिकिञ्चन।
कातरादीर्घरोगाश्च भिषजां भाग्यहेतवः॥

अर्थ—स्वस्थ ( रोगरहित ) और असाध्यरोगवाले प्राणियों करके कुछ नहीं है, किंतु जो कायर (डरपोक) और दीर्घरोगी है वो प्राणी वैद्योंके भाग्यके कारण है। तात्पर्य यह है कि रोगरहित देनेहीका क्या है और जो असाध्य है वो जानता है कि अवमेंमरूंगातो सही फिर इन वैद्योंके ठगाने सें क्या हासिल है। परंतु डरपोक प्राणी तत्काल ही वैद्यके दावमें आजाते है। एवं जो बहुत दिनका रोगी है वोभी नित्य प्रति वैद्यको बुलायेगा तो जवतक पडा रहेगा तवतक कुछन कुछ वैद्यको छीजता ही रहेगा॥

नातिधैर्यं प्रदातव्यं नातिभितिश्च रोगिणम्।
नैश्चिन्त्यान्नादिमे दानं नैराश्यादेव चांतिमे॥

अर्थ—वैद्यको उचितहै कि रोगीको अत्यंत धीरजभी नदेय. और न बहुत भयही दिखलावे, क्योंकि यदि अत्यंत धीरज बधाय देवेगा तो वो रोगी यह विचारके कि अवमें अच्छातो होयही जाऊंगा वैद्यको क्यो ठगाऊं। और अत्यंत भयदिखाने सें वह रोगी मनमें विचारेगा कि अवमें बचनेका तो होई नहीं फिर इस वैद्यको देकर क्यो घरखूका करे जो बचेगा तो बाल बच्चोंके ही काम आवेगा, अत एव अत्यंत धीरज और अत्यंत भय वैद्य रोगीको न देवे जैसैं रुपे हाथ आवे वो युक्ति करे॥

---

चैत क्वार भूले फिरे पटवारी और वैद।
"वैद्यानां शारदीमाता पितातु कुसुमाकरः"॥

भैषज्यं तु यथाकामं पथ्यं तु कठिनं वदेत् ।
आरोग्यं वैद्य महात्म्यादन्यथात्वमपथ्यतः ॥

अर्थ—वैद्यको उचित है कि रोगीको जो मनमें आवे वोही ( धूल, खाक, ) की पुडिया बांधके देदेवे, परंतु उसके ऊपर पथ्य कठिन बतावे ( जो रोगीसें न बन आवे ) यदि ऐसा करनेपर उस रोगीको आराम होगया तो वैद्यका माहात्म अर्थात् वैद्यने अच्छा करा है, और आराम नहोवे तो कहि देवे कि हम क्या करें तुमने पथ्यतो किया हिं नहीं [हमनेतो रामवाण दवाई दीनी भाग्य तुमारा]

निदानं पूर्वरूपाणि सात्म्यासात्म्यचिकित्सिते ।
सर्वमप्युपदेक्ष्यन्ति रोगिणः सदने स्त्रियः ॥

अर्थ—कदाचित् मूर्खवैद्य अपने मनमें यह विचार करे कि मेंकुछ पढातो हूं ई नहीं वहाँ रोगीके रोगका निदान और दवाई क्याकरूंगा उसको कहते है कि भाई तुम बुलानेवालेके साथ जायके उसरोगीके घरमें रोगीके समीप चुपके थोडीदेर वैठतो जाउ फिर तो रोगका निदान ( कारण ) तथा पूर्वरूप, एवं रोगीका हिताहित, और चिकित्सा ( इलाज ) ये सब उसके घरकी स्त्री ( औरत ) अपने आप तुमको बताय देवेगी [क्या आपको जानेमेंभी आलस्य आता है भला ऐसी मुफ्तकी जीवका तुमको कवहाथ लगनेकी है ] ॥

जृम्भमाणेषु रोगेषु म्रियमाणेषु जन्तुषु ।
रोगतत्वेषु शनकैर्व्युत्पद्यंते चिकित्सकाः ॥

अर्थ—जब चारो तरफसें रोग यूं फैलाते है अर्थात् फैलते है और हजारोंप्राणी मरते है तब वैद्य धीरे २ रोगतत्वोंमे बुद्धियुक्ति होते है । तात्पर्य यह है कि तव तक रोग वढते नहीं ओर विशेष मरी नही चेते तब तक वैद्य एकदोही दीखते है और जहां रोगवढे तथा मरी चेती फिरतो वैद्यका वजारचेता और सैंकडो नए नए वैद्य प्रगट होजाते है ॥

प्रवर्त्तनार्थमारंभे मध्येत्वौपधहेतवे ॥
बहुमानार्थमन्तेच जिहीर्पन्ते चिकित्सकाः ॥

अर्थ—प्रथमरोगीका यत्नआरंभ करनेको भेट आदि लेते है, फिर बीचमें कहते है कि अब हमारे पास दवाई नहीं रही यादि कुछ देऊतो दवाई बनावे ऐसें कहकर लेते है, और जब अच्छाहोगया तब अंतमें बहुमानार्थ अर्थात् अपनी विदाईके वास्ते वैद्य धनको हरण करते है। रोगी के पास वैद्यके आनेकी देरी है

रुपया ए पैसेको छोडते है। कभी नहीं? परंतु इनकेभी गुरू घंटाल हकीम और डाक्टर है "दुलहामरोचाहिये दुलहन मेरा टका तो मोयदे" ॥

## वहुश्रुतवैद्यकीप्रशंसा

स्वतंत्रकुशलोऽन्येपु शास्त्रार्थेष्ववहिष्कृतः।
वैद्योध्वजइवाभाति नृपतद्विधपूजितः॥

अर्थ—जो वैद्य वैद्यविद्यामें कुशल है और अन्य ज्योतिष व्याकरणादिमें अवहिष्कृत (थोडा २ जाने) है, वो वैद्य ध्वजाके समान प्रकाश करता है। इसीप्रकार अन्यप्रजाओं करके पूजित राजा शोभित होताहै॥

## (निदानऔपधीऔरसाध्यासाध्यज्ञातावैद्यकोकर्मकीसिद्धि)

यस्तुकर्मविशेषज्ञः सर्वभैपज्यकोविदः।
साध्यासाध्यविधानज्ञ स्तस्य सिद्धिः करे स्थिता॥

अर्थ—जो वैद्योके कर्ममें विशेष जानताहै और संपूर्ण औषधोंके योग अयोगमें कुशल है, तथा साध्यासाध्य विभागके विधानको जानने वालाहै उसको चिकित्साकी सिद्धि हाथमें है अर्थात् वो तत्काल आराम करसक्ता है॥

## शास्त्र और क्रियाज्ञातावैद्यकीप्रसंशा

दृष्टकर्माच शास्त्रज्ञो वैद्यः स्यात् सिद्धिभागसौ।
एकाङ्गहीनोन श्लाघ्य एकपक्ष इवद्विजः॥

अर्थ—जो छेदन भेदन आदि कर्म देखचुकाहो और शास्त्रभी पढाहो वो चिकित्सासिद्धीका भागी है परंतु जो एकही वस्तुको जानता है अर्थात् कर्म और शास्त्र इनमेंसें एकके जाननेवाला वैद्य प्रसशाके योग्य नहीं है। जैसे एक पांखका पखेरु तात्पर्य यह है कि एक पंखसें जैसे पक्षी नहीं उडसके उसीप्रकार एकवस्तु जाननेवाला वैद्य चिकित्सा नही करसक्ता॥

## चतुर्विधज्ञानवान्वैद्यकोराजात्व

हेतौ लिंगप्रशमने रोगाणामपुनर्भवे।
ज्ञानं चतुर्विधं यस्य सराजाद्भिपक्तमः॥

अर्थ—रोगोंकाहेतु (आदिकारण) रोगोंके लक्षण, और उनरोगोंका नाश करना, तथा जैसें नाशहुए रोग फिर इसप्राणीकी देहमे कभी प्रगट नहो ऐसा उपाय करना ये चार प्रकारका जिसको ज्ञानहै वह सब वैद्योंका राजा है॥

## षड्गुणयुक्तवैद्यकीप्रसंशा

विद्यावितर्को विज्ञानं स्मृतिस्तत्परताक्रिया ।
यस्यैते षड्गुणा स्तस्य नसाध्यमतिवर्त्तते ॥

अर्थ—विद्या, वितर्क, विज्ञान, स्मरण, और उसीकर्ममें तत्पर होजाना एवं क्रिया यह षड्गुणसंपन्न वैद्यसें साध्यव्याधि कदाचित् नहीं रहती अर्थात् तत्काल दूर करदेताहै ॥

## वैद्यशब्दप्राप्तीकाकारण

विद्या मतिः कर्मदृष्टिरभ्यासः सिद्धिराश्रयः ।
वैद्यशब्दाभिनिष्पत्तावलमेकैकमप्यदः ॥
यस्यत्वेतेगुणाः सर्वेसान्तिविद्यादयः शुभाः ।
सवैद्यशब्दंसद्भूत मर्हन्प्राणिसुखप्रदः ॥

अर्थ—विद्या, मति, कर्मदृष्टी, वैद्यकर्मका अभ्यास तथा उसकर्मकी सिद्धि और आश्रय ये एक २ वैद्य शब्द प्राप्तहोनेमें वल कहिये कारण है जिसवैद्यमें ये संपूर्ण विद्यादिगुण है वो वैद्यशब्दको प्राप्तिहो प्राणियोंको सुखदाई जानना । इसश्लोकका तात्पर्ययही है किजो विद्या विनयआदि गुणयुक्त है उसीको वैद्यकहनाठीक है मूर्खको नहीं वोउनमें है कि " वैद्यराज नमस्तुभ्यं यमराजसहोदरः । यमस्तु हरातिप्राणान् वैद्यः प्राणान् धनानिच" ॥

## गुरुमुखपठितवैद्यकोवैद्यत्व

शास्त्रं गुरुमुखोद्गीर्ण मादायोपास्य चासकृत् ।
यः कर्मकुरुते वैद्यः स वैद्यो ऽन्ये तु तस्कराः ॥

अर्थ—जो गुरुमुखसें शास्त्रको पढके और उसके तात्पर्यको विचारके अथवा उसके कर्मोंको सीखकर जो कर्म कर्ता है वो वैद्य हैं और बाकीके चोर है ऐसा जानना ॥

## पूज्यवैद्यकेलक्षण

शीलवान्मतिमान्युक्तो द्विजातिः शास्त्रपारगः ।
प्राणिभिर्गुरुवत्पूजः प्राणाचार्यः सहि स्मृत ॥

अर्थ—शीलवान् और बुद्धिवान् द्विजाती तथा शास्त्रमें पारंगत ऐसा वैद्य प्राणियों करके गुरुके समान पूज्यहै क्योकि ऐसा वैद्य प्राणोंका आचार्य है ।

### जीवनदानको श्रेष्ठत्वकथन

धर्मार्थ सदृशस्तस्यदातानेहोपलभ्यते ।
नहिजीवितदानाद्धि दानमन्यद्विशिष्यते ॥

अर्थ—धर्म, अर्थ और कामका दाता उसके वरानही है कि जिसने जीवनदानकर । कारण यहहेकि जीवन दानके समान दूसराकोईभी दाननही है ।

### परोपकारत्वकथन

परोभूतदयाधर्म इतिमत्वाचिकित्सया ।
वर्त्तते यः ससिद्धार्थः सुख मत्यंत मश्नुते ॥

अर्थ—प्राणियोंके दया धर्म परयह वैद्यकशास्त्र है ऐसाविचारके जो चिकित्सामें वर्तता है वह सिद्धार्थ है और अत्यंत सुखको भोगे है ॥

### वैद्यकोदानित्वकथन

धर्मस्यार्थस्य कामस्य त्रैलोक्यस्याभयस्यच ।
दातासंपद्यते वैद्यो दानादेह सुखायुषाम् ॥

अर्थ—देह सुख, और आयु इनकेदेनेसैं धर्म, अर्थ, काम, और त्रिलोकी को अभय का दाता वैद्य कहलता है ॥

दारुणैःकृष्यमाणानां गदै वैवस्वतक्षयम् ।
छित्वावैवस्वतान्पाशान्जीवितंच प्रयच्छति ॥

अर्थ—दारुणरोगोंकरके यमपुरीको खीचे हुऐ मनष्यकी जमफांसोंको छेदनकर यह वैद्यइन प्राणियोंको जीवनदेता है । अतएव इस वैद्यके समान धर्मार्थका दाता दूसरानही है क्योकि जीवनदानसैं बढकर संसारमें दूसरादानकौ नसा है ॥

### चिकित्साकरनेकापुण्य

कपिला कोटिदानाद्धि यत्फलं परिकीर्तितम् ।
तस्मात्कोटिगुणंपुण्यं मेकातुरचिकित्सया ॥

अर्थ—करोड कपिलागौदान करनेसै जिस फलकी प्राप्ति होती है, उस्सैभी करोड गुणा अधिक पुण्य एकरोगीकी चिकित्सा ( इलाज ) करनेसै होता है. ॥

## अन्यच्च

धर्मार्थकाममोक्षाणा मारोग्यंमूल मुत्तमम् ।
तस्मादारोग्यदानेन नरोभवति सर्वदः ॥

अर्थ—धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष इन पुरुषार्थ चतुष्टयोंका मूलकारण आरोग्यताहै । इसीसे आरोग्य दान करके यह प्राणी सब वस्तुकी दाता होता है । चाहिये सब दानकरो और चाहिये तो रोगीका यत्न करो दोनोका फल बराबर है ॥

## ग्रन्थांतरेच

अप्येकंनीरुजीकृत्यव्याधितं भेषजैर्नरः ।
प्रयातिब्रह्मसदनं कुलसप्तकसंयुतः ॥

अर्थ—एकभी रोगीको औषधी करके रोगरहित करनेसें यह प्राणी अपने सात कुलोंको संग लेकर ब्रह्मलोकको जाताहै । तात्पर्य यह है कि वैद्य आप तो तरताही है परंतुचिकित्साके प्रभावसें अपनी सात पीढी (पुस्तों) को तार देताहै

अपिमूलेनकेनापि मर्दनाद्यै रथापिवा ।
सुस्थीकृतं लभेन्मर्त्यः पूर्वोक्तं लोकमुत्तमम् ॥

अर्थ—किसीएक जडीबूटीसें अथवा तैलादि मर्दनसें जो वैद्य रोगीको अच्छा कर्त्ता है वह पूर्वोक्त उत्तम लोक ( ब्रह्मलोक ) को प्राप्त होता है ॥

## प्रमाणांतर

धर्मार्थौ कीर्ति मत्यर्थं सतां ग्रहण मुत्तमम् ।
प्राप्नुयात्स्वर्गवासंच हितमारभकर्मणा ॥

अर्थ—जो वैद्य प्राणियोंका चिकित्सा करता है वह धर्म अर्थ-कीर्ती-और महात्माओं करके ग्राह्य स्वर्गवासको प्राप्तहोता है ॥

## सर्वत्रवैद्यवृत्तिकाकथन

नदेशोमनुजैर्हीनोनमनुष्यानिरामयाः ।
अतः सर्वत्रवैद्यानांसुसिद्धाएववृत्तयः ॥

अर्थ—ऐसाकोईसाभी देशनही है जो मनुष्यों सें रहित हो और जहां २ मनुष्य है वहां२ वो रोग रहितनही है, अर्थात् थोडे और बहुत अवश्यरोगीहोवेगे इसी कारण सर्वत्र वैद्योकी वृत्ति तो सिद्ध है अर्थात् बनीबनाई तयार है कहीं जाओ

न प्राणिरहितो देशो न च प्राणिनिरामयः।
तस्मात्सर्वत्रभिषजांकल्पिताएववृत्तयः ॥

अर्थ—ऐसा कोई सा देश नहीं है कि जहां प्राणी (मनुष्य) नही रहते, और प्राणी रोगरहित नहीं है अर्थात् सर्वत्र मनुष्य रोग पीडित है, इसी कारण वैद्योंकी वृत्ति सर्वत्र कल्पित है अर्थात् सर्वत्र मौजूदहै [ जिसदेशमें जायगा उसीदेशमें वैद्यकी चाहहै ] ॥

### रोगके अंतमें वैद्यपूजन

चिकित्सितशरीरं योननिष्क्रीणाति दुर्मति।
सयत्करोति सुकृतं तत्सर्वंभिषगश्नुते ॥

अर्थ—जो दुष्टबुद्धि रोगी अपने चिकित्सित शरीरको धनादि दान देकर उऋण नहीं करता, वह जो कुछ सुकृत ( पुण्य ) करता है वह सब वैद्यको प्राप्त होता है। अतएव रोगीको उचित है कि इस लोक और परलोक की भलाईकेवास्ते अपनी यथा शक्ती धन, रत्न, वस्त्रादिक देकर वैद्यको प्रसन्नकरे। अन्यथा वह कृतघ्नियोंकी गणनामें है ॥

योरोगीभिषजं सम्यक् रोगशांतौ न पूजयेत्।
तस्यार्जि तस्य पुण्यस्य प्राप्नोत्यर्द्धं भिषग्वरः ॥

अर्थ—जो रोगी रोग शांतहोनेपर वैद्यका पूजन नहींकरे, अर्थात् धनवस्त्रादि देकर संतुष्ट नहीं करता उसके संचितपुण्यकाआधाभाग वैद्यको प्राप्तहोता है। यदि रोगी कुछ नदेवे तो हे भिषग्वरहो! तुम इसी वाक्यपर संतोषकरो॥

### चिकित्साकाफल

क्वचिदर्थः क्वचिन्मैत्री क्वचिद्धर्मःक्वचिद्यशः।
कर्माभ्यासः क्वचिच्चापिचिकित्सानास्तिनिष्फला ॥

अर्थ—कहीं अर्थ ( धनकीप्राप्ति ) कहीं मित्रता, कहीं धर्म, कहीं यशकी प्राप्ति, और कहीं चिकित्सा करनेसे कर्मकाही अभ्यास होता है—इत्यादि कारणोंसें चिकित्सा निष्फल नहीं है किंतु सफलही है. ॥

### चिकित्साकाफल

सनातन त्वाद्वेदाना मक्षर त्वात्तथैवच।
तथादृष्टफलत्वाच्च हितत्वादपि देहिनाम् ॥

वाक्समहार्थविस्तारात्पूजितत्वाच्चदेहिभिः ।
चिकित्सितात्पुण्यतमं नकिंचिदपि सुश्रुमः ॥

अर्थ—वेदोंके सनातन और अविनाशी होनेसैं-तथा प्रत्यक्ष फल दिखानेसैं और प्राणीमात्रको हितकारी होनेसैं-तथा वाणीसमूहोंके कारण एवं देहधारीयोंको माननीयहोंने सैं हम चिकित्सासैं वढकर दूसरा पुण्यतम वस्तुनहीं सुना-यह सुश्रुतमें लिखा है ॥

## वैद्यकोशीक्षा

स्त्रीभिः सहास्यं संवादं परिहासं च वर्जयेत् ।
दत्तं च ताभ्यो नादेय मन्नादन्यद्भिषग्वरैः ॥

अर्थ—वैद्यका उचित है कि स्त्रियोंके साथ एक जगे वैठना उनसैं वातचीतकरना एवं उनसैं हंसी ठटोरी करना त्यागदेवेतथा अन्नके सिवाय और कोईसी वस्तुस्त्रियों सैं न लेवे, तात्पर्य यह है कि रोगीके यहाँ स्त्रियोंके साथ वेठना हांसीठटोरी करना और कोई वस्तु लेनेसे अन्य मनुष्यको यह प्रतीत होगी की इस रांडसैं इस वैद्यकी कुछ सट्टलग रही है ॥

नसुप्याद्रोगिसदने नभुंजीयात्कदाचन ।
विनाह्वानं न गच्छेच्च न ब्रूयान्मरणं भिषक् ॥

अर्थ—वैद्यको कदाचित् रोगीके घरमें न सोना चाहिये, और नरोगीके घर में भोजनकरे, एवं विनावुलाए रोगीकि यहां कदाचित् न जावे, तथा रोगीका मरण जानकरभी न कहे [ ये पूर्वोक्त कर्म वैद्यकी प्रतिष्टा हानि कारक है ] ॥

## प्राणीकोवैद्यशब्दकीप्राप्ति

विद्यासमाप्तौ भिषजो द्वितीयाजातिरुच्यते ।
अश्नुते वैद्यशब्दंहि न वैद्यपूर्वजन्मना ॥

अर्थ—इस भिषक्को विद्याकी समाप्तिमें द्विजाती जाति कहते है, अर्थात् दुसरी जातिहोजाता है, तव यह वैद्य शब्दको प्राप्तहोता है किंतु जन्मलेने मात्रसैंही वैद्य नहीं कहलाता ॥

## वैद्यमात्रकोद्विजत्व

विद्यासमाप्तौ ब्राह्मं वा सत्वमार्ष मथापि वा ।
ध्रुवमाविशति ज्ञानात्तस्माद्वैद्यो द्विजस्मृतः ॥

अर्थ—आयुर्वेद विद्याकी समाप्तिमें ज्ञानहोनेके कारण इस प्राणीमें ब्राह्मसत्व अथवा ऋषिसत्व अवश्य प्राप्त होता है अतएव इस वैद्यको शास्त्रमें द्विजकहा है

## वैद्यकेप्रतिरोगीकावर्त्ताव

नाभिध्याये न्नचाक्रोशेदहितैर्न समाचरेत् ।
प्राणाचार्यम्बुधः कश्चिदिच्छन्नायुरनित्वरम् ॥

अर्थ—इस वैद्यका किसी प्रकार दुष्टचितवन न करे, न गालीदे, तथा जिसमें वैद्यका अहितहोवे सो कर्मभी न करे, क्योंकी यह प्राणाचार्य है । अतएव आयुकी इच्छा करने वाला बुद्धिमान् पुरुष वैद्यको सदैव प्रसन्नराखे ॥

## कहकरनदेनेमेंअधर्मित्व

चिकित्सितस्तु संश्रुत्ययोवासंश्रुत्यमानवः ।
नोपाकरोतिवैद्याय नास्ति तस्येह निस्कृति ॥

अर्थ—जोरोगी वैद्यको देनाकरके नही देता अथवा किसीप्राणीको जो वस्तु देनी कहके नहीं देता, अर्थात् देनेसे उऋणनही होता उस अधर्मीके पापकी निष्कृति कहीं नहीं है ॥

## वैद्यकेधर्म

भिषगप्यातुरान्सर्वान् स्वसुतानिव यत्नवान् ।
आवाधेभ्योहिसंरक्षेदिच्छन्धर्ममनुत्तमम् ॥

अर्थ—अबवैद्यके धर्मकहते है कि वैद्यभी उत्तम धर्मकी इच्छा करता, संपूर्ण रोगियोंको अपने पुत्रके समान रोगोंसें रक्षाकरे ॥

अनाथान् रोगिणो वैद्यः पुत्रवत्समुपाचरेत् ।

अर्थ—अनाथ रोगियोंको वैद्य अपने पुत्रके समान चिकित्सा करे । अर्थात् यदि उनके पास भोजनको न होवेतो भोजनको देय, और औषधको द्रव्य न होवे तो आप उस औषधको मगायके देवे ॥

प्राणाचार्यश्च पितृवत्संपूज्यः शक्ति भक्तितः ॥

अर्थ—रोगी-रोगनिमुक्त होनेपर प्राणाचार्य ( वैद्य ) को अपने पिताके समान अपनी यथा शक्तिसें पूजनकरे [कि जिस्सें वैद्य प्रसन्नहोकर और आशीर्वाद देवे जिस्से फिर रोगी नहो ] ॥

धर्मार्थेनार्थकामार्थ मायुर्वेदोमहर्पिभिः ।
प्रकाशितो धर्मपरै रिच्छद्भिः स्थान मुत्तमम् ॥

अर्थ—धर्मपर महर्पियोंनें उत्तमलोककी इच्छा करके यह आयुर्वेदशास्त्र धर्मार्थ प्रकाशकरा है किंतु कामनाके अर्थ नहींकरा, अतएव सब वैद्योंको उचित है कि इस अमूल्य पदार्थको तुच्छ कामना ओंमेंन लगावे ] ॥

नार्थार्थं नापिकामार्थं अथभूतदयांप्रति ।
वर्त्ततेय श्चिकित्सायां ससर्वमतिवर्त्तते ॥

अर्थ—यह आयुर्वेद शास्त्र-धनएकत्र करनेको अथवा इसके द्वाराअनेक काम भोगना-इसके वास्तेनहीं है किंतु जो चिकित्सामें प्राणियोंकीदया विचारके यत्न करता है वह वैद्यसबमें श्रेष्ट है ॥

नैवकुर्वीतलोभेनचिकित्सापण्यविक्रयम् ।
ऐश्वराणांवसुमतां लिप्सेतार्थंतुदत्तये ॥

अर्थ—इस वैद्यको उचितहै कि जोऐश्वर्य संपन्न अर्थात् सेठसाहूकार राजा बाबू है उनसें अपने वृत्तिके लगनेको लोभके वसहो चिकित्साका पण्यविक्रय (दुकानदारी) नकरे अर्थात् इसरोगीसें इतनेही रुपालेकर यत्न (इलाज) करैंगें। क्यो कि वडे आदमी साले क्या देवेंगे. उनसे द्रव्यलेना ऐंसाहै जैसे जवाहिरको कोडियोंमे वेचना ॥

वृत्यर्थंचिकित्साकरनेकानिपेध

कुर्वते येतुवृत्यर्थंचिकित्सापण्यविक्रयम् ।
तेहित्वाकाञ्चनंराशिं पांशुराशि मुपासते ॥

अर्थ—जो प्राणी वृत्ति (जिविका) केअर्थ चिकित्साकी विक्रीकरते है वो सुवर्णकी रासको छोडके धूलमिट्टी कीरासको ग्रहण करते है ॥

अप्येकंनीरुजं कृत्वाजन्तुंयाद्दशताद्दशम् ।
आयुर्वेदप्रसादेन किंनदत्तं भवेद्भुवि ॥

अर्थ—वैद्य आयुर्वेदके प्रतापसें जैसें तैसें एकभी रोगीको नैरोग्यकरता है उसने या पृथ्वीमें क्या वस्तु नहीं दीनी, अर्थात् वो सब वस्तु दे चुका अब कुछ भी देना बाकी नहीं रहा ' आयुर्वेद प्रसादेन ' इस पदके धरनेसें यह प्रयोजन

है। कि आयुर्वेद पढकर रोगोंका निश्चय करके जिसने यत्नकरा उसको सर्वदा नीकी पदवी माप्त होसक्ती है किन्तु मूर्ख वैद्य भलेही सैंकडों रोगियोंका यत्न करके अच्छा करदे परंतु अधर्मकाही भागी होगाक्योंकि विना पढेसें चिकित्सा कराना निषेध लिखाहै ॥ सो आगे कहेंगे " औषधं मूढ वैद्यानामित्यादि "॥

## शस्त्रादिविशोधन

शस्त्रं शास्त्राणि सलिलं गुणदोषप्रवृत्तये ।
मात्रापेक्षीण्यतः प्रज्ञां चिकित्सार्थं विशोधयेत् ॥

अर्थ—शस्त्र, शास्त्र, जल, ये मात्राकी अपेक्षाकरते है अतएव इनको गुणदोषकी प्रवृत्तिके अर्थ और चिकित्साके अर्थ वैद्य शोधनकरे। तहां शस्त्र, शास्त्र और जलको चिकित्साकेवास्ते शुद्ध(उज्वल) करे। एवं गुणदोष प्रवृत्तिके वास्ते प्रज्ञाका शोधन करना चाहिये।

शास्त्रंज्योतिः प्रकाशार्थं दर्शनंबुद्धिरात्मनः ।
ताभ्यांभिषक् सुयुक्ताभ्यांचिकित्सन्नापराध्यति ॥

अर्थ—ज्योति प्रकाशार्थ शास्त्र—और आत्मकीबुद्धि दर्शनकेअर्थ—इन दोनो ( शास्त्र और बुद्धि ) करके युक्त होकरजो वैद्य चिकित्साकरता है वह चिकित्सा कर्ममें कदाचित् नही चूके अर्थात् उसकी चिकित्सा ठीकहोती है ॥

चिकित्सितेत्रयः पादा यस्माद्वैद्यव्यपाश्रयाः ।
तस्मात्प्रयत्नमातिष्ठेद्भिषक्स्वगुण संपदि ॥

अर्थ—चिकित्साके तीनो पैर वैद्यके आश्रित है अतएव वैद्यकोभी उचित है कि वह अपनेगुण संपत्तिमें यत्नपूर्वक स्थित रहै। तात्पर्य यह है कि रोगी दूत और औषधी ये सव वैद्यके आधीन है यदि वैद्यही मूर्ख हुआ तो फिरये कुछ कामके नही है इसी सें वैद्य—विद्या और वैद्यकर्ममें कुशलरहे ॥

## वैद्यकीचतुर्विधवृत्ति

मैत्रीकारुण्यमार्त्तेषु शक्येप्रीतिरुपेक्षणम् ।
प्रकृतिस्थेषु भूतेषुवैद्यवृत्तिश्चतुर्विधा ॥

अर्थ—अव वैद्यकी चतुर्विधवृत्ति कहते है कि रोगियोंमें मैत्रभाव और करुणाकरे, तथा जो प्रकृतिस्थ प्राणी है अर्थात् रोगहीन है उनमें प्रीति और सावधानीसें देखना ॥

अश्विनावग्निरिंद्रश्चवेदेषुसुतरांस्तुताः ।
वैद्यावित्यश्विनौदेवौपूज्येतेविबुधैरपि ॥

अर्थ—वेदमें अश्विनीकुमार–अग्नि–और इन्द्र–निरंतर स्तुति करे गए है। वे अश्विनीकुमार वैद्य हैं सो देवता ओंकरकेभी पूजेजाते है। फिर औरोंको तो अवश्य पूजने चाहिये ॥

अजरैरमरैर्नित्यं सुखितैरेवमादृतैः
व्याधिमृत्युजराग्रस्तैर्दुःखप्रायैः सुखार्थिभिः ।
किंपुनर्भिषजोमर्त्यैः पूज्याःस्युर्नात्मशक्तितः ॥

अर्थ—जब अजर अमर और सदैव सुखित देवता ओंकरके वैद्य पूजे जाते है तो फिर व्याधि, मोत, औरवृद्धावस्था करके ग्रसित दुखिया और सुखकी इच्छा करने वालें अेसैं मनुष्योंको वैद्य अपनी शक्तिके माफिक क्या नही पूजने चाहिये किंतु सर्वथा पूजनेही चाहिये ॥

## चिकित्सासिद्धीयोग्यवैद्य

यस्तुरोगविशेषज्ञः सर्वभैषज्यकोविदः ।
देशकालविभावज्ञस्तस्यसिद्धिर्नसंशयः ॥

अर्थ—जो वैद्य रोग विशेषोंको जानता है अर्थात् संपूर्ण रोगोंको जानता है और संपूर्ण औषधोंके बनानेमें चरतु है तथा देशकालके विभागोंको जानने वाला है उसको चिकित्मा कि सिद्धिमें कुछभी संशय नही अर्थात् ऐसे वैद्यको तो सिद्धिअवश्यहीहोती है ॥

## ( वैद्यशास्त्रपठितको चिकित्साकरनेका अधिकार )

आयुर्वेदं ततोऽधीत्य सकाशात्सद्गुरोर्भिषक् ।
चिकित्सांरोगिणांकुर्यादन्यथा पाप भाग्भवेत् ॥

अर्थ—वैद्य–गुरूसे आयुर्वेद शास्त्रको पढकर रोगियोंकी चिकित्साकरे अन्यथा पापका भागी होता है [ तात्पर्य यह है कि केवल अमृतसागर आदि वांचकरही वैद्य मत वनो भाइयों कुछ गुरुमुखसैभी पढो जिस्सैं ज्ञान और प्रतिष्ठाकी प्राप्ति हो ] ॥

## अन्नजलऔरचिकित्सादानकाफल

अन्नदो जलदश्चैव आतुरस्यचिकित्सकः

**त्रयस्ते स्वर्गमायांति विनायज्ञेनभारत ! ॥**

अर्थ—हेभारत ? अन्नदाता जलदाता और रोगीकी चिकित्सा करने वाला एतीनोंप्राणी विनायज्ञकीये ही स्वर्गकोजाते है । तात्पर्य यह है इन तीनों प्राणियों को विनायज्ञ करने परभी यज्ञ करनेका फलप्राप्तहोता है।यह प्रमाण भारतके शांतिपर्वमें लिखा है, फिर न मालूम वडे२ पंडित, वैद्यवृत्तीकोक्यो दोपारोपण करतेहै।

## राजाकोवैद्यादिचतुष्टयोंकानित्यदर्शन

**वैद्यःपुरोहितो मन्त्रीदैवज्ञश्चचतुर्थकः ।**
**द्रष्टव्याः प्रातरेवैतेनित्यंश्रेयोविवृद्धये ॥**

अर्थ—औरभी लिखा है कि राजा अपने कल्याणकी वृद्धिके लिये नित्यप्रातःकाल उठकर वैद्य-पुरोहित-मंत्री-और चतुर्थदैवज्ञ ( ज्योतिषी ) का दर्शनकरे । येभीप्रमाण धर्मशास्त्रका है-देखोंमित्र ? इसश्लोकमें भीप्रथम वैधका दर्शन करना लिखता है, इसीसें आयुर्वेदमें इस वैद्यका नाम प्राणाचार्य लिखा है जोप्राणोंसेंद्वेपकराचाहे वोवैद्यमें भलेही द्वेपकरे जैसेनीचेके श्लोकमें लिखते है ॥

**गतश्रीर्गणकान् द्वेष्टि गतायुश्चचिकित्सकान् ।**
**गतश्रीश्च गतायुश्च ब्राह्मणान्द्वेष्टिभारत ॥**

अर्थ—गई है श्री ( संपत्य वा शोभा)जिसकी वो ज्योतिषीयोंसें द्वेप (वैर)करता है। गतायु अर्थात् गई है आयु जिसकी ( मरणासन्न ) वोवैद्यों सें द्वेप( वैर) करता है । और हेभारत ! गतश्री और गतायु ऐसाप्राणी ब्राह्मणोंसें द्वेपकरता है ( हमब्राह्मण उसीको कहैगे कि जो ब्राह्मणवंशमें प्रगटहुआ हो और विद्यापढा हो ) केवलविद्याभ्यासी अथवा केवल ब्राह्मण कुलमें जन्म होनेसें ब्राह्मणनही होता तथापि विद्याहीन ब्राह्मण सें पढा हुआ क्षत्री वैश्य उत्तम है तथा शूद्रभी वनिस्वत विना पढेसे पढाहुआ उत्तम है ॥

## ( विनाशास्त्रप्रायश्चित्तादिकथनमेंब्रह्महत्याकेपापकीप्राप्ति )

**प्रायश्चित्तं चिकित्सांच ज्योतिषं धर्मनिर्णयम् ।**
**विनाशास्त्रेणयोब्रूयात्तमाहु र्ब्रह्मघातकम् ॥**

अर्थ—प्रायश्चित्त, चिकित्सा, ज्योतिष, और धर्मकानिर्णय इनको जो विनाशास्त्रप्रमाणके कहता है, उसको वडे २ मुनीश्वर ब्रह्महत्याराकहते है। तहां प्रायश्चित उसको कहते है कि जो पापीके वास्ते दंडकल्पना ( कृच्छ्रचांद्रायणादि ) है

चिकित्सा उसको कहते है जोरोगकि आरोग्यकरनेको निर्णयकरीजावे जैसै औषध और चीरनाफाडनाआदि। ज्योतिषकरके इसजगे ग्रहादिकों का फल तथाप्रष्णादिक जानने। और धर्मनिर्णय ( एकादशी जन्माष्टमीआदि व्रतों कानिर्णयआदि ) जानना। इनके उदाहरण दिखाते है. जैसे किसीपुरुषने चांडालादिकका अन्न भोजनकरा अवशास्त्रसैं तो उसका निश्चयनकरा किंतु जोजातीमें पंचहै उन्होने कह दियाकि१००रुपे हमको देउ हमतुझकोजातमें लेलेवेगे, वस जहां उनको रुपेदिये और उन्होने कही जा मूंड मुडाय जनेऊ पलट अमुक देवके आगे दियाधरआ, और जात जिमायदे, तो यह शास्त्रविरुद्ध प्रायश्चित्तहुआ। एवं विनारोगका और औषधका निर्णय हुए औषधदेना ये शास्त्र विरुद्ध चिकित्साहुई। एवं विनाग्रह गोचर दशांतर्दशाके कहदेना कि तुझको मारकेश है अथवा अटकलपंजे प्रष्णवतानेलगे वा तिथिवार वतानेलगे,तोयह शास्त्रविरुद्ध ज्योतिष हुआ इसीप्रकार विनाशास्त्रके जाने सूतकादिका निर्णयकरना ये शास्त्र विरुद्ध धर्मनिर्णयहुआ॥

## गुणयुक्तपादचतुष्टयोंकीप्रशंसा

गुणवद्भिस्त्रिभिः पादैश्चतुर्थो गुणवान् भिषक्।
व्याधिमल्पेन कालेन महांतमपि साधयेत्॥

अर्थ—गुणवान् तीनपैर ( रोगी, औषधि, और परिचारक ) करके और चौथा गुणवान् वैद्य घोरव्याधिकोभी शीघ्रही साधन करसक्ताहै, अर्थात् वढीहुई भी व्याधिको शीघ्र रोक सके है॥

## शास्त्रऔरबुद्धिद्वाराकर्मकरनेकीआज्ञा

प्रदीपभूतशास्त्रेण दर्शिता विपुलामतिः।
ताभ्यां भिषक्सुयुक्ताभ्यां चिकित्सन्नापराध्यति॥

अर्थ—शास्त्रहै सो दीपक रूपहै उसने विशेप बुद्धि दिखाई है। अर्थात् जैसें दीपक अंधकारकी वस्तुको दिखाता है उसी प्रकार शास्त्रनें अज्ञानांधकारसैं ढकी हुई बुद्धिको वढायके दिखाई, इन दोनो अर्थात् शास्त्र और बुद्धिसैं भलेप्रकार मिलकर जो चिकित्सा करताहै वो कदाचित् नहींचूके॥

## उत्तमवैद्यकेलक्षण

येतु शास्त्रविदोदक्षाः शुचयः कर्मकोविदाः।
जितहस्ता जितात्मानस्तेभ्यो नित्यकृते नमः॥

अर्थ— अब उत्तमवैद्यकी प्रसंसा करते है कि जो शास्त्रज्ञ, चतुर, पवित्र, चिकित्साकर्ममेंनिपुण, जितहस्त, और जिती है आत्माजिन्होने ऐसें उत्तम वैद्यों के अर्थ हमारी नित्य नमस्कारहै ॥

## निदानरहितवैद्यकोकर्मकीअसिद्धि

यस्तु रोगमविज्ञाय कर्माण्यारभते भिषक्।
अप्यौषधविधानज्ञ स्तस्य सिद्धिर्यदृच्छया ॥

अर्थ—जो रोगकी परीक्षाके विना चिकित्सा करताहै यद्यपि वो औषध विधानमें प्रवीणभी है परंतु फिरभी उसको सिद्धीकीयथेच्छाहै अर्थात् चिकित्सा करनेसें रोगी अच्छाहोय चहिये नहोवे ॥

## विनापठित वैद्यकी निंदा

अविज्ञायतुशास्त्राणि भेषजं कुरुते भिषक्।
यमएव सविज्ञेयः मर्त्यानां मर्त्यरूपधृक् ॥

अर्थ—जो विनाशास्त्र पढे औषध करता है वो मनुष्योंमें मनुष्यका रूपधारणकर्त्ता साक्षात् यमराज है ।

## मूर्खवैद्यकाहास्य

पाणिचाराद्यथा चक्षुरज्ञानाद्भीतभीतवत् ।
नौर्मारुतवशे वाज्ञा भिषक्चराति कर्मसु ॥

अर्थ—विनानेत्रके अंधापुरुष हाथपैरोंको जैसै डरता हुआ धीरे धीरे धरता है और जैसे पवनके प्रबल वेगसें नौका ( जिहाज ) जैसें समुद्रमें मारा २ डोलताहै उसीप्रकार मूर्खवैद्य चिकित्साकर्ममे चलता है ॥

## वैद्याभिमानीमूर्खवैद्यकीनिंदा

यदृच्छयासमापन्न मुत्तार्यनियतायुषम् ।
भिषग्मानी निहंत्याशु शतान्यनियतायुषम् ॥
तस्माच्छास्त्रेऽर्थविज्ञाने प्रवृत्तौ कर्मदर्शने ।
भिषक्चतुष्टये युक्तः प्राणाभिसरउच्यते ॥

अर्थ—मूर्खवैद्य यदृच्छा पूर्वक प्राप्तहुए पूर्णआयुवालेको रोगसें वचायके मारे अभिमानके अनेक अनियतायुषी अर्थात् जिनकी आयुका कुछ ठीक नहीं ऐसे

सैंकड़ो प्राणियोंको यह वैद्याभिमानी दुष्टवैद्य मारताहै। इसीकारण इस प्राणीको शास्त्र और शास्त्रके अर्थ ज्ञानमें तथा उस वैद्यकर्मकी प्रवृत्ती एवं उसकर्मोके देख-ने मैं प्रवृत्तहो तथा चतुष्पाद संपत्तियुक्तहो जो चिकित्सा करताहै वो प्राणा-भिसर अर्थात् प्राणरक्षक वैद्य कहलाता है ॥

## ( निदान विनाजाने चिकित्सा करनेमें वैद्यको दंडनीयत्व कथन)

भेषजं केवलं कर्तुं यो जानाति न चामयम् ।
वैद्यकर्म सचेत्कुर्याद्वधमर्हति राजतः ॥

अर्थ—जो वैद्य केवल औषध देना जानताहै किंतु रोगोंकोनहीं जाने कि इ-स रोगीकें क्या विकार है यदि वो वैद्य कर्म ( चिकित्सा ) करे तो वो राजासें वधके योग्य हे । अर्थात् अैसे वैद्यको राजा, फांसी देदेवे. इससे वैद्यको उचित है कि प्रथम निदानका आभ्यास करके फिर चिकित्साकरे ।

## ( केवल शास्त्रज्ञाता और औषधज्ञान रहित वैद्यकी निंदा )

यस्तु केवलशास्त्रज्ञोभेषजेष्वविचक्षणः ।
तं वैद्यं प्राप्य रोगीस्याद्यथा नौर्नाविकं विना ॥

अर्थ—जो वैद्य केवल शास्त्र पढाहै परंतु चिकित्सा करनेमें अकुशल ( मूर्ख) है, उस वैद्यको प्राप्तहो रोगीकी अेसी दशा होती है, जैसे विना केवटिया ( म-लाह ) के वीच धारमें नावकी गति ॥

## ( शास्त्र पठित और क्रियारहित वैद्यको भीरुत्व कथन )

यस्तु केवलशास्त्रज्ञः क्रियास्वकुशलो भिषक् ।
समुह्यत्यातुरं प्राप्य प्राप्यभीरुरिवाहवम् ॥

अर्थ—जो वैद्य केवल शास्त्रको जानता वे किंतु उस शास्त्रकी क्रियाओंमें अ-कुशल ( मूर्ख ) है वह वैद्य रोगीको देखके अेसें घवढाताहै कि जैसे भीरु ( काय-रमनुष्य ) संग्राम ( लडाई ) को प्राप्तहोकर घवढाता है ॥

## ( विनापठित वैद्यको राजसें दंडनीयत्व कथन )

यस्तुकर्मसु निष्णातो धाष्टर्याच्छास्त्रबहिष्कृतः ।
स सत्सु पूजां नाप्नोति वधमर्हति राजतः ॥

अर्थ—जो वैद्यके कर्ममें तो निपुणहै परंतु ढीटतासें शास्त्र बहिष्कृत अर्थात्

शास्त्रको नहीं जाने वो सत्पुरुषोंमें सत्कार नहीं पाता, किंतु राजसें वध (मृत्यु) को प्राप्त होताहै ॥

## ( कर्त्तव्यमें मूर्ख वैद्यका निंदा )

छेद्यादिष्वनभिज्ञो यः स्नेहादिषु च कर्मसु ।
स निहंति जनं लोभात्कुवैद्यो नृपदोषतः ॥

अर्थ—जो वैद्य छेदन भेदनादि कर्ममें मूर्ख है, तथा घृत तैल आदिके बनानेमेभी मूर्ख है वह दुष्टवैद्य राजाके दोषसें प्राणियोंको लोभवश होकर मरता है–[ यदि राजाही एसे दुष्टवैद्योंकी परीक्षा कियाकरे तो ये इतने क्यो बढे, और हजारों अनाथके समान प्राणी यमपुरकी यात्रा क्यो करे ] धन्यरे अंगरेजी राज तू धन्य हैं ! ! !

## मूर्खवैद्यकेदोष

लोभयंत्यातुरं मूर्खा विचित्रैः कर्मकौशलैः ।
तेभ्योरक्षेत्सदात्मानमात्मायस्मात्सुदुर्लभः ॥

अर्थ—मूर्खवैद्य अपनो चित्रविचित्र कर्मकौशल ( अर्थात चालाकी ) सें रोगीको लोभित करते है । उन दुष्ट वैद्योंसें मनुष्यको सदैव सावधानी केसाथ अपनी आत्माकी रक्षा करनी चाहिये क्योकि इस संसारमें आत्मा अत्यंतही दुर्लभ है॥

तेघुणाक्षरवत्किंचिदुत्थाप्यानियतायुषम् ।
घ्नंतिवैद्याभिमानेन शतानानियतायुषान् ॥

अर्थ—वो घुणाक्षरन्यायसें अनितायुषीप्राणीको रोगसें बचायके वैद्याभिमानी हो अनेक अनियतायुषी प्राणीयोंको नाश करते हैं ॥

ये क्रियां विक्रियां कुर्वन्त्युपेक्षंते स्खलंति वा ।
खादंति ते परप्राणान्निजानि सुकृतानि च ॥

अर्थ—जो वैद्य क्रियाको विक्रिया करते है अथवा जिस समय क्रिया करनेका कालहै उसकी उपेक्षाकरदेते अथवा चिकित्सामें चूकजाते है वो दुष्टवैद्य दूसरे के प्राणों कों और अपने सुकृतोको खाते है ॥

## वैद्यकोस्वयंतर्ककरनेकीआज्ञा

नचैकांते न निर्दिष्टे शास्त्रेनिर्विशते बुधः ।
स्वयमप्यत्रभिषजातर्कनीयं चिकित्सता ॥

अर्थ—शास्त्रमें सब कहा है तथापि वैद्य सब जानता है अैसा नहीं होता, इसीसें वैद्यको स्वतः तर्कचलायके चिकित्साकरे। तात्पर्य यह है कि शास्त्रमें भी कुछ हगनी मूंतनी छोटी२ बात नहीं लिखी है। अतएव वैद्यको उचित है कि कुछ अपनी बुद्धिसें विचारकरेकेवलशास्त्रके भरोसें ही न रहे ॥

## निषिद्धवैद्य

कुचैलः कर्कश स्तब्धो ग्रामीणः स्वयमागतः।
पंचवैद्यानपूज्यंते धन्वंतरि समाअपि ॥

अर्थ—मलिन कपडेको धारणकर्त्ता, कर्कश, गर्ववाला ( अभिमानी ) ग्रामीण ( गंमईका रहनेवाला ) और जो विनाबुलाए आयाहो, ये पांच वैद्य धन्वंतरिके भीसमान होवे तथापि पूजे नही जाते। अर्थात् अैसे वैद्योंका कोई सत्कार नही करता ॥

## वैद्यकोपाककारित्वमेंप्रमाण

अन्यजातिकृतः पाकोह्यस्पृश्यः सर्वजातिभिः।
इतिविज्ञाय मतिमान् वैद्यं पाकेनियोजयेत् ॥

अर्थ—अन्य जातिका करापाक सब जातियोंको अस्पृश्य (छूने योग्य नहीं) है, अैसा जानके बुद्धिमान् पुरुष वैद्यको पाक करनेपर नियुक्त करे। तात्पर्य यह है कि अपनी २ जातिका करा पाक सब खातेहै दूसरी जातिका किया कोई नहीं छूता, और वैद्यके हाथका करा सब खाते है अतएव पाककर्त्ता वैद्यही होना चाहिये।

## ( अन्यजातिकेकरेपाकभोजनमें प्रायश्चित )

मोहाद् द्विजातिवर्णाद्यैः पाचितं खादितेसति।
प्रायश्चित्तीभवे च्छूद्रो जातिहीनो भवेद् द्विजः ॥

अर्थ—जो प्राणी मोहवश ब्राह्मण आदिके करे हुए पाकको भक्षण ( भोजन ) करता है। यदि वह शूद्र होवे तो प्रायश्चित्ती होवे, और ब्राह्मण होयतो जातिसें रहित अर्थात् जात बाहर होताहै। यह प्रमाण पूर्व और बंगालदेशमें है परंतु हमारे पश्चिमोत्तर देशमें प्रमाणिक नहींहै। क्योंकि सब पुराणोंमें राजा महाराजा ओंके ब्राह्मण और ब्राह्मणोंके राजा महाराजा भोजनकरते रहे है। फिर हमारे देशमें भी प्राय पकी रसोई भोजनका व्यवहारहै कच्चीका नहीं ॥

## वैद्यशास्त्रऔरज्योतिशास्त्रकोप्राधान्यता

अन्यानिशास्त्राणिविनोद मात्रं न किंचिदेषांतुविशिष्टमस्ति चिकित्सितं ज्योतिषमंत्रवादाः पदे पदे प्रत्यय मावहंति ॥

अर्थ—अन्य ( व्याकरण न्यायआदि ) शास्त्रकेवल विनोदमात्र अर्थात् वालकोंकेसेखेल है उन व्याकरणादि शास्त्रोंमें कुछ विशेषता नहीं है, परंतु चिकित्सित (वैद्यविद्या) ज्योतिष औरमंत्रवाद ये तीनोशास्त्र पैड पैडमें विश्वासदेते है तात्पर्य यह है कि व्याकरण, छंद, काव्य, अलंकार, प्रहसन, आदि, ये सब खेलनेके समान है, जैसें खेलकी वस्तुसें खेले और धरदीनी इसी प्रकार ये अन्य शास्त्र है, परंतु प्रत्यक्षपरचादिखाने वाले ये तीनही शास्त्र है, जैसें वैद्यक, ज्योतिष, और तंत्रशास्त्र, इनमें भी हमको तो वैद्यशास्त्रमें विश्वास है। क्योंकिइसकी जितनी क्रिया है सब प्रत्यक्ष है। और ज्योतिषमें हम गणितभागको प्रत्यक्ष फलदायक मानते है। रहामंत्रशास्त्र उसमें हमसंदेह युक्त है तथापि वाममार्ग तो सर्वथा दुष्ट पामरोंका निर्मित प्रतीत होता है अस्तु ॥ " जिस गामहीन जाना उसके कोश *गिनना व्यर्थ* "

## ( चौरी कपट और बलपूर्वकविद्या ग्रहणमें दोष )

विद्यां गृहीतुमिच्छन्ति चौर्याच्छद्मबलादिना ।
न तेषां सिद्ध्यते किंचिन्मणिमंत्रौषधादिकम् ॥

अर्थ—जो प्राणी विद्याको चौरीसें कपटसें और जबरदस्तीसें गृहण करनेकी इच्छा करता है उनको मणिपरीक्षा, मंत्र और औषधकी सिद्धि येकोईभी फलीभूत नहींहो ॥

## मरणपर्यंतचिकित्साकरनेकीआज्ञा

यावदुच्छ्सितिप्राणी यावद्भेषजमत्तिच ।
तावच्चिकित्साकर्त्तव्यादैवस्यकुटिलागतिः ॥

अर्थ—जबतक यह प्राणी श्वासलेता है और जबतक औषध भक्षण करसके *तावत्कालपर्यंत वैद्यको उस प्राणीकी चिकित्सा करनी ही चाहिये । क्यो कि* दैव ( विधाता ) कीगति कुटिल ( टेढी ) है अर्थात् मालूमनहींपडे नमालूमउस वक्तभी औषध देनेसे रोगी जीउठे ॥

यावत्कंठगताः प्राणायावन्नास्तिनिरिन्द्रियः ।

तावच्चिकित्साकर्त्तव्या दैवस्यकुटिलागतिः ॥

अर्थ-यावत् कंठमें प्राणहो और जबतक यह प्राणी इन्द्रीरहित न होवे तावत् पर्यंत रोगीकी चिकित्साकरनीं चाहिये क्योकि दैवकीगति कुटिल है [ कदाचित् इस अवस्थामेंभी औषध देनेसे रोगी बचजावे ]

---

## रोगीकेलक्षण

रोगीयस्यास्तिरोगःस सचिकित्स्यस्तुयादृशः ।
यादृशश्चाश्चिकित्स्योपिव क्ष्यमाणोनिशम्यताम् ॥

अर्थ—अब चिकित्साके दूसरे पादका अर्थात् रोगीके लक्षण वर्णन करते है जैसे कि जिसके रोग हुआहो वो रोगी कहलाता है, तहां जैसे रोगी की चिकित्सा करनी चाहिये और जैसे की चिकित्सा नहीं करनी उन दोनोके लक्षण में आगे कहताहूं उनको सुन ॥

## चिकित्साकेयोग्यरोगी

निजप्रकृतिवर्णाभ्यांयुक्तः सत्वेन चक्षुषा ।
चिकित्स्योभिषजारोगीवैद्यभक्तोजितेन्द्रियः ॥

अर्थ—जो रोगी अपने प्रकृति, वर्ण, धैर्य, बल, और नेत्र, इनकरके युक्त है, तथा जो वैद्यका भक्त और जितेन्द्री है, वो वैद्यको चिकित्सा करनेके योग्य है॥

आयुष्मान् सत्ववान् साध्यो द्रव्यवान् मित्रवानपि ।
चिकित्स्योभिषजारोगी वैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥

अर्थ—जो रोगीदीर्घायु. धैर्ययुक्त, साध्य, द्रव्यवान्, और वैद्यकी आज्ञापालन करनेवाला एवं अस्तिक असे रोगीकी चिकित्सा वैद्यको करनी चाहिये ॥

आढ्योरोगीभिषग्वश्योज्ञापकः सत्ववानपि ।
वैद्यशास्त्रेचविश्रब्धः कृतज्ञः पथ्यकारकः ॥

अर्थ—जोरोगी धनवानहो, वैद्यके वशीभूत, अपनीप्रकृतिको यथार्थ कहने वाला धैर्यवान्-तथा चिकित्सा और शास्त्रमें विश्वासरखने वाला-उपकारका माननेवाला और पथ्य करनेवाला असा रोगी उत्तम जानना ॥

## रोगीकेगुणचतुष्टय

स्मृतिनिर्देशकारित्वमभीरुत्वमथापिच ।
ज्ञापकत्वं चरोगाणामातुरस्य गुणाः स्मृताः ॥

अर्थ—स्मरणवान्, वैद्यकी आज्ञाका पालन करनेवाला–निर्भय और अपने रोगको वैद्यको बतानेवाला येचारगुण रोगीके हैं ॥

## उत्तमरोगी

प्राज्ञोरोगेसमुत्पन्ने बाह्येनाभ्यंतरेणवा ।
कर्मणालभतेशर्म शास्त्रोपक्रमणेनवा ॥

अर्थ—बुद्धिमान्रोगी रोग उत्पन्न होतेही बाहरके यत्नसैं अथवा भीतरके यत्नसैं कल्याणको प्राप्तहोताहै, अथवा शस्त्रोपक्रम ( चीरना फाडनाआदि ) सैं कल्याणको प्राप्तहोताहै–तात्पर्य यह है कि चतुररोगी रोगको प्रगट होतेही बाहरभीतरकी चिकित्सा अथवा चीरना फाडनेआदिसैं तत्काल उसे नष्टकर सुखीहोता है ॥

## मूर्खरोगी

बालस्तु खलुमोहाद्वा प्रमादाद्वानबुध्यते ।
उत्पद्यमानं प्रथमं रोगंशत्रुमिवाबुधः ॥

अर्थ—बाल ( मूर्खरोगी ) मोहवस अथवा प्रमादसैं उस उत्पन्न हुए रोगको नहींजानता, जैसे मूर्खमनुष्य प्रगटहुए अपने शत्रुको नहींजानता ॥

अग्राहिप्रथमंभूत्वारोगः पश्चाद्विवर्द्धते ।
सजातमूलोमुष्णातिबलमायुश्च दुर्मतेः ॥

अर्थ—प्रथम रोग अग्राह्यहोकर धीरे २ बढता है जब वो जडबद्ध होजाता है तब इस दुर्बुद्धीकी बल और आयुको हरणकरै है ॥

न मर्त्यो लभते श्रद्धां तावद्यावन्नपीड्यते। पीडितस्तु मतिं पश्चात् कुरुते व्याधिनिग्रहे । अथ पुत्रांश्च दारांश्चजर्तीश्चाहूय भापते। सर्वस्वेनापि मे कश्चिद्भिषगानीयतामिति । तथाविधं च कः शक्तो दुर्बलं व्याधिपीडितम् ॥ कृशं क्षीणेन्द्रियं दीनं परित्रातुं

गतायुषम् । सत्रातारमनासाद्य बालस्त्यजति जी-
वितम् । गोधालाङ्गूल बद्धे वा कृष्यमाणा बलीयसा।
तस्मात्प्रागेव रोगेभ्यो रोगेषु तरुणेषु वा । भेषजैः
प्रतिकुर्वीत यइच्छेत्सुखमात्मनः ॥

अर्थ—जवतक यह प्राणीदुखीनही होता तवतक वैद्य और औषधीमें श्रद्धा नहीलाता । और जो रोगोंसें पीडितहुआ कि, फिर रोगनाशकरनेमें बुद्धि करता है । तव अपने पुत्रोंको स्त्रियोंको और अपनेकुटुंवके मनुष्योंको बुलायके उनसें कहता है किमेरा सर्वस्वभीदेकर वैद्यको लाओं [ और जैसैहो तैसे मुझको वचाओं में तुह्मारीशरणहूं अवके वचगयातो आपलोगोंका उपकार जन्म भर नहीं भूलूंगा ] परंतु फिर उस असाध्य- दुर्वल, कृश, क्षीणेन्द्रि, दीन, और मरणासन्न रोगीके वचानेको कौन सामर्थ्य है । वस; इसीप्रकार पुकारता २ अपने वचाने वालेको न प्राप्तहो कर यह मूर्खरोगी अपने प्राणोंका त्यागदेता है। जैसें गोहकी पूछ वंधीहुई हो और वो जव चले उसी वक्तवली मनुष्य उसको खींचलेता है इसप्रकार यमराज इसप्राणीको खींचलेता है। अतएव यदि अपने आत्माको सुखचाहैतो रोगोसें प्रथमही अथवा तरुणरोगोंमेंही औषधद्वारा उस रोगको शांति करना चाहिये ॥

## त्याज्यरोगी

चंडः साहसिकोभीरुः कृतघ्नोव्यग्रएवच । शोकाकुलो-
मुमूर्पुश्चविहीनकरणैश्चयः ॥ वैरीवैद्यविदग्धश्च श्रद्धा-
हीनश्च शंकितः । भिपजामविधेयश्च नोपक्रम्यभिप-
ग्विधः । एतानुपाचरन् वैद्योवहून् दोपानवाप्नुयात् ॥

अर्थ—जो अत्यंतक्रोधी-साहसी ( अर्थात् विनाविचारे करनेवाला ) डरपनेवाला-कृतघ्न ( वैद्यके उपकारको न माननेवाला ) व्यग्र ( व्याकुल ) शोकार्त, मरनेकी इच्छा करनेवाला गतेन्द्री ( जिसकी इन्द्रियोंकी शक्ति नष्टहो गईहो ) वैर करनेवाला वैद्यपनेका अभिमान रखनेवाला, अविश्वासी, और शंका रखनेवाला-स्वतः औषधका जाननेवाला और वैद्यके स्वाधीन न रहनेवाला इत्यादि गुणवाले रोगीकी चिकित्सा करेतो वैद्यको अनेक दोप लगते हैं ॥

जारं चौरं तथाम्लेच्छंब्रह्मघ्नं मत्स्यघातिनं द्वेष्टारंग्रा-

मकूटंचवद्धकंमांसविक्रिणम् । एतेसुव्याधिनाग्रस्ता-
नकुर्याच्छमनक्रियाम् । तेषां जीवातिसंजाताद्वैद्यो-
भवतिपापभाक् ॥

अर्थ—जार ( परस्त्रीगामी-वा-रंडीवाज ) चौर-म्लेच्छ-ब्रह्महत्यारा-मछलीकोमारनेवाला ( धीवर ) ग्रामकूट ( गामकोदुखदाई ) वद्धक ( जिवोंको बांधनेवाला ) और मांसका वेचने वाला असै प्राणी यदि रोगीहोवेतो उनको वैद्य औषध न देवे, क्योंकियदि इन प्राणियोंको औषध देनेसें प्राणवचने परये जो हत्या आदि पातककरेंगे वो पापवैद्यकोलगेगा ॥

---

## भैषज्यलक्षण

वैद्योव्याधिंहरेद्येनतद्रव्यंप्रोक्तमौषधम् ।
तद्यादृशमवश्यंस्याद्रोगघ्नंतादृशंब्रुवे ॥

अर्थ—अव चिकित्साके तीसरे पादका अर्थात् औषधके लक्षण कहते है । जिससें वैद्य रोगहरणकरे उस द्रव्यको औषध कहते है वो रोगनाशक औषध वैद्यको जैसी लेनी चाहिये उसके लक्षण कहते है ॥

## उत्तम औषध

प्रशस्तदेशसंजातंप्रशस्तेऽहनिचोद्धृतम्॥अल्पमात्रं-
बहुगुणंगन्धवर्णरसान्वितम्॥दोषघ्नमग्लानिकरमधि-
कंनविकारियत्॥समीक्ष्यकालेदत्तंचभेषजंस्याद्गुणावहम् ॥

अर्थ—उत्तम स्थानमें प्रगट और शुभदिनघडी मुहूर्त्तमें उखाडीगई-अल्पमात्र ( थोडी दीजावे ) और बहुतगुण दिखावे, तथा यथायोग्य गंध वर्ण और रसकरके युक्त वातादि दोषोंके नाशकरनेवाली, तथा जोग्लानि और अधिक अवगुणकारी नहोवे, तथा रोगोंको विचारके तथा समयपरदीनी एसी औषध परमगुणदायक होती है ॥

## औषधकेचारगुण

बहुतातत्र योग्यत्व मनेकविधकल्पना ।
सम्पच्चेति चतुष्कोऽयं द्रव्याणांगुणउच्यते ।

अर्थ—बहुता तत्रयोग्यत्व ( रोगानुसारी ) अनेक विधि कल्पना अर्थात् जिसकी कल्पना अनेक प्रकारसैं होवे और संपत्ती ( रसादि संपत्ति ) एचारगुण द्रव्यों के कहे है ॥

## प्रसंगवश औषधोंके भेद चरकसैं लिखते है

### त्रिविधऔषध

त्रिविधमौषधमिति । दैवव्यपाश्रयं-युक्तिव्यपाश्रयं-सत्वावजयश्च॥

अर्थ—औषध तीनप्रकारकी है जैसे कि–१ दैवव्यपाश्रय–२ युक्तिव्यपाश्रय ३ सत्वावजय अब इनके पृथक् २ लक्षण कहते है ॥

### दैवव्यपाश्रय

तत्रदैवव्यपाश्रयं मन्त्रौषधिमणिमङ्गलनियमप्रायश्चित्तोपवास स्वस्त्ययनप्रणिपातगमनादि ॥

अर्थ—तहां–मंत्रजाप–औषधी धारण–मणियोंका धारण–मंगल कर्म (पुण्याहवाचन आदि )नियमधारण–प्रायश्चित्तकरण–उपवासादि व्रतधारण–स्वस्तिवाचन–देव गुरुवृद्धोंको प्रणाम करना और तीर्थोंमें गमन ये सब दैवव्यपाश्रय औषधकहलाती है ॥

### युक्तिव्यपाश्रय

युक्तिव्यपाश्रयंपुनराहारौषधद्रव्याणांयोजना ॥

अर्थ—युक्तिव्यपाश्रय औषध वो है जो युक्ति पूर्वक भोजनादिक और औषध आदि द्रव्योंकी योजना करना ॥

### सत्वावजयः

सत्वावजयः पुनरहितेभ्योऽर्थेभ्यो मनोनिग्रहः ॥

अर्थ—सत्वावजय औषधी वो है जैसे दुष्टकर्मसैं अपने मनको रोककैं उत्तम शुभकर्ममें लगाना अब औरभी औषधोंके भेद कहते है ॥

### शरीराश्रितत्रिविधऔषधी

शरीरदोषप्रकोपेखलुशरीरमेवाश्रित्यप्रायशस्त्रिविधमौषधमिच्छन्ति अन्तःपरीमार्जनं-बहिःपरिमार्जनंशस्त्रप्रणिधानंचेति

अर्थ देहमें दोषोंके कोप होनेसें वो दोष शरीरके आश्रित होकर वैद्यप्राय त्रिविधऔषधकी इच्छा करते है-जैसै- १ अंतःपरिमार्जन-बहिः परिमार्जन३ शस्त्रप्रणिधान, अब इन प्रत्येकके लक्षण आगे पृथक् २ कहते है ॥

## अंतःपरिमार्जन

तत्रान्तः परिमार्जनं-यदंतःशरीरमनुप्रविश्यौषधमाहारजातव्याधिन् प्रतिमार्ष्टि ।

अर्थ—तहां जो औषध शरीरके भीतर प्रवेशकर भोजनजनित व्याधियोंको दूर करे उसको अंत परिमार्जन औषध कहते है उदाहरण जैसें क्वाथ, चूर्ण गुटिका, रस, पाक आदि जानने ॥

## बहिःपरिमार्जन

यत्पुनर्बहिः स्पर्शमाश्रित्याभ्यङ्ग स्वेदप्रदेह परिषेको-न्मर्दनाद्यै रामयान्प्रमार्ष्टि तद्बहिः परिमार्जनम् ।

अर्थ—जो औषध बाहर त्वचाके स्पर्शके आश्रित हो उबटना, पसीने निकालना, तरडा देना, मालिश करना, इत्यादि कर्मद्वारा जो रोगोंको नष्ट करे उसे बहिःपरिमार्जन औषध कहते है,उदाहरण जैसै-तैलका लगना-लेपकरना-अंजन, मंजन, आदिजानना ॥

## शस्त्रप्रणिधानं

शस्त्रप्रणिधानंपुनच्छेदनभेदनव्यधनदारणलेखनो-त्पाटनप्रच्छन्नसीवनैपणक्षारजलौकाश्चेति

अर्थ-शस्त्रप्रणिधान चिकित्सा जैसै छेदन, भेदन, व्यधन, दारण, लेखन, पाटन, प्रच्छन्न-शीवन-एषण-क्षार और जलौका आदिकर्म जो अष्टविधशस्त्रकर्माध्याय और क्षारकर्म तथा जलौका वचारणअध्यायमें लिखआए है वो जानने

## त्रिविधऔषधी

किंचिद्दोषप्रशमनं किंचिधातुप्रदूषणम् ।
स्वस्थवृत्तौ हितंकिञ्चिद्द्रव्यंत्रिविधमुच्यते ॥

अर्थ—द्रव्य तीनप्रकारकी है कोई दोषनाशक,कोई धातुको दूषणकर्ता, और कोई स्वस्थ वृत्ति अर्थात् आरोग्य प्राणीको हितकारी ॥

## जंगमादि भेदसें त्रिविध औषध

**तत्पुनस्त्रिविधंज्ञेयंजाङ्गमौद्भिदपार्थिवम् ।**

अर्थ—फिर वो पूर्वोक्त द्रव्य तीनप्रकारकी है जैसै जंगम, औद्भिद (स्थावर) और पार्थिव ॥

## जंगमद्रव्य

**मधूनिगोरसाः पित्तंवसामज्जासृगामिषम् ।**
**विण्मूत्रंचर्मरेतोऽस्थिस्नायुरङ्गं खुरानखाः ।**
**जंगमेभ्यः प्रयुज्यन्ते केशालोमानिरोचना ॥**

अर्थ—सहत, गोरस (दूध—घी) पित्ता (मोर—मछली—आदिका पित्ता) वसा (चर्वी) मज्जा—रुधिर—मांस—विष्टा—(गोवर—लीद) मूत्र—चाम—वीर्य (मगर आदिका) हड्डी—स्नायु—अंग—खुर और नख (नाखून) तथा केश (वाल) लोम (रुआँ) और गोलोचन ए जंगम (पशु—पक्षी—मनुष्यादि) के लियेजाते है, ये जंगम द्रव्य जानना ॥

## भौमद्रव्य

**सुवर्णसमलाः पंचलोहाःससिकतासुधा ।**
**मनः शिलाले मणयोलवणं गैरिका ञ्जने ।**
**भौममौषधमुद्दिष्टं ॥**

अर्थ—सुवर्ण और अपनेरमल अर्थात् कीटीसहित पांचो लोह, धूल—चूना—मनशिल, हरताल—मणी—निमक—गेरू—और सुरमा इत्यादि भौम औषध अर्थात् पृथ्वी संबंधी औषध जाननी ॥

## औद्भिदंतुचतुर्विधम्

**वनस्पतिर्वीरुधश्च वानस्पत्यस्तथौषधिः ॥**

अर्थ—औद्भिद अर्थात् स्थावर संबंधी औषध चारप्रकारकी हैं जैसे—वनस्पति, वीरुध, वानस्पत्य, और औषधी, इनप्रत्येकके लक्षण आगे कहते है ॥

**फलैर्वनस्पतिःपुष्पैर्वानस्पत्यफलैरपि ।**
**औषध्यः फलपाकान्ताः प्रतानैर्वीरुधः स्मृताः ॥**

अर्थ—जिनमें केवल फलही लगते है फूल नहीं लगते उनको वनस्पति कहते है, जैसै गूलर—पीपर—वडआदि । और जिनमें फल फूल दोनों लगे उनको वान-

स्पत्य कहते है, जैसे आम-जामुन-आदिके वृक्ष। और जो फलके आनेसें पककर नष्ट हो उनको औषधी कहते है, जैसें जो-गेंहु-चना आदि । और जो वेलके माफिक प्रतान वाली है उनको वीरुध कहते है, जेसै गिलोय, पान, आकाशवेल आदि। कोई औषधके पांचभेद कहता है वो हम इसके निघंट भागमें लिखेगे ॥

## औद्भिदगण

मूलत्वक्सारनिर्यासनाड्यस्वरसपल्लवाः।क्षाराक्षीरंफ-
लंपुष्पंभस्मतैलानिकंटकाः। पत्राणिशुङ्गाकन्दाश्चप्र-
रोहाश्चौद्भिदोगणः ॥

अर्थ—तहां जड, त्वचा, सार, गोंद, नाडी, स्वरस, नवीन पत्ते, क्षार-दूध-फलफूल, भस्म, तेल, कांटे, पत्ते शुङ्ग (कली) कंद और प्ररोह (अंकुर) ये औद्भिद गण है अर्थात् वृक्षादिकोंसें इतनी वस्तु ग्रहण करी जाती है ॥

## उद्भिदजऔषधोंकीगणना

मूलिन्यः षोडशैकोनाः फलिन्योविपरीतकाः। महा-
स्नेहाश्चचत्वारः पञ्चैवलवणानिच । अष्टौमूत्राणिसं-
ख्यातान्यष्टावेवपयांसिच। शोधनार्थाश्चपड्वृक्षाः पु-
नर्वसुनिदर्शिताः।यएतान्वेत्तिसंयोक्तुंविकारेपुसवेदवित् ॥

अर्थ—जडवाली रूखडी मुख्य १६ है, फलवाली १९ है, महास्नेह ४ है, पांच प्रकारके निमक है। आठप्रकारके मूत्र, आठप्रकारके दूध, और शोधनकरनेके अर्थ छः वृक्ष है, येपुनर्वसु आत्रेयने कहे है। जो इनको विकरोंमें देना जानता है वो आयुर्वेदका ज्ञाता है ऐसा जानना। इन सबका खुलासा चरककी प्रथमाध्यायमें लिखाहै सो देख लेना ॥

## औषधज्ञानकोदुर्ज्ञेयत्व

ननामज्ञानमात्रेणरूपज्ञानेनवापुनः ।
औषधीनांपरांप्राप्तिंकश्चिद्वेदितुमर्हति ॥

अर्थ—औषधोंका यथार्थज्ञान केवल नामज्ञान मात्रसें, अथवा रूपज्ञान करके ही नहीं होताकिंतु रूप और नाम दोनेजाननेसें होता है ॥

## ( औषधोंकेरूपऔरयोगज्ञातावैद्यकीप्रसंशा )

योगज्ञः स्तस्यरूपज्ञस्तासांतत्वविदुच्यते ।

किंपुनर्योविजानीयादौषधीः सर्वदाभिषक् ॥

अर्थ—जो वैद्य औषधोंके योगको और उनके रूपको जानता है उसको तत्ववेत्ताकहते है और जो सदैव औषधों जानता रहता है उस वैद्यका तो क्या कहना है ॥

## तथावैद्यकोउत्तमत्वकथन

रूपंतासांतुयोविद्यादेशकालोपपादितम्

पुरुषंपुरुषंवीक्ष्यसविज्ञेयोभिषक्तमः ॥

अर्थ—देशकालोपपादित औषधोंके रूपको प्रत्येक पुरुषोंके प्रति जो देना जानता है वह संपूर्ण वैद्योंमे श्रेष्ठ है ॥

## ज्ञाताज्ञातऔषधोंकेगुणागुण

यथाविषं यथाशस्त्रं यथाग्निरशनिर्यथा ।
तथौषधमविज्ञातं विज्ञातममृतंयथा ॥

अर्थ—जैसैविष, जैसैंशस्त्र, जैसे अग्नि, जैसैंवज्रपात, प्राणीके प्राणहारकहोते है। उसीप्रकार विनाजानी औषध प्राणोंको हरण करती हे, और जो जानीहुई औषध है वो अमृतके तुल्य प्राणदायक जाननी ॥

## अज्ञातऔरदुःप्रयोजितऔषधकीनिंदा

औषधं ह्यनविज्ञातं नामरूपगुणैस्त्रिभिः ।
विज्ञातं वापि दुर्युक्तं युक्तिबाह्येन भेषजम् ॥

अर्थ—जो औषध नाम–रूप–और गुण इन तीनोकरके विना जानीहुई है अथवा जो इनतीनो प्रकार करके जानीभी है परंतु अविधिसै उसका प्रयोग करा है, वो युक्तिरहित औषध अपना गुण नही करे॥

## युक्तऔरअयुक्तऔषधकेगुणागुण

योगादपिविषं तीक्ष्णमुत्तमं भेषजं भवेत् ।
भेषजं वापि दुर्युक्तं तीक्ष्णं संपद्यते विषम् ॥

अर्थ—तीक्ष्ण विषभी, योगके साथ उत्तम औषधी रूप होजाता है, और उत्तम औषधीभी दुष्टयुक्तीके साथ देनेसैं घोर विषके समान प्राणहरण कर्ती होती है ॥

## युक्तिपूर्वकऔषधकोमुख्यत्व

तस्मान्नभिषजायुक्तं युक्तिबाह्येन भेषजम् ।
धीमता किंचिदादेयं जीवितारोग्यकांक्षिणा ॥

अर्थ—इसीसे जीवन और आरोग्यकी इच्छा करने वाले बुद्धिमान रोगीको युक्तिबाह्य औषधका प्रयोग कदाचित् नहीं करना चाहिये । अर्थात् मूर्खवैद्यकी औषधका ग्रहण न करे ॥

## मूर्खवैद्यकेहातकीऔषधनलेना

कुर्यान्निपतितं मूर्ध्नि सशेषं वासवाशनिः ।
सशेषमातुर कुर्यान्नत्वज्ञमतमौषधम् ॥

अर्थ—रोगी—अपनेमस्तकपर वज्रपात गिरना अंगीकारले, रोगयुक्त रहना अंगीकार करलेवे, परतु मूर्खवैद्यकी अनुमती से दीहुई औषधको कदाचित् अंगीकार न करे ॥

## अज्ञानीवैद्यसेंभाषणकरनेमेंपापकथन

दुःखिताय शयानाय श्रद्दधानाय रोगिणे । यो भेषजमविज्ञाय प्राज्ञमानी प्रयच्छति ॥ तस्य च मृत्युदूतस्य दुर्मतेस्त्यक्तधर्मणः । नरो नरकपातीस्यात्तस्य संभाषणादपि ॥

अर्थ—दुखिया, पडेहुए, श्रद्धावाले रोगीको जो पंडिताभिमानी वैद्य विना जानी औषधको देता है, उस मृत्युके दूत दुष्टमतिवाले अधर्मीके संभापण ( वोल्ने ) से यह प्राणी नरक गामी होता है । अर्थात् ऐसे दुष्टवैद्यसे भापणभी न करे, परतु इसवातको कौन देखता है । भला निनावलाये और थोडेसेमें खुशी होने वालेभी तो येही वैद्य हैं, भलेही प्राणचलेजावे परतु धनतो वचजायगा-धन्यरे दुष्ट समय तू धन्य है ॥

## शरणागतरोगीसेंद्रव्यादिलेनेकानिषेध

वरमाशीविषविषं क्वथितं ताम्रमेव वा । पीतमत्यग्निसन्तप्ता भक्षिताप्ययोगुडाः । नतु श्रुतवतावेशंवि-

भता शरणागतात् ॥ ग्रहीतमन्नपानं वा वित्तं वा रोगपीडितात् ॥

अर्थ—सर्पका हलाहल विष पीलेना, औंटाहुआ ताम्र पीलेना, तथा अग्निसें दहकते हुए लोहेके गोलेको खायलेना उत्तम है, परंतु पंडित वेषधारी होकर शरणागत रोगीसें अन्नजल अथवा द्रव्य ग्रहण करना कदाचित उचितनही है ॥

## मूर्खवैद्यसैंयत्नकरानानिषेध

वरं दस्यौ वरंव्याले वरं यादोविभीषणे। सागरे जीवनोत्सर्गः सुघोरेवापि धन्वनि ॥ नाधीतशास्त्रे नाभ्यस्ते कर्मण्यखिलवैरिणि। न कार्यं दुर्मतौ पापे भिषजात्मसमर्पणम् ॥

अर्थ—चौरके हाथसें, हिंसकजीव ( सिंह व्याघ्रादि ) सें, मगरआदि जलके जीवोंसें समाकुल घोर समुद्रमें अथवा घोर मारवाडकी भूमिमें, अपने प्राणोंको त्यागदेना परमोत्तम है, परंतु विना शास्त्रपढेहुए और विना अभ्यस्त कर्मवाले, सबकेवैरी, दुर्बुद्धी, पापात्मा वैद्यके, हस्तगत अपना आत्म सर्पण करना कदापि उचित नहीं है ॥

## वैद्यकोवैद्यकेगुणसीखनेकीआवश्यकता

भिषक्बुभूर्षुर्मतिमानतः स्याद्गुणसम्पदि।
परं प्रयत्नमातिष्ठेत्प्राणदः स्याद्यथा नृणाम् ॥

अर्थ—अतएव इत्यादि उक्त करणोंसें बुद्धिमान् प्राणी वैद्यहोनेकी इच्छा रखनेवाला वैद्य गुणसंपत्तिमें परम यत्नपूर्वक स्थितहोवे, क्योकि यह वैद्य प्राणियोंको प्राणका देनेवाला है ॥

## उत्तमऔषधऔरवैद्य

तदेवयुक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते।
सचैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत् ॥

अर्थ—वही औषधी उत्तम है जो रोगियोंको आरोग्यकरे। औरवही वैद्योंमे श्रेष्ट है जो रोगियोंको रोगोंसें छुडावे ॥

## उत्तमप्रयोगऔरउत्तमवैद्यकीप्रसंशा

सम्यक्प्रयोगं सर्वेषां सिद्धिराख्यातिकर्मणाम् ।
सिद्धिराख्याति सर्वैश्च गुणै र्युक्तं भिषक्तमम् ॥

अर्थ—उत्तम प्रयोग संपूर्ण कर्मोंकी सिद्धिको प्रगटकरे है, और सर्वगुणयुक्त वैद्यको कर्मसिद्धी विख्यात करती है ॥

---

## परिचारककेगुण

उपचारज्ञतादाक्ष्यमनुरागंचभर्त्तरि ।
शौचंचेतिचतुष्कोऽयंगुणः परिचरेजने ॥

अर्थ—अब चिकित्साके चतुर्थपाद अर्थात् परिचारक (सेवक) के गुण लिखते हैं-जैसे कि उपचारज्ञता (अर्थात् रोगीकी सेवाके नियमोंका जानने वाला,) चतुर, और अपने स्वामी (मालिक) में अनुराग, तथा पवित्रता ए चारगुण सेवकके है। तहाँ चारगुण वैद्यके, चारगुण रोगीके, चारगुण औषधके, और चारगुण सेवकके ये संपूर्ण सोलह गुण चिकित्साकी षोडश कला कहलाती है। अर्थात् चिकित्साके वैद्य आदि चार पादहै, और एक एक के चारगुण ऐसैं सोलहगुण सोलह कला कहलाती है।

## परिचारककेलक्षण

स्निग्धोऽजुगुप्सुर्बलवान्युक्तोव्याधितरक्षणे। वैद्यवाक्यकृदश्रांतोयुज्यतेपरिचारकः। अनुरक्तः शुचिर्दक्षो बुद्धिमान्परिचारकः ॥

अर्थ—स्नेह रखनेवाला, अनिंदित, बलवान्, रोगीके संरक्षण करनेमें चतुर-वैद्यकी आज्ञापालन करनेवाला, निरंतर परिश्रम करते २ न थके, कृपालु, शुद्ध, कुशल, और बुद्धिमान् ऐसा सेवक रोगीके समीप रहना चाहिये।

अब चिकित्साके चार्यों पैर और शोडष कलाओंको कहकर चिकित्साके अंग कहते है। तहाँ रोगी, दूत, वैद्य, सेवक, और उत्तम औषधोंके लक्षणक अब शेषोंको कहते है।

---

## आयुविचार

भिषगादौपरीक्षेतरुग्णस्यायुः प्रयत्नतः ।
ततः आयुषिविस्तीर्णेचिकित्सासफलाभवेत् ॥

अर्थ—वैद्य प्रथम रोगीके आयुकी परीक्षा करे कारण यहहैकि यदि आयु वडी होयगी तो चिकित्साभी सफल होताहै, अन्यथा निष्फल होताहै परंतु दीर्घायुके लक्षण इस बृहन्निघंटुरत्नाकरकी प्रथम जिल्दमें अर्थात शारीर भागमें लि, ख आएहै, इस वास्ते यहांपर नहीं लिखे है ।

---

## आयुकाप्रमाण

जलजानवलक्षास्तु दशलक्षास्तुपक्षिणः । रुद्रलक्षा-
स्तुकृम्याद्यास्थावराणांचविंशतिः ॥ त्रिंशल्लक्षंगवा-
दीनां चतुर्लक्षास्तुमानवाः ।

अर्थ—जलज ( जलमें होने वाले ) ९००००० नौलाख है, पक्षी १०००००० दशलाख है कृमि ( कीडे ) ११००००० ग्यारहलाख यो, स्थावर (वृक्षादिक) है नि २०००००० वीस लाख है, गवादि ( अर्थात् गौ भैसबकरी आदि ) योनि ३०००००० तीसलाख है, और मनुष्य योनि ४००००० चार लाख है ॥

शतायुपुरुषश्चैववृक्षाणांतुसहस्रकम् । द्वात्रिंशश्चतुरं-
गाणां शतंकुंजरसिंहयोः ॥ व्याघ्राणांचचतुःषष्ठिः स-
हस्रंफणिकाकयोः । जम्बुकानांषोडशाब्दं शुनांद्वाद-
शवत्सरं ॥ चतुर्विंशतिरुक्तंगोमहिष्योः सूकरस्यच ।
अजानांद्वादश प्रोक्तंमत्स्यानामयुतंतथा॥कुक्कुटानव-
वर्षाणि मृगाणांविंशतिर्भवेत् । पक्षिणांदशवर्षाणिख-
राणांद्वादशद्वयम् ॥ चतुर्विंशतिरुष्ट्राणां रासभानांतथैवच ।

अर्थ—पुरुष ( मनुष्य) की १०० सौवर्षकी आयु है, वृक्षोंकी १००० हजार वर्षकी, घोडेकी३२ वत्तीस वर्षकी है। सिंह और हाथीकी उमर १००वर्षकी है वघेरे की आयु ६४ वर्षकी है । सर्प ( सांप ) और कौआ इनकी१००० वर्षकी आयु है । स्यार ( गीदड ) की आयु १६ वर्षकी है । कुत्तेकी उमर १२ वर्षकी

है। गौ-भैंस-और सूअरकी उमर २४ वर्ष की है * बकरी की उमर १२ वर्ष की * मछली की उमर १०००० दशहजार वर्षकी है * मुरगेकी ९ वर्ष की मृग ( हिरण ) की उमर २० वर्ष की है * पक्षि ( तोता मैना चिड़िया आदि ) की उमर दशवर्ष की है। गद्धेकी उमर २४ वर्ष की है * ऊंटकी उमर २४ वर्ष की और खिचरकी आयु २४ वर्ष की जाननी, ये इनकी परमायु है परंतु कोई २ इस्सै अधिकभी जीते है॥

## अथद्रव्यम्

सर्वेद्रव्यमपेक्ष्यंतेरोगीप्रभृतयोयतः।
विनावित्तंनभैषज्यंचिकित्सांगंततोधनम्॥

अर्थ—रोगीसैं आदिले संपूर्ण द्रव्यकी इच्छा करते है, विना धनके औषधी नहीहो सकती, इसीसैं चिकित्साका मुख्य अंग धनहै।

शिष्य—रोग और आरोग्य किसको कहते है॥

गुरु—दोषोंकी विषमावस्थाको रोग और समानावस्थाको आरोग्य कहते है जैसै वाग्भटमें लिखा है॥

## व्याधेर्लक्षणंवाग्भटे

रोगस्तुदोषवैषम्यंदोषसाम्यमरोगता।
रोगादुःखस्यदातारोज्वरप्रभृतयस्तुते॥

अर्थ—दोषोंकी विषमता (समान न रहनेको) रोग कहते है—और समानावस्थाको आरोग्य कहते है तहां दुखदाई रोग वे ज्वर प्रभृति अर्थात् ज्वरादिक जानने॥

---

अथातो व्याधिसमुद्देशीयमध्यायं व्याख्यास्यामः।

अर्थ—अब हम व्याधिसमुद्देशीयाध्यायकी व्याख्या करैंगे॥

द्विविधा व्याधयः शस्त्रसाध्याः स्नेहादिक्रियासाध्याश्च। तत्र शस्त्रसाध्येषु स्नेहादिक्रिया न प्रतिषिध्यते। स्नेहादिक्रियासाध्येषु शस्त्रकर्म न क्रियते॥

अर्थ—इस संसारमें दोप्रकारकी व्याधि है एक शस्त्रसाध्य ( शस्त्रकर्मसैं अ-

च्छी होनेवाली है ) दूसरी स्नेहादि क्रियासाध्य, अर्थात् घृत-तैल-क्वाथ—चूर्णादि सैं अच्छी होनेवाली तहां अष्टविध शस्त्रसाध्यव्याधियोंमें स्नेहादिकक्रिया करना सिद्धि कारक नहींहोती, जैसे भगंदरादि रोग चीरनेफाडनेयोग्य है उनपर तैलादि लगानेसैं कुछ फायदा नहीहोता । और जो स्नेहसाध्य व्याधि है उनपर शस्त्रकर्म न करे, क्योंकि तैलक्वाथादिसैं अच्छे होसके जैसे वातव्याधि और ज्वरादिरोगमें चीरना फाडना केवल दुःखदायक है ॥

अस्मिन् पुनः शास्त्रे सर्वतन्त्रसामान्यात्सर्वेषां व्याधीनां यथा स्थूलमवरोधः क्रियते ॥

अर्थ—तहांशल्यतंत्रमें शस्त्रक्रियाकोही मुख्यत्व है, स्नेहादि क्रियाको नही है इसशंकासैं दोनों क्रियाओंका अधिकार दिखाते है । इस सौश्रुत शल्यतंत्रमें शालाक्यादि तंत्रोको समान होनेसैं संपूर्ण व्याधियोंका स्थूलदृष्टीकरके ग्रहण किया है

प्रागभिहितं तद्दुःखसंयोगो व्याधिरिति—तच्च दुःखं त्रिविधमाध्यात्मिकमाधिभौतिकमाधिदैविकमिति तत्तु सप्तविधे व्याधावुपनिपतति ॥

अर्थ—इस सुश्रुतकी प्रथमाध्यायमें लिखआए है कि शरीरी और शरीरका अथवा शरीर और मनके दुःख संयोगको व्याधि अर्थात् रोग कहते है । तहां वो दुःखतीनप्रकारका है १ अध्यात्मिक २ आधिभौतिक, ३ औरआधिदैविक-यही त्रिविधदुःख सात प्रकारकी व्याधियोंमें विभाजित किया है अर्थात् सातप्रकारसैं वांटा है ॥

ते पुनः सप्तविधा व्याधयः । तद्यथा-आदिबलप्रवृत्ता-जन्मबलप्रवृत्ता-दोषबलप्रवृत्ताः-संघातबलप्रवृत्ताः-कालबलप्रवृत्ताः-दैवबलप्रवृत्ताः-स्वभावबलप्रवृत्ता-इति ॥

अर्थ—वो सातप्रकारकी व्याधि इसप्रकारसे हैं जैसें—१आदिबलप्रवृत्त,२जन्म

---

१ आदिशब्दसैं स्वेदन, वमन, विरेचनादि जानने । २ आत्मशब्दसैं मनकरके सहित शरीरका ग्रहणहै । वातपित्त और कफसैं उत्पन्न शरीरमें होनेवाली तथा रजोगुण तमोगुणसैं होनेवाली व्याधियोंको आध्यात्मिक कहते है । ३ भूतप्राणियोंको भूतोंमें अधिकारकरके जो वर्त्ते उसको अधिदैव कहते है । ४ देव, असुर, भूत, प्रेत, इत्यादिसैं होनेवाले रोगोंको अधिदैव कहते है

बलप्रवृत्त, ३ दोषबलप्रवृत्त, ४ संघातबलप्रवृत्त,५ कालबलप्रवृत्त, ६ दैवबलप्रवृत्त, और ७ स्वभावबलप्रवृत्त, अब इन प्रत्येकका वर्णन नीचे करते है ॥

## तहांआदिबलप्रवृत्तव्याधि

तत्रादिबलप्रवृत्ता ये शुक्रशोणितदोषान्वयाः कुष्ठार्शः प्रभृतयः । तेऽपि द्विविधा मातृजाः पितृजाश्च ॥

अर्थ—तहां पूर्वोक्त सप्तविधव्याधियोंमें जो आदिबल प्रवृत्त व्याधिहैं वह येहै जैसे जो दुष्टशुक्र और दुष्टरुधिरसैं उत्पन्न होते है-जैसे कोढ, ववासीर, प्रभृति। वोभी दोप्रकारके है-एक माताके रुधिरसैं और दूसरे पिताके वीर्य दोषसैं जो होते है ॥

## जन्मबलप्रवृत्तव्याधि

जन्मबलप्रवृत्ता ये मातुरपचारात्पङ्गुजात्यन्धबधिरमूकमिण्मिणवामनप्रभृतयो जायन्ते । तेऽपि द्विविधा रसकृता-दौहृदापचारकृताश्च ।

अर्थ—जन्मबल प्रवृत्त वह रोगहैं जो मातापित्ताके शुक्रशोणितकी दुष्टीके विनाभी गर्भावस्थामें माताके दुष्टआहार और आचार करनेसैं पांगुरा, जन्मांध, बहरा, गूंगा, गिनगिनाके बोलने वाला, वोना, आदि रोगहोते है । वोभी जन्मबलप्रवृत्तरोग दोप्रकारके है, एक रसकृत, दूसरे दौहृदके अपचार करनेसैं होतेहै॥

## दोषबलप्रवृत्तव्याधि

दोषबलप्रवृत्ता य आतङ्कसमुत्पन्ना मिथ्याहाराचारभवाश्च तेऽपि द्विविधा आमाशयसमुत्थाः पक्वाशयसमुत्थाश्च पुनश्च द्विविधाः शरीरा मानसाश्च त एत आध्यात्मिकाः ॥

अर्थ—दोषबल प्रवृत्त जो व्याधि होती है वो मिथ्या आहार विहारसैं होती है, अर्थात् जो वातपित्त कफ–और रज तमकी शक्तिकरके रोग प्रवृत्त (उत्पन्न ) होते है–वो दोप्रकारके है एकआमाशयसें प्रगट होनेवाले, दूसरे पक्वाशयसैं उत्पन्न होनेवाले, फिर वो आमाशय और पक्वाशयसै उत्पन्नहोनेवाले रोग दो

---

१ प्रभृति शब्दसैं प्रमेह, क्षय, आदिजानने । २ गर्भवती माताके चतुर्थादिमासोंमें इन्द्रियोंकी इच्छाको दौहृद कहते है ।

प्रकारके है। एकशारीरक अर्थात् शरीरसैं उत्पन्न होनेवाले, दूसरे मानसिक अर्थात् मनमें प्रगटहोनेवाले, इही दोषवलप्रवृत्त रोगोंको आध्यात्मिक कहते है ॥

## संघातवलप्रवृत्तव्याधि

संघातवलप्रवृत्ता ये आगन्तवो दुर्बलस्य वलवद्विग्रहात्तेऽपि द्विविधाः शस्त्रकृता-व्यालादिकृताश्च। एते आधिभौतिकाः ॥

अर्थ—संघातवलप्रवृत्तव्याधि वोहै जो आगंतुक और दुर्वल मनुष्यका वलवान्सैं लडना, फिर वो दोप्रकारकी है १ पहली शस्त्रकृत, और दूसरीव्यालादि ( सर्पादि ) कृत, इन्हीको आधिभौतिक व्याधिकहते है ॥

## कालवलप्रवृत्तव्याधि

कालवलप्रवृत्ता ये शीतोष्णवातवर्षाप्रभृतिनिमित्तास्तेऽपि द्विविधा व्यापन्नर्तुकृता अव्यापन्नर्तुकृताश्च ॥

अर्थ—कालवलप्रवृत्तव्याधि वो हैं जैसै-शरदी, गरमी, पवन, वर्षा, आदि षड्ऋतुओंके निमित्तसैं होती है। वोभी दोप्रकारकी है एक व्यापन्नऋतुकृत[1], दूसरी अव्यापन्न ऋतुकृत[2] ॥

## दैववलप्रवृत्तव्याधि

दैववलप्रवृत्ता ये देवद्रोहादभिशस्तका अथर्वकृता उपसर्गकृताश्च-तेऽपि द्विविधा विद्युदशनिकृताः पिशाचादिकृताश्च पुनश्च द्विविधाः संसर्गजा आकस्मिकाश्च ॥

अर्थ—दैववल प्रवृत्त अर्थात् देवशक्तिसैं होने वाले रोग वो है जो देव ( देवता, गौ, गुरु, सिद्ध, इनसैं द्रोहकरने ) सैं होते है। तथा अभिशस्तक अर्थात् ऋषियोंके शापदेनेसैं, अथर्वकृत ( अथर्वणवेद प्रणीत अभिचारिकमंत्रोंकरके होनेवाले मारण, मोहनादि व्याधि ) और उपसर्गज ( अर्थात् छूतकेरोग जैसैं ज्वरवालेके पास रहनेसैं वो ज्वर उडकर दूसरेको लगजाता है इत्यादि )। फिर

---

१ ऋतुके दूषित होनेसैं रोगहोते है वो व्यापन्न ऋतुकृत कहाते है। २ और जो उत्तमऋतुमें दूषित औषध जलके सेवनसैं होनेवाली व्याधि होती है वो अव्यापन्न ऋतुकृत जाननी।

वो दैवबलप्रवृत्त रोगभी दोप्रकारके हैं-एक विजली[1] और अशनिकृत[2] दूसरा पिशाचादिकृत[3]। फिर इसके दोभेद है एकसंसर्गज[4], दूसरा आकस्मिक[5]।

## स्वभावबलप्रवृत्त

**स्वभावबलप्रवृत्ताः क्षुत्पिपासाजरामृत्यु निद्राप्रभृतयस्तेऽपि द्विविधाः, कालकृता-अकालकृताश्च तत्र परि रक्षणकृताः कालकृता-अपरि रक्षणकृता अकालकृता एते आधिदैविकाः ॥ तत्र सर्वव्याध्यवरोधः॥**

अर्थ—स्वभावबल ( अर्थात् प्रकृत्तिकी शक्तिसें ) उत्पन्न होनेवाले ऐसे भूख, प्यास, बुढापा, मौत, निद्राआदि वोभी दोप्रकारके है एक कालकृत, और एक अकालकृत, तहां रक्षाकरने परभीहोय वो कालकृत रोग है, और बिना रक्षा करने सें जो होवे वो अकालकृत जानने[6]। इन्हींको आधिदैविक कहते है। तहाँ इन्ही आदि बलप्रवृत्तादि सात प्रकारकी व्याधियोंमें संपूर्ण व्याधिमात्र अंतर्गत जाननी ॥

कदाचित् कोई कहे कि सबव्याधियोंका कैसें इन्हींमें संग्रह होसक्ता है इस वास्ते कहते हैं ॥

**सर्वेषाञ्च व्याधीनां वातपित्तश्लेष्माण एव मूलं तल्लिङ्गत्वाद्दृष्टफलत्वादागमाच्च तथाहि कृत्स्नं विकारजातं विश्वरूपेणावस्थितं सत्वरजस्तमांसि न व्यतिरिच्यन्ते। एवमेव कृत्स्नं विकारजातं विश्वरूपेणावस्थितमव्यतिरिच्यवातपित्तश्लेष्माणो वर्त्तन्ते ॥**

अर्थ—संपूर्ण व्याधियोंके आदिकारण वातपित्त और कफहै। कारण कि

---

१ लताके आकार तिरछी गिरे वो विजली गिरी कहाती है। २ और अग्निके समान गोला रूप गिरे उसको अशनी अर्थात् ( वज्रपात ) कहते है। ३ आदि शब्दसें भूत, प्रेत, महाराक्षसादि जानने। ४ देवद्रोहकरके मनुष्योंमें आपसमें मिलनेसें जो महामारी आदि रोग होते है। ५ बिना ससर्गके जो पूर्व जन्मोपार्जित कर्मकरके होनेवाले। ६ इसीसें कालरोगोंकी चिकित्सा नहीं करी।

सर्वे व्याधिमात्र तल्लिंगत्व होनेसें, तथा दृष्टफलत्व होनेसें, और शास्त्रप्रमाण होनेसें, तथा यह संपूर्णविकार समूह विश्वरूप करके स्थितहै अर्थात् जाग्रत रूपकरके स्थित है। इसीसें यह सतोगुण, रजोगुणसें पृथक् नही है। इसी प्रकार यह संपूर्ण विकारजात विश्वरूपकरके स्थित अर्थात् रोगसमूहकरके स्थित पृथक् नहीं है॥

कोइ प्रश्नकरेकि तीनदोपोंसें आदिवल प्रवृत्तादि अनेक व्याधि कैसें होती है तहां कहते है॥

दोषधातुमलसंसर्गादायतनविशेषान्निमित्तश्चैषां विकल्पा भवन्ति॥

अर्थ—दोप धातु मल इनके संयोगसें आयतन विशेपसें और निमित्तसें व्याधियोंके अनेक भेद होते है॥

## दोषदूष्यसंज्ञालक्षणाकरकेहोतीहै

दोपदूषितेष्वत्यर्थं धातुपु संज्ञाक्रियते रसजोऽयं शोणितजोऽयं मांसजोयं मेदोजोऽयमस्थिजोऽयं मज्जजोऽयं शुक्रजोऽयं व्याधिरिति॥

अर्थ—दोपोंकरके दूपित धातुओंकी संज्ञाकरी जाती है यह रसजन्यव्याधि

७ तल्लिग कहिये वातादिदोपोंके लक्षण रूक्ष, अल्प, और स्नेहादिक तथा तोद दाह और खुजली आदि कार्यजानने। ८ दृष्टफलत्व कहिये वातादिकका शमन होना प्रत्यक्ष देखाजाताहै। ९ शास्त्रमें भी लिखाहै कि११२०ग्यारहसोंवीस व्याधियोंके कार्यभूत वातपित्त और कफही कारण है। १० विकार इसजगे २३ महदादिक जानने ११ संयोग जैसे। वातादिदोप, रसधातु, मल, मूत्रादिके संयोगसें अतीसारादिरोगहोते है। वातादिदोष रक्तधातु इनके संयोगसें विद्रधि और रक्तगुल्मादि रोग होते है। तथा वातादिदोप और रसधातुके संयोगसें ज्वरादिक रोग होते है। रसादि दूप्य और मलमूत्र आदिके संयोगसें वीसप्रकारकी प्रमेह होती है। १२ स्थानभेदसें रोगोंके भेद जैसे सातस्थानोंमें ६९ मुखरोग है। नेत्ररोग ७० इत्यादिजानने १३ निमित्त कहिये वातादिसैभी रोगोंके अनेकभेद होजाते है—जैसें वातादि ज्वर तीन—संनिपातका एक—द्वंद्वजनीन—आगंतुज आठवाँ इसीप्रकार और भी भेद अनेक जानने॥

है-यह रुधिरजन्य है-यह मांसजन्य है-यहमेदाजन्य है-यह अस्थिजन्य है-यह मज्जाजन्य है और यह व्याधि शुक्रजन्य है ॥

जैसे यह घीसें जलगया तेलसें जलगया-तामेसें जलगया-लोहसें जलगया इत्यादि-जैसें घी-तेल-तामा और लोहमें अग्नि कारण है उसी प्रकार रसरक्तादिजन्य रोगोमें वातादि दोष कारण है ॥

अब चिकित्सा विशेष विज्ञानार्थ सुखसाध्यत्वादि कर्मके बोधार्थ प्रत्येक रसादि धातु विकारोंको दिखाते है ॥

## रसजन्यविकार

तत्रान्नाश्रद्धारोचकाविपाकाङ्गमर्दज्वरहृल्लासतृप्तिगौरवहृत्पाण्डुरोगमार्गोपरोधकार्श्यवैरस्याङ्गसादकालवलिपलितदर्शनप्रभृतयोरसदोषजा विकाराः ॥

अर्थ—तहां अन्नमें अश्रद्धा, और अन्नमें अरुचि ( नफरत ) विपाक, अंगोंमे फूटन, ज्वर, हृल्लास, तृप्ति ( पेटभरेके समान ) देहमें भारीपना, हृदयरोग, पांडुरोग, छिद्रोंका वंद होजाना, कृशता, मुखमे विरसता, अंगोंमें उत्साहरहितपना, विना समय वुढापा, और वालोंका सपेदहोजाना, इत्यादि रसदोषजन्य विकार है ॥

## रुधिरजन्यविकार

कुष्ठविसर्पपिडकामशकनीलिकातिलकालकन्यच्छव्यङ्गेन्द्रलुप्तप्लीहविद्रधिगुल्मवातशोणितार्शोऽर्वुदाङ्गमर्दासृग्दररक्तपित्त प्रभृतयो रक्तदोषजा गुदमुखमेढ्रपाकाश्च ॥

अर्थ—कोढ, विसर्प, पिडका, मस्से, निलिका, तिलकालक ( तिल ) न्यच्छ- ( लहसन ) व्यङ्ग ( झाँई ) इन्द्रलुप्त ( जिसमें मूंड़के वारजाते रहे ) प्लीह ( तिल्ली ) विद्रधि, गोला, वातरक्त, ववासीर, अर्वुद, अंगमर्द ( अंगोंका टूटना ) असृग्दर ( रक्तप्रदर ) और रक्तपित्तआदि ये रुधिरदोषजन्यवीमारी है। तथा गुदा, मुख और भगलिंगका पकना येभी रुधिर जन्यविकार है ॥

## मांसदोषजविकार

अधिमांसार्वुदार्शोऽधिजिह्वोपजिह्वोपकुशगलशुण्डि-

कालजीमांससंघातौष्ठप्रकोपगलगण्डमालाप्रभृतयो मांसदोषजाः ॥

अर्थ—अधिमांस, अर्बुद, बवासीर, अधिजिव्ह, उपजिव्ह, उपकुश, गलशुंडी, अलजी-मांससंघात, ओष्टप्रकोप, गलगंड, गंडमाला आदि मांसदोषज विकारहै

## मेददोषजविकार

ग्रन्थिवृद्धिगलण्डार्बुदमेदोजौष्ठप्रकोपमधुमेहातिस्थौल्यातिस्वेदप्रभृतयो मेदोदोषजाः ॥

अर्थ—गांठ, अंडवृद्धि, गलगंड, अर्बुद, मेदरोग, ओष्टप्रकोप, मधुमेह, अतिस्थूल, और अतिपसीनोकाआना आदि मेददोषजविकार है ॥

## अस्थिदोषजविकार

अध्यस्थ्यधिदन्तास्थितोदशूलकुनखप्रभृतयोऽस्थिदोषजाः ॥

अर्थ—अधिक हड्डीका होना, अधिदंत ( दाँतकेऊपर दाँतका आना ) हड्डियोंमें चमकाचलना, और हड्डीका दर्द, तथा कुनख आदि अस्थिदोषज विकार अर्थात् ए विकार हड्डीके है ॥

## मज्जादोषजन्यविकार

तमोदर्शनमूर्च्छाभ्रमपर्वगौरवस्थूलमूलोरुजङ्घानेत्राभिस्यन्दप्रभृतयो मज्जदोषजाः ॥

अर्थ—अंधकार दर्शन-मूर्च्छा-भ्रम-स्थूलमूलवाले फोडान्का पर्वों ( जोडों ) में होना-भारीपना-ऊरू ( जांघ ) और पींडरी इनमें पीडा-तथा नेत्राभिस्यंद आदि मज्जादोष जन्य विकार जानने ॥

## शुक्रजन्यविकार

क्लैब्याप्रहर्षशुक्राश्मरीशुक्र मेहशुक्रदोषादयश्चतद्दोषजाः ॥

अर्थ—नपुंसकता, स्त्रीसंगमें इच्छा न रहना, वीर्यकी पथरी शुक्रप्रमेह, और शुक्रदोषादिक शुक्रके विकार जानने अर्थात् येदोष शुक्रके दोषसें होते है ॥

## मलायतनविकार

त्वग्दोषाः सङ्गोऽतिप्रवृत्तिर्वामलायतनदोषाः ॥

अर्थ—कुष्टसें आदिले त्वचाके विकार, मलमूत्रादिकोका रुकजाना, अथवा

अत्यंत उतरना, तथा कान-मुख-नाक-नेत्रआदि मार्गके रुकनेको संग ऐसा-कहते है ॥

## इन्द्रियायतनदोष

इन्द्रियाणामप्रवृत्तिरयथाप्रवृत्तिर्वेन्द्रियायतनदोषाः ।
इत्येवं समासउक्तो विस्तरनिमितानि चैषां प्रति रोगं वक्ष्यामः ॥

अर्थ—इन्द्रियोंका अपने २ कार्यमें प्रवृत्तनहोना-अयथा कुछका कुछकरना ये इन्द्रियातन दोष है । तहां दोषधातु मल संसर्गादिदोव्याधियोंके कारणजो पूर्वकहआए तथा आयतनविशेष दूसरा व्याधिहोनेका कारण ए दोनोको संक्षेपसें कहकर ॥

अब तीसरे निमित्तजन्य कारणको कहते है कि निमित्त ( वातादि ) कारण जैसें बलवान्सें विरोधकरना-और मिथ्याप्रयुक्त स्नेहादिक सें होनेवाले अतिसारादिरोगोंको प्रत्येक रोगोंके प्रति पृथक् २ कहेंगे ॥

भवन्ति चात्र ॥

कुपितानां हि दोषाणां शरीरे परिधावतां ।
यत्र सङ्ग स्ववैगुण्याद्व्याधिस्तत्रोपजायते ॥

अर्थ—शरीरमें विचरनेवाले कुपित दोषोंका जिस मार्गमें विगाड होनेसें रुकेगे वही रोग उत्पन्न करते है ॥

इति

---

## चिकित्साविधिकाउपदेश

जातमात्रश्चिकित्स्यः स्यान्नोपेक्ष्योऽल्पतयागदः ।
वन्हिशत्रुविषैस्तुल्यः स्वल्पोऽपिविकरोत्यसौ ॥

अर्थ—व्याधि उत्पन्नहोतेही उसकी चिकित्सा करे, किंतु यह अल्पहै क्या बिगाडकरेगी इसप्रकार उपेक्षा न करदेवे । क्योकि उपेक्षा करनेमें यह अल्पही व्याधि अग्नि-शत्रु-और विषके तुल्य विकार करने वाली होजातीहै । जैसें अग्निकी चिनगरी बडे २ महलोंको फूंक देतीहै, छोटासा शत्रु कालपायके सर्वनाशकरेहै । एवं थोडासाभी विष प्राण हरण करताहै, इसीप्रकार अल्पव्याधि प्राणनाश करे है ।

## वैद्यकाकर्त्तव्य

व्याधेस्तत्वपरिज्ञानं वेदनायाश्च निग्रहः ।
एतद्वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यः प्रभुरायुषः ॥

अर्थ–व्याधिका भलेप्रकार जानना और उस व्याधिजनित पीडाका नाशकरना यही वैद्यका वैद्यत्वहै किंतु वैद्य आयुका प्रभु नहीहै अर्थात् आयुका मालिक नंही। परंतु कोई आचार्य इसश्लोकको इसप्रकार लगाते है कि व्याधिका यथार्थ ज्ञान करना और पीडाकी शांति करनाही वैद्यका वैद्यपना नहीहै, किंतु सौं आगंतु मृत्युओंको हरणकरेहै इसवास्ते वैद्य आयुका प्रभुहै

रोगमादौपरीक्षेत ततोनंतरमौषधम् ।
ततः कर्मभिषक् पश्चात् ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥

अर्थ—वैद्य प्रथम रोगकी परीक्षा करे, रोगज्ञानके पश्चात् औषधकी परीक्षा करे, जब रोग और औषध दोनोंको परीक्षा करचुके तब सावधानीकेसाथ कर्म (औषधदेना आदि चिकित्सा) का प्रारंभकरे। असावधानीसें चिकित्सा न करे

---

अब प्रसंगवश रोगोंके जाननेके वास्ते चरकसें त्रिविधविज्ञानीयाध्यायको भाषा लिखते है ॥

अब हम त्रिविध विज्ञानीयाध्यायका वर्णन करते है ॥

तहां रोगकाविज्ञान तीन प्रकारसें होता है। जैसें १ उपदेश, २ प्रत्यक्ष, औ र ३ अनुमान, ॥

तहां आप्तवचनको उपदेशकहते है। अब यह जिज्ञासा हुई कि आप्त किसको कहते है वहां आप्तोंके लक्षण कहते है ॥

## आप्तलक्षण

जो तर्करहित स्मृतविभागके जानने वाले और विना प्रीतिके परदुःखसें आप दुखीहोवे उन महात्माओंको आप्त ऐसा कहते है। उनका गुणसंयुक्त वचन प्रमाण है अर्थात ग्रहणकरने योग्य है ॥

और मत्त (सिड़ी पागल) उन्मत्त (मद्यादिपीनेमें पागल) मूर्ख, विना विचारेकहने वाला, इनका वचन अप्रमाण है अर्थात् अमाननीय है ॥

## प्रत्यक्षकेलक्षण

जो वस्तु अपने नेत्रादि इन्द्री और मनकरके ग्रहण करीजावे वो प्रत्यक्ष है ॥

## अनुमान

तर्क और युक्तिकी जिसमें अपेक्षा होवे उसको अनुमान कहते है इस ( उपदेश, प्रत्यक्ष, और अनुमान ) त्रिविध ज्ञानसमुदायसैं प्रथम रोग परीक्षा कराहुआ रोगी चिकित्साकरनेमें संशय रहित होता है ॥

संपूर्ण ज्ञान केवल ज्ञानके एकदेश जाननेसैं कदाचित् नहीं होता किंतु संपूर्ण ज्ञानके अंगोंके जाननेसैं होता है ॥

इन तीनोंप्रकारके ज्ञानमें प्रथम आप्तोपदेश ज्ञान मुख्य है फिर प्रत्यक्ष और अनुमानद्वारा निश्चय करना कहा है ॥

परंतु वादी शंकाकर्त्ता है कि हम आप्तोंको नहीं जानते। इस वास्ते हम प्रत्यक्ष और अनुमान ए दोही परीक्षा ओंको मुख्य करके मानते है, इसीसैं अब ज्ञानवालोंको दोही परीक्षा करना मुख्य है, प्रत्यक्ष और अनुमान; परंतु बहुतसैं बुद्धिमान पुरुष इनदोनो परीक्षाओंके साथ उपदेश प्रमाणको मानते है अर्थात् इन दोनोंमें आप्तवचन संमतजो होवे वो प्रमाण है ॥

जैसे एक २ रोग, दोषोंकाप्रकोप, रोगोकीयोनी, आत्मा, अधिष्ठान, वेदना संस्थान, शब्द, स्पर्श-रूप-रस-गंध-उपद्रव-वृद्धिस्थान, क्षययुक्त इनका प्रसर और इनकेनाम इत्यादियोग आप्त वचनसैं जानना अर्थात् प्रवृत्ति अथवा निवृत्ति है यह आप्तवचनसैं जाना जाता है ॥

## प्रत्यक्ष

रोगतत्वको प्रत्यक्ष जानना होवेतो सब इन्द्रियोंसैं रोगीके देहगत सबइन्द्रियार्थ ( शब्द स्पर्शादिको ) की परीक्षा करे, विना जिव्हाद्वारा परीक्षाके। तात्पर्य यह है कि वैद्य नेत्र, कान, नासिका, और हाथोंसैं परीक्षाकरे और सवाद जानना जिव्हा इन्द्री द्वारा होता है परंतु इसको जिव्हा इन्द्रीसैं नहीं करते अत एव यहां वर्जित है ॥

तहां इन्द्रीयद्वारा जो परीक्षा करीजाती है उसको लिखते है ॥ पोरुओं

### कर्णइन्द्री

जैसे आँतोंका बोलना, संधियोंका चटकना और उंगलीके पूर्वोका चटकना इत्यादि और जो शरीरमें शब्द होनेवाले धर्म है उनको कर्ण इन्द्रीद्वारा परीक्षा करे ॥

## नेत्रइन्द्री

देहकावर्ण, ऊंचा, नीचा, छाया, शरीरकी प्रकृति, पांडुरोगआदि विकार, और जो नेत्रविषयक ज्ञान है उनको नेत्र इन्द्रीद्वारा परीक्षा करे ॥

## जिह्वाइन्द्री

जिव्हाइन्द्रीका ज्ञान जैसे-रोगीके मलमूत्रका और देहका खारा मीठा जायका यह अनुमानसें ही जानलेवे, यह रसनेन्द्री ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा नहीं होता है; इसीसें रोगीसें प्रश्नद्वारा करना चाहिये अर्थात् आपके मुखका जायका कैसा, है जब मल मूत्र करते हो उसं पर मक्खी बहुत बैठती है या थोडी और इसीप्रकार देहपर मक्खियोंके बैठनेसें देहमें मिष्टताका अनुमान करना और यदि जूंआँ आदि जीव देहपर वैठे तो जाननाकि इसरोगीके देहमें विरसता है॥

अब रक्तपित्तकी परीक्षामें यह परीक्षा करना कि इसके यह जलहीरुधिरमिला लाल २ गिरे है अथवा रक्तपित्त गिरता है । तहां उस रुधिरको कौआ कुत्ते आदि भँक्षणकरे तो जाननाकि रुधिर मिला जलगिरता है । और यदि कुत्ते कौआ आदि नखावेतो जाननाकि इसरोगीके रक्तपित्त गिरता ॥

इसी प्रकार औरभी खट्टे चरपरे आदि इसप्राणीके देहगतरसोंकी परीक्षा वैद्य अपनी बुद्धिके बलसें करे ॥

## नासिकाइन्द्री

रोगीके देहमें दुर्गंध आती है या सुगंध आती है, और दुर्गंध सुगंध किसप्रकारकी आती है, इत्यादि प्रकृतिविकार जन्य गंधको नासिकाइन्द्रीसें सूँघकर जाने

## स्पर्शनेन्द्री

हाथोंसें प्रकृति और विकृतियुक्त यह कठोर है यह नम्रहै यह गरम और शीतल इत्यादि परीक्षा स्पर्श द्वारा प्रत्यक्ष और अनुमानके अेकदेश द्वारा जाननी

## अबअनुमान ज्ञानको कहते है

अर्थ—अब आगे जो भाव कहते है इनमें आदिले औरभी अनुमानसें वैद्योंको जाने जाते है जैसे-पचनेकी शक्तिद्वारा जठराग्निका मंदतीक्ष्णादि ज्ञान होता है। दंडकसरत-डोलने फिरनेसें बलका अनुमान होता है । शब्दादिग्रहणसे प्राणीके सुननेकी शक्तिका ज्ञानहोता है । व्यभिचारसे मन और मनके अर्थोंका निश्चय होता है । व्यापार आदिसें विज्ञानका निश्चय होता है । संगतिसें रजोगुणका निश्चय होता है । ज्ञानसें मोहका निश्चय होता है । द्रोह ( वैरभाव ) करनेसें क्रोधका निश्चय होता है । दीनता करनेसें शोकका निश्चय होता है । प्रसन्नता ( खुशवख्ती ) सें हर्षका निश्चय होता है । संतुष्टतासें प्रीतिका ज्ञानहोता है । घबडाहटसें भयका ज्ञानहोता है । स्वस्थचित्तसें धैर्यका ज्ञानहोता है । उत्साहद्वारा वीर्यका निश्चय होता है । विना भ्रमके स्थितिका निश्चय होता है । अभिप्रायसें

श्रद्धाका निश्चय होता है । ग्रहण धारणसें मेधाका निश्चयहोता है । नाम ग्रहणसें संज्ञाका निश्चय होता है । स्मरणसें स्मृतिका ज्ञान होता है । लज्जायुक्त होनेसें लज्जा ( शरम ) का वोध होता है । सुशीलोंके आचरणसें शीलताका ज्ञान होता है । वर्जित करनेसें द्वेषका ज्ञान होता है । अनुबंधनसें उपाधिका निश्चय होता है । चंचलता रहित होनेसें धृतिका निश्चय होता है । आज्ञाके अनुसार चलनेसें वशीभूतपनेका निश्चय होता है । काल-देश-उपशय-और पीडा इनसें अवस्था-भक्ति ( भोजनक्रिया ) सात्म्य-और व्याधिइनका निश्चय होता है । जिसव्याधिके लक्षण छिपेहुए है उसका ज्ञान उपशय[१] और अनुपशय द्वारा होता है ॥

तथा दोषोंका प्रमाण-अपचार-आयुकीक्षीणता ए अरिष्टद्वाराजाने जाते है ग्रहणीका मृदु और दारुणत्व-दुःस्वप्नदर्शन, अनपेक्षितवस्तुओंमें अभिप्राय-सुख दुःख इनसबका रोगीसें प्रश्नकरनेसेंही निश्चय होता है ॥

इसीवास्ते आत्रेय महर्षि कहते है आप्तोपदेश प्रत्यक्षइन्द्रियोंसें और अनुमानद्वारा चतुर वैद्य व्याधियोंकी परीक्षाकरे ॥

अर्थवेत्ता वैद्य यथा संभव सबको सर्वथा ज्ञानबुद्धिरूप दीपकसें देखकर कार्य करता है वह तत्ववेत्ता हैं ॥

प्रथम तत्व विचारकरे फिर कार्य करके उसको जाने । जो कार्य तत्वमें विशेष ज्ञाता है वह परीक्षा विषयमें मोहको नहीं प्राप्त होता है । और बुद्धिमानीका उत्तम फल प्राप्त करताहै । जो वैद्य केवल ऊपरहीसें रोगकी परीक्षा करता है । और ज्ञान बुद्धि दीपकसें रोगीके अंतःकरणका विचारनहीं करता वह चिकित्साकरनेका अधिकारी नहीं है ।

इस प्रकार संपूर्ण रोगविशेषोंका त्रिविधज्ञानसंग्रह है-जैसे आप्तउपदेश करते है और जैसे प्रत्यक्ष ग्रहणकरा जाताहै एवं जैसें अनुमानसें रोगजानें जाते है उनको उदार बुद्धि वैद्य जाने इसप्रकार त्रिविधरोगविज्ञानीय विमानमें भावोंका मुनिने वर्णन करा है ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे वृहन्निघंटुरत्नाकरे त्रिविधरोग विशेषविज्ञानीयं समाप्तम्

## रोगज्ञानानंतरचिकित्सा
## आदावंते रुजाज्ञाने प्रयतेत चिकित्सकः ।

१ जिस औषध अन्न और विहारसें रोगीको सुखहो उसको उपशय और सात्म्य कहते । और इससें विपरीतको अनुपशय और असात्म्य कहते है ॥

भेषजानां विधानेन ततः कुर्याच्चिकित्सितम् ॥

अर्थ—वैद्य प्रथम रोगकी परीक्षा में यत्नकरे फिर औषधोंके विधान करके चिकित्सा करना चाहिये ।

### सबरोगोंकेनामनजाननेमेंअलज्जत्व

विकारनामाकुशलो नजिह्रियात्कदाचन।
नहि सर्वविकाराणां नामतोस्ति ध्रुवास्थितिः ॥

अर्थ—वैद्य रोगका नाम न जाननेपर कदाचित् लज्जा न करे, क्योंकि संपूर्ण रोगोंकी नामकरकेही परीक्षा नही करी, अर्थात् अनेकानेक रोग इससंसारमें विना नामके दीखते है ।

### ( अनुक्तदोषोंमेंलक्षणद्वाराचिकित्साकीआज्ञा )

नास्तिरोगोविनादोषैर्यस्मात्तस्माच्चिकित्सकः ।
अनुक्तमपिदोषाणां लिंगैर्व्याधिमुपाचरेत् ॥

अर्थ—विनादोषोंके रोग नहींहो इसीसें वैद्य, जो दोष शास्त्रमें नहीं कहे उनदोषोंकों रोगीके उपद्रवोंसें जानके चिकित्साकरे ।

### असाध्यरोगीकीचिकित्साकानिषेध

येनकुर्वंत्यसाध्यानां चिकित्सा ते भिषग्वराः ।
अतो वैद्यः श्रमः कार्यः साध्यासाध्यपरीक्षणे ॥

अर्थ—जो असाध्य रोगीका यत्न नही करते वोही वैद्योंमे श्रेष्ट हैं अतएव वैद्यको उचित है कि साध्यासाध्यकी परीक्षामें श्रम करे ॥

### उत्पन्नहोतेही चिकित्साकरनेकाहेतु

यथास्वल्पेनयत्नेन छिद्यते तरुण स्तरुः ॥
सएवातिप्रवृद्धस्य छिद्यतेऽतिप्रयत्नतः ॥

अर्थ—जैसे तरुणवृक्ष अर्थात् नवीनोत्पन्नवृक्ष थोडे यत्न करने परही काटा जासक्ता है, परंतु जब वोही वढकर शाखाप्रशाखाओंकरके बढजाता है तब उसका काटना वडाकठिन हो जाता है, उसीप्रकार रोग प्रगटहोते ही कुछ थोडीसी चिकित्सासे दूरहोसक्ता है परंतु जब रोगवढके वद्धमूल होजाता है फिर उसका दूरकरना वडा कठिन है ॥

## औषधकीआवश्यता

**आयुष्मान् पुरुषो जीवेत्सव्यथो भेषजां विना ।**
**भेषज न पुनार्जीवेत्स एवहि निरामयः ॥**

अर्थ—जिसकी दीर्घावस्थाहै यादि वो रोग ग्रस्तहो औषध न करे तो वो दुःख सहित जीता है, और यदि वही औषध करे तो रोगरहित हो आनंदसै जीवे। तात्पर्य यह है कि दीर्घआयुवाला विना औषधके दुखी रहता है । और औषध के करनेसैं रोग रहित जीवन पाता है ॥

**नचौषधीनामपिसर्वथैव प्रभावहानिःपरिकल्पनीया।**
**फलंप्रयात्यूर्ध्वमधस्त्रिवृच्च प्रत्यक्षतः कस्यनसिद्धिमेतत्॥**

अर्थ—इसप्राणीको उचित है कि औषधोंमें सर्वथा [ कलिदोषसैं ] प्रभाव हानीकी कल्पनानकरे [ अर्थात् अब कलियुगमें ये औषध अपना प्रभाव नहीं दिखाती एसाविचार कदाचित् न करे ] क्योंकि मैनफलके खानेसै उलटी होती ही है । और निसोथखानेसैं दस्तहोते यहबात प्रत्यक्षमें किसको सिद्धनही है?अर्थात् सबजानते है तथा जमालगोटा,इन्द्रायनके फल,चोक ये सब औषध अपना फलदिखाती है इसी कारण औषधोंके गुणमें किसीको भी संदेहनहीं करना॥

यदि जो औषधके गुण है वो गुणनहोवे तो जानना कि कितो ये दवाई पुरानी है अथवा इसके प्रयोगमें कुछनकुछ विपरीतता आगई है या इसप्राणीकी प्रकृति के अनुसारनही है इत्यादि कारणोंमें औषध गुणनहीं करती परंतु मूर्खमनुष्य अपने मूर्खता परतो देखते नहीं व्यर्थ औषधको दोषदेते है ॥

**सतिचायुषिनोपायंविनोत्थातुंक्षमोरुजी ।**
**दर्शितश्चात्रदृष्टांतः पंकमग्नोमहागजः ॥**

अर्थ—आयुष्यवान्भी रोगी विना उपायके रोगसै नहीं उठसके, इसमें दृष्टांत है कि जैसे कीचमें फसा हुआ हाँथी बिना यत्नके नहीं निकलसक्ता उसीप्रकार रोगीविना यत्नके अच्छा नहीं होता। यहा रोगी है सो हाथी है, और रोगहै सोई कीचड है, उसमें फसेको औषध देना मानों उस कीचडसैं निकालनेका उपाय है ॥

**सतिचायुषिनष्टःस्यादामयैश्चाचिकित्सितः ।**
**यथासत्यपितैलाद्यौदीपोनिर्वातिवात्ययाः ॥**

अर्थ—दीर्घावस्थावालाभी रोगीरोगकी विना चिकित्सा ( इलाज ) करे नष्ट होजाता है इसमें दृष्टांत है कि जैसै तेल और वत्ती होनेपर भी हवाके वेग करके दीपक बुझ जाता है, यहां मनुष्यकी देहही दीपक है और आयु रूप तेल है समय रूपवत्ती तामें जीवरूप ज्योति है और रोगरूप पवन इस जीवरूपदीपकको बुझाय देती है जैसै उस दीपकको रक्षामें रखनेसैं नहीं बुझे इसीप्रकार इस देहकी रक्षा करनेसैं अकाल मृत्यु नहीं हो।

यथासत्यपितैलादौदीपंनिर्वापयेन्मरुत् ।
एवमायुष्ययुक्तंचहिंसंत्यागंतुमृत्यवः ॥

अर्थ—पूर्वोक्त वाक्यको दृष्टांतदेकर फिर पुष्टकरते है जैसै तैलवाती आदि रहनेपर भी दीपकको पवन बुझादेती है इसीप्रकार दीर्घ आयु होनेपरभी आगंतुज मृत्यु इसप्राणीको नाशकर देती है॥

दोषागंतुनिमित्तेभ्योरसमंत्रविशारदौ ।
रक्षेतांनृपतिंनित्यंयत्नाद्वैद्यपुरोहितौ ॥

अर्थ—इसीवास्ते शास्त्रमें लिखा है कि दोष जन्यव्याधि और आगंतुज व्याधियोंसैं रस और मंत्रके ज्ञाता ( जाननेवाले ) वैद्य और पुरोहित राजकी रक्षा करे॥

## रोगज्ञानमेंअभ्यासकोमुख्यत्व

अभ्यासात्प्राप्यतेदृष्टिः कर्मसिद्धिप्रकाशिनी ।
रत्नादिसदसज्ज्ञानं नशास्त्रादेवजायते ॥

अर्थ—अभ्यास ( वारंवार चिकित्साकर्ममें प्रवृत्त होने ) से कर्मसिद्धि प्रकाशकरता दृष्टी होती है, अर्थात् चिकीत्सा करनेका ज्ञान होना है, इसमें दृष्टांत है कि जैसे हीरापन्ना आदि रत्नोंके सचे झूटेका ज्ञान जैसे शास्त्रके पटनेसेंही नही होता किंतु उसमें अभ्यास करनेसें होता है इसीप्रकार वैद्य विविधव्याधि चिकित्सामें जाने॥

दृष्टापचारजः कश्चित्कश्चित्पूर्वापराधजः ।
तत्संकराद्भवत्यन्योव्याधिरेवंत्रिधास्मृतः ॥

अर्थ—अब त्रिविध व्याधियोंको कहते है तहां कोई व्याधि दृष्टापचारज ( इस लोकमें व्याधिके कारणोंसें होनेवाली ) है। और कोई पूर्वापराधज ( पूर्वज

जन्मके करे अशुभ कर्मोंसैं हुए ) है । और तीसरे इनदृष्टापचारज और पूर्वापराधजके मिलने सैं होते है इसप्रकार रोगतीनप्रकारके है ॥

यथानिदानंदोषोत्थैः कर्मजोहेतुभिर्विना ।
महारंभोल्पकेहेतावातंकोदोषकर्मजः ॥

अर्थ—तहां दोषजन्यरोग अपने २ निदानसे प्रगट होते है ( जैसै वातके रूक्ष लघु आदि कारण है इनसे जो रोग प्रगटे वो वातजन्य जानना इसीप्रकार पित्त और कफ जन्य रोगोको भी समझना चाहिये ) और जो दोषोंके कारण विनाही प्रगट होवे वो कर्मजन्य रोग जानना । और जिसमें थोडे दोषोंके कुपित होनेसैं वडीभारी व्याधि प्रगट हो उसको दोषकर्मज व्याधिकहते है ॥

दूष्यं देशं वलं कालमनलं प्रकृतिं वयः सत्वं सात्म्यं
तथा हारमवस्थाथपृथग्विधाः ॥ सूक्ष्मासूक्ष्माः समी
क्ष्यैषा दोषौषधनिरूपणे । यो वर्त्तते चिकित्सायां न
सस्खलति जातुचित् ॥

अर्थ—दोषऔषध निरूपणमें जो वैद्य दूष्य, देश, बल, काल, अग्नि, प्रकृति अवस्था, सात्म्य, आहार, और दूष्यादिकोंकी सूक्ष्म और वडी अवस्थाको देख ( विचार ) कर चिकित्सा करता है वह कदाचित् नही स्खलन होता अर्थात् कदाचित् नहीं भूले ॥

गुर्वल्पव्याधिसंस्थानंसत्वदेहवलावलात् ।
दृश्यतेप्यन्यथाकारं तस्मिन्नवहितोभवेत् ॥

अर्थ—वैद्य, सत्व-देह-और वलावलके कारण गुरु और अल्प व्याधियोंकी आकृति अन्यथा दीखती है उसमें सावधान होवे । जैसैं अधिक सत्व और उत्कृष्ट देहवलवाले प्राणीके होने वाले भारी भी रोग हलके मालूम होते है कारण कि उसके देहमें सत्व वल ए अधिक है । इसीप्रकार हीन सत्व, हीनदेह हीनवल वालेके उत्पन्न हुई व्याधि हलकी भी वडी भारी दीखे है ॥

गुरुंलघुमितिव्याधिंकल्पयंतुभिषग्ध्रुवः ।
अल्पदोषाकलनयापथ्येविप्रतिपद्यते ॥

अर्थ—जो कुत्सित वैद्य है वो व्याधिके संस्थान ( स्वरूप, मात्रके देखते ही

१ भिषक् ध्रुवम् इति पाठांतरम् ॥

भारी रोगको हलका समझते हैं, जब हीन दोष समझा तो मात्रा भी हलकी देते है अतएव वो मात्रामें मोहको प्राप्त होते है। इसी प्रकार हलकी व्याधिको बडी भारी विचारके मात्रा देनेमें मोहको प्राप्त होते है॥

ततोल्पमल्पवीर्यंवा गुरु व्याधौप्रयोजितम्।
उदीरयेत्तरांरोगान् संशोधनमयोगतः॥

अर्थ—अब कहते है कि अल्प मात्र—अल्पवीर्य—ऐसी संशोधनरूप औषध प्रबल रोगोंमें दीनीहुई हीन योग होता है, इसवास्ते रोगोंको अत्यंत बढाती है। इससे तो औषधन देनाही ठीक है जैसे पुत्रके कार्य न करनेसें अपुत्र कहाता है उसीप्रकारका अयोग ही हीनयोग कहलाता है॥

शोधनत्वतियोगेनविपरीतंविपर्यये।
क्षिणुयान्नमलानेव केवलंवपुरस्यति॥

अर्थ—लघुव्याधिमें विपरीत शोधन अर्थात् अत्यंत वीर्यवान् ओर अधिक औषधीदेवे, वह अतियोगके वस मलोंको ही नही क्षीणकरे है किंतु देहको भी नष्टकरे है॥

अतोभियुक्तः सततंसर्वमालोच्यसर्वथा।
यथायुंजीतभैषज्यमारोग्यायथाध्रुवम्॥

अर्थ—इसकारण अर्थात् रोगोंकी गति दुर्विज्ञेय होनेसें निरंतर आयुर्वेद पठन पाठन अनुष्ठानमें तत्पर वैद्य सब दूष्यादि वस्तु ओंको विचार इसप्रकार औषध देवे कि जैसें आरोग्य अवश्य होवे॥

दर्शन-स्पर्शन-प्रश्नै र्व्याधिज्ञानं त्रिधामतम्।
दर्शनान्मूत्रजिव्हाद्यैः स्पर्शनान्नाडिकादिभिः।
प्रश्नैःदूतादिवचना दितित्रेधासमुच्यते॥

अर्थ—रोगका ज्ञान तीनप्रकारसें होता है जैसे—दर्शन (देखना) स्पर्शन (छूना) और प्रश्न (पूंछना) तहाँ मूत्र और जिव्हा आदिशब्दसें मल—देहकी आकृति आदि देखने करके जाने। नाडी आदिको छूनेसें जाने। और दूतादिके वचन पूछने करके वैद्यजाने इस प्रकार परीक्षा तीन प्रकारकी है॥

शारीरामानसागंतुसहजाव्याधयोमताः।
शारीराज्वरकुष्ठाद्याः क्रोधाद्यामानसामताः।

आगंतवोभिशापोत्था सहजाक्षुत्तृपादयः ॥

अर्थ—तहां व्याधि चारप्रकारकी है १ शारीरी २ मानसी ३ आगंतु-और ४ सहज । तहां ज्वरकुष्टादिक शारीरी व्याधि है । क्रोध-लोभादिक मानसिक व्याधि है । अभिशापजन्य व्याधि आगंतुज है और भूखप्यास-निद्राआदि सहज व्याधि कहलाती है ॥

## रोगोंकेभेद

तेचस्वाभाविकाः केचित्केचिदागंतवः स्मृताः ।
मानसाःकेचिदाख्याताःकथिताःकेऽपिकायिका ॥

अर्थ—उनरोगोंमेंकोई स्वाभाविक रोगहै । कोईआगंतु और कोईमानसिक एवं कोईरोग कायिक अर्थात् देहसैं संबंध रखते है ॥

## त्रिविधव्याधि

कर्मजाः कथिताः केचिद्दोपजासंतिचापरे ।
कर्मदोपोद्भवाश्चान्येव्याधयस्त्रिविधाः स्मृताः ॥

अर्थ—व्याधी तीन प्रकारकी हैं-जैसै एकतो कर्मज ( जो पूर्वजन्मो पार्जितकर्मसैं होती है ) दूसरी दोपज ( जो वातादि दोपोंके कुपित होनेसै ) होती है और तीसरी कर्म और दोपदोनों करके त्रिविधव्याधियोंकी चिकित्सा. होने वाली, ये तीनभेद है ॥

## त्रिविधव्याधियोंकीचिकित्सा

कर्मक्षयात्कर्मकृतादोपजाः स्वस्वभेपजैः ।
कर्मदोपोद्भवायांतिकर्मदोपक्षयात्क्षयम् ॥

अर्थ—कर्मकृतव्याधि कर्मके जीर्ण होनेसैं शांति होतीहै । दोप जन्य व्याधि

---

१ स्वाभाविक रोग भूखप्यास, निद्रा, वृद्धावस्था, और मृत्यु आदिहै, अथवा अपने स्वभावसैं उत्पत्ति होवे उसके स्वाभाविक कहिये सहज रोग, वो जन्मांधादिक जानने । २ जो किसी प्रकारकी चोट लगनेसैं होवे वो आगंतुन है । ३ काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, अभिमान, दीनता, पिशुनता, शोक विपाद, हर्प, इर्प्या असूया और मात्सर्यादिक ए मानसि व्याधिहै । ४अथवा उन्माद, अपस्मार, भ्रम, मोह, तम् संन्यासादिक जानने । * पूर्वजन्मो पार्जित दुष्टकर्म जन्यव्याधि ॥

अपनी २ पृथक् २ औषध करनेसैं शांति होती है, और कर्मदोष दोनोंसैं प्रगट व्याधिकर्म और दोष दोनोंके क्षय होनेसैं दूर होती है ॥

## पुनः त्रिविधव्याधि

साध्यायाप्याअसाध्याश्चव्याधयस्त्रिविधाःस्मृता ।
सुखसाध्यकष्टसाध्यो द्विविधः साध्यउच्यते ॥

अर्थ—साध्य-याप्य और असाध्य ऐसैं व्याधितीन प्रकारकी है। अब कहते है कि साध्यव्याधिके दोभेद एक सुखसाध्य-दूसरी कष्टसाध्य ॥

## याप्यकेलक्षण

यापनीयंतुतंविद्यात्क्रियांधारयतेहियत् ।
क्रियायांतुनिवृत्तायांसद्यो यश्चविनश्यति ॥

अर्थ—अबयाप्यके चिन्ह कहते है कि जो चिकित्साकी क्रियाको धारण करे उसको याप्यअर्थात् दूर होने योग्य व्याधि जाननी। और औषधोपाय न चले तो वोरोगी शीघ्रमरे उस रोगीको याप्यजानना ॥

प्राप्ताक्रियाधारयतिसुखिनंयाप्यमातुरम् ।
प्रपतिष्यदिवागारंस्तम्भोयत्नेनयोजितः ॥

अर्थ—याप्य रोगीको प्राप्तहुई क्रिया धारण करती है अर्थात् जब तक उसका यत्नहुआ करेगा तबतकरोगी नही मरे, जैसे गिरतेहुए घरमें अडवार अथवा किसी पत्थर वगेरहकानीचे सहारा लगादेनेसैं वह घर नहीं गिरे ॥

साध्यायाप्यत्वमायांति याप्याश्चासाध्यतां तथा ।
घ्नंति प्राणानसाध्यस्तु नराणामक्रियावताम् ॥

अर्थ—विना यत्नकरनेवाले मनुष्योंके साध्यरोग याप्य होजाते है, और याप्यरोग असाध्य होते है, एवं असाध्य रोग इन प्राणियोंकेप्राणोंको हरण करते है [ इसीसैं मनुष्य मात्रको उचित है कि रोगके उत्पन्न होते ही उसकायत्न द्वारा निवारण करे ] ॥

## याप्यत्व

याप्यःकेचित्प्रकृत्यैवकेचित्याप्याउपेक्षया ।
प्रकृत्याव्याधयोऽसाध्याकेचित्साध्याउपेक्षया ॥

अर्थ—कोई रोगतो प्रकृतिसेंही याप्यहोते है और कोई रोगकी उपेक्षाकरने

सें होते है। कोई व्याधि प्रकृतिसे ही अर्थात् उत्पन्न होते ही असाध्य होती है और कोई उपेक्षाअर्थात् उसका यत्ननही करनेसें होती है॥

साध्योयमितियःपूर्वंनरोरोगमुपेक्षते।
सकिंचित्काल मासाद्यमृतएवावदृश्यते॥

अर्थ—यह रोग अभीतो साध्य है इस प्रकारजो उसकी उपेक्षा करदेता है, वह थोडेही कालमें मरगया ऐसादीखता है॥

## सप्तविधव्याधि

स्वभावजाश्चदोषोत्थाः सहजाश्चापचारजाः।
आगंतवःप्रभावोत्थाः कालजाश्चेतिसप्तधा॥

अर्थ—१ स्वभावज २ दोषज ३ सहज ४ अपचारज ५ आगंतुज और ७ कालज एसें व्याधिसात प्रकारकी है॥

स्वभावजाः समाख्यातावार्द्धक्याक्षुत्तृपादयः। दोषो त्थाश्चाऽनृताहाराविहारादिसमुद्भवाः॥ सहजारक्त-रेतस्थदोषसंभारसंभवाः। गर्भेपचारजास्तेस्युः कु-ब्जावामनतादयः। आगंतवोऽग्निवाय्वादिभूतावे-शादिसंभवाप्रभावोत्थासुरक्षोणीसुरगुर्वादिशापजाः॥ वर्षाशीतातपाद्युत्थाव्याधयःकालजामताः।

अर्थ—तहां भूखप्यास और बुढापाआदि स्वभावजरोग है। मिथ्याआहार-सें प्रगट होनेवाली व्याधि दोषज कहाती है। मातापिताके रुधिर और वीर्यदोष-सें जो रोगप्रगट होवे वो सहजव्याधि कहलाती है। गर्भवतीके विरुद्धाचरणसें जो कुबडा-बौनाआदि व्याधि है उनको अपचार जन्यकहते है। अग्नि-पवन आदि और भूतावेशसें होनेवाली व्याधियोंको आगंतव कहते है, ब्राह्मण-देवता-गुरुआदिके शापसें होनेवाली व्याधियोंको प्रभावोत्थ कहते है और वर्षा (बारि-श) सरदी और गरमीसें जो प्रगट उन व्याधियोंको कालजन्य कहते है॥

## उपद्रवकेलक्षण

रोगारंभकदोषस्यप्रकोपादुपजायते।
योऽन्योविकारः सबुधैरुपद्रवइहोदितः॥

अर्थ—जो रोगके उत्पन्न करने वाले वातादिदोष हैं उनके कुपित होनेसें

जो रोगमेंभी दूसरा विकार उत्पन्न होता है उसको उपद्रव कहते है। उदाहरण- जैसे ज्वरमें तृषा–अनिद्रा आदि उपद्रव होते है॥

## अरिष्टकेलक्षण

रोगिणोमरणंयस्मादवश्यंभाविलक्ष्यते।
तल्लक्षणमरिष्टंस्याद्रिष्टंचापितदुच्यते॥

अर्थ—जिन लक्षणोसैं रोगोंका मरण अवश्य सूचितहो उनको अरिष्ट अथवा रिष्ट ऐसै कहते है॥

नजंतुकश्चिदमरः पृथिव्यामेवजायते।
अतोमृत्युरवार्यस्यात् किंतुरोगान्निवारयेत्॥

अर्थ—इसपृथ्वीमें कोई प्राणीअमर ( जोनमरे ऐसा ) नहीं है अर्थात् सबए- कदिनमरेंगे इसीवास्ते मृत्यु निवारणनहीं होसकती किंतुरोग निवारण होसके है। तात्पर्य यह है कि वैद्य रोगरहित करदेवे–जैसें मरते समय कंठमेंकफघडघडा- ता है तो वैद्यकी चातुर्यता यह है कि ऐसी औषध देवे कि कफका बोलना बंद हो जावे फिर वोरोगी चहिये उसीक्षणमें मरजाय॥

## मृत्युसंज्ञाऔरकालसंज्ञा

एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणः प्रचक्षते।
तत्रैककाल संयुक्तः शेषास्त्वागंतवः स्मृता॥

अर्थ—अथर्वाण ऋषिने १०१ एकसों एक मृत्युकही है तिनमें एककाल सं- ज्ञक मृत्युहै बाकी आगंतु संज्ञक मृत्युकही है। तहां कालसंज्ञक मृत्युआयुष्य- के अंतमें प्राणियोंको अवश्य मारेगा–वह सब उपायोंसैभी अवार्य है तथा ब्रह्मा- दिकोंकी भी आयु अंतमें हरण करता है जैसे लिंगपुराणमें कार्तिकेयके प्रति- श्री शिवका वाक्य है॥

ममायुर्ग्रसतेकालः कुतः पुत्ररसायनम्

अर्थ—हे पुत्र! यहकाल मेरी भी आयुको ग्रसता है जिनको प्राणी रसायन- कहता है सो कहां है। अतएवजो काल संज्ञक मृत्यु है वह अवश्य होकररहती है और जो आगंतुसंज्ञक जैसे–विषभक्षण अजीर्णमें अत्यंत भोजन दुष्ट देशका जलपीना–अत्यंत बलवान्सें व्याघ्र–वनका भैंसा–मतवाराहाथी आदिसैं लडना -सर्पके साथखेलना–अत्यंतऊंचे वृक्षपरचढना–हाथोंसैं तैरकर बडीभारी नदीको पारजाना, अकेला रात्रिमेंजाना-इत्यादि जानना ये यत्नकरनेसैं रुकसकती हैं॥

शीतेशीतप्रतीकारमुष्णेतूष्णनिवारणम् ।
कृत्वा कुर्यात् क्रियां प्राप्तां क्रियाकालं न हापयेत् ॥

अर्थ—शरदीके रोगमें शरदीके निवारण कर्त्तागरम और गरमीके रोगमें गरमीके निवारणकर्त्ता शीतल, औषध करके प्राप्तक्रियाको करे, किंतु क्रियाके समयको नष्ट न करें, अर्थात् जोसमय क्रियाकरनेका शास्त्रने निश्चय कियाहै, वह उसी समय क्रियाकरनी, आगे पीछे नहीं ।

विकारेऽल्पे महत्कर्म क्रियालघ्वी गरीयसि ।
द्वयमेतदकौशल्यं कौशल्यं युक्तकर्मता ॥

अर्थ—छोटेसे रोगमें बडीभारी क्रियाका करना अर्थात् अधिक और उत्कट औषधदेना, एवं बडेभारी रोगमें छोटी क्रिया अर्थात् थोडीदवा और अल्पगुण वाली देना, ये दोनों कर्म वैद्यकी मूर्खता सूचक है। कुशलता वैद्यकी उसीमें है कि यथा योग्य कर्मकरना ॥

क्रियायास्तु गुणालाभे क्रियामन्यां प्रयोजयेत् ।
पूर्वस्यां शांतिवेगायां न क्रिया संकरो हितः ॥

अर्थ—जो रोगीके प्रति क्रियाकरे यदि वह अपना गुण न दिखलावे तो दूसरी क्रियाकरें, अर्थात् दूसरी औषध देवे । परंतु जब पहली औषधका वेग शांति होलेवे तब दूसरीदेवे, क्योंकि संकर ( विपरीत ) क्रिया रोगीको हितकारी नही होती ॥

क्रियाभिरल्परूपाभिर्नक्रियासंकरोहितः ।
ताभिस्तु भिन्नरूपाभिः सांकर्यं नैवदुष्यति ॥

अर्थ—वैद्यको एकसी दोचिकित्सा एकही कालमें नहीं करनी चाहिये, वो हितकारी नहींहोती । परंतु यदि दोनो भिन्न २ रूप अर्थात् पृथक् २ रूप वाली होवेतो वो शंकर दोषकारक नही होती ॥

उत्पद्यते च सावस्था दोषकालबलं प्रति ।
यस्यां कार्यमकार्यं स्यात्कर्मकार्यं विवर्जितम् ॥.

अर्थ—देश, काल, बल, इनकी अवस्थादेखके वैद्य रोगीको औषध देनेमें यदि विकृति देखे तो वह औषध वैद्यको त्यागदेनी चाहिये । इसका यह तात्पर्य है कि बहुतसे रोगोंमें देश काल और बलके अनुसार कोई करनेयोग्य कार्यतो

न करने योग्य होजाता है, और न करनेयोग्य कार्य करनेयोग्य होजाता है। इसवातका विचार वैद्यको करलेना चाहिये ॥

## अच्छेहोनेपरभीपथ्यकरनेकीआज्ञा

निवृत्तोऽपिपुनर्व्याधिः स्वल्पेनायातिहेतुनाः ।
दोषैर्मार्गीकृतेदेहेशेषः सूक्ष्मइवानलः ॥

अर्थ—दोषों करके रास्ता करी हुई देहमें दूरहुईभी व्याधि थोडेसेभी कुपथ्य करने सैं फिर लौट आती है, जैसै वहुत सूक्ष्म अग्निकी चिनगारी रहने पर फिर प्रज्वलित आग होजाती है ॥

## कर्मदोषजऔरदोषजव्याधि

पुण्यैश्चभेषजैशांतास्तेज्ञेयाः कर्मदोषजाः ।
विज्ञेयादोषजास्त्वन्येकेवलावाथसंकराः ॥

अर्थ—जो व्याधि पुण्य और औषधों करके शांति होवे वो कर्म और दोषजन्य जाननी अन्य व्याधि केवल दोषजन्यही होती है और कोई २ मिश्रित व्याधि होती है ॥

दर्शनस्पर्शनप्रश्नैः परीक्षेतचरोगिणम् ।
रोगंनिदानप्राग्रूपलक्षणोपशयाप्तिभिः ॥

अर्थ—दर्शन, स्पर्शन, और प्रश्नसैं, रोगीकी परीक्षाकरे तथा निदान, पूर्वरूप, रूप, उपशय, और संप्राप्ति इस निदान पंचक द्वारा रोगकी परीक्षा वैद्यको करनी चाहिये॥

---

## अव रोगपरीक्षा करनेका क्रम लिखते है

वैद्यको उचित है कि एक ऐसी पुस्तक वनावे कि जिस्मे ८ खाने हो। उनमें जिसरोगीका यत्न करे उसकी व्यवस्था इस प्रकार लिखलिया करे।

१ पहले खानेमें रोगीका नाम तथा उपनाम लिखे ॥
२ दूसरेमें उसकी अवस्था लिखे ॥
३ तीसरेमें ज्ञाति ओर वर्णन तथा उसका रुजगारलिखे ॥
४ चौथेमें विवाहित है या कारा है यह लिखे ॥

५ पांचवेमें उसकाजन्म और वर्तमानमें रहनेका स्थान लिखे ॥
६ छठेमें रोगकानाम और उसके उत्पन्न होनेकी तिथिवार संवत् लिखे ॥
७ सातवेमें रोगीके चिकित्सा आरंभका दिनलिखे ॥
८ आठवेमें रोगीकी अवस्था आदि लिखनी ॥

अब लिखते है कि वैद्यको रोगीसै यह पूछना चाहिये कि तुह्मारे यह रोग कबसै हुआ है, और उत्पन्न होनेमें इसकी क्या व्यवस्था थी, अर्थात् यह रोग एकसाथ बढा है या धीरेधीरे तथा किस प्रकारबढा ॥

दुसरे वैद्यको पूछना कि इसरोगीके कुलमें कोई पैतृज रोगतो नहीं है तथा इसके माता पिताकी मृत्यु कौनसी अवस्थामें हुई, और वो कौनसे रोगसे मरे तथा इसकी जठराग्नि कैसी है और शीतला, फेंफडेके रोग हुए हो तो उनको भी पूछे, तथा स्त्रियोंमें ऋतुका हालपूछे अर्थात् ऋतु कुछ पीडाके साथ तो नहीं हो, एवं समय २ परहोता है कि कुछ हेरफेरसे होता है, और थोडाहोता है या अधिक ॥

फिर यहतलाशकरे कि प्रथम यह रोगकैसे आया और किसकी दवाईकरी उस दवाईने क्या फायदा और नुकसान करा ॥

फिर रोगीकी अवस्थाकी परीक्षा एवं मल, मूत्र, जिन्हा, श्वास, त्वचा, स्वर, नेत्र, मुख बलाबल, और नाडीआदि की परीक्षा सावधानीके साथकरे तो रोगका ज्ञान भलेप्रकार होवे इसमें संदेहनही है ॥

औषधं मंगलं मंत्रं मन्याश्वविविधाः क्रियाः ।
यस्यायुस्तत्रसिध्यंति नसिद्ध्यंतिगतायुषि ॥

अर्थ—औषधी मंगल (स्वस्तिवाचन पुण्याहवाचनादि) मंत्र और अनेकप्रकारकी क्रिया ( जादू–टोना–टोंटकाआदि ) ये सब जिसकी आयुबाकी है उसजगे चलती है औरगतायु मनुष्य परनहीं चले ॥

## आरोग्यलक्षण

मंगलाचारसंपन्नपरिवारस्तथातुरः । श्रद्दधानोऽनकूलश्च प्रभूतद्रव्यसंग्रहः ॥ सत्वलक्षणसंयुक्तोभक्तिर्वैद्यद्विजातिषु । चिकित्सायामनिर्वेदस्तदारोग्यस्यलक्षणम् ॥

अर्थ—मंगलाचार संपन्न, परिवार ( कुटंब ) के प्राणियों करके युक्त, श्रद्धावाला, अपने, अनुकूल बहुतसाद्रव्यसंग्रवाला, सतोगुणी, वैद्य और ब्राह्मणोंका

भक्त,और चिकित्सामें अरुचि नलानें वाला, असारोगी होवे तो जानना कि यह आरोग्य होयगा इसमें संदेहनहीं ॥

दीर्घतीव्रामयग्रस्तं ब्राह्मणं गामथापिवा ।
दृष्ट्वापथिनिरातंक मकृत्वाब्रह्महाशुचिः ॥

अर्थ—जो वैद्य, मार्गमें तीव्ररोंगसें ग्रस्त ब्राह्मण अथवा गौको रोगी देख उसकी विना चिकित्साकरे वैंसेही चलाजावे उसको ब्रह्महत्याका पाप लगकर अपवित्र होता है ॥

## ॥ इति चिकित्सापाद चतुष्टय वर्णनम् समाप्तम् ॥

अथ

# ज्वरप्रकरणम्

शिष्य—रोग कितने हैं ? ॥

गुरु—रोग असंख्यात अर्थात् वेशुमारी है परंतु उसमेंसें मुख्य २ जो प्राचीन आचार्योंने संग्रह करे है उनकोमें कहताहू तू सुन ॥

## रोग संख्याहेमाद्रौ

ज्वरातिसारो ग्रहणीह्यर्शो जीर्णविशूचिका।सालसाच-
विलंबी च कृमिरुक्पांडुकामला: ॥ हलीमकं रक्तपित्तं
राजयक्ष्मा उर: क्षतम् । कासो हिक्का तथा श्वास:
स्वरभेदस्त्वरोचक: ॥ छर्दिस्तृष्णा च मूर्च्छा च तथा
पानात्ययादय: । दाहारव्यश्च तथोन्मादो ह्यपस्मारो
ऽनिलामय: ॥ वातरक्तमुरुस्तंभमामवातोऽथशूलरुक्
पक्तिजं शूलमानाहमुदावर्तोथ गुल्मरुक् । हृद्रोगो मू-
त्रकृच्छ्रं च मूत्राघातस्तथाश्मरी॥प्रमेहोमधुमेहश्च पि-
डिकाश्च प्रमेहजा: । मेदो दोषोदरं शोथो वृद्धिश्च ग-
लगंडक: । गंडमालापचीग्रंथीह्यर्वुदं श्लीपदं तथा
विद्रधिव्रणशोथौ च द्वौव्रणौ भग्ननाडिकौ । भगंदरो-
पदंशौ च शूकदोषास्त्वगामय: ॥ शीतपित्तमुदर्दश्चो
त्कोठकश्चाम्लपित्तकं।विसर्पश्च सविस्फोटस्तथैव च
मसूरिका क्षुद्रास्यकर्णनासाक्षिशिरस्त्रीवालकामया:
विषं चेत्ययमुद्देश: संग्रहेस्मिन्प्रकीर्त्तित ॥

अर्थ— १ ज्वर २ अतिसार ( दस्तोंकी विमारी ) ३ संग्रहणी ( पेचिस ) ४ बवासीर ५ अजीर्ण ( बदहजमीकारोग ) ६ विशूचिका ( हैजा ) ७ सलस

८ विलंबिका ( ये दोनो रोग उसी हैजाके भेद है, ) ९ कृमिरोग ( देहके बाहर भीतर जो कीडे पडजाते है ) १० पांडुरोग ( पीलियाका रोग ) ११ हलीमक ( पीलियाका भेद ) १२ रक्तपित्त ( जिस रोगमें मुख ओर गुदासें खून गिरता है ) १३ राजरोग ( सई ) १४ उरःक्षत ( छातीका घाव ) १५ खांसी १६ हिचकी १७ श्वास ( दमाका रोग १८ स्वरभेद ( जिसमें आवाज बैठ जाती है ) १९ अरुचि ( भोजनमें नफरत होना ) २० छर्दि ( रद होनेका रोग ) २१ तृष्णा (प्यासका रोग) २२मूर्च्छा (बेहोशी) २३पानात्यय (जो बहुत दारूके पीनेसें होते है )२४(दाह जलनकारोग) २५ उन्माद (पागलपना,२६अपस्मार ( मृगीका रोग ) २७ वादीके रोग २८ वातरक्त ( जिस्सें देहमें काले २ चकत्ते पडजाते है ) २९ ( उरुस्तंभ जांघ रहकर जिस्से डोलना फिरना बंदहो जाता है ) ३० आम वात ( आंउका गिरना ) रोग ३१ शूलरोग ( पेटमें दर्द अेंठेका चलना ) ३२ परिणाम शूल ( जो दर्द भोजन करनेके उपरांत होता है ) ३३अफरा ३४ उदावर्त्त ( जों मलमूत्रादिके रोकनेसें होता है ) ३५ गुल्म ( गोलेका रोग ) ३६ हृदय ( छातीका, रोग) ३७ मूत्रकृच्छ ( पेसावका रुकना ) ३८ मूत्राघात ( पेसावका पीडाके साथ उतरना इसाकाभेद सुजाक का रोग है ) ३९ अश्मरी ( पथरीका रोग, ) ४० प्रमेह ( जरियानका रोग ) ४१ मधुमेह ( जिस्से पेसाब सहतके मानिंद निकले ) ४२ पिडिका ( इसी प्रमेह रोगके कारण जो बदनमें फुंसी होती है ४३ ) मेदरोग ( जिस्से यह मनुष्य बेसुमार मोटा होजाता है ) ४४ उदर ( जलंधर रोग ) ४५ शोथ ( सूजन वरम ) रोग ४६ वृद्धि ( पोते छिटकना) ४७ गलगंड ( घेंघारोग जो अकसर पूरबके देशोंमें देखाजाता है ( ४८ गंडमाला ( जिसमें नाडके चारोंतरफ गांठ और फोडे हो जावे ) ४९ अपची ( भरने फूटने वाली गांठ)५० ग्रंथी ( गांठकारोग ) ५१ अर्बुद ( बहुत दिनमें पकनेवाली गांठ ) श्लीपद ( पीलपाऊका भेद ) ५२ विद्रधि ( पेटका फोडा ) ५३ व्रणशोथ ( घावकी सूजन ) ५४ व्रण ( घाव ) ५५ नाडीव्रण ( नासूरका फोडा ) ५६ भग्नरोग ( हड्डी आदिका टूटना ) ५७ भगंदर ( गुदाके ऊपर होनेवाला घाव ) ५८ उपदंश ( इन्द्रीकी बिमारी ) ५९ शूकदोष । ( लिंगबढानेसें होने वालारोग ) ६० रक्सा ( जिल्दके कोढ आदि रोग ) ६१ शीतपित्त ( पित्ती ) ६२ उदर्द ( पित्तीकाभेद ) ६३ उत्कोठ ( चकत्तोंका रोग ) ६४ अम्लपित्त ( जिस्से खट्टी डकारें साथ मुखमें महापानी आवे ) ६५ विसर्प ( बहुतजल्दी फैलनेवाले फोडे ) विस्फोट ( फोडेनकारोग ) ६७ मसूरिका (शीतलाका रोग) ६८ क्षुद्ररोग ( छोटे २ रोग जैसें निल मस्से स्याहआ आदि ) ६९ मुखके रोग,७० कानके रोग, ७१ नाकके रोग, ७२ नेत्रके रोग, ७३ शिरके

रोग ७४ स्त्री ( औरतोंके ) रोग, ७५ बालकोंके रोग, और ७६ विष ( जहरसें होने वाले ) रोग, इतने रोग इस ग्रंथमें कहे है बाकी फिरगरोग, बदका रोग, नपुंसक इत्यादि सब रोगोंका निदान चिकित्सा इस ग्रंथमें विस्तारपूर्वक कहा जावेगा ॥

## रोगनाम

गदोरुजोव्याधिरपाढपाप्मारोगामयातंकमयोंसघातः। रुडंधमंगार्त्तितमोविकारग्लानिः क्षयानार्जवमृत्युभृत्याः॥

अर्थ—अबरोगके नाम कहते है. तहां गद, रुज, व्याधि, अपाढ, पाप्मा, रोग, आमय, आतंक, मय, असघात, रुट्, अंध, अंगार्त्ति, तम, विकार, ग्लानि, क्षय अनार्जव और मृत्युभृत्यये रोगके नामांतर है ॥

## रोगीकेनाम

व्याधितोविकृतोग्लाष्णुर्ग्लानोमंदस्तथातुरः।
अभ्रांतोभ्रामितोरुग्णश्चामयाव्यपटुश्चसः॥

( अर्थ—अब रोगीके नाम कहते है जेसें. व्याधित, विकृत, ग्लाष्णु, ग्लान, मंद, आतुर, अभ्रांत, भ्रमित, रुग्ण, आमयावी, अपटु, ए रोगीके नामांतर है ॥

## रोगीकेलक्षण

उत्साहीद्विजदेवभेषजभिषग्भक्तोऽतिपथ्येरतो धीरोधर्मपरायणः प्रियवचोमानीमृदुर्मानदः। विश्वासीऋजुरास्तिकः सुचरितोदातादयालुः शुचिःयःस्यात्काममवंचकः सविकृतोमुच्येतमृत्योरपि॥

अर्थ—उत्साही, ब्राह्मण-देव-औषध-और वैद्य इनका भक्त, अत्यंत पथ्यसें चलने वाला, धीर, धर्मात्मा, मिष्टबोलने वाला, मान रहित, नम्रतायुक्त। औरको मानकादेने वाला, विश्वास रखने वाला, सरलस्वभावका, आस्तिक, पवित्रचारित्र वाला, दाता, दयालु, शुद्धता सें रहने वाला, और ठगवृत्तिकरके रहित, असा रोगी मौतसें भी बच जाता है; अतएव रोगीको उक्तगुण संयुक्त होना चाहिये ॥

## आमव्याधिलक्षण

आलस्यतंद्राहृदयाविशुद्धिदोषाप्रवृत्त्याकुलमूलभावैः ।
गुरूदरत्वादरुचिसुप्तताभि रामान्वितंव्याधिमुदाहरंति ॥

अर्थ–आलकस, तंद्रा, हृदयकी विशुद्धि अर्थात् चित्तमें अस्वास्थ्य, और मलमूत्रका अवरोध, पेटका भारीपना, अरुचि, अंगोंका रहजाना, इत्यादि लक्षणोंसे आमयुक्त व्याधि जानना ॥

## उसकायत्न

आमंजयेल्लंघनकोष्णपेयाल्लघ्वन्नरूक्षोदनतिक्तयूषैः ।
निरूहणैः स्वेदनपाचनैश्चसंशोधनैरूर्ध्वमधस्तथाच ॥

अर्थ—लंघन, मंदोष्णपेया, हलकेअन्न, रूखेअन्न, कडुएरस, मूंगकायूप आदि, निरूहवस्ती, शेक, पाचन, रेचन, और वांति, इत्यादि उपायोंसे आमव्याधिका नाश करे ॥

## दोषत्रयकायत्न

कफंतुरिपुवत्तीक्ष्णैर्वातंस्नेहेनमित्रवत् ।
पित्तंजामातरमिव मधुरैः शीतलैर्जयेत् ॥

अर्थ—कफको शत्रुके समान तीक्ष्ण औषधोंसें जीते, वादीको मित्रके समान स्नेहद्रव्य सें जीते, और पित्तको अपने जामाता ( जमाई ) के समान मधुर और शीतल पदार्थोंसे जीते ॥

## औषधकेनाम

भेषज्यंभेषजंजैत्रमगदोजायुरौषधम् ।
आयुर्योगोगदारातिरमृतंचतदुच्यते ॥

अर्थ—अब औषधके नाम कहते है जैसे-भैषज्य, भेषज, जैत्र, अगद, अजायु, औषध, आयुयोग, गदाराति, और अमृत, ये औषधके नामांतर है ॥

## औषधकेदोभेद

भेषजंद्विविधंचतत्
स्वस्थस्योजस्करंकिंचित्किञ्चिदार्त्तस्यरोगनुत् ॥

अर्थ—अब कहते है कि वह चिकित्सा अर्थात् औषध दो प्रकारकी है, ए-

क तो नैरोग्य पुरुषको तेज- ( पुरुषार्थ ) केकरने वाली, और दूसरी रोगीके रोगको नाश करनेवाली ॥

स्वस्थस्योजस्करंयत्तु तद्वृष्यन्तद्रसायनम्।
प्रायः प्रायेण रोगाणां द्वितीयं प्रशमे मतम् ॥
प्रायः शब्दो विशेषार्थोह्युभयं ह्युभयार्थकृत्।

अर्थ-अब दोनोंके भेदोंको कहते है कि जो स्वस्थ (नैरोग्य)पुरुषके तेज, वल, कांतिको, बढावे वो वृष्य और रसायन है। वह इस चिकित्साखंडके अंतमें लिखेंगे ) तथा दिनादिचर्याभी इसी ओजस्कर चिकित्सामें है यह प्रथम इस बृहन्निघंटुरत्नाकरके दूसरेभागमें लिख आए है । और दूसरी रोगीके रोगहरणकारी चिकित्सा है वह इसीचिकित्साखंडके प्रत्येक ज्वरादिरोगोंमें पृथक् २ लिखी जावेगी ॥ प्राय यह शब्द विशेपार्थ वाचक है ओर उभयशब्द दोअर्थका वाचक है ॥

अभेषजंचद्विविधं बाधनंसानुबाधनम्।

अर्थ—अभेपज ( अर्थात् जो औपधनही है ) वह दो प्रकारकी है एकबाधन और दूसरी सानुबाधन ॥

अभेषमितिज्ञेयं विपरितंयदौषधम् ॥

अर्थ—जो औपधसें विपरीत कर्मकरे उसकोअभेपज ऐसें वैद्य कहते है ॥

शिष्य—प्रथम ज्वर कहनेका क्या प्रयोजन है ॥

गुरु—यह संपूर्ण रोगोंका राजा है अतएव प्रथम हम ज्वराधिकार कोही मर्णन करते है जैसे लिखा है ॥

यतः समस्तरोगाणांज्वरोराजोतिविश्रुतः।
अतोज्वराधिकारोत्रप्रथमंलिख्यतेमया ॥

अर्थ—संपूर्ण रोगोंमें ज्वर राजा है इस प्रकार सुना है अतएव प्रथममें इस जगे ज्वराधिकार लिखता हूं तहां प्रथम ज्योतिपके मतको कहते है ॥

पूर्वजन्मकृतंपापंग्रहरूपेणबाधते ॥

अर्थ—पूर्वजन्मके पाप इस प्राणीको ग्रहरूप होके बाधा करते है

ग्रहेषुप्रतिकूलेषुनानुकूलंहिभेषजम्।

तेभेपजानांवीर्याणिहरन्तिबलवंत्यपि ॥
प्रतिकृत्यग्रहाण्यादौ पश्चात्कुर्याच्चिकित्सितम् ॥

अर्थ—ग्रह ( सूर्यचंद्रादि ) के प्रतिकूल ( मारकादि ) होनेसैं प्राणीको ओषधी अनुकूल ( हितकारी ) नहीं होती, क्योंकि वो दुष्ट ग्रह बडी बलवान् औषधोंके वीर्यको हरण करलेते है इसीसैं वैद्यको उचित है कि प्रथम ग्रहोंको जप दान. हवन पूजनादिसैं शांति करके फिर चिकित्सा करे अत एव अब उनग्रहोंके द्वारा ज्वर रोगका निर्णय कहते है ॥

### ज्योतिः शास्त्रकाअभिप्राय

नीचस्थितस्य भानो र्दशाक्षिनाशो ज्वरः शिरोरोगाः । बंधनमहोग्रपीडाकुष्टस्य च दर्शनं चिन्हम् । एवं क्षीणेन्दुदशायां परिचिंतनीयं ॥

अर्थ—नीचस्थितसूर्यकी दशामें नेत्रनाश, ज्वर, मस्तकरोग, बंधन, महाभय, कोढ, रोग इत्यादि पीडाहोती है । इसीप्रकार क्षीणचंद्रकी दशामें भी रोगहोते है ॥

सुहृद्बंधुसमायोगो भूनिमित्तं कलिर्भवेत्। देहपीडाज्वरोव्याधिः शिखिमध्यगते बुधे । शनिरंतर्गतेप्येवं । तद्वैकृतनिराकृतयेजपहोमादिकं कुर्यात इति सारावल्यां ॥

अर्थ—केतुकी दशामें बुधकीदशाआनेसे सुहृत् तथा बंधु इनका समागम, और पृथ्वीकेमध्ये झगडा, देहमेंपीडा, ज्वर, और व्याधि ये उपद्रव होते है । तथा शनीकी दशामें बुद्धकीदशा आनेमें उक्तफलहोता है उस पीडाके दूरकरनेके निमित्त जपहोमादिक करे यह सारावली ग्रंथमें लिखा है ॥

### ज्योतिषकल्पतरौ

हेलिः पित्तश्चन्द्रमाश्लेष्मवातौ भौमः पित्तोज्ञः त्रिदोषप्रधानः । जीवःश्लेष्माकारकोभार्गवस्तु वातश्लेष्माभास्करिवातकारी ॥

अर्थ—अशुभ सूर्य पित्तकेरोगोंको करे है, चंद्रमा कफवातके रोगोंको करे है, मंगल पित्त, बुध त्रिदोष ( सन्निपात ) के रोगोंको, बृहस्पति कफके विकार,

शुक्र वातकफके विकार, एवं अशुभ शनिश्चर वादीके रोगोंको अपनी दशांत र्दशामें कर्ता है ॥

### ज्योतिषहरस्येऽपि

योबलीत्रिकभावेशोदशाश्चांतर्दशास्वपि ।
सूर्यभौमार्किभिर्विद्धः सभवेज्ज्वरदायकः ॥

अर्थ—त्रिकभाव ६–८–१२ ) षष्ठेश अष्टमेश और द्वादशेश इनतीनोंमें जो ग्रह वली होय वही अपनीदशा और अंतर दशामें सूर्य, मंगल, और शनीश्वर, करके विद्धहोवे तो ज्वरको प्रगटकरे है ॥

यैर्दृष्टोरिपुभावेशस्तत्तत्प्रकृतिजैर्गुणैः ।
ज्वरकृत्स्वदशामध्येवातपित्तकफादिकैः ॥

अर्थ—षष्ठेशको जो जो ग्रह देखते है और उनकी जैसी २ प्रकृति है उसके माफिक अपनी २ दशामें वातपित्त और कफादिजन्य ज्वरको प्रगट करते है ॥

### पैशाचिकज्वरकायोग

रिपुभावेश्वरोदृष्टोराहुकेतुशनैश्चरैः ।
दृष्टोवाव्ययभावेशो ज्ञेयः पैशाचिकज्वरः ॥

अर्थ—षष्ठेशको अथवा व्ययेशको राहु केतु और शनीश्वर देखते होवे तो उस प्राणीको पैशाचिक अर्थात् भूतबाधाका ज्वर जानना ॥

### खेदज्वरकायोग

मार्गाधीशोथबलवान्राहुकेतुशनैश्चरैः ।
दृष्टेखेदज्वरोज्ञेयः इत्याहुर्भगवान्भृगुः ॥

अर्थ—मार्गाधीशवली यदि राहुकेतु और शनीश्वर करके वीक्षित होवे तो उसप्राणीके खेदज्वर होवे इस प्रकार भृगुऋषिने कहा है ॥

### ज्वरद्वारामृत्युकायोग

अष्टमेशोयदाभौमलग्नेशेनेत्थशालवान् ।
पित्तराशिगतौतौचेज्ज्वरेणमृतिमादिशेत् ॥

अर्थ—मंगल यदि अष्टमेशहोके लग्नेशके साथ इत्थशाल योगकरता हो तथा अष्टमेश और लग्नेश दोनो पित्तराशिके होवे तो उसप्राणी की ज्वर रोग से मृत्यु होवे ॥

## औषधजन्यज्वरयोग

प्रश्नलग्ने पित्तराशौ रोगेशेन समन्वितः ।
औषधाज्ज्वररोगः स्यादथवा वैद्यचापलात् ॥

अर्थ—प्रश्नलग्नमें पित्तराशिहो और रोगेश ( षष्ठेश ) करके युक्त होवे तो उसरोगीको औषधसें ज्वर जानना, अथवा वैद्यकी चपलतासें ज्वर जानना ॥

## भीतिज्वरयोग

भयाधीश दयाधीशा वेकस्मिन् भवने बली ।
चंद्रमाबुधसंयुक्ते भीतिज्वरयुतो नरः ॥

अर्थ—भयाधीश और दयाधीश दोनो बलवान् होकर एकघरमें बैठेहो और चंद्रमा तथा बुधयुक्त होवेतो उस प्राणीको भीतिज्वर जानना ॥

## शापज्वरयोग

धर्मेशः षष्ठभवने षष्ठेशेन समन्वितः ।
रिपुदृष्ट्या चेत्थशाली शनिना शापतोज्वरः ॥

अर्थ—धर्मेश छटेघरमें षष्ठेशककें युक्तहोवे, तथा रिपुदृष्टीकरके शनीचरसें इत्थशाल करता होवेतो उस प्राणीको शापजनित ज्वर जानना ॥

## यमघंटयोग

आदित्ययोगेनमघाविशाखाचंद्रेणयुक्ताकुजआर्द्रयातु।
मूलंबुधेगुरुकृत्तिकाचशुक्रेणरोहिण्यसितेनहस्तः ॥
एतान्वदंतिनिपुणायमघंटयोगान्व्याधिप्रपन्नमनु-
जोयदिपुण्ययोगात् । संजायतेमुदितमेवइति ॥

अर्थ—रविवारको मघानक्षत्र, सोमवारको विशाखानक्षत्र, मंगलवारको आर्द्रा नक्षत्र, बुधवारके दिन मूलनक्षत्र, गुरुवारको कृत्तिकानक्षत्र, शुक्रवारको रोहिणी और शनिवारको हस्त नक्षत्र, होनेसे यमघंट संज्ञक योगहोता है यदि इसयोगमें मनुष्यरोगी होवे तो वो पुण्ययोग सें कदाचित् अच्छा होता है ॥

## सुखयोग

दिनकरकरयुक्तः सोमसौम्येनवापितुरगसहितभौमः

सोमपुत्रे ऽनुराधा। सुरगुरुरपिपुष्येरेवतीशुक्रवारेदि-
नकरसुतयुक्तोरोहिणीसौख्यहेतु ॥

अर्थ—रविवारमें हस्तनक्षत्र, चंद्रवारमेंमृगशिरनक्षत्र, मंगलवारअश्विनीनक्षत्रयुत बुधवार अनुराधानक्षत्र करके युक्त, बृहस्पती पुष्यनक्षत्रयुत, शुक्रवार रेवतीनक्षत्र युत, और रोहिणीनक्षत्रयुत शनिवार होवे वह सौख्य योग है यदि इस योगमें रोगी बिमारहोवे तो शीघ्र आराम होवे ॥

अथनक्षत्रयोगेनज्वरव्याधिःप्रजायते ।
साध्यासाध्यंचयाप्यंचवक्ष्यामिशृणुपुत्रक ॥

अर्थ—अब नक्षत्रयोगसें जो साध्यासाध्य और असाध्य रोग प्रगट होतेहैं उनको हे पुत्र! में तेरे आगे कहता हूं सुन ॥

### असाध्यनक्षत्र

मघा भरणिहस्तेषु मूलेवा ज्वरतोपिवा ।
मृत्युमापद्यते सोपि नात्रकार्याविचारणा ॥

अर्थ—मघा, भरणी, हस्त, और मूल इन नक्षत्रोंमे यदि मनुष्य ज्वरपीडित होवेतो अवश्य मृत्युको प्राप्त होवे ॥

### साध्यनक्षत्र

अश्विनीरोहिणीपुष्पे मृगज्येष्ठापुनर्वसौ ।
एते साध्यास्तु विज्ञेया ज्वरिणां च विशेषतः ॥

अर्थ—अश्विनी, रोहिणी, पुष्प, मृगशिर, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, इतने नक्षत्र ज्वर रोगीको साध्य है ॥

### कष्टसाध्यनक्षत्र

पूर्वात्रयं स्वातितथापि चित्रा त्रयोत्तरा वा श्रवणं ध-
निष्ठाः । मूलं विशाखा सह कृत्तिकाभिः साप्योनुराधा
सह ज्येष्ठया च ॥ एते सकष्टाः सहपीडितानां ऋक्षा-
स्तु याप्यं कुरुते नरस्य॥तस्मात्तुविज्ञायबुधश्वसम्य-
क्रुजांविनाशंप्रतिकर्मभिश्च ॥

अर्थ—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, और पूर्वाभाद्रपद, स्वाति, चित्रा, तीनोउ-

तरा, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, विशाखा, कृत्तिका, अश्लेषा, अनुराधा, और ज्येष्ठा येनक्षत्र रोगीको कष्टसाध्य और याप्यकर्ता है [ तहां कोई नक्षत्र कष्टसाध्य और कोई नक्षत्र याप्य जानना ] इसीसें यह वैद्य प्रथम शुभाशुभ नक्षत्रोंको विचारके फिर रोगनाशक औषधी देवे ॥

## कष्टावली

अश्विन्यां चैकरात्रं तु भरण्यां मृत्युमादिशेत् । कृत्तिकानवरात्रं तु रोहिण्यां तु दिनत्रयं ॥ अश्विनीष्वपिषड्रात्रं सुखं भवति देहिनाम् । यमदैवे समुद्दिष्टं मरणं पंचमे ऽहनि॥कृत्तिका सुगृहीतस्य सप्तरात्रं भवेज्वरः। न मुंचेद्यदि सप्ताहादेकविंशतिमे सुखं ॥ अतऊर्ध्वं विपद्येत त्रिपक्षात्संशयो भवेत् ॥ रोहिण्यामष्टरात्रेण मुच्येदेकादशे हनि ॥ मृगेण पडहं ज्ञेयं नवरात्रमथापि वा । आर्द्रया मुपसंसृष्टं पंचाहान्मृत्युमादिशेत् ॥ ऊर्ध्वं यद्यपि वर्त्तेत त्रिपक्षात्संशयो भवेत् ॥ पुनर्वसूपसृष्टस्तु ज्वरेण परिपीडितः । त्रयोदशाहान्मुच्येत सप्तविंशेऽथवा हनि ॥ पुष्ये त्रिरात्रं ज्वरितं सप्तरात्रान्निवर्त्तते । नवरात्रं तथा श्लेषा मघाचेति यमालयम् ॥

अर्थ—अश्विनी नक्षत्रमें प्रगटहुआ रोग १रात्रि रहताहै । भरणी नक्षत्रमें प्रगटहुआ रोग मृत्यु करता है । कृत्तिका नक्षत्रमें प्रगटहुआ रोग नौरात्रि रहे । रोहिणीमें तीनदिन जानना । अथवा अश्विनीमें प्रगट हुआरोग छःरात्रि रहकर फिर आनंद होता है, और भरणीमें प्रगटहोनेसें पांचमें दिन रोगीका मरणहोवे । कृत्तिकामें हुआ ज्वर सातरात्रि रहता है । यदि सातदिनमें आराम नहोयतो फिर २१ दिनमें सुखहोवे । यदि इकीसदिनकेभीबाद आराम न होवे तो वह रोगी १॥ महिनेमें बचे अथवा मरजावे । रोहिणी नक्षत्रमें आठदिन रहकर ११ दिनमें रोगशांति होवे । मृगशिरमें छः दिनरहे अथवा नौ रात्रिमें उतरे । आर्द्रामें हुआरोग पांचदिनमें मरणकरे । यदि पांचदिनके उपरांत रोगी बचजावे तो १॥ महिनेमें संशय कारकहोता है ॥ पुनर्वसुमें हुआज्वर १३ दिनमें छूटे अथवा २७ वे दिन ज्वर रहितहोवे । पुष्यनक्षत्रमें प्रगटहुआज्वर तीन रात्रिरहे

फिर क्रम २ सें घटके सातवे दिन मुक्तहोवे । श्लेपानक्षत्रमें ज्वर १ रात्रिरहे । और मघानक्षत्रमें रोगहोनेसे रोगीका मरण होय ।

अश्लेषासुभवेन्मृत्युर्दीर्घकालक्रमादथ । मघासुद्वादशाहेनमृत्युर्भवतिदेहिनः ॥ ऊर्ध्वयातिमघायां तुपुनरेवसुखीभवेत् । पूर्वामासत्रयंज्ञेयंउत्तरा पंचकत्रयम् ॥ पूर्वात्रयेत्रयोमासाः शुभाः ज्ञेयामनीषिभिः । पूर्वासुचोपसृष्टस्यफाल्गुनीषु भवेद्दश॥ उत्तरासुतथाष्टौचनवरात्रमथापिवा । एकविंशतिरात्राद्वाज्वरःश्चेत् सौख्यमृच्छति । एतेषांतुर्थ गेचांशेयदिरोगस्तदामृतिः ॥

अर्थ—अश्लेषानक्षत्रमें रोगहोनेसे बहुतदिनमें मृत्युहोवे। मघानक्षत्रमें १२ दिनसैंमरे । यदि १२ दिनसैं उपरांतवचजावेतो फिरसुखी होय। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ और पूर्वाभाद्रपद इनमें हुआरोग तीनमहिनेरहे और अच्छाहोजावे । पू० फा०नक्षत्रमेहुआरोग १० रात्रिरहे । उ०फा०नक्षत्रमें आठरात्रि अथवा नौरात्रिरहे अथवा २१ रात्रिरहकर फिर आनंद होवे यदिउक्तनक्षत्रोंके चतुर्थ पादमें रोगहोयतो रोगीनिश्चय मरे ॥

हस्तेनप्रथमेमोक्षश्चित्रायामष्टमेहानि । स्वातिः षोडशरात्रंतुविशाखाविंशरात्रिकं ॥ स्वातियोगेदशाहेनमुच्येत्पक्षत्रयेणवा । विशाखासुभवेन्मृत्युरेकविंशतिमेहनि । चानुराधापक्षमेकं ज्येष्ठादशदिनानितु ॥ ज्वरस्तुदिवसानष्टावनुराधासुवर्त्तते । अतऊर्ध्वंतुमुक्तिःस्यान्नास्तितस्यचिकित्सितम् ॥

अर्थ—हस्तनक्षत्रमेंप्रथमदिनहीरोगसैं मुक्तहोजावे । चित्रा नक्षत्रमें आठवेंदिन। स्वातिनक्षत्रमें आठ रात्रिमें । विशाखानक्षत्रमें वीसदिनसैं रोगमुक्तहोवे । अथवा स्वाति नक्षत्रमें १० दिनसे अथवा १॥ महिनेमें छूटे । विशाखामें २१ दिनसेंमृत्यु होय । अनुराधा नक्षत्रमें १५ दिनसैं । ज्येष्ठानक्षत्रमें दशदिनसैं रोग मुक्तहोवे अनुराधा नक्षत्रमें प्रगटहुआ ज्वर आठदिनरहै । यदि आठदिनसैं ज्यादाज्वर रहै तो उस रोगीका मरण होवे उसका यत्ननही है ।

ज्येष्ठायांपंचमेमृत्युरूर्ध्वंवाद्वादशात्सुखम् । मूलेन-
चोपसृष्टस्यदशरात्रंभवेज्ज्वरः ॥ तदूर्ध्वंवर्त्तमानस्यचै-
कविंशेभवेत्सुखम् । पूर्वाषाढ्यांतुनवमेहनि रोगात्प्र-
मुच्यते । उत्तरासुत्वषाढासुमासंक्लिश्यत्यसंशयः ॥
अष्टौवानवमासानांततोऽस्यसुखामादिशेत् । श्रवणे-
नाष्टरात्रंतुक्लिश्यतेज्वरपीडितः ॥

अर्थ—ज्येष्टानक्षत्रमें पांचवेदिनमृत्युहो, यदिवचजावेतो १२ दिनमें सुखहोवे । मूलनक्षत्रमें प्रगटहुआज्वर दशरात्रि पर्यंतरहता है । यदिदशरात्रिमें रोगनहटेतो-२१ दिनमे सुखी होय । पूर्वाषाढ नक्षत्रमें यदि रोग प्रगट होवे तो नौमेदिन अच्छा होय । उत्तराषाढमें रोगोत्पन्न हुआ १ महिने पर्यंत कष्टकारक जानना फिर आठ महिनेमें या नौ महिनेमें रोग शांति होवे और श्रवण नक्षत्रमें यदि-ज्वर प्रगट होवे तो वहरोगी आठरात्रि पर्यंत क्लेशितरहता है ॥

मासत्रयंधनिष्ठासुशतभिक्दिनविंशकम् । नवरात्रंपूर्वा-
भाद्रे उत्तरापंचकत्रयम् ॥ दशाहंरेवतीपिडामुच्यतेव्या-
धिभिस्ततः ॥ दशरात्रंधनिष्ठासुज्वरोभवतिदेहिनाम् ॥
षड्रात्रात्द्वादशाहंवाभवेच्छतभिषासुच ॥ तथाभाद्रप-
देस्वेवपूर्वासुमरणंध्रुवम् ॥ उत्तरासुभवेन्मोक्षोदिवसेऽर्द्ध-
चतुर्दशे ॥ चतुरात्राष्टरात्रंवारेवत्यांवर्त्ततेज्वरः ॥

अर्थ—धनिष्ठा नक्षत्रमें प्रगटहुआ रोग तीनमहिने रहता है—शतभिषानक्षत्रमें । वीसदिन—पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रमें उत्पन्नहुआ रोग नौरात्रिरहता है—उत्तराभाद्रपदमें प्रगटहुआ रोग १५ दिनरहता है । रेवती नक्षत्रमें प्रगटहुई पीडा दशदिन रहकर नष्टहोती है । धनिष्ठानक्षत्रमेंज्वररोग होयतो दशरात्रिरहे । शतभिषा नक्षत्रमें छःरात्रि अथवा बारा रात्रिरहे पूर्वाभाद्रपदमें ज्वर प्रगटहोयतो रोगीमरे । उत्तरा भाद्रपदमें ७ दिनरहे । एवं रेवतीनक्षत्रमें यदिज्वर होवे तो चाररात्रि अथवा आठरात्रि पर्यंत रोग रहता है ॥

## अश्विनी

अश्विन्याःप्रथमेपादेनवरात्रंप्रकीर्तितम् । द्वितीयेपूर्ण-

माख्यातंतृतीयेसप्तवासराः । संप्रोक्तावासराः पूर्णाः चतुर्थेह्येकविंशति ॥

अर्थ—अवनक्षत्रके प्रत्येकचरणका फल कहते है । तहां अश्विनी नक्षत्रके प्रथम पादमें रोग होवे तो नौरात्रिरहे । दूसरेमें होयतो मृत्युकरे । तीसरेपादमें होयतो सातदिनरहे और अश्विनीके चतुर्थपादमें हुआ रोग २१ दिनपर्यंत रहता है ॥

## भरणी

भरण्यांप्रथमेपादेचैकादशदिनानितु । द्वितीयेचत्वारिंशत्तृतीयेपूर्णमादिशेत् ॥ चतुर्थेरुद्रसंख्याकंदिनसंख्याप्रकीर्तिता ॥

अर्थ—भरणीके प्रथमपादमें हुआ रोग ११ दिनरहे—दूसरेमें ४० दिन—तीसरेमें मृत्यु और चतुर्थपादमें होवेतो १० दिन रोगरहता है ॥

## कृत्तिका

कृतिका नक्षत्रके प्रथम चरणमें पित्तजन्यज्वर उत्पन्न होवेतो वो दशदिनरहे । दूसरे चरणमेंभी दशहीदिन रहे । तीसरेचरणमें होयतो पाँच दिनरहे ॥

## रोहिणी

रोहिणीके प्रथम चरणमे ९ रात्रिपीडारहे । दूसरे चरणमें १८ दिनरहे । तीसरेचरणमें दशरात्रिपीडा जाननी ॥

## मृगशिर

मृगशिरनक्षत्रके प्रथम चरणमें ७ दिनपीडारहे । दूसरे चरणमें १२ दिनरहे । तीसरेचरणमें २९ दिनपीडारहती है ॥

## आर्द्रा

आर्द्रा नक्षत्रके प्रथमचरणमें १९ दिन । दूसरे चरणमें १२ दिन । और तीसरे चरणमें पीडाहोय तो रोगीकी मृत्यु होय ॥

## पुनर्वसु

पुनर्वसु नक्षत्रके प्रथम चरणमें ज्वर होयतो १५ दिनरहे । दूसरेमें ७ दिन और तीसरे चरणमें होयतो २९ दिन पीडारहे ॥

## पुष्य

पुष्य नक्षत्रके प्रथम चरणमें ७ दिनपीडारहे । दूसरेमें २० दिन और तीसरेमें २१ दिनपीडा रहती है ॥

## अश्लेषा

अश्लेषाके प्रथम चरणमें ज्वर होयतो तीन महिने रहे, और रोगी कष्टसें जीवे । दूसरेमें-तथा तीसरेमें रोगीकी मृत्यु होय ॥

## मघा

मघाके प्रथम चरणमें ७ रात्रिपीडारहे । दूसरे चरणमें २७ दिन और तीसरे चरणमें ३० दिन पीडा रहती है ॥

## पूर्वाफाल्गुणी

पूर्वा फाल्गुणीके प्रथम चरणमें ९ रात्रिपीडा रहती है । दूसरेमे १२ दिन और तीसरे चरणमें १ महिनेके वाद रोगी मरे ॥

## उत्तराफाल्गुणी

उत्तरा फाल्गुणीके प्रथम चरणमें १४ दिनपीडारहे । दूसरेमें सातरात्रि और तीसरे चरणमें ९ दिनपीडारहती है ॥

## हस्त

हस्त नक्षत्रके प्रथमचरणमें रोग होवेतो ७ रात्रिरहे । दूसरेमें होयतो ४ दिनरहै और तीसरेमें होवेतो ९ दिनपीडा रहती है ॥

## चित्रा

चित्राके प्रथमचरणमें व्याधि होनेसें रोगीकी मृत्युहोवे । दूसरे चरणमें तीन महिनेरोगीरहे और तीसरेचरणमें १३ दिनरोगरहता है ॥

## स्वाति

स्वातिके प्रथम चरणमें रोग होवेतो २७ दिनरहे । दूसरे चरणमें वीस दिन और तीसरे चरणमें रोगहोयतो मृत्युहोय ॥

## विशाखा

विशाखाके प्रथम चरणमें व्याधि होनेमें ४८ दिनरहे । दूसरे चरणमें होयतो बारहदिन रहे, और तीसरे चरणमेंभी १२ दिन पीडारहती है ॥

## अनुराधा

अनुराधाके प्रथम अंशमें पीडा उत्पन्न होयतो ७ दिन। दूसरेमें १९ दिन और तृतीय चरणमें ६४ दिन पीडारहती है ॥

## ज्येष्टा

ज्येष्टाके प्रथम चरणमें रोग होनेसें तीन महिने पीडा रहे। दूसरेमें १६ दिन तथा तीसरेमें मृत्युहो ॥

## मूल

मूलनक्षत्रके प्रथम द्वितीय तृतीय चरणमे रोगहोनेसें १९ दिन पर्यंत पीडा रहती है ॥

## पूर्वाषाढ

पूर्वाषाढके प्रथम चरणमें रोग होनेसें ३ महिने पीडारहे। दूसरेमें १३ दिन और तीसरे चरणमें मृत्यु होवे ॥

## उत्तराषाढ

उत्तराषाढ नक्षत्रके प्रथम चरणमें रोग होयतो १९ दिनरहे। दूसरेमें १२ दिन और हे महामुने! तीसरेचरणमें रोग होयतो २० दिनरोग रहे॥

## श्रवण

श्रवणके प्रथम चरणमें ७ दिन-दूसरेमें २० दिन, और तीसरे चरणमें १३ दिनरोग रहे है ॥

## धनिष्ठा

धनिष्टाके प्रथम चरणमें २० दिन रोगरहे। दूसरे चरणमें ६० दिन। तथा तीसरे चरणमें रोगहोवेतो १६ दिनरहता है ॥

## शतभिषा

शतभिषाके प्रथम चरणमें रोगहोवेतो १॥ महिने घोर दुखःदेवे, दुसरेमें छःमहिने और तीसरे चरणमें रोग होनेसे १६ दिन पीडा रहती है ॥

## पूर्वाभाद्रपद

पूर्वाभाद्रपदके प्रथम-द्वितीय और तृतीय चरणमें रोगहोनेसें मृत्यु होवे ॥

## उत्तराभाद्रपद

उत्तराभाद्रपदके प्रथम चरणमें रोग उत्पन्न होनेसैं १५ दिनपीडारहे । दूसरे चरणमें २८ दिनदुखरहे । और तीसरे चरणमें होनेसैं १९ दिन रोगरहता है ॥

## रेवती

रेवती नक्षत्रके प्रथम चरणमें रोग उत्पन्न होनेसैं ८ दिन पीडारहे । दूसरे चरणमें होवेतो ११ दिन दुःखीरहे और तीसरे चरणमें रोग होनेसैं १० दिन पीडारहे पश्चात् शांति होती है ॥

एवंज्ञात्वानरः सम्यक्कुर्यात्प्रशमनक्रियाम् ।
नक्षत्रस्यत्रयोभागाआत्रेयेणप्रकीर्त्तिताः ॥

अर्थ—इसप्रकार नक्षत्रके और नक्षत्रके चरणोंका शुभाशुभविचारके शास्त्रोक्त ( जो आगे कहते है ) उसशांतिकर्मको करे—यद्यपिनक्षत्रके चार चरण होते है परंतु यहाँ परआत्रेयमहर्षिने तीनही चरणका फल कहाहै चतुर्थ चरणका फल जो संपूर्ण रोगका प्रथम कहाहै वह जानना ॥

## ( अबनक्षत्रहवनकीविधिकहतेहै-तहांप्रथम )

## समिधा

आक, खैर, ढाक, बेर, नीम, दूब, छोंकरा, कुश, कांस, पीपल, बड, जटामांसी जामुन, आम, सोमवल्कल, बहेडा, चंदन, अरनी, अगरवृक्ष, कटसैरेया, सतावरी, सर्वौषधी, हलदी, दारु हलदी, ये सब होमकरनेके लिये समिधा है ॥

परंतु राज निघंटुमें सत्ताईस नक्षत्रोंके सताईसवृक्ष कहे है उनकी समिधालेनी चाहिये ॥

## गंध

चंदन, लालचंदन, गोरोचन, हरदी, गेरू, नीव, वेल, पतंग, कदंब, केशर, कस्तूरी, कपूर, श्रीपर्णी, देवदारु, पीतचंदन, पद्मास, दारुहलदी, अगर, सीमों, और ढाक येगंध द्रव्य है ॥

## फूल

कमल, वेल, तुलसी, दूब, कुश, काश, अरनी, छोकराकेपत्ते, आक, ढाक, इनके फुलले ॥

धूपदीपादि अलंकारोंसें वास्तुमंडल अलंकृत करके ईशानादिक्रमसें नवग्रहोंको स्थापनकरे। तथा नक्षत्रोंको स्थापनकरे, प्रथम सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु इनका पूजनकरके क्रमसें इनकी समिधाका हवन करे फिर समिधाओंके दही, सहत, घृत इनमें डबो २ के अश्विन्यादि नक्षत्रोंका हवन करे

तहां आककी समिधा लेकर, 'इदमश्विनो' इस मंत्रसें तथा 'विष्णोरराट' इनमंत्रोंसे-अश्विन्यादि नक्षत्रोंका हवनकरे॥

'इदंभरण्यो' और 'मधुमाध्वी' इसमंत्रसें बेरकी समिधा भरणी नक्षत्रकी शांतिके अर्थ हवनकरे॥

'कांडात् कांडात्' इस मंत्रसें नीमकी समिधा कृतिका नक्षत्रकी शांतिके अर्थ हवनकरे, एवं दूर्वा (दूब) कुशा, इनकीसमिधासे रोहिणी मृगशिर आर्द्रा-आदि नक्षत्रोकी शांसर्थ हवनकरे इसीप्रकार सबनक्षत्रोंका हवन पृथक् २ है सो शांतिसार, शांति कमलाकर, शांतिमयूप, आदि ग्रंथोंमें देखो॥

फिर घृतसें पूर्णाहुती करे और ग्रहोंको अभिषेकस्नानकरावे। फिर रोगीको भस्मस्नान और मंत्रस्नानकराय सपेद कपडे पहिनायके उसयज्ञमें बैठाल वेदोक्त मंत्रोंसें उसका मार्जन करे तथा अपामार्जनसें उसें मार्जित करे आशीर्वाद देवे। पश्चात् वह रोगी गोदान, वस्त्रदान, पृथ्वीदान आदि यथा शक्त्यनुसार करे इस प्रकार हवनकरे तो सर्वग्रह-नक्षत्र और योगोंकी शांति होवे॥

# ज्वररोगका कर्मविपाक

*यथाशास्त्रंतुनिर्णीतं यथाव्याधिचिकित्सितः।*
नशमंयातियोव्याधिः सज्ञेयः कर्मजोबुधैः॥

अर्थ—जिसव्याधिका शास्त्रानुसारनिर्णयकर उसव्याधिके अनुसार चिकित्साकरी फिरभीन शांतिहोवे उस व्याधिको पंडितजन कर्मज जाने॥

जन्मान्तरकृतंपापंव्याधिरूपेणबाधते।
तच्छांतिरौषधैर्दानैःजपहोमसुरार्चनैः॥
तस्मात्कर्मविपाकोक्तप्रायश्चितादिसाधनैः।
पूर्वपापक्षयात्क्षिप्रंव्याधिः शाम्येदसंशयम्॥

अर्थ—जन्मांतरमें कियाहुआ पाप इसदेहमें रोगरूपहोकर दुखदेता है उसकी शांति औषधपान–दिव्योषध धारण–दानकरना–जप–होम–और देवता ओंका पूजन इन कारणोंसें होती है। इसीसें कर्मविपाकोक्त प्रायश्चित्तादि साधनों करके पूर्वजन्मोपार्जित पापोंके शांतिहोनेसें रोग निःसंदेह शीघ्र शमनहो जाते है। इसी सें पूर्वजन्म जनितपाप परिपाकसें उत्पन्न ज्वरके हेतु–और उनका यत्न कहते है॥

येसंपूर्ण प्रायश्चित्त रोगानुसार वडा और छोटाकरे और इनमें वित्तशाठ्यनकरे अर्थात् जिसकी दशरुपे लगानेकीसामर्थ्य है यदिवो एकरुपा या दो रुपाही लगावे तो वोवित्तसाठ्य कहलाता हैं ऐसाकरनेसे वो फलीभूत नहीं होता है। और न रोग शमनहो इसवास्ते अपनी सामर्थ्यके अनुसार प्रायश्चित्तकरे। और जो असामर्थ्य है उसको ऋणलेकर प्रायश्चित्तनहीं करना किंतु अपनी देहसें जो बनसके उसको करे जैसें विष्णुसहस्रनामका पाठ, गायत्रीजप, और मनमें परत्माका ध्यानआदि॥

## सर्वज्वरेकर्मविपाकमाह

देवस्वहरणाच्चैव जायते विविधो ज्वरः। ज्वरो महा-
ज्वरश्चैव रौद्रो वैष्णवएव च॥

अर्थ—अव सर्वज्वरका कर्मविपाक कहते है। जैसे देवद्रव्य हरण करनेसें अनेक प्रकारका ज्वर प्रगट होता है उन्होंमें उष्णज्वर शिवसें, और महाज्वर-(शीतज्वर) विष्णुभगवान्सें, प्रगट हुआ है॥

## अथास्यशांति

ज्वरे रुद्रजपं कुर्यान्महारुद्रं महाज्वरे।
महारुद्रं जपेद्रौद्रे वैष्णवे तद्द्वयं जपेत्॥

अर्थ—ज्वरके दूरकरनेको रुद्रजप, और महाज्वर दूरकरनेको महारुद्रजप कराना चाहिये। रुद्रज्वरवालेको महारुद्र और वैष्णवज्वरमें रुद्र और महारुद्रदोनोको जप करावे॥

## गार्ग्यः

ये पुनः पूर्वजन्मनि क्रूराः पिशुनाः ततस्तेऽन्य जन्म-
नि सततं ज्वरिणः स्युः॥

अर्थ—गर्गऋषिका पुत्रलिखता है कि जो मनुष्य पूर्वजन्ममें क्रूर तथा पिशुन (चुगली करनेवाले ) होते हैं, वो उस पापकरके इसजन्ममें सततज्वरी होते है

## शीतज्वरकाकर्मविपाक

ये पुनः क्रूरकर्माणः पापाः पिशुनचेतसः ।
ते भवेयुः सदाशीतज्वरवंतस्तदेनसा ॥

अर्थ—जो कोई क्रूरकर्मकरनेवाले, पापी, चुगलखोर है वो पुरुप सदैव शीतज्वरसे पीडित होते है ॥

## उसकाशमन

शांतयेऽयुतसंख्याकं प्रकुर्यात्प्रयतो जपं॥ जातवेदस- मंत्रेण ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥ सुरामांसोपहाराद्यै- र्बलिः सर्वत्र शस्यते ॥ सहस्रकलशस्नानं शतभोज- नमेव च ॥ शीतज्वरे पुनः कुर्यादभिषेकं हरेर्बुधः ॥

अर्थ—ऊपरकहेहुए शीतज्वरकी शांतिकरनेको ( जातवेदस ) इस मंत्रको दशहजार जप करावे, और ब्राह्मण भोजन करावे, अथवा मद्यमांस इनकीवलिदानदे, किंवा सहस्रकलशाभिपेक करे, और १०० ब्राह्मणोंको भोजनकरावे, अथवा श्रीविष्णुभगवान्का अभिपेक करावे ॥

सहस्रकलशस्नानं रुद्रेणेशस्य कारयेत् ।
ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्याजपेद्वै जातवेदसं ॥

अर्थ–अन्यत्रभी लिखा है कि शिवकारुद्रीसें सहस्र कलशाभिपेक करावे, तथा यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावे, और 'जातवेदस' इस मंत्रका जप करावे ॥

## ज्वरवालेकेदैविकउपचार

वेदानां श्रवणं हितस्यचरणं विप्रस्यसंतर्पणं कृष्णस्य- स्मरणंशुभस्यकरणंद्रव्यस्यसंतर्पणं ॥ अश्वत्थभ्रमणं- सुरत्नधरणंदीनस्यसंरक्षणं हन्यादष्टविधंज्वरंकुमुदि- नीनाथोयथोग्रंतमः ॥

अर्थ—अब ज्वरवान्को दैविक यत्न कहते है जैसे कि–वेदश्रवण, हिताचर-

ण, ब्राह्मणभोजन, कृष्णकास्मरण, शुभकार्य, द्रव्यदान, पीपलकीप्रदक्षिणा, उत्तम २ रत्नोकाधारण, तथा दीनजनोंका पोषण, ये उपचार अष्टविध ज्वरोंको जैसें चन्द्रमा घोर अंधकारका नाश करता है उसी प्रकार नाश करे ॥

सहस्रनेत्रस्य सहस्रबाहोः सहस्रवक्त्रस्य सहस्रमूर्ध्नः ॥
सहस्रपादस्य सहस्रनाम्नो सहस्रनाम्नां पठनं ज्वरघ्नं ॥

अर्थ—नेत्र, बाहु, मुख, मस्तक, पैर, हस्तादिअंग, तथा उसीप्रकार नाम ये जिसके अनेक है ऐसे देवका सहस्रनाम ( विष्णुसहस्रनाम ) पाठ करेतो ज्वर दूर होवे ॥

गणेश्वरो वा गरुडेश्वरो वा गौरीश्वरो वा दिवसेश्वरो वा
महेश्वरो वा कुलदैवतं वा तत्पूजनं तज्ज्वरिणां प्रशस्तं ॥

अर्थ—गणेश, विष्णु, शिव, गौरी ( दुर्गा ) सूर्य अथवा कुलदेव इनका पूजन ज्वरवालेको हितकारी है ॥

मंगलेपुचकार्येपुसततंकोपवान्नरः॥उष्णज्वराभिभूतः
स्यात्तस्यपापापनुत्तये॥सहस्रकलशस्नानंरुद्रेणेशस्य-
कारयेत् ॥ ब्राह्मणान्भोजयेच्छत्तयाजपेद्वैजातवेदसम् ॥

अर्थ—जो प्राणी मंगलकार्य ( विवाहादिक ) में क्रोध करता है वो प्राणी उष्ण ज्वरवाला होता है उस [illegible] रकरनेको [illegible] सहस्रकलशाभिषेक करे और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन [illegible] और " [illegible] " इसमंत्रका जपकरा-

सुवर्णंचयथाशक्त्याब्राह्मणायनिवेदयेत् ॥ तस्मैहूतव-
तेवृत्तश्रुतशीलायसत्कृतम् । मंत्रेणानेनविधिवत्पूज-
यित्वाज्वरीनरः ॥

मंत्र

महेश! देवदेवेश! देवदेव! परात्पर! ॥ कुंभेनानेनदाने-
नज्वरंक्षिप्रंविनश्यतु ॥ एकांतरंसन्निपातंतृतीयकच-
तुर्थकौ । पाक्षिकंमासिकंचैवसांवत्सरिकमेवच॥नाश-
येतंममक्षिप्रंवासुदेवमहेश्वरौ ॥

अर्थ—नवीन मिट्टीका कलश जो फूटा और जोजरा न होवे तथा पक्का होय और रंगमें लाल होवे उसको चावलोंके ढेर पर स्थापन करे चावल पांच द्रोण अर्थात् दो मन होवे परंतु ( यह धनाढ्यके वास्ते आज्ञाहै गरीबको यथा शक्ति लेना ) वो चावल बिने और फटके हुए शुद्ध होने चाहिये । फिर उस कलसको सपेद वस्त्रसैं लपेटके उस घडेमें सहत घी, गुड, खांड, अथवा तैल इनमें किसी एकको भरे यदि इन वस्तु ओंसैं किसीके भरनेकी सामर्थ्य न होवे तो स्वच्छ जलसै ही भरदेवे पश्चात् उसका सपेद फूल, फल गंध, धूप, दीप नैवेद्यादिसै पूजनकर पूर्वोक्त विधिसैं हवनकरे उसमें समिधा घी और चरूको होमें पश्चात् उस हवन करनेवाले ब्राह्मणको कि जो वेद और वेदार्थको जानता हो तथा जिसका उत्तम आचार उसको यथा शक्ति इसमंत्रमें उसघटका और सुवर्णका दान करे उस मंत्रका यह अर्थ है कि हे महेश! हे देव देवश! हे देवोंकेदेव! हे परात्पर! इस कुंभ दानकरके मेरा एकाहिक, सनिपातज्वर, तिजारी, चौथैया, पद्रहदिनमें आने वाला महिनेमें आनेवाला एव वर्ष दिनमें आनेवाले सब ज्वरोंको हे वासुदेव महेश्वर शीघ्र नाश करो॥

अन्यच्च

अपामार्जनकंस्तोत्रंहनुमत्कवचादिकं ।
पठेज्ज्वरीचसततंसर्वज्वरनिवृत्तये ॥

---

१जो ब्राह्मण व्याकरणादिभी पढाहो, और धर्मज्ञहो, उसको दानदे । किंतु मेरै पावा-पुरोहित-दुराचारी, केवल सडमुसड, सुगामदी निरक्षर भट्टाचार्य, परस्त्री गामी, आदिपापीको दाननदे, इनको दानदेनामानौ आपको नरकका महमान बनानाहै ॥

अर्थ–अन्यत्र ग्रंथोंमें लिखाहै कि ज्वरवाला रोगी ज्वर दूरकरनेके लिये अपामार्जनस्तोत्र, हनूमानकवच, और आदिशब्दसें नारायणकवच, विष्णुसहस्रनामादि का पाठ करे यदि अपनी सामर्थ्य न होवे तो अन्य ब्राह्मणको अपने पास विठा कर पाठकरावे एवं दुर्गापाठ, शतचंडी, सहस्रचंडी, आपदुद्धारका पुरश्चरणभी करावे परंतु हम तो जाने सर्वोपर वेदपाठ और वेदमंत्र ( ञ्यंवकंयजामहे' ) इत्यादिका जपकराना उत्तम है, और जितनी अपनी सामर्थ्यहो मनसें भगवत्का स्मरणकरे क्यो कि लिखा है' हरिस्मृतिःसर्वविपद्विमोक्षणम्,

शिष्य––अब आप ज्वर रोग की उत्पत्ती हमसें कहो ॥

गुरु––ज्वर की उत्पत्ती चरकमें इसप्रकार लिखी है ॥

## ज्वरोत्पत्ति

द्वितीये हियुगे शर्वमक्रोधव्रतमास्थितः । दिव्यं सहस्रं वर्षाणामसुराअभिदुद्रुवुः ॥ तपोविघ्नाशनाः कर्त्तुन्तपोविघ्नंमहात्मनाम् । पश्यन्समर्थश्चोपेक्षाश्चक्रेदक्षः प्रजापतिः ॥ यज्ञेनकल्पयामासप्रोच्यमानः सुरैरपि । ऋचः पशुपतेर्याश्च शैव्यआहूतयश्चयाः ॥ यज्ञसिद्धिप्रदास्ताभिर्हीनंचैवसइष्टवान् ।

अर्थ–– दूसरे ( त्रेता ) युगमें श्री शिव अक्रोधव्रतमें स्थित हो दिव्यहजारवर्ष तपकरनेका प्रारंभकरा उससमय महात्माओंके तपोविघ्न करनेवाले तपविघ्न ही है आहारजिनका ऐसे दैत्य चान्योतरफसें श्रीशिवके सन्मुख दोडे, उससमय श्रीशिव उनके मारनेको समर्थभी थे परंतु अक्रोध व्रतमें रहनेके कारण देखके उनकी उपेक्षा करदीनी । इसीकालमें दक्षप्रजापति देवताओंके कहने परभी पशुपति ( शिव ) मंत्र और शिवकी आहूती जो कि यज्ञकी सिद्धीकरने वाली उन करके रहित यज्ञ करता हुआ ॥

अथोत्तीर्णव्रतोदेवोबुद्धादक्षव्यतिक्रमम् । रुद्रोरौद्रंपुरस्कृत्यभावमात्मविदात्मनः ॥ सृष्ट्वाललाटेचक्षुर्वैदग्ध्वातानसुरान्प्रभुः। बाणंक्रोधाग्निसंतप्तमसृजच्छत्रुनाशनम् ॥ ततोयज्ञःसविध्वस्तोव्यथिताश्चदिवौकसः । दाहव्यथापरीताश्चभ्रांताभूतगणादिशः ॥ अथे

श्वरंदेवगणाः सहसप्तर्षिभिर्विभुम् । तमृग्भिरस्तुवन् यावच्छिवेभावेशिवःस्थितः ॥

अर्थ—जब दसहजार वर्षके अक्रोधव्रतसें निवृत्त हुए और दक्षके करेहुए अपराधको जानके श्रीरुद्रभगवान् अपने रौद्रभावको धारणकर ललाटमें स्थित तीसरे नेत्रका स्पर्शकर उसनेत्रसे निकली हुई अग्निसें जितने दुष्ट दैत्य तपके विघ्नकरने वाले उनसबको भस्म करते हुए। फिर उस क्रोधाग्नि करके संतप्त एक बाण शत्रुनाशक बनायके उस दक्षके मारनेको चलाते हुए, उसबाणनें उसयज्ञको विध्वंसकर संपूर्ण देवताओंको व्याकुलकरा। और प्राणीमात्रोंको तथा दिशाओंको दाहकी पीडासे व्यथितकरा—उससमय सबदेवगण और सप्तर्षि मिलकर सर्व सामर्थ्ययुक्त—ईश्वरश्रीशिवकी ऋग्वेदके मंत्रोंसें प्रसन्न होने पर्यंत स्तुतिकरते हुए ॥

शिवंशिवायभूतानांस्थितंज्ञात्वाकृताञ्जलिः । क्रोधाग्निरुक्तवान्देवमहंकिंकरवाणिते ॥ तमुवाचेश्वरःक्रोधंज्वरीलोकेभविष्यसि । मनुष्याणांचजन्मादौनिधनेचमहत्तमः ॥

अर्थ—प्राणियोंके कल्याणार्थ श्रीशिव कल्याणरूपमें स्थित हुएको जान वही श्री शिवका क्रोधाग्नि हाथजोडकर बोला कि हेदेव! अबमें क्या आपकी आज्ञाकरूं। उसके वचन सुनकर शिव उसअपने क्रोधसें बोलेकि तू आजसें संसारमें ज्वर नामकरके प्रसिद्ध होगा। और मनुष्योंके जन्म समय और मरनेके समय तूहीरहाकरेगा अर्थात् तेरेही प्रतापसे प्राणियोंका जन्म—मरण होवेगा ॥

तथा

मखेमखभुजांगणंकिलनिमंत्र्यदक्षःपुरा चराचरगुरुंहरं मदभरादवाजीगणत् । ततस्तदलिकेक्षणादतिरुपारुणात्पिंगलस्त्रिमौलिरुदभूद्गणः सपदिवीरभद्राभिधः । भृशंसचपिशंगरुक्त्वचमरेमृगस्योल्लसत्रुचंपरिदधज्ज्वलत्तनुरनुच्चजंघास्त्रयः । स्फुरत्पृथुतरोदरस्त्रिपुरवैरिणंप्रांजलिर्जगादकरवाणिकिंतमिदमुग्रमुग्रोवदत् ॥

अर्थ—अब ग्रंथांतरमें ज्वरोत्पत्ति कहते है कि, पहले दक्षप्रजापति अपने यज्ञमें सब देवताओंको निमंत्रण (नौता) कर चराचरके गुरुश्रीशिवका अभिमा-

नकरके तिरस्कारकर्ताहुआ, उससमय श्रीशिवके असंतक्रोध करके लाल २ तीसरे नेत्रसैं पीलेरंगका, और तीनमस्तकवाला, वीरभद्रगण तत्काल प्रगटहुआ। पीलेनेत्र, वाघंवरको ओढे हुए, अग्निकी कांतिको धारणकर्त्ता—छोटी देह, और तीनपैर, बडाभारी उदर जिस्का, ऐंसावो वीरभद्रगण त्रिपुरके वैरी शिवके सन्मुखहाथ जोडकरवोला कि हेप्रभो! मेंक्याकरूं तव उस घोर रूपवालेसैं घोर स्वरूपश्रीशिव यह वोले॥

सवंकुरुनिरुत्सवंसइतिरुद्रतोनिर्दयंनिशम्यसम-
शीसमप्रथममेववान्हित्रयम्। मरुद्गणमदुद्रवद्भव-
मतुष्टवद्यज्विनोमुनीनलमनीनमद्दमनभीतसन्नस्वनान्

अर्थ—कि दक्षके यज्ञोत्सवको विध्वंसकर इस प्रकार रुद्रसैं निर्दय आज्ञाको सुन प्रथम दक्षके यज्ञमें जो तीन अग्निहै उनको शांति करता हुआ। उस समय यज्ञमें आए अेसे मरुद्गणोको भजाता हुआ, श्रीशिवको प्रसन्न करता, दमनभयसैं रुके श्वासजिनके यज्ञकराने वाले मुनीश्वरको नीचा करता अर्थात् जीतता हुआ वीरभद्र श्रीशिवके सन्मुख प्राप्त हुआ॥

इदंतमवदत्स्थितंपुररिपुःपुरस्ताद्यतोऽखिलंहविरिहक्तो
झटितिजीर्णमेवत्वया। अतोऽस्यजगतोज्वरोभवततःप्र
भृत्युच्चकैरयंज्वरयतिस्फुरद्विविधनामधेयैर्जगत्

अर्थ—इसमकार वैरीको जीतके सन्मुख खडे हुए उस वीरभद्रसैं श्रीपुररिपु (महादेव) वोले कि तैने शीघ्र इस यज्ञकी सामिग्रीको जीर्णकरी अर्थात् पचागया इसीसैं तू इसजगतमें ज्वरनामकरके विख्यात हो; वस उसी दिनसैं यह ज्वर अनेक नामोंकर इस जगतको अपने वेगसैं ज्वरवान् करता है॥

ज्वरोनरिसपाकलालसहरिद्रतापेश्वराःगजोष्ट्रम
हिपाश्वगोष्वथयथाक्रमंकीर्त्तिताः। तथेन्द्रमदखोर
कर्पभकपक्षपाताह्वयाःसमस्ततिमिरासभांवुजखगे
ष्वलर्कशुनाम्

अर्थ—तहां मनुष्योंके जो तापहोताहै उसको ज्वर अेसा कहते है। हाथियोंमें इस ज्वरको पाकल कहते है। ऊंटोंमें इसको अलस कहते है। भैसाओंमें इसकी हरिद्र संज्ञाहै। घोडोंमें ताप कहलाताहै। गौओंमें ईश्वरनाम करके विख्यातहै सव मच्छलियोंकी जातिमें इन्द्रमद कहलाता है। गधाओंमें खोरक नाम करके

विख्यात है। कमलोंमें इसको ऋषभक नामसें पुकारते है। सब पक्षियोंमें अर्थात् पखेरुओंमें पक्षपात नामसें पुकारते है। और कुत्तोंमें इसज्वरको अलर्कनामक कहते है.

मृगामयाख्योमृगजातिषूक्तःप्रलेपकोऽजाविषुचूर्ण
कोन्ने। उष्णीषसंज्ञःससरीसृपेषुपर्वाप्रसूनेषुचनीलिकासु

अर्थ—वही ज्वर मृग ( हरिणों ) की जातिमें मृगामय कहलाताहै। बकरी और भेडोंमें प्रलेपकनाम करके विख्यातहै। अन्न (गैंहू, चना, चावल आदि धान्यों) में चूर्णक कहलाताहै। सर्पोंमें उष्णीसनाम ज्वरकी संज्ञाहै। पुष्प ( फूलों ) में पर्वा नामसें कहाताहै। और जलमें इसकी नीलिका सज्ञाहै॥

कुंकुमकोगोधूमेज्योतिष्कस्त्वौषधीषुपर्वासु।
ग्रंथिकसंज्ञोव्रततावित्यभिधानैर्ज्वराः कथिताः॥

अर्थ—गैंहूधान्यमें कुंकुम नामज्वर की सज्ञाहै। औषधियोंमें इसकी ज्योतिष्कसंज्ञा है। वेलोंमें इसकी ग्रंथिक सज्ञा है। इस प्रकार नामों करके ज्वरकहे है

भूमेरूषरकः प्रोक्तोवृक्षाणांकोटरः स्मृतः॥

अर्थ—पृथ्वीमें ऊपरनामक ज्वर कहलाता है अर्थात् जिसपृथ्वीमें खारपैदा होता है वो ज्वरग्रसित पृथ्वी जाननी। एवं वृक्षोंमें कोटरकहलाता है अर्थात्–वृक्षोंमें खोंतरका विकार है॥

## ज्वरकेआठभेद

वीभत्सस्त्रिशिराज्वरोथकपिलोभस्मप्रहारस्त्रिपात्
पिंगाक्षोऽथमहोदरोऽथपरतोरौद्रोज्वलद्विग्रहः
शंभोः श्वाससमुद्भवाभयकरादक्षक्रतोर्ध्वंसका
घोराघर्घरनादिनोमुनिवरैः प्रोक्ताज्वरास्तेऽष्टधा

अर्थ—वीभत्स, त्रिशिरा, कपिल, भस्म–प्रहार, त्रिपाद, पिंगाक्ष, महोदर, और ज्वलद्विग्रह ये श्रीशिवकी श्वाससे प्रगट, भयकारी–दक्षयज्ञ विध्वंसक घोर रूपवाले, और घर्घर नादकरनेवाले ऐसे आठ ज्वर मुनिवरोंने कहे है॥

## वीभत्सज्वरकास्वरूप

बीभत्सोरुधिराणांरुबरवृतोगंधास्यमालाधरो।

**रक्ताक्षः कृमिसंकुलस्त्रिनयनोदुर्गंधिपूर्णोऽनिशम् ॥**
**नग्नोरुद्रसमुद्भवोऽतिबलवान्कोपीजगद्घातकः ।**
**कृष्णाङ्गोमलिनोमदांधदमनः पूष्णोर्द्विजध्वंसकः ॥**

अर्थ—रुधिरसे रंगे हुए वस्त्रोंको पहने, रुधिरकी गंधआवे, मुंडमालाको धारण करे, लालनेत्र, कृमिसे संकुलदेह, तीननेत्रवाला, और दिन रात्रिदुर्गंध जिसकी देहसे आवे, नग्न, और अतिवली, कोपयुक्त, जगत्काघातक, काली देहका, मलिनस्वरूप, मदमस्तोंको दमनकर्त्ता, और पूषा देवताके दांतोंको तोड़नेवाला ऐसाश्रीशिवसे उत्पन्नहुए वीभत्सज्वरका स्वरूप है ॥

## त्रिशिराज्वरकास्वरूप

**अभूद्दक्षविध्वंसको रुद्रकोपात्रिशीर्षः त्रिपान्नंदनेत्रोऽतिकायः॥चलज्जिव्हयासृक्कणीलेलिहंतो वृहद्भालजंघारुणाक्षोऽतिक्रोधी॥**

अर्थ—श्रीरुद्रकेकोपसे दक्षका विध्वस करने वाला तीनशिरका, तीनपैरका, नौनेत्रका, बडीदेहवाला, चलायमानजीभसे होटोंके प्रांतोंको चाटताहुआ, ल- वेतालके समान पीडरीवाला, लालनेत्रका, अत्यतक्रोधी, ज्वरप्रगटहुआ इसका त्रिशिरा नाम है ॥

## कापिलाख्यज्वरकास्वरूप

**अभूद्रुद्रकोपाज्ज्वरः कापिलाख्योमुखाङ्गारपुञ्जोद्गिरन्तोऽतिकायः।मदाघूर्णिताक्षः स्फुरत्ताम्रकेशोमहामेघगर्जोमनोहर्पहर्त्ता ॥**

अर्थ—श्रीरुद्रके कोपसे जो कापिलज्वर हुआ है वो अत्यंत ऊंची देहका मुखसे अंगोरोंके पुंजोंकोउगलता, मदसे चढे हुए नेत्र, तांमेके समान, मकादा वाले वाल, घोरमेघकीगर्जनावा करनेवाला और मनकी प्रसन्नताका नाशकरे ॥

## भस्मविक्षेपकज्वरकास्वरूप

**अभूद्भस्मविक्षेपकोरुद्रकोपान्महाट्टाट्टहासोमुहुर्जृंभमाणः ॥ चलत्सप्तजिव्हः करालोग्रदंष्ट्रः स्फुरत्तप्तताम्रारुणश्मश्रुकेशः ॥**

अर्थ—श्रीरुद्रके कोपसैं एक भस्मविक्षेपक ज्वरप्रगटहुआ वह घोर अट्टाट्टहासका करनेवाला, वारंवार जंभाईकोलेताहुआ, और चलायमान सातजीभ, विकराल उग्रडाढावाला, और प्रकाशमान तपेहुएतामेंके समान लाल हड्डी और केशवाला ऐसा जानना ॥

## त्रिपादज्वरकास्वरूप

त्रिपाद्रुद्रकोपाद्बभूवारुणाक्षो भृगोः श्मश्रुविध्वंसकस्तब्धकर्णः ॥ ज्वरोदीर्घकायोमुहुः श्वासकर्ता रणेनृत्यमानोङ्गदाहीतृषार्त्तः ॥

अर्थ—रुद्रके कोपसैं तीन पैरका ज्वरप्रगटहुआ जिसके लालनेत्र और खडेहुएकान दीर्घदेहवाला-वारंवार श्वासको छोडनेवाला तथा संग्राममें नाचनेवाला अंगोंमें दाहका करनेवाला-और प्याससें व्याकुल-तथा भृगुऋषिकी डाढीका उखाडने वाला जानना ॥

## पिङ्गाख्यज्वरकास्वरूप

अभूद्वीरभद्रेश्वरादुत्कटास्योज्वरपिङ्गनेत्रोऽल्पजंघोऽग्निवर्णः ॥ तृषार्तोद्विजिव्होनृसिंहद्वितीयश्चलत्तीव्रकेशः कृशः शुष्कमांसः ॥

अर्थ—वीरभद्रेश्वरसै टेढे मुखका, पीलेनेत्रवाला, छोटी २ पींडरीवाला, अग्निकेसमान लालवर्ण, तृषासै व्याकुल, दोजीभमानो दूसरानृसिंहही है, चलायमान तीव्र वालोंवाला, कृशदेह, और सूखे मांसवाला, ऐसा पिंगनेत्रज्वर प्रगट हुआ ॥

## महोदरज्वरकास्वरूप

वभूवातिदीर्घोदरोलंबकर्णोज्वलदग्निरूपश्चलद्रक्तनेत्रः ॥ तृषाश्वासजृंभान्वितांगप्रमर्दोभटेशोज्वरोरक्तवर्णः प्रमत्तः ॥

अर्थ—श्रीशिवसैं एक वडेपेट और लंबेकानका प्रज्वलित अग्निके समानरूप, चंचल लालनेत्र तृषा श्वास जृंभाकरके युक्त, अंगोंका तोडनेवाला, योद्धाओंकाराजा, तथा लाल वर्णका और मतवाला महोदरज्वर जानना ॥

## ज्वलद्विग्रहज्वरकास्वरूप

ज्वलद्विग्रहोमुक्तकेशश्चलद्भ्रूस्त्रिशूलासिहस्तोभुजंगे-

शपाशः॥ज्वरेशोऽतिवीर्योहरश्वासजातः कृशः शुष्कमांसोबलीभैरवेशः ॥

अर्थ—श्रीशिवजीके श्वाससें प्रगट अग्निसमान देहवाला, खुलेहुएबाल, चलायमान भ्रकुटी, त्रिशूल, तलवार, सर्प, और फांसका धारण करनेवाला, सवज्वरोंका राजा, अति पराक्रमी, कृशदेह और शुष्कमांसका बलवान् भयानकोंमेंभी श्रेष्ठ, ऐसा ज्वलद् विग्रह ज्वरका स्वरूपजानना ॥

## सुश्रुतेऽपि

रुद्रकोपाग्निसंभूतः सर्वभूतप्रतापनः त्रिपादभस्मप्रहरण त्रिशिराः सुमहोदरः ॥ वैयाघ्रचर्मवसनः कपिलोज्ज्वलविग्रहः । पिंगेक्षणोह्रस्वजंघो वीभत्सोवलवानयम् ॥ पुरुषो लोकनाशार्थमसौ ज्वर इतिस्मृतः ॥

अर्थ—ये आठज्वर जो हंसराज ग्रंथमेंलिखे है उनका मूलकारण यह सुश्रुतका वाक्य है । अर्थात् इसीके नामोंको लेकर हंसराजकविने अपनी कविता शक्ति दिखलाई है वास्तवमें ज्वरएकही है । तहांरुद्रकोपाग्निसे प्रगट, सर्व प्राणियोंको तपानेवाला, तीनपैरका, भस्मप्रहरण, अर्थात् भस्महेति शस्त्रकाप्रहार करता, तीनमस्तक, बडेभारीउदरवाला, व्याघ्रचर्मरूपवस्त्र, कपिल—ज्वलद्विग्रह—पीलेनेत्रका—छोटीजांघका—वीभत्स—बलवान् ऐसा पुरुषलोकनाशार्थ प्रगट करा इसको ज्वर ऐसा कहते है ॥

## ब्राह्मणज्वरकेलक्षण

दंडीयज्ञोपवीतीचरौद्रोब्राह्मणरूपधृक्

अर्थ—श्रीरुद्रभगवान्से प्रगट दंड—यज्ञोपवीत ( जनेऊ ) को धारणकरे और ब्राह्मणरूप कियेहुए ऐसा ब्राह्मणज्वर जानना । तथा छत्र—कमंडलु मृगचर्मादि भूषित, पवित्र और शांतिवेश आदिजो ब्राह्मणोंके चिन्हहोतेहै वो सब जानने ॥

## क्षत्रीज्वरकेलक्षण

जपाकुसुमसंकाशोरौद्रदंष्ट्राकरालितः ॥
खड्गहस्तोमहारौद्रोमाहेन्द्रः क्षत्रियोमतः

अर्थ—जपा ( गुडहर ) के फूलके समान लालरंगका, तीखी डाढावाला, खड्गकोलिये महान् रौद्र, सब रुद्रज्वरोंका राजा, क्षत्री ज्वरजानना ॥

## वैश्यज्वर

चंपकप्रसवाभासः तप्तकांचनभूषितः ॥
दंडहस्तोमहावेगी वैश्योज्वरइतिस्मृतः

अर्थ—चंपेके फूल समान पीतवर्ण, तपेहुये सुवर्णसे भूषित, दंडहाथमें–महावेगऐसा ज्वरवैश्यकहलाता है ॥

## शूद्रज्वरकेलक्षण

कृष्णमेघांजनाकारस्तीक्ष्णदंष्ट्रोज्वलाननः ॥
त्रिनेत्रोज्वलनप्रख्यः कालः शूद्रोविजानता

अर्थ—काले बद्दल और काजलके आकार, तीखीडाढावाला, उज्ज्वलमुखका, तीननेत्र, अग्निके समानस्वरूप, कालेरंगका, ऐसा शूद्रज्वरजानना विशेष देखना होवेतो ज्वरपराजय–और ज्वरतिमिरभास्कर ग्रंथमें देखो ॥

## ज्वरकेनाम

रोगः पाप्माज्वरोव्याधिर्विकारोदुःखमामयः
यक्ष्मातंकगदाबाधशब्दाःपर्यायवाचिनः

---

रोगादिकशब्द पर्यावाचक है अर्थात् एक अर्थके ही देनेवाले है परंतु इनमें प्रत्यर्थभेदभीदीखता है जैसे–रोग ( पीडादेनेसैं इसको रोग कहते है ) पाप्मा ( पापोंके करनेसैं होता है इसीसैं इसको पाप्मा ऐसा कहते है ) ज्वर ( ज्वाधातु अवस्थाकी हानिमें वर्ते है उसके आगेवर प्रत्ययलानेसैं ज्वरशब्द सिद्ध होता है यह देह और मनको संतापकारक होनेसै ज्वरकहाताहै ) व्याधि ( जो देहमें अनेक प्रकारके दुःख प्रगटकरे उसको व्याधि कहते है ) विकार ( मन–बुद्धि और इन्द्रियोंके विकृत करनेसैं विकार कहाता है ) दुःख ( उपतापक होनेसैं दुःख कहते है ) आमय ( संपूर्ण रोगआमसैं प्रगट होते है इस वास्ते आमय कहते है अर्थात् संपूर्ण प्राणीमात्र चपलतासैं अदेश अकालमें अपथ्य–और अत्यंत भोजनके सेवन करने वाले होते है इसीसैं आमजन्यरोग प्रगट होते है ) यक्ष्मा (सब रोग और रोगोंके समूह होनेसैं यक्ष्मा कहलाते है,)आतंक (प्राणी रोगोंसैं उपतप्तहो स्त्री–पान–भोजनादि त्याग–कठिनसैं जीते है इस वास्ते उनको आतंक ऐसा कहते है ) गद ( अनेक कारण जन्य होनेसै ज्वरको गद ऐसा कहाहै ) आबाध ( जो चारयो तरफ सैं देह और मनको बाधाकरे इस वास्ते इसको आबाध ऐसा कहते है ॥

अर्थ—रोग, पाप्मा, ज्वर, व्याधि, विकार, दुःख, आमय, यक्ष्मा, आतंक गद और आवाध येशब्द सब आपसमें पर्याय वाचकहै अर्थात् रोगके नामहै॥

# अथ निदान पंचकम्

मंगलाचरणम्

प्रणम्य जगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारणम् । स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं त्रैलोक्यशरणं शिवम् ॥ १ ॥ नानामुनीनां वचनैरिदानींसमासतः सद्भिषजां नियोगात् । सोपद्रवारिष्टनिदानलिङ्गोनिबध्यते रोगविनिश्चयोऽयम् ॥ २ ॥

अर्थ—जगत्की उत्पत्ति पालन और प्रलयके प्रधान कारण, स्वर्ग ( सुख ) अपवर्ग ( मोक्ष ) के द्वार अर्थात् दाता, तथा त्रिलोकीके रक्षक शिवको प्रणामकर अनेक चरक सुश्रुत आदि मुनीश्वरोंके वचनोंके अनुसार उत्तम वैद्योंकी आ-

*शिष्य—*यह अतिसूक्ष्म निदानपंचक सर्वज्ञ ऋषिमुनियोंके जानने योग्यहै उनके वाक्योंका निरादरकर मनुष्यकृत तुह्मारे ग्रन्थमें मनुष्योंकी कैसे प्रवृत्ति होवेगी? इसकारण माधवाचार्य्यने "नानामुनीनां वचनैः" इस पदको धरा, अर्थात् अनेक मुनीश्वरोंके वचनोंका आशयले मैने यह ग्रन्थ निर्माण कियाहै. किंतु मेरे मनकी उक्तिसें कल्पित नहींहै। शंका— पहलेहीं बहुत ग्रन्थ निर्माणकरे उपस्थितहैं फिर तुह्मारे इस ग्रन्थको कौन पढैगा? इसकारण माधवाचार्य्यने "इदानीम्" पद मूलमें धरा, इसपदका यह आशयहै— कि हमहीं अनेक मुनीश्वरोंके वचनोंसें अब ऐसा अलौकिक ग्रंथ रचतेहैं कि, पहिले कि-

१ प्रथम लिखआएहै कि " दर्शनस्पर्शनप्रश्नैःसंपरीक्षेतरोगिणं । रोगंनिदानप्राग्रूपलक्षणोपशयाप्तिभिः " अर्थात् दर्शन, स्पर्श और प्रश्नसें रोगीकी परीक्षा करे, तथा निदान, पूर्वरूप, रूप, उपशय, और संप्राप्ति करके रोगकी परीक्षाकरे तहां त्रिविधरोगीकी परीक्षा तो प्रथम लिखआएहै अब हम रोगपरीक्षाके निमित्त निदानपंचकको रुग्विनिश्चय ग्रंथसें लिखते है तथा जिस रोगका निदान लिखैगे उसीके साथ उसकी चिकित्साभी लिखीजायगी

ज्ञासें अब में संक्षेपसें रोगविनिश्चय नाम ग्रन्थकी रचना कर्ताहूं। जिसमें (उपद्रव,) (अरिष्ट,) (निदान,) और (चिन्ह) इनका लक्षण अच्छीरीतिसें किया गयाहै ॥ १ ॥ २ ॥

---

सीआचार्यने अद्यापि नहीं निर्माणकरा। कोईवादी शंका करे कि, तुमने ग्रन्थ रचाभी परंतु किसीने नहीं पढाती आपका ग्रन्थ निर्माण करना व्यर्थ होयगा. इसकारण माधवाचार्यने "सद्भिपजां नियोगात्‌" यह पद धरा इसपदका आशय यह है कि, हमारे पढ़नेके निमित्त कोई निदानग्रन्थ निर्माणकरो ऐसें बुद्धिमान्‌ वैद्योंके कहनेसें इसग्रन्थकी रचना करी है शंका—श्रीमहादेवजीके हर मृड रुद्र शाम्भव इत्यादिनामोंको त्यागकर शिव इसनामको क्यों प्रणामकरा? उत्तर-इसरोगविनिश्चयग्रन्थके पठनपाठन करनेवालोंकी कल्याणकी इच्छाकर सर्वकामना देनेवाला कल्याणवाचक शिवनाम बिचार इसाको ग्रन्थके आदिमें माधवाचार्य्यने प्रणामकरा ॥ १ ॥ २ ॥

नानातंत्रविहीनानां भिषजामल्पमेधसाम्‌।
सुखं विज्ञातुमातंकमयमेव भविष्यति ॥ ३ ॥

अर्थ—अन्यनिदान ग्रन्थोंसें इसकी उत्तमता दिखातेहैं जैसैंकि अनेकग्रंथोंके विचार करनेमें असमर्थ ऐसे मन्दबुद्धिवाले वैद्योंके सुखपूर्वक रोगज्ञानके निमित्त यहीग्रन्थ कारण होवेगा. क्यों कि रोगका जाननाही मुख्यहै सो ग्रन्थान्तरोंमें लिखावीहै।

(रोग जाननेके पांच उपाय उन्को कहतेहैं)

निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा।
संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पंचधा स्मृतम्‌ ॥ ४ ॥

अर्थ—निदान, पूर्वरूप, रूप, उपशय, और संप्राप्ति, ए पांच प्रकार पृथक्‌

---

१उपद्रवो-रोगारम्भकदोषप्रकोपजन्योविकारः। २ नियतमरणख्यापकलिंगमरिष्टम्‌। ३निदानंरोगोत्पादकोहेतुः। ४लिंग-रोगख्यापकोहेतुः। तेनलिंग्यते व्याधिःअनेनेति व्युत्पत्त्यापूर्वरूप-रूपो-पशयसंप्राप्तयोविज्ञायंते। १ रोगमादौपरीक्षेतततोनन्तरमौषधं ॥ ततः कर्मभिषक्पश्चाज्ज्ञानपूर्वंसमाचरेत्‌ ॥ १ ॥ रोगज्ञानार्थमेवादौयत्नःकार्यो भिषग्वरैः ॥ सनितस्मिन्नक्रियारम्भः पुण्यायपरोसिद्धिये ॥ २ ॥ प्रसंगवश रोगज्ञानकी विधि कहते है जैसे रोग चारप्रकारसें जानाजाना है प्रत्यक्ष-अनुमान-उपमान-और शब्दसें तहां चित्रकुष्ठादि व्याधि प्रत्यक्ष देखनेसें प्रतीतहोती है, ज्वरादि त्वक्इन्द्रीसें जानेजाते है ॥

पृथक् और समस्तव्याधिके बोधक होतेहैं। इसप्रकार रोगोंका जानना मुनीश्वरोंने पांच प्रकारका कहाहै ।

*इसश्लोकमें उपशयस्तथा यह जो पद धरा इसका यह आशयहै कि, जैसें निदान पूर्वरूप और रूपसे रोग जानाजायहै उसीप्रकार उपशयसैं और संप्राप्तिसैंभी रोग जाना-जाताहै ( सम्प्राप्तिश्चेति ) इसपदमें च और इतिके धरनेसैं यह प्रयोजनहै कि रोगजान नेके इन पांचोसें विशेष और उपाय नहींहै । अब कहतेहैं कि रोगोंका निदान संनिकृष्ट समीप और विप्रकृष्ट दूर इन भेदोंसे दो प्रकारकाहै ※ संनिकृष्ट उसे कहतेहैं की जैसें वातादिक कुपित ज्वरादिक रोगोंको प्रगटकरेहैं ※ और विप्रकृष्ट उसे कहतेहैं जैसें हेमंतऋतुमें संचितहुआ कफ वसंतऋतुमें कुपित होताहै ※ पूर्वरूप उसे कहतेहैं जैसें ज्वरमें आलस्यादिधर्म * रूप उसे कहतेहैं जैसें १८ के श्लोकमें लिखाहै * स्वेदावरोधइति ※ अर्थात् पसीनोका अवरोध होना इत्यादिक ※ उपशय उसे क-हतेहे जैसें वातरोग तैलादिक लगानेसैं शान्ति होयहै । सम्प्राप्ति उसे कहतेहैं जैसें १० के श्लोकमै लिखाहै यथादुष्टेनदोषेण इत्यादि शंका—क्योंजी ए पांच जो व्याधि जा-ननेके उपाय कहे इनमें एकहीसें रोगका निश्चय होसकेहै फिर माधवाचार्यने पांचप्रकार व्यर्थ क्यों लिखे ! क्योंकि पांचोंका प्रयोजन केवल रोगका जाननाहै—उत्तर—तुमने क-हा सो ठीकहै परंतु इन पांचोका पृथक् पृथक् प्रयोजनहै जैसें निदान सें यह प्रयोजनहै कि जिसवस्तुके खानेंसे या लगानेसैं रोग प्रगटहो उसका त्याग करनेसैं रोग नहीं बढे किंतु उलटा शांतिही होताहै और※पूर्वरूप के जाननेसैं यह प्रयोजनहै जैसें सुश्रुतमें लिखा है कि, वातज्वरके पूर्वरूपमें घृतपानकरानेंसे वातज्वरकी उत्पत्ति नहीं होय※रूप के जा-ननेसैं यह प्रयोजनहै कि व्याधि अर्थात् रोगका साध्याऽसाध्य और कष्टसाध्यत्व निश्चय होताहै, जैसें—जिसरोगका अल्परूप होवे वह सुखसाध्यहै, और मध्यरूप कष्टसाध्य और संपूर्णरूप असाध्य इसप्रकार जाननेसैं असाध्यका परित्याग करना और कष्टसाध्य तथा सुखसाध्यकी औषधिकरनी उचित है*उपशयके जाननेसे यह प्रयोजनहै कि सुपरीक्षि-तव्याधिके संपूर्ण लक्षण न मिलनेसे व्याधिका यथार्थज्ञान नहीं होय उसको उपशयके द्वारा निश्चय करे, सो चरक में लिखाहै कि जिस व्याधिके लक्षण प्रगट न होय उस-की उपशय और अनुपशयके द्वारा परीक्षा करे । उसीप्रकार*सुश्रुत में लिखाहै जैसे उ-

१ अर्थात् नाडी नेत्र जिह्वामल मूत्र आदि परीक्षाओंसे रोगोंका ज्ञान यथार्थ नहीं हो। २ वातिकज्वरेपूर्वरूपेघृतपानमिति तथाच साध्यासाध्यत्वमपिज्ञायते । ३ कष्टसाध्यके लक्षण चरकमें लिखे हैं-यथा—निमित्तंपूर्वरूपाणांरूपाणांमध्यमेबलेइति । ४ गूढलिंगंव्याधि-मुपशयाऽनुशयाभ्यांबुद्ध्येतइति ।

बटना, तेल लगाना, स्वेदन विधि, इत्यादिक कर्म करनेसे वातरोग शांत न होय तो उसके रुधिरका विकार जाने। और संप्राप्ति के जाननेसे यह प्रयोजन है कि संप्राप्तिके विना जाने पूर्वरूपादिकोकरके जानीभईभी व्याधि चिकित्साके योग्यभी है परंतु अंशांश, विकल्प, बल, काल, आदिको जबतक नहीजाने तबतक चिकित्सा यथार्थ नहीं होसके, इसी से वैद्य निदानपंचकका अवश्यही परिचय करे ॥

निमित्तहेत्वाऽऽयतनप्रत्ययोत्थानकारणैः।
निदानमाहुः पर्यायैः

अर्थ–अब निदानके पर्यायवाचक शब्दोंको कहे हैं–निमित्त, हेतु, आयतन, प्रत्यय, उत्थान, और कारण, ये निदानके पर्य्यायवाचक शब्द शास्त्रव्यवहारके अर्थ मुनीश्वर कहतेहैं कारण इनके कहनेका यहहै। कि व्यवहारके वास्ते अर्थात् शास्त्रमें इनछहों शब्दोंमेंसे कोईशब्द आवे उस्को निदान वाचकहीजाने॥

प्राग्रूपं येन लक्ष्यते ॥ ५ ॥
उत्पित्सुरामयो दोषविशेषेणाऽनधिष्ठितः।
लिंगमव्यक्तमल्पत्वाद्व्याधीनां तद्यथायथम् ॥ ६ ॥

अर्थ—जिस जंभाई आलस्य आदि करके उत्पत्ति होनेवाली व्याधिका ज्ञान होवे उसको प्राग्रूप अर्थात् ( पूर्वरूप ) कहतेहैं फिर वो व्याधि दोष ( वात पित्त कफ ) सें बहुधा अप्रगट होवे। * ( शंका—यदि वातादिक दोषोंसें अप्रगट होवेगी तो व्याधिका प्रगट होना असम्भवहै, क्योंकि कारण तो वातादिक दोषहैं जब दोषही नहीं तो रोग कैसें प्रगट होसकेहैं। * ( उत्तर—इसपदका यह अर्थहै कि दोष वातपित्त कफ इनका व्याधिके अल्प होनेसें अप्रगटरूप होना अर्थात् थोड़ा थोड़ा होना. अत एव तत्तत् ज्वरादिव्याधिका अपने अपने अप्रगट लक्षण पूर्वरूप तैसातैसाही होतेहै अब कहतेहैं कि ( पूर्वरूप ) दोप्रकारकाहै एक सामान्य दूसरा विशिष्ट सामान्यप्राग्रूप (पूर्वरूप) उसे कहतेहैं जैसें दोष ( वात पित्त कफ ) सें दूषित धातु उसके विगडनेसें प्रगट होनेवाले ज्वरादि व्याधिमात्रहीकी प्रतीति होवे और वात आदि दोषोंके चिन्ह न मालूमहों जैसें "श्रमोरतिर्विवर्णत्वमिति" अर्थात् ज्वरमें श्रम, मनका न लगना, देहका विवर्ण, इत्यादि लक्षण हो और जिसमें होनहार रोगारम्भक दोष उन्होंके चिन्ह तिसके एक अंशकी प्रतीतिहो उसको विशिष्ट प्राग्रूप कहतेहैं जैसें "जृंभात्यर्थं समीरणात्" अर्थात् जंभाईका आना केवल वातके दोषसेंहीहै। इसमें होनहार रोग कौन ज्वर, उस-

१ अभ्यंगस्नेहस्वेदाद्यैर्वातरोगोनशाम्यति। विकारस्तत्रविज्ञेयोदुष्टमत्रास्तिशोणितमिति।

का आरम्भक दोष कौन वात, उस वातका एक अंश कौन जंभाई, ऐसैं औरभी जानने चाहिये। इस विशिष्ट पूर्वरूपमें जंभाईआदि रूप देखकर कदाचित् पूर्वरूपको रूप न समझना चाहिये। क्योंकि यह तो केवल व्याधिके आरम्भक दोषमात्रका सूक्ष्म चिन्ह है, इस वातको दृष्टान्त देकर समझाते हैं। (दृष्टान्त) जैसैं तृणके समूहमें छोटी अग्निकी चिनगारी गिरनेसैं धूम (धूआं) मात्र प्रकट देखकर हाथ, वस्त्र आदिके मारनेसैं ही शान्ति करसकतेहै, परन्तु जब अग्नि एकसाथ जोरसैं प्रज्वलित होगई तब शान्ति नहीं होसकै ऐसैंही विशिष्ट पूर्वरूपको अल्प होनेसैं शान्ति कर सक्ते है, परन्तु जब रूप होगया तब उसका उपाय नहीं होसके हैं इसीसैं पूर्वरूप और रूपमें भेद है * अब कहते हैं पूर्वरूप और रूप इन दोनोमें कोई शारीरक अर्थात् शरीरसैं सम्बन्ध रखते हैं और कोई मानसिक अर्थात् मनसैं सम्बन्ध रखते हैं शारीरक जैसैं ज्वरमें मुखका विरस होना देह भारी, नेत्रसैं जल गिरना, इत्यादिक * और मानसिक जैसैं मनका एक जगह न लगना और अपने हितकारक वचनोंसैं शान्ति न होना तथा खट्टे चरपरेपदार्थपर मन चलना इत्यादि ॥

तदेवव्यक्ततां यातं रूपमित्यभिधीयते।
संस्थानं व्यञ्जनं लिंगं लक्षणं चिन्हमाकृतिः ॥ ७ ॥

अर्थ—जब पूर्वोक्त प्राग्रूप प्रगट होजाय तब उसको रूप ऐसैं कहते हैं। और संस्थान, व्यंजन, लिंग, लक्षण, चिन्ह, और आकृति, यह छः शब्द रूपके पर्यायवाचक हैं ॥

## उपशयके लक्षण

हेतुव्याधिविपर्य्यस्तविपर्यस्तार्थकारिणाम्।
औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम् ॥ ८ ॥
विद्यादुपशयं व्याधेः सहि सात्म्यमिति स्मृतः।

अर्थ—अब उपशयके लक्षणको कहते हैं—हेतुविपरीत, व्याधिविपरीत, हेतुव्याधिविपरीत, हेतुविपर्यस्तार्थकारी, व्याधिविपर्यस्तार्थकारी हेतुव्याधि विपर्यस्तार्थकारी ऐसैं जो औषध अन्न (पथ्य) विहार (आचरण) इनका सेवन सुखकारक जानना उसको व्याधिका उपशय कहते हैं इसका तात्पर्य यह है कि, रोग और रोगके हेतुको सुखकारक जो औषधि पथ्य आचरण उसको उपशय कहते हैं, और (व्याधिसात्म्य) ये पर्यायवाचक नाम उसी उपशयका है, सुखकारकके कहनेसैं यह प्रयोजन है कि दाह और प्यासयुक्त नवीन ज्वरमें शीतलजलका पीना

व्याधिका बढानेवाला है इस्सें शीतलजल सुखकर्त्ता न हुआ अतएव शीतलजलको उपशय न समझना चाहिये। परंतु दाहयुक्त प्यासमें शीतलजल उपशय माना जायगा क्योंकि सुखकारक है ॥

आगे अब क्रमसें उदाहरण दिखाते है

हेतुविपरीत औषध—जैसें शीत कफ ज्वरमें सोंठ, वो इसमें प्रथम समझना चाहिये कि यहां हेतु कौन है कि वात ( सर्दी ) उस वातका शीतलधर्म है-तो अब शीत कफ यह कब शान्ति होय कि जब सर्दी और कफके विपरीत औषधमिले, ऐसी औषध कौन कि शुंठी ये सर्दीको और कफ दोनोंको शान्ति कर

| नाम | औषध | अन्न | विहार |
|---|---|---|---|
| हेतुविपरीत | शीतज्वरमें गरम औषधि सौंठ | श्रम और वादीसैं प्रगटरोगपर मांसकोरस और भात | दिनके सोनेसैं प्रगट कफरोगपर विपरीत आचरण रातमें जागना |
| व्याधिविपरीत | अतिसारमें दस्त बंदकरनेवाली औषधि पाठाआदि | दस्तोंमें दस्तके बंदकारक पथ्य मसूर | उदावर्त्तरोगमें शब्दपूर्वक अधोवायुका निकसना मंत्रऔषधधारण देवगुरुकी सेवा करनी ॥ |
| हेतुव्याधिविपरीत | वातकी सूजनमें दशमूलका काढा वात और सूजन दोनोंको दूरकरनेवाला है | कफकी संग्रहणीमें छाछका पीना वातनाशक कफनाशक और सग्रहणीनाशक | स्निग्ध जो दिनके सोनेसैं उत्पन्नतद्रा तिसमें रूक्षतंद्रासें विपरीत और स्निग्धतानाशक रात्रिमें जागना- |
| हेतुविपर्यस्तार्थकारी | जैसैंपित्त प्रधान व्रणकीसूजनमें पित्तकारक उप्मपिंडीका बांधना | पित्तकी सूजनमें दाहकारक अन्नका भोजन करना | जैसें वातसैं पैदा उन्मादमें त्रासका देना |
| व्याधिविपर्यस्तार्थकारी | जैसे कफरोगमें वमनकारक मैनफलआदि | अतीसाररोगमें दस्तकारक दुग्ध देना | छर्दिरोगमें हाथका अंगुठा गलेमें कर वा कमलनालआदिसें उलटीका लाना |
| हेतुव्याधिविपर्यस्तार्थकारी | जैसैं अग्निजलेपर गरम अगरआदिलेप अथवा विषपर विष | जैसे मद्यपानके करनेसे प्रगट मदात्यय रोगमें मदकारक फेर मद्य पीना | दंडकसरतसैं प्रगट वातमें जलका तैरना रूपव्यायामका करना |

है तो शीत कफ ज्वरमें हेतुविपरीत औषध सोंठ हुई ॥ १ ॥ ऐसैंही ( हेतुविपरीत ) अन्न जैसें श्रम और सरदीसें प्रगट ज्वरमें मांसका रस और चावल इसमें हेतु कौनाकि श्रम और सरदी, ये कब शान्ति होवे कि श्रम और सर्दी हरणकर्त्ता पथ्य मिले, ऐसी पथ्य कौनकि मांसरस और चावलौंका भात ये श्रम और सर्दीके विपरीत हैं अर्थात् नाशकहैं ॥ २ ॥ ऐसैंही ( हेतुविपरीतविहार ) कहिये आचरण कौन जैसें दिनके सोनेसें प्रगट कफपर रातमें जागना, यहां हेतु कौन हुआकि दिनका सोना, उससें प्रगट दोष कौनाकि कफ, यह कफ कब शान्ति होयकि जिस हेतुसें प्रगटभया उस हेतुसें विपरीत आचरण कराजाय, तौ दिनके सोनेपर उलटा आचरण कौन कि रातमैं जागना, तो यह हेतुविपरीत आचरणभया । इसीप्रकार और उदाहरण व्याधिविपरीत आदिके पूर्व लिखे हुए चक्रके अनुसार बुद्धिवान् मनुष्य समझ लेवेंगे ॥

## अनुपशयके लक्षण

**विपरीतोऽनुपशयो व्याध्यसात्म्यमिति स्मृतः ॥ ९ ॥**

अर्थ—जो उपशयके लक्षण कहेहैं उससे विपरीत लक्षण अनुपशयके हैं और व्याधीका * असात्म्य अर्थात् असमान नाम उसी अनुपशयका पर्यायवाचक शब्द है ॥ ९ ॥

## सम्प्राप्तिके लक्षण

**यथा दुष्टेन दोषेण यथाचानुविसर्पता ।**
**निर्वृत्तिरामयस्याऽसौ सम्प्राप्तिर्जातिरागतिः ॥ १० ॥**

अर्थ—दोष कहिये वातपित्त कफ इनका दुष्टहोना नाम कुपित होना अनेक प्रकारका है अर्थात् स्वकारण या दूसरेके कारण करके, ऐसें कुपितदोष अपने स्थानको छोडकर देहमें ऊपर नीचे तिरछे विचरते हैं उस विचरनेसें जो रोग प्रगटहो उसको ( सम्प्राप्ति ) कहते हैं और ( जाति ) तथा आगति ये दोनो पर्यायवाचक नाम उसी सम्प्राप्तिके हैं * तात्पर्यार्थ ये है कि मनुष्यके देहमें वात पित्त कफ दोष बढकर जैसें रोगको प्रगटकरैं उसीप्रकार उसको सम्प्राप्ति कहते हैं* उदाहरण—जेसें कुपितदोषोंका आमाशयमें प्रवेश होना और उसस्थानमें इतस्ततो गमन करना तथा रसकी बहनेवाली नाडियोंके मार्गोंको रोकना और पक्काशयमें रहनेवाली अग्निको बाहिर निकालना तथा उसी जठराग्निसें सर्व देहके तप्तहोनेसें ये ज्वर है, ऐसा जो निश्चय किया जाय है उसीको संप्राप्ति कहतेहैं । ऐसेही अतिसारादिरोगोंकी संप्राप्ति जाननी चाहिये ॥ १० ॥

## सम्प्राप्तिके भेद

**संख्याविकल्पप्राधान्यबलकालविशेषतः ।**

अर्थ—अब संप्राप्तिके भेद कहतेहैं सा कहिये सो संप्राप्ति संख्यादि विशेषण करके पांचप्रकारकी है जैसे १ संख्या २ विकल्प ३ प्रधान्य ४ बल ५ काल इति ॥

## संख्यारूपसंप्राप्तिके लक्षण

**सा भिद्यते यथात्रैव वक्ष्यन्तेऽष्टौ ज्वरा इति ॥ ११ ॥**

अर्थ—जैसें इसी ग्रन्थमें आगे आठ प्रकारका ज्वर, पांचप्रकारकी खांसी है ऐसा कहेगे अर्थात् रोगोंकी गणनाकोही संख्यारूप सम्प्राप्ति कहते है ॥

## विकल्परूपसंप्राप्तिके लक्षण

**दोषाणां समवेतानां विकल्पोंऽशांशकल्पना ।**

अर्थ—मिलेहुए दोष कहिये वात पित्त कफ इनके अंशांशका अनुमान करना उस्को विकल्परूपसम्प्राप्ति कहतेहैं जैसे धूएके निकलनेसैं ये पर्वत अग्निवानहै असैंही ये रोगीके देहमैं वातका अंश विशेपहै, काहेसैं कि वातके अंश विशेप मिलनेसैं इसी अनुमानको विकल्पसंप्राप्ति कहतेहैं ( उदाहरण—जैसैं रूखी, शीतल, हलकी, और फैलनेवाली, इत्यादि गुणयुक्त जो पवन, उस्का रौक्षादि गुणयुक्त कपेलारस वातको सर्वांशकरके वढानेवालाहै उसीप्रकार कटुरस सर्वभावकरके पित्तका वढानेवालाहै जैसे कटु, उष्ण, तीक्ष्णत्वकरके हींग पित्त को वढानेवालीहै उसीप्रकार मधुररस जैसैं भैंसका दूध ये सर्वभावकरके कफको वढानेवालाहै इत्यादि इसमें ( दोषाणां ) जो वहुवचनहै सो दोषोंके पृथक् पृथक् ग्रहणके वास्ते है, और ( समवेतानाम् ) ये पद जो है सो द्वंद्वज और सन्निपातके ग्रहणनिमित्त धराहै ॥

## प्राधान्यरूपसंप्राप्तिके लक्षण

**स्वातंत्र्यपारतंत्र्याभ्यां व्याधेः प्राधान्यमादिशेत् ॥ १२ ॥**

अर्थ—स्वतंत्र और परतंत्रकरके व्याधिको प्राधान्यता है जैसे—स्वतंत्रज्वरको प्रधानताहै, और ज्वराधीन श्वास आदिरोगोंको अप्रधानताहै ॥

## वलरूपसंप्राप्तिके लक्षण

**हेत्वादिकार्त्स्न्यावयवैर्बलाबलविशेषणम् ।**

अर्थ—हेतु आदिशब्दसैं पूर्वरूप और रूप इनके सर्व अवयव ( लक्षण ) मिलनेसें व्याधिको वलवान् जानना, और थोडे लक्षण मिलनेसें निर्वल जानना.

जैसे–जिस रोगके प्रति जो निदान कहाहै वो निदान सम्पूर्ण रोगको उत्पन्न करनेवाला है कि एकदेश * ऐसेही पूर्वरूपभी समस्त अवयवों करके व्याधिका प्रकाशकहै या एकदेशसैं इत्यादि लक्षणोंसैं बलाबलका निश्चय करना ॥

## कालरूपसंप्राप्तिके लक्षण

नक्तंदिनर्तुभुक्तांशैर्व्याधिकालो यथामलम् ॥ १३ ॥

अर्थ—नक्त ( रात्रि ) दिन ( दिवस ) ऋतु ( वसन्तादि ) भुक्त ( आहार ) इनका अंशै कहिये एकदेश उसको यथा दोष ( वात, पित्त, कफ ) के अनुसार व्याधिका काल अर्थात् रोगके घटनेवढनेके हेतुका समय जाने*उदाहरण दिखाते हैं-जैसैं रात्रिके तीन भाग करे प्रथम, मध्य, और अंत; तौ रात्रिका प्रथमभाग कफका है, मध्यभाग पित्तका, अंतभाग वातका है, ऐसेंहीं दिनके बी तीन भाग करे तो पूर्वान्ह कफका, मध्यान्ह पित्तका, अपरान्ह वातका, ऐसेंहीं ऋतु जैसै वसंतऋतुमें कफ, ग्रीष्मऋतुमें पित्त, और वर्षामे वात कुपित होतीहै एसैंहीं भोजनका जैसैं–भोजनकरनेके समय कफका काल, और अन्नके पचनेके समय पित्तका काल, और जब भलेप्रकार परिपक्व होगया तब वातका काल, इसकालके जाननेसैं यह प्रयोजनहै कि जिस दोष ( वात, पित्त, कफ ) का जो काल कहाहै उसका उसी २ कालमें प्राबल्यता जानलेना कठिन मालूम नहीं होती ॥

## निदानपंचकका उपसंहार

इति प्रोक्तो निदानार्थः स व्यासेनोपदेक्ष्यते ॥ १४ ॥

अर्थ—इति कहिये इस प्रकार संक्षेपप्रकारसैं जो निदानार्थ कहा उसे विस्तारपूर्वक रोग २ के प्रति निदान पूर्वरूपादिकरके कहते हैं ॥

सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः ।
तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाऽहितसेवनम् ॥ १५ ॥

अर्थ—अब पूर्व चतुर्थ श्लोककी व्याख्यामें कहे निदानके दो भेद कौन सन्निकृष्ट और विप्रकृष्ट, तिसमें सन्निकृष्ट, कौन वातादिक समीपके कारणकरके सर्व रोगोंका कारण है सो कहते हैं ( सर्वेषामिति )। कुपितहुए जो मल ( वात पित्त कफ ) ये सम्पूर्ण रोगोंके कारण होतेहैं और उन् वात पित्त कफ दोषोंके कोपका कारण अनेकप्रकारका अपथ्यसेवन करना हैं ॥

---

१ केननं ऋत्वंशाः कतिपयाहोरात्राणि कथयंति यदुक्तं वाग्भटे ऋत्वोरित्यादिगताद्यन्तुसंधिरितिस्मृतः ॥

निदानार्थकरो रोगो रोगस्याप्युपजायते ।
तद्यथा ज्वरसंतापाद्रक्तपित्तमुदीर्यते ॥ १६ ॥
रक्तपित्ताज्ज्वरस्ताभ्यां श्वासश्चाप्युपजायते ।
प्लीहाभिवृद्ध्या जठरं जठराच्छोफ एव च ॥ १७ ॥
अर्शोभ्यो जाठरं दुःखं गुल्मश्चाप्युपजायते ।
प्रतिश्यायादथो कासः कासात्संजायते क्षयः ॥ १८ ॥
क्षयो रोगस्य हेतुत्वे शोषस्याप्युपजायते ।

अर्थ–कोई प्रश्नकरे कि जो पूर्वकहाहैं येही निदानहै अथवा इसके व्यतिरिक्त और भी है इसलिये कहते हैं कि रोगका रोगभी निदान होता है । अर्थात् जो निदानसें कार्य्य होताहै वोही रोगसें भी होताहै, इसवास्ते दृष्टांत देकर कहते है (तद्यथेति ) जैसें ज्वरसंतापसें रक्तपित्त प्रकट होताहै । और रक्तपित्तसें ज्वर, एवं रक्तपित्तज्वरसें श्वास प्रगट होताहै। और प्लीहके बढनेसें जैसें उदररोग, और उदररोगसें सूजन, और बवासीरसें जैसें उदररोग और गुल्म ( गोला ) रोग, एवं पीनसरोगसें खांसी, तथा खांसीसे ओजप्रभृति धातुओंका क्षय होताहै । और ये क्षयरोग राजयक्ष्मा जो सम्पूर्ण रोगोंमें राजा है उसको प्रगट करेंहै ॥

ते पूर्वं केवला रोगाः पश्चाद्धेत्वर्थकारिणः ॥ १९ ॥

अर्थ—वो रोग प्रथम स्वतंत्रथे और जब बल मिलगया तो वोही हेत्वर्थकारी अर्थात् रोगके उत्पन्न करनेवाले होते हैं जैसें ज्वरसें रक्तपित्त होता है ॥

कश्चिद्धि रोगो रोगस्य हेतुर्भूत्वा प्रशाम्यति ।
न प्रशाम्यति चाप्यन्यो हेत्वर्थं कुरुतेऽपि च ।
एवं कृच्छ्रतमा नृणां दृश्यंते व्याधिसंकराः ॥ २० ॥

अर्थ–अब उसी रोग उत्पन्न करनेवाली व्याधिकी विचित्रता दिखावे हैं जैसे कोईएक रोग दूसरेका कारण हो अर्थात् दूसरे रोगको प्रगटकर आप शांत होजाताहै, जैसे पीनसरोग आप शांत नहीं होनेपाता और खांसी उत्पन्न होती है । और कोई रोग दूसरे रोगको प्रगटकर आप जैसा का तैसा बना रहताहै, जैसे बवासीर नहीं जाय और गुल्म तथा उदर रोग पैदा होवेहैं । इस प्रकार मनुष्योंके घोरक्लेशदायक मिलेहुए रोग दिखाई देते हैं विशेषकरके चिकित्सा विरुद्ध होनेसें ये रोग कृच्छ्रतम होजाते हैं ॥

तस्माद्यत्नेन सद्वैद्यैरिच्छद्भिः सिद्धिमुत्तमाम् ।
ज्ञातव्यो वक्ष्यते योऽयं ज्वरादीनां विनिश्चयः ॥ २१ ॥

अर्थ—अब कहेहुये निदानादिपंचकद्वारा रोग निर्णयरूप सिद्धीकी इच्छा करके अवश्य जानने योग्यको कहते हैं ( तस्मादिति ) इसीकारण उत्तम सिद्धी हमको प्राप्त हो ऐसी जिन सद्वैद्योंकी इच्छाहै उनको ज्वरादिरोगोंका निदान जो आगे कहते हैं वो यत्नमें जानना चाहिये ॥

---

# अथ ज्वरनिदानम्

अब सर्वदेहके रोगोंमें प्रथम प्रगट होनेसे, बली देह इन्द्री मनको तपायमान करनेसे जन्म मरणका कारण होनेसे स्थावर जंगम प्राणीमात्रमें स्थिति होनेसे सम्पूर्ण शरीरके रोगोंमें चरक सुश्रुतादि आचार्योंने ज्वर राजा कहाहै ॥

तदुक्तं चरके

देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो बली ।
ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा ॥ १ ॥

अर्थ—देह इन्द्री मनको तपायमान करनेसे रोगोंमें प्रथम प्रगट होनेसे प्रधान ज्वरको सब रोगोंमें प्रधानता कही है ॥

ज्वरकी उत्पत्ति

दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिःश्वाससम्भवः ।
ज्वरोऽष्टधा पृथग्द्वन्द्वसंघातागन्तुजः स्मृतः ॥ २ ॥

अर्थ—दक्षप्रजापतिके तिरस्कारसे क्रोधित श्रीमहादेवजीके श्वाससे ज्वर उत्पन्न हुआ है यह ज्वर आठ प्रकारका है वात पित्त कफ इनसे ३, द्वंद्वज ३, सन्निपातज १, और आगन्तुज १ ऐसे मिलकर सबोंसे ज्वर आठ प्रकारका है ॥ २ ॥

इस श्लोकमें [ निःश्वाससम्भवः ] ये जो पद धराहै सो श्वास इस शब्दके ... [illegible] ... ( सुश्रुतमें ) लिखाहै जैसा "रुद्रकोपाग्निसंभूतः सर्वभूतप्रतापनः" इति ... [illegible]

षित रुद्रने ललाटस्थ तीसरे अग्निमय चक्षु ( नेत्र ) को स्पर्शकर आग्नेयबाण निर्माण किया ( तथा च चरके ) "स्पृष्ट्वा ललाटे चक्षुर्वै दग्ध्वा तानसुरान्प्रभुः । बाणं क्रोधाग्निसंतप्तमसृजच्छत्रुनाशनम्" इत्यादिक वाक्योंसे ज्वरमात्रकी पित्तप्रकृति जाननी प्रयोजन यहहै कि सर्वज्वरमें पित्तकी विरोधी क्रिया न करे सो ( वाग्भटने ) कहाहै ( यथा—"ऊष्मा पित्तादृते नास्ति नास्त्युष्माणं विना ज्वरः । तस्मात्पित्तविरुद्धानि त्यजेत्पित्ताधिकेऽधिकम्" इति । अर्थात् गरमी पित्तके विना नहीं होती और ज्वर गरमीके विना नहींहोवै इसीसे ज्वरमें पित्तविरुद्ध क्रिया न करै और पित्तज्वरमें विशेपकरके पित्तविरुद्ध क्रिया त्याज्यहै ॥ अन्य आचार्य कहते है कि श्रीरुद्रसे उत्पत्ति होनेसे ज्वर देवता है इस लिये ज्वरका पूजन करनेसे शांत होताहै जैसें ( विदेहका वाक्य ) है "ज्वरस्तु पूजनैर्वापि सहसैवोपशाम्यति" और ज्वरका स्वरूपभी ( हरिवंशमें ) लिखाहै ( यथा ) "ज्वरस्त्रिपादस्त्रिशिराः षड्भुजो नवलोचनः । भस्मप्रहरणो रौद्रः कालान्तकयमोपमः॥" इति । अर्थात् ज्वरके तीन चरण तीन मस्तक छह भूजा नवनेत्र भस्मप्रहेती है शस्त्रजिसका यह रौद्रकाल यमराजके समानहै ।

## ज्वरसंप्राप्ति

**मिथ्याहारविहाराभ्यां दोषा ह्यामाशयाश्रयाः ।**
**बहिर्निरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ॥ ३ ॥**

अर्थ—मिथ्या आहार ( देश काल प्रकृति आदिसें विरुद्ध और संयोगविरुद्ध भोजन ) मिथ्याविहार ( देहके पुरुषार्थसे विशेप कामका करना ) इन कारणोंसें दुष्ट हुये जो दोप ( वात पित्त कफ ) सो नाभिस्तनके बीच आमाशयमें प्राप्त हो रसको बिगाडकर और कोष्ठस्थानमें रहती जो अग्नि उसको देहके बाहर निकाल ज्वरके प्रगट करनेवाले होते है ॥ * ॥

ये संप्राप्ति शारीर रोगोंकीहै आगंतुजकी नहींहै क्यों कि आगंतू रोगोंका तो व्यथापूर्वक वातादिदोषोंके रोकनेसे प्रयोजन है जैसे ( सुश्रुतमें ) लिखाहै श्रम और चोटके लगनेसे देहधारीयोंके देहमें कुपित हुई वात सबदेहको परिपूर्णकर ज्वरको पैदा करतीहै * और (चरक) में भी लिखाहै कि चोटके लगनेसे प्रगट वात

१ अकाले चातिमात्रं च असात्म्यं यच्च भोजनम् । विषमाशनं च यदुक्तं मिथ्याहारः स उच्यते ॥ १ ॥ इस श्लोकमें हिन्दी और फारसीकी ऐक्यता दिखाई है । २ अशक्तः कुरुते कर्म्म शक्तिमात्र करोति च । मिथ्याविहार इत्युक्तः सदा चैव विवर्जयेत् ॥ ३ नाभिस्तनान्तरं जन्तोरामाशय इति स्मृत. ॥

रुधिरको विगाड व्यथा और शोष तथा विवर्णयुक्त वातज्वरको प्रगट करतीहै॥ (शंका—क्योंजी आगंतुभी शारीररोगही है क्योंकि आगंतुज्वरमेंभी गरमी रहती है जैसे ॥ "(उष्मा पित्तादृते नास्ति)" ॥ इत्यादि वाक्य प्रमाण होनेसें ॥ उत्तर–ये जो तुमने कहा सो ठीकहै ॥ परंतु इस आगंतुरोगोंमें पित्तकी पूर्वकालसें ही उत्पत्ति नहीं होती पीछे उत्पत्ति होतीहै यासें आगंतुरोगोंको शारीरत्व नहीं है ॥ ॥ ॥ इस श्लोकमें ( कोष्ठाग्नि ) यह जो पद धराहै सो धातुकी अग्निके निवारणार्थ है अर्थात् जब धात्वग्नि बाहर आय जावेगी तो दोषोंका पचना नहीं होसके और दोष पचेविना ज्वर शांति नहीं होवेगा इसलिये इसका अर्थ ऐसा न करना चाहिये ( बहिर्निरस्य कोष्ठाग्निम् ) कोठेके अग्निकी गरमीको बाहर निकालकरऐसा अर्थ करना चाहिये ।

## ज्वरके लक्षण

स्वेदावरोधस्संतापः सर्वांगग्रहणं तथा ।
युगपद्यत्र रोगे तु स ज्वरो व्यपदिश्यते ॥ ४ ॥

अर्थ—जिस रोगमें पसीना न आवै, देहमें सन्ताप और सर्वांगमें पीडा ये एकही समें हो उसको ज्वर ऐसें कहते हैं ॥ ॥ ( शंका–क्योंजी पित्तज्वरमें तो पसीने आतेहैं इस श्लोकमें विरुद्धता आती है ॥ इसपर जेज्जटादिक उत्तर लिखतेहैं कि स्वेदावरोध कहिये " स्विद्यते अनेनेति स्वेदः इस व्युत्पत्ति करके स्वेद कहिये अग्नि तिस्का अवरोध कहिये दोषकी व्याप्ति ऐसा अर्थ करनेमें श्लोकार्थमें विरुद्ध नहीं पडता ॥

## ज्वरका पूर्वरूप

श्रमोरतिर्विवर्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः ।
इच्छा द्वेषो मुहुश्चापि शीतवातातपादिषु ॥ ५ ॥
जृम्भांगमर्दो गुरुता रोमहर्षोऽरुचिस्तमः ।
अप्रहर्षश्च शीतं च भवत्युत्पित्सति ज्वरे ॥ ६ ॥

अर्थ–कारण विनाही श्रम, कर्मकरनेमें उत्साह नहो, अथवा रहनेमें अरुची देहमें मलीनता. मुखमें विरसता, नेत्र अश्रुपात युक्त, सर्दी गर्मी पवन इनकी वारंवार इच्छा होना और वारंवार द्वेष हो । इसमें जो ( आदि ) शब्दहै इसमें जल और अग्निका ग्रहणहै अर्थात् इनकी वार २ इच्छा और द्वेष ये ( चरक ) का मतहै तदुक्तं चरके–" ज्वलनातपवाय्वंबुभक्तद्वेषाभिलाषिता " इति । अन्ये तु

शैत्योष्णसाधर्म्याज्जलाऽनलौ गृह्णंति ते तु आदिशब्देन शयनादिकं मन्यंते * अन्य आचार्य सर्दी गरमीके साधर्म्यते जल अग्निको कहते हैं और आदिशब्दसें शयन आदिमानते है * जंभाई अंगोका टूटना, देहभारी, रोमांचोंका खडा होना, अन्नमें, अरुचि, अंधेरेका आना, आनंदकी निवृत्ति, सरदीका लगना, *(शंका) क्योंजी पूर्व कहआये कि सरदी गरमीका बार बार इच्छा और बार बार द्वेष फिर पुनः (शीत) पद क्यों धरा ? * उत्तर–इस पदके धरनेसें सरदीकी आधिक्यता दिखाई, अर्थात् सरदी विशेष लगे ये लक्षण ज्वरके पूर्व होतेहै ॥

ये माधवाचार्य्यने सामान्यपूर्वरूपके लक्षण (सुश्रुतोक्त) लिखेहैं विशिष्टपूर्वरूपके लक्षण नहीं लिखे सो हम ग्रन्थान्तरसें लिखतेहैं ।

सामान्यतो विशेषात्तु जृंभात्यर्थं समीरणात् ।
पित्तान्नयनयोर्दाहः कफान्नान्नाभिनन्दनम् ॥ ७ ॥

अर्थ—विशेषकरके वातज्वरमें जंभाइ बहुत आती हैं, पित्तज्वरमें नेत्रोंमें दाह हो, और कफज्वरमें अन्नमें अरुचि होतीहै, ये श्लोक क्षेपकहै परंतु बहुत पुस्तकोंमें मूलके साथ लिखाहै इसवास्ते हमने भी मूलके साथ लिखदीना है ॥

# अथज्वरचिकित्साप्रारंभः

इतिज्वराः समाख्याताः कर्मेदानीं प्रवक्ष्यते

अर्थ—इसप्रकार ज्वरोके निदान और लक्षण कहे अब सुश्रुत ग्रंथसे उक्त ज्वरोंकी चिकित्साकहते है ॥

## वैद्यकोसाधारणक्रियाकीआज्ञा

दोषाणांचपरिज्ञानंयत्रसम्यङ्नदृश्यते ।
क्रियांसाधारणींतत्रभिषक्सम्यक्प्रयोजयेत्॥

अर्थ—जिसरोगमेवातादि दोषोका ज्ञान अच्छीरीतिसें नहोवे उस जगे वैद्य साधारण क्रिया (जों आगे लिखते है उसको) उत्तम रीतिसें करे । अर्थात् यह साधारण क्रियाकिसी रोगमें करो उसरोगको नष्टहीकरे है वढाती नहीं है ॥

अंशांशंयत्रदोषाणांविवेक्तुंनैवशक्नुयात् ।
साधारणींक्रियांतत्रविदधीतचिकित्सकः ॥

अर्थ—वैद्य जिस रोगमें दोषोंके अंशांशको नजानसके उसजगे साधरण क्रियाकी विधि करके यत्नकरे ॥

## ज्वरकीसामान्यचिकित्सा

ज्वरस्यपूर्वरूपेतुवर्त्तमानेसुबुद्धिमान्।पाययेतघृतंस्वच्छं ततः सलभतेसुखं॥ विधिर्मारुतजेचैवपैत्तिकेतुविरेचनम् ॥ मृदुप्रच्छर्दनंतद्वत्कफजेहिविधीयते॥ सर्वद्विदोषजेपूक्तंयथादोषंविकल्पयेत् ॥

अर्थ—ज्वरके पूर्वरूपमें यत्नकहते है । तहां वात ज्वरके पूर्वरूपमें रोगीको घृतपान करना चाहिये, पित्तप्रधान ज्वरमें मृदुविरेचन देना, और कफ प्रधान ज्वरमें हलकी वमन करानी—एवं द्विदोप और त्रिदोपमें उक्त दोनो—वा तीनो यत्न यथा संभवकरने चाहिये ॥

## ( ज्वरकेआदिमध्यऔरअंतमेंकर्त्तव्य )

ज्वरादौलंघनंप्रोक्तंज्वरमध्येतुपाचनम्
ज्वरान्तेरेचनंदद्यमेतज्ज्वरचिकित्सितम् ॥

अर्थ—वैद्य रोगीको ज्वरके आदिमें लंघन करावे, और ज्वरकी मध्यअवस्थामें ज्वर पाचक औषध देवे, एवं जब ज्वरशांति होजावे तब उस रोगीको दस्त करावे, यह संक्षेपसे ज्वरकी चिकित्सा कही है ॥

## लंघन

ज्वरेलंघनमेवादावुपदिष्टमृतेज्वरात्
क्षयानिलभयक्रोधकामशोकश्रमोद्भवात्

अर्थ—ज्वरमें प्रथम लंघन कराना वैद्यको उचित है परंतु क्षयेज्वर, वातेज्वर, भयज्वर, क्रोधज्वर, कामज्वर, शोकज्वर, परिश्रमजन्यज्वर, इनज्वरोमें लंघन कदाचित नहीं करना ॥

---

१ धातुक्षयज अथवा राजयक्ष्माज्वर। २ वातज्वरकहनेमें यहांपर निरामवातका ग्रहण है यदि सामवातज्वर होवे तो लंघन अवश्य कराने चाहिये ॥

## लंघनकरानेमेंकारण

आमाशयस्थोहत्वाग्निंसामोमार्गान्पिधापयन्
विदधातिज्वरंदोषतस्माल्लंघनमाचरेत्

अर्थ—अबलंघन करानेमें कारण कहते है, जैसेकि आमसें मिलेहुए दोष आमाशयमें स्थितजठराग्निको नष्टकर और देहके भीतरके मार्गोंके ( नसनाडी आदि ) को ढकते हुए ज्वरको प्रगट करते है अतएव उस आमके पचानेको और रुकेहुए मार्गोंके स्वच्छ करनेको वैद्य रोगीके वास्ते लंघन करावे। यहां जठराग्नि करके जठराग्निकी उष्मालेनी समग्रजठराग्नि नहीं लेनी चाहिये॥

अनवस्थितदोषाग्नेर्लंघनंदोषपाचनम्
ज्वरघ्नंदीपनंकांक्षारुचिलाघवकारकम्

अर्थ—अपने २ स्थानपर नहीस्थित असे दोप और अग्निके विकार पचानेको लंघन कराने चाहिये लंघन ज्वरको नाशकरते है, अग्निको दीप्तकरे, भोजनकी इच्छा, रुचि, और देहमें हलकापना करते है॥

प्राणाविरोधिनाचैवलङ्घनेनोपपादयेत्
बलाधिष्ठानमारोग्यंयदर्थोऽयंक्रियाक्रमः

अर्थ—वैद्यको चाहिये कि रोगीका बलनटूटे इस प्रकार लंघन करावे क्योंकि आरोग्यता बलके आधीन है और उस आरोग्यताके अर्थ यह क्रियाका क्रम है

## उत्तमलंघनकेलक्षण

वातमूत्रपुरीषाणांविसर्गो गात्रलाघवे॥हृदयोद्गारकंठा
स्यशुद्धौतन्द्राक्लमेगते । स्वेदेजातेरुचौचापिक्षुत्पि-
पासासहोदये कृतंलंघनमादेश्यंनिर्व्यथेचांतरात्मनि

अर्थ—अधोवायु, मल, मूत्र इनका यथा समय निकलना, शरीरमें हलकापना, (हृदयकाभारीपना) आदि, कंठमें कफका लिहसारहना, मुखमें विरसता इत्यादिलक्षण रहित हृदय, कठ, और मुखकाशुद्धहोना, तन्द्रा, और ग्लानिका नाश, पसीनोंकाआना, रुचिका चलना, एवं भूखप्यासका एक साथलगना, और मनमें किसी प्रकारकी व्यथाका न रहना ये लक्षण उत्तम लंघन होनेवाले रोगीके है॥

## अतिलंघनकेदोप

पर्वभेदोऽङ्गमर्दश्चकासः शोषोमुखस्यच। क्षुत्प्रणाशो

ऽरुचिस्तृष्णादौर्बल्यं श्रोत्रनेत्रयोः । मनसः संभ्रमोऽभीक्ष्णंमूर्द्ध्ववातन्तमोहृदि । देहाग्निबलहानिश्चलंघनेतिकृतेभवेत् ॥

अर्थ—गांठोमें पीडा, देहकाटूटना, खांसी, मुखका सूखना, भूखका माराजाना, अरुचि,प्यास, कर्णेन्द्री और नेत्रोंमें दुर्बलता, मनका डमाडोलहोना—ऊर्ध्ववात ( हिचकी, श्वास, कानोंमें शब्द, और जंभाई आदिका होना ) मोह, देह, अग्नि—और बलका घटना, ये लक्षण अत्यंत लंघन करनेवाले रोगीके होते है । मुख्य लंघन करानेका हेतु आमपचानेके वास्ते है परंतु हमारे मथुरा आदिके ढपोल शंख वैद्य सब ज्वर वालोंको लंघन कराते है, और फिरअंधेकी तरह उससें पूछते हैकि कहो अभी तुमको भूखलगी है यानही यदि रोगीको भूख भी लगी हो तथापि उसरोगीको लंघन ही कराते है कि जिससें उसका बलनष्टहो शीघ्रयमालयको चलाजावे, और रोगों सें बचभी गयातो निर्बलके कारणसें प्रत्येक समय रोगी होजावे ' हरीच्छा! बलीयसी '॥

## लंघनकेअयोग्यरोगी

नलंघयेन्मारुतजेज्वरेचक्षयोद्भवेचक्षुधितेचजन्तौ नगुर्विणीदुर्बलबालवृद्धान्भीतांस्तृपार्त्तानपिसोर्ध्ववातान्

अर्थ—निरामवात ज्वरमें, राजयक्ष्माके ज्वरमें, भूखमें, गर्भवती स्त्री, दुर्बल मनुष्य, बालक, बुड्ढा, डरपोक, तृपार्त, और उर्ध्व वातवाल्रोगी, इनको वैद्यकदाचित् लंघन न करावे ॥

## लंघनसहनकरनेमेंकारण

दोषाणामेवसाशक्तिर्लंघनेयासहिष्णुता ।
नहिदोषक्षयेकश्चित्सहतेलंघनादिकम् ॥

अर्थ—लंघनका करना ये केवल दोषों ही की सामर्थ्य है, क्योंकि दोष क्षीण होनेपर कोईभी प्राणी लंघनको नही सहसकता, अतएव जबतक इसको लंघन करनेकी सामर्थ्य रहे तभीतक वैद्य लंघन करावे ॥

अस्नेहनीयोऽशोध्यश्चसंयोज्योलंघनादिना ।
रूपप्राग्रूपयोर्विद्यान्नानात्वंवह्निधूमवत् ॥

अर्थ—जो स्नेहन करनेके अयोग्य है. और जिनको वमन विरेचनमें शोधन

नहीं करसकते, उनको लंघनादिक करानाही उत्तम है। तथा रूप और पूर्वरूपका अग्नि और धूआंके समान अनेक विधत्व वैद्यजानेः अर्थात् जैसे धूंआंहोनेसैं अग्निकी संभावना होती है उसी प्रकार पूर्वरूपसैं रोगके रूपकी संभावना जाननी

अव्यक्तरूपेषुहितमेवंतेनापतर्पणम् ।
आमाशयस्थेदोषेतुसोत्क्लेशेवमनंपरम् ॥

अर्थ—ज्वरके पूर्वरूपमें केवल लंघनादिक कराना। जो आमाशयमें दोष होय और जी मचलाता होवे उसको वमन कराना हित है ॥

### लंघनकीअवधी

आनद्धस्तिमितैर्दोषैर्यावंतः कालमातुरः ।
कुर्यादनशनंतावत्ततः संसर्गमाचरेत् ॥

अर्थ—जबतक यह रोगी वातादिदोष अथवा वात मले मूत्रादिसै घिरारहे, अर्थात् अधोवायु, मल, मूत्रसाफ न उतरे तबतक लंघनकरे फिर मिलेहुए अर्थात् औषधादि और लंघनादि दोनोउपाय करने चाहिये ॥

### वमनकरानेयोग्यरोगी

सद्योभुक्तस्यवाजातेज्वरेसंतर्पणोत्थिते
वमनंवमनार्हस्य शस्तमित्याहवाग्भटः

अर्थ—तत्कालभोजन करनेवालेके ज्वर प्रगटहुआहो, अथवा संतर्पण कर्म-करनेसै यदि ज्वर प्रगट हुआ होवे, तथा जो वमन करानेके योग्यरोगी है उनको वमन करना उत्तमहै अैसे वाग्भटाचार्य कहता है ॥

### ( अवस्थाविशेषमेंवमनकरानाकहतेहैं )

कफप्रधानानुत्क्लिष्टान्दोषानामाशयोत्थितान्
वुध्वाज्वरकरान्काले वम्यानांवमनैर्हरेत्

अर्थ—चरकऋषि लिखते है कि जिन रोगोंमें कफ प्रधान है, और हल्लासादि करके जो बाहर निकलाचाहे तथा जो दोष आमाशयसे उठेहुए है, और जो ज्वरके करने वाले दोष है, एवं जो वमन कराने योग्य है उनको वमनके समय वमन करा कर दोष दूरकरने चाहिये ॥

### ( उक्तअवस्थाकेविनावमनकरानानिषेध )

अनुपस्थितदोषाणांवमनंतरुणज्वरे

हृद्रोगंश्वासमानाहंमोहंचकुरुतेभृशम्

अर्थ—वमन करनेको नहीउपस्थित ऐसें दोषोंमें और तरुणज्वरमें यदि वमन ( रद ) करावे तो वह हृदयरोग, श्वास, अफरा, और मोहको करे है। यह भी चरकमें लिखाहै ॥

निर्वातभवनावासमुष्णवारिनिषेवणम्
अभूरि जल्पनिः क्रोधं कामशोकंच रोगिणम्
कुर्यादारोग्य संपन्नंशीघ्रं वैद्योविचक्षणः
कफमेदोऽनिलामघ्नंदीपनंवस्तिशोधनम्

अर्थ—जिसमें पवन न आत्ती हो ऐसे मकानमें रहना, गरमजलपीना, थोडा बोलना, क्रोध का न करना, कामदेव, शोककरना, इन सबको रोगी त्यागदे कि जबतक आरोग्य न होवे ऐसा करनेसें कफ, मेदा और वादी नष्ट होवे, एवं अग्नि दीपन हो, और वस्ती शुद्धि होती है। सर्वत्र रोगोंके यत्नमें लिखा है कि 'निदान परिवर्जनम्' इसकारण ज्वरमे जो निदान त्याज्य है उसको कहते है ॥

चरके

नवज्वरेदिवास्वापस्नानभोजनमैथुनम् ।
क्रोधप्रवातव्यायामकषायांश्चविवर्जयेत् ॥

अर्थ—नवीन ज्वरमें दिनका सोना, स्नान करना, भोजन करना, मैथुन करना, क्रोध, हवाका खाना, व्यायामकरना और काढा आदिका देना निषेध कहा है ॥

उष्मापित्तादृतेनास्तिज्वरोनास्त्युष्मणोविना
तस्मात्पित्तविरुद्धानित्यजेत्पित्ताधिकेधिकम्
स्नानाभ्यंगप्रदेहांश्चपरिषेकांश्चवर्जयेत्

अर्थ—विनापित्तके गरमी नहीं, और ज्वर विना गरमीके नही होता, अतएव सबज्वरोंमें पित्तके विरुद्ध चिकित्सा नहीं करना. और पित्तज्वरमें तो विशेष करके पित्तविरुद्ध चिकित्सा त्याज्य है। तथा स्नान, मालिस, लेपन और जल आदिका तरडा देना वर्जित है ॥

जलकेगुण

पानीयंशीतलंरूक्षंहन्तिपित्तविषभ्रमम् । दाहाजीर्ण

श्रमच्छर्दिमोहमूर्च्छा मदात्ययान् ॥ मूर्च्छापित्तोष्म
दाहेषुविषेरक्ते मदात्यये । भ्रम क्लमातिसारेषुमार्गो त्थ-
वमथौतथा ॥ उर्ध्वगेरक्तपित्तेचशीतमंभः प्रशस्यते ।

अर्थ—जल-शीतल और रूखा है, तथा पित्त, विष, भ्रम, दाह, अजीर्ण, श्रम, छर्दि, मोह, मूर्च्छा, मद्यपानके विकार, इनको नष्टकरें है ॥

मूर्च्छा, पित्तकी गरमी, दाह, विषजन्यरोग, रुधिरकी विमारी, मदात्यय, भ्रम, क्लम, अतिसार, मार्गचलनेसें हुआ परिश्रम, मथवाय, उर्ध्वगतरक्तपित्त इन सब रोगोंमें वैद्यरोगीको शीतलजल देवे ॥

## उष्णजलकेगुण

यत्क्वाथ्यमानंनिर्वेगंनिष्फेनंनिर्मलंभवेत् । अर्द्धावशि-
ष्टंभवति तदुष्णोदकमुच्यते ॥ कफमेदोनिलामघ्नंदी-
पनंबस्तिशोधनम् ॥ कासश्वासज्वरहरं पथ्यमुष्णोदकंसदा॥
तप्तंपाथः पादभागेनहीनं पथ्यंप्रोक्तंवातजातामयघ्नं ।
अर्धांशोनंनाशयेद्वातपित्तं पादप्रायंतत्तुदोषत्रयघ्नम्॥
तप्तायपिंड संसिक्तंलोष्टनिर्वापित्तंजलम् ।
सर्वदोषहरं पथ्यंसदानैरुज्यकारकम् ॥
उष्णोदकंश्रेष्ठतमंवदंतिविश्वायवानीसहितंक्रमेण ।
कफेचवातेनचपित्तरोगेसर्वेषुरोगेषुनशीतलाम्बु ॥

अर्थ—जो औंटानेसें निर्वेग, झागरहित, निर्मल और आधारहजावे उसको उष्णोदक कहते है, यह कफ, मेदा, वादी, आम, श्वास, खाँसी, ज्वर इनको दूरकरे, दीपन है, और वस्तीको शुद्धकरे है, उष्णोदक प्राणीको सदैव पथ्य है । तहां चतुर्थांश जलाहुआजल वातके रोगोंमें पथ्यहै, आधाजला हुआजल वातपित्तविकारोंको नष्टकरे, और जो जलकर चौथाई रहगया हो ऐसा जलत्रिदोष नाशक जानना । लोहेके गोलेको अग्निमें लाल करके अथवाईटको अग्निमें लाल करके जलमें बुझाय देवे, वह जलसर्व दोष हरण कर्त्ता, पथ्य तथा सदैव आरोग्यकारी है । सोंठ अजमायनको डालके औंटायाहुआ जल सर्वोत्तमहै, तहां सोठडाला जलकफरोगमें और अजमायनडाला हुआ वादीके रोगमें पथ्य

है, परंतु ये दोनो जल पित्तरोगमें हितकारी नहीं है एवं सब रोगोंमें शीतलजल पथ्यनहीं है ॥

### ऋतुविशेषमेंजलक्राथकेनियम

शारदंचार्धपादोनंपादहीनंतुहैमतम् । शिशिरेचवसंतेच ग्रीष्मेचार्धावशेपितम् । विपरीतेऋतौतद्वत्प्रावृष्यष्टावशेपितम् ॥

अर्थ—शरद ऋतुमें आठवा भागजला, हेमंत ऋतुमें चतुर्थांशजला–शिशिर वसंत आर ग्रीष्मऋतुमें अर्धावशेप एवं ऋतुके विपरीततामें और चौमासेमें अष्टावशेप जल पीना परम उत्तम कहाहे ॥

### रात्रिमेंसेवितउष्णजलकेगुण

भिनत्तिश्लेष्मसंघातंमारुतंचापकर्षति । अजीर्णंजरयत्याशुपीतमुष्णोदकंनिशि ॥

अर्थ—रात्रिमें गरम जलपीया हुआ कफके समूहको वादीको और अजीर्णको नष्टकरता है ॥

### उष्णोदककाप्रयोग

पार्श्वशूलेप्रतिश्यायेवातरोगेगलग्रहे॥आध्माने स्तिमितेकोष्ठेसद्यः शुद्धेनवज्वरे । हिक्कायांस्नेह पीतेच शीताम्बुपरिवर्जयेत् ॥

अर्थ—पसवाडेके, दर्दमें सरेकमां, वादीका रोग, गलग्रह, अफरा, कोठेकी अशुद्धी, जो वमन विरेचन द्वारा तत्काल शुद्ध हुआ हो, नवीनज्वर, हिचकी, और जिसनें स्नेह पान करारो, इन सबको शीतल जलपीना वर्जित है ॥

### उष्णजलथोडापीना

अरोचकेप्रतिश्यायेप्रसेकेश्वयथुक्षये । मंदाग्नावुदरे कोष्ठेज्वरेनेत्रामयेतथा । व्रणेचमधुमेहेचपानीयंमंदमाचरेत् ॥

अर्थ—अरुचि, सरेकमां, प्रसेक, सूजन, क्षय, मंदाग्नि, उदररोग, कोठेका रोग, ज्वर, नेत्ररोग, व्रणरोग, और मधुप्रमेह इन रोगोंमें इस प्राणीको पानी थोडा पीना चाहिये ॥

## शृतशीतजलकेगुण

गुल्मार्शोग्रहणीक्षयेषुजठरे मंदानलाध्मानके शोफे पांडुगलग्रहे व्रणगदेमेहेचनेत्रामये। वातारुच्यतिसारकेकफयुतेकुष्ठेप्रतिश्यायके उष्णंवारिसुशीतलंशृतहिमंस्वल्पंप्रदेयंजलम् ॥

अर्थ—गोला, ववासीर, संग्रहणी, क्षय, उदररोग, मंदाग्नि, अफरा, सूजन, पांडु रोग, गलग्रह, व्रणरोग, प्रमेह, नेत्ररोग, वादीका रोग, अरुचि, कफातितिसार, कोढ, पीनस, इन सब रोगोंमें औंटेहुए जलको शीतल करके थोडा २ पीनेको देवे ॥

## अथउष्णजलविधिः।

आमंजलंजीर्यतियाममात्रंतदर्धमात्रंशृतशीतलंच।
तदर्धमात्रंतुशृतंकदुष्णंपयप्रपाके त्रयएवकालाः॥

अर्थ—विना औंटाजल १ प्रहरमें पचता है, और औंटायकर शीतलकराहुआ जल आधे प्रहरमें पचता है, एवं ओटायके कुछ २ गरम पीनेसैं चौथाई प्रहरमें पचता है, ये जलपचनेके तीनही काल है ॥

## अधिकजलपीनेकेदोष

जलाधिक्यान्मनुष्याणामामवृद्धिःप्रजायते। आमवृद्ध्या तुमंदाग्निर्मंदाग्नौचाप्यजीर्णता। अजीर्णेनज्वरोत्पत्ति ज्वराद्वै धातुनाशनम्। धातुनाशात्सर्वरोगाजायंते चोत्तरोत्तरम् ॥

अर्थ—अधिक जलपीनेसैं मनुष्योंके आम वढती है, आमके वढनेसैं मंदाग्निहोती है, मंदाग्निसैं अजीर्ण—अजीर्णसैं ज्वरकी उत्पत्ति—ज्वरसैं सब धातुओंका नाशहोता है, धातुनाश होनेसैं संपूर्ण रोग एकके पीछे दूसरा होता है अतएव अधिकजल पीना वर्जित है ॥

## शर्वत

शर्करासहितंनीरं कफक्षतपवनापहम्। सितासितोपलायुक्तंशुक्रलंदोषनाशनम्।सगुडंमूत्रकृच्छ्रघ्नंपित्तश्ले-

ष्मकरंभवेत्॥स्निग्धंस्वादुहिमंहृद्यंदीपनंबस्तिशोधनम्। वृष्यंपित्तपिपासाघ्नं नालिकेरोदकंलघु ॥

अर्थ—शरवत पीना कफकरे और वादीको हरे है, सपेद चीनीका सर्वत वीर्यको वढावे और दोषोका नाश करे है। गुडका सरवत मूत्रकृच्छ्रको नष्टकरे और पित्तकफको करेहै। नारियलका जलचिकना, स्वादु, शीतल, हृदयको हितकारी दीपन और वस्तीको शुद्धकरे है, वीर्यवर्द्धक-पित्त, और प्यासको नष्टकरे एवं हलका है ॥

धारापातेनविष्टंभिदुर्जरंपवनाहतम्।
शृतशीतंत्रिदोषघ्नंबाह्यान्तर्भावशीतलम् ॥

अर्थ—वर्षाका जलविष्टंभी होताहै, और पवनसें ताडितजल दुर्जरहोताहै, एवं ओटायकेशीतल कराहुआ जलत्रिदोष नाशक तथा वाहर भीतरसें शीतल होताहै

दिवाशृतंतुयत्तोयंरात्रौतद्गुरुतांव्रजेत्।
रात्रौशृतंतुदिवसेगुरुत्वमधिगच्छति ॥

अर्थ—दिनका ओंटाहुआ जल रात्रिमें भारी होजाता है, और रात्रिमें औटायाहुआज्वर दिनमें भारी हो जाता हे, इसी कारण दिनमें ओटाहुआजल दिनमें पीवे और रात्रिका ओंटाजल रात्रिमें पीवे ॥

## जलशोधनविधि

जलके शोधनेको तीन लकडीकी और तीन खानेकी टिकटी वनवावे वो वाचमे छेदवाले हो उनमें क्रमसें छेददार चारघडा रक्खे ऊपरके घडेमें पक्केकौले भरके जल छोडदे, दूसरेमें पीली और चिरनी मिट्टीकेकंकरभरे तीसरेमें वालुरेतभरे, और नीचेके घडेको खाली रखे, उसमें क्रमसें जलटपक टपककरजमा होवेगाये शुद्धजल करने की विधि है ॥

(तरुणज्वरमेंकाढेकादेनानिषेध)

नकषायंप्रशंसंतिकदाचित्तरुणेज्वरे
कषायेणाकुलीभूतादोषाजेतुंसुदुस्तराः

अर्थ—बुद्धिमान् वैद्य तरुण ज्वरमें कदाचित् काढादेना अच्छा नही कहते क्योंकि यदि तरुणज्वरमें कषाय दीनी जावे तो दोष व्याकुल हो जाते है उन व्याकुल दोषोंका जीतना बडा कठिन है ॥

कषायं यः प्रयुंजतिनराणांतरुणज्वरे ।
ससुप्तंकृष्णसर्पंतुकराग्रेणपरामृशेत् ॥

अर्थ—जो वैद्य, रोगी मनुष्योंको तरुण ज्वरमें काढापीनेको देता है वह सोते हुए कालियरसांपको उँगलियोंसें छूकर जगाता है। अर्थात् जैसें काला सांप इसप्राणीको मारडालता है, उसी प्रकार तरुण ज्वरमे काढा देना प्राणोंके हरण करता है ॥

चतुर्भागावशिष्टस्तु यः षोडशगुणांभसा ।
सकषायः कषायः स्यात्सवर्ज्यस्तरुणज्वरे ॥

अर्थ—जो सोलहगुने जलमें ओटाया और चार भागवाकी रहनेपर उतार लिया वह कषाय, कषाय कहलाती है इसको तरुण ज्वरमें देनावर्जित है ॥

नवज्वरेमलस्तंभात्कषायोविषमज्वरम्
कुरुतेऽरुचिहृल्लासहिध्माध्मानादिकानपि

अर्थ—नवीन ज्वरमें कषाय देनेसें वो मलका स्तंभन करती है, अतएव विषम ज्वरको करे है तथा अरुचि, हृल्लास, हिचकी, और अफरा आदिरोगोंको करे है

अजीर्णद्रवशूलाढ्येसामेतीव्ररुजिज्वरे
नपिवेदौषधंतद्धिभूयएवाममावहेत्

अर्थ—अजीर्ण, द्रवपदार्थजन्यशूलमें, साम और तीव्रज्वरमें औषध कदाचित् नही पीवे, यदि पीवे तो वो नष्ट हुई आमको फिर प्रगट करती है ॥

परिपेकान्प्रदेहांश्चस्नानंसंशोधनानिच ।
दिवास्वापंव्यवायंचव्यायामंशिशिरंजलम् ।
क्रोधप्रवातभोज्यानिवर्जयेत्तरुणज्वरी ॥

अर्थ—जलका तरडा देना, चंदनादिककालेप, स्नान, वमन विरेचनद्वारा संशोधन, दिनमें सोना, मैथुन करना, दंडकसरत करना, शीतल जलका स्पर्श, क्रोध करना, हवामें बैठना, और भोजन करना इन सबकर्मोंको तरुण ज्वरवाला त्याग देवे ॥

शोषछर्दिमदंमूर्च्छाभ्रमतृष्णाद्यरोचकान् ।
प्राप्नोत्युपद्रवानेतान्परिषेकादिसेवनात् ॥

अर्थ—यदि तरुण ज्वरवाला उक्तपरिषेकादिकर्मोंकोंकरे तो शोष, छर्दि, मद, मूर्च्छा, भ्रम, तृष्णा, और अरुचिइत्यादि उपद्रवोंको प्राप्त होता है ॥

( परिषेकादिप्रत्येककेदूषणहारीतसैं )

व्यायामाज्ज्वरसंवृद्धिर्व्यवायात्स्तंभमूर्च्छनम् । मृतिश्चस्नेहपानात्तुमूर्च्छाछर्दिमदारुचिः ॥ गुर्वन्नभोजनात्स्वप्नाद्विष्टंभो दोषकोपनम् ॥ अग्निसादः खरत्वंच स्रोतसांचाप्रवर्त्तनम् ॥

अर्थ—ज्वरमें दंड कसरत करनेसैं ज्वरकी वृद्धि होती है, स्त्री संगकरनेसैं स्तंभ, मूर्छा और मृत्यु होती है, घृतादिपान करनेसैं मूर्च्छा, वमन, मस्तपना और अरुचि होती है, भारी अन्न भोजन करनेसैं और दिनमें सोनेसैं अफरा औ, र वातादिदोषोंका प्रकोपहोता है, एवं अग्निका शांति होना, तथा खरत्व होना एवं नेत्र नासिका आदिछिद्रोंका रुकना इत्यादि दुख होते है ॥

आसप्तरात्रात्तरुणंज्वरमाहुर्मनीषिणः
मध्यंचतुर्दशाहंच पुराणस्याततः परम्

अर्थ—सातरात्रि पर्यंत ज्वरकी तरुणावस्था पंडित जन कहते है, चौदह दिनपर्यंत ज्वरकी मध्यावस्था, और चौदह दिनके उपरांत पुराना ज्वर ऐसैं कहलाता है ॥

सप्ताहेनतुपच्यंतेसप्तधातुगतामलाः ।
निरामश्चाप्यतःप्रोक्तोज्वरःप्रायोऽष्टमेऽहनि ॥

अर्थ—सातदिनमें सात धातुओंके मल पचते है, अतएव प्राय आठवेदिन ज्वर निराम कहलाता है ॥

ज्वरपाककीअवधी

वातजः सप्तरात्रेणदशरात्रेणपैत्तिकः ।
श्लेष्मजो द्वादशाहेनज्वरः पाकंप्रपद्यते ॥

अर्थ—वातजन्य ज्वरसातरात्रिकरके-पैत्तिकज्वर दशरात्रि करके एवं कफजन्यज्वर वारह दिनमें पकताहै ॥

वातेद्वेपित्तजेचैकंकफेदिनचतुष्टयम् ।
सप्ताहंवातपित्तेच कफपित्तेदशस्मृताः ।

कफवातेद्वादशाहं त्रिदोषेचैवविंशतिः ॥

अर्थ—अब ग्रंथान्तरसै लिखते है कि वात जन्यज्वरदो दिनमें, पित्तजन्य १ दिनमें, कफजन्य ४ दिनमें, वातपित्तज्वर ७ दिनमें, कफ पित्तज्वर १० दिनमें, कफवातज्वर १२ दिनमें, एवं त्रिदोषज्वर २० दिनमें पचताहै ॥

सप्ताहादौषधंकेचिदाहुरन्येदशाहतः
केचिल्लघ्वन्नभुक्तस्यदेयमामोल्वणेनतु ॥

अर्थ—किसी आचार्यका मतहै कि सात दिनमें औषध देना, कोई दशदिनसैं औषध देना कहते है, कोई कहता है कि हलका अन्न देकर औषध देवे परंतु आमोल्वणमें औषध कदाचित् न देवे ॥

अपच्यमानंभैषज्यंभूयोजनयतिज्वरम्
मृदुज्वरोलघुर्देहश्चलितश्चमलोयदा
अचिरज्वरितस्यापिभेषजंयोजयेत्तदा

अर्थ—जो औषध नही पची वो फिर ज्वरको प्रगट करे है । अब औषध देनेका समय कहते हैं कि जिस रोगीका ज्वर धीमापडगया हो, देह हलकी हो, मल चलायमान होगए हो ऐसैं तत्काल आए हुए ज्वरवालेको भी औषधी वैद्य निस्संदेह देवे ॥

वृद्धवाग्भटे
षड्दशद्वादशाहेषुव्यतीतेषुक्रमेणवै
वातपित्तकफातङ्केष्वन्नकालाइमेत्रयः

अर्थ—छः, दश, बारह, इतने दिन व्यतीत होनेपर क्रमसैं, वात, पित्त, और कफके ज्वरमें रोगीको अन्न देना ये तीन काल अन्नके देनेमें कहे है ॥

द्वंद्वजेसंनिपातेचव्याधावारोग्यदर्शने
सतियवागूयूषादिकल्पयेदतिनैपुणात्
मुद्गान्मसूरांश्चणकान्कुलत्थान्मकुष्टकान्पाचनयूषहेतून्
हिताहितानांविहितांश्चपेयान्दद्याद्यवागूमपिपाचनैःस्वैः

अर्थ—द्वंद्वज और संनिपात जन्य रोगोंमें जब आरोग्य हो जावे तब यवागू और यूषकी कल्पना वैद्य बुद्धिमानीके साथ करे । मूंग, मसूर, चना, कुलथी

मोंठ, ये पाचनके हेतु हित और अहितोंको विचार जो हित हो ऐसा पेया अथवा यवागूको तत्तद्रोगमें ग्राह्यको देवे ॥

## औषधदेनेकाकाल

सप्तरात्रात्परंकेचिन्मन्यंतेदेयमौषधम् ।
दशरात्रात्परंकेचिदातव्यमितिनिश्चिताः ॥

अर्थ—कोई आचार्य सातरात्रिके पश्चात् औषध देना मानते है, कोई दशरात्रि व्यतीत होने पर औषध देना ऐसा निश्चय करते है ॥

सर्वज्वरेषुदातव्यः कषायः सप्तमेऽहनि
अथवालंघयेत्तावद्यावदारोग्यदर्शनम्

अर्थ—संपूर्ण ज्वरोंमें सातवे दिन काढा देना चाहिये, अथवा जवतक रोगी आरोग्य न होवे तवतक वैद्यको लंघन कराना चाहिये ॥

ज्वरितंज्वरमुक्तंवादिनान्तेभोजयेल्लघु
श्लेष्मक्षयेप्रवृद्धोष्माबलवाननलस्तदा
यथोचितेऽथवाकालेदेशसात्म्यानुरोधतः
प्रागल्पवन्हिर्भुंजानोनह्यजीर्णेनपीड्यते

अर्थ—ज्वरवाला हो अथवा ज्वर रहित हो परंतु रात्रिमें हलका भोजन करना चाहिये। जिसका कफ क्षीण हो गयाहो, गरमी वढी हुई हो, तथा जठराग्नि प्रवल होवे, और यथोचित काल हो, एवं देश, काल, और सात्म्य के अनुकूलमें, जठराग्निके शक्तिसैं न्यून भोजन करा ऐसा प्राणी कदाचित् अजीर्णी नहीं होती है॥

ननक्तंनगुरुप्रायंभुंजीततरुणज्वरी ।
नद्विवारन्नपूर्वाह्णे नाभिष्यंदिकदाचन ॥

अर्थ—तरुण ज्वर वाला रोगीदोवार भोजन नकरे, तथा पूर्वान्हमें भोजन न करे, तथाकफकारी भोजन न करे, एवं रात्रिमें भोजन न करे, और भारी पदार्थ भी कदाचित् नखाय ॥

विदेहः

सर्वज्वरेषुसप्ताहेमात्रांचलघुभोजयेत्

वेगापायेऽन्यथातद्धिज्वरवेगंविवर्द्धयेत्

अर्थ—संपूर्ण ज्वरोंमें सातवे दिन अल्पमात्र हलका भोजन करावे, यदि सातरात्रिके भीतर भोजन करावेगा तो दोषोंका वेग बना रहनेसैं वो ज्वरके वेगको वढाते है ॥

## अन्नदेनेकाकाल

क्षुत्संभवतिपक्केषुदोषधातुमलेषुच
कालेवायदिवाकालेसोन्नकालउदाहृतः

अर्थ—जब दोष धातु और मल पकजाते है तब इस प्राणीको भूख प्यास लगती है. यदि वह भूख भोजनके समय अथवा कुसमय लगें परतु वही अन्न-देनेका समय है ॥

## ( औषधादिकेअजीर्णमेंअन्नकोअग्राह्यत्व )

वीर्याधिकंभवतिभेषजमन्नहीनंहन्यात्तथामयमसंशय-
माशुचैव ॥ तद्बालवृद्धयुवतीमृदवोनिपीताग्लानिंपरां-
सपमुयातिबलक्षयंच ॥

अर्थ—अन्नहीन औषध वीर्याधिकवाली होती है, वह रोगको निःसंदेहशीघ्र-दूरकरे है, यदिवही अन्नरहित औषधको बालक, वृद्ध, स्त्री, और नम्रमनुष्य पीवे तो ग्लानिको तथा बलक्षयको प्राप्तहोवे ॥

## जीर्णऔषधकेलक्षण

अनुलोमोऽनिलस्वास्थ्यक्षुत्तृष्णासुमनस्कता।
लघुत्वमथचोद्गारः शुद्धोजीर्णौषधाकृतिः ॥

अर्थ—पवनका अनुलोमगतिसैं चलना, देहमें स्वस्थता, भूख, प्यासका लगना, मनका प्रसन्न होना, तथा देहमें हलकापन, और शुद्ध डकारकाआना ये औषध पचजानेकेलक्षण है ॥

## औषधग्रहणकामुहूर्त

भैषज्यंसल्लघुमृदुचरे मूलभेद्वचंगलग्ने ॥
शुक्रेन्द्वीज्येविदिचादिवसे चापितेपांरवेश्च ॥
शुद्धेरिष्फद्युनिमृतिगृहे सत्तिथौनोजनेभें ॥

अर्थ—लघु ( ह, अश्वि, पुष्य, अभि. ) मृदु (मृ, रे, चि, अनु,) चर( स्वा पुन, श्र, ध, श) मूल इननक्षत्रोंमें द्विस्वभावलग्न (मिथुन, कन्या, धन, मीन,) में शुक्र- चंद्र, गुरु, बुध, और रविवारमें तथा १.२–७–और ८ स्थान शुद्धलग्नमें और उत्तम तिथिमें ( अर्थात् रिक्ता, अमाआदि वर्जित तिथिमें ) और जिसदिन ज- न्मका नक्षत्र न हो ऐसें शुभसमयमें प्रथम औषध सेवन करना शुभ है॥

परंतु यह मुहूर्त देखना साधारण रोगमें लेना और जो रोग होते ही घोर उपद्रवकारी शीघ्रवढनेवाले है जैसें हैजा आदि उनमें वैद्यको कदाचित मुहूर्त नहीं देखना चाहिये॥

## औषधग्रहणमेंमंत्र

ॐअमृतंभक्षयामिस्वाहा॥
अच्युतानंतगोविंदनामोच्चारणभेषजात्
नश्यंतिसकलारोगासत्यंसत्यंब्रवीम्यहम्

इनको प्रथम पढकर फिर औषध पीवे तो वह वहुत जल्दी गुणकरे है। तथा रोगी पडा २ इसश्लोकको मनमें जपाकरे तो रोग शीघ्र दूर होवे॥

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनंदनायच
प्रणतक्लेशनाशाय गोविंदायनमोनमः

---

## औषधग्रहणविधिः

तत्रोपविश्यविश्रांतः प्रसन्नवदनेक्षणः औषधंहेमर- जत मृद्भाजनपरिष्टितम्। पिवेत्प्रसन्नवदनः पीत्वा- पात्रमधोमुखम्। निक्षिप्यपात्रेसलिलंताम्बूलाद्यु- पकल्पयेत्॥

अर्थ—रोगी वैठकर, और परिश्रमको दूरकर, प्रसन्न मुख और नेत्रकर सु- वर्ण, चांदी, अथवा मिट्टीके पात्रमें स्थित औषधको प्रसन्न मुखसें पीवे, और औ- षधको पीकर उसपात्रको औंधेमुख रखदेवे फिर जलसें, हाथ धोकर पानकी वी- डीआदिको चवावे॥

## गंडूषवर्जन

यमदूतपिशाचाद्यायक्षगंधर्वराक्षसाः।

तेघ्नन्त्यौषधवीर्याणिततोगंडूषवर्जनम् ॥

अर्थ—यमके दूत, पिशाच ( आदिशब्दसे भूत, प्रेत, वेतालादिक ) यक्ष, गंधर्व, राक्षस ये सब औषधके पराक्रमको नष्टकरदेते है इसीसैं औषधको पीकर कुरला न करे ॥

क्वाथस्यकल्कस्यरसस्ययामंमासत्रयंचाञ्जनचूर्णवीर्यम् ।
षण्मासकाख्यंगुडलेहवीर्यंसंवत्सरं तैलघृतस्यवीर्यम् ॥

अर्थ—क्वाथ ( काढा ) कल्क, स्वरस इनमे १ प्रहर पर्यंत अपनी शक्ति रहती है, और अंजन-सुरमाआदि-चूर्ण-( हिंग्वाष्टकादि ) इनकी तीनमहिने शक्ति रहती है, गुड ( बाहुशालगुडादि ) लेह ( कल्याणावलेह आदि ) इनमें छःमहिने पर्यंतवीर्यरहता, एवं घृत और तेलमें १ वर्ष पर्यंत वीर्य रहता है, उपरांत हीनवीर्य होजाती है ॥

## वातज्वरके लक्षण

वेपथुर्विषमो वेगः कंठोष्ठमुखशोषणम् ।
निद्रानाशः क्षवः स्तंभो गात्राणां रौक्ष्यमेव च ॥ ८ ॥
शिरोहृद्गात्ररुग्वक्त्रवैरस्यं गाढविट्कता ।
शूलाध्माने जृंभणं च भवन्त्यनिलजे ज्वरे ॥ ९ ॥

अर्थ-कंपहोना, ज्वरका विषमवेग, कंठ, होठ, मुख, इनका सूखना; निद्राका नाश, छींकका नआना, देहकारूखापना, चकारसैं नेत्र, विष्ठा, मूत्र, इनका काला होना। और आचारी " रौक्ष्यमेवच " इसजगे " श्यावांगमलमूत्रता " ऐसा पाठ कहतेहैं और मस्तक हृदय गात्र इनमें पीडा। कोई ( शंका ) करे कि गात्र पदके धरनेसैंही मस्तक हृदय आदिका बोध होगया फिर ( मस्तक ) और हृदय पद क्यों धरा! ( उत्तर—ये दोनों पदके धरनेसैं इनमें दर्दकी आधिक्यता दिखाई अर्थात मस्तक हृदयमें बहुत पीडा होय मुखका विरसता, मलका रुकना, शूल, अफरा, जम्भाई ये लक्षण वातज्वरके होते है।

## वातज्वरपरशुंठ्यादिपाचन

विश्वभेषजकैरात कुरुविंदगुडूचिका। पाचनं स्मृतमेतेषां देयं पवनजे ज्वरे ॥

अर्थ—सोंठ, चिरायता, नागरमोथा, और गिलोय, इनका काढा वातज्वरमें पाचनार्थ देवे ॥

## गुडूच्यादिपाचनं

गुडूचिकोषणाजटामहौषधैश्च पाचनं ।
मरुज्वरे सलिंगके दिने च सप्तमे हितं ॥

अर्थ—गिलोय, पीपल, जटामांसी. सोंठ, इनका काढा वातज्वरका पूर्वरूप होकर जाने उपरांत सातवेदिन हितकारकहै ॥

## शठ्यादिकाढा

शठीनिशाद्वयंदारुशुंठीपुष्करमूलकं ॥ एलागुडूची
कटुकीपर्पटश्चयवासकः ॥ शृंगीकिराततिक्तंचदशमू-
लंतथैवच ॥ क्वाथमेषांपिबन्कृष्णासिंधुचूर्णयुतंनरः ॥
ज्वरान्सर्वान्द्रुतंहन्यान्नात्रकार्याविचारणा ॥

अर्थ—कचूर, हलदी, दारुहलदी देवदारु, सोंठ, पुहकरमूल, इलायची, गिलोय, कुटकी, पित्तपापडा, जवासा, काकडासिंगी. चिरायता, कुटकी, और दशमूल, इनका काढा पीपल और सेंधानिमक डालके देवे तो सर्वज्वरोंका शीघ्र नाश करे, इसमें संशय नहींहै ॥

## श्रीपर्ण्यादिपाचन

श्रीपर्णीतर्कारीश्रीफलटिंटूकपाटलामूलैः ।
पाचनमुचितंमारुतजनितज्वरहारिवारिभिःक्वथितैः ॥

अर्थ—श्रीपर्णी, अरनी, बेलगिरी, टेंटू, पाडर, इनका काढा करके वातज्वरमें देवे यह पाचनहै ॥

## गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीसारिवाद्राक्षाबलाचांशुमतीतथा ।
एषोपिपरमः सिद्धोवातज्वरविनाशनः ॥

अर्थ—गिलोय, सरिवन, दाख, खिरेटी, और शालपर्णी, इनका काढा वातज्वरमें देवे. यह उत्तम है ॥

## दर्भमूलादिकाढा

दर्भवलागोक्षुरकंपंचेत्पादावशेषितं ।
शर्कराघृतसंयुक्तं पिवेद्वातज्वरापहं ॥

अर्थ-कुशाकीजड, खिरेटी, और गोखरू, इनका काढा चतुर्थांशकरके शीतल होनेपर मिश्री तथा सहत मिलायके देवे तो वातज्वरका नाशकरे ॥

## त्रिफलादिकाढा

श्रीफलंसर्वतोभद्राकामदूतीचशोणकः ॥ तर्कारीगोक्षु-
रः क्षुद्राबृहतीकलशीस्थिरा ॥ रास्नाकणाकणामूल-
कुष्टशुंठीकिरातकः ॥ मुस्तामृतामृतावालंद्राक्षायासः
शताह्विका ॥ एषांक्काथोनिहंत्येवप्रभंजनकृतज्वरं ॥
सोपद्रवंचयोगोयंसर्वयोगवरःस्मृतः ॥

अर्थ—वेलगिरी, छोटीकंभारी, लालपाढर, टेंटु, अरनी, गोखरू, कटेरी, बडीकटेरी, पिठवन, सालपाणी, रास्ना, पीपल, पीपरामूल, कूठ, सोंठ चिरायता, नागरमोथा, गिलोय, खिरेटी, नेत्रवाला, दाख, धमासों, और सतावर, इनका काढा वातज्वरका नाश करे ॥

## भूनिंबादिकाढा

भूनिंबमुस्ताजलकंटकारिद्वयामृतागोक्षुरनागराणां ।
सशालिपर्णीद्वयपौष्कराणांक्काथंपिवेद्वातभवज्वरार्तः ॥

अर्थ—चिरायता, नागरमोथा, नेत्रवाला, कटेरीदोनो, गिलोय, गोखरू सोंठ सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, पुहकरमूल, इनका काढा जिसके वातज्वर आता हो उसको देवे, ॥

## दुरालभादिकाढा

[illegible]ालभानागरतिक्तपाठासठीवृषैरंडजटाकषायः ।
[illegible]तः सशूलंशमयेज्ज्वरंच सश्वासकासंपवनप्रसूतं ॥

[illegible]धमासो, सोंठ, कुटकी, पाढ, कचूर, अडूसा, और अंडकी जड इनका [illegible] शूल, श्वास, खांसी, तथा वातज्वर इनका नाशकरे ॥

## शुंठ्यादिकाढा

विश्वामृताग्रंथिकसिद्धितोयंमरुज्ज्वरः स्यात्पिबतः कुतोयं । क्वाथोथकुस्तुंबरुदेवदारु क्षुद्रौषधैः पाचनमत्रचारु ॥

अर्थ—सोठ, गिलोय, और पपिरामूल, इनकाढा पीनेवाले मनुष्योंके वातज्वर कहां रहता है, और इस वातज्वरपर धनिया, देवदारु, कटेरी, और सोंदके काढेका पाचन सुंदर है ॥

## पंचमूलादिकाढा

पंचमूलीवलारास्नाकुलित्थसहपौष्करैः ।
क्वाथोहन्याच्छिरः कंपंपर्वभेदमरुज्ज्वरं ॥

अर्थ—पंचमूल, खरेटी, रास्ना, कुलथी, और पोहकर मूल इनका काढा शिरःकंप, संधियोंकी पीडा, और वातज्वर इनका नाश करे ॥

## कणादिकाढा

कणारसोनामृतवल्लिविश्वानिदग्धिकासिंदुकभूमिनिंवैः समुस्तकैराचरितः कषायोहिताशिनांहंतिगदानिमांस्तु ॥ ज्वरंमरुत्कोपसमुद्भवंतथावलासजंचानलमंदतांच ॥कंठावरोधंहृदयावरोधंस्वेदंचहिक्कांचहिमत्वमोहान् ॥

अर्थ—पीपल, लहसन, गिलोय, सोठ, कटेरी, सह्यालू, चिरायता, और नागरमोथा इनका काढा लेकर पथ्यसें रहे तो वातज्वर, कफज्वर, मंदाग्नि, गला तथा हृदयकारुकना, पसीने, हिचकी और शीत, मोह इनका नाश करे ॥

## काकोल्यादिकाढा

कांकोलीबृहतीमुस्ताकुष्ठंदारुवृषामता ।
शुंठीक्वाथःसितायुक्तोहंतिवातज्वरंपरं ॥

अर्थ—कांकोली, कटेरी, नागरमोथा, कूठ, देवदारु, अडूसा, और सोंठ, इनका काढा मिश्रीडालकें देवे तो वातज्वर दूर हो ॥

## अमृतादिकाढा

अमृतानागरंमुस्तानिशाव्हययवासकैः ।
वातज्वरेप्रदातव्यः कृष्णायुक्तकषायकः ॥

अर्थ—गिलोय, सोंठ, नागरमोथा, हलदी, और जवासो इनका काढा पीपरका चूर्ण डालके वातज्वरमें देवे ॥

## ग्रंथ्यादिकाढा

ग्रंथिकंपर्पटोवासाभार्गीविश्वागुडूचिका ॥
एभिःसुसाधितंतोयंतीव्रवातज्वरापहं ॥

अर्थ—पीपरामूल, पित्तपापरा, अडूसा, भारंगी, सोंठ, और गिलोय, इनका काढा तीव्रवातका नाश करे ॥

## शालिपर्ण्यादिकाढा

शालिपर्णीबलाद्राक्षागुडूचीसारिवातथा ॥ आसांका
थंपिवेत्कोष्णंतीव्रवातज्वरच्छिदं ॥ काश्मरीसारिवा
द्राक्षात्रायमाणामृताभवः ॥ कषायःसगुडःपीतोवात
ज्वरविनाशनः ॥

अर्थ—सालपर्णी, खरेटी, दाख, गिलोय, और सरिवन, इनका काढा कुछ गरम पीवे तो तीव्र वातज्वर दूरहो । कंभारी, सरिवन, दाख, त्रायमाण, और गिलोय, इनके काढेमें गुड डालके पीवे तो वातज्वर नाश होवे ॥

## गुडूच्यादिपाचन.

गुडूचीपिप्पलीमूलनागरैःपाचनंस्मृतं ॥
दद्याद्वातज्वरेपूर्णलिंगेसप्तमवासरे ॥

अर्थ—गिलोय, पीपरामूल, और सोंठ, इन तीन औषधोंका काढा ज्वर पूर्ण दशामें आनेसें सातवें दिन देवे तो वातज्वर नष्ट हो ॥

## किरातादिकाढा.

किराताब्दामृतोदीच्यबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।
सस्थिराकलशीविश्वैःक्काथोवातज्वरापहः॥

अर्थ—चिरायता, नागरमोथा, गिलोय, नेत्रवाला, दोनो कटेरी, गोखरू पिठवन, सालपर्णी—और सोंठ, इनका काढा वातज्वर नाशकहै ॥

## पिप्पल्यादिकाढा

पिप्पलीसारिवाद्राक्षाशतपुष्पाहरेणुभिः।
कृतः कषायः सगुडोहन्यात्पवनजंज्वरं ॥

अर्थ—पीपर, सारिवा, दाख, सौफ, रेणुकाकेबीज, इनका काढा कर गुड डालके देवे तो वातज्वर नष्ट हो ॥

## उशीरादिकषाय

उशीरकलशीमहौषधकिरातकांभोधरस्थिराबृहति-
काद्वयामृतलतात्रिकंटैःकृतं । कषायकममुंपिवेत्प-
वनजज्वरव्याकुलःपुमान्दशशतच्छदछदमदग्रसलोचने ॥

अर्थ—हे कमलदललोचने! नेत्रवाला, पिठवन, सोठ, चिरायता, नागरमोथा सालवन, कटेरी दोनो, गिलोय और गोखरू इनका काढा वातज्वरपीडितोको देनेसें उनका ज्वर शांत होवे। यह वैद्यजीवनमें लिखाहै ॥

## मरीच्यादिकाढा

मरीचंरुचकंशुंठीकिरातंचहरीतकी। पिप्पलीकटुकी-
चैववात ज्वरविनाशनं ॥

अर्थ—कालीमिरच, अंडकीजड, सोठ, चिरायता, छोटी हरड, पीपल, कुटकी, इनका चूर्ण, अथवा काढा पीनेसें वातज्वर दूर होवे ॥

## त्रिफलादिचूर्ण

त्रिफलाव्योपगुडकंशर्करात्रिवृतार्धकं। मोदकंभक्षयि-
त्वातु पिवेच्चोष्णजलंपुनः। पार्श्वशूलेऽरुचौकासेज्व-
रेचानिलसंभवे ॥

अर्थ—त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल. इनका चूर्ण गुडमें अथवा निशोथके चूर्णमें दुगनी सांड मिलाय भक्षण करे, ऊपरसें गरम जलपीवे तो पार्श्वशूल, अरुचि. खांसी. और वातज्वर इनका नाश होवे ॥

## पिप्पल्यादिचूर्ण

तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेपिप्पलीहिंगुलंविषं ॥ द्विगुंजंमधुनादेयंवातज्वरविनाशनं ॥

अर्थ—पीपल, हिंगुल तथा सिंगियाविष ये समान भागले खरल करे, फिर इस चूर्णको २ रत्ती सहतके साथ देवे तो वातज्वरका नाश होय ॥

## द्राक्षादिचूर्ण

द्राक्षादुरालभापथ्याचिक्कणीसमभागतः ।
एतागुडान्वितानूनं नाशयंत्यनिलज्वरं ॥

अर्थ—दाख, धमासा, छोटी हरड, तथा चिकनी सुपारी. इनको समभागले चूर्णकरे इसमेसै २॥तोले गुडमें मिलायकर देवे तो वातज्वर नष्टहोय ॥

## शतावरीस्वरसः

सद्योवातज्वरंहंति शतावर्यामृतारसः । समासात्सगुडः पीतो बलहीनस्यदेहिनः ॥

*अर्थ—सतावर, गिलोय, इनका स्वरस गुडमिलायकर देनेसे निर्बल पुरुषका वातज्वर शांत होय*

## कल्पतरुरसः

शुद्धं शंकरशुक्रमक्षतुलितंमारारिनारीरजस्तावत्तावदुमापतिस्फुटगलालंकारवस्तुस्मृतम् ॥ तावत्येवमनःशिला च विमलातावत्तथाटंकणं॥ शुंठीद्वचक्षमिताकणाचमरिचंदिक्पाल संख्याक्षकम् । विषादिवस्तूनिशिलोपरिष्टाद्विचूर्णयेद्वाससिशोधयेच्च॥ततस्तुखल्वेरसगंधकौचचूर्णंचतद्यामयुगंविमर्द्य । कल्पतरुनामधेयोयथार्थनामारसःश्रेष्ठः॥ समीरणश्लेष्मगदान्हरतेमात्रास्यगुंजैका ॥ आर्द्रकेणसममेषभक्षितोहंतिवातकफसंभवंज्वरं । श्वासकासमुखसेकशीततावन्हिमांद्यमरुचिंचनाशयेत् ॥ नस्येनाश्वेवहरति शिरोर्तिक-

फवातजाम् । मोहंमहांतमपिचप्रलापंक्षवथुग्रहम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, वच्छनागविष, मनसिल, सुहागा, प्रत्येक शुद्धकरे हुए एक एक तोले लेवे, उसमें सोंठ २ तोले, कालीमिरच ८ तोले, पीपल ८ तोले, इस प्रमाण डालके वच्छनागादि औषधोंको वारीक कूट पीस कपड छनकर लेवे फिर पारेगंधककी कजलीकर उसमें उक्त औषधोंके चूर्णको मिलाय देवे सबको एकत्र कर दो प्रहर खरल करके जलसैं एक २ मासेकी गोली बनावे, तो यह कल्पतरु नामक श्रेष्ट रस बनकर तयार हो, इसमेंसैं १ गोली प्रातःकाल सेवन करे तो वात कफके रोग दूर होवे इस रसको अदरखके रससैं खाय तो वात कफज्वरका नाश करे, तथा श्वास, खांसी, मुखसैं लारकावहना, शीत, मंदाग्नि, और अरुचि इनका नाशकहै—एवं इस रसकी नस्यलेनेसैं कफवातसैं प्रगट हुई मस्तक पीडाको हरणकरे। उसीप्रकार वडाभारी मोह, प्रलाप, और छींककान आना इनको नाश करे ॥

## भैरवरसः

विषमहौषधिमागधिकोषणत्र्यमणिरक्तकमार्द्रकमर्दि-
तम्॥क्रमविवर्द्धितमुद्गलितज्वरं हरतिभैरवएपरसोवरः॥

अर्थ—सिंगियाविष, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, ये औषध प्रत्येक एकसैं दूसरी अधिक भाग लेवे, सबको कूटपीस आकके दूध और अदरखके रससैं खरलकर गोली बनावे तो यह भैरवरससिद्ध होवे, इसको बलाबल देखकै देवे तो घोर वातज्वरको दूर करे ॥

## शीतभंजीररसः

पारदंरसकंतालंशिखितुत्थंचटंकणम् । गंधकंचसमं-
पिष्ट्वाकारवेल्लरसैर्दिनम् ॥ ताम्रपात्रोदरेलेप्यंयंत्रे-
पात्रंत्वधोमुखम् । दत्वारुध्वा विशोष्याथवल्कलाभिः
प्रपूरयेत् ॥ पचेद्दार्वाग्निनाचुल्यांताम्रपृष्टगतायदा ।
स्फुटंतिव्रीहयः शुद्धोरसस्तंस्वांगशीतलम् ॥ ताम्र-
पात्रात्समुद्धृत्यचूर्णयेन्मरिचैः समं । शीतभंजीरसो-
नाम द्विगुंजंवातकेज्वरे ॥ दातव्यः पर्णखंडेन तत्क्ष-
णान्नाशयेज्वरम् । त्रैदिनंविषमंतीव्रंएकाद्वित्रिचतुर्थकम् ॥

अर्थ—पारा, खपरिया, हरताल, लीलाथोथा, सुहागो, और गंधक, ये औषध समभाग लेकर करेलेके रसमें १ दिन खरलकरे, फिर उस पिट्ठीको तामेके पात्रके भीतर लेप करके और उस पात्रके ऊपर दूसरा अधोमुख तामेका पात्रमें दावकर सात कपड मिट्टी कर धूपमें सुखाय चूल्हेपर रख वालूका यंत्रमें तीव्राग्नीसें पचन करावे, जब वालूके ऊपर रखेहुए धान खिलजावे तव अग्नि मंद कर शीतल करे, और औषधको पात्रमेंसें निकाल बराबरकी कालीमिरच मिलायके पीसै २ रत्ती पानमें धरके देवे तो तत्क्षण वातज्वर नाश होवे, तथा यह शीतभंजीर रस तीनदिन सेवन करे तो, तीव्र विषमज्वर, एकाहिक, द्याहिक और चातुर्थिक ज्वरोंको शांत करे,॥

## मातुलंगादिगुटिका

मातुलंगफलकेसरोद्धृतःसिंधुजन्ममरिचान्वितोमुखे। हंतिवातकफरोगमास्यगंशोषमाशुजडतामरोचकं॥ शर्करादाडिमाभ्यांचद्राक्षादाडिमयोस्तथा ॥ कल्कं विधारयेदास्येशोषवैरस्यनाशनं ॥

अर्थ—विजोरेकी केशर, सैंधानिमक, कालीमिरच, ए तीनो औषध एकत्र खरलकर गोली कर मुखमें रक्खे, इससै मुख संबंधी कफ वातरोग, शोष, जडता, और अरुचि, दूर होवे। खांड और अनार अथवा दाख और अनार इनका कल्क शोष तथा मुखकी विरसता दूर होनेके लिये सेवन करे॥

## द्राक्षादिप्रतिसारण

द्राक्षामलकयोःकल्कंसघृतंवदनेक्षिपेत्॥ तेनघृष्टामुखस्यांतःकुर्वीतप्रतिसारणं॥ जिव्हाताळुगलांतस्थः संशोषस्तेनशाम्यति ॥ सुरसंजायतेवक्रंरुचिर्भवति भोजने ॥

अर्थ— दाख और आमले इनका कल्क घीके साथ मिलाय उसको मुखके भीतर फेरे, उसको प्रतीसारण कहते है, यह करके उक्त दाख आदिकी गोली मुखमें रखेतो जिव्हा, तालु, तथागला, इनका सूखना शांत होय और मुख सुरस होकर भोजनमें रुचि होवे,॥

## हरीतक्यादिगुटिका.

हरीतकीत्रिवृच्चैवदारुकाणांपृथग्भवेत्॥पलद्वयंकणाशुंठीगुडूचीगोक्षुरोवरी ॥ सहदेवीविडंगंचप्रत्येकंपलसंमितं ॥ मधुनावटिकांकृत्वाखादन्ज्वरमपोहति ॥ कासंश्वासंमलस्तंभंवन्हिमांद्यंनियच्छति ॥

अर्थ—हरडकी छाल, निसोथ, विधायरा, प्रत्येक ८ तोले, पीपर, सोंठ, गिलोय, गोखरू, सतावर, सहदेई, वायविडंग, ये प्रत्येक तोले ४ प्रमाण लेकर चूर्ण कर सहतसें गोळी वनावे यह ज्वर, खांसी, श्वास, मलावरोध, और अग्निमांद्य इनका नाश करे, ॥

## स्वेदकाढनेकेविषयमेंप्रमाणकहतेहै

वातश्लेष्मज्वरेस्वेदंजंघापार्श्वास्थिशूलिनि ॥ पीनसश्वासबाधिर्येकारयेत्तद्विधानवित्॥ स्रोतसांमार्दवंकृत्वानीत्वापावकमाशयं ॥ हत्वावातकफस्तंभंस्वेदोज्वरमपोहति ॥

अर्थ—वातकफज्वरमें, जंघा, पार्श्वभाग और हड्डी इनमें शूल होनेसें तथा पीनस, श्वास, तथा वधिरता ए विकार होनेसै पसीने काढने चाहिये, अर्थात् पसीने निकालनेसैं इतने गुण होते है, रसवाहिनी नाडियोंका नम्र होना, तथा अग्निको स्वस्थानमें लावे और वात तथा कफ संवधी जडत्वको नाशकर ज्वरका नाश करे है, ॥

## खर्परभृष्टवालुकास्वेदयोग

खर्परभ्रष्टपरास्थितकांतिकसंसिक्तवालुकास्वेदः ॥ शमयतिवातकफामयमस्तकशूलांगभंगादीन् ॥

अर्थ— वालूको खिपडेमें तपाय उसपर काजी डाल उसका वफारो देय तो वात कफ रोग, मस्तकशूल, तथा अंगोंका टूटना इससे शांति होता है, ॥

## निद्रानाशनिदान

नावनंलंघनंचिंताव्यायामःशोकभीक्रुधः ॥ एभिरेवभवेन्निद्रानाशःश्लेष्मातिसंक्षयात्॥

अर्थ- नस्य, लंघन, चिंता, दंडकसरत, शोक, भय, और क्रोध, इन कारणोंसें अत्यंत कफ नाश होनेसें निद्रा नहीं आती ॥

## विजयाचूर्णयोग

भ्रष्टंतुविजयाचूर्णंमधुनानिशिभक्षयेत् ॥
निद्रानाशेतिसारेचग्रहण्यांपावकक्षये ॥

अर्थ- रात्रिमें भांगको भून उसके चूर्णको सहतके साथ देवे तो निद्रा नाश, अतिसार, संग्रहणी, तथा मंदाग्नि इत्यादि रोग नष्ट होवे, ॥

## सगुडादिचूर्ण

गुडंपिप्पलिमूलस्यचूर्णेनालोडितंलिहन् ॥ चिरात्
पित्तसंनष्टांनिद्रांमाप्नोतिमानवः ॥

अर्थ—पीपरामूलके चूर्णको गुडके साथ खानेसें बहुत दिनका निद्रा नाश हुआ होय वो नष्ट होवे ॥

## निद्रालानेकीऔषध

मूलंतुकाकमाच्यावद्धंसूत्रेणमस्तकेनियतं ॥ विदधाति
नष्टनिद्रांनिद्रायाश्चैवसिद्धमिदं ॥

अर्थ—काकमाची ( मकोय ) की जड सूतसें मस्तकमें बांधे तो निद्रा तत्काल आवे यह अनुभव सिद्ध है, ॥

## पित्तज्वरकेलक्षण

वेगस्तीक्ष्णेतिसारश्चनिद्राल्पत्वंतथावमिः ॥ कंठो
ष्ठमुखनासानांपाकःस्वेदश्चजायते ॥ प्रलापोवक्रकटु
तामूर्छादाहोमदस्तृषा ॥ पीतविण्मूत्रनेत्रत्वक्पैत्तिके
भ्रमएवच ॥

अर्थ—ज्वरका तीक्ष्णवेग हो अतिसार ( यानी पित्तके वेगमें दस्तका पतला होना न कि अतिसार रोगहो ) थोडी निद्रा आवे, पित्तको कफके स्थानमें पहुंचनेसें वमनका होना, कंठ, होठ, मुख, नाक, इनका पकना। और पसीनोंका आना बडबडाना मुखमें कटुआट, मूर्च्छा, दाह, उनमत्तपना, प्यास, विष्ठा, मूत्र, नेत्र, देहकी त्वचा इनका पीला होना तथा भ्रम ये लक्षण पित्तज्वरमें होते हैं। शंका—क्यौंजी भ्रमको वातविकारमें लिखाहै यासें ये तो वातका धर्म है फिर पित्तके

विकारमें भ्रमशब्द क्यौं कहा? *उत्तर–तुमने कहासो ठीक है परंतु रोग एकही दोषसैंही नहीं प्रगट होवे किंतु अनेक दोषोंसें होय है जैसे लिखाहै "न रोगोप्येकदोषजः इति" और "पैत्तिके भ्रम एवच" इस पदमें च कार जो पढाहै इस्से इस श्लोकमें जो नहीं कहै कोन तीव्रगरमी, लालचकते, शीतकी इच्छा, दाह अरुचि, इत्यादि जानने॥

## छिन्नादिपाचन

छिन्नरुहापिचुमंदकधान्यंविश्वनिशाजनितश्चकषायः।
पाचनकंगुडमिश्रितमेवपित्तभवेज्वरएवहिपेयं॥

अर्थ—गिलोय, नीमकीछाल, धनिया, सोंठ, तथा हलदी इनका काढा गुड डालकर देंवे यह पित्तज्वरपर पाचनहै,॥

## दुस्पर्शादिकाढा

दुस्पर्शवासाकटुकाहरेणुप्रियंगुभूनिंबकृतःकषायः॥
पीतोहिपित्तप्रभवंसदाहंज्वरंजयेदाशुसितासमेतः॥

अर्थ—धमासो, अडूसा, कुटकी, पित्तपापरा, फूलप्रियंगु, और चिरायता इनका काढा खांड डालकर पीवे तो दाहयुक्त पित्तज्वरका नाश करे,॥

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षापटोलीपिचुमंदतिक्ताहरीतकीसिंहमुखीजलंच।
धान्याकलोध्रांबुदनागरंचपित्तज्वरांभोनिधिवाडवाग्निः॥

अर्थ—दाख, पटोलपत्र, नीमकीछाल, कुटकी, छोटीहरड, कटेरी, नेत्रवाला धनिया, लोध, नागरमोथा, औरसोंठ इनका काढा पित्तज्वररूप समुद्रको वड, वाग्नीके समान है,॥

## पित्तज्वरप्रतिकार

अमलैःकमलैरथानिलैरलसैःपुष्परजःसमन्वितैः॥
जलकेलकथाकुतूहलैरपिपित्तज्वरजारुजोजयेत्॥

अर्थ—श्वेतकमल, सुगंधित पुष्पोंमें होकर आया मंद सुगंध वायु, और जल क्रीडा, इन करके वैद्योंको पित्तज्वर जनित पीडा जीतनी चाहिये॥

## तिक्तादिकाढा

तिक्तामुस्तायवैःपाठाकट्फलाभ्यांसहोदकं॥ पक्वंसश
र्करंपीतंपाचनं पैत्तिकज्वरे ॥

अर्थ– कुटकी, नागरमोथा, इन्द्र जौ, पाढ, कायफल, और नेत्रवाला इनका काढा खांड डालके पीवे यह पित्तज्वरको पाचक है, ॥

## पर्पटादिकाढा

पर्पटोवासकस्तिक्तकिरातोधन्वयासकः॥ प्रियंगुश्च
कृतःक्काथएषःशर्करयापुनः॥पिपासादाहपित्तास्रयुक्तं
पित्तज्वरंहरेत् ॥

अर्थ—पित्तपापडा, अडूसा, कुटकी, चिरायता, धमासो, फूलप्रियंगु, इनका, काढा खांड डालकर लेय तो प्यास, दाह, तथा रक्तपित्त, इन सहित पित्तज्वरको दूर करे

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षाहरीतकीमुस्ताकटुकीकृतमालकः। पर्पटश्चकृ-
तः क्वाथएषपित्तज्वरापहः ॥ मुखशोषप्रलापांतर्दा-
हमूर्च्छाभ्रमप्रणुत् । पिपासारक्तपित्तानांशमनोभे-
दनोमतः ॥

अर्थ—दाख, छोटीहरड, नागरमोथा, कुटकी, अमलतासकागूदा, और पित्तपापडा इनका काढा लेय तो मुखशोष, बकवाद, अंतर्दाह, मूर्छा, तथा भ्रम इनको नाश करे और प्यास तथा रक्तपित्त इनको शमन करे तथा मलको निकाले ॥

## पटोलादिकाढा

पटोलयवधान्याकमधुकंमधुसंयुतं। हंतिपित्तज्वरंदा-
हंतृष्णां चातिप्रमाथिनीं॥

अर्थ—पटोलपत्र, इन्द्र जौ, धनिया, मुलहटी, इनका काढा सहत डालके पीवे तो पित्तज्वर, दाह, तथा प्यास शांत हो ॥

## गुडूच्यादिकाढा

गुडूच्यामलकीयुक्तः केवलोवापिपर्पटः ।
पित्तज्वरहरेतूर्णंपित्तशोषभ्रमान्वितं ॥

अर्थ—गिलोय, आमले, तथा पित्तपापडा, इनका अथवा केवल पित्तपापडेका काढा, लेनेसैं शोष, तथा भ्रम युक्त पित्तज्वरको हरण करे. ॥

## ह्रीबेरादिकाढा

ह्रीविरचंदनोशीरघनपर्यट्साधितं । दद्यात्तुशीतलंवारितृड्वृद्धिज्वरदाहनुत् ॥

अर्थ—नेत्रवोला, लाल चंदन, खस, नागरमोथा, और पित्तपापडा इनका काढा शीतल करके देय तो अत्यंत प्यास, ज्वर, तथा दाह, इनको दूर करे ॥

## भूनिंबादिकाढा

भूनिंबातिविषालोध्रमुस्तकेंद्रयवाः स्मृताः । वालकंधान्यकं बिल्वंकषायोमाक्षिकान्वितः॥भिनत्तिश्वासकासांश्चरक्तंपित्तंज्वरंहरेत् ॥

अर्थ—चिरायतो, अतीस, लोध, नागरमोथा, इन्द्रजो, नेत्रवाला, धनिया और वेलगिरी इनका काढा सहत डालके लेयतो अतिसार, श्वास, खांसी, रक्त, पित्त, ज्वर इनको दूर करे ॥

## कट्फलादिकाढा

कट्फलेंद्रयवांवष्टातिक्तामुस्तैः शृतंजलं ।
पाचनंदशमेन्हिस्यात्तीव्रपित्तज्वरेनृणां ॥

अर्थ—कायफल, इन्द्रजो, पाढ, कुटकी, और नागरमोथा इनका काढा तीव्र पित्त ज्वरवालेको दशमेदिन दे (अर्थात् पित्तज्वर दशवेदिन पाचन होता है) इसीवास्ते दशवे दिन देय तो पित्तज्वर दूर हो ॥

## पंचभद्रादिकाढा

पर्यटाद्वामृताविश्वाकैरातैः साधितंजलं । पंचभद्रमिदंज्ञेयंवातपित्तज्वरापहं ॥

अर्थ—पित्तपापडा, नागरमोथा, गिलोय, सोंठ, और चिरायता इनका काढा वातपित्तज्वरको दूरकरे इसे पंचभद्र क्वाथ कहते है, ॥

## कलिंगादिकाढा

कलिंगंकट्फलंलोध्रंपाठाकटुकरोहिणी । पक्कंसशर्करं-
पीतंपाचनंपित्तकेज्वरे ॥

अर्थ—कुडाकीछाल, कायफल, लोध, पाढ, और कुटकी इनका काढा खांड डालके पीवे तो पित्तज्वरको पचावे, ॥

## शर्करादिकाढा

शर्करामधुरोहंतिकषायः पैत्तिकंज्वरं । चंदनोशीरश्री
पर्णीपुरूवकमधूकजः ॥

अर्थ— लालचंदन, नेत्रवाला, कायफल, फालसे, मुलहटी इनका काढा खांड डालकर देय तो पित्तज्वरका नाश करे, ॥

## क्षुद्रादिकाढा

क्षुद्राधान्यकशुंठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः । रक्तचंदन-
भूनिंबपटोलवृषपौष्करैः ॥ कटुकेंद्रयवारिष्टभार्गीपर्प-
टकैः समैः । क्वाथंप्रातर्निषेवेतशीतंसर्वज्वरच्छिदं ॥

अर्थ— कटेरी, धनिया, सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, पद्माख, लालचंदन, चिरायतो, पटोलपत्र, अडूसा, पोहकरमूल, कुटकी, इन्द्रजो, कूठ, भारंगी, और पित्तपापडा इनका काढा पीवे तो सर्वप्रकारके शीतज्वर दूर होय, ॥

## लोध्रादिकाढा

लोध्रोत्पलामृतापद्मसारिवाणांसशर्करः । क्वाथः पित्त-
ज्वरंहन्यादथवापर्पटोद्भवाः ॥

अर्थ— लोध, कमलगट्टेकी गिरी, गिलोय, पद्माख और सारिवन इनका काढा खांड डालके पीवे अथवा पित्तपापडेकाही काढा पित्तज्वरको दूर करता है ॥

## पर्पटादिकाढा

पर्पटामृतधात्रीणांक्वाथपित्तज्वरंजयेत् । द्राक्षारग्वध
योश्चापिकाश्मर्याश्चापिवाप्नुतः ॥

अर्थ—पित्तपापडा, गिलोय, और आमले, इनका काढा पित्तज्वरको दूर करे अथवा दाख, अमल तासका गूदा, इनका अथवा केवल कंभारीका काढा पित्तज्वरको जीतता है, ॥

## विश्वादिकाढा

विश्वपर्पटकोशीरघनचंदनसाधितं । दद्यात्सुशीतलं वारितृट्छर्दिज्वरदाहनुत ॥

अर्थ—सोंठ, पित्तपापडा, नेत्रवाला, नागर मोथा, और लाल चंदन, इनका काढा शीतलकर देवे तो तृषा, वमन, ज्वर, और दाह इनको नाशकरे, ॥

## गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीमुस्तधान्याकमधुकंकटुरोहिणी । तृष्णाशूलरुचिच्छर्दिपित्तज्वरहरोगणः ॥

अर्थ—गिलोय, नागर मोथा, धनिया, मुलहटी, और कुटकी इनका काढा प्यास, शूल, अरुचि, वमन, और पित्तज्वर इनको नाशकरे, ॥

## किरातादिकाढा

किरातामृतधान्याकचंदनोशीरपर्पटैः ॥सपद्मकैःकृतः क्वाथोहंतिपित्तभवंज्वरं ॥ दाहतृष्णाश्रमारुचिमुत्क्लेशं वमथुंक्लमं ॥

अर्थ—चिरायता, गिलोय, धनिया, चंदन, नेत्र वाला, पित्तपापडा और पद्माख इनका काढा पित्तज्वर, दाह, तृष्णा, श्रम, अरुचि, मुखसेपानी छूटना वमन, और ग्लानि इनकानाश करे, ॥

## चंदनादिकाढा

चंदनंमधुकंद्राक्षांकटुकांसदुरालभां । चंदनादिर्गणःप्रोक्तोहन्याद्दाहज्वरारुचिः ॥

अर्थ—चंदन, मुलहटी, दाख, कुटकी, और धमासो यह चंदनादि गण दाह, अरुचि, और ज्वर इनका नाशकरे, ॥

## पर्पटादिकाढा

एकएवखलुपैतिकज्वरंहंतिपर्पटकृतःकषायकः ॥चंदनोदकमहोषधान्वितश्चेत्तदाकिमुपुनर्विचारणा ॥

अर्थ—केवल एकही पित्तपापडेका काढा पित्तज्वरकोनष्ट करता है यदि उसमें लालचंदन, नेत्रवाला और सोंठ मिलायकर काढा कराजावे तो पित्तज्वर दूरकरे इसमें क्या संदेह है॥

## उदुंबरादिहिम

उदुंबरशिफाछिन्नातज्जलंसितयान्वितम् ।
पीतपित्तज्वरंहंतिपटोल्यावाशिफाजलं ॥

अर्थ—गूलरके छालके पानीमें खांड मिलायकर पीनेसें, अथवा पटोल पत्र की जडका पानी खांडके साथ पीवे तो पित्तज्वरको नाशकरे ॥

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षाभयापर्पटकाब्दतिक्ताक्राथःससंपाकफलोविद
ध्यात् ॥ प्रलापमूर्च्छाभ्रमदाहशोषतृष्णान्वितोपित्त
भवज्वरेच

अर्थ—मुनक्कादाख, हरडजंगी, पित्तपापडा, नागरमोथा, कुटकी, और अमलतासकोगूदो इनका काढा करके पीवेंतो प्रलाप, मूर्च्छा, भ्रम, दाह शोष और तृषा इन करके युक्त जो पित्तज्वर उसका नाशकरे ॥

## दुरालभादिकाढा

दुरालभापर्पटकप्रियङ्गुभूनिंम्बवासाकटुरोहिणीनां ॥
क्राथंपिबेच्छर्करयावगाढंतृष्णास्रपित्तज्वरदाहयुक्तः॥

अर्थ—धमासा, पित्तपापरा, फूलप्रियंगु, चिरायता, अडूसा, और कुटकी इनका काढा करके उसमें खाँड डालके तृषा, रक्तपित्तज्वर, और दाह इनकरके युक्त जो रोगी होवे उसको पीना चाहिये ॥

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षापर्पटराजवृक्षकटुकामुस्ताभयानांजलं ॥ मूर्च्छा
शोषनिदाघतृट्प्रलपनभ्रांत्याढ्यपित्तज्वरे ॥ दुस्पर्श
प्रमदाकिरातकटुकासिंहास्यरेणूद्भवः ॥ क्राथःशर्कर
यान्वितोहरतितृट्दाहाख्यपित्तज्वरान् ॥

अर्थ—मुनक्कादाख, पित्तपापडा, अमलितासकी गूदा, कुटकी, नागरमोथा,

और हरडकी, छाल इनका काढा पीवेतो पित्तज्वर जनित जो मूर्च्छा, शोष, दाह, प्यास, प्रलाप, और भ्रांति इनका नाश होवे, जवासा, अतीस, चीरायता, कुटकी, अडूसेके पत्ते और पित्तपापडा इनकाकाढा करके उसमे मिश्री डालके पीवे तो तृषा, दाह, रक्तपित्त, और ज्वर इनका नाशहोवे ॥

## छिन्नादिकाढा

अहोकिमर्थंबहुभिःकषायैःपाराशराद्यैर्मुनिभिःप्रदिष्टैः ॥ छिन्नाशिवापर्पटतोयपानात्पित्तज्वरःकिंन सरीसरीति ॥

अर्थ--पाराशरादि ऋषियोंने इतने काढे काहेके वास्ते कहे? गिलोय, हरड, और पित्तपापडा, इनका काढा सेवन करनेसें क्या पित्त ज्वर नहीं जाताहै?॥

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षाचंदनपद्मानिमुस्तातिक्तामृतापिच ॥ धात्रीवालमुशीरंचलोध्रेन्द्रयवपर्पटाः ॥ परूपकंप्रियंगुश्चयवासोवासकस्तथा ॥ मधुकंकुलकंचापिकिरातोधान्यकस्तथा॥एषांकाथोनिहंत्येवज्वरंपित्तसमुत्थितं॥तृष्णांदाहप्रलापंचरक्तपितंभ्रमंक्लमं ॥ मूर्छांछर्दितथाशूलं मुखशोषमरोचकं ॥ कासंश्वासंचहृल्लासंनाशयेन्नात्रसंशयः ॥

अर्थ—दाख, लालचंदन, कमल गट्टेकी मिंगी, नागरमोथा, कुटकी, गिलोय, आमले, नेत्रवाला, खस, लोध, इन्द्रजो, पित्तपापडा, फालसे, फूलप्रियंगु-धमासो, अडूसा, मुलहटी, पटोलपत्र, चिरायता, और धनियां इनका काढा लेनेसैं पित्तज्वर, तृषा, दाह, प्रलाप, रक्तपित्त, भ्रम, ग्लानि, मूर्च्छा, वमन, शूल, मुखशोष, अरुचि खांसी प्यास मुखसैं पानी गिरना, इन सबका नाश निस्संदेहकरे॥

## ससितादिकाढा

ससितोनिशिपर्युषितःप्रातर्धान्याकतंडुलक्काथः। पीतःशमयत्यचिरादंतर्दाहंज्वरंपैत्तं ॥

अर्थ—धनिया, और चावलको रात्रिमें कोरे मटकनेमें भिगोदे और प्रातःकाल क्वाथकर उसमें खांड मिलाय पीवेतो अंतर्दाह तथा पित्तज्वरको दूरकरे ॥

## मुद्रादिकाढा

मुद्रानामंजलिंचूर्णयष्टीमधुकसाधितं ।
पाक्यंशीतकषायंवापिबेत्पित्तज्वरापहं ॥

अर्थ—मुलहटी, और मूंगका आठ तोले चूर्णका काढा कर और शीतल पीवेतो पित्तज्वर नाशहो ॥

## ह्रीवेरादिकाढा

ह्रीबेरंमुस्तकंधान्यंचंदनंयष्टिकामृता ॥ वृषोशीरयुतः
क्काथःशर्करामधुसंयुतः॥रक्तपित्तंजयत्युग्रंतृष्णादाह-
ज्वरापहः ॥

अर्थ—नेत्रवाला, नागरमोथा, धनिया, लालचंदन, मुलहटी, गिलोय, अडूसा और खस इनके काढेमें खांड और सहत मिलाय पीनेसें रक्तपित्त, तृष्णादाह, और पित्तज्वरको दूरकरे ॥

## तिक्तादिकाढा

तिक्तायासकभूनिंबश्यामापर्पटवासकैः ।
शृतंजलंसितायुक्तंरक्तपित्तज्वरंजयेत् ॥

अर्थ—कुटकी, धमासो, चिरायतो, पीपल, गिलोय, पित्तपापडा, और अडूसा इनका काढा मिश्री मिलाय पीनेसें रक्तपित्त, और ज्वरको जीते ॥

## पथ्यादिकाढा

पथ्यांतैलघृतक्षौद्रैर्लिहेद्दाहज्वरापहं ।
कासासृक्पित्तवीसर्पश्वासंहंतिवमिमपि ॥

अर्थ—हरडका चूर्ण, तेल, अथवा घी, अथवा, सहतकें साथ चाटेतो दाह, ज्वर, खांसी, रक्तपित्त, विसर्प. श्वास और वमन इनका नाशकरे ॥

## आम्रादिफांट

आम्रजंबूकिसलयैर्वटशृंगप्ररोहकैः ॥ उशीरेणकृतःफां-
टःसक्षौद्रोज्वरनाशनः ॥ पिपासाछर्द्यतीसारान्मूर्छां-
जयतिदुस्तरां ॥

अर्थ—आम, तथा जामुन इनके कोमल पत्ते तथा वडके कोमल कली, त-

था तत्काल निकले हुए पत्ते और नेत्रवाला इन औषधोंको पूर्वरीतिसैं फांटकर पीनेसैं ज्वर, प्यास, वमन, अतिसार, तथा कष्टसाध्य मूर्छा ए दूरहो ॥

## गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीपद्मलोध्राणांसारिवोत्पलयोस्तथा ।
शर्करामधुरःक्काथःपीतःपित्तज्वरापहः ॥

अर्थ—गिलोय, पद्माख, लोध, सरवन, और कमलगट्टा इनका काढा शीतल कर मिश्री मिलाय पीनेसैं पित्तज्वरको दूर करे ॥

## पटोलादिकाढा

पटोलयवनिक्काथोमधुनामधुरीकृतः ।
तीव्रपित्तज्वरोन्मर्दीपानात्तृड्दाहनाशनः ॥

अर्थ—पटोलपत्र, और जौं इनका काढाकर उसमें सहत मिलाय शीतलकर पीवेतो तीव्रपित्त ज्वर, तृषा, दाह, इनका नाश करे ॥

## केसरमातुलिंगादियोग

जिव्हाताल्वगलक्लोमशोषेमूर्ध्निचदापयेत् ।
केसरंमातुलिंगस्यमधुसैंधवसंयुतं ॥

अर्थ-जीभ, तालू, गला, क्लोम (तृषा लगनेका स्थान) और मस्तक इनमें शोष होनेसै-विजोरेकी केशर, सहत, और सैंधानिमक, मिलायकर मालिसकरे ॥

## दुसराप्रकार

केसरंमातुलिंगस्यमधुसैंधवसंयुतं । हरीतकीप्रियंगु-
श्चपिप्पलीलोध्रमेवच ॥ दार्वीहरिद्रातेजोव्हासक्षौद्रं-
मुखधावनं । एतेनकटुभावश्चमुखरोगश्चशाम्यति ॥
वक्रंविशदतामेतिभक्तछंदश्चजायते । मुद्गयूपोदनोदेयः
सितयापैत्तिकेज्वरे ॥

अर्थ—विजोरेकी केशर, सहत, और सैंधानिमक, इनका अथवा हरड, प्रियंगु, पीपल, लोध, दारहलदी, हलदी, तेजवल, इनका चूर्ण सहतसैं मिलाय जलमें डाल कुरलाकरे तो मुखकी कटुता, तथा मुख रोग, शांतहोय, और मुख स्वच्छहो रुचि होयहै, उसरोगीको मूंगका यूप और भात तथा बूरामिलाय पथ्य देवे ॥

## रसपर्पटी

शुद्धंसूतंद्विधागंधंमर्धंभृंगीरसैःक्षणं ॥ पाचयेल्लोहपा-
त्रस्थंचाल्यंतुचुटकेनच ॥ लोहभस्माथवाताम्रंपादां-
शेनविनिक्षिपेत् ॥ पाच्यंप्रचालयेन्नैवयामार्धंमृदुव-
न्हिना ॥ तत्क्षिपेत्कदलीपत्रेगोमयस्योपरिस्थिते ॥
तत्पत्रंधारयेदूर्ध्वंतदूर्ध्वंगोमयंक्षिपेत् ॥ ततःसंचूर्णये
त्खल्वेनिर्गुंड्याभावयेद्दिनं ॥ जयंतीत्रिफलाकन्यावा
साभार्ङ्गीकटुत्रयैः ॥ भृंग्यग्निमुनिमुंडीभिर्भावयेत्प्रत्य
हंपृथक् ॥ आर्द्रकस्यद्रवैःपश्चाद्भावयेद्दिनसप्तकं ॥
अंगारैःस्वेदयेत्पश्चात्पर्पट्याख्योमहारसः ॥ चतुर्गु
जामितोदेयःसम्यक्श्लेष्माधिकेज्वरे ॥ वासाशुंठी
भयाक्काथमनुपानंप्रकल्पयेत् ॥ चव्यकस्वरसैर्वाथपे
यंश्लेष्मज्वरापहं ॥

अर्थ— शुद्धपारा १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग इनकी कजली करके भांगरेके रसकी भावनादे फिर उसको मंदाग्निवाले चूल्हेपर लोहके पात्रमें धीरे २ हिलाता हुआ पचन करावे, पीछे ताम्र, तथा लोह की भस्म चतुर्थांस डाल फिर चार घडी विना हिलाए मंदाग्निपर पचन करावे जब पतला होकर सब एक रस हो जाय तब केलेके पत्तेपर उलट देवे और दूसरा पत्ता ढककर दाबदेवे, जब शीतल होजावे तब खरलमें घोट सह्मालूके रसकी ३ पुटदेवे। फिर जयंती, त्रिफला, घीगुवार, अडूसा, भारंगी, निकुटा, भांगरा, चीता, अगस्तिया, और मुंडी इनके रसकी महर २ तक भावनादेवे, फिर अदरकके रसकी सातदिन भावनादेवे, और अंगारोंके ऊपर भूने यह पर्पटी रस ४ रत्ती अडूसा, सोंठ, तथा हरड, इनके काढेसें अथवा चव्यके रससें देवे तो कफज्वरको हरण करे, ॥

## उत्तानसुप्तयोग

उत्तानसुप्तस्यगभीरताम्रकांस्यादिपात्रेनिहितेचना-
भौ। शीतांबुधाराबहुलापतंतीनिहंतिदाहंज्वरितज्वरंच ॥

अर्थ—ज्वरवाले मनुष्यको चित्त सुलाय उसकी नाभी ( टूंडी ) परतामेंका अ-

थवा कांसेका औंधापात्र धर उसमें शीतल जलकी वडी धार डाले तो दाह ज्वरको तत्काल नाश करे ॥

## औदुंबरादियोग

औदुंबरस्यनिर्यासःसितयादाहनाशनः ।
छिन्नासारःसितायुक्तःपित्तज्वरनिषूदनः ॥

अर्थ—गूलरका गोद खांड मिलाय कर लेवे तो दाहको नाश करे, और गिलोयका सत्व खांड मिलाय कर ले यह पित्त ज्वरनाशक है ॥

## धर्म

अथगोतक्रसंसिक्तशीतलीकृतवाससा ।
कांजिकार्द्रपटेनावगुंठनंदाहनाशनं ॥

अर्थ—गौकी छाछमें किवा कांजीमें वस्त्र भिगो उस वस्त्रको रोगीको उढावे तो दाह नष्ट हो ॥

## द्राक्षादिकल्क

द्राक्षामलककल्केनकवलोत्रहितोमतः ।
पक्वदाडिमजैर्वाथधानाकल्केनचक्वचित् ॥

अर्थ—दाख और आमले इनके कल्कका अथवा पके हुए अनारका अथवा धनियेका हिम करके मुखमें कवल देवे तो हित है. ॥

## मुद्गयूप

दाहवम्यर्दितंक्षामंनिरन्नंतृष्णयान्वितं ॥ शर्करामधुसंयुक्तंपाययेल्लाजतर्पणं ॥ मुद्गयूपौदनोदेयःसितयापैत्तिकेज्वरे ॥

अर्थ—यदि दाह, और वमन इनसें पीडित, कृप कुछ खाय नहीं प्यास अधिक लगे उसको चावलोका मंड–मिश्री और सहत डालके देवे और मूंगका यूप भात और खांड ये पदार्थ भक्षणार्थ देवे तो पित्तज्वर शांति हो ॥

## अमृतादिहिम

अमृतायाहिमःप्रातःससितःपैत्तिकंज्वरं ।
वासायाश्चतथाकासरक्तपित्तज्वरान्जयेत् ॥

अर्थ—गिलोयको रात्रिमें कूट पानीमें भिगोदेवे प्रातःकाल उस पानीको छान मिश्री मिलायके पीवे तो पित्त ज्वर नाशक है, इसी प्रकार अडूसेका हिम खांसी, रक्त, पित्तज्वर इनका नाशक है ॥

---

## कफज्वरकेलक्षण

स्तैमित्यंस्तिमितोवेगआलस्यंमधुरास्यता ॥ शुक्लमूत्रपुरीषत्वक्स्तंभस्तृप्तिरथापिवा ॥ नात्युष्णगात्रताछर्दिरंगसादोविपाकता ॥ गौरवंशीतमुत्क्लेदोरोमहर्षोतिनिद्रता ॥ प्रतिश्यायोरुचिःकासःकफजेक्ष्णोश्वशुक्लता ॥

अर्थ—स्तैमित्य ( गीले कपडेसें देहको आच्छादित करदेनेसें जैसा हो ऐसा मालूमहो ) ज्वरका मंदवेग, आलस्य, मुख मीठा, मलमूत्र सफेद, देहका जकडना तृप्तसरीखा, अन्नमें अरुचि, पेट भरासारहे देहबहुत गरम नहोवे, अंगरहजावे, देहभारी शीतल, शीतलगे ओकारी आवे * अन्य आचार्य कहतेसें कि कफका थूकना, रोमांचका होना, अतिनिद्रा, रसके वहनेवाली नाडीके मार्गोंका रुकना, दस्तका थोडा उतरना पसीना, मुखमें नोनकासा सवाद देहका थोडा गरमहोना रद्दका होना लारका गिरना मुखपाक तथा मुखनाकमें कफका पडना, अरुचि खांसी नेत्र श्वेतहों ये लक्षण कफज्वरमें होते हैं " स्तंभस्तृप्तिरथापि च " इस पदमें जो चकार है उस्से देहमें पीडा, शीतका लगना, लारका गिरना, वमन, तन्द्रिकरोग, हृदयलिहसासा, गरमी प्यारी लगे, मन्दाग्नि इत्यादि जानने॥

## कलिंगादिचूर्ण

कलिंगरोहिणीनिशाकटुत्रिकेभकेसरं ॥
विचूर्णितंकफज्वरेनिहंतिकोष्णवारिणा ॥

अर्थ—इन्द्रजो, कुटकी, हलदी, नागकेशर, और त्रिकटु इनका चूर्ण गरम जलसें लेवे तो कफज्वर दूरहो ॥

## शृंग्यादिअवलेह

शृंगीकणाकट्फलपौष्कराणांक्षौद्रान्वितानांविहितोव

लेहः ॥ श्वासेनकासेनयुतंबलासंज्वरंजयेदत्रनकापिशंका ॥

अर्थ— काकडासिंगी, पीपल, कायफर, पोहकरमूल, इनका अवलेह सहत मिलायकर देवे तो श्वास, खासीयुक्तकफ, और ज्वरको दूर करे। इसमें कुछ संदेह नही है ॥

## सिंधुकवल

सिंधुत्रिकटुराजीभिरार्द्रकेणकफेहितः ॥ कवलइतिशेपः ॥

अर्थ—सैंधानिमक, त्रिकुटा, राई, और अदरक इनको एकत्र पीसउसकी कवल करके मुखमें धारण करे यह कवल कफपर प्रसस्त है ॥

## मुद्गयूष

मुद्गयूषौदनोदेयोज्वरेकफसमुत्थिते ॥

अर्थ— कफज्वरमें मूंगका यूप और भात पथ्यदेना चाहिये ॥

## त्रिफलादिचूर्ण

लिहन्ज्वरार्तस्त्रिफलांपिप्पलींचसमाक्षिकां ॥ कासे श्वासेचमधुनासर्पिषाचसुखीभवेत् ॥

अर्थ— कफज्वरवाले रोगीको त्रिफला, तथा पीपलका चूर्ण सहतसै देवे और खांसी, तथा श्वास पर वही चूर्ण सहत और घृतके साथ देवे ॥

## अजाजियोग

अजाजिशर्करायुक्तोदाडिमस्वरसेनतु ॥ रुचिष्योम धुनायुक्तःकर्तव्यःकवलग्रहः ॥ मुद्गयूषौदनश्चापिदेयःकफसमुत्थिते ॥

अर्थ— जीरा, और खांड अथवा अनारकारस तथा सहत ये रुचिकारी है, इनको मुखमें धारण करे और मूग भात पथ्य देवे ॥

## चंदनादिकाढा

चंदनंचसुगंधंचवालकोशीरपर्पटाः ॥ मुस्ताशुंठिसमायुक्तापित्तज्वरनिषूदनाः ॥

अर्थ—लालचदन, रोहिषतृण, नेत्रवाला, पित्तपापडा, नागरमोथा, और सोंठ, इनका काढा पित्तज्वर नाशक है ॥

## शतधौतघृत

शतधौतघृतस्यलेपतोदवथुर्नाशमुपैतितत्क्षणात् ॥ अ
थवापिचुमंदपत्रजस्वरसप्रोत्थितफेनलेपतः ॥

अर्थ– सौवार धुलेहुए घीको शरीरमें लगानेसें अथवा नीमका रस फेनयुक्त करके अंगोंमें लेप करनेसे दाह शांति होता है ॥

## पलाशादिलेप

पलाशस्यबदर्यावानिंबस्यमृदुपल्लवैः ।
अम्लपिष्टैःप्रलेपोयंहन्याद्दाहयुतंज्वरं ॥

अर्थ—ढाककी–बेरकी, किंवा नीबके कोमलपत्ते छाछमें अथवा नींबूके रसमें पीस लेप करे तो दाह युक्त ज्वर दूर हो ॥

## नीरदादिपाचन

नीरदविश्वदुरालभवासासाधितमंबुहिपाचनमेवं ॥
पेयमिदंज्वरएषकफाख्येश्वासकासघनशूलहरंच ॥

अर्थ—नागरमोथा, सोंठ, धमासो, अडूसा, इनका काढा पाचक होकर ज्वर नाशक, श्वास, खाँसी, शूल, कफज्वर इनका नाश करे ॥

## पिप्पल्यादिपाचन

पिप्पलीपिप्पलीमूलंमरिचंगजपिप्पली ॥ नागरंचि-
त्रकंचव्यंरेणुकाचाजमोदिका ॥ सर्षपौहिंगुभार्गीचपा-
ठेंद्रयवजीरका ॥ महानिंबश्चमूर्वाचविपातिक्ताविडंग-
काः पिप्पल्यादिगणोह्येप कफवातातिनाशनः ॥ गु-
ल्मशूलज्वरहरोदीपनश्चामपाचनः ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, कालीमिरच, गजपीपर, सोंठ, चीता, चव्य, रेणुकाबीज, अजमोद, सरसो, हींग, भारंगी, पाढ, इन्द्रजो, जीरा, बकायन, मूर्वा, अतीस, कुटकी, वायविडंग, यह पिप्पलादि गण कफ और बादीको दूर करे गोला शूल, ज्वरको हरण करे तथा दीपन और आमको पचावे ॥

## क्षौद्रादिकाढा

क्षौद्रोपकुल्यासंयोगः श्वासकासज्वरापहः।
प्लीहानंहंतिहिक्कांचबालानामपिशस्यते॥

अर्थ—पीपर और सहतका योग, खांसी, श्वास, ज्वर, प्लीह, हिचकी इनका नाश करनेवाला है और बालकोंको उत्तम है॥

## पिप्पल्यादिचूर्ण

पिप्पलींत्रिफलांचापिसमभागांज्वरीलिहन्।
मधुनासर्पिषावापिकासश्वासीसुखीभवेत्॥

अर्थ—पीपर, त्रिफला, ए समान भागले वा सहत घृतके साथ चाटे तो खांसी, श्वास और ज्वर दूर हो,॥

## कट्फलादिलेह

कट्फलंपौष्करंशृंगीकृष्णाचमधुनासह।
कासश्वासज्वरहरोलेहोयंकफनाशनः॥

अर्थ—कायफल, पोहकरमूल, काकडा सिंगी, और पीपर इनका चूर्ण सहत के साथ खाय तो श्वास, खांसी, ज्वर और कफको नाश करे,॥

## कट्फलादिचूर्ण

कट्फलंपौष्करंशृंगीयवानीकारवीतथा॥ कटुत्रयंच-
सर्वाणिसमभागानिचूर्णयेत्॥ आर्द्रकस्वरसैर्लिह्या-
न्मधुनावाकफज्वरी॥ कासश्वासारुचिच्छर्दीश्लेष्मा
निलनिवृत्तये॥

अर्थ– कायफल, पोहकरमूल, काकडासिंगी, अजमायन, अजमोद, त्रिकुटा, इनका चूर्ण अदरखके रससे अथवा सहतके साथ देवे तो खांसी, श्वास, अरुचि, वमन, सर्दी, वायु, कफज्वर इनका नाश करे,॥

## निर्गुंड्यादिकाढा

सिंदुवारदलक्वाथंकणाढ्यंकफजेज्वरे॥
जंघयोश्चबलेक्षीणेकर्णेचपिहितेपिबेत्।

अर्थ—कफज्वर तथा जाँघोंकी निर्बलता और कानोंका बंद हो जाना इनपर सम्भालूके पत्तोंका काढा पीपलका चूर्ण डालके पीवे ॥

## यवान्यादिकाढा

यवानीपिप्पलीवासातथाखस्खसवल्कलां ॥
एषकाथंपिबेत्कासेश्वासेचकफजेज्वरे ॥

अर्थ—अजमायन, पीपल, अडूसा, और खसखसके डोडे इनका काढा पीनेसें खांसी, श्वास, तथा कफज्वर इनका नाश होय ॥

## वासादिकाढा

वासाक्षुद्रामृताक्काथःक्षौद्रेणज्वरकासहृत्॥

अर्थ—अडूसा, कटेरी, गिलोय, इनका काढा सहतके साथ पीनेसैं कफज्वर और खांसीको दूर करे ॥

## निंबादिकाढा

निंबविश्वामृताभीरुयासभूनिंबपौष्करं ॥
पिप्पल्योबृहतीचेतिक्काथोहंतिकफज्वरे ॥

अर्थ—नीमकी छाल, सोंठ, गिलोय, सतवार, जवासो, चिरायतो, पोहकर मूल, पीपर, और कटेरीकी जड इनका काढा कफज्वरको नाश करे ॥

## मरीच्यादिकाढा

मरीचंपिप्पलीमूलंनागरंकारवीकणा ॥ चित्रकंकट्-
फलंकुष्टंससुगंधिवचाशिवा ॥ कंटकारीजटाशृंगीयवा
नीपिचुमंदकः । एषांक्काथोहरत्येवज्वरंसोपद्रवंकफात् ॥

अर्थ— कालीमिरच, पीपलामूल, सोठ, सोफ, पीपल, चीता, कायफल, कूट, निर्गुंडी, वच, हरड, कटेरीकी जड, जटामांसी, काकडासिंगी, अजमायन, और नीमकी छाल, इनका काढा उपद्रव सहित कफज्वरका नाश करे ॥

## निदिग्धिकादिकाढा

निदिग्धिकाच्छिन्नरुहोपकुल्यात्रिश्वौषधैःसाधितमंबुपीतं
हंतिज्वरंश्वासबलासकासशूलाग्निमांद्यंजठरानिलंच ॥

## क्षौद्रादिकाढा

क्षौद्रोपकुल्यासंयोगः श्वासकासज्वरापहः।
प्लीहानंहंतिहिक्कांचबालानामपिशस्यते॥

अर्थ—पीपर और सहतका योग, खांसी, श्वास, ज्वर, प्लीह, हिचकी इनका नाश करनेवाला है और बालकोंको उत्तम है॥

## पिप्पल्यादिचूर्ण

पिप्पलींत्रिफलांचापिसमभागांज्वरीलिहन्।
मधुनासर्पिषावापिकासश्वासीसुखीभवेत्॥

अर्थ—पीपर, त्रिफला, ए समान भागले वा सहत घृतके साथ चाटे तो खांसी, श्वास और ज्वर दूर हो,॥

## कट्फलादिलेह

कट्फलंपौष्करंशृंगीकृष्णाचमधुनासह।
कासश्वासज्वरहरोलेहोयंकफनाशनः॥

अर्थ—कायफल, पोहकरमूल, काकडासिंगी, और पीपर इनका चूर्ण सहत के साथ खाय तो श्वास, खांसी, ज्वर और कफको नाश करे,॥

## कट्फलादिचूर्ण

कट्फलंपौष्करंशृंगीयवानीकारवीतथा॥ कटुत्रयंच-
सर्वाणिसमभागानिचूर्णयेत्॥ आर्द्रकस्वरसैर्लिह्या-
न्मधुनावाकफज्वरी॥ कासश्वासारुचिछर्दीश्लेष्मा
निलानिवृत्तये॥

अर्थ- कायफल, पोहकरमूल, काकडासिंगी, अजमायन, अजमोद, त्रिकुटा, इनका चूर्ण अदरखके रससे अथवा सहतके साथ देवे तो खांसी, श्वास, अरुचि, वमन, सर्दी, वायु, कफज्वर इनका नाश करे,॥

## निर्गुंड्यादिकाढा

सिंदुवारदलक्वाथंकणाढ्यंकफजेज्वरे॥
जंघयोश्चबलेक्षीणेकर्णेचपिहितेपिबेत्॥

## पंचकोलं

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचव्यचित्रकनागरं ।
पंचकोलमिदंप्रोक्तंशोधनंकफनाशनं ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, और सोंठ, यह पंचकोल शोधन तथा कफनाशक है ॥

## पटोलादिकाढा

पटोलत्रिफलातिक्तासठीवासामृताभवः ॥
क्राथोमधुयुतःपीतोहन्यात्कफकृतंज्वरं ॥

अर्थ—पटोलपत्र, त्रिफला, कुटकी, कचूर, अडूसो, और गिलोय इनका क्राथ सहतके साथ पीवे तो कफज्वर दूर हो ॥

## बीजपूरादिकाढा

बीजपूरशिवापथ्यानागरग्रंथिकैःशृतं ॥
सक्षारंपाचनंश्लेष्मज्वरेद्वादशवासरे ॥

अर्थ—बिजोरेकीजड, छोटीहरड, सोंठ, और पीपरामूल, इन औषधोंका काढा कर उसमें जवाखार मिलाय बारवेदिन कफज्वर पर पाचन देवे तो कफज्वर दूर होय ॥

## भूनिंबादिकाढा

भूनिंबनिंबपिप्पल्यःसठीशुंठीशतावरी ॥
गुडूचीवृहतीचेतिक्राथोहन्यात्कफज्वरं ॥

अर्थ—चिरायतो, नीमकीछाल, पीपल, कचूर, सोंठ, सतावर, गिलोय, और कटेरी इनका काढा कफज्वरको दूर करे ॥

## कटुक्यादिकाढा

कटुकीचित्रकनिंबहरिद्रातिविषवचा ॥ सप्तपर्णमृतानिंबस्नुह्यर्कैःसाधितंजलं ॥ पेयंमाक्षिकसंयुक्तंबलास ज्वरशांतये ॥

अर्थ—कुटकी, चीतेछाल, नीमकीछाल, हलदी, अतीस, वच, सतोनाकी-

अर्थ- कटेरीकी जड, गिलोय, पीपल और सोंठ इनका काढा ज्वर, श्वास, कफ, खांसी, शूल, मंदाग्नि, इनको दूरकरे ॥

## भार्ग्यादिकाढा

भार्गीगुडूचीघनदारुसिंही सुंठीकणापुष्करजःकषायः
ज्वरंनिहंतिश्वसनंक्षिणोतिक्षुधांकरोतिप्ररुचिंतनोति ।

अर्थ—भारंगी, गिलोय नागरमोथा, देवदारु, कटेरी, सोंठ, पीपल, और पुष्करमूल इनका काढा ज्वर और श्वासको नष्टकरे एवं क्षुधाकरे और अन्नमें रुचि प्रगटकरे है ॥

## मातुलिंगादिकाढा

मातुलिंगशिफाविश्ववयस्थाग्रंथिकोद्भवं ।
कफज्वरेपुसक्षारंपाचनंवाकणादिकं ॥

अर्थ—विजोरेकी जड, सोंठ, गिलोय, पीपरामूल, इनके काढेमें जवाखार अथवा पीपरडालके पीवे तो कफज्वर दूर हो तथा पाचन हो ॥

## त्रिफलादिकाढा

त्रिफलात्रिवृतामुस्तंकटुकंसकलिंगकं ॥ पटोलारग्वधंचैवरोहिणीचित्रकंसमं ॥ क्वाथःक्षौद्रयुतःश्लेष्मज्वरकासगतामये ॥

अर्थ—त्रिफला, निसोथ, नागरमोथा, त्रिकुटा, इन्द्रजो, पटोलपत्र, अमलतास, कुटकी, और चीता ये समभागले काढाकर सहत डालके पीवे तो कफज्वर, खांसी, तथा कंठ रोग दूर होवे ॥

## पिप्पल्यादिगण

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचव्यचित्रकनागरं ॥ मरीचैलाजमोदेंद्रपाठारेणुकजीरकं ॥ भार्गीमहानिंबफलंहिंगुरोहिणिसर्षपं ॥ विडंगातिविपामूर्वागणोयंकफनाशनः ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, कालीमिरच, छोटीइलायची, अजमोद, इन्द्रजो, पाढ, रेणुका, जीरा, भारंगी, बकायनकेफल, हींग, कुटकी, सरसो, वायविडंग, अतीस, और मूर्वा यह औषधोंका गण कफनाशक है अतएव कफज्वरपर इसका काढा देवे ॥

अर्थ—आमले, हरडकी छाल, पीपल, और चित्रक, यह औषधोंका गण सर्व ज्वर और कफके रोगोंको दीपन और पाचन कर्त्ता है॥

## तिक्तादिकाढा

तिक्तानिंबविषाव्योषशक्राम्हाभिःशृतंजलं।
पिबेत्कफज्वरहंतिहिक्काकाससमन्वितं॥

अर्थ—कुटकी, नीमकी छाल, अतीस, त्रिकुटा, इन्द्रजो और नेत्रवाला इनका काढा हिचकी और खांसी युक्त कफज्वरको दूर करे॥

## मुस्तादिकाढा

मुस्तंमधुकबीजानित्रिफलाकटुरोहिणी॥
परूषकाणिचक्काथःकफज्वरविनाशनः॥

अर्थ—नागरमोथा, मौआकेबीज, त्रिफला, कुटकी, और फालसे इनका काढा कफज्वरको दूर करे॥

## चपलादिकाढा

चपलाचपलापदनागरिकाचवकानलसंजनितंसलिलं॥
कसनेश्वसनेहृदयोल्लसनेकफजूर्तिगदेप्रपिबेच्चमुदे॥

अर्थ—पीपल, गजपीपल, सोंठ, चव्य चीतेकी छाल, इनका काढा श्वास, खांसी हल्लास, इत्यादि रोगयुक्त कफज्वर दूर हो॥

## पिचुमंदादिकाढा

पिचुमंदमहौषधान्वितावृहतीपौष्करतिक्तकंसठी।
वृषकट्फलकंकणावरीकथितंवारिकफज्वरंजयेत्॥

अर्थ—नीमकीछाल, सोंठ, कटेरीकीजड, पोहकरमूल, चिरायता, कचूर, अडूसा, कायफर, पीपल, और सतावर, इनका काढा कफज्वरको दूर करे॥

## वासादिकाढा

वासाविशालादशमूलगौरीमहौषधंपुष्करभार्गियुक्ता।
एषांकषायोविनिहंतिकासंकफज्वरंशूलनिवर्त्तनंच॥

अर्थ—अडूसा, इन्द्रायनकागूदा, दशमूल, तुलसी, सोंठ, पुहकरमूल, और भारंगी इनका कादा कास, और कफज्वर, तथा शूल, इनका नाश करे॥

छाल, गिलोय, चिरायता, थूहर, और आक इनके काढेमें सहत मिलाकर पीवे तो कफज्वर दूर हो ॥

## त्रिकंटकादिकाढा

त्रिकंटकबलाव्याघ्रीगुडनागरसाधितं ॥
वर्चोमूत्रविबंधघ्नंकफज्वरहरंपयः ॥

अर्थ—गोखरू, गगेरन, कटेरी, गुड, और सोंठ, इनका काढा मलमूत्रके रुकनेको और कफज्वरको दूर करे, परंतु इसकाढेमें औषधोंसें अठगुना दूध और दूधसें चौगुना पानी डालके ओंटावे ॥

## कुष्ठादिकाढा

कुष्ठमिंद्रयवंमूर्वापटोलेनापिसाधितं
पिबेन्मरीचसंयुक्तसक्षौद्रकफजेज्वरे ॥

अर्थ—कूठ, इन्द्रजो, मूर्वा, पटोलपत्र इनका काढा सहत और कालीमिरच डालके पीवे तो कफज्वर दूर हो ॥

## त्रिफलादिकाढा

त्रिफलापटोलवासाछिन्नरुहारोहिणीवचाशुंठी ॥
मधुनाश्लेष्मसमुत्थदशमूलीवासकस्यचक्काथः ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, पटोलपत्र, अडूसा, गिलोय, कुटकी, वच और सोंठ, इनका अथवा दशमूल और अडूसेका काढा सहतके साथ कफज्वर-पर देवे ॥

## सप्तच्छदादिकाढा

सप्तच्छंदगुडूचीचनिंबस्फूर्जकमेवच ॥
क्काथंकृत्वापिबेत्तोयंसक्षौद्रंकफजेज्वरे ॥

अर्थ—सतोना, गिलोय, नींबकीछाल, और स्फूर्जक इनका काढा सहतके साथ पीवेतो कफज्वर दूर होय ॥

## आमलक्यादिकाढा

आमलक्याभयाकृष्णाचित्रकश्चेत्ययंगणः ।
सर्वज्वरकफातंकभेदिदीपनपाचनः ॥

और फालसे इन औषधोंका पूर्वरीतिसें हिमकरके पीवेतो वातपित्तज्वर, प्रलाप, भ्रम, वमन, मोह, और तृष्णा इनको दूर करे ॥

## निदिग्धिकादिकाढा

निदिग्धिकामृतारास्नात्रायमाणामृतायुतः ॥
मसूरविदलक्वाथोवातपित्तज्वरंजयेत्

अर्थ—कटेरी, गिलोय, रास्ना, त्रायमाण, हरड, और मसूरकीदाल, इनका काढा वात पित्तज्वरको दूर करे ॥

## विश्वादिकाढा

विश्वामृताब्दभूनिंबपंचमूलसमन्वितः ॥
कृतःकषायोहंत्याशुवातपित्तभवंज्वरं ॥

अर्थ—सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चिरायता, पचमूल इनकाकाढा तत्काल वातपित्तज्वरको दूर करे ॥

## नीलोत्पलादिकाढा

निलोत्पलमुशीराणिपद्मकामलकानिच ॥ काश्मीर-
मधुकद्राक्षामधूकानिपरूषकान् ॥ पिबेच्छीतंक-
षायंचवातपित्तज्वरापहं ॥ संप्रलापंचसंमोहंशमयेत्पै-
त्तिकंज्वरं ॥

अर्थ—नीलकमल, खस, पद्माख, आमले, कंभारी, मुलहटी, दाख, महुआके, फूल, और फालसें इनके काढेको शीतलकर पीवे तो वातपित्तज्वर, प्रलाप, मोह, और पित्तज्वर इनको शमन करे ॥

## आरग्वधादिकाढा

आरग्वधफलंमुस्तंयष्टीमधुकमेवच ॥ उशीरमभयाचै-
वहरिद्रादारुसाव्हया ॥ पटोलंपिचुमंदंचअमृताकटु-
रोहिणी ॥ एषांपीतःकषायःस्याद्वातपित्तभवेज्वरे ॥

अर्थ—अमलतासकागूदा, नागरमोथा, मुलहटी, महुआके फूल, खस, हरड, हलदी, देवदारु, पटोलपत्र, नीमकीछाल, गिलोय, और कुटकी, इनका काढा वातपित्तज्वरको शांतकरे ॥

## कंटकार्यादिकाढा ॥

कंटकार्यमृतादारुवृषविश्वासमाश्रितः ॥
क्काथःकणारजोयुक्तःसद्यःश्लेष्मज्वरापहः ॥

अर्थ—कटेरी, गिलोय, देवदारु, अडूसा, सोंठ इनका काढा पीपलका चूर्ण डालकर पीवे तो तत्काल कफ ज्वर दूर हो ॥

## कणादिकाढा

कणाविश्वामृतादारुकिरातैरंडमूलकः।
निंबएषांकृतःक्काथःपित्तश्लेष्मज्वरापहः ॥

अर्थ—पीपल, सोंठ, गिलोय, देवदारु, चिरायता, अंडकी जड और नीमकी छाल, इनका काढा पित्त कफज्वरको दूरकरे ॥

## मुस्तादिकाढा

मुस्तादुरालभाशुंठीक्काथएषांसमांशतः।
हंतिश्लेष्मज्वरंतीव्रनिपीतःपथ्यभोजने ॥

अर्थ—नागरमोथा, धमासा, बराबर ले काढाकरके पीवे और पथ्यसैं रहे तो तीव्र कफज्वर दूर हो ॥

## वातपित्तज्वरलक्षण

तृष्णामूर्छाभ्रमोदाहःस्वप्ननाशःशिरोरुजः॥ कंठास्य-
शोषोवमथूरोमहर्षोरुचिस्तमः ॥ पर्वभेदश्चजृंभाच-
वातपित्तज्वराकृति ॥

अर्थ—प्यास, मूर्छा, भ्रम, दाह, निद्रानाश, मस्तकपीडा, कंठ, मुखका सूसना, वमन, रोमांच, अरुचि, अंधकारदर्शन, संधियोंमें पीडा और जंभाई ये वातपित्तज्वरके लक्षण है ॥

## नीलोत्पलादिहिम

नीलोत्पलंवलाद्राक्षामधुकंमधुकंतथा॥ उशीरंपद्मकं-
चैवकाश्मरीचपरूपकं ॥ एतच्छीतकषायश्चवात-
पित्तज्वरंहरेत् ॥ विप्रलापभ्रमच्छर्दीमोहतृष्णानिवारणः ॥

अर्थ—नीलकमल, गगेरन, दाख, मुलहटी, महुआ, खस, पद्माख, कंभारी,

अर्थ—मुलहटी, सारिवा, दाख, महुआके फूल, लालचंदन, कमलगट्टा, कंभारी, लोध, त्रिफला, कूठ, नागकेशर, फालसे, और मसीडेकि जिनको कमलकी जड कहते है इनका काढा खांड, और सहत तथा खीलमिलायकर देवे तो वातपित्तज्वर, दाह तृषा, मूर्च्छा, अरुचि, भ्रम, तथा रक्तपित्त, इनको शमन करे इसमें दृष्टांत है कि जैसैं वद्दलोंकों पवन दूर करता है ॥

## पंचभद्रकषाय

छिन्नोद्भवापर्पटवारिवाहभूनिंबशुंठीजनितःकषायः ॥
समीरपित्तज्वरजर्जराणांकरोतिभद्रंखलुपंचभद्रः ॥

अर्थ—गिलोय, पित्तपापडा, नागरमोथा, चिरायता, और सोंठ इनका काढा वात पित्तज्वरको नाश करे इस काथको पंचभद्र कहते है ॥

## दुरालभादिकषाय

दुरालभामृताघनोजलंचरोहिणीरजो॥ ज्वरंचवातपित्तजंनिहंत्यसोकषायकः ॥

अर्थ—धमासो, गिलोय, नागरमोथा, नेत्रवाला, कुटकी, और पित्तपापडा इनका काढा वातपित्तज्वरका नाश करताहै ॥

## भूनिंबादिकषाय

भूनिंबतिक्ताजलचंदनंचधानेयपथ्यादशमूलसंघाः ॥
ह्रीवेरविश्वाकरमर्दकाचएषांशृतंपित्तमरुज्वरेघ्नम् ॥

अर्थ—चिरायता, कुटकी, नेत्रवाला, लालचंदन, धनिया, हरड, दशमूल, खस, सोंठ, और कमरख इनका काढा वातपित्तज्वर पर हितकारी है ॥

## त्रिफलादिकषाय

त्रिफलाशाल्मलीरास्नाराजवृक्षाटरूपकैः ।
शृतमंबुहरत्याशुवातपित्तभवंज्वरं ॥

अर्थ—त्रिफला, सेमरका मूसला, रास्ना, अमलतासका गूदो और अडूसो, इनका काढा वातपित्तज्वरका नाश करे ॥

## मधुकादिफांट

मधुपुष्पंमधूकंचचंदनंसपरूपकं॥ मृणालंकमलंलोध्रं-

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षाकिरातामृतवासकासठीक्वाथंपिबेत्पित्तमरुज्ज्वरंहरेत् ॥

अर्थ—दाख, चिरायता, गिलोय, अडूसा, और कचूर इनका पीवे तो वातपित्तज्वर दूर हो ॥

## पंचमूलादिकाढा

पंचमूल्यमृतामुस्ताविश्वाभूनिंवसाधितः ।
कषायःशमयत्याशुवायुमायुभवंज्वरं ॥

अर्थ—पंचमूल, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ, और चिरायता, इनका काढा वातपित्तज्वरको दूर करे ॥

## मुद्गादियूष

मुद्गामलकयूपस्तुवातपित्तज्वरेहितः ॥ महादाहेप्रदातव्योयूपश्चणकसंभवः॥ दाडिमामलकमुद्गसंभवोयूपउक्तइहवातपैत्तिके ॥

अर्थ—मूंग और आमलेका यूष वातपित्तज्वरमें हित है। अत्यंत दाहमें चनेका यूप देना चाहिये । और अनारदाने, आमले तथा मूंगकायूप वातपित्तमें देना॥

## मुद्गादियोग

कफपित्तहरामुद्गाकारवेल्लादयस्तथा॥ प्रायेणनचतेदेयावातपित्तोत्तरेज्वरे॥ दत्तास्तुज्वरविष्टंभशूलोदावर्तकारिणः ॥

अर्थ—वातपित्तज्वर पर मूंग तथा करेले इत्यादि न देवे, ये कफपित्त हारक हैं इनके देनेसें ज्वर-मलावष्टंभ-शूल-तथा उदावर्त होता है ॥

## मधुकादिकषाय

मधुकंसारिवाद्राक्षामधूकंचंदनोत्पलं ॥ काश्मरीफलकंलोध्रंत्रिफलापद्मकेसरं ॥ परूपकंमृणालंचक्षिपेत्संचूर्ण्यवारिणा॥ निशोषितंसितक्षौद्रलाजयुक्तंतुतत्पिबेत् ॥ वातपित्तज्वरंदाहंतृष्णांमूर्च्छारुचिभ्रमान् ॥ शमयेद्रक्तपित्तंचजीमूतमिवमारुतः ॥

अर्थ—गगेरन, गिलोय, अंडकीजड नेत्रवाला, नागरमोथा, पद्माख, भारंगी पीपर, खस, और लालचंदन, इनका काढा वातपित्तज्वर नाशक तथा अग्नि वृद्धिकारक है ॥

## रसायण

त्रिफलामृतलोहंचभृंगराजंचचूर्णितं॥चूर्णमर्जुनपत्रस्य त्रिजातकशिलाजतु॥त्र्यूषणंतुल्यतुल्यांशंसर्वेषांचस-मासिता॥ क्षौद्रेणवटिकाकार्याकर्षमात्रंचभावयेत् ॥ वातपित्तज्वरंहंतिअनुपानंचकल्पयेत् ॥

अर्थ—त्रिफला, लोहभस्म, भाँगरो कोहवृक्षकेपत्र, त्रिजातक, शिलाजीत और त्रिकुटा, इनका चूर्ण करके सब चूर्णके समान मिश्री मिलाय सहतसैं १ तोलेकी गोली करे,१ गोलीअनुपानके साथ देवेतो वातपित्तज्वरको दूर करे॥

---

## वातकफज्वरलक्षण

स्तैमित्यंपर्वणांभेदोनिद्रागौरवमेवच ॥ शिरोग्रहःप्र-तिश्यायःकासःस्वेदप्रवर्तनं॥ संतापोमध्यवेगश्चवात-श्लेष्मज्वराकृतिः ॥

अर्थ—स्तैमित्य नाम (गीले कपडेसैं देहको ढकनेसैं जैसा हो ऐसा मालुमहो) संधियोंमें फूटनी, निद्रा, देह भारी, मस्तक भारी नाकसैं पानी गिरे, खाँसी, पसीनोंका आना, शरीरमें दाह, ज्वरका मध्यवेग ये वातश्लेष्मज्वरके लक्षण हैं ॥

## चिकित्सा

वातश्लेष्मज्वरेदेयमौषधंनवमेहनि ॥

अर्थ—वातकफज्वरमें नवमदिन औषधी वैद्यको देनी चाहिये॥

## यूष

शुष्कमूलकयूषस्तुवातश्लेष्माधिकेहितः ॥

अर्थ—सूखीमूलीका यूष वात कफ ज्वरमें हितकारी है ॥

## पंचकोल

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचव्याचित्रकनागरैः ॥ दीपनीयः-

कंभारींनागकेसरं ॥ त्रिफलासारिवाद्राक्षालाजान्को-
ष्णेजलेक्षिपेत् ॥ सितामधुयुतःपेयःफांटोवासोहिमो-
थवा ॥ वातपित्तज्वरंदाहंतृषांमूर्छारतिभ्रमान् ॥ रक्त-
पित्तंमदंहन्यान्नात्रकार्याविचारणा ॥

अर्थ–महुआकेफूल, मुलहटी, लालचंदन, फालसे, कमलकीजड, कमलगट्टा, लोध, कंभारी, नागकेशर त्रिफला, सरिवन, दाख, और खील, इनका फांटकरके खांडसैं अथवा सहतसैं देवे तो वातपित्तज्वर, दाह, प्यास, अरुचि, भ्रम, रक्तपित्त और मद ये दूरहो अथवा पांच औषधोंका हिम करकेलेवे तो उक्तगुण करे ॥

## द्राक्षादिक०

द्राक्षाकिरातकंधात्रीकर्पूरामृतवल्लरी ॥
क्वाथएषांगुडयुतःपीतोद्वंद्वजरोगहृत् ॥

अर्थ—दाख, चिरायता, आमले, कपूर, और गिलोय, इनका, काढा गुड मिलाके पीवे तो द्वंद्वज ज्वरका नाश करे ॥

## व्याघ्र्यादिक०

व्याघ्रीभार्गीसिंहवक्त्राचरास्नादुरपर्शैपाशाल्मलीरा-
जवृक्षः ॥ तद्वज्ज्ञेयंत्रैफलंक्वाथएषांशस्तःकासेवात-
पित्तज्वरेच ॥

अर्थ—कटेरी, भारंगी, अडूसा, रास्ना, धमासो, सेमर, अमलतास, और त्रिफला, इनका काढा वातपित्तज्वरपर हितकारी है ॥

## मुस्तादिकाढा

जलदधान्यकिरातगुडूचिकानियमनंकटुकीचपटोलिका ॥
क्वथितमेभिरिदंतुजलंहरेत्पवनपित्तभवंज्वरमुन्नतं ॥

अर्थ—नागरमोथा, धनिया, चिरायता, गिलोय, नीम, कुटकी, और पटोलपत्र, इनका काढा वातपित्तज्वर नाशक है ॥

## बलादिकाढा.

बलामृतैरंडजलाब्दपद्मकभार्गीकणोशीरयुतैःसचंदनैः ॥
संक्वाथ्यतोयंकफपित्तजज्वरप्रणाशनंवन्हिविवृत्तिकारकं ॥

ज्वरापहः ॥ हंतिवातंतथाशीतंप्रस्वेदमतिवेपथुं ॥ प्रलापंचातितंद्रांचरोमहर्षोरुचिस्तथा॥महावातेपतं- त्रेचशून्यत्वेसर्वगात्रजे ॥ पिप्पल्यादिर्महाक्काथोज्वरे- सर्वत्रपूजितः ॥

अर्थ—पिप्पल्यादिगणका काढा वातकफज्वरी रोगीको पिवावे, इससे इसज्वरके ऊपर दूसरी उत्तम औषधी नहीं है। पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, वच, अतीस, जीरा, पाढ, कुडाकीछाल, रेणुकबीज, चिरायता, कुटकी, मूर्वा, सरसो, कालीमिरच, कायफर, पुहकरमूल, भारंगी, वायविडंग, काकडासिंगी आककी जड, बडीकटेरी, रास्ना, धमासो, अजमायन, अजमोद, टिंडुककी छाल, और हींग ये औषध समान भाग लेकर काढाकर पीवे तो वातकफज्वर, वाय, शीत, पसीने, कंप, प्रलाप, अत्यंतनिद्रा, रोमांच, अरुचि, महावात, अपतंत्रवात, सर्वदेहकी शून्यता, और, संपूर्ण ज्वर इतका नाश करे यह पिप्पल्यादि गण सर्व ज्वरपर प्रशस्त है ॥

## सिंहिकादिकषाय

सिंहीयवानीछिन्नानांक्काथश्चपलयायुतः ।
कफवातज्वरश्वासशूलपीनसकासजित् ॥

अर्थ—कटेरीकी जड, अजमायन और गिलोय, इनका काढा पीपलका चूर्ण डालके पीवे, तो वात कफ ज्वर, श्वास, शूल पीनस और खांसीको दूर करे ॥

## कट्फलादिकषाय

कट्फलविश्ववचाघनपांशुधान्यशिवाजलशृंगिसुराह्वैः ॥
भार्गीयुतैःक्कथनंकिलपेयंवातकफप्रगणोनसुचैषां ॥

अर्थ—कायफर, सोंठ, वच, नागरमोथा, पित्तपापडा धनिया, हरड, नेत्रवाला, काकाडासिंगी, देवदारु, और, भारंगी इनका काढा वात कफनाशक है ॥

## दशमूलीकाढा

दशमूलीरसःपेयःकणाढ्यःकफवातजे ।
ज्वरेविपाकेतंद्रायांपार्श्वरुक्श्वासकासके ॥

अर्थ—दशमूलके रसमें पीपरका चूर्ण मिलाय पीवेतो ज्वर, अजीर्ण, तंद्रा, पार्श्वशूल, श्वास, और खाँसी, इनका नाशकरे ॥

स्मृतोवर्गोवातश्लेष्मज्वरापहः॥कोलमात्रोपयोगित्वा-
त्पंचकोलमिदंस्मृतं ॥ तीक्ष्णोष्णंपाचनंश्रेष्ठंदीपनंक-
फवातनुत् ॥ गुल्मप्लीहोदरानाहशूलघ्नंपित्तकोपनं ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, और सोंठ, यहवर्ग अग्नि दीपक तथा वातकफज्वर नाशक है। ये सर्व औषधी पंचकोल (आठमासे) लीजाति है इसीसै इसको पंचकोल कहते है। यह तीक्ष्ण, गरम, पाचन, दीपन, कफवात, गोला, प्लीह, उदर, अफरा. और शूल इनको नाश करे तथा पित्तको कुपित करता है ॥

## निंबादिकषाय

निंबामृताविश्वदारुकट्फलंकटुकावचा ॥ कषायं-
पाययेदाशुवातश्लेष्मज्वरापहं ॥ पर्वभेदशिरःशूलं-
कासारोचकपीडितं ॥

अर्थ-नीमकीछाल, गिलोय, सोंठ, देवदारु, कायफल, और वच इनका काढापीनेसैं संधिपीडा मस्तकशूल, खांसी, अरुचि, तथा वातकफज्वर इनकानाश करे ॥

## किरातादिकषाय

किरातविश्वामृतवाह्लिसिंहिकाकणामूलरसोनसिंदूकः ॥
कृतःकषायोविनिहंतिसत्वरंज्वरंसमीरात्सकफात्समुत्थितं ॥

अर्थ-चिरायता, सोंठ, गिलोय, कटेरीकीजड, पीपल, पीपरामूल, लहसन, सम्हालू इनका काढा वातकफ ज्वर नाशक है ॥

## बृहत्पिप्पल्यादिकाढा

पिप्पल्यादिगणक्वाथंपिबेद्वातकफज्वरी ॥ नातःपरं-
किंचिदस्मिन्ज्वरेभेषजमुत्तमं ॥ पिप्पलीपिप्पलीमू-
लंचव्यचित्रकनागरं ॥ वचासातिविषाजाजिपाठाव-
त्सकरेणुकं ॥ किराततिक्तकोमूर्वासर्षपामरिचानिच॥
कट्फलंपुष्करंभार्गीविडंगंकर्कटाव्हयं ॥ अर्कमूलंबृह-
त्सिंहीश्रेयसीसदुरालभा ॥ दीपकश्चाजमोदश्चशुक-
नासासहिंगुका ॥ एषांक्वाथोनिपीतःस्याद्वातश्लेष्म-

## आरग्वधादिक०

आरग्वधकणामूलंमुस्तातिक्ताभयाकृतः ॥
क्काथःशमयतिक्षिप्रंज्वरंवातकफोद्भवं ॥

अर्थ—अमलतासकागूदा, पीपलामूल, नागरमोथा, कुटकी, और हरड इनका काढा तत्काल वातकफज्वरको शमन करे ॥

## मुस्तादिकाढा

मुस्तापर्पटकंशुंठीगुडूचीसदुरालभा ।
कफवातारुचिछर्दिदाहशोपज्वरापहः ॥

अर्थ—नागरमोथा, पित्तपापडा, सोंठ, गिलोय, और धमासों, इनका काढा कफवात, अरुचि, वमन, दाह, शोप और ज्वर इनका नाश करे ॥

## भूनिंबादिकाढा

भूनिंबमुस्ताकटुकागुडूचीदुरालभापर्पटनागराख्यः ।
क्काथोनिलश्लेष्महरोवदंतिसूर्योयथानाशयतेंधकारं ॥

अर्थ—चिरायता, नागरमोथा, कुटकी, गिलोय. धमासो, पित्तपापडा, और सोंठ, इनका काढा वातकफको हरण करे जैसैं सूर्य अंधकारको ॥

## चातुर्भद्रादिकाढा

किराततिक्तकंमुस्तंगुडूचीविश्वभेषजं ॥ चातुर्भद्रकमित्याहुर्वातश्लेष्मज्वरापहं ॥

अर्थ—कडुआचिरायता, नागरमोथा, गिलोय, और सोंठ, यह चातुर्भद्रकाढा वातकफज्वरको दूर करे ॥

## स्वेदशोपकचूर्ण

स्वेदोद्गमेभ्रष्टकुलित्थचूर्णनिर्यातनंशस्तमितिब्रुवंति ।
जीर्णशकृद्रोलवणस्यभाजनंसंचूर्णितंस्वेदहरंसुधूलनात् ॥

अर्थ—पसीनेआनेपर कुलथीको भूनकर पीसे, इस चूर्णको देहमें मालिस करे अथवा गौका पुराना गोवर और नोनके पात्रको पीसके मालिसकरे तो पसीने आना दूर होवे ॥

## पिप्पल्यादिकाढा

पिप्पलीभिःशृतंतोयमनभिष्यंदिदीपनं।
वातश्लेष्मज्वरंहंतिसेवितंप्लीहनाशनं॥

अर्थ—पीपलका काढा सेवन करनेसैं कफको दूर करे अग्निदीपक, और वातकफज्वर तथा प्लीह इनका नाश करनेवाला है॥

## दार्वादिकाढा

दारुपर्पटभार्ग्यब्दवचाधान्यककट्फलैः॥ साभयाविश्वपूतीकैःक्काथोहिंगुमधूत्कटः॥ कफवातज्वरेपीतोहिक्काशोषगलग्रहान्॥ श्वासकासप्रमेहांश्चहन्यात्तरुमिवाशनिः॥

अर्थ—देवदारु, पित्तपापडा, भारंगी, नागरमोथा, वच, धनिया, कायफर, हरड, सोंठ, तथा कंजा इनका काढा हिंग तथा सहत मिलायके देवे तो कफवातज्वर, हिचकी, शोष, गलरोग, श्वास, खांसी, और प्रमेह इनका नाशकरे जैसे वृक्षको वज्र नाश करता है॥

## पटोलादिकाढा

तृष्णान्वितेवातकफार्तिशूलेसश्वासकासारुचिविट्विबंधे॥ हितंजलंदीपनपाचनंचपटोलशुंठीयवपिप्पलीनां॥

अर्थ—प्यास, वात, कफरोग, शूल, श्वास, खांसी, अरुचिं, तथा, बद्धकोष्ट इनपर पटोलपत्र, सोंठ, इन्द्रजो, और पीपल इनका काढा दीपन पाचन और हितकारी है॥

## क्षुद्रादिक०

क्षुद्रामृतानागरपुष्कराह्वयैःकृतःकषायकफमारुतोत्तरे॥ सश्वासकासारुचिपार्श्वशूलेज्वरेत्रिदोषप्रभवेपिशस्यते॥

अर्थ—कटेरी, गिलोय, सोंठ, और, पुहकरमूल इनका काढा कफवातज्वर श्वास, खासी, अरुचि, पार्श्वशूल, और त्रिदोषजनित ज्वर इनपर हितकारी है॥

अर्थ—मुख्यकफसें लिप्तहो, तथा पित्तके जोरसें मुखमें कडुआट, तंद्रा, मूर्च्छा, खाँसी, अरुचि, प्यास, स्तंभ ( देहका जकडना ) पसीना, कफ, पित्तका गिरना, वारंवार दाहहो और वारंवार शीतका लगाना ये कफपित्तज्वरके लक्षण है

## कफपित्तज्वरप्रक्रिया

पित्तश्लेष्मज्वरेदेयमौषधंदशमेहानि ॥

अर्थ—पित्त कफज्वरमें औषधी दशमे दिन देनी चाहिये ॥

## कंटकार्यादिकाढा

कंटकार्यमृताभार्गीविश्वेंद्रयववासकं ॥ भूनिंबचंदनं-मुस्तंपटोलंकटुरोहिणी ॥ विपाच्यपाययेत्काथंपित्त-श्लेष्मज्वरापहं ॥ दाहतृष्णारुचिच्छर्दिकासशूलनिवारणं ॥

अर्थ-कटेरी, गिलोय, भारंगी, सोंठ, इन्द्रजो, अडूसा, चिरायता, लालचंदन, मोथा, पटोलपत्र और कुटकी इनका काढा पित्तकफज्वर, दाह, प्यास. अरुचि, वमन, खांसी और शूल इनको दूर करे ॥

## नागरादिकाढा

नागरोशीरबिल्वाब्दधान्यमोचरसांबुभिः ॥ कृतःक्काथोभवेद्ग्राहीपित्तलेष्मज्वरापहः ॥

अर्थ-सोंठ, खस, वेलगिरी, नागरमोथा, धनिया, मोचरस और नेत्रवाला इनका काढा ग्राही और पित्त कफज्वरका नाशक है ॥

## शृंगवेरादिकाढा

कषाय परिपीतस्तुशृंगवेरपटोलयोः ॥ पित्तश्लेष्म-ज्वरवमीदाहकंडूविसर्पनुत् ॥

अर्थ--अदरख और पटोलपत्रका काढा करके पीवे तो पित्तकफज्वर, वमन, दाह. खुजली और विसर्प ए दूर हो ॥

## पटोलादियूप

पटोलधान्ययोर्यूपःपित्तश्लेष्मज्वरापहः ॥ दीपनः कफविच्छेदीपित्तवातानुलोमनः ॥

अर्थ--पटोलपत्र और धनियेका यूप पित्तकफज्वर को दूरकरके दीपन और कफको छुडानेवाला तथा पित्तवातको अनुलोमकर्त्ता है ॥

## मरिचाद्युद्धूलन

मरिचंपिप्पलीशुंठीपथ्यालोध्रश्चपुष्करं ॥ भूनिंबः कटुकाकुष्ठंकचूरोलिंगिकासठी ॥ एतानिसमभागानिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥ एतदुद्धूलनंश्रेष्ठंस्रोतेवस्वेदनिर्गमे ॥

अर्थ—काली मिरच, पीपल, सोंठ, हरड़, लोध, पोहकरमूल, कडुआचिरायता कूठ, कचूर, शिवलिंगी, और कपूरकचरी ये औषध समान भागले कपड छन चूर्णकरके देहमें लगावे तो पसीनेकी झडीबीलगरही हो उसको बंद करे ॥

## भूनिंबाद्युद्धूलन

भूनिंबकारवीतिक्तावचाकफटूलजंरजः ।
एषामुध्दूलनंश्रेष्ठंसततंस्वेदसंप्लवे ॥

अर्थ—चिरायता, अजमायन, कुटकी. वच और कायफल इनका चूर्ण अंगमें लगावे तो निरंतर आनेवाले पसीनोंके बंदकरनेको उत्तमहै ॥

## सूतशेखररस

सूतकंटंकणंभ्रष्टंगंधंशुद्धंसमंसमं ॥ द्विगुणंसूतकादेयंजैपालंतुपवर्जितं ॥ सैंधवंमरिचंचिंचात्वक्क्षारःशर्करापिच ॥ प्रत्येकंसूततुल्यंस्याज्जंबीरैर्मर्दयेद्दिनं ॥ सूर्यशेखरनामायंरसोगुंजाद्वयोन्मितः ॥ भक्षितस्तप्ततोयेनवातश्लेष्मज्वरापहः ॥

अर्थ-शुद्धपारा. भुनासुहागा, शुद्धगंधक, सैंधानिमक, मिरच, इमलीकासार और मिश्री प्रत्येक एक एक टके भर शुद्ध जमालगोटा २ टके भर इन सबको कूट पीस नींबूके रसमें १ दिन खरलकरे यह सूर्यशेखर नामक रस दो रत्तीग रम जलसै लेय तो वातकफज्वर दूर हो ॥

## कफपित्तज्वरलक्षण

लिप्ततिक्तास्यतातंद्रामोहःकासोऽरुचिस्तृषा॥ तथास्तंभश्चसंस्वेदःकफपित्तप्रवर्तनं ॥ मुहुर्दाहोमुहुःशीतंपित्तश्लेष्मज्वराकृतिः ॥

गुक्तंकषायंतुपिबेन्नरः ॥ भ्रममूर्छारुचिच्छर्दिपित्तश्लेष्मज्वरापहं ॥

अर्थ—सोंठ, इन्द्रजो, नागरमोथा, लालचंदन, और कुटकी इनका काढाकर उसमें पीपलकाचूर्ण डाल पीवेतो भ्रम, मूर्च्छा, अरुचि, वमन, पित्तकफज्वर इनका नाश करे ॥

## द्राक्षादिकाढा

द्राक्षाशम्पाककटुकामुस्तंग्रंथिकधान्यकं ॥
पक्वंहन्यादुदावर्तशूलंपित्तकफज्वरं ॥

अर्थ—दाख, अमलतासकोगूदो, कुटकी, मोथा, पीपरामूल, और धनिया इनका काढा देवे तो उदावर्त्त, शूल, और पित्तकफज्वर, ये दूर हो ॥

## पटोलादिकाढा

पटोलयवधान्याकमुस्तामलकचंदनं ।
श्लैष्मिकश्लेष्मपित्तोत्थज्वरतृट्छर्दिदाहनुत् ॥

अर्थ—पटोलपत्र, इन्द्रजो, धनिया, नागरमोथा, आमले और लालचंदन इनका काढा कफपित्तज्वर, कफज्वर, प्यास, वमन, और दाह, इनको नाश करे ॥

## यवादिकाढा

यवपद्मकधान्याकंद्वेहरिद्रेद्रसचंदने ॥ गुडूचीदेवकाष्ठंचतेजोह्वासदुरालभा ॥ श्रपयित्वापिबेत्क्वाथंकफपित्तज्वरापहं ॥ पिपासाछर्दिदाहघ्नंवृष्यंवह्निविदीपनं ॥

अर्थ—इन्द्राजो, पद्माख, धनिया, हलदी, दारुहलदी, रक्तचंदन, गिलोयदेवदार, तेजवल, और जवासो इनका काढा कफपित्तज्वर, तथा प्यास, वमन, दाह इनको नाश करे और अग्निको दीपन करे ॥

## त्रायंत्यादिकाढा

त्रायंतीभिषकटुकारामसेनापटोलिका ।
ज्वरेपैत्तकफेह्येतद्देयंदीपनपाचनं ॥

अर्थ—त्रायमाण, मोथा, कुटकी, सपेदकटेली, और पटोलपत्र, इनका काढा पित्तकफज्वरपर दीपन और पाचनार्थ देवे ॥

## पटोलादिकाढा

पटोलंपिचुमंदश्चत्रिफलामधुकंबला ॥ साधितोयंक-
षायःस्यात्पित्तश्लेष्मभवेज्वरे ॥

अर्थ–पटोलपत्र, नीमकीछाल, त्रिफला, मुलहटी और गगेरन इनका काढा पीने से पित्तकफज्वर दूर हो ॥

## तिक्तादिकाढा

तिक्तोशीरबलाधान्यपर्पटांभोधरैःकृतः ॥ क्वाथःपुनः
समायातंज्वरंशीघ्रंनिवारयेत् ॥

अर्थ–कुटकी, खस, गगेरन, धनिया, पित्तपापडा और नागरमोथा इनका काढा उलटकर आनेवाले ज्वरको तत्काल दूर करे ॥

## लोहितचंदनादिकाढा

लोहितचंदनपद्मकधान्यच्छिन्नरुहापिचुमंदकषायः ॥
पित्तकफज्वरदाहपिपासावांतिविनाशहुताशकरःस्यात् ॥

अर्थ–लालचंदन, पद्माख, धनिया, गिलोय और नीमकीछाल इनका काढा पित्त, कफज्वर, दाह, प्यास, वमन. इनको दूर करे और अग्निको बढावे ॥

## जीरकादिकाढा

जीरकंकारवेल्यंवुशीतपूर्वज्वरेहितं ॥ पाक्यंशीतक-
पायंचमुस्तापर्पटकंभवेत् ॥

अर्थ—जीरा और करेलेका रस देनेसें शीतज्वरका नाश करे एवं नागरमोथा और पित्तपापडा इनका काढा शीतल देनेसें पाचक है ॥

## यवादिकाढा

यवःपर्पटकंधान्यंपटोलारिष्टसाधितं ॥ पिबेत्सश-
र्करक्षौद्रंपित्तश्लेष्मज्वरापहं ॥

अर्थ—जो पित्तपापडा, धनिया, पटोलपत्र, नीमकीछाल, इनका काढा सहत और मिश्री मिलायकर पीवे तो पित्त कफज्वरको दूरकरे ॥

## नागरादिकाढा

नागरेंद्रयवंमुस्तंचंदनंकटुरोहिणी ॥ पिप्पलीचूर्णसं-

अर्थ—कटेरी, गिलोय, सोंठ, पुहकरमूल, और चिरायता इनका पंचतिक्त-नामक काढा सर्वज्वरोको तत्काल दूर करे॥

## भार्ग्यादिकाढा

भार्गीपुष्करमूलंचमुस्तकंकटकारिका॥ त्रिकंटकबृह-
त्यौचकर्णिनीनागरैःशृता ॥ गणोभार्ग्यादिकोनाम-
पित्तश्लेष्मज्वरापहः॥ कासश्वासारुचिहरःपार्श्वशूल-
निवारणः ॥

अर्थ—भारगी, पुहकरमूल, नागरमोथा, कटेरी, गोखरू, बडीकटेरी, अमलतासकोगूदो, और सोंठ, इन औषधोंका काढा पित्तकफज्वर, खासी, श्वास, अरुचि, और पसवाडोंका दरद इन रोगोंको दूर करे ॥

## पटोलादिकाढा

पटोलंचंदनंमूर्वातिक्तापाठामृताकणाः ॥
पित्तश्लेष्मारुचिच्छर्दिज्वरकंडूविषापहाः ॥

अर्थ—पटोलपत्र, लालचदन, मूर्वा, कुटकी, पाढ, गिलोय, और पीपल इनका काढा पित्तकफ अरुचि, वमन, ज्वर, खुजली, और विष इनको नाश करे

## त्रिफलादिकाढा

त्रिफलात्रायमाणाचमृद्वीकाकटुरोहिणी ॥
पित्तश्लेष्मज्वरेह्येषकषायोत्यानुलोमिकः ॥

अर्थ—त्रिफला, त्रायमाण, दाख और कुटकी इनका काढा पित्तकफज्वरको दूर करनेको देवे ॥

## वत्सकादिकाढा

वत्सकंपद्मकाष्ठंचनागरंचंदनामृते ॥ पटोलंधान्यकं-
चैवमुस्तकंरक्तचंदनं॥ पाठांमूर्वांमृतांशुंठीमुशीरंकटु-
रोहिणीं॥ समभागशृतंतोयंसर्वज्वरहरंपिवेत् ॥ पि-
त्तासृक्दाहशूलघ्नमम्लपित्तविनाशनं ॥

अर्थ—कुडाकीछाल, पद्माख, सोंठ, रक्तचदन, गिलोय, पटोलपत्र, धनिया,

## किरमालादिकाढा

किरमालोवचाहिंगुवालकंधान्यकंनिशा ॥ मुस्तायष्टिस्तथाभार्गीपर्पटःसमभागतः ॥ अष्टावशेषितःक्काथोमधुनाप्रतिपाकतः॥श्लेष्मपित्तज्वरंहंतिरोगिणःपथ्यभोजिनः ॥

अर्थ—अमलतासकोगूदो, वच, हिंग, नेत्रवाला, धनिया. हलदी, नागरमोथा, मुलहटी, भारंगी, और पित्तपापडा ए समभागलेके अष्टावशेष काढाकरे उसमे सहत डालके पीवे और पथ्यसे रहे तो कफपित्तज्वरका नाश हो ॥

## पटोलादिकाढा.

पटोलमुस्ताजलरक्तचंदनंतिक्तारजोविश्वमुशीरवासकं ॥ संक्वाथ्यतोयंकफपित्तजंज्वरंनिहंतिचाराच्चरितंतृषायुतं ॥

अर्थ—पटोलपत्र, नागरमोथा, नेत्रवाला, रक्तचंदन, कुटकी, पित्तपापडा, सोंठ, खस, और अडूसा इनका काढा कफपित्तज्वर और तृषा इनका नाश करे

## गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीनिंबधान्याकपद्मकंचंदनान्वितं ॥ तृष्णादाहरुचिच्छर्दिसर्वज्वरहरोगणः ॥

अर्थ—गिलोय, नीमकीछाल, धनिया, पद्माख, रक्तचंदन इनका काढा तृषा दाह, अरुचि, वमन, और संपूर्ण ज्वरोंको नाश करे ॥

## सुंठ्यादिकाढा

सनागरंपर्पटकंपिबेद्वासदुरालभम् ॥ किराततिक्तकंमुस्तंगुडूचींसदुरालभां ॥

अर्थ—सोंठ, पित्तपापडा, अथवा धमासा इनका काढा अथवा चिरायता नागरमोथा, गिलोय, और धमासो इनका काढा पित्तकफज्वरवालेको देवे ॥

## क्षुद्रादिकपंचतिक्तकाढा

क्षुद्रामृताभ्यांसहनागरेणसपुष्करंचैवकिराततिक्तं ॥ पिबेत्कषायंभुविपंचतिक्तंविधिःसमस्तज्वरमाशुहंति ॥

१ किरमालीअनमायन

अर्थ-जवोंको अच्छीरीतिसें वीन छरके मिंगी निकालले फिर चौदह गुनेजलमें पककरे जब जों सीज जाय तब उस पानीको छानके प्यावे इसको वाट्यमंड कहते है यह कफपित्तको दूरकरे कंठको हितकारी और रक्तपित्तको दूर करे॥

### मुस्तादिनिर्यूह

मुस्तापर्पटकैरातनिर्यूहेनप्रसाधितः॥
कफपित्तज्वरहरोयूषोधान्यपटोलयोः॥

अर्थ—नागरमोथा, पित्तपापडा, और चिरायता, इनका निर्यूह अथवा धनिया और पित्तपापडा इनका यूष कफपित्तज्वरका नाश करे॥

### निंबादियूष

निंबकुलकयूषस्तुहितःपित्तकफात्मके॥

अर्थ—नीमकीछाल, और पटोलपत्र इनका यूष पित्तकफका नाश करता है

### चंद्रशेखररस

शुद्धंसूतंसमंगंधंमरिचंटंकणंतथा॥ चतुस्तुल्याशिलायोज्यामत्स्यपित्तेनभावयेत्॥ त्रिदिनंभावयेत्तेनरसोयंचंद्रशेखरः॥द्विगुंजमार्द्रकद्रवैर्देयंशीतोदकंपुनः॥ तक्रौदनंचवृंताकंपथ्यंतत्रनिवेदयेत्॥ त्रिदिनात्श्लेष्मपित्तोत्थमत्युग्रंनाशयेज्ज्वरं॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्धगंधक, कालीमिरच, सुहागा, तथा इन चारोंकी वरोबर मनसिलले सबको एकत्रकर मछलीके पित्तेसें तीनदिन खरलकरे तो यह चंद्रशेखर रस बनकर तयारहो, इसको२रत्ती अदरकके रससें देवे और ऊपर शीतल जलपीवे तथा दही भात और बेंगन ए पथ्यमेदेतो तीनदिनमें कफपित्तज्वर नाश हो॥

---

### संनिपातज्वरलक्षण

क्षणेदाहःक्षणेशीतमस्थिसंधिशिरोरुजः॥ सस्रावेकलुषेरक्तेनिर्भुग्नेचापिलोचने॥सस्वनौसरुजौकर्णौकंठः शूकैरिवावृतः॥ तंद्रामोहःप्रलापश्चकासश्वासोरुचिभ्रमः॥ परिदग्धाखरस्पर्शाजिव्हास्रस्तांगतापरं॥

नागरमोथा, सपेदचंदन, पाठ, मूर्वा, खस, और कुटकी ए समान भागलेके काढा करे यह सर्वज्वर, रक्तपित्त, दाह, शूल, और अम्लपित्तको दूर करे ॥

## अमृतादिकाढा

अमृतारिष्टकटुकामुस्तेंद्रयवनागरैः ॥ पटोलंचंदनाभ्यांचपिप्पलीचूर्णयुक्कृतं ॥ अमृताष्टकमेतच्चपित्तश्लेष्मज्वरापहं ॥ छर्द्यरोचकहृल्लासदाहतृष्णानिवारणं ॥

अर्थ—गिलोय, नीमकीछाल, कुटकी, नागरमोथा, सोंठ, पटोलपत्र, और दोनो चंदन इनके काढेमें पीपलकाचूर्ण मिलायके पीवे तो यह अमृताष्टकपित्तकफज्वर, वमन, अरुचि, हृल्लास, दाह, और प्यासको दूर करे ॥

## वासास्वरस

सपत्रपुष्पवासायारसःक्षौद्रसितायुतः ।
कफपित्तज्वरंहंतिसास्रपित्तंसकामलं ॥

अर्थ—पत्ते और फूल सुद्धा अडूसेका रस लेवे उसमें मिश्री और सहत मिलाय पीवे तो कफपित्तज्वर, रक्तपित्त, और कामला दूर हो ॥

## कटुकीचूर्ण

सशर्करामक्षमात्रांकटुकींचोष्णवारिणा ।
पीत्वाज्वरंजयेज्जंतुःपित्तश्लेष्मसमुद्भवं ॥

अर्थ—कुटकीका चूर्ण एक तोला ले उसमें चार मासे मिश्री मिलाय गरम जलसैं लेवे तो पित्तकफज्वर दूर हो ॥

## लाजमंड

लाजैर्वातंडुलैर्भ्रष्टैर्लाजमंडःप्रकीर्तितः ।
श्लेष्मपित्तहरोग्राहीपिपासाज्वरजिन्मतः ॥

अर्थ—खीलोंका अथवा भुने चावलोंका माँड निकालकर देवे यह कफ, पित्त, प्यास, ज्वर, इनको दूर करे और ग्राही है ॥

## वाट्यमंड

सुकंडितैस्तथाभ्रष्टैर्वाट्यमंडोयवैर्भवेत् ।
कफपित्तहरःकंठ्योरक्तपित्तप्रसादनः ॥

श्वरोंने कहाहै ( धातुपाक ) कहिये उत्तरोत्तर रोगकी वृद्धि और बलकी हानि होकर शुक्रादि धातुसहित मूत्रादिकोंका जो पाक होय उसे ( धातुपाक ) कहतेहैं ॥

## दोषपाकलक्षण

दोषप्रकृतिवैकृत्यंलघुताज्वरदेहयोः ।
इन्द्रियाणांचवैमल्यंदोषाणांपाकलक्षणम् ॥

अर्थ—दोषोंका स्वभाव पलटजाय, ज्वरका हलका होना, देह हलकी हो, इन्द्रियोंका निर्मल होना ये ( मलपाक ) के लक्षण जानने (धातुपाक) और ( मलपाक ) होना केवल ईश्वरपर है इसमें दूसरा कोई हेतु नहींहै ॥

## सन्निपातज्वरकेविशेषलक्षण

संनिपातज्वरस्यांतेकर्णमूलेसुदारुणः। शोथःसंजाय-
तेतेनकश्चिदेवप्रमुच्यते ॥ ज्वरस्यपूर्वंज्वरमध्यतो-
वाज्वरांततोवाश्रुतिमूलशोथः। क्रमादसाध्यःखलुक-
ष्टसाध्यःसुखेनसाध्योमुनिभिःप्रदिष्टः ॥

अर्थ—संनिपातज्वर शांति होनेके पीछे कानकी जडमें दारुण सूजन पैदा होती है उस सूजनसे कोई रोगी बचे है प्राय यह मारही डाले है ॥१॥ यदि यह सूजन ज्वरके पहिले होवे तौ असाध्यहै ज्वरके मध्यमें होय तौ कष्टसाध्य है और ज्वरके अंतमें होय तौ सुखसाध्य है । ऐसें मुनीश्वरोंने कहा है ॥

## साध्यासाध्यलक्षण

दोषेविवृद्धेनष्टेऽग्नौसर्वसम्पूर्णलक्षणः । सन्निपातज्वरो-
साध्यःकृच्छ्रसाध्यस्ततोऽन्यथा ॥

अर्थ—जिसमें दोष ( वात पित्त कफ ) वृद्धि होकर अर्थात् सम्पूर्ण लक्षण होकर मिलतेहों, और अग्नि शांति होगई हो, वो सन्निपातज्वर असाध्य है। और इससें विपरीत अर्थात् दोष बढे नहों अल्प लक्षण हों अग्नि थोडी दीप्त हो वो सन्निपातज्वर कृच्छ्रसाध्य है ॥

## संनिपातकिकालमर्यादा

सप्तमेदिवसेप्राप्तेनवमेकादशेपिवा ॥ पुनर्घोरतरोभू-
त्वाप्रशमंयातिहंतिवा ॥ सप्तमीद्विगुणायावन्नवम्ये-

ष्ठीवनंरक्तपित्तस्यकफेनोन्मिश्रितस्यच ॥ शिरसो-
लोडनंतृष्णानिद्रानाशोहृदि व्यथा ॥ स्वेदमूत्रपुरी-
णांचिराद्दर्शनमल्पशः ॥ कृशत्वंनातिगात्राणांसततं-
कंठकूजनं॥कोठानांश्यावरक्तानांमंडलानांचदर्शनं ॥
मूकत्वंस्रोतसांपाकोगुरुत्वमुदरस्यच ॥ चिरात्पाक-
स्तुदोषाणांसंनिपातज्वराकृतिः ॥

अर्थ—अकस्मात् क्षणमें दाह, क्षणभरमें सीत लगे, हाड, संधि, मस्तक इनमें शूल, अश्रुपातयुक्त काले और लाल तथा फटेसे नेत्र होजावे ( अथवा टेढे नेत्र हों ये जेज्जटका मत है ) कानोमें शब्द ओर पीडाहो, कठमें कांटे पडजाय; तंद्रा, वेहोशी हो, अनर्थ वोलें, खांसी, श्वास, अरुचि, भ्रम ये हो, जीभ परिदग्धवत ( काली ) और खर्दरी गोजीभके समान तथा सिथिल ( लठर) हो, पित्त और रुधिर मिला कफ थूके, शिरको इधर उधर पटके, तृषा वहुत लगे, निद्राका नाशहो, हृदयमे पीडा, पसीना, मूत्र मल इनका वहुतकालमें थोडा उतरना, दोषोंके पूर्ण होनेसैं देहका कृश न होना, कंठमें कफका निरंतर बोलना, रुधिरसैं काले लालकोठ और चकत्तोंका होना, शब्द वहुत मन्द निकले, कान नाक, मुख आदि छिद्रोंका पकना, पेटका भारी होना, वात पित्त कफ इनका देरमें पाकहो ( उदरस्य च ) इस पदमें जो चकार है यासैं वाग्भटने जो लिखे हैं कोन शीतका लगना, दिनमें घोर निद्राका आना, नित्यरात्रिमें जागना, अथवा निद्रा कभी आवेही नहीं. पसीना वहुत आवै और नहीं आवै, कभी गान करे, कभी नांचे. हंसे, रोवै, और चेष्टा पलटजाना इत्यादि जानने ये सन्निपातज्वरके लक्षण जानने। सुश्रुत वाग्भटके मतसैं सन्निपात एकही प्रकारका है परंतु और आचारीनके मतसैं उल्वणादि भेद करके१२प्रकारका है ॥

## धातुपाकलक्षण

निद्रावलैजोरुचिवीर्यनाशो हृद्वेदनागौरवतालपचेष्टा ।
विष्टंभतायस्यकिलारतिःस्यात्सधातुपाकीमुनिभिःप्रदिष्टः ॥

अर्थ—निद्रा, वल, तेज, रुचि, वीर्य, इन्का नाश, हृदयमें पीडा, देह भारी, हीनचेष्टा अफरा मनका न लगना ये लक्षण जिसके हों उसको धातुपाकी मुनी-

---

१ कोठके लक्षण माधवकिने कहेहें यथा-" वरटीदंशसंस्थानः कंडूमान् लोहितोऽल्पकफपित्तवान् क्षणिकोत्पत्तिविनाशः कोठ इत्यभिधीयते माद्भिः इति ।

अर्थ—धमासा, गोखरू, औरकटेरी, इनके काढेमें सिद्ध कराहुआ आहार देवे। इससै दोप शांतिहो तथा वल और अग्नि ये वढे, और त्रिदोप रोगवालेको हित है ॥

## लाजसक्तुक

लाजसक्तून्समश्नीयात्सैंधवेनसमन्वितान्।
तच्चेज्जीर्यत्यविघ्नेनज्वरीजीवेत्तदाध्रुवं ॥

अर्थ—त्रिदोपज्वरवालेको खीलका सत्तू-सैंधानोन डालके देवे तो यदि यह निर्विघ्न पचजावे तो रोगी निश्चय जीवे ॥

## लाजसक्तुनिषेध

रक्तपित्तेहितत्वेनतृष्णादाहज्वरेषुच।
लाजानांसक्तवःशीतानचतेत्रहितामताः ॥

अर्थ—खीलोका सत्तू शीतल है यह रक्तपित्त, प्यास दाह और ज्वर इनपर हित है परंतु संनिपातपर नही देना चाहिये ॥

## पित्तशमनकरनेकेकारण

निर्हरेत्पित्तमेवादौज्वरेषुसमवायिषु।
दुर्निवारतरंतद्धिज्वरार्त्तेषुविशेषतः ॥

अर्थ—समवायि संनिपात ज्वरमें प्रथम पित्तका हरण करे क्यो कि यह दुर्निवार है ॥

## शीतोदकसेचनकानिषेध

संनिपातेतुदाहार्तंयःसिंचेच्छीतवारिणा।
आतुरःसकथंजीवेद्भिपग्वासकथंभवेत् ॥

अर्थ—जो वैद्य सन्निपातके दाहमें शीतल जलसें सिंचन करता है उसको वैद्यकैसे कहना चाहिये और वह रोगी कैसै वचेगा ॥

## शिरीषाद्यंजन

शिरीषवीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैंधवैः।
अंजनंस्यात्प्रवोधायसरसोनशिलारसैः ॥

अर्थ—सिरसके वीज, गौमूत्र, पीपर, कालीमिरच ओर सैंधानिमक इनको

कादशीतथा ॥ एषात्रिदोषमर्यादामोक्षायचवधायच ॥

अर्थ—संनिपातज्वर यदि सातवे, नवे, ग्यारवे, चौदवे, अठारवे और बाईस वे दिन जादा होवे तो रोगी इस मर्यादाके दिवसोंमें मरे, और मर्यादा चूक जावे तो रोगी जीवे, यह त्रिदोषकी मर्यादा है। जबसें त्रिदोष प्रकटहो उस दिनसें लेकर ७ किंवा १४ और ९ किंवा १८ तथा ११ किंवा २२ दिनतक त्रिदोष ज्वरोंकी मर्यादा है इस अवधिमें ज्वर जाता रहै अथवा मृत्युहोय ॥

## दोषजनितकालमर्यादा

पित्तकफाऽनिलवृद्ध्यादशदिवसद्वादशाहसप्ताहान् ।
हंतिविमुंचत्याशुत्रिदोषजोधातुमलपाकात् ॥

अर्थ—पित्तकफ और वात इनके पाकहोनेकी मर्यादा अनुक्रमसें दशमे, बारवे, और सातवे दिवस होती है अतएव उसीउसी दिनमें धातुपाक होनेसें रोगी मरे मलपाक होनेसें रोगी रोगरहित होवे ॥

## कट्फलादिपानम्

कट्फलंत्रिफलादारुचंदनंसपरूषकं ॥ कटुकापद्मकोशीरंविपचेत्कार्षिकंजले ॥ त्रिदोषदाहतृष्णाघ्नंपानमात्रेणपूजितं ॥ दीर्घकालज्वरार्तानामेतत्स्यादमृतोपमं ॥

अर्थ—कायफल, त्रिफला, देवदारु, लालचंदन, फालसे. कुटकी, पद्माख, और खस इन औषधोंको एक २ तोलालेकर काढा करके पीवेतो त्रिदोष दाह और तृष्णा इनको शांत करे और दीर्घकालसे आनेवाले ज्वररोगीको अमृतके तुल्यहै

## दशमूलादिमंड

पाचनोदीपनःसोष्णोलाजमंडोयतःस्मृतः ।
दशमूलादिसिद्धःससंनिपातज्वरेहितः ॥

अर्थ—दशमूलके काढेसें सिद्ध कराहुआ खीलोंका मांड पाचन दीपन और गरम है अतएव संनिपातज्वरपर हित है ॥

## दुःस्पर्शादिसिद्धान्न

दुस्पर्शगोक्षुरक्षुद्रसिद्धमाहारमर्पयेत् ।
दोषशांतिबलाग्न्यर्थंत्रिदोषज्वरिणेपृथक् ॥

## मातुलिंगादिनस्य

मातुलिंगार्द्रकरसंकोष्णंत्रिलवणान्वितं ॥ अन्यद्वा-
सिद्धविहितंनस्यंतीक्ष्णंप्रयोजयेत् ॥ तेनप्रभिद्यते-
श्लेष्माप्रभिन्नश्चप्रसिच्यते ॥ शिरोहृदयकंठास्यपा-
र्श्वरुक्ोपशाम्यति ॥

अर्थ—बिजोरेका रस और अदरककारस, इनको गरम कर तीनो नोन (संचर-साम्भर-खारी) मिलायके नस्यदेवे. अथवा और जो सिद्धवैद्योकी कही-हुई तीक्ष्ण ओषधोंकी नश्यदेवे तो इससे कफ फटजावे और फटकर दवजाय कि जिस्से शिर, हृदय, कंठ, मुख और पसवाडोंकी पीडा शांति हो ॥

## कल्पतरुनस्य

मोहामयेनमुग्धंबोधयितुंयादृशःशक्तः ॥ क-
ल्पतरुनामधेयोरसोनतादृक्परंकिंचित् ॥

अर्थ—जो मोहरूप रोगसे मूढ हो रहा है उसके चैतन्य करनेमें जैसा कल्पतरुरस सामर्थ्य रखता है ऐसाअन्य नही है ॥

## द्राक्षादिलेपजिव्हापर

जिव्हाताळुगलक्लोममरुत्पित्तेनवोच्छ्रितः ॥ तदास-
चारेच्छोषंजिव्हायाःखरतांतथा ॥ स्फुटनंचतदा-
जिव्हांलेपयेन्मधुपिष्टया ॥ द्राक्षयासाज्ययातेनजि-
व्हास्यात्सरसामृदुः ॥

अर्थ—यदि वातपित्तके प्रभावसैं जीभ, तालु, गला, और क्लोम (पिपासा-स्थान) ये उठ आवे तो ये शोषको करते है और जीभको खरदरीकरे, तथा जीभ फटजावे, इस्मे जीभपर दाख और घृत मिलाय सहतका लेपकरे तो जीभ रसयुक्त नम्र हो जावे ॥

## आर्द्रकादिकवलग्रह

आर्द्रकस्वरसोपेतंसैंधवंकटुकत्रयं ॥ आकंठाद्धारये-
दास्येनिष्ठीवेच्चपुनःपुनः ॥ तेनास्यहृदयक्लोममन्या-
पार्श्वशिरोगलात् ॥ लीनोप्याकृष्यतेश्लेष्मालाघवं

एकत्र पीस अंजनकरे तो सन्निपातकी मूर्च्छा जाय, अथवा मनसिल और वच इनका लहसनके रसमें अंजन करे ॥

## कस्तूरिकाद्यंजन

कस्तूरीमरिचंवाजिलालाचमधुनांजनं ।
तंद्रांनिवारयत्याशुव्यूषंक्षिप्तंयथानसि ॥

अर्थ—कस्तुरी और मिरच इनको घोडेकी लारमें पीस सहत डालके अंजन करे तो तंद्रा शीघ्र दूर होवे। उसी प्रकार त्रिकुटाके चूर्णकी नासलेनेसें तंद्रा दूर होय

## लंघन

सन्निपातज्वरीपूर्वंसम्यग्लंघनमाचरेत् ।
शृतशीतंपिवेदंभःसमयेभेषजंभजेत् ॥

अर्थ—संनिपातज्वरवाला प्रथम उत्तम लंघन करे और पानीको ओटाय शीतल करके वहुत प्यासमें पिवावे, और समय २ पर औषधि देवे ॥

## शीतजलपाननिषेध

सन्निपातेनतृष्यंतंपार्श्वरुक्तालुशोषिणं ।
यःपाययेज्जलंशीतंसमृत्युर्नरविग्रहः ॥

अर्थ—संनिपातज्वरवाले रोगीके शोष होय और कूखमें शूल तथा तालुआ सूखताहो इसमें जो वैद्य विना ओटाहुआ जल देवे वह मनुष्यरूप मृत्यु जानना,

## वालुकास्वेद

वातश्लेष्मकृतेस्वेदान्कारयेद्रूक्षनिर्मितान् ।
स्निग्धस्वेदोनिषिद्धोत्रविनाकेवलवातजात् ॥

अर्थ—वातकफके विकारमें रूक्ष औषधोंसें स्वेद विधि करे किन्तु स्निग्ध स्वेद केवलवात रोग विना अन्यत्र निषेध है ॥

## सैंधवादिनस्य

सैंधवंश्वेतमरिचंसर्षपाःकुष्ठमेवच ॥
वस्तमूत्रेणसंपिष्टंनस्यंतंद्रानिवारणं ॥

अर्थ—सेंधानिमक, सपेदमिरच, सरसो, और कूठ इनको वकरेके मूत्रमें पीस नास देवे तो संनिपातकी तन्द्रा जाय ॥

अर्थ—ऊपर कहा अष्टांग अवलेह सहतसैं किंवा अदरखके रससैं चाटे तो खाँसी, तंद्रा, और अत्यंत मोह इनका नाशकरे ॥

## मधुनिषेध

सर्वेषुसंनिपातेषुनक्षौद्रमवचारयेत् ॥ शीतोपचारिक्षौद्रंस्याच्छीतंचात्रविरुध्यते ॥ उष्णैर्विरुध्यतेसर्वंविषान्वयतयामधु ॥ उष्णार्तमुष्णैरुष्णंचतंनिहंतियथाविषं ॥

अर्थ—संपूर्ण संनिपातोंमें सहत न देवे कारण कि सहत भक्षण करनेसैं उसपर शीतल उपचार करने चाहिये और संनिपातोंमे शीतल चिकित्सा विरुद्ध है तथा सर्व उष्णपदार्थोंसैं सहतका विषके सदृश विरोध है अतएव जो मनुष्य असलमें गरमीसैं पीडित होय और फिर उसके ऊपर गरम उपचार होय तो वो विषके समान मारने वाले होते है ॥

## प्रक्रिया

संनिपातज्वरेपूर्वंकुर्यादामकफापहं ।
पश्चाच्छ्लेष्मणिसंक्षीणेशमयेत्पित्तमारुतौ ॥

अर्थ—संनिपातज्वरपर प्रथम आम और कफनाशक औषधी देवे जब कफ क्षीण हो जावे तब पित्तवातको शमन करे ॥

## दुसराप्रकार

लंघनंवालुकास्वेदोनस्यंनिष्ठीवनंतथा ॥
अवलेहांजनंचैवप्राक्प्रयोज्यत्रिदोषजे ॥

अर्थ—संनिपातमें लंघन, वालुकास्वेद, नस्य, थूकना, अवलेह और अंजन ये प्रथम करने चाहिये ॥

## लंघनकाअसहन

दोषाणामेवसाशक्तिर्लंघनेयासहिष्णुता ॥
कश्चिद्दोषविमुक्तोन लंघनंसहतेनरः ॥

अर्थ—लंघनोंका सहन होना यह दोषोंकीहीशक्ती है दोषमुक्त होनेपर रोगीको लंघन सहन नही होते ॥

चास्यजायते ॥ पर्वभेदोज्वरोमूर्छानिद्राश्वासगला-
मयाः ॥ मुखाक्षिगौरवंजाड्यमुत्क्लेशश्चोपशाम्यति ॥
सकृद्द्वित्रिचतुःकुर्याद्दृष्ट्वारोगबलाबलं ॥ एतद्धिपर
मंप्राहुर्भेषजंसन्निपातिनां ॥

अर्थ—अदरखके स्वरसमें सैंधानिमक और त्रिकुटा मिलायके गोलीकरे, इस गोलीको मुखमें रक्खे, वारंवार कफ आवे उसको थूक देवे, इस प्रकार करनेसैं मुख, हृदय, क्लोम, मन्यानाडी, पसवाडेकेभाग और गला इनसैं लिहसा हुआ कफ निकले और शरीरमें हलका पना आवे, और गांठोका दूखना, ज्वर, मूर्च्छा, श्वास, गलेका रोग, मुखनेत्र, इनकी जडता, मुखसैं पानीका गिरना, ये सब रोग दूर हो। यह प्रकार दोषोंको बलाबल देखकर दो चारवार करे यह संनिपात रोगमें उत्तम है ॥

## अष्टांगावलेह

ऊर्ध्वजत्रुगदघ्नीयासासायमवलेहिका।
अधोरोगहरीयासाभोजनात्प्राक्प्रयुज्यते ॥

अर्थ—जत्रुके ऊपरके रोगोंमें सायंकालमे अवलेह लेवे, और अधोभागके रोगोंमें भोजनके पूर्व लेनी चाहिये ॥

## कट्फलादिअवलेह

कट्फलंपुष्करंशृंगीव्योपंयासश्चकारवी ॥ श्लक्ष्णचूर्णकृतंचैतन्मधुनासहलेहयेत् ॥ एषावलेहिकाहंतिसंनिपातंसुदारुणं ॥ हिक्कांश्वासंचकासंचकंठरोगंचनाशयेत् ॥ एतद्योज्यंकफोद्रेकेचूर्णमार्द्रकजैरसैः ॥

अर्थ—कायफर, पुहकरमूल, काकडासिंगी, त्रिकुटा, धमासो, और अजमोद इनका कपडछन चूर्णकर सहतसैं चाटे तो यह दारुण संनिपात, हिचकी, श्वास, खांसी, और कंठरोग-इनको दूरकरे। यदि कफ अधिक होवे तो इसी चूर्णको अदरखके रसके साथचाटना चाहिये ॥

## आर्द्रकादिस्वरस

अष्टांगंमधुनालिह्यादार्द्रकस्यरसेनवा।
संमोहंदारुणंहन्यात्तंद्राकाससमन्वितं ॥

अर्थ—चिरायता, कुटकी, कूठ, अजमायन, इन्द्रजो और कचूर, इनका समभाग चूर्णलेकर देहमें लगावे तथा संधीन्में विशेष मालिसकरे तो कफसें हुआ कंठावरोध और संनिपातज्वर ये शांति हो ॥

## यवानिकाद्युद्धूलन

यवानिकावचाशुंठीपिप्पलीकारवीतथा ।
एतैरुद्धूलनंश्रेष्ठंत्रिदोषोत्थेज्वरेनृणां ॥

अर्थ—अजमायन, वच, सोठ, पीपर, और अजमोद, इनका चूर्ण संनिपातज्वर वालेके पसीने आनेमें लगाना उत्तम कहा है ॥

## विषाद्युद्धूलन

विषभागोभवेदेकोमरीचंत्रिगुणंमतं ॥ आरण्योपलजंभस्मषोडशांशसमन्वितं ॥ एकत्रमीलितंचूर्णंघृतेस्वरसभावितं ॥ आतपेशोषितंतच्चशतिस्वेदहरंपरं ॥

अर्थ—विष १ भाग, कालीमिरच ३ भाग, आरने उपलोंकी भस्म १६ भाग, सबको मिलाय अंगोंमे लगावे तो पसीने बंदहोय ॥

## चणकाद्युद्धूलन

अथवाचणकाभ्रष्टायवानीचूर्णमिश्रिताः ।
वचोषणारजोयुक्ताःस्वेदसंशोषणामताः ॥

अर्थ—भुनेहुए चनाका चून, अजमायन, वच, और काली मिरच इनको मिलाय देहमें मालिसकरे तो पसीने आते हुए बंद हो जावे ॥

## चटनी

सुरसार्जकनिर्यासंसगध्योपसैंधवः ।
महत्श्लेष्मानिलोद्रेकेसंज्ञानाशविनाशनः ॥

अर्थ—तुलसीकारस, राल, त्रिकुटा, सैंधानिमक और सहत इनको मिलायके चाटेतो कफवातादिक ज्वरको और मूर्च्छाको नष्ट करे ॥

## लंघनविधि

त्रिरात्रंपंचरात्रंवादशरात्रमथापिवा ।
लंघनंसन्निपातेप्रकुर्यादारोग्यदर्शनात् ॥

### ( एककालमेंदोप्रकारकीऔषधदेनेकानिषेध )

क्रियायास्तुगुणालाभेक्रियामन्यांप्रयोजयेत् ॥
पूर्वस्यांशांतवेगायांनक्रियासंकरोहितः ॥

अर्थ—एक औषधक्रियाका गुण न होय तो दूसरी औषधक्रिया करनी चाहिये परंतु पूर्वऔषधका वेग नष्ट हो जानेपर करे एककालमे दो औषधक्रिया हितकारी नहीं है ॥

### अन्यप्रतीकार

तप्तायोलांछनंपंचताल्वादिपुत्रिदोषजे ॥ रुद्राभिषे-
कोभूदेवभोजनंग्रहजाप्यतः ॥ मंत्ररक्षादिभिःकार्या-
संनिपातेप्रतिक्रिया ॥

अर्थ—सन्निपातमें तालु आदि पांचस्थानोमें तचे लोहकी सलाई आविसें दा गदेवे, और रुद्राभिषेक, ब्राह्मणभोजन, ग्रहोंकाजप, तथा मंत्ररक्षादिक, रोगनाशार्थ अन्यउपाय कराने चाहिये ॥

### कंटकार्यादिपाचन

कंटकारिद्वयंशुंठीधान्यकंसुरदारुच ॥
एभिःशृतंपाचनंस्यात्सर्वज्वरनिवारणं ॥

अर्थ—कटेरीदोनों, सोंठ, धनिया, और देवदारु इनका काढा सर्वज्वरमें पाचक तथा ज्वरनाशक है ॥

### मनःशिलादिअंजन

तुरंगलालासहितामनःशिलानिहंतितंद्रासकृदंजनेन ।
वब्बूलपत्राणिहरीतकीचसंस्वेदितास्वेदविकारहंत्री ॥

अर्थ—मनसिलको घोडेकी लारमें घिसके अंजन करावेतो तंद्राका आना दूर हो और वबूरके पत्ते और हरड इनकी वाफ स्वेदहरण कर्त्ती जाननी॥

### भूनिंबादिमर्दनवउद्धूलन

भूनिंबकटुकाकुष्ठंकारवीद्वयवाःसठी ॥ एतानिसमभा-
गानिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥ प्रस्वेदेकंठरोधेचसंधौ-
मर्दनमिष्यते ॥ एतदुद्धूलनंश्रेष्ठंसंनिपातहरंपरं ॥

कफ, इनका नाशक और शूल, गुल्म, श्वास, खांसी, और क्षय इनपर उत्तम है

### सप्तमुष्टिकयूष

यवकोलकुलित्थैश्चशुष्कमूलकमुद्गकैः ॥ धान्याकैर्वि-
श्वयुक्तैश्चयूषोवातज्वरापहः॥ सप्तमुष्टिकइत्येषसंनि-
पातज्वरापहः ॥ कफवातामदोषघ्नःकंठहृद्वक्त्रशोधनः॥

अर्थ—जौं, वेरकी गुठली, कुलथी, मूंग, सूखीमूली, और सोंठ, धनिया ये प्रत्येक चार ४ तोले लेकर यूष बनावे. तो सप्तमुष्टिक संज्ञक यूष वातज्वर, संनिपातज्वर. कफ, वायु, और आमदोष, इनको नाशकरे और गला, छाती, तथा मुख, इनको स्वच्छ करे ॥

### कंपादिककीचिकित्सा

सन्निपातज्वरेयस्तुकंपतेप्रलपत्यपि ॥
किंचिदेवनजानातिचिकित्सातस्यकथ्यते ॥

अर्थ—संनिपातज्वरमें कंप होय बकवादकरे, और बेहोस होय तो उसकी चिकित्सा कहते है ॥

### अभ्यंजन

अभ्यंजयेत्पुराणेनसर्पिषापूर्वमेवतं ॥ बला-
रास्नागुडूच्याद्यैस्तैलैश्चपरिषेचयेत् ॥

अर्थ—प्रथम संनिपातवाले रोगीके अंगमें पुराना घीलगावे किंवा बला रास्ना, गिलोय, इनका तेल अंगमें लगावे ॥

### वर्तकादिरस

वर्तकोवर्तकालावोवार्तीकस्तित्तिरिःशशः।
कुलिंगश्चरसैनैपातर्पयेत्तयथानलं॥

अर्थ—बतक, विचित्ररंगकाचिडा, लवा, बटेर, तीतर, शशा और चिडा इनके मांसका रस रोगीका अग्निबल देखके देवे ॥

### सन्निपातीमांसनिषेध

सन्निपातेक्षुधार्तंयोभोजयेत्पिशितौदनैः।
सकथंभिषगाख्यातिंलभतेभिषजाधमः ॥

अर्थ—संनिपातरोगीके अच्छाकरनेको तीन, पांच, किंवा दसदिन लंघन करावे

### लंघन

शस्तंसुलंघितस्यादौविधायकवलग्रहं ॥

अर्थ—रोगीको लंघन करनेपर पूर्वोक्त कवल मुखमें धरना चाहिये ॥

### अतिलंघनकेविचार

कफपित्तद्रवौधातूसहेतेलंघनंमहत् ।
आमक्षयादूर्ध्वमपिवायुर्नसहतेक्षणं ॥

अर्थ—कफ और पित्त ये द्रवधातु है अतएव आमके क्षयपर्यंत बहुत लंघन सहन होते है परंतु वादीवालेको बहुत लंघन क्षणमात्र सहन नही होते ॥

### लंघितकोअन्न

ग्राम्येगुरुत्वंश्रद्धाचविक्तत्तिर्हीनलंघिते ॥ प्रकांक्षाला-
घवंग्लानिःस्वच्छतासुप्रसन्नता ॥ उपद्रवनिवृत्तिश्च
सम्यक्लंघितलक्षणं ॥ संमोहःसंधिशैथिल्यंवातरु-
क्चातिलंघिते ॥

अर्थ—हीनलंघन होनेसें मैथुन करनेमें अश्रद्धा तथा अंगोंमें भारीपना एलक्षण होते है । उत्तम लंघन होनेसे अन्नकी इच्छा अंगोंका हलका होना, ग्लानि, स्वस्थता, सुप्रसन्नता. तथा ज्वरोपद्रवोंका नाश ए लक्षण होते है । और अतिलंघन होनेसें मोह, संधीका शिथिलपना, वायुके विकार ए होते है ॥

### पंचमुष्टिकयूप

पंचमुष्टिकयूपेणत्रिकंटकक्ठतेनच ॥ आदोपशमना-
न्नित्यंभिषक्श्रेष्ठस्तुसाधयेत् ॥ यवकोलकुलित्थानां-
मुद्गमूलकशुंठिनां ॥ एकैकमुष्टिमादायपचेदष्टगुणेज-
ले ॥ पंचमुष्टिकइत्येषवातपित्तकफापहः ॥ शस्यंत-
शूलगुल्मेचश्वासेकासेज्वरेक्षये ॥

अर्थ—गोमरू डालके पंचमुष्टिकयूप दोष शमन पर्यंत देवे, पंचमुष्टिकको कहते है—जौं. बेरकी गुठली. कुल्थी, मूंग. मूली और सौंठ, ये चार २ तोले लेय तथा अठगुने पानीमें काढा करे उसको पंचमुष्टिकयूप कहा है. यह वातपित्त,

## वातोल्बणसन्निपात

संध्यस्थिशिरसःशूलंप्रलापोगौरवंभ्रमः ॥ वा-
तोल्बणेस्याद्द्वचनगेतृष्णाकंठास्यशुष्कता ॥

अर्थ—वाताधिक्य और कफपित्तहीन ऐसे संनिपातमें संधि, हड्डी, और मस्तकमें, शूल, प्रलाप, देहमेंगौरव, भ्रम, प्यास, तथा गला और मुखका सूखना ये लक्षण होवेहै ॥

## वातोल्बणसंनिपातकीचिकित्सा

पंचमूलीकषायंतुदद्याद्वातोत्तरेज्वरे ॥ भृशो-
ष्णंवासुखोष्णंवादद्वादोपबलाबलं ॥

अर्थ—वाताधिक्य संनिपातमें पंचमूलकाकाढा गरम अथवा सुखोष्ण ऐसे दोषोका बलाबल विचारके देवे ॥

## मुस्तादिकाढा

समुस्तंपंचमूलंचदद्याद्वातोतरेज्वरे ॥
भृशोष्णंवासुखोष्णंवादद्वादोपबलाबलं ॥

अर्थ—नागरमोथा और पचमूल इनका काढाकरके इसे दोपबली होयतो गरम और निर्बल होयतो सुखोष्ण देवे ॥

## कट्फलादिकाढा

कट्फलाब्दवचापाठपुष्कराजाजिपर्पटैः ॥ देवदार्वभ-
याशृंगीकणाभूनिंबनागरैः ॥ भांर्गीकलिंगकटुकासठी-
कट्तृणधान्यकैः ॥ समांशैःसाधित क्वाथोहिंग्वार्द्रक-
रसैर्युतः ॥ कर्णमूलोद्भवंशोथंहंतिमन्यागलाश्रयं ॥
कफवातज्वरंश्वासंकासंहिक्कांहनुग्रहं ॥ गलगंडगंडमा-
लांस्वरभेदंकफात्मकं ॥ शिरोगुरुत्वंबाधिर्यंवृद्धिंचक-
फमेदसोः ॥ दशमूलज्वरान्होपःसन्निपातज्वरान्जये-
त् ॥ अभिन्यासमसंज्ञांचकट्फलादिर्निहंतिच ॥

अर्थ—कायफर, नागरमोथा, वच, पाढ, पुहकरमूल, जीरा, पित्तपापडा, देवदार, हरड, काकडासिंगी, पीपर, चिरायता, सोंठ, भारगी, इन्द्रजो, कुटकी,

अर्थ—सन्निपातज्वरमें क्षुधितरोगीको जो वैद्य मांस और भातखानेको देता है, वह अधम वैद्यलोकमें प्रतिष्ठाको कैसें प्राप्त होगा॥

## सुवर्णादिलेप

सुवर्णमुक्तारजतप्रवालंकस्तूरिकाकुंकुमरोचनंच ॥ वराटरुद्राक्षमधूकबिल्वंकुष्ठंचखर्जूरपुनर्नवाच ॥ द्राक्षाकणानागरपुत्रजीवीसारंगशृंगंकतकस्यबीजं ॥ एरंडमूलंशरशीर्षकंचमयूरिकाश्वेतपुनर्नवाच ॥ स्तन्येनपिष्टाकुरुसन्निपातेलेपःसदासर्वगदान्निहंति ॥

अर्थ—सोना, मोती, चांदी मूंगा, कस्तूरी, केशर, गोरोचन, कौडी, रुद्राक्ष मुलहटी, बेलगिरी, कूठ, खजूर, सोंठ, दाख, पीपल, सोंठ, जीयापोता, हरणके सींग, निर्मलीकेबीज, अंडकीजड, सरपतेकी जड, अंवाडा, और विसखपरा, ये सब औषधस्त्रीके दूधसें पीस लेपकरे तो सर्व संनिपातके विकार दूर हो ॥

## चिकित्साप्रक्रिया

श्लेष्मनिग्रहमेवादौकुर्याद्बुद्धयादौत्रिदोषजे ॥ निरस्तेश्लेष्मणिह्यस्यस्रोतःसूद्घाटितेषुच ॥ लाघवंजायतेसद्यस्तृष्णाचैवोपशाम्यति ॥

अर्थ—सन्निपातज्वरमें प्रथम कफको जीते कफके घटनेपर तथा शिराओंके मार्ग खुलनेपर शरीरमें हलकापना आता है और प्यास दूर होय ॥

## अन्यसन्निपातनिदाने

एकोल्वणास्त्रयस्तेस्युर्द्व्युल्वणाश्चतथेतिषट् ॥ उल्वणश्चभवेदेकोविज्ञेयःसतुसप्तमः ॥ प्रवृद्धमध्यहीनाश्चवातपित्तकफैश्चषट् ॥ सन्निपातज्वरस्यैवंस्युर्विशेषास्त्रयोदश ॥

अर्थ—संनिपातमें कफ, वात, और पित्त इन प्रत्येक दोषोंके उल्वण होनेसें तीन, दो दोषोंके उल्वणसें तीन, तथा तीन दोषोंके उल्वणोंके मिलनेसें एक, सब सातहुए । और प्रवृद्ध, मध्य, और हीन जे वातपित्त और कफदोष इनके पर्याय करके छः. ऐसें सन्निपातके तेरह भेद होते है ॥

णउच्यते ॥ अष्टादशांगमुदकंसन्निपातज्वरापहं ॥
पित्तोत्तरेसन्निपातेहितमुक्तंमनीषिभिः ॥ मन्यास्तं-
भेउरोघातेहनुस्तंभेशिरोग्रहे ॥

अर्थ—नागरमोथा, पित्तपापडा, खस, देवदार, त्रिफला, धमासा, नीली, कषीला, निसोथ, चिरायता, पाढ, खरेटी, कुटकी, मूलहटी, पीपरामूल, यह मुस्तादि अष्टादशांग गण इसका शीतल काढा संनिपातज्वरका नाशकरे, और यह ऋषियोंने पित्ताधिक संनिपात, मन्यानाडीके स्तंभ, उरोघात, हनुस्तंभ, इनपर कहा हैं ॥

## किराताादिकाढा

किराततिक्तकंमुस्तंगुडूचीविश्वभेषजं ॥
पाठोदीच्यंमृणालंचशृतंपित्ताधिकेपिवेत् ॥

अर्थ—पित्ताधिक संनिपातमें चिरायता, कुटकी, नागरमोथा, गिलोय, सोंठ, पाढ, नेत्रवाला, और कमलगट्टा, इनका शीत काढादेवे ॥

## शठ्यादिकाढा

शठीपुष्करमूलंचव्याघ्रीशृंगीदुरालभा ॥ वत्सकस्यच-
बीजानिपटोलंकटुरोहिणी॥एषशठ्यादिकोवर्गःसन्नि-
पातज्वरापहः ॥ कासंश्वासंदिवानिद्रांरात्रौजागरणं-
तथा ॥ मुखशोषंतृषांदाहंत्रिदोषंचनियच्छति ॥

अर्थ—कचूर, पुहकरमूल, कटेरी, काकडासिंगी, धमासो, इन्द्रजो, पटोलपत्र और कुटकी, यह शठ्यादिवर्ग संनिपातज्वर, दमा, खाँसी, दिनकीनिद्रा, रात्रिमें जागना, मुखशोष, प्यास, दाह, और त्रिदोष इनका नाशकरे ॥

---

## कफोल्बणसन्निपातनिदान

आलस्यारुचिहल्लासदाहवम्यरतिभ्रमैः ।
कफोल्बणंसन्निपातंतंद्राकासेनचादिशेत् ॥

अर्थ—कफाधिक संनिपातमें आलस्य, अरुचि, हल्लास, दाह, वमन, बेचैनी भ्रम, तन्द्रा, और खाँसी एलक्षण होते हैं ॥

कचूर, रोहिषतृण, और धनिया ये औषध समान भागले काढाकरके, उसमें हींग और अदरखका रस डालके पीवेतो, कर्णमूल, गर्दन और गलाइनकीसूजन, कफवातज्वर, श्वास, खांसी, हिचकी, हनुग्रह, गलगंड, गंडमाला, कफजन्यस्वरभेद, मस्तककीपीडा, वहरापना, कफ और मेदइनकीवृद्धि, दशप्रकारकाज्वर, सन्निपात, अभिन्यास, और संज्ञानाश इनको यह कट्फलादिकाढा नाशकरताहै ॥

## पित्तोल्वणसन्निपातनिदान

रक्तविण्मूत्रतादाहोस्वेदस्तृड्बलसंक्षयं ॥
मूर्छाचेतित्रिदोषेस्याल्लिंगंपित्तेगरीयसि ॥

अर्थ—पित्तोल्वणसन्निपात होनेसें मलमूत्रका लालहोना, दाह, पसीने, प्यास, वल, क्षय और मूर्च्छा ए लक्षण होते है ॥

## पित्तोल्वणसं०चिकि०काढा

परुपकाणित्रिफलादेवदारुसकट्फलं ॥ चंदनंपद्मकंचैवतथाकटुकरोहिणी ॥ पृश्निपर्णीशतंत्वेभिरूषितंशीतलंजलं ॥ पित्तोत्तरेनृणामेतत्सान्निपातेचिकित्सितं॥

अर्थ—फालसे, त्रिफला, देवदारु, कायफर, चंदनलाल, पद्माख, कुटकी और पिठवन ये औषध समान भागले रात्रिको शीतल जलमें भिगोयदेवे, प्रातःकाल काढाकर शीतल होनेपर पीवेतो पित्ताधिक संनिपात दूरहो ॥

## चंदनादिपानी

चंदनंपद्मकंचैवतथाकटुकरोहिणी ॥ पृथक्पर्णीसमंसिद्धमुषितंशीतलंजलं ॥ पित्तोत्तरेनृणामेतत्सान्निपातेचिकित्सिते ॥

अर्थ—लाल चंदन, पद्माख, कुटकी, और पृष्टपर्णी, एकसमानभागले रात्रिमें शीतल जलमें भिगोयदेवे, प्रातःकाल उस जलको छानके पीवेतो पित्ताधिक सन्निपात दूरहो ॥

## मुस्तादयष्टादशांग

मुस्तापर्पटकोशीरदेवदारुमहौषधं ॥ त्रिफलाधन्वयासश्चनीलीकंपिल्लकंत्रिवृत् ॥ किराततिक्तकंपाठावलाकटुकरोहिणी ॥ मधुकंपिप्पलीमूलंमुस्ताद्योग-

सभूनिंबामृतापाठैस्त्रिदोषज्वरजिज्जलं ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, हरड, बहेडा, आवला, नीमकी, छाल, पटोलपत्र, कुटकी, इंद्रजो चिरायता, गिलोय, और पाढ इनका काढा त्रिदोषज्वरका नाशकरे ॥

---

## वातपित्तोल्वणसन्निपात

भ्रमःपिपासादाहश्चगौरवंशिरसोतिरुक् ॥
वातपित्तोल्बणेविंद्याल्लिंगंमंदकफज्वरे ॥

अर्थ—भ्रम, प्यास, दाह, गौरव, मस्तकपीडा, ये वातपित्तोल्वण ओर हीनकफ असे सन्निपातमें लक्षण होते है ॥

## वातपित्तोल्बणचिकित्सा

वातपित्तहरंवृष्यंकनीयःपंचमूलकं ॥
तत्काथोमधुनाहंतिवातपित्तोल्बणंज्वरं ॥

अर्थ—वातपित्तनाशक, और वृष्य असो लघुपंचमूल है, अतएव इसका काढा सहत डालके देय तो वातपित्तोल्वण सन्निपातका नाशहोय ॥

---

## वातश्लेष्मोल्वण

शैत्यंकासोरुचिस्तंद्रापिपासादाहरुक्तथा ॥
वातश्लेष्मोल्वणेव्याधौलिंगंपित्तावरेविदुः ॥

अर्थ—वातकफाधिक और हीनपित्त असा सन्निपात होनेसें सरदी, खासी, अरुचि, तंद्रा, प्यास, दाह और पीडा ए लक्षण होते है ॥

## चिकित्सा

किराततिक्तकंमुस्तंगुडूचीविश्वभेषजं ॥
चातुर्भद्रकमित्याहुर्वातश्लेष्मोल्वणेज्वरे ॥

अर्थ—चिरायताकडुआ, नागरमोथा, गिलोय, और सोंठ, इनका काढा करके वातकफोल्वणज्वर वालेको देय, इसको चातुर्भद्र कहते है ॥

---

## कफोल्बणचिकित्सा

बृहत्यौपुष्करंभार्गीशठीशृंगीदुरालभा ॥ वत्सकस्यंच-
बीजानिपटोलंकटुरोहिणी ॥ बृहत्यादिगणःशस्तःस-
न्निपातेकफोत्तरे ॥ श्वासादिषुचसर्वेषुहितःसोपद्रवेषुच ॥

अर्थ—दोनो कटेरी, पुहकरमूल, भारंगी, कचूर, काकडासिंगी, धमासो, इन्द्रजो, पटोलपत्र, और कुटकी यह बृहत्यादिगण कफादिकसंनिपात, दम और सर्वउपद्रवपर हितकारक है ॥

## कफोल्बणोपरक्काथ

कफोत्तरेबृहत्यादिगणश्चदशमूलजः ।
परूपकाणित्रिफलादेवदारुसकट्फलं ॥

अर्थ—कफाधिक संनिपातपर बृहत्यादिगण, दशमूल, फालसे, त्रिफला, देवदारु, और कायफल इनका काढा देय ॥

## त्र्युल्बणसन्निपात

सर्वलक्षणसंयुक्तस्त्र्युल्बणस्तुमतोबुधैः

अर्थ—सर्वलक्षणोंकरके युक्त होय उसको त्र्युल्बणसंनिपात जानना ॥

## नागरादिकाढा

नागरंधान्यकंभार्गीपद्मकंरक्तचंदनं ॥ पटोलःपिचुमं-
दश्चत्रिफलामधुकंबला ॥ शर्कराकटुकामुस्तागजा-
ह्वान्दाघिघातकः ॥ किराततिक्तममृतादशमूलीनि-
दिग्धिका ॥ योगगजोनिहंत्येपःसन्निपातज्वरापहः ॥
सन्निपातसमुत्थानंमृत्युमप्यागतंजयेत् ॥

अर्थ—सोंठ, धनिया, भारंगी, पद्माख, लालचंदन, पटोलपत्र, नीमकीछाल, त्रिफला, मुलहटी, खरेटी, मिश्री, कुटकी, नागरमोथा, गजपीपल, अमलतास, चिरायता, गिलोय, दशमूल, और कटेरी इनका काढा मृत्युसमानभी संनिपातका नाशकरे ॥

## व्योपादिकाढा

व्योषाब्दत्रिफलारिष्टपटोलीतिक्तवत्सकैः ।

( हीनपित्तमध्यकफश्लेष्माधिकसं )

शीतगौरवतंद्राश्वप्रलापोस्थिशिरोतिरुक् ॥
हीनपित्तेमध्यवातेलिंगंश्लेष्माधिकेमतं ॥

अर्थ—हीनपित्त मध्यवात, और कफाधिक संनिपात होनेसे शीतलगे, अंगोंमेंगौरवता, तन्द्रा, प्रलाप, हड्डी और मस्तकमें पीडा ए लक्षण होते है ॥

( कफहीनमध्यवातवपित्ताधिकसं० )

पर्वभेदोग्निदौर्बल्यंतृष्णादाहोरुचिभ्रमः ॥
कफेहीनेमध्यवातेलिंगंपित्ताधिकेविदुः ॥

अर्थ—कफहीन, मध्यवात और पित्ताधिक सनिपातमें संधियोंमें पीडा, मंदाग्नि, प्यास, दाह, अरुचि, और भ्रम ए लक्षण होते है ॥

( हीनकफमध्यपित्तववाताधिकसं० )

कासश्वासप्रतिश्यायमुखशोषोतिपार्श्वरुक् ॥
कफेहीनेमध्यपित्तेलिंगंवाताधिकेस्मृतम् ॥

अर्थ—हीनकफ. मध्यपित्त और वाताधिक सन्निपातमें खांसी, श्वास, सरेकमा, मुखशोप, और पसवाडोमें अत्यत पीडा, ये लक्षण होते है ॥

( छहोंकिएकश्लोकसेंचिकित्सा )

प्रवृद्धंकर्षयेद्दोषंक्षीणंसंवर्द्धयेद्भिषक् ॥
चिकित्सेयंविधातव्यादोषयोर्हीनवृद्धयो· ॥

अर्थ—जो दोष बढाहो उसको क्षीण करे, और क्षीणदोषको वढावे. इसप्रकार वैद्य क्षीण वृद्धदोषोंकी चिकित्साकरे ॥

प्रवृद्धेशमितेदोषेमध्यमःस्वयमेवहि ॥
शांतियातिशमंनीतेत्वनुबंध्यनुबंधवत् ॥

अर्थ—वढे दोषके शांतिहोनेसें मध्यमजो दोष है सो स्वयं शांति होजाते है जैसें साथीका शांतहोनेसें अर्थात् दूसरा दुर्वलहोनेसें आपभी शांति होजाता है॥

द्वात्रिंशांगक्काथ

भार्गीभूनिंवनिंवाघनकटुकवचाव्योपवासाविशालारा-

### पित्तकफोल्बण

छर्दिःशैत्यंमुहुर्दाहस्तृष्णामोहोस्थिवेदना ॥
मंदेवातेऽव्यवस्यंतिलिंगंपित्तकफोल्बणे ॥

अर्थ—पित्तकफाधिक और हीनवात एसेसंनिपातके होने सें वांती, शीत वा रंवार दाह, प्यास, मोह और हड्डियोंमें पीडा, ए लक्षण होते है ॥

### चिकित्सा

पर्पटःकट्फलंकुष्ठमुशीरंचंदनंजलं॥नागरंमुस्तकंशृंगी-
पिप्पल्येषांशृतंहितं ॥ तृष्णादाहाग्निमांद्येषुपित्तश्ले-
ष्मोल्वणेज्वरे ॥

अर्थ—पित्तपापडा, कायफर, कूठ, खस, लालचंदन, नेत्रवाला, नागरमोथा सोठ, काकडा सिंगी, और पीपल, इनका कादा प्यास, दाह, मंदाग्नि और पित्तकफात्मकज्वर इनका नाश करे ॥

### ( हीनवातमध्यपित्तवश्लेष्माधिकसं० )

प्रतिश्याछर्दिरालस्यंतंद्रारुच्यग्निमार्दवं ॥
हीनवातेमध्यपित्तेचिन्हंश्लेष्माधिकेमतं ॥

अर्थ—कफाधिक हीनवायु और मध्यपित्त ऐसे सन्निपातहोनेसें, सरेकमां, वमन, आलस्य, तंद्रा, अरुचि, और मंदाग्नि ये लक्षण होतेहै ॥

### ( हीनवातमध्यकफवपित्ताधिकसं० )

हारिद्रनेत्रमूत्रत्वक्दाहस्तृष्णाभ्रमोरुचिः ॥
हीनवातेमध्यकफेलिंगंपित्ताधिकेमतं ॥

अर्थ—पित्ताधिक, हीनवायु, और मध्यकफ, ऐसे सनिपातके होनेसे नेत्र मूत्र और त्वचा ये पीलेहो, तथा दाह, प्यास, भ्रम और अरुचि ये लक्षण होते है ॥

### ( हीनपित्तमध्यकफववाताधिकसं० )

शिरोरुग्वेपथुश्वासप्रलापच्छर्द्यरोचकाः ॥
हीनपित्तेमध्यकफेलिंगंवाताधिकेमतं ॥

अर्थ—हीनपित्त, मध्यकफ और वाताधिक ऐसे सन्निपातमें मस्तकशूल, कंप, श्वास, प्रलाप, वमन और अरुचि ए लक्षण होते है ॥

अर्थ—दशमूल, पुहकरमूल, और पीपल इनका काढा संनिपातज्वरपर देवे तो श्वास, खांसी, और सन्निपात इनका नाशकरे ॥

## सन्निपातपररेचन

बिल्वकंत्रिवृतादंतीसमूलंचतुरंगुलं ॥ पक्वंकषायंविस्राव्यनीलीचूर्णविमिश्रितं ॥ ससर्पिष्कंपिबेत्तूर्णंसंनिपातेविरेचनं ॥

अर्थ—बेलगिरी, निसोथ, दंती, और अमलतासकागूदा, इनकाकाढा करके इसमें नीलकाचूरा और घीमिलाय देवेतो यह संनिपातका नाशकरे ॥

## संज्ञानाशचिकित्सा

कंपःप्रलपनंयस्यसंज्ञानाशश्चदारुणः॥रसैश्चलाववर्तैश्चकुलिंगैःशशतित्तिरैः ॥ तर्पयेत्प्राक्पुराणेनसर्पिषाभ्यंजयेन्नरं ॥ बलारास्नागुडूच्याद्यैस्तैलैश्चपरिषचयेत ॥

अर्थ—जो रोगी कंप, प्रलाप, और संज्ञानाश इनके युक्तहो इसको लवा, बटेर, चिड़ा, कबूतर, और तीतर, इनके मांसरस प्रथम पिलायके फिर अंगोंमें पुरानेघीकी मालिस करावे । तथा खरेटी, रासना, और गिलोय इनका तेल देहमें लगावे ॥

## बिल्वादिकाढा

बिल्वाग्निमंथःस्योनाकःकाश्मरीपाटलातथा ॥ शालिपर्णीपृश्निपर्णीबृहतीद्वयगोक्षुरैः । उभयंदशमूलंस्यात्सान्निपातहरोगणः ॥

बेलगिरी, अरनी, टेंटू, कंभारी, पाढ, सालपर्णी, पृष्ठपर्णि, दोनोकटेरी, और गोखरू, ये दशमूल हैं इनका काढा सन्निपात नाशक है ॥

## शुंठ्यादिकाढा

शुंठीदारुशठीरजोबृहतिकातिक्ताकिरातांबुदानंताभिर्जनितःकषायकवरःकृष्णामधुभ्यांयुतः ॥ निःशेषंत्रितयोद्भवज्वरहरोजीर्णज्वरस्यांतकृत्कासारिर्विषमापहोनिगदितःशुंठ्यादिकःसूरिभिः ॥

स्नानंतापटोलीसुरतरुरजनीपाटलातिंदुकैश्च॥ब्राह्मी-
दार्वीगुडूचीत्रिवृतमतिविषापुष्करत्रायमाणै र्व्याघ्री-
सिंहीकलिंगैस्त्रिफलशठियुतैःकल्पितस्तुल्यभागैः ॥
क्वाथोद्वात्रिंशनामात्रिभिरधिकदशान्सन्निपातान्निहं-
ति शूलंकासादिहिक्काश्वसनगदरुजाध्मानविध्वंसकका-
री ॥ ऊरुस्तंभांत्रवृद्धीगलगदमरुचिंसर्वसंधिग्रहार्ति-
मातंगौघान्निहन्यान्मृगरिपुरिहचेद्रोगजालंतथैव ॥

अर्थ—भारंगी, चिरायता, नीमकीछाल, नागरमोथा, कुटकी, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, अडुसा, इंद्रायणकागूदा, रासना, घमासा, पटोलपत्र, देवदारु, हलदी, पाढल, कुचला, ब्राह्मी, दारुहलदी, गिलोय, निसोथ, अतीस, पुहकरमूल, त्रायमाण, दोनोंकटेरी, इन्द्रजो, हरड, वहेडा, आमला, और कचूर, ये सब औषध समानभागले काढाकरे, इसको द्वात्रिंशनामकाथ कहते है यह तेरहप्रकारके संनिपात, शूल, खाँसी, हिचकी, श्वास, अफरा, उरुस्तंभ, अंत्रवृद्धि, गलेकारोग, अरुचि, और संधिग्रह, इनको जैसे, हाथियोंकी पंक्तिको सिंह नाश करताहै इसप्रकार यह काथ नाशकरे ॥

## अष्टादशांगकाढा

भूनिंबदारुदशमूलमहौषधाब्दतिक्तेंद्रबीजधनिकेभक-
णाकषायः ॥ तंद्राप्रलापकसनारुचिदाहमोहश्वासा-
दियुक्तमखिलज्वरमाशुहंति ॥ अष्टादशांगइत्येषमृ-
त्युकल्पंज्वरंजयेत् ॥

अर्थ—चिरायता, देवदारु, दशमूल, सोंठ, नागरमोथा, कुटकी, इन्द्रजो, धनियां, और गजपीपल. इनका काढा करके पीवेतो तंद्रा, प्रलाप, खांसी, अरुचि, दाह, मोह, श्वास, इनकरके युक्त सर्वज्वरोंका नाशकरे यह अष्टादशाग काढा मृत्युतुल्य ज्वरका नाशकरे ॥

## द्वादशांग

दशमूलीकषायस्तुसपौष्करकणान्वितः ॥
सन्निपातज्वरेदेयःश्वासकाससमन्विते ॥

## दार्व्याद्यष्टादशांग

दारुनागरभूनिंबधान्यतिक्ताकलिंगजैः ॥ गजाह्वाद-
शमूलाब्दैर्मृत्युकल्पंज्वरंजयेत् ॥ अष्टादशांगइत्येषः
सन्निपातज्वरापहः ॥ कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिश्वास-
हिक्कावमीहरः ॥

अर्थ—देवदारु, सोंठ, चिरायता, धनिया, कुटकी, इन्द्रजों, गजपीपल, दशमूल, और नागरमोथा, इन अठारह औषधोंका काढा देयतो अत्यंत कठिन मृत्युके समान ज्वर, सन्निपातज्वर, खांसी, हृदयशूल, पसवाडेकीपीडा, श्वास, हिचकी, और वमन इनका नाशकरे ॥

## गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीचंदनंपद्मंनागरेंद्रयवासकं॥ अभयारग्वधोशी-
रपाठाधान्याब्दरोहिणी॥कषायंपाययेदेतंपिप्पली-
चूर्णसंयुतं ॥ तंद्राकासज्वरश्वासापिपासादाहनाशनः॥
विण्मूत्रानिलविष्टंभत्रिदोषप्रभवस्यच ॥ गुडूच्यादि-
गणोह्येषःपाचनोदीपनःपरः ॥

अर्थ—गिलोय, चंदन, पुहकरमूल, सोंठ, इन्द्रजो, धमासा, हरड, अमलतासका गूदा, नेत्रवाला, पाढ, धनिया, नागरमोथा, कुटकी, इनका काढा कर उसमें पीपलका चूर्ण मिलायके देवेतो तन्द्रा, खांसी, ज्वर, श्वास, प्यास, दाह, मलमूत्र, वायुकारुकना, त्रिदोषजन्यज्वर, इनको यह गुडूच्यादिगणकाढा दूरकरे और दीपन पाचनहै ॥

## अमृतादिकाढा

अमृतादशमूलीभ्यांसाधितंविधिवज्जलं ॥
संनिपातज्वरंहन्यात्त्रयोदशविधंनृणां ॥

अर्थ—गिलोय और दशमूल इनका काढा तेरहप्रकारके सनिपातज्वरोंको दूरकरे

## विश्वादिकाढा

विश्वशुंठीदशमूलीछिन्नापाठाचपिप्पलींद्रयवैः ॥
सकिराततिक्तवासाशमयतिहतौजसंसद्यः ॥

अर्थ—सोंठ, देवदारु, कचूर, पित्तपापडा, कटेरी, कुटकी, चिरायता, नागरमोथा, और धमासा इनका काढा पीपलका चूर्ण और सहतडालके देवे तो निःशेष संनिपात, जीर्णज्वर, और खाँसी इनको यह शुंठ्यादि काढा नाशकरे॥

## अर्कादिकाढा

अर्कानंताकिराताभरतरुरसनासिंधुवारोग्रगंधातर्कारीशिग्रुपंचोषणघुणदयिताभार्कवाणांकषायः॥ सद्यस्तीव्रान्त्रिदोषानपहरतितथामारुतंदंतबधंशैत्यंगात्रेपुगाढंश्वसनकसनकंसूतिकावातरोगान् ॥

अर्थ—आककीजड, धमासो, चिरायता, देवदारु, रासना, निर्गुंडी, वच, अरनी, सहजना, पीपर, पीपरामूल, चव्य. चित्रक, सोंठ, अतीस, और भाँगरा, इनका काढा देयतो घोर त्रिदोप, धनुर्वात, वत्तीसीकाभिचना, देहकी अत्यंत सरदी, श्वास, खाँसी, प्रसूतके और वादीके सर्वरोगोंको नाशकरे ॥

## तिक्तादिकाढा

तिक्तातिक्तकपर्पटामृतसठीरास्नाकणापौष्करं त्रायंतीवृहत्तीसुरौपधशिवादुःस्पर्शभार्गीकृतः ॥ क्वाथोनाशयतित्रिदोषनिकरंस्वापंदिवाजागरंनक्तंतृणमुखशोपदाहकसनश्वासानशेपानपि ॥

अर्थ—कुटकी, चिरायता, पित्तपापडा, गिलोय, कचूर, रास्ना, पीपल, पुहकर मूल, त्रायमाण, कटेरी. देवदारु, सोंठ, हरड, धमासो, और भारंगी इनका काढा करके देवेतो त्रिदोप, दिनकीनिद्रा, रात्रिकाजागना, प्यास, मुखशोप, दाह, खांसी, और संपूर्णश्वास, इनका नाशकरे ॥

## त्रिदोपपर

पित्तप्रायेचशव्यादिर्वृहत्यादिःकफादिके ॥
वातोत्तरेसन्निपातेकट्फलादिःप्रयोजयेत् ॥

अर्थ—पित्ताधिक संनिपातवालेको शट्यादिकाढा और कफाधिकवारेको वृहत्यादिकाढा एवं वाताधिक्य संनिपातवालेको कट्फलादिकाढेकी योजना करे ॥

## किरातादिकाढा

चिरज्वरेवातकफोल्बणेवात्रिदोषजेवादशमूलमिश्रः। किराततिक्तादिगणःप्रयोज्यःशुद्ध्यर्थिनेवात्रिवृताविमिश्रः ॥ किराततिक्तकोमुस्तंगुडूचीविश्वभेषजं ॥ किरातादिगणोह्येषश्चातुर्भद्रकमित्यपि ॥

अर्थ—बहुतदिनका वात कफोल्बण ज्वर और त्रिदोष ज्वर इनपर चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ यह किरातादिगण और दशमूलकीऔषध इनका काढा करके देवे यदि इसको दस्तलानेके अर्थ देवेतो इसमें निसोथ और मिलायलेवे ॥

## अष्टादशांगकाढा

दशमूलीशठीशृंगीपौष्करंसदुरालभं॥ भार्गीकुटजबीजंचपटोलंकटुरोहिणी ॥ अष्टादशांगइत्येषःसंनिपातज्वरापहः ॥ कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिश्वासहिक्कावमीहरः॥

अर्थ—दशमूल, कचूर, काकडासिंगी, पुहकरमूल, धमासो, भारंगी, इन्द्रजो, पटोलपत्र, और कुटकी इसको अष्टादशांग कहते है यह काढा सन्निपात ज्वर, खाँसी, हृद्रोग, पार्श्वशूल, श्वास, हिचकी, और वमन इनको नाशकरे ॥

## पंचतिक्तककाढा

क्षुद्रापुष्करभूनिंबगुडूचीविश्वभेषजैः॥
पंचतिक्तकनामायंक्काथोहंत्यष्टधाज्वरं ॥

अर्थ—कटेरी, पुहकरमूल, चिरायता, गिलोय, और सोंठ, यह पंचतिक्तनामक गणहै, इसका काढा आठप्रकारके ज्वरोंको नाशकरे ॥

## दार्व्यब्दादिकाढा

दार्व्यब्दातिक्तफलत्रिकंचक्षुद्रापटोलीरजनीसनिंबा।
क्काथंविदध्याज्ज्वरसन्निपातेनिश्चेतनेपुंसिविबोधनार्थं ॥

अर्थ—दारहलदी, नागरमोथा, चिरायता, त्रिफला, कटेरी, पटोलपत्र, हलदी और नीमकीछाल, इनका काढा सन्निपातज्वरोंमें जो मूर्च्छा आतीहै उसे दूरकरे।

अर्थ—अतीस, सोंठ, दशमूल, गिलोय, पाठ, पीपर, इन्द्रजो, कडुआचिरायता, और अडूसा इनका काढा देयतो ज्वरकर्के क्षीणहुआ रोगी शीघ्र अच्छाहोय॥

## त्र्यूषणादिकाढा

त्र्यूषणदशमूलशुंठीभार्गीछिन्नोद्भवःक्राथः।
पीतःशमयतिसहसाज्वरमुग्रंसंनिपाताख्यं ॥

अर्थ—त्रिकुटा, दशमूल, सोंठ, भारंगी, और गिलोय इनका काढा उग्र-संनिपातको शमन करे ॥

## दशमूलादिकाढा

द्विपंचमूलीषड्ग्रंथाविश्वगृध्रनखीद्वयं।
कफवातहरःक्राथोसंनिपातहरःपरः ॥

अर्थ—दशमूल, पीपरामूल, सोंठ, वेर, और, झरियावेर इनका काढा कफवात हारक और संनिपातको दूरकरे ॥

## आढरूपादिकाढा

सिंहास्यपर्प्पटारिष्टयष्टीधान्याब्दनागरं॥ दारूग्रगंधेंद्रयवाश्वदंष्ट्राग्रंथिकंतथा ॥ एषांकषायमाहृत्यसंनिपातज्वरीपिबेत् ॥ श्वासातिसारकासघ्नशूलारुचिहरंपरं॥

अर्थ—अडूसा, पित्तपापडा, नीमकीछाल, मुलहटी, धनिया, नागरमोथा, सोंठ, देवदारु, वच, इन्द्रजो, गोखरू, और पीपलामूल, इनका काढा सन्निपातज्वर, श्वास, अतिसार, खाँसी, शूल और अरुचिको दूरकरे ॥

## कट्फलादिकाढा

कट्फलंत्रिफलादारुचंदनंसपरूपकं॥ कटुकंपद्मकोशीरंविपचेत्कार्षिकंजले ॥ तत्संनिपातदाहघ्नंपानमात्रेणपूजितं॥ दीर्घकालप्रयुक्तानांज्वराणाममृतोपमं॥

अर्थ-कायफर, त्रिफला, देवदारु, लालचंदन, फालसे, पटोलपत्र, पद्माख, और नेत्रवाला, इनका काढा संनिपात, दाह. जीर्णज्वर, इनपर साक्षात् अमृतके तुल्यहै

## अर्कादिकाढा

अर्कग्रंथिकशिग्रुदारुचविकानिर्गुंडिकापिप्पलीरा-
स्नाभृंगपुनर्नवानलवचाभूनिंबशुंठीकृतः ॥ क्वाथःसं-
हरतित्रिदोषमखिलंस्वापानिलंसूतिकानानामारु-
तशैत्यशांतिकृदपस्मारस्मरत्र्यंबकः ॥

अर्थ—आककीजड, पीपरामूल, आमलतासकोगुदो, देवदार, चव्य, निर्गु-
डी, पीपल, रास्ना, भाँगरो, साँठ, चित्रक, वच, चिरायता, और सोंठ, इनका
काढा सर्व त्रिदोष ज्वर, निद्रा, प्रसूतकेरोग, अनेक प्रकारकीवायु, शीत, अप-
स्मार, इनका नाशकहै ॥

## मृतसंजीवनवटिका

विषंत्रिकटुकंगंधंटंकणंमृतशुल्वकं॥ धतूरस्यचबीजा
निहिंगुलंनवमंमतं॥ एतानिसमभागानिदिनैकंविज-
याद्रवैः ॥ मर्दयेच्चणकाकाराकर्तव्यावटिकाथसा॥
भक्षणीयानुपातव्योरविमूलकषायकः॥ मृतसंजीव-
नीनाम्नासंनिपातज्वरांतकृत् ॥

अर्थ—सिंगियाविष, त्रिकुटा, गंधक, सुहागा, ताम्रकीभस्म, धतुरेकेबीज,
और हिंगुल, ए नौऔषध समान लेकर चूर्णकर भाँगरेकेरसमें एकदिन खरलकरे
फिर चनेके प्रमाण गोली बनावे एकगोली खायके ऊपरसे आककीजडका का-
ढा पीवे तो संनिपातज्वरका नाशहो ॥

## त्रिनेत्ररस

शुद्धसूतंसमंगंधंसूतांशंमृतताम्रकं ॥ त्रिभिस्तुल्यैर्ग-
वांक्षीरैर्मर्दयेदातपेखरे ॥ मर्दयेद्दिनमेकंतुनिर्गुंडीशि-
ग्रुजद्रवैः ॥ विधायगोलंतंगोलमंधमूषागतंपचेत् ॥
त्रियामान्वालुकायंत्रेततःखल्वेविचूर्णयेत्॥ अष्टमां-
शंविषंतत्रक्षिपेत्तेनापिमर्दयेत्॥ त्रिनेत्राख्योरसोह्ये-
षदेयोगुंजाद्वयोन्मितः॥ पंचकोलकषायेणछागीदु-

## ग्रंथ्यादिकाढा

ग्रंथींद्रजामरपुरक्रमिशत्रुभार्गीभृंगत्रिकटुवनलकट्फ-
लपौष्कराणां ॥ रास्नाभयाबृहतिकाद्वयदीप्यभूतके-
शीकिरातकवचाचविकावृकीणां ॥ क्काथोहन्यात्सं-
निपातान्समग्रान्बुद्धिभ्रंशस्वेदशैत्यप्रलापान् ॥ शू-
लाध्मानंविद्रधिंश्लेष्मवातान्वातव्याधीन्सूतिका-
नांचतद्वत् ॥

अर्थ—पीपरामूल, इन्द्रजो, देवदारु, गूगल, वायविडंग. भारंगी, भागरो, त्रिकुटा, चित्रक, कायफर, पुहकरमूल, रास्ना, हरड, दोनोकटेरी, अजमायन, निर्गुंडी, चिरायता, घच, चव्य, और पाठ, इनका काढा सर्वसंनिपात, बुद्धिभ्रंश, पसीने, शीत, प्रलाप, शूल, अफरा, विद्रधि, कफवात, वादीकेरोग, और प्रसूतकेरोग, इनका नाशकरे ॥

## लशुनादिकाढा

लशुनंतिक्तकंकांडभार्गीचातिविषातथा ।
नरमूत्रेणचक्काथःसन्निपातेसुदारुणे ॥

अर्थ—लहसन, चिरायता, तिरकाड, भारंगी, और अतीस इनको घोडेके मूत्रमें काढाकरके देयतो दारुणसनिपातज्वर नाशहोय ॥

## दशमूलादिकाढा

दशमूलस्यनिर्यूहःकट्फलादिरजोयुतः ।
तुल्यार्द्रकरसोपेतोमृत्युकल्पंज्वरंजयेत् ॥

अर्थ—दशमूलका निर्यूहकरके उसमें कायफलका चूर्ण और काढेके समान अदरसका रस डालके देयतो मृत्युके समान कठिन ज्वरका नाशकरे ॥

## पंचमूलादिकाढा

पंचमूलीकिरातादिर्गणोयोज्यस्त्रिदोपजे ।
पित्तोत्कटेतुमधुनाकणयाचकफोत्कटे ॥

अर्थ—पंचमूल, और किरातादिगण इनका काढा त्रिदोपजनित ज्वरपर तथा पित्तोत्कटपर महतके और पीपलका चूर्ण मिलाय के देवे ॥

अर्थ—पारा, गंधक, दोदो कर्पलेकर, कजलीकरे फिर उसको हंसपदीके
रससे १ दीन खरलकरे, फिर इस कल्ककी गोली वनाय कांचकी शीशीमें भरे,
उसके ऊपर १ कर्प विपका चूर्ण डालके शीशीका मुखबंद करे, फिर इस शी-
शीको वडे वरतनमें रखके गलेपर्यंत वालूभरदेवे और १२ प्रहर दीपकाग्निसै प-
चन करावे, स्वांगसीतल होनेपर उसको चूल्हेपरसैं उतार. औपधको खरलमें डा-
ले आधातोला विप और आधा तोला कालीमिरच डालके खरलकरे, यह अ-
ग्निकुमाररस एकरची रोगीके देयतो संनिपातज्वर, वायु, मंदाग्नि, शूल, संग्रहणी,
गोला, पांडु, श्वास, और खांसी, इत्यादि रोगोंका नाशकरे ॥

## पंचवक्ररस

गंधेशटंकंमरिचंविषंधत्तूरजैरसैः ॥ दिनंसंमर्दितंशुष्कं-
पंचवक्रोरसोभवेत् ॥ आर्द्रकस्यद्रवेणैपदातव्योरक्ति-
कामितः ॥ संनिपातज्वरंघोरंनाशयेन्नात्रसंशयः ॥

अर्थ—गंधक, पारा, सुहागा, कालीमिरच, और सिंगियाविप, ये औपध
धतूरेके रसमें १ दिन खरल कर सुखायले तो यह पंचवक्ररस तयारहो इसको
अदरखके रससैं एकरत्ती देवे तो घोरसंनिपातका नाशकरे ॥

## दुसराप्रकार

शुद्धंसूतं विपं गंधं मरिचं टंकणं कणां ॥ मर्दयेद्धूर्तज-
द्रावैर्दिनमेकं तु शोपयेत् ॥ पंचवक्रो रसोनाम द्विगुं-
जः सन्निपातहा ॥ अर्कमूलकपायं तु सत्र्यूपमनुपा-
ययेत् ॥ युक्तं दध्योदनं पथ्यं जलयोगं च कारयेत् ॥
रसेनानेन शाम्यंति सक्षौद्रेण कफादयः ॥ मध्वार्द्र-
करसेनैनं पिवेदग्निविवृद्धये ॥ यथेष्टं घृतमांसाशी श-
क्तोभवतिपावकः ॥

अर्थ—शुद्धपारा, विप, गंधक, कालीमिरच, सुहागा और पीपल, इन छः
औपधोंको धतूरेके रससें १ दिन खरलकर २ रत्तीकी गोली वनावे, इसे पंचवक्र-
रस कहतेहै, यह आककीजडके काढेमें त्रिकुटाका चूर्णमिलायके १ गोलीदेय-
और दहीभात इसके ऊपर पथ्यदेवे पीनेके वास्ते शीतल जल देय. तो यह स-
न्निपातज्वरको दूरकरे, सहतके साथ लेनेसैं कफादिरोग दूरहो, तथा अदरसके

ग्धेनवासह ॥ रसेनानेनभुक्तेनसंनिपातज्वरोमहान् ॥
संक्षयंव्रजतिक्षिप्रंकर्तव्योनात्रसंशयः ॥

अर्थ—पारा गंधक दोनो शुद्ध और तामेकी भस्म ये समभागले, और इन औषधोके बराबर गौका दूध डालके तीव्र धूपमें खलकरे, और एकादिन निर्गुंडीके रसमें, एकदिन सहजनेके रसमें खलकर, गोलाबनाय अंधमुषामें रखके तीन प्रहर वालुकायंत्रमें पचनकरावे, फिर सिद्धहोनेके पश्चात् अष्टमांस शुद्धविष डालके फिर खरलकरे, वह त्रिनेत्राख्यरस दोरत्ती पंचकोलके काढेसें अथवा बकरीके दूधसें देयतो निःसशय महासंनिपातका नाशहोय ॥

## भस्मेश्वररस

भस्मषोडशनिष्कंस्यादारण्योपलसंभवं ॥ मरिचंनिष्कमात्रंचविषंनिष्कंविचूर्णयेत् ॥ रसोभस्मेश्वरोनाम्नासंनिपातज्वरांतकृत् ॥ एकगुंजामितोभक्ष्यआर्द्रकस्यद्रवेणहि ॥

अर्थ—आरने उपलोंकी राख १६ तोले, कालीमिरच, और सिंगियाविष, ये प्रत्येक एक एक तोलेले, बारीक चूर्णकरे यह भस्मेश्वर रस एकरत्ती अदरखके रससें देयतो संनिपातज्वरका नाशकरे ॥

## अग्निकुमाररस

द्वौकर्षौसूतकाद्ग्राह्यौगंधकाद्द्वौतथैवच ॥ यत्नतस्तूभयंमर्द्यंदिनंहंसपदीरसैः ॥ कल्कस्यवटिकांकृत्वानिक्षिपेत्काचभाजने ॥ कर्षैकममृतंतत्रक्षिप्त्वावक्त्रंनिरोधयेत् ॥ कुपिकायाः परीभागौवालुकाभिश्चपूरयेत् ॥ सार्द्धयावदहोरात्रंतावत्तत्रपचेद्रसं ॥ दीपमात्रोनलोदेयः स्वांगशीतंसमुद्धरेत् ॥ तोलार्धममृतंतत्रक्षिपेत्तावत्तथोषणं ॥ भक्षितोरक्तिकामात्रोरसस्त्वग्निकुमारकः ॥ सन्निपातज्वरंहन्याद्वातंमंदाग्नितामपि ॥ शूलंसंग्रहणींगुल्मंक्षयंपांडुगदंतथा ॥ श्वासकासादिकान्सर्वान्गदानेवविनाशयेत् ॥

## तंद्रासां०

सन्निपातज्वरोत्पन्नांयुत्तयातंद्रांजयेद्भिषक् ॥
उपद्रवःकष्टतमोज्वराणांसविशेषतः ॥

अर्थ—सन्निपातज्वरमें तन्द्राउत्पन्नहोतीहै उसको वैद्य युक्तिसें जीते, यह ज्वरमें कष्टसाध्य उपद्रवहै ॥

## तंद्रालक्षण

आचितामाशयकफेसंनिपातज्वरेदृढे॥ शांतेत्ववश्यं-
तस्याशुतंद्रासमुपजायते ॥ अभिद्रवरसक्षीरदिवा-
स्वापनिषेवणात् ॥ दुर्बलस्याल्पवातस्यजंतोःश्ले-
ष्माप्रकुप्यति ॥ वायुर्मार्गेसमावृत्यधमनरिनुसृत्यसः॥
तंद्रासुघोरांजनयेत्तस्यावक्ष्यामिलक्षणं॥ उन्मीलित-
विनिर्भुग्नेपरिवर्तिततारके ॥ भवतस्तस्यनयनेछुलिते
चलपक्ष्मणी ॥ विवृताननदंतोष्ठंमुहुरुत्तानशायिनं ॥
पिच्छिलेच्छिन्नतंतुश्चकंठेश्लेष्मास्यगच्छति ॥ कं-
ठमार्गविरोधश्चवैकृतंचोपजायते ॥ सोर्वाक्त्रिरात्रं-
साध्यः स्यादसाध्यस्तुततः परं ॥

अर्थ—जिसज्वरमें आमाशयमें आम और कफ इनके संचय करके दृढसंनिपात होकर शांतिहोनेपर उस रोगीके निश्चय तन्द्रा उत्पन्नहोती है। और पतलेरस, दूध, और दिनकीनिद्रा इनके सेवन करनेसें दुर्बल तथा अल्पवायूवालेरोगीके कफ कुपितहोता है और वो कफवायूके मार्गको रोककर धमनियोंमें प्रवेशकरते हैं और घोर तन्द्रा उत्पन्नकरे उसके लक्षण कहताहूं। उसरोगीके नेत्र आध मिचेहुए किंवा टेडेसे हो, तारे फिरे तथा नेत्रोंकी पलों चंचलहो. नेत्रगिरेसें प्रतीतहो, होट अचंचलहोकर मुख खुला तथा दांत बाहरसें दीखे, वारंवार चित्त लेटे, चिकना तंतुयुक्त कफको गलेमें लावे तथा कंठमार्ग रुकजावे इसप्रकार विकृतिहोतीहै यह तीनरात्रिके पूर्व साध्यहै और त्रिरात्रानंतर असाध्य जानना ॥

## असुरादिअंजन

असुराव्हस्य विट्चूर्णं कस्तूरी मधुसंयुतं ।

रसमें सहत मिलायके पीवैतो जठराग्निकी वृद्धि होय, और घृत मांसादिक भारी अन्न यथेष्ट भक्षणकरे तोभी पचजावे तथा मस्तकपर जलकीधार देनी चाहिये ॥

## उन्मत्तरस

रसगंधकतुल्यांशंधतूरफलजैरसैः ॥ मर्द्दयेद्दिनमेकं-
चतत्तुल्यंत्रिकटुक्षिपेत् ॥ उन्मताख्योरसोनामनस्ये-
स्यात्संनिपातजित् ॥

अर्थ—शुद्धपारा १ भाग, गंधक १ भाग, इनको धतूरेके फलके रसमें एकदिन खरलकर फिर इसमें वरावरका त्रिकुटाका चूर्ण मिलावे, इस रसकी नस्यलेनेसैं संनिपात दूरहोवे ॥

## कनकसुंदररस

कनकस्याष्टशाणाःस्युःसूतोद्वादशभिर्मतः ॥ गंधो-
पिद्वादशप्रोक्तस्ताम्रंशाणद्वयोन्मितं ॥ अभ्रकस्यच-
तुःशाणंमाक्षिकस्यद्विशाणकं ॥ वंगोद्विशाणःसौवीरं-
त्रिशाणंलोहमष्टकं ॥ विषंत्रिशाणकंकुर्यात्लांगलीप-
लसंमिता ॥ मर्दयेद्दिनमेकंचरसैरम्लफलोद्भवैः ॥ द-
द्यान्मृदुपुटेवन्हौततःसूक्ष्मंविचूर्णयेत् ॥ मापमात्रोर-
सोदेयःसंनिपातेसुदारुणे ॥ आर्द्रकस्वरसेनैवरसोन-
स्वरसेनवा ॥ किलासंसर्वकुष्टानिविसर्पंचभगंदरं ॥
ज्वरंगरमजीर्णंचजयेद्रोगहरोरसः ॥

अर्थ—सोना २४ मासे, पारा ३ तोले, गंधक ३ तोले, तामेकीभस्म ८ मासे, अभ्रकभस्म १६ मासे, सोनामक्खीकीभस्म ८ मासे, वंगभस्म ८ मासे, शुद्धसुरमा २ तोलेभर, लोहभस्म २॥ तोले, सिंगियाविष ६ तोलेभर, कलयारीकीजड ४ तोलेलेय, सबको नीबूके रसमें १ दिन खरलकर मिट्टीके सरावे संपुटमें रख कपडमिट्टी चढाय आरने उपलोंकी हलकी पुटदेवे, शीतलहोनेपर उसमेंसे निकाल खरलमें डाल बारीक चूर्णकरके धररक्खे, इसको कनकसुंदर रस कहतेहैं यह १ मासे अदरखके रसमें अथवा लहसनके रसमें लेयतो घोर संनिपातको दूरकरे, तथा किलासकुष्ट, इतरकुष्ट, विसर्प, भगंदर, ज्वर, विषदोष, और अजीर्ण, ये रोग दूरकरे ॥

अर्थ—आमलेन्को सिजायकर पीसडाले, फिर इसमे मुनक्कादाख, सोंठ, इ-
नकाचूर्ण मिलाय सहतके साथ देवेतौ खाँसी, श्वास, मूर्छा, अरुचि, ये रोग दूरहो

## संनिपातप्रकोपकारण

अम्लस्निग्धोष्णतीक्ष्णैः कटुमधुरसुरातापसेवाकषायैःकाम-
क्रोधातिरूक्षैर्गुरुतरपिशिताहारसौहित्यशीतैः ॥ शोकव्या-
यामचिंताग्रहणवनितयात्यंतसंगप्रसंगैः प्रायःकुप्यंतिपुंसां-
मधुसमयशरद्वर्पणेसंनिपाताः ॥

अर्थ—खट्टे, चिकने, गरम, विदाही, चरपरे, मधुर, मद्य, धूप, कसेलेपदार्थों-
के सेवनसैं तथा काम, क्रोध, अतिरूक्ष, भारीपदार्थोंका कंठपर्यंतभोजन, मांसभ-
क्षण, शीतपदार्थसेवन, शोक, श्रम, चिंता, पिशाचबाधा, अतिस्त्रीप्रसंग, इनका-
रणोंसैं और चैत्र, वैशाख, आश्विन, कार्तिक, श्रावण, भाद्रपद, इनमहिनोंमें
संनिपातका प्रायः प्रकोपहोताहै ॥

## संनिपातोंकेनाम

संधिकश्चांतकश्चैवरुग्दाहश्चित्तविभ्रमः।शीताङ्गस्तंद्रिकःप्रो-
क्तःकंठकुब्जश्चकर्णकः ॥ ३ ॥ विख्यातोभुग्ननेत्रश्चरक्तष्ठी-
वीप्रलापकः। जिह्वकश्चेत्यभिन्यासस्सन्निपातास्त्रयोदश ॥ ४ ॥

अर्थ–१ संधिक, २ अंतक, ३ रुग्दाह, ४ चित्तविभ्रम, ५ शीतांग, ६ तंद्रिक
७ कंठकुब्ज, ८ कर्णक, ९ भुग्ननेत्र, १० रक्तष्ठीवी, ११ प्रलापक, १२ जिव्हक,
और १३ अभिन्यास, ये तेरह संनिपात कहेहैं ॥

## उनकीमर्यादा

संधिकेवासराःसप्त चान्तकेदशवासराः। रुग्दाहेविंशतिर्ज्ञेया
वन्हाष्टौचित्तविभ्रमे ॥ ५ ॥ पक्षमेकंतुशीतांगेतन्द्रिकेपंचविं-
शतिः। विज्ञेयावासराश्चैवकंठकुब्जेत्रयोदश ॥६ ॥ कर्णके-
चत्रयोमासाभुग्ननेत्रेदिनाष्टकं। रक्तष्ठीविदशाहानिचतुर्दशप्र-
लापके ॥ ७ ॥ जिह्वकेषोडशाहानिकलाभिन्यासलक्षणे ।
परमायुरिदंप्रोक्तंम्रियतेतत्क्षणादपि ॥ ८ ॥

अर्थ—संधिककी ७, अंतककी १०, रुग्दाहकी २०, चित्तविभ्रमकी २४, शी-

अंजनाद्बोधयेन्मुग्धं तंद्रितं सन्निपातिनं ॥

अर्थ—कांसेके मलका चूर्ण, कस्तूरी, और सहत, इनका अंजन करनेसें संनिपातरोगीकी तन्द्रा दूरहोय॥

## लोहांजन

अयोरजः श्वेतलोध्रमंजनंमरिचंतथा ।
गोरोचनसमायुक्तंतंद्रानाशनमुत्तमं ॥

अर्थ—लोहभस्म, सपेदलोध, मिरच, और गोरोचन ये सर्वऔषध खरलकर अंजन करेतो तंद्राका नाश करनेमें उत्तमहै ॥

## सैंधवादिअंजन

अंजनं सम्यगारब्धं मधुसिंधुशिलोषणैः ।
प्रमोहद्रोहिभवति भाषितं भिषजांवरैः ॥

अर्थ—सैंधानिमक, मनसिल, और त्रिकुटा ये समानले सहतसैं खरलकर अंजन करेतो तंद्राकी नाशकहो ऐसें उत्तम वैद्योंने कहाहै ॥

## जोतिष्मतीनस्य

ज्योतिष्मत्यास्तथातैलंमूलंपिंडारकस्यच ।
वस्तमूत्रेणसंपिष्ठानस्यंतंद्रानिवारणं ॥

अर्थ—मालकागनीकातेल, और पिंडारककी जड इनको बकराके मूत्रमें पीस नस्यदेवेतो तन्द्रा दूरहो ॥

## जातीपुष्पनस्य

जातीपुष्पप्रवालंचमरिचंरोहिणिवचा ॥
सैंधवंवस्तमूत्रेणतंद्रानाशनमुत्तमं ॥

अर्थ—जाईकेफूल, औरमूंगा, कालीमिचर, कुटकी, वच और सेंधानिमक, इनका बकराके मूतमें नस्यदेवेतो तंद्राको नाशकरे

## द्राक्षाद्यवलेह

स्विन्नमामलकंपिष्ट्वाद्राक्षयासहमेलयेत् ॥ विश्वभेषजसंयुक्तं मधुनासहलेहयेत् ॥ तेनास्यशाम्यतिश्वासःकासोमूर्च्छारुचिस्तथा ॥

पूरैस्त्र्यूषणं ॥ चत्वारःसूततुल्याःस्युःसतब्राम्हचार्द्रकद्रवैः ॥ द्रवैरेतैःपृथग्भाव्य-भावयेच्चमहाराष्ट्र्यानिर्गुंड्याकरवीरजैः ॥ चूर्णयित्वातुषड्गुंजंदापयेदार्द्रकद्रवैः॥ सप्तधासप्तधाक्रमात् ॥ अतितंद्राज्वर-सन्निपातानलःसोयंरसःस्यात्संनिपातजित् ॥ श्वासक्लमकासातिसाराजित् ॥

अर्थ—पारदभस्म, और गंधक, दोनो एक, २ भाग ताम्रभस्म, खपरिया, ओर हिंगुल, ये प्रत्येक दो दो भाग, लेकर अमलवेतके रसमें यदि अमलवेत न मिले तो चनाखार और जंभीरीके रसमें खरलकर भूधरयंत्रमें एकपुटदेवे फिर हीग, कपूर, सोंठ, मिरच, पीपल, ये एक एक भागले उन्हींसे खरल करे, और ब्रह्मी, अदरख, जलपीपल, निर्गुंडी, कनेर, इन प्रत्येकके रसकी सात २ भावनादेय, तो यह संनिपातानल रस तयारहो, इसमेंसे छःरत्तीरस अदरखके रससें देय तो सनिपात, तंद्रा, ज्वर, श्वास ग्लानि, खाँसी, और अतिसार इनको नाशकरे ॥

## निर्गुंड्यादिधूप

निर्गुंडीपुरसहितःसिद्धार्थकनिंबपत्रसंयुक्तः ॥
सर्जरसेनसमेतोधूपःसंधिकग्रहंहरति ॥

अर्थ—निर्गुंडी, गूगल, सरसो, नीमकेपत्ते, और राल इनकी धूनी संधिक संनिपातका नाशकरे ॥

## दुसरानिर्गुंड्यादिधूप

निर्गुंडीपिचुमंदकुष्ठविजयाकार्पाससिद्धार्थकैःपट्ग्रंथातगरा-मरेंद्रतरुभिमार्तंडमूलान्वितैः ॥ चंडापावकरुद्रमाल्यसहितैर्मध्वासवैर्मोदितैर्धूपोयंग्रहसंनिपातजनितांपीडांपिनष्टिक्षणात्

अर्थ—निर्गुंडी, नीमकीपत्ती, कूठ, भाँग, विनोले, सरसों, वच, तगर, देवदार, आककीजड, किरमानी अजमायन, चित्रक और वेलगिरी इनका चूर्णकर इसको सहत और दारूसें भिगोय धूपदेवेतो सनिपात और ग्रहोंकीपीडा इनको क्षणमात्रमें दूरकरे ॥

## देवदारुकाढा

सुरदारुसठीसुवालतासवहाशुंठियुताःशृताजलेन ॥
सपुराःशमयंतिसेविताःसततंहंतिसदासदागतिं ॥

तांगकी १९, तंद्रिककी २५, कंठकुब्जकी १३, कर्णककीतीन महीना (९०, दिन ) भुग्ननेत्र ८, रक्तष्ठीवीकी १०, मलापककी १४, जिव्हककी १६, अभिन्यासकी १६ दिनकीये, सन्निपातोंकी परमायुके दिन कहेहैं । परंतु रोगी शीघ्रवी मरजाता है ॥

## साध्यासाध्य

सन्धिकस्तन्द्रिकश्चैवकर्णकःकंठकुब्जकः ।
जिव्हकश्चित्तविभ्रंशःषट्साध्याःसप्तमारकाः ॥ ९ ॥

अर्थ—संधिक १, तंद्रिक २, कर्णक, ३, कण्ठकुब्ज ४, जिव्हक ५, चित्तविभ्रंश ६, येछह साध्य हैं बाकी बचे सातसो मारक हैं ॥

## संधिकसन्निपात

पूर्वरूपकृतशूलसंभवंशोषवातबहुवेदनान्वितं ॥ श्लेष्मतापबलहानिजागरंसन्निपातमितिसंधिकंवदेत् ॥

अर्थ—जिसज्वरके पूर्वरूपमें शूल, शोष, वायुकी अत्यंतपीडा, कफ, संतापबलकी हानी, और जागरण येलक्षण हो उसको संधिक संनिपात जानना ॥

## संधिकारिरस

शुद्धंसूतंसमंगंधंमारितंचाभ्रकंसमं॥ त्रिक्षारजीरकव्योपत्रिफलालवणैःसमं॥चित्रकस्यकषायेणदिनैकंमर्दयेद्दृढं ॥ गुंजापंचमितंखादेत्संधिकारिरितिस्मृतः ॥ पिप्पलीमधुनाचानुपिबेदुष्णोदकंतथा ॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्धगंधक, अभ्रकभस्म, तीनोक्षार, जीरा, त्रिकुटा, त्रिफला, निमक, येसमानभागले, चिमकके काढेमें १ दिनघलकरे यह संधिकारी रस ५ रत्ती सहत पीपल इनके साथ देवे, और ऊपर गरमजल पीवावे तो यह संधिक सन्निपातको दूरकरे ॥

## संनिपातानलरस

रसभस्मसमंगंधंताम्रभस्मद्वयोःसमं ॥ ताम्रतुल्यंखर्परंचखर्परांशंचहिंगुलं ॥ अम्लवेतसकाभविक्षारंचणकसंभवं ॥ जंबीरेर्गर्भितंरुध्वापुटकेभूधरेपचेत् ॥ आदायखल्वेचूर्णंहिंगुक-

अर्थ—गिलोय, अंडकीजड, सोंठ, देवदारु, रास्ना, हरड, इनका काढा प्रातःकाल पीवेतो सर्ववातकेरोगोंका नाशकरे ॥

## ग्रंथ्यादिकाढा

ग्रंथीकलितरुपथ्याकृतमालशिवाढरूपकैर्विहितः।
एरंडतैलयुक्तःक्वाथो हन्यान्मरुन्मांद्यं ॥

अर्थ—पीपरामूल, बहेडा, हरड, आमलतासकोगूदो, आमले, और अडूस, इनकेकाढेमें अंडीकातेल मिलायके पीवेतो वादीसेंहुए मंदत्वको नाशकरे ॥

## पंचमूल्यादिकाढा

मूलीपंचककल्ककांलेपतमिदंसन्मागधीमिश्रितं
कौलत्थेनरसेनसैंधवयुतंपेयंचविश्वौषधं ॥

अर्थ—पंचमूल, पीपल, सैंधानिमक, सोंठ, इनकेचूर्णको कुलथीके जलकेसाथ देवेतो वायुका नाशकरे ॥

## रास्नादिकाढा

रास्नागुडूचीशठिवृद्धदारुसुराह्वविश्वात्रिफलावरीभिः।
क्वाथंपिबेद्गुग्गुलसंनियुक्तंसमग्रसंधिग्रहसंनिपाते ॥

अर्थ—रास्ना, गिलोय, कचूर, विधायरो, देवदारु, सोंठ, त्रिफला, और सतावर इनकेकाढेमें गूगलमिलायके पीवेतो संधिक संनिपातको दूरकरे ॥

## क्षारादिपरिमाण

जीरकंगुग्गुलुंक्षारंलवणंचाशिलाजतु।
हिंगुत्रिकटुकंचैवक्वाथेशाणोन्मितंक्षिपेत् ॥

अर्थ—जीरा, गूगल, क्षार, नोन, शिलाजीत, हींग, और त्रिकुटा इनका चूर्णकाढेआदिमें ४ मासेडाले ॥

## संधिकपरलंघन

संधिस्थेहितमस्तिलंघनविधिःस्वेदोपनाहादिकं।
सूक्ष्मंकर्मसमग्रमेवविहितंकुर्याद्यवागूरसं ॥

अर्थ—संधिक संनिपातपर लंघन, स्वेदन, पिंडीआदि बांधना इत्यादि देहहलकाकरनेके उपचार करना योग्यहै और यवागू आदि पथ्यहै ॥

अर्थ—देवदारु, कचूर, गिलोय, रास्ना, और सोंठ, इनके काढेमें गूगल डालके सेवन करेतो वायूका नाशकरे ॥

## मुस्तादिकाढा

मुस्तैरंडप्राणदावाणदारुच्छिन्नारास्नाभीरुकर्चूरतिक्ताः ॥
वासाविश्वापंचमूलीयुगाढ्योहन्यान्मन्यास्तंभसंधिग्रहार्ति ॥

अर्थ—नागरमोथा, अंडकीजड, जलपीपल, नीलापियावासा, तेलियादेवदार, गिलोय, रास्ना, शतावर, कचूर, कुटकी, अडूसा, सोंठ,और दशमूल, इनका काढा मन्यास्तंभ, और संधिवात इनका नाशकरे ॥

## वचादिकाढा

वचाकत्रचकछुरासहचरामृताभंगुरासुराव्हघननागरातरुण-
दारुरास्नापुरा ॥ वृपातरुणभीरुभिःसहभवंतिसंधिग्रहव्यथो-
रुजडिमक्लमभ्रमणपक्षघातापहाः॥

अर्थ—वच. धमासों, गिलोय, भारंगी, पियावासा, देवदार, नागरमोथा, सोंठ, विधायरों, रास्ना, गुग्गुल, असगंध, अंडकीजड, सतावर, इनका काढा संधिक संनिपात, जडता, ग्लानि, भ्रम, और पक्षाघात इनका नाशकरे ॥

## रास्नादिकाढा

रास्नाशुंठीगुडूचीसहचरजलदैर्भीरुपथ्यासुराव्हैस्तिक्ताकर्चूर-
वासानिलरिपुसहितैःपंचमूलीद्वयेन ॥ एभिर्द्रव्यैःकषाय-
स्त्वरितमपहरेत्पीतमात्रःप्रभातेमन्यास्तंभांत्रवृद्धिज्वरपिटि-
ककटिसंधिसर्वांगपीडा ॥

अर्थ—रासना, सोंट, गिलोय, पियावासा, नागरमोथा, शतावर, हरड, देवदारु, कुटकी, कचूर, अडूसा, अंडकीजड, और दशमूल, इनका काढा मन्यास्तंभ, अंत्रवृद्धि, ज्वर. पिडिका, कमर. तथा संधि इनका शूल, और सर्वदेहकी पीडा को दूरकरे ॥

## अमृतादिकाढा

अमृतोरुबुकविश्वासुरतरुरास्नाहरीतकीक्वाथः ।
सकलसमीरणरोगान्प्रातःसद्योहरेत्पीतः ॥

दितः ॥ मृतोपिसंनिपातेनजीवत्येवनसंशयः ॥ सक्षीरंदाप-
येत्पथ्यंदेयोवानंदभैरवः ॥

अर्थ—पारा, और गंधक दोनो की कजलीकरे फिर लोहभस्म, विप, हरताल, मुरदासिंग, मनसिल, हींगरू, चित्रक, इन्द्रायनका गूदा, अतीस, त्रिकुटा, सोनामक्खी, भांग, जमालगोटा, और चौलाईकीजड, सब समानले अदरक और भांगरेके रसमें एकदिन खरलकरे, फिर काँचकी शीशीमें भर वालुका यंत्रमें २ प्रहर पचन करावे, फिर अदरखके रसमें एक दिन घोटे तो शिवप्रोक्त मृतसंजीवनीरस तयारहो इसको तीन रत्ती देय तो सन्निपातसें आसन्नमरणवालाभी रोगी बचजावे । इसके ऊपर दूध भात पथ्यदेवे अथवा यह रस नमिले तो आनंद भैरव रस देना चाहिये. ॥

## पथ्यादिकाढा

पथ्यावृषारग्वधदारुतिक्तारास्नागुडूचीगदजःकषायः ॥
सोपद्रवाच्चांतकनामधेयाज्वरान्नरंमोचयतीतिचित्रं ॥

अर्थ—हरड, अडूसा, अमलतासका गूदा, देवदारु, कुटकी, रास्ना, गिलोय, और कुलीजन इनका काढा उपद्रवसहित मनुष्यको अंतकज्वरसैमुक्तकरे इसमें क्या आश्चर्य है ॥

## असाध्यत्वकहते है

इहापहायवृतमुष्णवारिज्वरारियूपादिगदापहारि ।
ज्वरच्छिदंजीवितदंचनित्यंमृत्युंजयंचेतसिचिंतयस्व ॥

अर्थ—अंतक संनिपात होनेसें गरम जल, ज्वरनाशक काढे, यूप इत्यादिको त्यागके जीवनका देनेवाला और ज्वर नाश कर्त्ता जो मृत्युंजय शिव उसका चिंतवन करे ॥

भिषग्भिरितिनिर्णीतंसंनिपातेंतकाभिधे ।
भेषजंजान्हवीनीरंवैद्योगोविंदएवहि ॥

अर्थ—अंतक संनिपात होनेसें वैद्योंने ऐसा निश्चय करा है कि उस रोगीका विष्णुभगवान् वैद्यहै और गंगाजल यही औषधी है अर्थात् भगवन्नामस्मरण और गंगाजल पीवे. ॥

## अंतकसं॰निदान

दाहंकरोतिपरितापनमातनोतिमोहंददातिविदधातिशिरः प्रकंपं ॥ हिक्कांकरोतिकसनंचसमाजुहोतिजानीहितंविबुधवर्जितमंतकाख्यं ॥

अर्थ—दाह, संताप, मोह, शिरःकंप, हिचकी, और खांसी येअंतक सनिपातके लक्षणहै इसअंतकसंनिपातकोवैद्यत्यागदे॥

## अंतकेरोटिकाबंधनं

अयंप्रयोगोयदिसन्निपातेभिषग्वराणांकथितोनुभूतः॥ सराशिकापिष्टपलांडुतोयंविधायसम्यक्सरोटिकांच ॥ मृद्वीपुनः स्निग्धविभर्जिताचसोष्णाचताल्वोपरिबंधनीया ॥ यामद्वयंबध्यपुनश्चवध्वायावन्मनुष्योध्वतिमातनोति ॥ एवंविधिश्चांतकसंनिपातेमृत्युव्यथागच्छतिनिश्चयेन ॥

अर्थ—वैद्योने बहुत अनुभव करके अंतक संनिपातपर यह प्रयोग कहा है कि राईकेचूर्णको लहसनके रसमे सानके उसकीरोटि बनाय तेलमें अथवा घृतमें सेक गरमागरम मस्तकपर बाँधे, दोपहरकेबाद फिर बाँधे तो मनुष्यके अंतक संनिपातकी व्यथा दूरहोय परंतु हमारी समझमें उसरोटीको अंडिके तेलमें सेके ॥

## मृतसंजीवनीरस

शुद्धंसूतंसमंगधंखल्वेवैकज्जलीकृतं ॥ तथालोहकभस्मात्रताम्रभस्मसमंसमं ॥ विषतालककंकुष्टंशिलाहिंगुलचित्रकैः॥ हस्तिमुंडीचातिविषंऽयूषणंहेममाक्षिकं ॥ भृंगीकुंभीमिवनादाःप्रतिचूर्णरसांशकं ॥ त्रिदिनंमर्दयेत्खल्वेद्रवेराद्रकसंभवैः॥ निर्गुंडीविजयाद्रावैस्त्रिदिनंमर्दयेत्पुनः ॥ जंबीरस्यचचांगेर्याद्रवैःसंमर्दयेद्दिनं ॥ काचकुप्यांनिवेश्याथवालुकायंत्रगंपचेत्॥ द्वियामांतेसमुद्धृत्यमर्दयेच्चार्द्रकद्रवैः ॥ दिनैकंशोषितंचूर्णंत्रिगुंजंसंनिपातजित॥ मृतसंजीवनोनामरसोयंशंकरा-

अर्थ--नेत्रवाला, लालचंदन, खस, दाख, आमले और पित्तपापडा इनका काढा शीतलकरके देय तो दाह, तृषा, और ज्वर ये शांति होय ॥

## धान्याककाढा

ससितोनिशिपर्युषितःप्रातर्धान्याकतंडुलकाथः ॥
पीतःशमयत्यचिरादंतर्दाहंज्वरंशैत्यं ॥

अर्थ--धनिया, ओर चावल, इनको रात्रिमें भिगोय देवे, प्रातःकाल इसकी पेयाकर शीतल होनेपर देवे तो अतर्दाह और पित्तज्वर इनका शमन करे ॥

## अगर्वादिधूप

अगरुघनसारसल्लककरुहनतनीरचंदनैर्युक्तः ॥
सर्जरसेनसमेतोधूपोरुग्दाहकंहंति ॥

अर्थ--कालीअगर, कपूर, सल्लकी, नख, तगर, नेत्रवाला, चंदन और रार, इनकी धूनी रुग्दाह नाशक है ॥

## दध्यादिलेप

शमयतिदाहमचिराद्धिग्ध्कर्कंधुपल्लवैर्लेपः ॥
लेपोहिमकरमलयजनिंवदलैस्तक्रपिष्टैर्वा ॥

अर्थ--वेरके पत्तोको पीस दहीमें मिलाय अंगोंमें लेपकरे अथवा कपूर, चंदन नीमकेपत्ते, ये एकत्र छाछमें पीसके लेपकरे तो इस्से दाह शमन होवे ॥

## वदर्यादिलेप

वदरीपल्लवलेपःश्रीखंडारिष्टकेनसंयुक्तः ॥ दा-
तव्यःपादतलयोस्त्वरयारुग्दाहसंनिपातघ्नः ॥

अर्थ--वेरकेपत्ते, चंदन, और नीम ए औषध एकत्र पीस पैरोंके तलूएमें लेपकरे तो रुग्दाह शमन होय ॥

## लाजतर्पण

दाहवम्यर्दितंक्षामंनिरन्नंतृष्णयान्वितं ॥
शर्करामधुसंयुक्तंपाययेल्लाजतर्पणं ॥

अर्थ--दाह और वमन इनकर्के कृश अन्नचले नही, और तृषार्त्त ओसे रोगी-को खीलोंका यूप, बूरा और सहत मिलायके देवे ॥

## रुग्दाहसंनि० निदान

प्रलापपरितापनप्रबलमोहमांद्यश्रमः परिभ्रमणवेदनाव्यथितकंठमन्याहनुः ॥ निरंतरतृषाकरःश्वसनकासहिक्काकुलः सकष्टतरसाधनोभवतिहंतिरुग्दाहकः ॥

अर्थ—प्रलाप, संताप, अत्यंतमोह, मंदत्व, श्रम, भौर, और कंठ, मन्यानाडी, तथा ठोड्डी इनमें पीडा, सर्वकाल तृषा, श्वास, खांसी, और हिचकी, इन लक्षणकरके युक्त ऐसा रुग्दाह संनिपात कष्टसाध्य और मारक है ॥

## जलधरकाढा

जलधरमलयजनागरसवालकोशीरपर्पटैःक्वथितं । यःपिवतिपयःसुशीतंशाम्यतिरुग्दाहकस्तस्य ॥

अर्थ—नागरमोथा, लालचंदन, सोंठ, नेत्रवाला, खस, और पित्तपापड़ा, इनका काढा शीतल होनेपर देवे तो रुग्दाह सन्निपातको शमन करे ॥

## अभयादिकाढा

अभयापर्पटमुस्ताकटुकीशम्याकगोस्तनीक्वाथः। पीतःकरोतिनाशंरुग्दाहरुजोनसंदेहः ॥

अर्थ—हरड़, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, कुटकी, अमलतासका गूदा, और मुनक्कादाख इनका काढा करके पीवे तो रुग्दाह संनिपात नाश होय. ॥

## ब्राम्ह्यादिकाढा

ब्राह्मीद्राक्षाजलधरवचोशीरशम्याकतिक्तापथ्याधात्रीकलितरुबलानिंवकोशातकीभिः ॥ भूनिंबाढ्याभवतिसहितः पंचमूलीद्वयेनपीतःक्वाथःसकलपवनव्याधिरुग्दाहहंता ॥

अर्थ—ब्राह्मी, दाख, नागरमोथा, वच, खस, अमलतासको गूदो, कुटकी, त्रिफला, खरेटी, नीमकीछाल, कडुई घीयाके बीज, चिरायतो और दशमूल इनका काढा सर्ववात व्याधियोंको और रुग्दाह संनिपातको नाश करे ॥

## उशीरादिषडंगकाढा

उशीरचंदनोदीच्यद्राक्षामलकपर्पटैः । शृतंशीतंजलंदद्यादाहतृड्ज्वरशांतये ॥

अर्थ--नेत्रवाला, लालचंदन, खस, दाख, आमले और पित्तपापडा इन्का काढा शीतलकरके देय तो दाह, तृषा, और ज्वर ये शांति होय ॥

## धान्याककाढा

ससितोनिशिपर्युषितःप्रातर्धान्याकतंडुलक्वाथः ॥
पीतःशमयत्यचिरादंतर्दाहंज्वरंशैत्यं ॥

अर्थ—धनिया, ओर चावल, इनको रात्रिमें भिगोय देवे, प्रातःकाल उसकी पेयाकर शीतल होनेपर देवे तो अंतर्दाह और पित्तज्वर इनका शमन करे ॥

## अगर्वादिधूप

अगरुघनसारसल्लककररुहनतनीरचंदनैर्युक्तः ॥
सर्जरसेनसमेतोधूपोरुग्दाहकंहंति ॥

अर्थ—कालीअगर, कपूर, सल्लकी, नख, तगर, नेत्रवाला, चंदन और रार, इनकी धूनी रुग्दाह नाशक है ॥

## दध्यादिलेप

शमयतिदाहमचिराद्दधियुक्तकर्कंधुपल्लवैर्लेपः ॥
लेपोहिमकरमलयजनिंबदलैस्तक्रपिष्टैर्वा ॥

अर्थ—वेरके पत्तोको पीस दहीमें मिलाय अंगोंमें लेपकरे अथवा कपूर, चंदन नीमकेपत्ते, ये एकत्र छाछमें पीसके लेपकरे तो इस्से दाह शमन होवे ॥

## वदर्यादिलेप

बदरीपल्लवलेपःश्रीखंडारिष्टकेनसंयुक्तः ॥ दा-
तव्यःपादतलयोस्त्वरयारुग्दाहसंनिपातघ्नः ॥

अर्थ—वेरकेपत्ते, चंदन, और नीम ए औषध एकत्र पीस पैरोके तलूएमें लेपकरे तो रुग्दाह शमन होय ॥

## लाजतर्पण

दाहवम्यर्दितंक्षामंनिरन्नंतृष्णयान्वितं ॥
शर्करामधुसंयुक्तंपाययेल्लाजतर्पणं ॥

अर्थ—दाह और वमन इनकर्के कृश अन्नचले नही, और तृषार्त्त ऐसे रोगीको खीलोका यूप, बूरा और सहत मिलायके देवे ॥

## स्त्रीकाआलिंगन

पयोधराढ्यांकुशलांसुरूपांनवयौवनां ॥
प्रमदांस्वभुजाश्लेषैर्भजेद्रुग्दाहपीडितः ॥

अर्थ--रुग्दाह युक्तमनुष्यका स्वरूपवती, पीनस्तनी, विलासचतुर ऐसी स्त्रीका आलिंगन करनेसे रुग्दाह शमन होय ॥

## पथ्यावलेह

पथ्यांतैलघृतक्षौद्रैर्लिहेद्दाहज्वरापहां ॥
कासासृक्सर्ववीसर्पश्वासान्हंतिवमीरपि ॥

अर्थ—हरडकाचूर्ण, तेल, घी, अथवा सहत इनके साथ खायतो खाँसीमें जो रुधिर गिरे वो तथा विसर्प, श्वास, वमन, (वांति.) इनका नाश होय ॥

## भैरवीगुटी

शुद्धसूतंद्विधागंधंमर्दयेदिक्षुकद्रवैः ।. दिनंभाव्यंचमर्द्यंचशोषयित्वातुभृंगजैः॥ चतुर्धाभावयेद्द्रावैस्तिलपर्ण्याद्रवैश्वसः॥ भावितंचविशोष्याथचूर्णयेद्वस्त्रगालितं ॥ चूर्णतुल्यंमृतंताम्रंताम्रादष्टांशकंविपं ॥ कृष्णाशीतविडंगानिकृष्णाजीरासनंवला ॥ ताम्रार्धंप्रतिचूर्णंस्यात्सर्वमेकत्रकारयेत् ॥ यामैकंभृंगजद्रावैर्मर्दयेत्कल्कतांगतं ॥ स्निग्धभांडगतंपाच्यंपिंडयामात्कशाग्निना ॥ चणमात्रावटीयोज्याचित्रकार्द्रकसैंधवैः ॥ सम्यक्त्रिदोपजंहंतिसंनिपातंसुदारुणं॥ भैरवीगुटिकाख्याता-दध्यन्नंपथ्यमाचरेत् ॥

अर्थ—शुद्धपारा, और गंधक इनकी कजली कर ईखके रसमें १ दिन भावना देवे, फिर भाँगरेके रसकी ४ भावनादेय, फिर तिलपर्णीके रसकी भावना देकर सुखाय कपडछन कर लेवे। पीछे इस चूर्णके समान ताम्रभस्म,ताम्रका अष्टमांश सिंगियाविष, और काली तथा सपेद वायविडंग, पीपर, जीरा, रास्नासरेटी, ये प्रत्येक ताम्रसे आधी २ लेवे, सबको एकत्रकर भांगरेके रससे १ प्रहर खरल करे जब घुटते २ कल्कके समान हो जावे तयचीके चिकने वरतनमें रसके मंदाग्निपर जबतक गोला होय तबतक पचन करावे फिर इसकी चनेके प्रमाण गोली करे इसको चीता, अदरख और सैंधानिमक इनके साथ देवे तो त्रिदोष-

जन्य सँनिपातका नाश करे इसको ( भैरवीगुटी ) कहतेहै इसके ऊपर दही भात-
की पथ्यदेनी चाहिये ॥

## चित्तभ्रमसन्निपात

यदिकथमपिपुंसांजायतेकायपीडाभ्रममदपरितापोमोहवैक-
ल्यभावः ॥ विकलनयनहासोद्गीतनृत्यप्रलापीह्यभिदधति-
नसाध्यंकेपिचित्तभ्रमाख्यं ॥

अर्थ—किसीप्रकार शरीरमें पीडा, भ्रम, उन्माद, संताप, मोह, विकलपना-
नेत्रोमें व्याकुलता, हसना, गाना, नाचना और बकना ये लक्षण होनेसें इसको
चित्तविभ्रम संनिपात कहते है यह असाध्य है ॥

## मध्वादिकाढा

मधुनखशाल्मलिकृष्णावनतरुपथ्यामुरागरूभिश्च ॥
मलयजसहितैरेतैःक्वाथश्चित्तभ्रमंहंति ॥

अर्थ—महुआकी छाल, नख ( सुगंधद्रव्य ) सेमरका मूसला पीपर, कोह-
वृक्षकी छाल, हरड, मुरा, अगर और लाल चंदन इनका काढा चित्तविभ्रम को
शमन करे ॥

## द्राक्षादिकाढा

मृद्वीकामरदारुमत्स्यशकलामुस्तामलक्योमृताप-
थ्यारेवतरामसेनकरजाराजीफलैःसंयुतः॥हन्युश्चित्त-
रुजोथदर्दुरदलद्राक्षापटोलीपयःपथ्यापर्पटराजवृक्ष-
कटुकाशंखूकपुष्पशृतः ॥

अर्थ—दाख, देवदारु, कुटकी, नागरमोथा, आमले, गिलोय, हरड, अमल-
तासकागूदा, चिरायता, पित्तपापडा, और पटोलपत्र, इनका अथवा ब्राम्ही,
दाख, पटोलपत्र, नेत्रवाला, हरड, पित्तपापडा, अमलतासको गूदो, कुटकी,
और शंखपुष्पि, इनका काढा चित्तविभ्रमको शमनकरे ॥

## ब्राम्ह्यादिकाढा

ब्राम्हीवचाभीरुफलत्रिकेणतिक्तावलारग्वधतिक्तकेन ॥ निं-
बाव्हकोशातकिहारहूराद्विपंचमूलीभिरसौकषायः॥ पीतो-
हिचित्तभ्रमसंनिपातंनिहंतिरुद्राहमपिप्रभूतं ॥

अर्थ—ब्राम्ही, वच, शतावर, त्रिफला, कुटकी, खरेटी, अमलतासकागुदा, चिरायता, नीमकीछाल, घीयाकेवीज, दाख, और दशमूल, इनका काढा चित्त-भ्रम संनिपातको और रुग्दाहको नाशकरे ॥

### पथ्यादिकाढा

पथ्यापर्पटकटुकामृद्वीकादारुजलदभूनिंबाः ॥
शम्याकपटोलशिवाक्वाथश्चित्तभ्रमंहंति ॥

अर्थ—हरड, पित्तपापडा, कुटकी, दाह, देवदार, नागरमोथा, कडुआचिरायता, अमलतासकागूदा, पटोलपत्र, और आमले इनका काढा, चित्तविभ्रम सन्निपातको नाश करे ॥

### हरीतक्यादिकाढा

हरीतकीपर्पटहारहूराशंखूकपुष्पैःकटुकीपयोदैः ॥
शम्याकदेवाव्हयभारतीभिश्चित्तभ्रमंहंतिकृतःकषायः ॥

अर्थ—हरड, पित्तपापडा, दाख, शंखपुष्पी, कुटकी, नागरमोथा, अमलतासकागूदा, देवदार, और ब्राम्ही इनका काढा चित्तभ्रम संन्निपातका नाशकहै ॥

### कणाद्यंजन

कणोपणोग्रालवणोत्तमानिकरंजबीजक्षणदामलानि॥पथ्याक्षसिद्धार्थकहिंगुशुंठीयुतानिबस्तांबुविमिश्रितानि ॥ पिष्टागुटीयंनयनेविधेयाप्रचेतनेतिप्रथितान्वितार्था ॥ चित्तभ्रमापस्मृतिभूतदोषशिरोक्षिरोगभ्रमनाशहेतुः ॥

अर्थ—पीपर, कालीमिरच, वच, सेंधानिमक, कंजाकेवीज, हलदी, आमले, हरड, वहेडा, सरसो, हिंग, और सोंठ इनका चूर्ण एकत्रकर वकराकेमूत्रमें खरलकरकेगोलीवांधे इसका नेत्रोंमें अंजन करे तो चैतन्यता होय और चित्तविभ्रम, मृगी, भूतदोष, मस्तकरोग, नेत्ररोग ओर भ्रम इनका नाशकरे ॥

### कुभोद्भवनस्य

कुंभोवद्भतरोरंभोगुडविश्वाकणान्वितं ॥
निहितंनसिनूनंस्याश्चित्तभ्रमविनाशनं

अर्थ—अगस्तीयाके पत्तोंके रसमें गुड, सोंठ, औरपीपलको डालके नस्यदेवे तो चित्तभ्रमको नाशकरे ॥

धूप

मुरामूर्धजमेघाब्हमधूकमलयोद्भवैः ॥ मरुत्तरुमधून्मिश्रैःपुर
पाणिजपांसुभिः ॥ लोहलामज्जकैलाभिर्धूपश्चित्तभ्रमापहः॥
ग्रहदोषहरःश्रीदःसौभाग्यकरउत्तमः ॥

अर्थ—मुरा( गंधद्रव्य ) नेत्रवाला, महुआकीछाल, चंदन, देवदारु, सहत,
नखद्रव्य, पित्तपापड़ा, अगर, पीलासुगधवाला, और इलायची इनकी धूनी चि-
त्तभ्रम संनिपात और ग्रहदोष इनकी नाशक तथा लक्ष्मीकारक और कांतिप्रदहै

संनिपातगजांकुश

शुद्धंसूतंमृतंचाभ्रंशुद्धंतालकमाक्षिके ॥ हिंगुंचतुल्यतुल्यं
स्यान्मर्दयेत्खल्वकेद्रवैः ॥ वंध्यापटोलनिर्गुंडीसुगंधानिंब-
चित्रकैः ॥ धत्तूरलांगुलीपाठाभृंगाजंबीरजद्रवैः॥ त्रिदिनंमर्द-
येदेभिश्चूर्णीकृत्यविमिश्रयेत्॥ त्रिक्षारसैंधवंबालंविषंमधुरसा-
रकं । तुल्यंतुल्यंविचूर्ण्याथपूर्वोक्तचंद्रमासमं ॥एकीकृत्यभवे-
त्सिद्धःसन्निपातगजांकुशः॥ सन्निपातंनिहत्याशुमाषमात्रःप्र-
योजितः ॥

अर्थ—पारा, अभ्रकभस्म, हरताल, सुवर्णमाक्षिक, ए शुद्धलेवे उसमें समान-
भाग हींग डालके घीगुवार, बाँझककोडा, परवल, सपेद और कालीनिर्गुंडी,
नीम, चित्रक, धतूरा, कलयारी, पाढ, भाँग और जँभीरी इनकेरसमें ३ दिनख-
रलकरे, तथा इसमें क्षारत्रय, सेंधानिमक, विष, काकोली, और जमालगोटा ये
समानभागले अर्थात् ए पूर्व औषधोंकी बराबर होय इसप्रकारमिलावे तो यह सं-
निपातगजांकुश रसबने इसमेंसे १ मासे देनेसे सनिपातका नाशकरे ॥

प्राणेश्वररस

रसंगंधंसमंशुद्धंमृतंताम्रंमृतंरसं ॥ दिनैकंतालमूल्याश्चवारा-
ह्यारसमर्दितं॥निरुद्धंकाचकुप्यांतुवालुकायंत्रगंपचेत्॥ दिनं-
वाभूधरेपक्त्वासमादायविचूर्णयेत्॥ त्रिक्षारंपंचलवणंत्रिफला-
व्योषचित्रकैः ॥ सजीरकैःसेंद्रयवैर्हिंगुगुग्गुलुदीप्यकैः ॥ सं-
वैंःसमैःपूर्वसमंचूर्णीकृत्यविमिश्रयेत् ॥माषमात्रंप्रदातव्यंकिं-

चिदुष्णोदकंपिबेत् ॥ सन्निपाताचलेवज्रंसज्वरग्रहणीप्रणुत्॥ कुर्यात्प्राणपरित्राणमतःप्राणेश्वरोरसः॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक, ताम्रभस्म, पारदभस्म, इन सबको मूसली और वाराहीकंदके रसमें खरलकर शीशीमें भरके वालुका यंत्रमें अथवा भूधरयंत्रमें पचन करावे जब शीतल होजावे तब इसमें क्षारत्रय, निमकपाँचो, त्रिफला, त्रिकुटा, चित्रक, जीरा, इन्द्रजो, हींग, गूगल, और अजमायन, सब समानले इनका चूर्ण पहिलीऔषधोंके बराबर लेकर मिलावे, फिर इसमेंसे १ मासे लेकर ऊपरसैं गरमपानीपीवे तो संनिपात संग्रहणी, और ज्वर इनको नाशकरे यह प्राणेश्वररस प्राणोंकी रक्षाकरनेवालाहै ॥

## मोरेश्वररस

शुद्धंसूतंद्विधागंधंदिनैकंचार्द्रकद्रवैः ॥ मर्दयित्वाचतंगोलंगोलार्धेताम्रसंपुटे ॥ क्षिप्त्वानिरुध्यतत्संधिंमृन्मूषायांनिरुध्यच ॥ रात्रौगजपुटेपाच्यंप्रातरादायचूर्णयेत् ॥ गुंजैकंनागरसमंसघृतंसन्निपातनुत् ॥ अनुपानंपिबेत्पश्चात्तप्तंवारिपलद्वयं॥ दध्यन्नंदापयेत्पथ्यंतृषायांशीतलंजलं॥ कृशंचकुरुतेस्थूलंनरंमोरेश्वरोरसः ॥

अर्थ—शुद्धपारा १ भाग, गंधक २ भाग, इनको एकदिन अदरकके रससैं खरलकर गोली बाँधे उन गोलियोका आधा तामा ले उसकी डिब्बी बनाय उसमें वोगोली भरके बंदकर दुसरे मिट्टीके पात्रमें रखके मुख बंदकर संधियोंको लेपकर बंदकरदेवे फिर १ रात्रि गजपुटमें रखके आँच देवे प्रातः काल निकालकर चूर्ण करे इसमेंसे १ रत्ती सोंठ, और घीसैं देवे उपर ८ तोले गरम जलपीवे, ओर दहीभातका पथ्यदेके जब प्यासलगे तब शीतल जलदेवे तोयह ( मोरेश्वर रस ) कृशपुरुषको मोटा करे ॥

## शीतांगसं०निदान

हिमसदृशशरीरोवेपथुःश्वासहिक्काशिथिलितसकलांगःखिन्ननादोग्रतापः॥ क्लमथुःदवथुकासच्छर्द्यतीसारयुक्तस्त्वरितमरणहेतुःशीतगात्रःप्रभावात् ॥

अर्थ—देह अत्यंत शीतल, कंप, श्वास, हिचकी, अंगोमे शिथिलता, शब्द

वारीक, भीतरसंताप, विनाकारण श्रम, संताप, खाँसी, वमन, और अतिसार, इनलक्षणों करके युक्त संनिपातको शीतगात्र ( शीतांग ) संनिपात कहते है यह तत्काल प्राण नाश करे ॥

## शीतांगकीचिकित्सा

मृतसंजीवनोवाथरसोगुंजाद्वयोहितः ॥ सर्वांगसुंदरोवाथस्व च्छंदोभैरवोपिवा ॥ दातव्यःपंचवक्त्रोवाशीतांगंनाशयेत्ध्रुवं ॥

अर्थ—शीतांग संनिपातपर मृतसंजीवन रस दो रत्तीकिंवा सर्वांग सुंदरअथवा स्वच्छंद भैरव किंवा पंचवक्र रस देवे तो शीतांगसंनिपात नाश होय ॥

## अर्कादिकाढा

भास्वन्मूलंजीरकव्योषभार्गीव्याघ्रीशृंगीपुष्करंगोजलेन ॥ सिद्धंसद्यःशीतगात्रातिमोहश्वासश्लेष्मोद्रेककासान्निहंति ॥

अर्थ—आककीजड, जीरा, त्रिकुटा, भारंगि, कटेरी, काँकडासिंगी, और पुहकरमूल, इनका काढा गोमूत्रमें सिद्धकरके पीवे तो तत्काल शीतगात्रसंनिपात मोह, श्वास और कफवृद्धि, इनका नाश हो ॥

## मातुलिंगादिकाढा

मातुलिंगादिभूनिंबग्रंथिकंदेवदारुच ।
दशमूलाजमोदंचशुंठीशीतांगनाशनं ॥

अर्थ—बिजोरेकीकेशर, चिरायता, पीपरामूल, देवदारु, दशमूल, अजमोद, और सोंठ इनका काढा शीतांग संनिपात नाशक है ॥

## कर्कोटकाद्युद्वर्तन

कर्कोटिकाकंदरजःकुलित्थाकृष्णावचाकट्फलकृष्णजीरैः ॥ किराततिक्ताग्निककट्वलांबुपथ्याभिरुद्वर्तनमत्रशस्तं ॥

अर्थ—ककोडेकाका कंद, पित्तपापडा, कुलथी, पीपल, वच, कायफर, कालाजीरा, चिरायता, चित्रक, कडई, तूंबी, और हरड, इनके चूर्णको देहमें मले तो शीतांग संनिपातका नाश करे॥

## श्रीवेष्टादिचूर्ण

श्रीवेष्टफलसंभूतभस्मभागाष्टकंशुभं॥ मरीचस्यचचत्वारोरसस्यैकोविषस्यच ॥ सूक्ष्मचूर्णंततःकृत्वामर्दयेदतियत्नतः॥ अ-

साध्येपिहिशीतांगेस्वेदोयातिहिनिश्चितं॥ चूर्णंचणकभृष्टोत्थं-भृष्टभृंगीभवंतथा ॥ कुलित्थकोत्थचूर्णेनस्वेदोयातिहिनिश्चितं ॥

अर्थ–शरलवृक्षके फलोंकी भस्म ८ भाग, भांग ४ भाग, कालीमिरच ४ भाग, पारा और सिंगियाविष ये सब एकत्रकर इनका वारीक चूर्णकरे इसके सेवनसैं असाध्य शीतांगवालेके भी पसीने आवे, भुनाहुआ चनेका चून, भुना हुआ भांगका चूर्ण और कुलथी का चूर्ण इनकीमालीस करनेसैं पसीने दूरहो ॥

## तंद्रिकसं० निदान

प्रभूतातंद्रार्तिज्वरकफपिपासाकुलतरोभवेच्छ्यामाजिव्हापृथुलकठिनाकंटकवृता॥अतीसारःश्वासःक्लमथुपरितापःश्रुतिरुजोभृशंकंठेजाड्यंशयनमनिशंतंद्रिकगदे ॥

अर्थ– ( तंद्रिक ) संनिपातमें अत्यंत तंद्रा, शूल, ज्वर, कफ, प्यास, इनसैं रोगी पीडित हो जीभ काली, कठोर और ऊपर कांटे युक्त हो, अतीसार स्वास, ग्लानि, संताप, कानोंमें पीडा, गलेमें जडता, और निरंतर निद्राका आना ये लक्षण होते है ॥

## तंद्रिकपरीक्षा

ज्वरेप्रथममुत्पन्नेचक्षुभ्यांनैवपश्यति ॥
तंद्रिकःसंनिपातोयंकष्टसाध्योभवेत्ततः ॥

अर्थ–ज्वर उत्पन्न होतेही नेत्रोंके आगे अंधेरा आवे तो यह तंद्रिक संनिपात कष्टसाध्य जानना ॥

## भाग्र्यादिकाढा

भार्गीगुडूचीधनकंटकारिहरीतकीपौष्करनागराणां ॥
कृतःकषायस्त्रिदिनंनिपीतोघोरंजयेत्तंद्रिकसंनिपातं॥

अर्थ–भारंगी, गिलोय, नागरमोथा, कटेरी, हरड, पुहकरमूल, और सोंठ' इनका काढा तीनदिन पीवे तो घोर तंद्रिक संनिपात दूर होय ॥

## दुसराप्रकार

भार्गीपुष्करपथ्यानिदग्धिकानागरामृताक्वाथः ॥
अपनत्तितंद्रिकभयंनिःसंशयंप्रगेतनेपीतः ॥

अर्थ—भारंगी, पुहकरमूल, हरड, कटेरी, सोंठ, और गिलोय इनका काढा प्रातःकाल पीवे तो निःसंदेह तंद्रिक संनिपात शमन होय ॥

## अमृतादिकाढा

अमृतापटोलवासाव्योपयुतस्तंद्रिकेक्वाथः॥

अर्थ—गिलोय, पटोलपत्र, अडूसा, और त्रिकुटा इनका काढा तंद्रिकपर देवे

## रास्नाद्यंजन

रास्नामनःशिलातैलमंजनंचैवतंद्रिके ॥

अर्थ–रास्ना, मनसिल, इनसे सिद्धकरे हुए तेलका अंजन तंद्रिक संनिपातनाशक है

## तुरंगलालाअंजन

तुरंगलालालवणोत्तमेंदुमनःशिलामागधिकामधूनि ॥
तुरंगलालालवणोत्तमेंदुमनःशिलामागधिकामधूनि॥ नियोजितान्यक्षिणिनिश्चितंद्राक्तंद्रांसनिद्रांविनिवारयंति॥

अर्थ—सैंधानिमक, कपूर, मनसिल, और पीपल, ये चार औषधोंको घोडे-की लारमें और सहतमें घिसके अंजन करे तो तंद्रिक को दूरकरे ॥

## कृष्णादिनस्य

कृष्णामनःशिलातालमंजनमेवतंद्रिकेत्विष्टं ॥
अमृतापटोलयूपोव्योपयुतस्तंद्रिकंजयति ॥

अर्थ—पीपल, मनसिल, हरताल, इनका अंजन हितकारी है और गिलोय पटोलपत्र, इनका काढा त्रिकुटाके चूर्णसैं देवे तो तंद्रिक संनिपातका नाशकरे ॥

## कुष्टादिनस्य

कुष्टगवाक्षीनागरनिशाद्वयमरीचकणावचायुक्तं।
वस्तसलिलेनपिष्टंतंद्रिकहिंस्रंभवेन्नस्यं ॥

अर्थ—कूठ, इंद्रायन, सोंठ, हलदी, दारुहलदी, मिरच, पीपर, और वच, इनको बकराके मूत्रसैं पीस नस्य देवे तो तंद्रिकसंनिपात को दूरकरे ॥

## मरिचादिनस्य

मरीचकंचपचंपचावचारुकुष्ठमिहरनागरशर्वरीगवाक्ष्यः।छ-
गलकजलकान्विताःनितांतंनासिनिहितानतंद्रिकंजयंति ॥

अर्थ—मिरच, दारुहलदी, वच, कूठ, वायविडंग, सोंठ, हलदी,और इनको ब-करीके मूत्रमें खरलकर नस्यदेवे तो तंद्रिकको निश्चय दूरकरे ॥

## क्षुद्रादिनस्य

क्षुद्रामृतापौष्करनागराणिशृतानिपीतानिशिवायुतानि ।
शुंठीकणागस्त्यरसोपणानिनस्येनतंद्राविजयोल्बणानि ॥

अर्थ—कटेरी, गिलोय, पुहकरमूल, सोंठ, और हरड, इनका काढा देकर, अगस्तियाके रसमें त्रिकुटा को मिलाय नस्यकरे तो यह नस्य और ऊपर कहाहुआ काढा तंद्राके जीतने को समर्थ है ॥

## कंठकुब्जनिदान

शिरोर्तिकंठग्रहदाहमोहकंपज्वरोरक्तसमीरणार्तिः ॥
हनुग्रहस्तापविलापमूर्छास्यात्कंठकुब्जःखलुकष्टसाध्यः ॥

अर्थ—मस्तकका दूखना, कंठका जिकडना, दाह, मोह, कंप, ज्वर, वातरक्त, रक्तकी पीडा, ठोडीका जिकडना, संताप, प्रलाप, और मूर्च्छा इतने लक्षण युक्त ज्वरको (कंठकुब्ज) संनिपात कहते है ॥

## शृंग्यादिकाढा-

शृंगीवत्सकचेतकीघनसठीभूर्निबभार्गीनिशातिक्तापुष्करचित्रकैःसमरिचैर्व्याघ्रीवृपामिश्रितैः ॥ धात्रीदारुविभीतकैश्चचविकाविश्वाकणाकट्फलैःपीतःकृंततिकंठकुब्जमचिरात्कोष्णःकषायस्त्विह ॥

अर्थ— काकडासिंगी, कूडाकी छाल, हरड, नागरमोथा, कचूर, चिरायता, भारंगी, हलदी, कुटकी, पुहकरमूल, चित्रक, कालीमिरच, कटेरी, अडूसा, आमरे, देवदार, बहेडा, चव्य, सोंठ, पीपल, और, कायफल, इनका काढा किंचित् उष्ण पीवे तो कंठकुब्ज संनिपात को जीते ॥

## त्रिकट्वादिकषाय

त्रिकटुकलिंगककटुकाहरीतकीविभीतकामलकैः ॥
ध्वंसयतिकंठकुब्जंवृपरजनीद्वयसंयुतःकषायः ॥

अर्थ—त्रिकुटा, इन्द्रजो, कुटकी, हरड, बहेडा, आमले, अडूसा, हलदी, और दारुहलदी, इनका काढा कंठकुब्जवाले रोगीको हितकारी है ॥

## फलत्रिकादिकाढा

फलत्रिकत्र्यूपणमुस्तकट्वीकलिंगसिंहाननशर्वरीभिः ॥

क्वाथःकृतःकृंततिकंठकुब्जंकंठीरवःकुंजरमाशुयद्वत् ॥

अर्थ— त्रिफला, त्रिकुटा, मोथा. कुटकी, इन्द्रजो, अडूसा, और हलदी, इनका काढा करके पीवे तो जैसे सिंह हाथीको जीते इसप्रकार कंठकुब्जको जीते

## किरातादिकाढा·

किरातकटुकाकणाकुटजकंटकारीसटीकलिङ्गकिलिमाभया-
कटुककट्फलांभोधरैः ॥ विषामलकपुष्करानलकुलीरशृंगी-
वृषैर्महौषधसखैरयंजयतिकंठकुब्जंगणः ॥

अर्थ— चिरायता, कुटकी, पीपर, इन्द्रजो, कटेरी, कचूर, वहेडा, देवदारु, हरड़, कालीमिरच, कायफल, नागरमोथा, अतीस, आमले, पुहकरमूल चित्रक काकडासिंगी, अडूसा, और सोंठ, इनका काढा कंठकुब्ज संनिपातको जीते ॥

## कृष्णादिनस्य

अपनयतिकंठकुब्जंकृष्णापामार्गयुङ्नस्यं ॥
अथहंतिसलिलसहितंत्रिकटुककटुतुंविनीनस्यं ॥

अर्थ— पीपल, और औंगाके रसकी नस्य अथवा त्रिकुटा, कडुई तूंबीके बीज, इनको पानीमें औटायके इसकी नस्य देवे तो कंठकुब्जको दूरकरे ॥

## सिद्धवटि

शुद्धसूतंतथागंधंकाकडंसैंधवंसमं ॥ सद्योवालस्यविष्ठांचद्र-
वैर्व्राह्याविमर्दयेत् ॥ गुटिकावदराकाराभक्षितारोगनाशि-
नी ॥ इयंसिद्धवटीनामसंनिपातंनियच्छति ॥ पूर्वोक्तेनानु-
पानेनदेयोवानंदभैरवः ॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्धगंधक, काकडासिंगी, सैंधानिमक तथा मदजाए वालक की विष्ठा ये सब समान भाग ले ब्राह्मीके रसमें खरलकर बेरके बराबर गोली बनावे यह गोली संनिपातरोग नाशक है अथवा पूर्वोक्त अनुपानके साथ आनंद भैरव रस देय वोभी संनिपात नाशक है॥

## कर्णकसंनिपातनिदान

प्रलापश्रुतिह्रासकंठग्रहांगव्यथाश्वासकासप्रसेकप्रभावं ॥
ज्वरंतापकर्णांतयोर्गंडपीडाद्युधाःकर्णकंकष्टसाध्यंवदंति ॥

अर्थ—प्रलाप, बहरेंपना, कंठका स्तंभ, अंगोंमें पीडा, श्वास, खांसी, लारकागिरना, संताप, कान और गाल इनमें पीडा इत्यादि लक्षणों करके कर्णक संनिपात जानना, यह कष्टसाध्य ज्वर है ॥

## रास्नादिकषाय

रास्नाश्वगंधाघनकंटकारीभार्ङ्गीवचापौष्कररोहिणीनां ॥
क्वाथःकृतःशृंग्यभयायुतानांपीतोजयेत्कर्णकसंनिपातं ॥

अर्थ—रास्ना, असगंध, नागरमोथा, कटेरी, भारंगी, वच, पुहकरमूल, कुटकी, काकडासिंगी, हरड. इनका काढा कर्णक संनिपात नाशक है॥

## रास्नादिकाढा

रास्नाबृहतीपथ्याव्योपकटुकाघनपुष्कराव्हंच ॥
शृंगीधाराभार्ङ्गीक्वाथोयंकर्णकंहरेस्मरणात्॥

अर्थ—रास्ना, कटेरी, हरड, त्रिकुटा, कुटकी, नागरमोथा, पुहकरमूल, काकडासिंगी, आमरे और भारंगी, इनका काढा कर्णक सन्निपातको दूर करे॥

## मरीचादिकाढा

मरीचदशमूलमगधाफलत्रयनिशामहौषधीतिक्ता॥ भूनिंबसैंधवयुतःकर्णकहंताभवेत्क्वाथः॥

अर्थ— कालीमिरच, दशमूल, पीपर, त्रिफला, हलदी, सोंठ, कुटकी, चिरायता, इनके काढेमें सेंधानिमक डालके पीवे तो कर्णकको दूर करे ॥

## भार्ग्यादिकाढा

भार्ङ्गीजयापुष्करकंटकारिकटुत्रिकोग्रावनकंडुलीभिः॥
कुलीरशृंगीकटुकारसाभिःकृतःकषायःकिलकर्णकघ्नः॥

अर्थ— भारंगी, छोकरा, पुहकरमूल, कटेरी. त्रिकुटा, वच, वनका जमीकंद काकडासिंगी, कुटकी, और रास्ना इनका काढा कर्णक संनिपात नाशकहै॥

## दशमूलादिकाढा

दशमूलमत्स्यशकलाचपलात्रिफलामहौषधकिराततयुताः ॥
मरिचपरिक्वथितमाशुवलादपहंतिकर्णकरुजःसकलाः ॥

अर्थ—दशमूल. कुटकी, पीपल. त्रिफला. सोंठ, चिरायता, कालीमिरच, इनका कादा कर्णक संनिपातको शीघ्र दूरकरे ॥

## इंगुद्यादिलेप

इंगुदिनिशाविशालासैंधवसुरदारुरविदुग्धैः ।
दत्तःक्रमेणलेपोहरतिमहाकर्णकग्रंथिं ॥

अर्थ—हिंगोट (गोंदी) हलदी, इन्द्रायनका गूदा, सैंधानिमक, देवदार, और आकका दूध, इनका लेप कर्णमूलपर क्रमसैं एकके ऊपर दूसरा वारंवार करावे तो कर्णक दूर हो ॥

## प्रलेप

प्रलेपस्समस्तंनयत्यल्पमेकःसमुद्रिक्तशोथंचरक्तावसेकः ॥
विपक्वंचशस्त्रक्रियापूयजित्स्याद्व्रणत्वंगतेचेत्द्रुतंतच्चिकित्सा ॥

अर्थ—प्रथम कर्णमूलपर शीघ्र लेप देय जिससै सूज न बैठजावे,यदि सूजन वहुत भारी होय तो उसका रुधिर निकलवावे, यदि पकजावे तो उसमें चीरादेकर राधनिकाल फिर व्रणचिकित्सा करे ॥

## व्रणचिकित्सा

निशाविशालामयपाणिमंथदार्वींगुदीमूलकृतःप्रलेपः ।
प्रभाकरक्षीरयुतःप्रभावाद्वयस्तःसमस्तोप्यथकर्णकघ्नः ॥

अर्थ—हलदी, इन्द्रायनकागूदा, कूठ, करोदाकीपत्ती, दारुहलदी, और हिंगोटकी जड, ये औषध आकके दूधमें गरम करके उसका लेप करे यदी ये सब औषध नमिले तो जो ओषध मिले उसीको गरम करके लेप करे तो कर्णक सन्निपातका नाश होय ॥

## कुलित्थादिलेप

कुलित्थःकट्फलंशुंठीकारवीतैःसमांशकैः ।
सुखोष्णैर्लेपनंकार्यंकर्णमूलेमुहुर्मुहुः ॥

अर्थ—कुलथी, कायफल, सोंठ, सोफ, इनका समभाग चूर्णकर गरम जलमें मिलायके लेप करे तो कर्णमूल बैठ जावै ॥

## गैरिकादिलेप

गैरिकंकंटिनीशुंठीकट्फलैःसवचैःसमैः ॥
उष्णैःकांजिकसंपिष्टैःप्रलेपःकर्णमूलनुत् ॥

अर्थ--गेरु, गोखरू, सोंठ, कायफल, और वच, इनको काजीमें पीस गरम कर लेप करे तो कर्णमूल शांती हो ॥

## शिग्र्वादिलेप

शिग्रुराजिकयोःपिष्टंकर्णमूलेप्रलेपयेत् ॥
कर्णमूलभवःशोफस्तेनलेपेनशाम्यति ॥

अर्थ--सहजनेकी छाल, और शिरस इनको महीन पीस कर्णकपर लेप करे तो कर्णमूल संबंधी सूजन शांतिहो ॥

## अर्ककालेप

दशशतकरदुग्धंपुष्करत्वक्समेतंदहनगुडनिकुंभाकुष्ठ-
कासीसयुक्तं ॥ अपनयतिवितीर्णंलेपनंसप्तरात्रात्श्व-
यथुहरणयुक्तंकर्णकग्रंथिमेतत् ॥

अर्थ—पुहकरमूल, दालचीनी, चित्रक, गुड, कायफल, कूठ और हीराकसीस, इन औषधोंका चूर्ण करके आकके दूधमें घोंटकर लेप करे तो यह लेप सातही दिनमें कर्णमूलको शमन करे ॥

## दंत्यादिलेप

दंतीचित्रकयोर्मूलंस्नुह्यर्कपयसागुडः ॥
भल्लातकास्थिकासीसंलेपोभवतिकर्णके ॥

अर्थ—दंती, चित्रक, दोनोकी जड, थूहर, आकका दूध, गुड, भिलावेकी मिंगी, और कसीस इनको जलमें पीस लेप करे तो कर्णकसंनिपात दूर हो ॥

## नागरादिलेप

सनागरंदेवदारुरास्नाचित्रकपेषितं ॥
प्रलेपनमिदंश्रेष्ठंगलशोफनिवारणं ॥

अर्थ—सोंठ, देवदारु, रास्ना, और चित्रक, इनको जलमें पीस लेप करे तो गलेकी सूजन दूर हो ॥

## निशादिलेप

निशेंगुदीसैंधवदारुकुष्ठदार्वीविशालारविदुग्धलेपः ॥
तंकर्णग्रंथिंसमपाहरेद्वाजलौकयापातनमत्रशस्तं ॥

अर्थ—हरदी, हिंगोट, सैंधानिमक, देवदारु, कूठ, इन्द्रायनकीजड, इनको आकके दूधसैं पीस लेप करे तो कर्णकशांति हो, अथवा उस गांठमें जोंखलगायके रुधिरको निकाल डाले तो अच्छा होय ॥

## बीजपूरादिलेप

बीजपूरकमूलत्वक्वन्हिमंथस्तथैवच ॥ शरपुंखाशिखीतुंबीसकृष्णाविषमुष्टिभिः ॥ प्रलेपोवाहिडिंबीभिःश्वयथौकर्णमूलजे ॥

अर्थ—विजोरेकी जड, दालचीनी, अरनी, सरफोका, चित्रक, कडुईतुंबी, पीपल, कुचलाकेबीज इनका लेप कर्णमूलकी सूजनपर करे ॥

## वज्रमुष्ट्यादिलेप

वज्रमुष्टिभवःकंदोशोथविध्वंसनक्षमः ॥ कर्कटस्यचमांसेनस्वेदनंबंधनंतथा ॥ कर्णमूलभवंशोथंनाशयत्यविलंबतः॥

अर्थ—वज्रमुष्टीका कंद कर्णककी सूजनको नष्ट करे और कैकडेका मांससैं सेकैं और वहीमांस उसपर बाध देवे तो कर्णक संबंधी सूजन शीघ्र नाश होय ॥

## सिद्धार्थादिलेप

सिद्धार्थसैंधववचाग्रहधूमविश्वैःपिष्टैर्जलेननिशयासहितंसुसूक्ष्मं ॥ लेपोहितोरुधिरनिष्क्रमणेप्रभातेशोफव्रणस्यशमनःसरुजश्चकर्णे ॥

अर्थ—प्रथम कर्णमूलकी सूजनपर जोख लगायकर रुधिर निकलवाय डाले, और दूसरे दिन प्रातःकाल उस सूजनपर सरसो, सैंधानिमक, वच, घरकाधूआ, सोंठ, हलदी, इनको पानीमें पीस उसका लेप करे तो सूजनयुक्त व्रणको और पीडाको शमन करे ॥

## रोहीतकादिलेप

लेपेनरोहीतकपीलुसिंधुपत्रींद्रवल्लीकटुहंजिकावा ॥ तुल्यालसर्षपशिलानवसारगंधकासीसकुष्ठपटुहंसपदीकरंजैः ॥ लेपात्पलंकषयुताश्चसयावशूकानिःसंशयंसपदिकर्णकवेदनाघ्नाः॥

अर्थ—हहेडा, अखरोटवृक्षकी छाल, मोतीकी सीप. इन्द्रायन, करेले, लीलाथोथा, हरताल, सरसो, मनसिल, नोसादर, गंधक. हीराकसीस, कूठ, निम-

क, हंसपदी, कंजा, गूगल, और जवाखार, इनका लेप कर्णमूलपर करे तो तत्काल, कर्णमूलकी पीडा दूर करे ॥

### मरीचादिनस्य

अशिशिरजलपरिमर्दितंमरिचकणालवणजंरजस्त्वरितं ॥
नस्यविधौसेवितंकिलकर्णकरुङ्नाशनंगदितं ॥

अर्थ—गरमजलमें मिरच, पीपल, और सैंधानिमक, औटायकर नस्यलेय तो कर्णककी पीडा दूर हो ॥

### कर्णकपरनस्य

अशिशिरजलयुक्तंनावनंकर्णकार्तौजनयतिसुखसिद्धिंघ्राणरंघ्रप्रवेशात् ॥ लवणपरमकृष्णाचूर्णयुक्तंप्रभातेसकलमुनिभिरुक्तंव्याधिविध्वंसकारि ॥

अर्थ—कर्णकरोगमें सैंधानिमक, और पीपल, इनका चूर्ण गरमपानीमें डालके प्रातःकाल नस्य लेवे तो कर्णक पीडावालेको सुख होय ॥

### सामान्यउपचार

तंजयेच्छोणितस्रावैःसर्पिःपानप्रलेपनैः ॥
प्रदाहैःकफपित्तघ्नैर्वमनैःकवलग्रहैः ॥

अर्थ—रक्तस्राव, घृतपान, लेप, दागना, कफपित्तनाशक वमन और मुखमें कवल धरना इत्यादि उपचार कर्णककी सूजनपर करे

### कांजिकादिलेप

कांजिकेनसुपिष्टंतुधूर्तबीजप्रलेपनं ॥
राजिकागुडमिश्रेणकर्णमूलेसुखावहं ॥

अर्थ—धतूरेके बीज, राई, और गुड, इनको एकत्रकर पीस कांजीमें मिलाय लेप करे तो सुख होय ॥

### उपचार

रक्तस्रावोजलौकाभिर्घृतपानंचयुज्यते ॥
कर्णग्रंथिविनाशार्थमायुर्वेदविदांवरैः ॥

अर्थ—कर्णमूलवालेकैं जोख लगाय रुधिर कढावे और घृत पिवावे तो अच्छाहोय

### अन्न

जीर्णानांरक्तशालीनांज्वरघ्नःक्राथसाधितः ॥ प्रसृत-
स्त्वोदनोद्विस्त्रिकायोंयूषादिकोपिवा ॥ सचेज्जीर्यत्य-
विघ्नेनज्वरीजीवेत्तदाध्रुवं ॥

अर्थ—पुराने लालचावलोंका ज्वरघ्न काढेमें भात अथवा यूप बनायके देवे यदि यह जिस रोगीको निर्विघ्न पचजावे तो रोगी निःसंदेह बचे ॥

---

### भुग्ननेत्रसंनिपातनिदान

ज्वरबलापचयस्मृतिशून्यताश्वसनभुग्नविलोचनमोहितः ॥
प्रलपनभ्रमवेपथुशोथवान्त्यजतिजीवितमाशुसभुग्नदृक् ॥

अर्थ—ज्वरकर्के बलक्षीण, स्मरण शक्तिका नाश, श्वास, टेढीदृष्टी, मूर्च्छा, प्रलाप, भ्रम कंप, ये लक्षण भुग्ननेत्र संनिपातमें होतेहै यह रोगी तत्काल मरे ॥

### दार्व्यादिकाढा

दार्वीपटोलघनकंटकारीतिक्तानिशाबिंबफलत्रिकाणां ॥
क्राथोनियोज्योज्वरसंनिपातेविभुग्ननेत्रेप्रतिबोधनाय ॥

अर्थ—दारुहलदी, पटोलपत्र, नागरमोथा, कटेरी, कुटकी, हलदी, नीमकी-छाल, हरड, बहेडा, और आमला, इनका काढा ज्वर और भुग्ननेत्र संनिपात इ-नपर बोध होनेके लिये देय ॥

### श्रेष्ठादिकाढा

श्रेष्ठापटोलकटुकाघननिंबसुराह्वधावनीसहिताः ॥
घ्नंतिभृशंमोहंपित्तज्वरमुग्रसंनिपातोत्थं ॥

अर्थ—पीपल, पटोलपत्र, कुटकी, नागरमोथा, नीमकीछाल, देवदार और कटेरी, इनका काढा मोह, पित्तज्वर, तथा संनिपातज्वर इनका नाश करे

### यष्ट्यादिकाढा

यष्टीपटोलकटुकाघननिंबसुराह्वधान्न्यः ॥
अपहरंतिमोहपित्तंज्वरमुग्रंसंनिपातोत्थं ॥

अर्थ—मुलहटी, पटोलपत्र, कुटकी, नागरमोथा, नीमकीछाल, देवदार, औ-र कटेरी इनका काढा पित्तज्वर और उग्रसंनिपातज्वर इनका नाशक है ॥

## मरिचादिनस्य

मरिचतुरगगंधामागधीसिंधुजातंलशुनमधुकसारैरुग्रगंधर्द्रकाभ्यां ॥ छगलकजलपिष्टंसंयुतंशास्त्रविद्भिःसपदिभवतिनस्यंभुग्ननेत्रप्रमाथि ॥

अर्थ—कालीमिरच, असगंध, पीपल, सैंधानिमक, लहसन, महुआकागोद, वच, और अदरख, इनको बकरेके मूत्रमें पीस नस्यदेवे तो भुग्ननेत्र संनिपातको दूर करे ॥

## अश्वगंधादिनस्य

तुरंगगंधालवणोग्रगंधामधूकसारोपकमागधीभिः ॥ बस्तांबुशुंठीलशुनान्विताभिर्नस्यंन्वसंभुग्नदृशंकरोति ॥

अर्थ—असगंध, सैंधानिमक, वच, मुलहटी, अनारदाना, त्रिकुटा, और लहसन, इनको बकराके मूत्रमें नस्यदेवे तो नेत्र स्वच्छ करे

## भूनिंबादिअवलेहअंजनवनस्य

भूनिंबमाक्षिकवचासहितंचकुर्याल्लेहंकणोपणरसोनकराजिकाभिः ॥ नेत्रांजनंचलवणोत्तमपिप्पलीभ्यांनस्यंव व.मरिचहिंगुमधूकसारैः ॥

अर्थ—चिरायता, सहत, वच, पीपल, मिरच, लहसन, और राई, इनका अवलेह देवे, तथा निमक और पीपल इनका अंजनकरे और वच. मिरच, हींग, मुलहटी. और अनारदाना इनका नस्य करावे ॥

## मार्तंडभैरवरस

शुद्धसूतंसमंगंधंगंधात्पादांशटंकणं॥ ताम्रपात्रेक्षिपेत्पिष्टंजयंत्यालोडयेद्द्रवैः ॥शिग्रुमूलरसेनाथभावयेदष्टधातप ॥कटुत्रयस्यवासायावन्हिरुद्रजटाद्रवैः ॥ तिलपर्णीतथाजातीपिप्पलीपत्रमूलकैः ॥ द्रावैरेवतुसप्ताहंशोप्यंशोप्यंविभावयेत् ॥ताम्रपात्रात्समुद्धृत्यकृत्वागोलंविशोपयेत् ॥ वस्त्रेवद्ध्वामृदाप्यत्रभूधरैःस्वेदयत्पुट ॥ द्वियामांतेसमुद्धृत्यचूर्णयेदोपधैःसह ॥ विपकर्पूरजात्येलारसस्यदशमांशतः ॥भावयेद्विजयाद्रावैर्दिनमे-

कंचमर्दयेत्॥चतुर्गुंजासकर्पूरमधुनासान्निपाताजित् ॥ मार्तंडो-
यंरसोनामअसाध्यंसाधयेयेत्ध्रुवं ॥ दशमूलंपिवेच्चानुपथ्यं-
स्यान्मुद्गयूषकैः ॥

अर्थ–पारा१ भाग, गंधक१ भाग. सुहागा चतुर्थांस, सवको एकत्र कर तामे-
के पात्रमे डालके जयंतीके रसकी तथा सहजनेकी जडके रसकी आठ २ भावना
धूपमें धरके तामेके पात्रमें देय और त्रिकुटा, अडूसा, चित्रक, ईश्वरी, तिलपर्णी,
जावित्री, पीपलके पत्ते और जड इन प्रत्येकके रसकी सात २ भावना देवे, फिर
सुखावे फिर तामेके पात्रमेंसे निकाल उसका गोला कर सुखायके ऊपर कपड़-
मिट्टी कर भूधर यंत्रमें दो महर पचन करावे; जव शीतल हो जाय तव निकाल
वारीक घोटे उसमें विप, कपूर, जावित्री, और इलायची ये सव वस्तु पारेके
दशांश डालके भाँगके काढेमें एक दिन खरल करे तो यह ( मार्तंड रस ) वने
इसमेंसे चार रत्ती सहत और कपूर इनसें देवे ऊपरसें दशमूलका काढा देवे तो
असाध्यभी संनिपातका नाश करे ॥

---

## रक्तष्ठीवीसंनिपातनिदान

रक्तष्ठीवीज्वरवमितृषामोहशूलातिसारहिक्काध्मानभ्र-
मणदवथुश्वाससंज्ञाप्रणाशः॥श्यामारक्ताधिकतररस-
नामंडलोत्थानरूपारक्तष्ठीवीनिगदितग्रहप्राणहंता-
प्रसिद्धः ॥

अर्थ—रुधिर गेरना, ज्वर, वमन, तृषा, मूर्च्छा, शूल, अतिसार, हिचकी, पे-
टका फूलना, भौंर, नेत्रोंमें दाह, श्वास, चित्तभ्रम, जिव्हा काली किंवा लाल उ-
सपर चकत्ते हो अेसे लक्षणयुक्त जो हो उसको (रक्तष्ठीवी ) संनिपात कहते है यह
प्राणनाशक प्रसिद्ध है ॥

## पर्पटादिकाढा

पर्पटकधन्वयासकवासाभूतृणकैःकटुकीफलनस्यं ॥
शर्करयासहितोपिकषायोलोहितमास्यगतंविनिहंति ॥

अर्थ—पित्तपापरा, धमासा, अडूसा, रोहिम ( सुगंधि तृण ) इनका काढा
खांड मिलायके देवे और कंकोलका चूर्ण करके इसकी नस्य करे तो मुखसें रु-
धिर गिरनेको दूर करे ॥

## जलदादिकाढा

जलदाव्हयपद्मकपर्पटकमलयोद्भवजातिवरीमधुकैः ॥
मधुनिंबजलानलचंदनकैःक्वथितंमुखरक्तदरंसलिलं ॥

अर्थ--नागरमोथा, पद्माख, पित्तपापडा, चंदन, चमेली, सतावर, मुलहटी, सहत, नीमकीछाल, नेत्रवाला, चित्रक, और लालचंदन इनका काढा मुखसें रुधिर वहते को बंद करे ॥

## रौहिषादिकाढा

रौहिषधन्वयवासकवासापर्पटगंधलताकटुकाभिः ॥
शर्करयासममेपकषायःक्षतजष्ठीविनउदितउपायः ॥

अर्थ—सुगंधितृण, धमासो, अडूसा, पित्तपापडा, गंधलता, कुटकी, इनका काढा खांडके साथ देवे तो रक्तष्ठीवी सन्निपात दूर हो ॥

## पद्मादिकाढा

पद्मकचंदनपर्पटमुस्ताजातिवरारुणचंदनवारि ॥
क्लीतकनिंबयुतंपरिपक्वंवारिभवेदिहशोणितहारि ॥

अर्थ--पद्माख, चंदन, पित्तपापडा, नागरमोथा, चमेलीके पत्ते, त्रिफला, लालचंदन, सुगंधवाला, मुलहटी, और नीम, इनका काढा रक्तष्ठीवीको नष्ट करे ॥

## मधुकादिकाढा

मधुकमधूकपरूपकषायश्चंदनपल्लवदारूसनाथः ॥
श्रीपर्णीफलशीतकषायःसासितइहस्यादस्त्रजयाय ॥

अर्थ—महुआ, मुलहटी, फालसा, रक्तचंदन, पत्रज, देवदार, सालवनके फल इनका काढा शीतल करके खांड मिलायके देय तो रुधिर बंद होय ॥

## दूर्वादिनस्य

देयंदूर्वारसैर्नस्यंरसैर्दाडिमपुष्पजैः ॥
अथवात्रिफलादूर्वाजलंरक्तहरंपरं ॥

अर्थ—दूबके रसकी अथवा अनारके फूलके रसकी किंवा त्रिफला, और दूबके रसकी नस्यदेवे तो रक्तष्ठीवी संनिपात नष्ट होय ॥

## आम्रादिनस्य

आम्रास्थिचपलांडुर्वानासिकाच्युतरक्तजित् ॥

अर्थ—आमकी गुठलीकी अथवा लहसनके रसकी नस्यदेवे तो नाकसे रुधिर गिरना बंद हो ॥

## चिकित्सा ॥

पंचवक्रोरसोप्यत्रदेयोगुंजाद्वयोहितः ॥
भस्मेश्वरोरसोवाथमाषैकंसंनिपातजित् ॥

अर्थ–पंचवक्ररस दो रत्ती अथवा भस्मेश्वर १ मासे देय तो रक्तष्ठीवीकोनाश करे॥

## रक्तष्ठीवीचिकीत्सा

रक्तेमोरेश्वरोदेयोरसोगुंजाद्वयंघृतैः ॥ सनागरोनिहंत्याशुसंनिपातंसुदारुणं ॥ अनुपानविशेषाच्चतप्तंवारिपलद्वयं ॥ दध्यन्नंदापयेत्पथ्यंतृषार्तंशीतलंजलं ॥

अर्थ—रक्तष्ठीवीमें मोरेश्वररस घृतके और सोंठके चूर्णसे दो रत्ती देय अनुपान विशेषमें गरम जल ८ तोले देय और पथ्यमें दहीभात देय, और अतितृषामें शीतल जल देवे॥

## सोमपाणीरस

सूतनिष्कंगंधनिष्कंमर्दयेच्चित्रकद्रवैः ॥ माषैकंमृतताक्ष्णंस्यान्मृतंशुल्वंचमाक्षिकं ॥ माषैकैकंचसंमिश्र्यपूर्वसूतेथमर्दयेत् ॥ धत्तूरत्रिफलाकन्यावृद्धादार्व्यार्द्रकद्रवैः ॥ कोशाम्रकस्यमंडूक्यानिर्गुंड्याभृंगिचित्रकैः वयस्थापिचवातारिशक्रासनद्रवैरपि ॥ प्रतिद्रावंपलैकैकंदत्त्वास्वल्पंविमर्दयेत्॥ रसांसंत्र्यूषणंक्षिप्त्वाचणमात्रावटीकृता॥तांमिश्रसंनिपातार्तेदापयेज्जीरकद्रवैः ॥ कषायःपंचमूलानामनुपानंप्रशस्यते ॥ दध्यन्नंदापयेत्पथ्यंतृषार्तंशीतलंजलं ॥ संनिपातंनिहंत्याशुसोमपाणीरसोवरः ॥

अर्थ—पारा, और गंधक, चारचार मासे लेकर उनको चीतेके रसमें खरल करे फिर १ मासा तीक्ष्ण लोहकी भस्म १ मासा ताम्रभस्म, और एक मासा शुद्ध माक्षिक ये एकत्र कर उक्तपारे गंधकमें मिलाय धतूरा, त्रिफला, घीगुवार, विधायरो, अदरख, लाल आम, ब्राह्मी, निर्गुंडी, भाँगरो, चीता, आमले, अंडकी जड और भांग इनके एक एक पल काढेमें अथवा रसमें घोटे फिर पारेका समान भाग त्रिकुटेका चूर्ण डालके चनेकी बराबर गोली बनावे ये रक्तष्ठीवी संनिपात पर जीरेके काढेसे देवे और पीछे पंचमूलका काढा देय तथा दहीभातका पथ्य दे जब प्यास लगे तब शीतल जल देवे तो यह (सोमपाणिरस) संनिपातको दूर क

## प्रलापकसंनिपातनिदान

कंपप्रलापपरितापनशीर्षपीडाप्रौढप्रभावपवमानपरोन्य-
चिंता ॥ प्रज्ञाप्रणाशविकलप्रचुरप्रवादःक्षिप्रंप्रयाति-
पितृपालपदंप्रलापी ॥

अर्थ—कंप, प्रलाप, संताप, मस्तकपीडा, अत्यंत प्रभाव, स्वच्छता विषय इच्छ अन्य पुरुषकी चिंता, बुद्धिका नाश, विकलता, अत्यंतबकवाद करना, अथ वादकरना, इन लक्षण करके ( प्रलापक ) संनिपात जानना. यह रोगीको तत्व ल यमलोकको पहुचावे ॥

## मुस्तादिकाढा

मुस्तवारिदशमूलनागरंपर्पटोमलयजंधवत्वचः ॥
वासकःकृतसमानविभागःक्काथएवहरतिप्रलापकं ॥ २

अर्थ—नागरमोथा, नेत्रवाला, दशमूल, सोंठ, पित्तपापडा, लालचंदन, धौं छाल, और अडूसा, ए समान भाग ले काढाकर पीवे तो प्रलापक संनिपात दूर हो

## तगरादिकाढा

तगरतुरगगंधापर्पटीशंखपुष्पीत्रिदशविटपितिक्ताभा-
रतीभूतकेशी ॥ जलधरकृतमालश्वेतकीगोस्तनीभ्यां
सहहरतिकषायोमंक्षुपानात्प्रलापं ॥

अर्थ—तगर, असगंध, पापरी, शंखा हूली, देवदार, कुटकी, ब्राम्ही, ज मांसी, नागरमोथा, अमलतासका गूदा, हरड, और दाख इनका काढा प्रल क संनिपातको तत्काल शमन करे ॥

| Date of issue | Borrower's No | Date of issue | Borrower's No |
|---|---|---|---|
| ... 6-SEP 1981 | 1235 | | |